Volume I , Issue IV
Oct - Dec. 2013

Reg. No.- MPHIN/28519/12/1/2012- TC
ISSN 2320-8767

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795 - Vikas Nagar Extension 14/2 , NEEMUCH (M.P.) 458 441, (INDIA)
Mob. 09617239102 **Email** nssresearchjournal@gmail.com **Website** www.nssresearchjournal.com

सम्पादक की अभिव्यक्ति

सम्माननीय शोधार्थियों

सादर वन्दे,

नववर्ष (2014) की हार्दिक शुभकामनाएँ एवं 'नवीन शोध संसार' के सफलतम् एक वर्ष पूर्ण होने पर रिसर्च जर्नल परिवार की ओर से आप सभी को हार्दिक बधाई।

वर्ष 2013 में आप सभी के द्वारा समय-समय पर बहुमूल्य सुझावों के साथ अपार सहयोग, स्नेह, आशीर्वाद प्रदान किया गया है, जिसके लिये हम आपके कृतज्ञ है।

शोधार्थियों के अनुग्रह पर सकारात्मक सोच के साथ सकारात्मक परिवर्तन एवं उत्थान हेतु 'मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम' 35 उपशीर्षकों सहित विशेषांक निकालने का निर्णय 'नवीन शोध संसार' द्वारा लिया गया है। इस विशेषांक में आपके शोध पत्रों के निष्कर्ष मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा की प्रगति में मील के पत्थर साबित होंगे। साथ ही 'नवीन शोध संसार' का नियमित अंक जो अब मार्च में प्रकाशित होगा, उसके शोध पत्र /आलेख 10 फरवरी 2014 तक प्रेषित करें। जिससे कि मार्च अंक को समय से पूर्व आप तक पहुंचाया जा सके, जिसके API अंक का लाभ आपको इसी वित्तीय वर्ष में प्राप्त हो सकेगा।

इसी पूर्ण विश्वास के साथ यह आशा करता हूँ कि आपका स्नेह, सहयोग व आशीर्वाद विशेषांक को भी अवश्य ही प्राप्त होगा।

सधन्यवाद्।

आपका

Ashish Sharma

आशीष शर्मा

'नवीन शोध संसार' का छोटा-सा अनुरोध-

* पेड़-पानी, ऊर्जा और बेटी बचाएँ
* गुटखा, बीड़ी, सिगरेट एवं शराब को ना कहें, इनसे कैंसर होता है।

इस शोध पत्रिका को प्रकाशित करते हुए पूर्ण सावधानी बरती गई है, फिर भी किसी प्रकार की त्रुटी के लिये सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक जिम्मेदार नहीं होंगे। समस्त विचारों का न्यायक्षेत्र नीमच होगा।

'श्री गणेशाय नमः'

नवीन शोध संसार

Reg. No.- MPHIN/28519/12/1/2012- TC

ISSN 2320-8767

Volume I , Issue IV, Oct - Dec. 2013

संरक्षक एवं अध्यक्ष निर्णायक मण्डल

डॉ. एल.एन. शर्मा 09425974314

प्राध्यापक वाणिज्य

शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच

सम्पादक

आशीष शर्मा

मो. 09617239102

प्रबंध सम्पादक

अपूर्व शर्मा

मो. 08989670811

मार्गदर्शक

(1) **श्री जे.एन. कांसोटिया** प्रमुख सचिव
उच्च शिक्षा म.प्र. शासन, मंत्रालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(2) **प्रो.डॉ. आई.वी. त्रिवेदी** (कुलपति)
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(3) **प्रो. डॉ. शिवनारायण यादव** (पूर्व कुलपति) प्राचार्य
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

'नवीन शोध संसार' का अगला अंक
दि. 1 मार्च 2014 को प्रकाशित होगा।

सदस्यता शुल्क विवरण

* संस्थागत वार्षिक- ₹ 1200/-
* प्रति शोधार्थी वार्षिक - ₹ 700/-

शोधपत्र प्रकाशन राशि (सदस्यता अनिवार्य है)

* प्रति शोध पत्र - ₹ 800/-

(प्रति शोध पत्र अधिकतम 2000 शब्द)
अतिरिक्त प्रति 500 शब्द ₹ 200/-

(शोध पत्र प्रकाशन राशि में वार्षिक सदस्यता शुल्क सम्मिलित नहीं है)

प्रिन्ट- **मित्तल प्रिन्ट लाईन**
282 विकास नगर 14/4, नीमच ☎ 228654

अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Miraculous Plant Crescentia Cujete Found In Dhar (M.P.) 12
(Prof. Nirbhay Singh Solanki, Prof. S.C. Mehta)

06. Ethnomedicinal Plants Used As Antipyrtic Agents Among The Bhil/bhilal Tribe 14
Of Dhar District, Madhya Pradesh (Prof. Govind waskel, Prof. Sarika Tundele)

07. Study Of Traditional Worshiping Plant Of Barwaha (district-khargone M.P.) 17
(Pro. SarikaTundele, Pro. Govind Waskel)

08. Biodiversity In Algal Pond Water And Its Physico-Chemical Factors 19
(Dr. Darasingh Waskel, Tarachand Nargawe)

09. Conservation of ethnobotanical plants in Patalkot Chhindwara M.P. (Droupadi Parte) 22

10. A Study Of Water Pollution With Special Refrence Barwaha City 24
(Prof. Ramesh Kumar Auchat, Prof. J.L. Solanki)

11. Advanced Oxidation Processes for waste water treatment (Smt. Sunaina Chouhan) 27

12. Role Of Non Governmental Agencies In Conservation Of Environment And The 29
Problems Faced (Dr. Madhu Sthapak)

13. Air Pollulation, Causes, Problum, Effect (Prof. B.K. Rawat, Prof. Shailendra Sissodiya) 32

14. बेल वृक्ष का लोक वानस्पतिक (Ethnobotanical) महत्व, एवं संरक्षण: एक दृष्टि (डॉ. शैल बाला सांघी) 34

(Home Science / गृह विज्ञान)

15. A Study On Effect Of Awareness Upon Nutritional Status Of Breast Cancer Patients 36
(Dr. Archana Kushwah, Dr. Manju Dubey)

16. A Study of the Effect of Parental Encouragement on the Educational Development 38
of the Students of Secondary Stage (Mrs. Asmita Dubey)

17. Quality Crisis In Higher Education in India Problems and Challenges in the 43
Education System of India (Mohini Sakargayen)

18. उच्चशिक्षा में संवादहीनता : एक चुनौती (सर्वेक्षण अध्ययन) (डॉ. अकीला कुरैशी,डॉ. शहजाद कुरैशी) 46

19. मप्र के इंदौर संभाग के मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक विकास एवं पोषण स्तर का 48
तुलनात्मक अध्ययन (3 से 14 वर्ष आयु वर्ग) (श्रीमती मोहिनी सकरगायें, डॉ. शारदा त्रिवेदी)

20. पाठशाला के बजाए बच्चे काम पर जा रहे है (डॉ. सीमा कदम) 50

21. ग्वालियर शहर की किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन 53
(डॉ. नीरू त्रिपाठी, डॉ. मंजु दुबे)

22. वेतनभोगी महिलाएँ एवं व्यावसायिक समायोजन के संदर्भ में एक अध्ययन (डॉ. गीताली सेनगुप्ता) 55

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

23. Economical Analysis of Production and Marketing of Banana Crop in Nimar Anchal 56
Dr. Pratap Rao Kadam)

24. A Study Of Skill Gap Analysis With Special Reference To Barwani District 61
(Dr. Sapna Soni, Dr. D.C. Kumrawat, Prof. Shikha Kumrawat)

25. Impact Of FII On Stock Market Return & Volatility 64
(Dr. Ratneshwar Prasad Dwivedi, Abhay Kumar Pandey)

26. Economic development through social Enhancement - Role of Information and 66
communication Technology (ICT) (Dr. Jaya Sharma)

27. Channels of Business Communication (A brief in vertical channel) 69
Dr. Vivek Kumar Patel * Dr. Pallavi Mishra **

28. River Corridor Planning And Management (Dr. Praveen Ojha) 72

29. Green Marketing - New Initiatives With Challenges In India (Dr. L.N. Sharma) 74

30. Status Of Women And Their Active Role In Building Modern India 77
(Dr. Vimmi Behal, Dr. O.P.Sharma)

31. Environmental Planning: An Overview (Praneeta Ojha) 79

32. Fdi In Retail Is A Boom For India (Dr. Vimmi Behal, Dr. Anil Shivani) 81

33. बुरहानपुर जिले में पर्यटन एवं कृषि की सम्भावनाओं का अध्ययन (डॉ. हेमसिंह मण्डलोई) 82

34. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण – एक विश्लेषण (डॉ. सपना सोनी) 84

35. भारत में आर्थिक विकास दर : दशा एवं दिशा (डॉ. गणेश प्रसाद दावरे) 87

36. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का मूल्यांकन 89
(2005–06 से 2011–12 के विशेष संदर्भ में) (डॉ. पी.एन. वैश्य, भारती खरे)

37. कपास प्रौद्योगिकी मिशन की संवर्द्धनशील एवं विकासपरक गतिविधियों का मूल्यांकन (डॉ. लक्ष्मीचन्द्र गुप्ता) 91

38. धार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ 94
ऋण का विश्लेषणात्मक अध्ययन(प्रो.बी.एस. सिसौदिया, डॉ. एम.के. जैन)

39. जीवन बीमा व्यवसाय में निजीकरण का प्रभाव (धीरज नेगी) 96

40. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) : ग्रामीण रोजगार का एक सशक्त आधार (डॉ. अभय मूंगी) .. 97

41. गरीबी व भूख का अर्थशास्त्र : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. गणेश प्रसाद दावरे) 99

42. बड़वानी जिलें की अर्थव्यवस्था में कपास उद्योग का योगदान– एक समीक्षात्मक मूल्यांकन (डॉ. एम.आर. महाले) 101
43. भारतीय कपास निगम की कपास उद्योग में भूमिका (डॉ. मनोहरलाल गुप्ता) 103
44. नारी उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध सशक्त कदम (डॉ. सुनील मोरे) 106
45. सार्वजनिक उपक्रम – कल आज और कल (डॉ. दिनेश कुमार चौधरी) 108
46. भारत सरकार द्वारा संचालित उद्यमिता विकास कार्यक्रमों का महत्व (राकेश बघेल, प्रो. मोहन वास्केल) 110
47. पंचायती राज व्यवस्था का ग्रामीण जीवन में प्रभाव – विश्लेषणात्मक मूल्यांकन (डॉ. गोपाल जायसवाल) 113
48. मध्यप्रदेश सरकार की कृषि ऋण योजनाएँ (अदिति श्रीवास्तव) 115
49. 21वीं शताब्दी में म.प्र. के पर्यटन स्थलों में होटल सेवा क्षेत्र (डॉ. पी.पी. पाण्डेय, डॉ. प्रभा पाण्डेय) 117
50. कृषि एवं ग्रामीण विकास में भूमि सुधार का प्रयोग क्यों असफल रहा? एक मूल्यांकन (डॉ. आनंद तिवारी) 119
51. नरसिंहपुर जिले के कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति – एक अध्ययन (नाज़िया शायमा) 121
52. ग्रामीण विकास के बदलते आयाम (डॉ. एम. एल. सोनी) 123
53. अनुचित प्राकृतिक दोहन से परिवर्तित होती भारतीय जलवायु (डॉ.आर.सी. गुप्ता) 125
54. मादक द्रव्य का सेवन : कारण एवं प्रभाव मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक अध्ययन (डॉ. आनंद तिवारी) 126
55. धार जिले में कृषि विकास हेतु चलाई गई विभिन्न योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन (प्रो. राजेश मईडा) 127
56. बड़वानी जिले के ग्रामीण गरीब परिवारों के लिये स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोगार योजना एक वरदान (बड़वानी जिले के संदर्भ में) (श्रीमती इन्दु डावर, डॉ. नटवरलाल गुप्ता) 129

(Economics / अर्थशास्त्र)

57. Impacts of Global warming on tourism (Special reference to Gwalior district) (Dr. Vasudha Agrawal) 132
58. मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था पर पर्यटन उद्योग का प्रभाव (बलराम सिंगोतिया, कविता धुर्वे) 135
59. सामाजिक एवं आर्थिक विकास में स्व–सहायता समूहों की प्रासंगिकता (प्रो. आई.एस.पंवार, डॉ.के.आर. कुमेकर) 139
60. भारत में रोजगार और आर्थिक वृद्धि (रावेन्द्र सिंह पटेल) 142
61. छतरपुर जिले में असंगठित क्षेत्र का आकार (डॉ. जे. पी. मिश्रा, अनूप शुक्ला) 144
62. धार जिले में कृषि के बदलते स्वरूप का अध्ययन (डॉ. एस.एस. बघेल) 146
63. किशोरावस्था में मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन (डॉ. शक्ति जैन) 148
64. भारत में ग्रामीण गरीबी उन्मूलन में रोजगार कार्यक्रमों का योगदान (डॉ. आर. एस. मण्डलोई) 151
65. भारतीय संदर्भ में सूचना के अधिकार की प्रासंगिकता (डॉ. सीताराम गोले) 154
66. आधुनिक भोगवादी सभ्यता : जैव विविधता के विनाश की पूर्व घोषणा (आभा आनंद) 156
67. उद्यमशीलता के प्रबंधकीय उपकरणों का मूल्यांकन (डॉ. राजेन्द्रकुमार शर्मा) 158
68. वैश्वीकरण के परिपेक्ष्य में मानवीय मूल्यों का अस्तित्व (डॉ. अमोल मांजरेकर) 160

69. महिला सशक्तिकरण : विभिन्न आयाम (सीमा नागर) 161
70. महिला सशक्तिकरण का स्वॉक विश्लेषण (डॉ. ए.के. जैन) 162
71. सब्सिडी,कैश सब्सिडी और बैकिंग विकास (डॉ. जयप्रकाश मिश्र) 163

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

72. भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण का योगदान (डॉ. भावना यादव) 165
73. वैश्विक आतंकवाद के दौर में लोकतंत्र (डॉ. सुनीता त्रिपाठी) 167
74. भारतीय महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण (नियाज अहमद अन्सारी, रामजी गर्ग) 169
75. भ्रष्टाचार निवारण की संस्था के उपकरण के रूप में लोकायुक्त का पद (मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में) 171
(डॉ. पूर्णिमा गौड़, डॉ. कामिनी पंवार)
76. विश्व राजनीति पर आतंकवाद का प्रभाव (डॉ. रजनी दुबे) 173
77. भारत में भ्रष्टाचार एवं नागरिकों की भूमिका (डॉ. अलका भार्गव) 174

(History / इतिहास)

78. The Jats And The Importance Of Their History (Prof. Akash Tahir) 176
79. वैष्णव धर्म का उद्भव और विकास (प्रो. जगमोहन सिंह पूषाम) 179
80. गुरुवाणी में वर्णित व्यक्तिपरक मूल्य व स्त्री–पुरुष सम्बन्ध : एक विश्लेषण (डॉ. रविन्द्र सिंह) 182
81. छत्तीसगढ़ में राजनीतिक संचेतना की उत्पत्ति (डॉ. नवीन गिडियन) 184
82. आर्यो का उद्गम स्थल आर्यावर्त्त, अन्य अक्षरों में भारतवर्ष (डॉ. नितिन सहारिया, डॉ. सुरेश कुमार विमल) 186
83. ग्वालियर का तोमर राजवंश (डॉ. शुक्ला ओझा) 188
84. राष्ट्र निर्माण में अम्बेडकरवाद की भूमिका (डॉ. हेमलता आचार्य) 189
85. उन्नीसवी सदी का भारत और मानवाधिकार (डॉ. हेमलता आचार्य) 191
86. मण्डलेश्वर नगर स्थित ''ब्रिटिशकालीन अवशेष'' (डॉ. मंगला ठाकुर) 192

(Geography / भूगोल)

87. परिवर्तनशील भूमि उपयोग एवं पर्यावरणीय प्रभाव (सागर जिले के संदर्भ में) (डॉ. अर्चना भार्गव ❊ भावना पटेल) 193
88. जल संसाधन का संरक्षण एवं प्रबंधन खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में (राजाराम आर्य) 196
89. कार्बन व्यापार एवं भारत की स्थिति (डॉ. अर्चना भार्गव) 199
90. मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल उपलब्धता (डॉ. प्रभाकर मिश्र) 201

(Sociology / समाजशास्त्र)

91. जनजातीय समाज में उच्च शिक्षा की समस्याएं (डॉ. श्रीनिवास मिश्र, डॉ. बी.एन.पटेल) 203
92. दलित समाज के प्रवक्ता : डॉ. भीमराव अम्बेडकर (डॉ. संजय खरे) 205

93. भारतीय महिलाओं के उत्थान में शिक्षा अनिवार्य–डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर 207
(डॉ. एच.एल. फुलवरे, प्रो. के.एस. सिसोदिया)

94. ग्राम तिल्लौर खुर्द में 'महिला सशक्तिकरण' एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (प्रो. क्रांतिसिंह पंवार) 208

95. मीडिया का बाजारीकरण एवं मूल्यहीनता (डॉ. बी.एन. पटेल, डॉ. श्रीनिवास मिश्र) 212

96. जाति प्रथा– भारतीय समाज, निरंतरता एवं परिवर्तन के मध्य एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. रश्मि दुबे) 214

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

97. Manju Kapoor's Difficult Daughters : A Personification of New Women 216
(Dr. Amitabh Dubey)

98. The Message of Environmental Conservation from Kalidas's Abhigyan Shakuntalam. 218
(Dr. Sumanlata Gupta)

99. Concepts Of Tradition And Modernity In The Novels Of Shashi Deshpande (Mamta Garg) 221

100. Interpreters and Translators : A Profession Enhancing Business Relations. 224
(Ms. Vanashree Godbole)

101. Kamala Das'An Introduction : An Attempt to Assert The Feminine Identity Against 226
Social Norms (Dr. M.P. Sharma)

102. Oughtths And Influences That Made The Frail Mohan Das- Mahatma Gandhi : 229
An Overview (Dr. B. Shrivastava)

103. Indian Words in Indian English Fiction (Dr. Sudhir Dixit) 230

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

104. मानवतावादी संत दादूदयाल (डॉ. मंजुला जोशी) 232

105. बुंदेली लोक कथाओं में लोकादर्श (डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला) 234

106. इतिहास और साहित्य : एक अवलोकन (प्रो. प्रेमलता तिवारी) 237

107. प्राचीन यूनानी चिंतन में प्लेटो की भूमिका (डॉ. नरेन्द्र सिंह) 239

108. परमाल रासो का लोकतात्विक विश्लेषण (डॉ. गायत्री वाजपेयी) 241

109. हिंदी नाम का इतिहास और उसकी व्यापकता एक विश्लेषणात्मक विवेचन (डॉ. अमित शुक्ल) 243

110. उत्तर आधुनिक समाज का कोलाहल –संदर्भ रघुवीर सहाय की कविता (डॉ. संध्या टिकेकर) 245

111. धूमिल : प्रहार और पर्दाफाश के कवि (डॉ. सुशील ब्यौहार) 247

112. भील जनजाति के पर्व एवं उत्सव (प्रो. मीरा जामोद) 248

(Drawing/ चित्रकला)

113. मध्यप्रदेश में लौह धातुशिल्प और सामाजिक संभावनाएँ (डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 249

114. बंदियों को दिये जाने वाले काष्ठकला एवं तकनीक का प्रशिक्षण (मध्यप्रदेश की विभिन्न जेलों के संदर्भ में) 252
(शैलेन्द्र नामदेव, डॉ. रेखा श्रीवास्तव)

115. भक्तामर काव्य और उसके रचयिता आचार्य मानतुंग (श्रीमती अस्मिता चौधरी, प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 255

116. भील चित्रांकन : नए आयाम (शिखा टहन्गुनिया, डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 257

117. गोंण्ड चित्र शैली में उभरती कलाकार ''कलाबाई'' (श्रीमती आरती अग्रवाल, डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 259

118. ताजुल मसाज़िद का अलंकरणात्मक स्वरूप (फरीदा नईम, डॉ. रेखा श्रीवास्तव) 261

119. कलागुरु डॉ.लक्ष्मीनारायण भावसार के चित्र (''शिव–पार्वती'' में षडंगों की उपादेयता) 264
(रमाशंकर मिश्र, डॉ. रेखा श्रीवास्तव)

(Education / शिक्षा)

120. आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् 265
तुलनात्मक अध्ययन एवं पोषण शिक्षा के प्रचार में उनका योगदान (डॉ. ऋचा सक्सेना, डॉ. नमिता सक्सेना)

(Other / अन्य)

121. समाज में नारी की सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं (डॉ. एस.एस. बघेल, दीप्ति यादव) 267

122. 'कमारी' वैवाहिक संदर्भ में (डॉ. सुशील सोमवंशी) 269

123. जैन दर्शन और विश्व शांति (अनिल कुमार सिरौठिया, डॉ. विभा वासुदेव) 273

124. आध्यात्मिक उपलब्धि का सम्प्रत्यय (दिनेश तिवारी, प्रो. प्रवीण दोसी) 275

125. घरेलू हिंसा अधिनियम तिल्लौरखुर्द की महिलाओं में जागरूकता का अध्ययन (ब्रह्मदीप अलूने, डॉ. सोनाली नरगुन्दे) 278

(Naveen Shod Sansar / नवीन शोध संसार)

126. Membership Cum Author's Bio-data Form 280

विनम्र अनुरोध

सम्माननीय शोधार्थियों,

'नवीन शोध संसार' के मार्च 2014 के अंक में शोध पत्र प्रकाशन हेतु शोध पत्र भेजने की अंतिम तिथि 10 फरवरी 2014 निर्धारित की गई है। अत: आपसे अनुरोध है कि इस तिथि के पूर्व अपना शोध पत्र प्रेषित कर सहयोग प्रदान करें। जिससे हम मार्च का अंक 15 मार्च 2014 से पूर्व आप तक पहुंचा सके।

– सम्पादक

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अंर्तराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(05) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(09) प्रो. डॉ. तपन चौरे ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, विक्रम विश्व विद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(11) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(12) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(16) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(18) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(22) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(24) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(02) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(12) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. आर.के. भट्ट,** प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा, एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. वी. कुलश्रेष्ठ,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.एस. मक्कड़,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. प्रतापराव कदम, माखनलाल चतुर्वेदी शा.कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मदनलाल पंवार,** पूर्व प्राचार्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. देवेन्द्र कौर,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डी.डी. विश्वकर्मा, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई कन्या शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ.पी.डी. ज्ञानानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षीतिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ. राजेंद्र श्रीवास्तव ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ.सी.एम. मेहता ..... शासकीय महाविद्यालय, जावरा, जिला रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ. अरूणा दुबे ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(23) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(24) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. संजय अग्रवाल ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. लता जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(29) डॉ. अदिति देसाई ..... श्री अरविन्दो इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साईन्स, इन्दौर (म.प्र.)
(30) डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(31) डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(32) डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. डॉ.सुनीलकुमार सिकरवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला झाबुआ (म.प्र.)
(35) डॉ. अजय काले ..... शासकीय कृ.प. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(37) डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(38) डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(39) डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(40) डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)

(43) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. नटवरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ.रवींद्र कान्हेरे..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)
(48) प्रो. डॉ. मंजुला जोशी ..... शासकीय महाविद्यालय, अंजड़ जिला बड़वानी (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. मीरा जामोद ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(50) प्रो. डॉ. एन.एस. भाटी ..... शासकीय महाविद्यालय, अलीराजपुर (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(52) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(53) डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(54) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(55) डॉ. दिलीप गर्ग ..... शासकीय महाविद्यालय पचोर, जिला–राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(57) श्रीमती भारती खरे ..... एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. के.एल. साहू..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(61) प्रो. डॉ. शशिप्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. विनीता रघुवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(64) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. आनंद तिवारी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(67) डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(68) डॉ. संध्या टिकेकर..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(70) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(72) डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(73) प्रो.डॉ. विम्मी बहल..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(74) डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(75) डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, महूगंज, जिला– रीवा (म.प्र.)
(76) डॉ. एम.पी. शर्मा..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(77) डॉ. अमोल मांजेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(78) डॉ. सुनील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(79) डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. अनूप परसाई..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(81) डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(82) श्रीमती सुमन वशिष्ठ..... राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(83) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(84) डॉ. कल्पना पारीख..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(85) डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(86) प्रो. प्रदीप सिंग ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(87) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Miraculous Plant Crescentia Cujete Found In Dhar (M.P.)

Prof. Nirbhay Singh Solanki * Prof. S.C. Mehta **

Abstract- Crescentia cujete L. found in dhar city first time. This Plant has many uses for cure the Diseases. Crescentia plant mainly native of central and south America. The fruit of these plant use in making musical instruments and beautiful utensils . The whole plant is very important for Human being. So we can say that it is miraculous for us.

Introduction

Crescentia cujete is a genus of flowering plant in the family of Bignoniaceae. It is small tree of multiple uses , originating from tropical America, now widely distributed in the tropics. The Calabash tree grows to 30 feet often with multiple trunks. The rangy twisting branches have simple elliptical leaves clustered at the nodes.

Study Area

Dhar District: - Dhar town Dhar district is located at 22 degree to 22 degree 49 minutes north latitude and 75 degree 6 minutes to 75 degree 42 minutes east longitude . Average altitude of Dhar district is 588 meters above sea level.

Methodology: I took some photographs by Digital Camera and made some specimen.

SCINTIFIC NAME - Crescentia Cujete Linn.

COMMON NAME- Calabash tree(eng.), Kalebas(eng.), Ayle(eng.), Cujete(span.),Hu lu shu (chin.).

OTHER VERNACULAR NAME

DUTCH: Kalebasboom.

FRENCH: Cacebassier.

GERMAN: Kalebassenbaum.

SPANISH: Calabacero,Morro,Jicara.

SYNONYMS- Crescentia acumiata, C. angustiforia.

Scintific Classification

- KINGDOM-Plantae-plants.
- SUBKIONGDOM-Tracheobionta-Vascular plant.
- SUPER DIVISION-Spermatophyta-seed plant.
- DIVISION-Magnoliophyta- flowering plants.
- CLASS-Magnoliopsida-Dicotyledons.
- SUBCLASS-Asteridae.
- ORDER-Scrophulariales.
- FAMILY-Bignoniaceae.
- GENUS-Crescentia L.Crescentia
- SPECIES-Crescentia Cujete L.

Botanical Discription plant:crescentia cujete is popular species of the genus an ever green plant of medium growth rate, reaching between 20-30ft tall in the wild. It is multitrunked, with a rough bark and long spreading branches forming a broud , roundish to irregular open crow measuring 25-30 ft wide.

Leaf:Leaf foliage is bright green with simple leaves arranged along the arching branches with close-set cluster of leaves at the node Flower : calyx two parted equal and deciduoas

*** Asst. Prof. of Botany Govt. P.G.college Dhar (M.P.) **Prof. of Botany Govt. P.G. College Jaora (M.P.) INDIA**

corolla large, some what campanulate,the tube unequal ,ventricose and in curved the border 5 eleft,its segments denately sinuate or torn .stamen 4 some time 5 as long as the corolla two of them shorter anther incumbent. stigma bilamiated Fruit: The fruit berry large, 1 celled reasembling a guard, with a solid bark within pulpy many seeded

USES

Making Musical Instruments

The fruit also serve as Percussion Instruments. A hollowed out fruit with grooves are rubbed with a stick the guard produces a rasping sound that serves as an accompaniment for song or dance. A rattle called a Maraca is also made from this spherical fruit.

In ancient time in India , the people made a musical instrument called as VEENA.

Health Benefits Of Calabas Tree

- The pulp of the fruit has medicinal properties and acts as a remedy for respiratory problem such as asthma and cough.
- It contains hydrocyanic acid which is considered as a purgative.
- The leaves of the calabash tree are used to reduce Blood Pressure.
- The bark is used to clean wounds and also to treat hematomas and tumors.
- Calabas fruit found potential in lowering Blood sugar that can be use in treating hyperglucemia
- Calabas fruit believe to have laxative anti inflammatory & hypoglycemic (Blood sugar lowering) effect of its many uses, calabas fruit is regarded as miracle fruit in southern philippins.

Anti-Venom Activity

In almost every part of the world where venomous snake occur numerous plant species are used as folk medicine to treat snake bite. Ayurveda state usages of specific plants against specific snake bite, hence the present study was carried out to evaluate the antivenom activity of ethanolic extract of crescentia fruit in experimental animal.

Anti-Cancer

Department Of Science & Technology (DOST), Philippine Council for Health Research and Development (PCHRD) study shows that extracts of calabas fruit & leaves have the ability to prevent blood vessel growth and development and could be used to help in prevent cancer cell in the human body.

In some countries the dried shell of the fruit is used to make bowls and fruit containers, decorated with paintings or carvings.

Discussion

This plant is very useful in Biomedical research field and in making different arts .By this plant we can pure our surroundings .We can prevent ourselves from different types of diseases by using it.

Refernces

- Andrew F .michaux The North America Sylva published by Philadelphia D Rice & A.N.HART 1859
- Tolu.odugbemi (2008) A Text Book of Medicinal plant from Nigeria ,University of Lagospress
- www.bottel tree. Com.sg/..p=469
- www.stuartxchange.com/cujete.html
- scienceray.com/bilogy/crescentia-cujete-the-calabash-tree
- www.fruitsinfo.com/calabash-tree-tropical-fruits.php.
- www. mb. com. ph/cancer.cure -seen-in-miracl- tree/
- www.ar journal.org/index.php/article/view/524
- www.worldgayon.com/2013/10/calabash-fruit
- www.google.com.in
- www.wikipedia

****

Ethnomedicinal Plants Used As Antipyrtic Agents Among The Bhil/Bhilal Tribe Of Dhar District, Madhya Pradesh

Prof. Govind waskel * Prof. Sarika Tundele **

Abstract- An ethno-medicinal survey of different villages of Dhar district of M.P. was conducted between july 2009 to june 2012.Result of this survey indicate that the 30 plants species are used for the treatment of different type of fevers prevalent among the tribal. In the present paper the information related to the Botanical Names with local names and parts of plant used and method used in fever has been discussed.

Key Words- Ethno-medicinal plants, Bhil/Bhilala tribe, Fever, Phyto-chamistry, Pharmacology

Introduction- Dhar district is located nearly 60 km. From Indore (m.p.).The district is bounded on the North by ratlam, Ujjain Mandsaur district on the East by Indore district of on the west by Jhabua, Alirajpur and on the south by khargone, khandwa district. It covers the total area of 815359 sq. Kms. The district is located at lat 220 1'14 and 230 9'49N and long 740 28'27" and 750 42' 43' E .The forest of Dhar district is mostly deciduous types. In summer temperature is extended up to 450C .The average annual rainfall is 975 mm. Dhar are the main tribe of different villages of the district. According to 2001 census, the population of Bhil/Bhilala tribe in the district was 17.40 lac constituting about 29% of the total population. The villages are in remote areas. There are little facilities for health care. Tribes are mostly depending on forest products for their life. Ethno-botany has introduced numerous little-know or unknown uses of plants. Chopra et al. (1980) described about some important plant species which is used for certain diseases by local people. Hooker (1897) published the flora of British India. Jain (2002, 2004) gave a detailed account on Indian ethno-botany. Khumbmayung et al. (2005) recorded ethno-botanical plants of Manipur state. Upadhyay & Singh (2005) Noted Geographical and environmental variation in medicinal plant properties and suggested towards improving the quality of ethno-botanical survey. Ethno-botanical survey of Bundelkhand regions was done by Saxena and Vyas (1981). Study of available literature revealed that very little ethno-botanical study has been conducted in this area. During study period (2009-2010) some new and interesting ethno-medicinal uses of plants have been recorded.

Materials and Methods

Extensive field trips were conducted for collecting the information of herbal treatment for fever. The information was collected with help of interview and questionnaires for the purpose of present study. A standard method given by Kaushik (1983) was followed with some modification. The ethno- medicinal information specially related to treatment of fever were collected from the Bhil/Bhilala tribe people of Nilda/Surani village of Dhar District of M.P. Locals of the Nilda/Surani village used thirty plant species for the treatment of fever collected information is given in the Table No.1

Result and discussion

Thirty plants species of 19 families have been recorded from the study area of Dhar forest for the treatment of fever by the tribe. Four families are dominant Fabaceae and Caesalpiniaceae. Plants of family Moringaceae vegetabl. Plants of family Boraginaceae, Annonaceae, Meliaceae , Sapotaceae, Anacardiaceae, use for fruits . Plants of family Caesalpiniaceae are used in headak.

Different parts of different plants are used in the treatment of hadck like Leaves,Roots, Seeds and Bark. one to two days are normal period of treatment. Boiling of plant parts are a common method to make a decoction medicine for hadck. Krishna and Singh (1987) explained about ethno-medicinal plants of Sikkim state. Tamuli &Saikia(2004) recorded several plant species of north Kachar district of Assam, used by the local people and Zene sssNaga Tribe of Assam. Kumar and Chauhan (2005) reported about medicinal plants of Bharatpur district of Rajasthan used by the local people of the district. Malaiya & Seema (1992) Conducted antimicrobial evaluation of certain medicinal plants of ethno- botanical importance. People are largely depending on herbal medicine for their healthcare Jain & Fillipps (1991), Mayaiya & Seema (1992), Prajapati (2007). Folk medicinal are still in the practice (Chakravarty 1975). A large number of indigenous herbal drugs are used as remedies, especially by the rural folk. Plant species show unreported medicinal uses in Tribal Villages (Pal & Jain 1998), (Trivedi & Prajapati 2006).

The paper reported 52 interesting ethno-medicinal plants used in the treatment of different type of hadck by the Bhil/Bhilala tribe of Dhar District(M.P.) .Devi(1980) reported some plant

***Assistant Prof. of Botany, ** Asst. Prof. of Botony Govt. Jawaharlal Nehru Govt. College, Barwaha (M.P.) INDIA**

species of Manipur. People of Manipur use the plant species for health purpose. Hemoborn & Goel (2005) reported some medicinal plant species of Muddas.kanjal(1940) studied plant species of Assam and listed some plant species of medicinal values.

Acknowledgement

Authors are thankful to Shri K.P.Sharma forest officer for conducting the field work, Dr.V.K.Krishna M.G.M.College,Itarsi for critical evaluation of the paper and encouragement and people of Nilda village(DharDistrict) for their valuable information for providing valuable inputs.

Bibliography

- Chopra R.N. Nayer,S.L. andChopra I.C (1980).Glossary of medicinal plants, New Delhi.
- Devi,L.D. (1990).Folflore medicines of ethnobiological importance in Manipur:Volume 1.Imphal.
- Hembron,P.P. and A.K. Goel (2005). Horopathy; Ethnomedicinal of Muddas. Ethnobotany17:89-95.
- Hooker,J.D.(1872-1897). The Flora of British India.Vol. 1-7.London.
- Jain,S.K.(1967).Ethnobotany Its scope and study Indian museum.bult.2:39-43.
- Jain,S.K. (2004).(ed.) Amanual of Ethnobotany Scientific Publishers, jodhur.pp 144
- Kanjilal, U.N. et al; (1934-40). Flora of Assam Vol. I-IV; Govt.of Assam.
- Krishna,B and Singha (1987). Ethnobotanical observation in Sikkim, J.Econ Tax. Bot. 9:1-7 (18)
- Kumar, S.and A.K.K. Chauhan(2005). Medicinal plants used by local inhabitants in Bharatpur distric, Rajastan. Ethnobotany, 17:179-183.
- Upadhyay ,R. and Jaswant singh (2005). Ethnomedicinal plant uses of plant from Tikri forest of Gonda district. Ethnobotany, 17:167-170.

(1.) Annona squamosa (L.

(2.) Emblica officinalis Gaertn.

(3.) Bambusa arundinacea (Retz) wild

(4.) Tamarindus indica L.

Table No. 1

1.	kurshaniemli	Adinsonia digitata	Bombacaceae	Fruit,wood
2.	Bel	Aegle marmelos	Ruteceae	Fruit,wood,Leaf,Root
3.	Mhaneem	Ailanthus excelsa	Simaroubaceae	Bark
4.	Kala Siruas	Albizoia lebbeckbenth	Mimosaceae	Bark,Flower,Seed
5.	Dawda	Anogeissus latifolia	Cambetaceae	Root,Bark,Leave Fruit
6.	Neem	Azadirachta indica	Meliaceae	Whole plants
7.	Semal	Bombex ceiba	Bombaceae	Whole plants
8.	Salai	Boswellia serrata	Burseraceae	Bark,Gum,Resin
9.	Sisam	Dalbergia sissoo	Fabaceae	Root,Leave,Bark,Heartwood
10.	Fansi	Dalbergia paniculata	Fabaceae	Root,Leave,Bark,Heartwood
11.	Kabit	Feronia limonia	Rutaceae	Fruit &Leave
12.	Gular	Ficus racemosa L.	Moraceae	Bark,Fruit,Latex,Root
15.	Anjan	Hardwickia binata	Leguminosae	wood
16.	Mahwa	Madhuca indica	Sapotaceae	Bark,Flower,Seed Fruit,Heartwood
17.	Bakayan	Melia qzedararach L.	Meliaceae	Bark
19.	Jamun	Syzygium cumini L.	Myrtaceae	Bark,Leave,Fruit
20.	Emil	Tamarindus indica L.	Caesalpiniaceae	Root,Fruit,Seed,Leave
21.	Teak	Tectona grandis L.F.	Verbenaceae	Whole plants
22.	Arjun	Terminalia arjuna	Combretaceae	Bark
23.	Bahara	Terminalia bellirica	Combretaceae	Bark,Fruit
24.	Harra	Terminelia chebula (Retz)	Combretaceae	Fruit
25.	Khair	Acacia catechuL.F. Wild	Mimosaceae	Bark & Hearwood
26.	Babul	Acacia nilotica delile	Mimosaceae	Pods,Leave,Bark,Gums
29.	Dhak,(palas)	Butea monosperma(Lam.) Taub.	Fabaceae	Bark,Leave,Gum,Flowers,Seeds
30.	Awala	Emblica officinalis Gaertn.	Eupharbiaceae	Fruit
32.	Dham	Grewia tilifolia vahl	Tiliaceae	Bark,Fruit
34.	Karanj	Pongania pinnata (L.) PIERRE	Fabaceae	Root,Bark,Leave,Flower,Seed,Oil
35.	Sitaphal	Annona squamosa (L.)	Annonaceae	Root,Leave,Fruit,seeds
36.	Asthara	Bauhinia variegate (L.)	Caesalpiniaceae	Roots,Bark
37.	Badi dudhi (black)	Holarrhena antidysenterica	Apocynaceae	Bark,Seeds
38.	Amaltas	Cassia fistula (L.)	Caesalpiniaceae	WholePlants
41.	Amm	Mangifera indica	Anacardiaceae	Roots Bark,Leave
42.	Khirni	Manilkara hexandar (Roxb.) dubard	Sapotaceae	Bark, Fruits
43.	Bans	Bambusa arundinacea(Retz) wild.	Bambusaceae	Roots,leaves spouts
45.	Gondi	Cardia macleoli	Boraginaceae	Fruit
46.	Toon	Cerda toona Roxb. Ex Rottler	Meliaceae	Fruit,Leave
47.	Surjana	Moringa tinctoria	Moringaceae	Fruit,Root,Bark
48.	Sahijan	Moringa oleifera (Lam.)	Moringaceae	Root,Bark,Seed,Leave

Study Of Traditional Worshiping Plant Of Barwaha (district-khargone M.P.)

Prof. SarikaTundele* Prof. Govind Waskel **

Abstract : - BARWAHA is located at Latitude: 22° 16' 46" N, Longitude: 76° 05' 12" E in west nimar. It has an elevation/altitude of 181 meters above sea level. Barwaha is rich in biodiversity. From the ancient time plants have played an important role in human civilization they played varied role ranging from food to Medicines. The present study was carried out during 2012-13. The present study deals with role of trees in worshipping. One of the roles of plant worshipping has been common in the third or fourth millennium B.C. This paper highlights on the importance of some plant known to be traditionally used in Barwaha. Tree occupies the important place in the history of India. In ancient time kadam tree is popular for lord Krishna, Pipal tree occupied a very important place during the Vedic period. The present taxonomic account is based on field survey in the Barwaha.The present paper deals with total 35 angiospermic plants like Mangifera indica L, Ficus racemosa L., Ficus religiosa L., etc. used by villagers of Barwaha.

Keywords: Worshipping, Traditional Uses, Angiospermic Plants, Festival

Introduction - Tree worship is an integral part of Hinduism. Underlying the central concept that God exists in eveything, trees are held in a special esteem as they provide food, oxygen, shelter, etc. From ages, we have been worshipping certain kinds trees and plants and attributing each one of them to be the favourite of a particular God. Traditional use of many plants and their parts during some festival occasion by local community is quiet common. In India amongst Hindus many plant species are associated with religious function, rituals and also in celebration of festivals. After being in contact with a particular plant, people come to know its significance and benefits and then they start to use them for medicines food, textiles and other uses. Due to availibity of plants this has given a place to such plant in our great Hindu cultures byworshiping them and one of to conserve them from being extinct. Such useful plants have been recorded in the religious book and knowledge transmitted them generation to generation. This work attempts to identify plant species traditionally used for worshiping god by local community on certain festival occasion.

MATERIALS AND METHOD Information of plant species used in a particular festival occasion, importance of the plant or its part in traditional use, beliefs and benefits were collected through personal interview with the head of the family in selected village Barwaha, District -Khargone, State, Madhya Pradesh. Plant species or part used was collected from the person interviewed. Local name and location of specimen, is noted at the time of interview .

Materials And Method - In many vratas /fasts done by Hindu females such as Durva astmi, Vad savitri, Sitra satami trees are worshipped. The most important occasion of tree worship is during Holi festival.(Such as Acacia sp., Aegle marmelos, Mengifera indica) are worshipped. In a number of regions of India certain trees are still worshipped different festival certain plants flowers and leaves are offered daily in the worship of God. There are very few ceremonies or festivals of Hindus which can be completed without the help of the trees. The following is the list of plants used in worshipping gods. In this paper, I reported certain plant species or parts used in different festivals are tabulated in Table. It was observed that local people use 35 plant species belongings to 29 genera and 24 families during festival occasions. These species belonged to different growth and life forms. In most of the festivals flower is common. But fruits, whole plant and leaves are used, however occasionally.

Result And Discussion - The Vat Savitri festival falls on the full moon day of the month of Jyeshtha, around June. On this day, women fast and worship the Vat tree to pray for the growth and strength of their families, like the sprawling tree which lives for centuries. Newly married women visit a nearby Vat tree and worship it by tying red threads of love around it. They offer flowers and sweets to the tree. When the moon rises full and resplendent on the horizon, special feasts are shared by families. The pipal tree or asvatta (Ficus religiosa) has had a conspicuous position in the cultural landscape of north India and human collective memory for more than 5,000 years. It was depicted even on Mohenjo Daro seals. Buddha himself found enlightenment under a pipal tree. Buddha is reported to have been born in a sacred grove, Lumbinivana, full of sal trees. For Hindus the bel tree, Aegle marmelos, is associated with Shiva, tulasi with Vishnu, and fig (Ficus glomerata) with Dattatreya, the son of Trimurty. ***The necklace of rudraksha (Elaeocarpus spp.) adorning Shiva's neck also highlights his links with the forest.*** Various trees,

*** Assistant Professor of Botany ** Assistant Professor of Botany, J.N. Govt. College, Barwaha (M.P.) INDIA**

fruits and plants have special significance in Hindu ritual. Hindu religious scripts, stories, and rituals have attempted to drive home the importance of preserving nature by deifying it through the centuries.

References:

* Gupta, S.M. 2001. Plant myths and traditions in Crooke, W.,
* "Tree and Serpent Worship",Folklore of India, pp 237-259, New Delhi
* Plant myths and traditions in India - Arvind Gupta
* Malla, Bansi Lal (2000), Trees in Indian Art, Mythology and Folklore Dagar, J.C.,"Trees and shrubs in . . . . .Religion and Mythology",Tree World, Vol. 3, No. 6., pp. 3-4,1995
* Chakraverty, R.K., and Mukhopadhyay, D.P,"The Great Banyan Tree",Bulletin Of Botanical Survey of India, Vol. 29, No.1-4, pp 59-70, Botanical Survey of India, Calcutta,1987
* Amrita,"Temples of Nature",Discover India, Vol.12, No.3, pp.20-22,1999.
* Agrawala, V.S.,"Ancient Indian Folk Cults",Prithivi Prakashan, Varanasi, India,1970
* Agarwal, S.R.,"Trees, Flowers and Fruits in Indian Folk Songs, Folk Proverbs and Folk Tales",Glimpses of Indian Ethnobotany, pp 3-12, Oxford & IBH Publishing House, New Delhi.,
* Dagar, J.C.,"Trees and shrubs in Religion and Mythology",Tree World, Vol. 3, No. 6., pp. 3-4,1995.

There are many plants and their parts are used on various festive occasions by local community of Barwaha ,which are listed below in the table 1 :-

Botanical Name	Family	Common Name	Parts used	Festival
Polyalthia longifolia (Sonn.)Thw ..	Annonaceae	False Ashoka/Debdaru	Wood/leaves	Dusshera/Diwali festival
Capparis decidua	Capparaceae	Kerda/kair/Karir	Plant	Sitala satami
Gossipium herbasium L	Malvaceae	Kapas/cotton	Seed/cotton	All festival
Hibiscus rosa sinensis	Malvaceae	China rose/Gurdhal	Flower	Ganesh/Lashkmi pujan
Hibiscus schizopetalus	Malvaceae	Latkan Gurdhal/Japenese latern ..	Flower	All festival
Aegle marmelos	Rutaceae	Bael	Fruit,leaves	Shivratri/Shiv pujan
Citus medica	Rutaceae	Lime/nimbu	Fruit	All festivals
Mangifera indica	Anacardiaceae	Mango	Whole Plant	Holi/Diwali/all festivals
Butea monosparma	Papilinioceae	Palaash	Flower	Holi
Acacia arebica	Mimosaceae	Babul	Wood	Holi
Acacia nilotica	Mimosaceae	Babul	Wood	Holi
Prosopis cineriria	Mimosaceae	Sami/shami	Wood/Flower	Holi
Prosopis spicigera	Mimosaceae	Sami/Shami	Wood	Holi
Rosa alba	Rosaceae	Rose	Flower	All Festivals
Cucurbita maxima Duch.	Cucurbitaceae	Cucumber	Fruit	Vastupujan, Janmaastami
Mimosops elengi	Sapotaceae	Maulsari/Bakula	Flower	All festival
Jasminum flexile vahi, symb.	Olenaceae	Juhi	Flower	All festival
Jasminum multiflorum ..... (Burn.f.)Andr	Olenaceae	Mogra	Flower	All festival
Nyctanthus arbortristis L	Olenaceae	Parijat	Flower	All festival
Nerium indicum	Apocyanaceae	Lal Kaner	Flower	Ganesh pujan
Plumeria rubra forma ..... tricolor(R&s.)Woodrow	Apocyanaceae	Champa	Wood/ Flower	All Festival
Nelumbo nucifera	Nelumbonaceace ..	Kamal/Lotus	Flower	Vishnu/Lashmi pujan
Calotropis prosera	Asclepidiaceae	Akuaa	Flower	Shivratri,Shivpujan, Hanuman Jayanti
Datura innoxia	Solanaceae	Datura	Flower	Shivratri
Ocimum sanctum	Lamiaceae	Tulsi	Leaves	All festival
Piper betel	Piperaceae	Paan	Leaves	Navratri, Diwali, Ganesh churti etc.
Bellis perennis	Asteraceae	Sevanti/common daisy	Flower	All festivals
Ficus benghalensis	Moraceae	Vad	Whole Plant	Vadsavitri
Ficus relegiosa L.	Moraceae	Pipal	Whole Plant	Vad savitri
Musa paradisiacal	Musaceae	Kela	Leaves/Fruit	All festivals
Tagetus erecta	Asteraceace	Genda	Flower	All festivals
Panadanus odoratissimus	Pandanaceae	Kewra	Flower	Kewra tijj
Cynodon dactylon	poaceae	Dhub	Whole Plant	Ganesh chaturthi, Shiraadh
Areca catechu	Arecaceae	Supari	Nut	Navratri / Ganesh Pujan
Cocos nucifera	Arecaceae	Nariyal	Fruit	All Festival
Zizipus jujuba	Rhamnaceae	Ber	Fruit	Shiv ratri
Nelumbo nucifera	Nelumbonaceae	Kamal/lotus	flower	All festivals
Bellis perennis	Moraceae	Sevanti/common daisy	flower	All festivals
Ficus racemose	Moraceae	Goolar	Fruits	Brahma,Vishnu,Shiva, Trinity

Biodiversity In Algal Pond Water And Its Physico-Chemical Factors

Dr. Darasingh Waskel * Tarachand Nargawe **

Abstract - An ecological study of two ponds water of Dhar town MP. Verious Physico-chemical parameters were analyzed at seasonal (Rainy,Winter and Summer) 2011-2012. Algal diversity in relation to pollution has also been discussed. Group Euglenophyceae are poorly represented indicating that organic pollution is slightly redused. Group Chlorophyceae were that most dominant in the study period. Group Cynophyceae dominated during Winter season. Group Bacillariophyceae were less singnificant. The most important parameters operating in Kalika pond and Sitapat pond are pH, Turbidity, Specific conductivity,Total hardness, TDS, Nitrate, Sulphate and Phasphate. Desmids occurred in fairly good numbers, which is an indicators that the ponds water are Oligotrophic and tending to become eutrophic.

Keywords: Diatom,Physoco-chmical factors,oligotropic, eutropic.

Introduction: In an investigation of two ponds water of Dhar town, many species of algae were recorded.The algal flora were identified with the help of key's given by Smith (1950), Prescott (1951), Adoni (1985). Several workers have studied the Ecology of fresh water algae, a few of interest one are of Munawar (1970), Singh (1960), Zafar (1964), Hosmoni and Bharathi (1982). Physico-chemical parameters were analyzed by following the standards methods of APHA (1992), Trivedi and Goel (1984).

Materials And Methods: The present study was carried out in the Kalika pond and Sitapat pond Dhar town.The physical and salient features of the two ponds are described in Table -1. Sampling was done between seasonally (Rainy,Winter and Summer seasons) for two years 2011-2012. Physico-chemical parameters were analized by following the standards methods of APHA (1992). The sample were taken in 1-litre plastic bottles.The water samples for algae study were preserved by using 10 ml of Lugol's solution and examind under a compound microscope. The plankton samples were collected following Welch (1953) and Lind (1979) by filtering 40 lit. of water through small plankton net made up to Bolting silk no. 25 (64 u mesh size). The plankton was identified with help of key's by Smith (1950), Adoni (1985), Hosmani and Vasanth Kumar (1996).

See Tabel No. 1

Result And Discussion -The results of the analysis of the two ponds are given in Table-2 and 3. All physic- chemical factors showed higher values in Kalika pond wich were compared to Sitapat pond during study period. Algae,the prime and nature component of natural water, are the main primary producers in aquatic ecosystems. Howewewr,their diversity, population and abundance are related to certain environmental factors. Hosmani and Bharathi (1977), Naganandani and Hosmani (1990), Sreenath (1994) and Anil kumar (1998) have stressed the inport ance of alkalinity, water temperature, Co2,DO, Nitrate and Phosphate in the abundance of algal growth.Group Euglenophyceae are poorly represented in the pond water indicating that organic pollution may be slightly low. Harish (2002) concluded that phosphates, Nitrates and Nitrites control the growth of euglenoids in polluted water. The distribution of euglenophyceae in Sitapat pond is 1.11% as compared to 2.31% in Kalika pond.

Chlorophyceae were the most dominant group throughout the study period. The Chlorophyceae dominanted in the number of genera, however their percentage composition was 11.87% in Sitapat pond and 20.62% in the Kalika pond. The chlorophyceae are the indicators of healthiness of the ecosystem are also responsible for addition of high amounts of oxygen to the water body. Tripathi and Pandey (1990), Sunitha (2005), Susheela and Kiran (2006) are also similar reported.

The distribution of Cynophyceae in Sitapat pond is 6.87% as compared to 9.64% in Kalika pond. Cyanophyceae compaired second dominant group of algae.Cyanophyceae were found maximum in summer season and minimum in rainy season, when Phosphate and BOD were higher in these seasons. Goutam Ranjan (2007), U.Anita (2007), Milind S. Hugare (2008), reported maximum in summer season and minimum in the rainy season.

The Bacillariophyceae constituted important part of algae. The distribution of diatoms in Sitapat pond in 6.42% as compaired to 8.38% in Kalika pond. The minimum diatoms was found in summer season and maximum in winter season. Tripathi and Pandey (1990), Naganandani and Hosmani (1998)

*** Department of Zoology ** Department of Chemistry Maharaja Bhoj Govt.P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA**

observed that diatoms were maximum during winter and summer seasons. Rajendra Nair (1990) and Hosmani (1975) reported that diatoms population were directly correlated to Phosphate content. In the present study, diatoms growth was directly proportional to Phosphate and Nitrate content. Certain physico-chemical parameters like Total alkalinity (vollenweider 1966), phosphate (Ohle 1955), Nitrogen and Phosphorus (palmer 1980), and Chloride (Beeton 1965) have been reported a bearing on the trophic status of both ponds. In the present study, concentration of Nitrates and Phosphate usually remained much above the eutrophication level. Beeton (1965) opined that increased concentration of chloride and phosphate could be used as an index of eutrophication. High values of alkenity, phosphate, chloride, sulphate reported in the present study, thus indicate the eutrophic nature of these ponds.

Conclusion:-Through all these observations, it can be concluded that many physico-chemical parameters are necessary for existence of diatoms. pH and Oxidizable organic matters coupled with low concentration of Nitrates and dissolved oxygen and high concentration of nitrate and phosphate fevour the growth of algae. ***(See Table No. 2 & 3)***

References:-

- Palmer,C.M.(1980). Algae and water pollution. Castle House publications Ltd., England pp.123.
- Smith, G.M. (1950). The fresswater algae of United states. McGrow Hill Book Company Inc., New York.
- Anil kumar, S. (1998). Fress water algae of Hassam District,Karnataka,India ph.D.theses,Mysore University.
- APHA, (1995). Standard Methods for examination of water and Wastewater,19th Edition,APHA.
- Harish, (2002). Limnology of ponds and lakes of Mysore Karnataka,India,ph.D thesis, Mysore University.
- Homani,S.P. and Vasant kumar,L.(1996). Calcium carbonate saturation index and its influence on phytoplankton.poll,Res.,15(3): 285-288.
- Hosmani,S.P. and Bharati,S.G.(1977). Hydrobiological studies in ponds and lakes of Dharwar,III. Occarance of two Euglenoid blooms. Science J.,30:151-156.
- Singh,B.N. and Swarup,K. (1979). Limnological studies of Suraha lake (Balia): The periodicity of phytoplankton, J.Indian. Bot.Sco.,58:319-329.
- Zafar,A.R. (1964). n the Ecology of the Algae in certain fish ponds of Hyderabad, India,I. Physic-chemical complexes, Hydrobiologia, 23:179-195.
- Trivedy,R.K.and Goel,P.K. (1986). Chemical and Biological Methods for water pollution studies, Environmental publications, karad,pp. 94-96.
- Munawar,M. (1970). Limnological studies on fresswater pond of Hyderabad India. The Biotope, Hydrobiologia, 35:127-162.
- WHO, (2004).Guidelines for drinking water quality thireded recommendations. Geneva: World Health Organisation.
- Chandra R. Nishadh K.A. and Azeez, P.A.,(2009). Monitoring water quality of coimbatore wetlands, Tamil Nadu,India. Environ. Monit. Assess.,64,1007-1066.
- Basavaraja Simpi, S.M. Hiremath,KNS Murthy, K.N.Chandrashekar appa, Anil N patel, E.t. Puttiah, (2011). Analysis of water quality using physic-chemical parameters Hosahalli Tank in S.Himoga District, Karnataka, India,11(3).
- Dwedi, B.K. and G.C.pandey (2002). Physico-chemical factors and algal diversity of two ponds (Giriji kund and Maqubara pond), Faizabad. poll.,R.S.,21:361-370.
- Pani S.and Misra S. M. Impact of Artificial Aerotion/Ozonisation on algal community structure of a tropical europhic lake Eco.Env. and Cons. 9(1),31-34,(2003).
- K.Shanthi, Ramaswamy and Lakshmana perumalswamy,(2002). hydrobiological studies of singanallur lake at Coimbatore, India J. Nature of environ. And poll.Tech.,1(2),97-101.
- Rajendra Nair,M.S. (1999). Seasonal variation of phytoplankton in relation to physico-chemical factors in a village pond at India (vidisha). Indian. J. Ecotoxical.Environ.Monit.,9(3):177-182.

Table.1: Salient features of the ponds

1	name of pond	kalika pond	Sitapat pond
2	Location	Latitude =20 degree 1' 14" Longitude=44degree 28'27"	Latitude =22 degree 33'30" Longitude=75degree 18'10"
3	Length of pond	Earthen-1068m.	Earthan-570m.
4	Maximum height	Earthen -382m.	Earthan-16.28m.
5	Top width	340m.	Earthen -3m.
6	Maximum depth	RL-4m.	RL-110.10m.
7	Surface area	0.13 sq.km.	RL-111 m.

Table 2: Seasonal Variation in physico-chemical and algal diversity in Sitapat pond.

S.No.	Parameters/algae	2011			2012		
		Rainy	Winter	Summer	Rainy	Winter	Summer
1	Taste	TL	TL	TL	TL	TL	TL
2	Colour	Dusky	Dark green	Light green	Dusky	Dark green	Light green
3	Turbidity(NTU)	43.5	23.3	25.4	43.2	22.9	25.5
4	pH	6.8	7	7.2	6.7	6.9	7
5	Specific conductivity (umhos/cm)	491	482	540	490	481	545
6	TDS(mg/L)	490	480	505	489	480	507
7	Total Hardness(mg/L)	182	200	220	185	199	225
8	Total Alkalinity(mg/L)	195	240	245	192	241	248
9	Nitrate(mg/L)	2.6	2.02	2	2.04	2.02	2.01
10	Sulphate(mgL)	40.8	59.4	35.4	41.3	59.6	39.2
11	Phasphate(mg/L)	3.1	2.89	3.4	3.1	2.91	3.3
12	DO(mg/Ll)	5.8	5.11	5.1	5.6	5.9	5.4
13	BOD(mg/Ll)	3.7	3.6	3.9	3.8	3.7	3.1
14	COD(mg/L)	32.1	35	31.1	33	34.7	30.01
ALGAE							
1	Chlorophyceae	1800	2200	2500	1700	1950	2600
2	Cyanophyceae	2000	2100	2300	1900	2000	2350
3	Bacillariophyceae	1050	1200	900	1100	1300	950
4	Euglenophyceae	4	117	111	128	112	110

Note:-TL=Taste less

Table 3: Seasonal Variation in physico-chemical and Algal diversity in Kalika pond

S.No.	Parameters/algae	2011			*2012*		
		Rainy	Winter	Summer	*Rainy*	*Winter*	Summer
1	Taste	TL	TL	TL	*TL*	*TL*	TL
2	Colour	Dusky	Dark green	Light green	*Dusky*	*Dark green*	Light green
3	Turbidity(NTU)	45.5	20.8	35.7	*46*	*25.4*	36.6
4	pH	8	8.5	9.01	*8.02*	*8.05*	9
5	Specific conductivity (umhos/cm)	498	482	525	*476*	*480*	527
6	TDS(mg/L)	490	475	509	*488*	*470*	510
7	Total Hardness(mg/L)	260	290	300	*268*	*188*	307
8	Total Alkalinity(mg/L)	198	250	260	*193*	*255*	266
9	Nitrate(mg/L)	2.8	2.04	2	*2.1*	*2*	2
10	Sulphate(mg/L)	66	61.2	54.51	*68.02*	*62.2*	60
11	Phasphate(mg/L)	4	3.1	4.12	*3.8*	*3.12*	4.4
12	DO(mg/L)	6.8	7.4	6.1	*7.2*	*8.6*	6.8
13	BOD(mg/L)	5.2	4.9	5.7	*4.6*	*4.5*	5.1
14	COD(mg/L)	35.5	40.1	33.2	*36.02*	*42.2*	32.7
ALGAE							
1	Chlorophyceae	3800	2500	2900	*4000*	*2600*	3100
2	Cyanophyceae	3000	3200	3500	*3100*	*3300*	3600
3	Bacillariophyceae	1100	1500	1000	*1200*	*1600*	1100
4	Euglenophyceae	156	140	128	*160*	*145*	129

Note:-TL=Taste less

Conservation of ethnobotanical plants in Patalkot Chhindwara M.P.

Droupadi Parte *

Abstract- Ethnobotanical survey of Patalkot about 45 species, belonging to 40 genera under 24 families naturally growing and cultivated frequently used ethnobotanical plants was collected. They are used for different ethnobotanical purposes by the local tribal communities.The study main purpose to public awareness. Cultivation and conservation on a sustainable basis with in the environment protection.

Key words: Conservation, Ethnobotany, Material culture, Patalkot.

Introduction

Patalkot is one of the remote tribal rich district of Chhindwara.The place is located at a distance of 62 K.M. From the district headquarter in the north-west direction and 23 km from Tamia in North east direction. It is famous for its forest wealth and the main tribe in the area is Bharia and Gond. They treat varies aliments with plant-based remedies on the basis of their rich knowledge about the plant species found in forest. The agricultural practices and other activities of primitive man provide valuable clues to conservation of plant resources. Conservation values assigned by the traditional societies through cultural religious association. Many festivals are associated with the significance of plants such as Hariyali, Harchhath, Haritalica, Govardhan puja, Mahashivratri, Badadev pujan etc.are the festivals where offerings many fruits, flowers, leaves, food grains and vegetable. The tribal's are associated many festivals with plants, specific plants are associated with particular day and God-Goddess and them worshipped. There are several myths associated with plant species help in there conservation.

During field work, observation of the conservation values of a region by the tribal is one of the important aspects of ethnobotany apart from making an inventory of plants wed by the tribal's as food, medicine and various other purposes in this region.

The species are arranged alphabetically followed by the family name, local name and purpose of conservation:

Discussion & conclusion

The plants are provided food, fiber, fodder, shelter, timber, fuel and many others

products of human needs. They also had healing and curing abilities. The tribal's are associated with plants so they do not cut the plants, they worship and protect them .These way tribal's people should be encouraged for conservation. They also prevents cutting of plants and help in their conservation.

Acknowledgements

The author is thankful to the tribals' people of Patalkot for their precious information and support.

Reference

1. Ahirwar, R.K.,Parna, I.C.& Singh,G.K.,(2012). Conservation of medicinal plants In District Anuppur M.P.(India); Indian J.Applied &Pure Bio.Vol.27 (1), 43- 48(2012) .
2. Bhakat, R.K., Sen, U.K. & Pandit P.K.2OO8.Role of sacred groves in Conservation of plants. Indian Forester 134(7):866-874.
3. Dashora, K., Bhardwaj & Gupta Anjali 2009.Conservation ethics of Plants in India.J.Econ.Taxon.Bot. Vol.33 No.4 (2009):841-845.
4. Jain, S.K.1963a.Magico-religious beliefs about plants among the tribals of Bastar, Madhya Pradish.Q.J.Myth. Soc.54: 73-94.
5. Maheshwari, J.k.1995.Ethnobotany in Development and conservation of Resources.In: A Manual of ethnobotany (2ed.) S.K.Jain pp-112-120
6. Sahu, T.R.1999.Biodiversity conservation of Bastar (M.P.) in tradition and Religious context.pp.55-64.In: Biodiversity, Toxonomy and Ecology. (R.K.Tandon and P.Singh.Eds.) .Scientific publishers Jodhpur.

Sr.	Botanical name	Local name	Family	Useful parts	Purpose for conservation
1	Acorus calamus L.	Buch	Araceae	Rhizome	For diseases.
2	Aegle marmelos (L.) Corr.	Bel	Rutaceae	Leaf ,Fruit	Dedicated to Lord Shiva.
3	Agave angustifolia Haw.	Ketkis	Agavaceae	Whole plant	For forming hedge.
4	Amaranthus viridis L.	Chaulai	Amaranthaceae	Leaf	For vegetable.
5	Amorphophallus bulbifer (Roxb.)	Blume	Suran	Araceae	Corm For vegetable
6	Asparagus racemosus Willd.	Satavar	Lilliaceae	Root	For diseases.
7	Boswellia serrata Roxb.ex.Colebr.	Salai	Burseraceae	Stem	Stem for Marriage.
8	Buchanania lanzan Spreng.	Char	Anacardaceae	Fruits	For Fruits.

*** Govt. P.G.College, Chhindwara (M.P.) INDIA**

9	Bauhinia purpurea L.	Keolar	Caesalpiniaceae	Leaf	Vegetable
10	Bauhinia vahlii Wight.&Arn.	Mahul	Caesalpiniaceae	Leaf, Stem	Leaves for Pattal (Food plate), Fiber
11	Calotropis procera (Ait.)R.Br.	Aak	Asclepiadaceae	Flowers and latex	Flowers for worship Lord Shiva and latex for diseases.
12	Chlorophytum borivilianum Sant.&Fernandez	Safed musli	Liliaceae	Root Tuber	For medicine
13	Crotalaria juncea L.	Sanai	Papilionaceae	Stem	For fiber
14	Cynodon dactylon (L.)Pers.	Doob	Poaceae	Leaf blade	To convert simple water into holly water.
15	Datura metal L.	Datura	Solanaceae	Flowes,Fruit	For worship Lord Shiva.
16	Dillenia indica L.	kalle	Dilleniaceae	Stem	For diseases.
17	Dillenia pentagyna Roxb.	Suarukh	Dilleniaceae	Stem	For diseases.
18	Diospyros melanoxylon Roxb.	Tendu	Ebenaceae	Leaf	For making Bidi.
19	Dendrocalamus strictus (Roxb.) Nees	Bans	Poaceae	Stem	For basketry
20	Euphorbia neriifolia L.	Thuhar	Euphorbiaceae	Whole plant	For forming hedge.
21	Euphorbia nivulia L.	Sehud	Euphorbiaceae	Whole plant	For forming hedge.
22	Ficus benghalensis L.	Bargad	Moraceae	Whole plant	As an abode of departed souls and Gods.
23	Ficus religiosa L.	Peepal	Moraceae	Whole plant	As an abode of departed souls and Gods.
24	Gloriosa superba L.	Kalihari	Liliaceae	Whole plant	Warship in "Haritalika"
25	Lawsonia inermis L.	Mehndi	Lythraceae	Whole plant	Hedge, leaf for dye.
26	Madhuca longifolia var. latifolia (Roxb.)Chev.	Roxb.	Mahuua	Sapotaceae	Flower For food,alchohalic beverage
27	Mangifera indica L.	Aam	Anacardiacee	Stem ,Fruits	Stem for marriage, fruits for food.
28	Moringa oleifera Lamk.	Munga	Moringaceae	Fruits	For vegetable
29	Murraya koenigii (L.) Spreng.	Meethi neem	Rutaceae	Leaf	For Condiments.
30	Ocimum sanctum L.	Tulisi	Lamiaceae	Whole plant	As a very Sacred plant.
31	Oryaza rufipogon Griff.	Pasai dhan	Poaceae	Grain	Used during festival & to break the Harchhath fast.
32	Panicum paludosum Roxb.	Kutki	Poaceae	Grain	For food
33	Paspalum scrobiculatum L.	Kodo	Poaceae	Grain	For food
34	Phyllanthus emblica L. Gaertn. (Emblica officinalis)	Amla	Euphorbiaceae	Whole plant For diseases and worship.	
35	Pennisetum honenachacheri	Mawai	Poaceae	Leaf sheaths	For rope
36	Phoenix acaulis Roxb.ex. Buch-Ham.	Chhind	Arecaceae	Leaf	For broom and mat making
37	Pongamia pinnata (L.) Pierre.	Karanj	Papilionaceae	Fruits	Used skin diseases.
38	Ricinus communis L.	Arandi	Euphorbiacae	Seed, Twig	Keep away evil spirits, seed oil used as lubricants.
39	Schleichera oleosa (Lour.) Oken.	Kushum	Sapindaceae	Whole plant	For collection of Lac.
40	Semecarpus anacardium L.	Bhelwa	Anacardiaceae	Twig	Use twig in Hariyali festival.
41	Shorea robusta Gaertn. f.	Sal	Dipterocarpaceae	Whole plant	Leaf for Pattal, gum offered to God, Goddess.
42	Sterculia urens Roxb.	Kullu	Sterculiaceae	Gum	For medicine
43	Terminalia alata Henye ex.Roth.	Saja	Combrataceae	Whole plant	Sacred plant, worship as "Bada Dev"
44	Terminalia bellirica (Gaertn.)Roxb.	Baheda	Combrataceae	Fruits	Used for diseases.
45	Zea mays L.	Makka	Poaceae	Grain	For food.

A Study Of Water Pollution With Special Refrence Barwaha City

Prof. Ramesh Kumar Auchat * Prof. J.L. Solanki **

Introduction - When insoluble solid particles, Soluble, Salts, Sewages (Waste Water), Garbage low level radio active substances, industrial wastes, Algae, Bacteria etc. Go into Water, Water gets polluted.

This type of pollution is called water pollution Water pollution is the contamination of water bodies. Water pollution occurs when pollutants are discharged directly or indirectly inter **Water pollution** is the contamination of water bodies (e.g. lakes, rivers, oceans, aquifers and groundwater). Water pollution occurs when pollutants are discharged directly or indirectly into water bodies without adequate treatment to remove harmful compounds. Water pollution affects plants and organisms living in these bodies of water. In almost all cases the effect is damaging not only to individual species and populations, but also to the natural biological communities.

Water pollution is a major global problem which requires ongoing evaluation and revision of water resource policy at all levels (international down to individual aquifers and wells). It has been suggested that it is the leading worldwide cause of deaths and diseases and that it accounts for the deaths of more than 14,000 people daily.

An estimated 700 million Indians have no access to a proper toilet, and 1,000 Indian children die of diarrheal sickness every day. Some 90% of China's cities suffer from some degree of water pollution and nearly 500 million people lack access to safe drinking water.

In addition to the acute problems of water pollution in developing countries, developed countries continue to struggle with pollution problems as well. In the most recent national report on water quality in the United States, 45 percent of assessed stream miles, 47 percent of assessed lake acres, and 32 percent of assessed bays and estuarine square miles were classified as polluted.

Water is typically referred to as polluted when it is impaired by anthropogenic contaminants and either does not support a human use, such as drinking water, and/or undergoes a marked shift in its ability to support its constituent biotic communities, such as fish. Natural phenomena such as volcanoes, algae blooms, storms, and earthquakes also cause major changes in water quality and the ecological status of water.

Causes

The specific contaminants leading to pollution in water include a wide spectrum of chemicals, pathogens, and physical or sensory changes such as elevated temperature and discoloration. While many of the chemicals and substances that are regulated may be naturally occurring (calcium, sodium, iron, manganese, etc.) the concentration is often the key in determining what is a natural component of water, and what is a contaminant. High concentrations of naturally occurring substances can have negative impacts on aquatic flora and fauna.

Oxygen-depleting substances may be natural materials, such as plant matter (e.g. leaves and grass) as well as man-made chemicals. Other natural and anthropogenic substances may cause turbidity (cloudiness) which blocks light and disrupts plant growth, and clogs the gills of some fish species.

Many of the chemical substances are toxic. Pathogens can produce waterborne diseases in either human or animal hosts. Alteration of water's physical chemistry includes acidity (change in pH), electrical conductivity, temperature, and eutrophication. Eutrophication is an increase in the concentration of chemical nutrients in an ecosystem to an extent that increases in the primary productivity of the ecosystem. Depending on the degree of eutrophication, subsequent negative environmental effects such as anoxia (oxygen depletion) and severe reductions in water quality may occur, affecting fish and other animal populations.

Chemical and other contaminants

Muddy river polluted by sediment. Photo courtesy of United States Geological Survey.Contaminants may include organic and inorganic substances.

Organic water pollutants include:

- Detergents
- Disinfection by-products found in chemically disinfected drinking water, such as chloroform
- Food processing waste, which can include oxygen-demanding substances, fats and grease
- Insecticides and herbicides, a huge range of organohalides and other chemical compounds
- Petroleum hydrocarbons, including fuels (gasoline, diesel fuel, jet fuels, and fuel oil) and lubricants (motor oil), and

*** J.N. GOVT. College Barwaha (M.P.) * *J.N. GOVT. College Barwaha (M.P.) INDIA**

fuel combustion byproducts, from stormwater runoff
- Tree and bush debris from logging operations
- Volatile organic compounds such as industrial solvents, from improper storage.
- Chlorinated solvents, which are dense non-aqueous phase liquids may fall to the bottom of reservoirs, since they don't mix well with water and are denser.
  * Polychlorinated biphenyl
  * Trichloroethylene
- Perchlorate
- Various chemical compounds found in personal hygiene and cosmetic products.

A garbage collection boom in an urban-area stream in Auckland, New Zealand .

Inorganic water pollutants include:

- Acidity caused by industrial discharges (especially sulfur dioxide from power plants)
- Ammonia from food processing waste
- Chemical waste as industrial by-products
- Fertilizers containing nutrients--nitrates and phosphates-which are found in stormwater runoff from agriculture, as well as commercial and residential use
- Heavy metals from motor vehicles and acid mine drainage
- Silt in runoff from construction sites, logging, slash and burn practices or land clearing sites.

Macroscopic Pollution in Parks Milwaukee, WI

Macroscopic pollution-large visible items polluting the water-may be termed "floatables" in an urban stormwater context, or marine debris when found on the open seas, and can include such items as:

- Trash or garbage (e.g. paper, plastic, or food waste) discarded by people on the ground, along with accidental or intentional dumping of rubbish, that are washed by rainfall into storm drains and eventually discharged into surface waters
- Nurdles, small ubiquitous waterborne plastic pellets
- Shipwrecks, large derelict ships.

Measurement

Environmental Scientists preparing water autosamplers

Water pollution may be analyzed through several broad categories of methods: physical, chemical and biological. Most involve collection of samples, followed by specialized analytical tests. Some methods may be conducted in situ, without sampling, such as temperature. Government agencies and research organizations have published standardized, validated analytical test methods to facilitate the comparability of results from disparate testing events

Sampling

Sampling of water for physical or chemical testing can be done by several methods, depending on the accuracy needed and the characteristics of the contaminant. Many contamination events are sharply restricted in time, most commonly in association with rain events. For this reason "grab" samples are often inadequate for fully quantifying contaminant levels. Scientists gathering this type of data often employ auto-sampler devices that pump increments of water at either time or discharge intervals.Sampling for biological testing involves collection of plants and/or animals from the surface water body. Depending on the type of assessment, the organisms may be identified for biosurveys (population counts) and returned to the water body, or they may be dissected for bioassays to determine toxicity.

Physical testing

Common physical tests of water include temperature, solids concentrations and turbidity.

Chemical testing

See also: water chemistry analysis and environmental chemistry.Water samples may be examined using the principles of analytical chemistry. Many published test methods are available for both organic and inorganic compounds. Frequently used methods include pH, biochemical oxygen demand (BOD) chemical oxygen demand nutrients (nitrate and phosphorus compounds), metals (including copper, zinc, cadmium, lead and mercury), oil and grease, total petroleum hydrocarbons (TPH), and pesticides.

Biological testing

Main article: Bioindicator Biological testing involves the use of plant, animal, and/or microbial indicators to monitor the health of an aquatic ecosystem. For microbial testing of drinking water, see Bacteriological water analysis.

Control of pollution

Domestic sewage

Main article: Sewage treatment .Deer Island Waste Water Treatment Plant serving Boston, Massachusetts and vicinity. Domestic sewage is 99.9 percent pure water, while the other 0.1 percent are pollutants. Although found in low concentrations, these pollutants pose risk on a large scale. In urban areas, domestic sewage is typically treated by centralized sewage treatment plants. In the U.S., most of these plants are operated by local government agencies, frequently referred to as publicly owned treatment works (POTW). Municipal treatment plants are designed to control conventional pollutants: BOD and suspended solids. Well-designed and operated systems (i.e., secondary treatment

or better) can remove 90 percent or more of these pollutants. Some plants have additional sub-systems to treat nutrients and pathogens. Most municipal plants are not designed to treat toxic pollutants found in industrial wastewater.Cities with sanitary sewer overflows or combined sewer overflows employ one or more engineering approaches to reduce discharges of untreated sewage, including:

- utilizing a green infrastructure approach to improve tormwater management capacity throughout the system, and reduce the hydraulic overloading of the treatment plant
- repair and replacement of leaking and malfunctioning equipment
- Increasing overall hydraulic capacity of the sewage collection system (often a very expensive option).

A household or business not served by a municipal treatment plant may have an individual septic tank, which treats the wastewater on site and discharges into the soil. Alternatively, domestic wastewater may be sent to a nearby privately owned treatment system (e.g. in a rural community).

Industrial wastewater

Main article: Industrial wastewater treatment Dissolved air flotation system for treating industrial wastewate . Some industrial facilities generate ordinary domestic sewage that can be treated by municipal facilities. Industries that generate wastewater with high concentrations of conventional pollutants (e.g. oil and grease), toxic pollutants (e.g. heavy metals, volatile organic compounds) or other nonconventional pollutants such as ammonia, need specialized treatment systems. Some of these facilities can install a pre-treatment system to remove the toxic components, and then send the partially treated wastewater to the municipal system. Industries generating large volumes of wastewater typically operate their own complete on-site treatment systems. Some industries have been successful at redesigning their manufacturing processes to reduce or eliminate pollutants, through a process called pollution prevention. Heated water generated by power plants or manufacturing plants may be controlled with:

- cooling ponds, man-made bodies of water designed for cooling by evaporation, convection, and radiation
- cooling towers, which transfer waste heat to the atmosphere through evaporation and/or heat transfer
- cogeneration a process where waste heat is recycled for domestic and/or industrial heating purposes.

Agricultural wastewater

Main article: Agricultural wastewater treatment Riparian buffer lining a creek in Iowa

Nonpoint source controls

Sediment (loose soil) washed off fields is the largest source of agricultural pollution in the United States. Farmers may utilize erosion controls to reduce runoff flows and retain soil on their fields. Common techniques include contour plowing, crop mulching, crop rotation, planting perennial crops and installing riparian buffers.Nutrients (nitrogen and phosphorus) are typically applied to farmland as commercial fertilizer; animal manure; or spraying of municipal or industrial wastewater (effluent) or sludge.

Nutrients may also enter runoff from crop residues, irrigation water, wildlife, and atmospheric deposition. Farmers can develop and implement nutrient management plans to reduce excess application of nutrients. To minimize pesticide impacts, farmers may use Integrated Pest Management (IPM) techniques (which can include biological pest control) to maintain control over pests, reduce reliance on chemical pesticides, and protect water quality.

References

1. Pink, Daniel H. (April 19, 2006). "Investing in Tomorrow's Liquid Gold". Yahoo. http://finance.yahoo.com/columnist/article/trenddesk/3748.
2. West, Larry (March 26, 2006). "World Water Day: A Billion People Worldwide Lack Safe Drinking Water". About. http://environment.about.com/od/environmentalevents/a/waterdayqa.htm.
3. "A special report on India: Creaking, groaning: Infrastructure is India's biggest handicap". The Economist. December 11, 2008. http://www.economist.com/specialreports/displaystory.cfm?story_id=12749787. "China says water pollution so severe that cities could lack safe supplies". Chinadaily.com.cn. June 7, 2005.
4. "As China Roars, Pollution Reaches Deadly Extremes". The New York Times. August 26, 2007.
5. United States Environmental Protection Agency (EPA). Washington, DC. "The National Water Quality Inventory: Report to Congress for the 2002 Reporting Cycle - A Profile." October 2007. Fact Sheet No. EPA 841-F-07-003. a b United States Geological Survey (USGS), Denver, CO (1998). "Ground Water and Surface Water: A Single Resource." Circular 1139.
6. Clean Water Act, section 502(14), 33 U.S.C. § 1362 (14).
7. CWA section 402(p), 33 U.S.C. § 1342(p)
8. EPA. "Protecting Water Quality from Agricultural Runoff." Fact Sheet No. EPA-841-F-05-001. March 2005.

****

Advanced Oxidation Processes for waste water treatment

Smt. Sunaina Chouhan *

Advanced oxidation processes (AOPs) constitute a promising technology for the treatment of wastewaters containing non-easily removable organic compounds. All AOP are designed to produce hydroxyl radicals. It is the hydroxyl radicals that act with high efficiency to destroy organic compounds. AOP combine ozone (O_3), ultraviolet (UV), hydrogen peroxide (H_2O_2) and/or catalyst to offer a powerful water treatment solution for the reduction and/or removal of residual organic compounds as measured by COD, BOD or TOC. This paper presents a general review of efficient advanced oxidation processes developed to decolorize and/or degrade organic pollutants for environmental protection. Advanced oxidation processes hold great promise to provide alternative for better treatment and protection of environment, thus are reviewed in this paper. An overview of basis and treatment efficiency for different AOPs are considered and presented according to their specific features.

Textile wastewater includes a large variety of dyes and chemicals additions that make the environmental challenge for textile industry not only as liquid waste but also in its chemical composition. Main pollution in textile wastewater came from dyeing and finishing processes. These processes require the input of a wide range of chemicals and dyestuffs, which generally are organic compounds of complex structure. Because all of them are not contained in the final product, became waste and caused disposal problems. Major pollutants in textile wastewaters are highsuspended solids, chemical oxygen demand, heat, colour, acidity, and other soluble substances. The removal of colour from textile industry and dyestuff manufacturing industry wastewaters represents a major environmental concern. In addition, only 47% of 87 of dyestuff are biodegradable. Conventional oxidation treatment have found difficulty to oxidize dyestuffs and complex structure of organic compounds at low concentration or if they are especially refractory to the oxidants.

IN the last 10 years, a rather fast evolution of the research activities devoted to environment protection has been recorded as the consequence of the special attention paid to the environment by social, political and legislative international authorities leading in some cases to the delivery of very severe regulations. The fulfilment of severe quality standards is especially claimed for those substances exherting toxic effects on the biological sphere preventing the activation of biological degradation processes. The destruction of toxic pollutants as also that of the simple biologically recalcitrant compounds must be therefore demanded to other, non biological technologies. These technologies consist mainly of conventional phase separation techniques (adsorption processes, stripping techniques) and methods which destroy the contaminants (chemical oxidation/ reduction). Chemical oxidation aims at the mineralization of the contaminants to carbon dioxide, water and inorganics or, at least, at their transformation into harmless products. Obviously the methods based on chemical destruction, when properly developed, give complete solution to the problem of pollutant abatement differently from those in which only a phase separation is realised with the consequent problem of the final disposal.It has been frequently observed. that pollutants not amenable to biological treatments may also be characterised by high chemical stability and/or by strong difficulty to be completely mineralized. In these cases, it is necessary to adopt reactive systems much more effective than those adopted in conventional purification processes. A lot of researches have been addressed to this aim in the last decade pointing out the prominent role of a special class of oxidation techniques defined as advanced oxidation processes (AOP) which usually operate at or near ambient temperature and pressure. Advanced oxidation processes although making use of different reacting systems, are all characterized by the same chemical feature: production of OH radicals. They are also characterised by a little selectivity of attack which is a useful attribute for an oxidant used in wastewater treatment and for solving pollution problems. The versatility of AOP is also enhanced by the fact that they offer different possible ways for OH radicals production thus allowing a better compliance with the specific treatment requirements. AOPs can provide effective technological solutions for water treatment. Such solutions are vital for supporting and enhancing the competitiveness of different industrial sectors, including the water technology sector, in the global market. The main goals of academic, research and industrial communities through the development and implementation of environmental applications of AOPs will be:

1. New concepts, processes and technologies in wastewater treatment with potential benefits for the stable quality of effluents, energy and operational cost savings and the

***Asst. Prof. (Chemistry), Govt P.G. College, Khargone (M.P.) INDIA**

protection of the environment;
2. New sets of advanced standards for wastewater treatment;
3. New methodologies for the definition of wastewater treatment needs and framework conditions;
4. New know-how for contributing to enhancing the water industry competitiveness.

A suitable application of AOP to waste water treatments must consider that they make use of expensive reactants as H_2O_2, and/or O_3 and therefore it is obvious that their application should not replace, whenever possible, the more economic treatments as the biological degradation. A list of the different possibilities offered by AOP is given in the Advanced Oxidation Processes refers to a set of chemical treatment procedures designed to remove organic and inorganic materials in waste water by oxidation. One such type of process is called In Situ Chemical Oxidation. Contaminants are oxidized by four different reagents: ozone, hydrogen peroxide, oxygen, and air, in precise, pre-programmed dosages, sequences, and combinations.

advanced oxidation processes (AOPS) have been developed to generate hydroxyl free radicals by different techniques. AOPS processes are combination of ozone (O_3), hydrogen peroxide (H_2O_2) and UV irradiation, which showed the greatest promise to treat textile wastewater.These oxidants effectively decolorized dyes, however did not remove COD completely Textile Wastewater Characteristics Composite textile wastewater is characterized mainly by measurements of biochemical oxygen demand (BOD), chemical oxygen demand (COD), suspended solids (SS) and dissolved solids (DS). hydroxyl free radical (HO.) as strong oxidant to destroy compound that can not be oxidized by conventional oxidant. Advanced oxidation processes are characterized by production of OHo radicals and selectivity of attack which is a useful attribute for an oxidant. The versatility of AOP is also enhanced by the fact that they offer different possible ways for OHo radicals. Generation of HO· is commonly accelerated by combining O_3, H_2O_2, TiO_2, UV radiation, electron-beam irradiation and ultrasound. Of these, O_3/H_2O_2, O_3/UV and H_2O_2/UV hold the greatest promise to oxidize textile wastewater.Advanced Oxidation Processes represent a powerful treatment for refractory and/or toxic pollutants in textile wastewaters. By properly combining ozone, hydrogen peroxide and UV different AOP techniques have been developed thus allowing to make choice the most appropriate for the specific problems. Taking into consideration that the efficiency of AOPs is compound specific, the final choice of the AOP system can be made only after preliminary laboratory tests. There are many research needs to be done in field of AOPS for textile wastewater to provide:

- Study the efficiency of different candidates' process under different controlled conditions.
- Identification of intermediates and byproducts and their toxicity.
- Study the sequences operation effect of the AOPs agents.
- Identification of scale-up parameters and criteria for cost effectiveness.

References ;-

(1) Sharma sandip,ruparelia j.p.,patel l.,-A general review on Advanced Oxidation Processes for waste water treatment,Institute of Technology, Nirma University, Ahmedabad -382 481,08-10 December,2011.
(2) R. Andreozzi, V. Caprio, A. Insola, R. Marotta, ?Advanced oxidation processes (AOP) for water purification and recovery, Cat. Today 53, pp.51-59,1999.
(3) Altinbas U., Domeci S. and Baristiran A. (1995), Treatability study of wastewater from textile industry, Environmental Technology, 16, 389-394.
(4) Arslan I., Isil A.B., Tuhkanen I.A. (1999), Advanced oxidation of synthetic dyehouse effluent by O3,H2O2/O3 and H2O2/UV processes, Environmental Technology, 20, 921-931.
(5) Arslan I.A. and Isil A.B. (2001), Advanced oxidation of raw and biotreated textile industry wastewatewith O3, H2O2,/UV-C and their sequential application, J Chemical Technology and Biotechnology, 76, 53-60.

****

Role Of Non Governmental Agencies In Conservation Of Environment And The Problems Faced

Dr. Madhu Sthapak*

Abstract - Non-Government agencies or voluntary organizations can play a very important role in environmental protection and management. These agencies are free from government control and they can take decisions on their own and can undertake activities which they like. The non governmental or voluntary agencies are spread all over the country; they can communicate with people in their own language.

Voluntary organizations have played a very important role in our country in creating mass awareness towards environment. They have made people aware of the environmental problems which are caused due to neglect and uncontrolled exploitation of natural resources. They have also helped a lot in controlling these problems.

Chipko, appiko movement, silent valley, March to Western Ghats movement attracted attention all over the country. Bharat jan Vigyan jatha organized in 1987 was an effort by voluntary organization to educate people about science including environment.

At present, a very large number of non governmental organizations are active in our country in different areas of general concern. The voluntary organization are making extensive contribution but they also face difficulties first of all they often do not have adequate trained personnel to carry out various programmers another difficulty is that they have no easy access to authentic information and data. Above all these. Organizations have to always work under great financial constraints.

They have to raise funds on their own. Administrative support at local level is not available to voluntary organizations, the reason is that generally their activities are against the interest of powerful people such as forest contractors, industrialists, colonizers ect. Some of the important Non governmental organizations working in the field of environment are:-

(1) Kerala Sastra Sahitya parihsad, Trichur (Kerala)
(2) Dasholi Gram Swaarajya Mansal, Gopeshwar (U.P.)
(3) Delhi Science forum (New-Delhi)
(4) Sanjeev Seva. Samiti (Udaipur) Rajsthan
(5) The Kubda milk producers copperative Ltd. Kubda, Mehsana (Gujrat) More NGO'S will be welcome for well being of the society.

Key Words : Environment, NGOs, Conservation, sustainable development, Evaluation

Introduction

At the beginning of the 21st century environmental issues have emerged as a major concern for the welfare of people. In India, the concept of environment protection can be seen starting from the period of Vedas. As per Rigveda

O mother earth let thy bosom be
free from sickness and decay
May we through long life
Be active and vigilant
And serve thee with
Devotion

:Rigveda

The emergence of NGOs represents an organized response by civil society especially in those areas in which the state has either failed to reach or done so in adequately. The Importance of public awareness and NGOs involvement in environmental protection is acknowledged worldwide. NGO's have been taking a number of steps to promote discussionand debate about environmental issues, outside the broad spheres of popular media and the educational system. Advocacy and awareness is especially crucial in promoting concepts such as sustainable development, natural resource conservation and the restoration of Ecosystems. NGOs can sensitize policy makers about the local needs and priorities. They can often intimate the policy makers about the interests of both the poor and the ecosystem as a whole. In providing training facilities, both at community and government levels, NGOs can play a significant role. They can also contribute significantly by undertaking research and publication on environment and development related issues. It is necessary to support and encourage genuine, small, local level NGOs in different parts of the country which can

provide much needed institutional support specific to the local needs. NGOs can make the following Contributions.

Conducting education and citizen awareness programs in the field of environment.

Fact - finding and analysis.

Filing public interest litigations.

*** Professor of Botany, Govt. Arts & Commerce College , Sagar (M.P.) INDIA**

Innovation and experimenting in areas which are difficult for government agencies to make changes.

Providing expertise and policy analysis.

Providing factual and reliable information with a network of professional expert staff Remaining independent while passing relevant information to the public andgovernmental bodies. Solidarity and support to environmental defenders Working in collaboration with the government for capacity building and promotion of community participation in environmental awareness and protection and Working out at the grass root level and reaching far - flung areas with or without the government invitation. Having due regards to the importance of the role of NGOs in motivating the society for participation in environmental conservation programs the Ministry has launched several programs, which are being implemented with their active participation. These programs aim at spreading environmental consciousness not only among the student community, professionals and other intellectuals but also general public.

NGOs embrace a wide array of agencies within and across different countries of the world. At their broadest NGOs are simply agencies or groups, which are different from government bodies. However, NGOs are distinctive in containing a voluntary component and also because they do not operate for profit. Over the past quarter of a century and especially during the past few decades there has been a rapid growth in the numbers of NGOs involved in the development, in the number of people working for NGOs and in the amount of money that flows into these voluntary agencies working in the activities such as -Disaster management and relief, development, public health, rehabilitation, environment protection etc. However, this paper focuses on the role played by NGOs particularly in the protection of environment.1 The protection of environment is a pressing issue. Every person, organization and institution has an obligation and duty to protect it. Environmental protection encompasses not only pollution but also sustainable development and conservation of natural resources and the ecosystem. Today, the necessity of environmental awareness and enforcement is more demanding and urgent than ever before. Despite provisions in Indian Constitution providing for Environmental protection and many statutory provisions, the environment degradation continues. The main cause for environment degradation is lack of effective enforcement of various laws. The emergence of NGOs represents an organized response by civil society especially in those areas in which the state has either failed to reach or done so in adequately. The importance of public awareness and NGOs involvement in environmental protection is acknowledged world wide. NGOs have been taking a number of steps to promote discussion and debate about environmental issues, outside the broad spheres of popular media and the educational system. Advocacy and awareness is especially crucial in promoting concepts such as sustainable development, natural resource conservation and the restoration of ecosystems. NGOs can sensitize policy makers about the local needs and priorities. They can often intimate the policy makers about the interests of both the poor and the ecosystem as a whole. In providing training facilities, both at community and government levels, NGOs can play a significant role. They can also contribute significantly by undertaking research and publication on environment and development related issues. It is necessary to support and encourage genuine, small and local level NGOs in different parts of the country which can provide much needed institutional support specific to the local needs. The secondary data available regarding the achievements of environmental NGOs has been discussed and analyzed.

Moreover, father of Nation, Mahatma Gandhi also focused his work on environment along with freedom movement, equality and social justice. As per Father of the Nation

"the earth provides enough
to satisfy every man's need,
but not for every man's greed".

: Mahatma Gandhi

Late Prime Minister Nehru and Mrs. Gandhi relentlessly campaigned for protection, conservation and development of the environment. They brought in several legislations and policies concerning environment. Sundarlal Bhauguna through Chipko movement campaigned for protection of environment. Annahazare campaigned for rain water harvesting. Arundati Roy and Medha Patkar campaigned against major dams.

Aims and objectives of Environmental NGOs

- Conducting education and citizen awareness programmers in the field of environment,
- Fact - finding and analysis
- Filing public interest litigations
- Innovation and experimenting in areas which are difficult for government agencies to make changes in
- Providing expertise and policy analysis
- Providing factual and reliable information with a network of professional expert staff
- Remaining independent while passing relevant information to the public and governmental bodies
- Solidarity and support to environmental defenders
- Working in collaboration with the government for capacity

building and promotion of community participation in environmental awareness and protection and

- Working out at the grassroots level and reaching far flung areas with or without the government invitation

Clean-India

Deeply concerned with the deteriorating environmental situation in the country, Development Alternatives initiated the CLEAN-India (Community Led Environment Action Network) program with five schools in the national capital in 1996. Today, CLEAN Delhi has about forty schools regularly involved in monitoring water and air quality in over 150 locations spread across Delhi. Over 2000 children have been directly trained on environmental assessment and improvement activities. They keep vigil, assess environmental quality, plead, cajole and lead the community in monitoring environment. Action programs like solid waste management, plantation drives, energy conservation, paper recycling, etc. to improve local environmental conditions have also been initiated by schools, resident welfare associations, business and industrial associations as well as individual households. Campaigns against the use of polybags, firecrackers during Diwali and toxic (chemicalbased) colors during Holi and for saving the city's 'Green Treasure' are also carried out. The experience in Delhi indicates that when environment assessment is community based, it mobilises the community to review the local environmental conditions and take requisite measures, without waiting for undue external support. Encouraged by the Delhi experience, NGOs from different towns have operationalised the CLEAN-India program. The present CLEAN-India Centers are : Delhi, Shillong, Faizabad, Ladakh, Bangalore, Berinag (Kumaon Hills), Jhansi, Sagar, Bilaspur, Lalitpur, Madurai and Thiruvananthapuram. Almost 100 NGOs from across the country have expressed their interest to initiate the program in their respective towns.

Conclusion

Environmental non-governmental organizations, in recent years, have grown in size and in number as a result of governmental negligence towards the environmental crisis. NGOs have grown in importance to a point where the act as key arbitrating agents within the field of environmental policy. By interrelating global and local concerns, NGOs find themselves able to not only emphasize important ecological issues, but also raise consciousness about the environment. It can be assessed by the above discussion that the very existence of NGOs and the role played by them in the protection of the environment is not only important but also necessary because no government alone with any amount of laws and acts can achieve the objectives of environment protection without individual and public participation which can be achieved only through a network of motivated and dedicated voluntary organizations, like the NGOs.

References

1. Hontelez John, 'Friends of earth International' in Sunderlal Bahuguna, Vandana Shiva , M.N. Buch (ed.) Environment crisis and sustainable development, Natraj publisher, Dehradun, (1992).
2. Pathak Bindeshwar, ' Sulabh International and rural sanitation' in R.K Gupta, S.P Srivastava. (ed) Action sociology and dynamics of rural development, Ajanta Publication, Delhi, (1989).
3. http://www.ambedkar.org/news/NGOs.htm
4. Gemmill, Barbara and Abimbola Bamidele-Izu, The Role of NGOs and Civil Society in Global Environmental Governance, in Esty, Daniel C. and Maria H. Ivanova (ed.), Global Environmental Governance. Options and Opportunities, (New Haven) Yale School of Forestry (2002).
5. http://www.humanrights.gov/2012/01/12/fact-sheet-non-governmental-organizations-ngos-in-the-united-states/
6. Anheier, H. and Themudo, N.(2002) Organisational forms of global civil society: Implications of going global. In: Anheier, H. Glasius, M. Kaldor, M, ed 2002
7. Edwards, M. and Hulme, D. (2002) Beyond the Magic Bullet? Lessons and Conclusions. "In: Edwards, M. and Hulme, D., ed. 2002." The Earthscan Reader on NGO Management. UK: Earthscan Publications Ltd. Chapter 12.
8. Neera Chandhoke. (2005) "How Global Is Global Civil Society?" Journal of World-Systems Research, 11, 2, 2005, pp.326-327.
9. Jenkins, R. (2001) Corporate Codes of Conduct: Self-Regulation in a Global Economy. "Technology, Business and Society Programme Paper Number 2." United Nations Research Institute for Social Development.
10. Weber, N. and Christopherson, T. (2002) The influence of non-governmental organisations on the creation of Nature 2000 during the European policy process. Forest policy and Economics. 4(1), pp. 1-12.

****

Air Pollulation, Causes, Problum, Effect

Prof. B.K. Rawat * Prof. Shailendra Sissodiya **

Introduction: - Air pollution in India is serious issue with the major sources being fuel wood & bio mass burning, fuel adulteration vehicle emission and traffic congestion. It the third largest after China, and the United States? The air (prevention and control of pollution) act was passed in 1981 to regulate air pollution and their some measurable improvement; however the 2012 environmental performance index ranked India as having the poorest relative air quality out of 132 countries.

Environmental performance index:-

The Environmental Performance Index (E.P.T.) is a method of quantity flying and numerically benchmarking the environmental performance of a state policies, this index was developed from the pilot environmental performance first published in 2002 and design to supplement the environmental forget set forth in the united nation millennium development goals.

As on Janurary2012 four EPI report has been released- the pilot environment performance index and 2008 and 2012. EPI for the 2012 report a new pilot trend EPI "was developed to rank country based on the environmental performance changes occurred during the last decade allowing to establish which country are improving and which are the decline,

In the 2012 EPI ranking the top five countries Switzerland, Latvia, Norway, Luxemburg and Costa Rica. The bottom five countries were South Africa, Kazakhstan, Uzbekistan, Turkmenistan and Iraq. The United Kingdom was ranked ninth place, Japan 23rd place, Brazil 30th place, The United States 49th, China 116th and India came in 125th countries based on this pilot trends EPI.

Causes of air pollution:-

The main causes of air pollution in India

1. Traffic congestion is severe in India cities and town. Traffic congestion is caused for several reasons some of which are increased in number of vehicle per Kilometer of available roads and lack of intercity divided lane highway and intercity express way network, lack of intercity. Express way traffic accident, and enforcement of traffic laws.
2. India was 3rd largest emitter of CO2 in 2009 at 1.65 Gt. per, year, after china (6.9 GT per year) and the United State 5.2 Gt. per year. With 17% of world population, India contributed some 5 % of human source of CO2 emission compound to China 2.4 % share.

   On per capita basis India emission where the transportation (car, train, two wheeler, airplane) India coal fired, oil fired and natural gases fired thermal power plant are inefficient and other offer significant potentials for CO2 emission reduction. Through better technology compared to the average emission from coal fired, oil fired and natural gases fired through power plant in europium union countries.

   India thermal power plant emits 50 to 120 % more CO2 per KWH produced. This is significant part to inefficient to thermal power plant in stalled in the prior to its economic liberalization in 1990.
3. Some Indian taxies and auto rickshaw run on adulterated fuel blends, adulteration of gasoline and diesel with lower prize fuel in common in south Asia including India some adulterants increase emission of harmful pollutants from vehicle worsening urban air pollution. Financial incentive arising from differential taxes are generally the primary causes the fuel adulteration in India and developing countries gasoline carries much high taxes then diesel which intern is taxed more then developing Vero sine. Meant as a cooking fuel, while some solvent lubricant carry little are no taxes.

   As fuel prizes raise the public transport driver cuts cost by blending the chapter hydrocarbon into highly hydrocarbon. The blending may be as much as 20 to 30%.
4. India is the world largest consumer of fuel good, agriculture waste for energy purpose, from the most recent available nation wide study. India used 148.7 Mega tone coal. Replacement worth of fuel wood and bio mass annually for the domestic energy used.

   India national average annual capita consumption fuel wood agriculture waste and bio mass were 206 Kg coals equivalent in 2010 terms which India population increased to about 1.2 billion the country burns over 200 million tone coal. replacement worth fuel wood and bio mass every year to meet its energy need for cooking and other domestic use the study found that the house hold consume around 95 million tone of fuel wood.
5. With the last fifteen years of economic development and regulatory reforms India has made progress in improving its air quality.

   The percentage of the average emission sampled at much location overtime, and data analyzed by scientific method by multiple agencies including the world. The table include us average value for Sweden in 2008 observed and analyze by some method over 1955-2008 average nation wide table of major air pollutant have draped by between 25 to 45% in India.

*** Geology ** Botnoy, Govt. PG College, Sendhwa (M.P.) INDIA**

TABLE NO.01
Air Pollution Details Between 1995-2012

Details	1995	2005	2008	2008-12
Pollutant pm 10 (Microgram per cubic meter)	109	67	59	11
Pollutant, Co2, Emission (Kg per 2005 ppm of G. D. P.	0.7	0.6	0.5	0.2
Health Mortality rate (Under per 1000)	100	73	67	3
Pollutant Methane, Agriculture emission	68.8	64.4	N. A.	28.1
Pollutant nitrous oxide Agriculture emission	75.2	73.4	N. A.	60.2

Effect of air pollution -

Air pollution is a significant risk factor for multiple health condition including respiratory infection.

Heart disease and lung cancer according to WHO the health effect cause by air pollution may include difficulty in breathing, wheezing, coughing, asthma and aggravation exciting respiratory and cardiac condition.

1. **Effect of cardiovascular health:-**
   Air pollution in also emerging as a risk factor for strokes, particularly in developing countries which polluting level is highest.
2. **Effect on cystic fibrosis:-**
   A study from around the year 1919 to 2000, by the unnecessary of Washington. Showed that patient near and around particulate air pollution had on increase risk of pulmonary exacerbations and decreases in lung function,
3. **Effect of COPD and asthma:-**
   Chronic obstructive pulmonary disease [COPD] includes disease such as chronic bronchitis and emphysema.
4. **Link of cancer:-**
   a review of evidence regulatory weather ambient air pollutions exposed is a risk factor for cancer in 2007. Found solid data to conclude that long term exposure to pm2.5 increase the overall risk of non accidental mortality by 6% per a 10 microgram/m3 increase.
5. **Effect on children: -**
   around the world living in cities with high exposed to air pollutant are at increased risk of developing asthma pneumonia and other lower respiratory infection.
6. **Reduction efforts:-**
   Efforts to reduce pollution from mobile sources include primary regulation expending regulation to new sources {such as cruise and transport shop from equipment and small gasses pined equipment}.

Preventions of air pollution:-

Some significant ways to reduce air pollution air pollution are to drive less even a little less and to drive smart taking fewer trips in your car or truck were help to reduce air pollution,

1. Walk or ride bicycle.
2. Shopping by phone and mail.
3. Ride public transit.
4. Tele communicate
5. Accelerate gradually
6. Use curies control on highways
7. Obey the speed limit
8. Combine your errands into the one trip
9. Replace your car air filter
10. Keep your tires properly inflated.

Conclusion:-

Major human activity like industry agriculture health care transport dwelling and energy generating are the cause of pollution

many industry like textiles paper steel sugar, petroleum food chemical and cement industries are the cause of air pollution water pollution and soil pollution modern agriculture en courage the large scale are fertilizer and pesticide is primary cause of the pollution of air is the major cause human health problem such as respiratory problem lung ,thought, cancer etc.

Reference:-

1. Centeral pullulating control board of India.
2. Enviroment and forest ministry of India
3. Air pollination link to heart disease American heart association may 10, 2010.
4. Air quality and heart (W.H.O issue).

****

बेल वृक्ष का लोक वानस्पतिक (Ethnobotanical) महत्व, एवं संरक्षण: एक दृष्टि

डॉ. शैल बाला सांघी*

शोध सारांश– बेल भारतीय मूल का वृक्ष है। पुरातन काल से ही आयुर्वेद, चरक संहिता एवं सुश्रुत में बेल को पारंपरिक औषधीय पौधे के रूप में अत्यंत गुणकारी माना गया है। बेल वृक्ष के सभी भाग जड़, तना, पत्ती एवं फलों का उपयोग औषधी के रूप में किया जाता है। बेल में एंटी डाइबिटिक, एंटी आक्सीडेंट, एंटीफंगल, एंटी इंफ्लेमेटरी, एंटीपायरेटिक गुण पाए जाते है। इनके फलों का उपयोग कब्ज, डायरिया, डिसेन्ट्री एवं पेस्टिक अल्सर आदि पेट से संबंधित विकारों के लिये किया जाता है। इनमें मुख्य रूप से एल्केलायड, स्टीरायड एवं क्यूमेरिनस पाये जाते हैं। औषधी के अलावा बेल का उपयोग अन्य कार्यों में भी किया जाता है। हिन्दू लोक कथाओं के अनुसार बेल को धार्मिक वृक्ष के रूप में अत्यंत पवित्र माना गया है।

की–वर्ड

बेल, एल्केलायड, स्टीरायड, क्यूमेरिनस

परिचय–

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा लगभग 20 हजार पौधों की जातियों का औषधीय पौधे के रूप में उपयोग किया जाता है। भारत में लगभग 2500 पादप जातियों का उपयोग देशी एवं आयुर्वेदिक दवाईयों के रूप में उपयोग किया जाता है।[1] आयुर्वेदिक औषधीय तथा धार्मिक महत्ता को देखते हुए बेल को भारत में लोक वानस्पतिक महत्वपूर्ण पौधा माना गया है।

बेल का वानस्पतिक नाम Aegle Marmelos (L) है। यह रूटेसी कुल के अन्तर्गत आता है। बेल को हिन्दी में बेल, बेल गिरी, संस्कृत में बिल्वा, अंग्रेजी में गोल्डन एपिल, उर्दू में बेलखाम, गुजराती में बिल्वाफल तथा उड़िया में बेलो कहा जाता है।[2]

बेलों के कच्चे फल उद्दीपन, पाचक ग्राही, तथा पका हुआ फल रेचक तथा पेट संबंधी विकारों जैसे डायरिया, डिसेन्ट्री, पेप्टिक अल्सर आदि के लिए चिकित्सा प्रणाली में उपयोगी होता है। पत्तियों का रस घाव ठीक करना, मधुमेह रोग में मूत्र में शर्करा को कम करती है। जड़ों का उपयोग घाव भरने में किया जाता है।

बेल का वृक्ष वायुमंडल में व्याप्त रासायनिक प्रदूषण एवं विषैली गैंसों को अवशोषित कर पर्यावरण को शुद्ध करता है। बेल में सूर्य के प्रकाश में आक्सीजन उत्सर्जित करने की क्षमता अन्य वृक्षों की तुलना में अधिक होती है अत: ये पर्यावरण को स्वच्छ एवं आरोग्यवर्धक बनाते हैं।[3]

वर्गीकरण	**वानस्पतिक नाम**	**– आयगिल मारमेलोस (L)**
	जगत	– पादप
	उपजगत	–ट्रेकियोबायोन्टा
	उपवर्ग	– रोजिडी
	गण	–सेपिन्डेल्स
	कुल	– रूटेसी
	वंश	–एगल
	जाति	– मारमेलोस

प्राप्तिस्थान–

बेल के वृक्ष जंगलों में पाए जाते है। बेल के वृक्ष ज्यादातर हिमालय की तराई, मध्यप्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल आदि भागों के घने जंगलों में अधिकता से पाए जाते है।[4]

आकृति–

बेल पतझडी वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई 8 से 10 मीटर तक होती है। इनका तना मजबूत होता है।

पत्तियाँ–

बेल की शाखाओं में 3 या 4 या कभी–कभी पाँच पत्रक होते हैं। पत्तियों के बीच काँटे होते है। इनकी पत्तियों को मसलने पर विशिष्ट गंध निकलती है।

फूल–

फरवरी माह में इन वृक्षों में सुंगधित फूल आते हैं जो सफेद या हल्के हरे रंग के होते है।

फल–

बेल के फल बड़ी गेंद के समान 5 से 15 से.मी. व्यास के होते है। फलों का छिलका कठोर होता है जो पकने पर पीला–नारंगी रंग का दिखाई देता है। फलों के अंदर गूदेदार भाग में बहुत से सफेद रंग के बीज दिखाई देते है। जो मोटे रेशेदार रोमो से घिरे रहते है। इसके गीले गूदे की 'बिल्वपेशिका' तथा सूखे गूदे को बेलगिरी कहते है। कुछ किस्म के बेल के आकार छोटे होते हैं। इन्हें 'कठ बेल' कहते है।

बेल के वृक्षों को बीजों द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। ये किसी भी प्रकार की भूमि में उगाए जा सकते हैं। इनमें तापमान सहन करने की क्षमता 70 से 480 तक हो सकती है।

रासायनिक संगठन–

बेल में विभिन्न प्रकार के रासायनिक तत्व पाए जाते है। इनके फलों में एगेलिन, एगेलिनिन, बिल्वीन, मारमेलोसिन, मारमेलान, फ्रेगराइन, डिक्टामाईन आदि एल्केलायड पाए जाते है।[5] पत्तियों में सिकमिनिक एसिड स्टेरॉल एवं एगेलिन पाया जाता है। इनमें गेलेक्टोज एराबिनोस, यूरोनिक एसिड आदि पॉली सेकराइड पाए जाते है। बीजों में पालीमिटिक एवं स्टीरिक एसिड तथा लिनोलिक तेल पाया जाता है।[5] इसके फल के गूदे में 9 प्रतिशत टेनिन होता है।

बेले के फल में 61.5% नमी, 1.8% प्रोटीन, 0:वसा, 1.7% खनिज लवण, 2.9% फाइबर, 31.8% कार्बोहाइड्रेट होते है। इनमें मुख्य रूप से केल्सियम, फास्फोरस, केरोटिन, रिबोफ्लेविन एवं विटामिन सी आदि पोषक तत्व प्रमुख रूप से मिलते है।[6]

औषधीय उपयोग

(1) डायरिया एवं डिसेन्ट्री–

बेल का कच्चा तथा अधपका फल डायरिया एवं डिसेन्ट्री में सबसे ज्यादा प्रभावी उपचार है। इसमें फलों का सूखा पावडर क्रोनिक डिसेन्ट्री तथा कब्जियत के लिये अत्यंत कारगर सिद्ध हुआ है।[7]

* सहायक प्राध्यापक (वनस्पतिशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(2) एंटीडायबिटिक/हाईपोग्लाईसिमिक प्रभाव–

बेल के पत्तों के रस का आयुर्वेद औषधि के रूप में मधुमेह की बीमारी के लिये अत्यंत उपयोगी होता है। बेल की पत्ती के रस में मूत्र में शर्करा को कम करने के गुण होते है। इनकी पत्तियों के रस का उपयोग रक्त में कोलेस्ट्राल को कम करने के लिए भी किया जाता है।[8] पत्तियों के रस को यूनानी औषधी पद्धति में भी मधुमेह की दवा के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

(3) एंटीमाइकोबियल / एंटीफंगल प्रभाव–

बेल का रस एंटीमाइक्रोबियल तथा एंटीफंगल प्रभाव को प्रदर्शित करता है। ये बैक्टीरिया एवं वायरस की विभिन्न जातियाँ जैसे स्टेफाइलोकोकस आरियस, स्टे. एपीडर्मिडिस प्रोटियस वल्गेरिस, इश्चेरिचिया कोलाई, साल्मोनेला, एवं बेसीलस सबटिलिस जैसे सूक्ष्म जीवियों एवं जीवाणुओं जिन से आंतों से संबंधित रोग उत्पन्न होते है इन के विरोध में अपना प्रभाव प्रदर्शित करता है।[9]

(4) कब्जियत में–

बेल के पके हुए फल के पल्प रेचक का कार्य करते है। इनके फल के गूदे का उपयोग करने से आंतों में रूके हुए मल को निकाल करके कब्जियत की शिकायत को दूर करता है।[10]

(5) जलने पर–

छत्तीसगढ़ में परंपरागत औषधी के रूप में इनके फल के सूखे पावडर को सरसों के तेल के साथ मिलाकर जले हुए भागों में लगा कर उपचारित किया जाता है। [11]

(6) पेप्टिक अल्सर–

बेल की पत्तियों को रातभर पत्ती में भिगोकर रखने के बाद इसके पानी का सेवन करने से पेप्टिक अल्सर का उपचार किया जाता है।[12]

(7) श्वसन संक्रमण–

इसकी पत्तियों के रस को कालीमिर्च के साथ इसका काढ़ा बनाकर देने से श्वसन संक्रमण तथा कफ आदि रोगों को उपचारित किया जाता है।[7]

(8) ज्वर नाशक (एंटीपायरेटिक) तथा एनालगेसिक प्रभाव–

बेल के रस की ज्वर नाशक माना गया है। इसमें रस को ज्वर से पीड़ित रोगी को देने पर ज्वर को कम किया जाता है।[13]

अन्य उपयोग–

बेल के वृक्ष के प्रत्येक भाग का उपयोग विभिन्न कार्यों के लिये किया जाता है। इसकी काष्ठ पीली या धुसर सफेद होती है जिसका उपयोग गृह निर्माण, गाड़ी तथा कृषि के उपकरण आदि बनाने में किया जाता है। इनकी पत्तियों तथा शाखाओं का उपयोग पशुओं के चारे के लिए किया जाता है।[14] टहनियों का उपयोग दांतों के लिए ब्रश करने के लिए किया जाता है। पत्तियों का रस नहाने के पूर्व लगाने से शरीर में पसीने की दुर्गंध नहीं आती। फलों के गूदे से पौष्टिक शरबत बनाया जाता है। इसके तने से गोंद प्राप्त होती है जिनका उपयोग बुक बाइडिंग तथा चिपकाने के लिए किया जाता है।[2]

बेल का धार्मिक महत्व–

हिन्दू पुराणों के अनुसार बेल को भारत में एक पवित्र धार्मिक वृक्ष के रूप में माना जाता है। इसकी त्रिपर्णी पत्तियों के कारण इसे त्रिपत्र कहा जाता है। पवित्र वृक्ष की वजह से इसे मंदिर एवं धार्मिक स्थलों में लगाया जाता है। पौराणिक कथाओं के आधार पर इनके पत्तियों को भगवान शिव पर चढ़ाया जाता है। अत: इसे शिवद्रुम भी कहा जाता है। इनकी पत्तियों के बगैर शिव की पूजा पूर्ण नहीं मानी जाती। हिंदू धर्म के अनुसार इनके वृक्ष को भगवान कैलाशनाथ का दूसरा रूप माना जाता है। इनकी पत्तियों को मंत्रोच्चार के समय भी उपयोग किया जाता है इस वृक्ष का उल्लेख वेद, पुराण, यजुर्वेद एवं महाभारत जैसे धार्मिक शास्त्रों में भी किया गया है।[15]

निष्कर्ष–

बेल के वृक्ष के बहुउपयोगी गुणों तथा लोक–वानस्पतिक महत्व को देखते हुए इसे अधिक से अधिक संख्या में रोपित एवं संरक्षित किया जाना चाहिए। इस वृक्ष की पारंपरिक लोक औषधीय उपयोगिता को वैज्ञानिकों द्वारा भी विश्लेषित एवं प्रमाणित किया जा चुका है। चूँकि यह वृक्ष किसी प्रकार की भूमि, विशेष रूप से बंजर एवं अनउपजाऊ जमीन में भी आसानी से उग्गाया जा सकता है। अत: बडे स्तर पर इसे संवर्धित करके इस पारंपरिक वृक्ष को संरक्षित किया जाना चाहिए। ताकि आदिवासी एवं दूरस्थ क्षेत्रों के गरीब किसान इसका दैनिक जीवन में उपयोग के साथ व्यवसायिक लाभ ले सकें।

References:

1. Prakash V. (1998) Indian Medicinal plants- current status, I Ethno botany , 10:112-121.
2. Purohit S.S. and Vyas S.P. (2004) In: Aegle marmelos correa ex Roxb (bael) medicinal plant cultivation. A scientific approach, Agrobios, 280-285.
3. Sharma P.C., Bhatia V., Bansal N. and Sharma A. (2007) A review on bael tree, Natural product radiance 6 (2): 171-178.
4. Jauhari O.S., Singh R.D. and Awasthi R. K. (1969), Survey of some important varieties of bael.
5. Govindachari T.R. and Pramila M.S. (1983) Some alkaloids from Aegle marmelos, Phytochem, 22 (3): 755-757.
6. Shankar G. and Garg K.L. (1967) In nutritional value of some important fruits, Hand book of horticulture, 37-41.
7. Brijesh S., Daswani P., Tetali P. Anita N. and Birdi T. (2009) Studies on the antidiarrhoeal activity of Aegle marmelos & unripe fruit validating its traditional usage, BMC complementary and alternative medicine, 9 (47): 47.
8. Arumugam S., Subramanian K., Kadalmani B., Ahmad A.B.A etal (2008) Antidiabetic activity of leaf and callus extract of Aegle marmelos in rabbit, Science Asia, 34: 317-32.
9. Sarkar B.K. and Solanki S.S. (2011) Isolation characterization and anti bacterial activity of leaf extract of bael (Aegle marmelos), International journal of Pharmacy and Life Sciences, 2 (12): 1303-1305.
10. Roy S.K. and Singh R.N. (1980) Studies on changes during development and ripening of bael fruit, Punjab Horticulture Journal, 20 (3&4): 190-197.
11. Oudhia P. (2005) Bael (Aegle marmelos) as medicianal herb in Chhatisgarh, Research notes article 107, www.botanical.com.
12. Benerji M., maiti M., Sem M. and Dutta P.C. (1982) Pharmacognosy of Aegle marmelos (L.) Correa Seed ; A new protein source, Acta pharm Hung, 52 (3): 97-101.
13. Veerappan A., Shingeru M. and Renganathan D. (2005) Studies on anti-inflammatory, antipyretic and analgesic properties of the leafs of Aegle marmelos Corr., journal of Ethnophrmacology, 96 (1-2): 159-163.
14. Dastur J.S. and Taraporewale D.B. (1968) Useful plants of India and Pakistan, A popular hand book of trees and plants of industrial economic and commercial utility, Sons & Co. ltd, Bombay, 15-16.
15. Dey K.L. and Bahadur R. (1973) Aegle marmelos;In Indigenous drugs of India, II Edn., Pama primlane, 12-13.

A Study On Effect Of Awareness Upon Nutritional Status Of Breast Cancer Patients

Dr. Archana Kushwah* Dr. Manju Dubey**

Introduction

Cancer, a major killer, the most dreaded among diseases, is fast engulfing the globe, posing the real challenge to the ingenuity of human beings. The number of cancer patients is increasing day by day and if diagnosed in the early stage then it may be cured completely.

Breast cancer is the second most common type of cancer after lung cancer. Hence, it is necessary to bring awareness in the women about treatment, appropriate diet during the treatment, side effects of the theraphy, Remedies and precautions to be taken during the treatment,in the women who are affected with the breast cancer.

Objectives:-

(1) To assess the awareness status about the disease of breast cancer patients.

(2) To assess the impact of awareness about the disease upon the nutritional status of breast cancer patients in Gwalior city.

(3) To provide the suggestion to the women about the awareness regarding nutritional status of breast cancer patients.

(4) To provide the information that how women of Gwalior are aware of the occurrence, suffering & precautions of breast cancer.

Hypothesis:-

To carry out the study null hypothesis was formulated "There is no significant effect of high, medium, low awareness groups upon the mean scores of nutritional status of breast cancer patients".

Methodology:-

The study was conducted upon 300 breast cancer patients living in Gwalior city. Schedule was made to collect information on awareness, regarding causes, preventions, side effects of treatment their remedies and adequate diet during treatment. Nutritional status was assessed by clinical examination.

After the collection of data tabulation and analysis of data has been carried out by one way ANOVA to test the non significance of hypothesis.

Results & Discussion :-

Table No.1

Status of awareness level of breast cancer patients.

Awareness groups	Number of women	Percentage of awareness
High	46	15.33
Medium	242	80.67
Low	12	4.00
Total	300	100.00

80.67% breast cancer patient exhibited medium awareness about breast cancer, 15.33%,

4.00% breast cancer patient having high awareness and low awareness respectively. Status of awareness about breast cancer is shown in below bar diagram.?

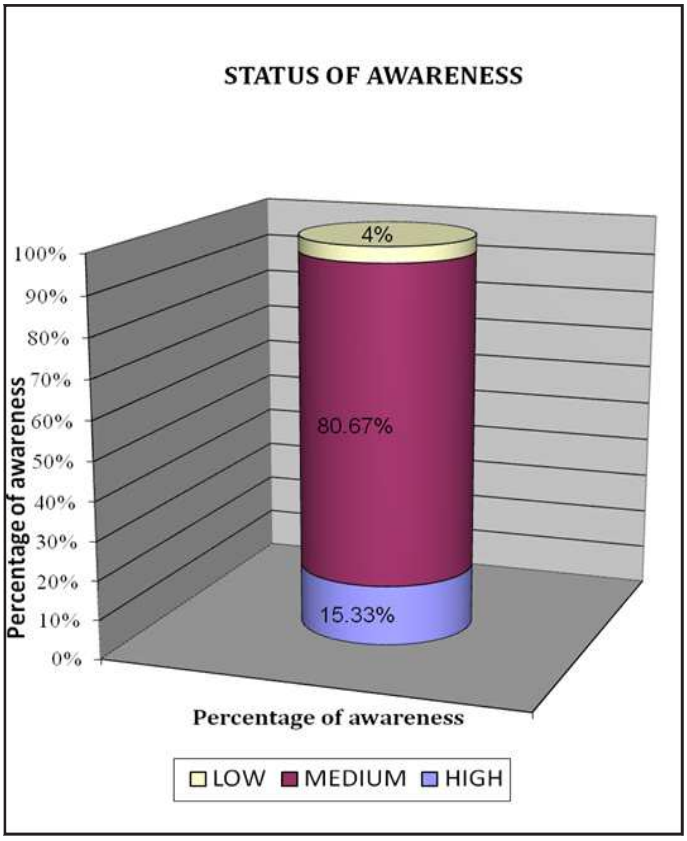

* Researcher ** Prof. and head dept of home science, Govt. K.R.G. P.G. College Gwalior (M.P.) INDIA

Table No.2

Summary of one way ANOVA upon the nutritional status of breast cancer patients with regard to high, medium, low awareness groups.

Source of variance	df	Sum of squares	Mean sumof squares	f-value	Remark
Nutritional status	2	201.939	100.970	9.097*	P<0.05
Error	297	3296.448	11.099		
Total	299	3498.387			
P value is significant at 0.05 level					

From the table no. 2, it is evident that f-value is =9.097* is significant at 0.05 level with df=2/297. This shows that there is a significant difference in the mean scores of nutritional status of breast cancer patients among high, medium, low awareness groups. Thus the null hypothesis stated that:- "There is no significant effect of high, medium and low awareness groups upon the mean scores of nutritional status of breast cancer patients" is rejected. In order to know which group is healthier we have further analyzed the date with the help of Duncan test.

Table No.3

	N	Subset for alpha = .05	
Awareness	1	2	1
Low	12	18.58	
Medium	242		21.26
High	46		22.89
Sig.		1.000	.071

The above table shows that no group is significantly healthier than the other.

Conclusion:- At the end we can conclude from the above discussion that the awareness among the breast cancer patients about the disease would have non significant effect on their nutritional status.

Suggestion:-

- Patient should consume more protieneous food like, cereals, dal, milk without fat, paneer, egg, fish etc.
- Patient should not consume ghee, oils and fried items.
- If Weight of patient is high than use of suger should be in limited quantity.
- Diet of patient should be full of minerals &vitamins.
- Every day 4 to 5 ltrs. liquid should be taken.
- Consumption of food containing baking soda should be limited.
- Avoid consumption of spicy food.

References

1. Ackerman, L. V. and Delrgato. J. A. cancer diagnosis treatment and prognosis, 3rd edition, C. V. Hosby Co. Saint Louis-1962
2. Bajpai S.R. Method of social survey & Research, Kitab Ghar Mestor Road, Kanpur 16th Edition, 2000
3. Carlson Rw, Anderson Bo, Carter WB, Edge SB, et al. breast cancer. Clinical practice guidelines in oncology. J Natl compr canc. Netw. 2009d Feb; 7 (2) : 122-92 [Pubmed]
4. Chelebowski RT, Kullar LH, prentice RL, Manson JE, Gah M, et al. breast cancer after use of estrogen plus progestin in postmenopausal women. N Engl J Med. 2009 Feb 5; 360 (6): 573-87 [Pubmed].
5. Chandra A.K. Cancer of the Breaths, J. Indian M.A., - 1971
6. Egan R.L. Memmography and diseases of the breast cancer -1968
7. Egan R.L. Macmohan B, "Breast cancer of menopausal ages" Cancer P.P-1037-1044,-1975.
8. Kumar Cotren Robbins Basic Pathology, 6th Edition A Harcourt Publishers international Company
9. Parker Ellen The Book of Health The American Health Foundation all Rights, Reserved 1981
10. Ruth H. Grobstein. M.D., Ph.D The breast Cancer Book-2005
11. Trivadi, R.N. & Sukla, D.P. Research methodology Published - College Book Depot, 83 Tripolia Bazar, Jaipur
12. The complete book of cancer preventions Page- No. 7-11 Rajendra Publishing house Pvt. Ltd. Seaface Road, Worli Bombay.
13. www.cancer.gov-National Cancer Institute
14. www.Cancer.org-American Cancer Society
15. www.asco.org-American Society of clinical oncology.
16. www.Breast cancer.org
17. www.Indian women health

****

A Study of the Effect of Parental Encouragement on the Educational Development of the Students of Secondary Stage

Mrs. Asmita Dubey *

Introduction:

How the parents can create interest in their wards for learning? How children can learn more effectively? These questions point out to the importance of the encouragement. The most effective learning takes place, when there is maximum mental activity, which is attainable through strong encouragement. Thus, encouragement is a golden road of educational development. Parental encouragement is of great importance in the all round development of the child.

To speak out more truly "Encouragement is the art of stimulating interest in the children where there is no interest or where it is unfelt by the pupil." In addition to the following parental encouragement refers to the treatment which is originated from the parents towards the child with a view to enhance the possibilities of future occurrences of good behaviour by care, concern, approval and guidance.

Parents who are involved in the task of helping their child to aim higher and to achieve better would like to have a knowledge of the extent of influence correlated exert on achievement. Under these conditions the following research questions emerged in the mind of the researcher-

(i) What is the effect of Parental encouragement on the students?

(ii) Is there any difference between the boys and girls with respect to the effect of Parental Encouragement?

(iii) What is the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the students?

(iv) Is there any difference between the boys and girls with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement?

Statement of the Problem-

The title of the problem is - "A study of the effect of Parental Encouragement on the Educational Development of the students." (Secondary Stage XI)

Objectives of the study -

The main objectives of the study are-

(i) To study the effect of Parental encouragement on the boys/girls of Govt. Higher Secondary Schools.

(ii) To study & compare between the boys and girls of Govt. Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

(iii) To study the effect of Parental Encouragement on the boys/ girls of private Higher Secondary Schools.

(iv) To study and compare between the boys and girls of private Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

(v) To study the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of boys/girls of Govt. Higher Secondary Schools.

(vi) To study and compare between the boys and girls of Govt. Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

(vii) To study the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of boys/girls on private Higher Secondary Schools.

(viii) To study and compare between the boys & girls of Private Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

Hypotheses of the study :-

The present research work is based on the verification of the following null hypotheses:-

(i) There will be no significant difference in the effect of Parental Encouragement on the boys/girls of Govt. Higher Secondary Schools.

(ii) There will be no significant difference in the comparison between the boys and girls of Govt. Higher Secondary schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

(iii) There will be no significant difference in the effect of Parental Encouragement on the boys/girls of Private Higher Secondary Schools.

(iv) There will be no significant difference in the comparison between the boys and girls of private Higher Secondary schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

(v) There will be no significant difference in the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of boys/girls of Govt. Higher Secondary Schools.

(vi) There will be no significant difference in the comparison between the boys and girls of Govt. Higher Secondary schools with respect to the effect of Parental

* PGT-English, Gwalior Glory H. S. School, Gwalior (M.P.) INDIA

Encouragement on the academic achievement.

(vii) There will be no significant difference in the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of boys of private Higher Secondary Schools.

(viii) There will be no significant difference in the comparison between the boys and girls of Private Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

Variables :-

A variable is a characteristic which takes on different values for different sample subjects on for all the observed units.

In this study the researcher has taken:

(a) Dependent variable: academic achievement.

(b) Independent variable: Parental Encouragement

(c) Moderate variable : Both the sexes i.e. boys and girls of the age group 16 to 18 years.

Methods of Investigation:- The researcher has adopted the survey method to carry out the study. The methods followed in selection of the sample, collection of the data, scoring and analysis are as follows:-

Tools used in the present study:-

The standardized test of Dr. R.R. Sharma has been used for measuring the amount of encouragement. The result of High School Board Examination, 2006 has also been collected to measure the academic achievement of the students.

Data collection :-

For the purpose of collecting the data, the test was distributed to a sample of 100 students (50 boys & 50 girls) of class XI, which were randomly selected from two Government and two Private schools of Gwalior city.

Scoring Procedure :-

There are three response alternatives in each item of the scale. The subject has to choose only one alternative. The total score for each item ranges from 0 to 2, where as the grand total of the PES ranges from 0 to 80. Higher Scores on the PES reveal greater amount/higher degree of P.E., where as lower scores reveal the lower degree/ amount of encouragement.

For meaningful interpretation, the percentile norms are given in the following table.

Percentile norms of the Parental Encouragement Scale (PES)

Percentiles	Scores		Interpretation
	Boys	Girls	
99	79.25	79.25	Very High P.E.
95	78.30	78.20	
90	77.10	76.95	
80	74.70	74.38	
75 (Q3)	73.69	73.15	High P.E.
70	72.73	71.90	
60	70.80	69.40	
50 (Mdn.)	68.50	66.70	Average P.E.
40	65.50	64.00	
30	61.90	61.30	
25 (Q1)	60.90	59.55	
20	59.25	57.00	Low P.E.
10	47.00	47.20	
5	32.95	42.34	Very Low P.E.

Analysis of Data :- The collected data has been analysed using statistical techniques such as Mean, Standard Deviation, Quartile deviation, t-test and Bar diagram. The numerical results thus obtained have been interpreted meaningfully.

Tables and Interpretation of Data:-

(i) The effect of Parental Encouragement on the boys of Govt. Higher Secondary Schools.

Table-1

Quartile norms of the Parental Encouragement Scale (PES) of Govt. Boys.

Quartiles	Scores	No. of boys	Percentage
Q1	66.02	6	24
Q2(Mdn.)	68.86	9	36
Q3	72.67	7	28
Q4		3	12
Mean	69.2		100

The result shows significant difference in the effect of Parental Encouragement on the boys of Govt. Higher Secondary Schools.

(ii) The effect of Parental Encouragement on the girls of Govt. Higher Secondary Schools.

Table-2

Quartile norms of the Parental Encouragement Scale (PES) of Govt. Girls

Quartiles	Scores	No. of boys	Percentage
Q1	64.06	7	28
Q2(Mdn.)	68.92	7	28
Q3	72.96	7	28
Q4		4	16
Mean	68	25	100

The result shows no significant difference in the effect of Parental Encouragement on the girls of Govt. Higher Secondary Schools.

(iii) Comparison between the boys and girls of Government Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

Table-3

Quartile norms of the Parental Encouragement Scale (PES) of Govt. Schools' students

Quartiles	Scores		No. of students		%
	Boys	Girls	Boys	Girls	Q1
66.02	64.06	6	7	26	
Q2 (Mdn.)	68.86	68.92	9	7	32
Q3	72.67	72.96	7	7	28
Q4			3	4	14
Mean	69.2	68	25	25	100

The result shows no significant difference in the comparison between the boys and girls of Govt. Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

(iv) The effect of Parental Encouragement on the boys of Private Higher Secondary Schools.

Table-4

Quartile norms of the parental Encouragement Scale (P.E.S.) of Private Boys.

Quartiles	Scores	No. of boys	Percentage
Q1	60.31	6	24
Q2(Mdn.)	66.38	7	28
Q3	69.86	7	28
Q4		5	20
Mean	63.88	25	100

The result shows no significant difference in the effect of Parental Encouragement on the boys of Private Higher Secondary Schools.

(v) The effect of Parental Encouragement on the girls of Private Higher Secondary Schools.

Table-5

Quartile norms of the Parental Encouragement Scale (P.E.S.) of Private Girls

Quartiles	Scores	No. of girls	Percentage
Q1	55.25	6	24
Q2(Mdn.)	61.07	7	28
Q3	65.75	10	40
Q4		2	08
Mean	59.76	25	100

The result shows significant difference in the effect of Parental Encouragement on the girls of Private Higher Secondary Schools.

(vi) Comparison between the boys and girls of Private Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

Table-6

Quartile norms of the Parental Encouragement Scale (P.E.S.) of Private Schools' students.

Quartiles	Scores		No. of students		%
	Boys	Girls	Boys	Girls	Q1
Q1	60.31	55.25	6	6	24
Q2 (Mdn.)	66.38	61.07	7	7	28
Q3	69.86	65.75	7	10	34
Q4			5	2	14
Mean	63.88	59.76	25	25	100

The result shows no significant difference in the comparison between the boys and girls of Private Higher Secondary schools with respect to the effect of Parental Encouragement.

(vii) The effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the boys of Govt. Higher Secondary Schools.

Table-7

Showing the mean and standard Deviation of the academic achievement of the Govt. Boys getting High Parental Encouragement and Low Parental Encouragement

	Government Boys (N = 25)	
	High P.E. (n = 13)	Low P.E. (n = 12)
Mean	75.70	59.81
S.D.	7.11	7.5
t-test	5.44	

N= 25, df = 23 (df = degrees of freedom)

The result shows significant difference in the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the Government Boys.

(viii) The effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the girls of Govt. H.Sec. Schools.

Table-8

Showing the Mean and Standard deviation of the academic achievement of the Govt. Girls getting High P.E. and Low P.E.

	Government Boys (N = 25)	
	High P.E. (n = 10)	Low P.E. (n = 15)
Mean	70.48	52.6
S.D.	7.0	3.65
t-test	7.45	

N = 25, df = 23

The result shows that there is significant difference in the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the Government Girls.

(ix) Comparison between the boys and girls of Govt. Higher Secondary with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

Table-9

Showing the Mean and Standard Deviation of the academic achievement of the Govt. boys and girls

	Government Boys (N = 50)	
	High P.E. (n = 29)	Low P.E. (n = 25)
Mean	68.07	59.75
S.D.	10.95	10.49
t-test	2.74	

N = 50, df = 48

The result shows significant difference in the comparison between the boys and girls of Govt. Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

(x) The effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the boys of Private Higher Secondary Schools.

Table-10

Showing the Mean and Standard Deviation of the academic achievement of the private school boys getting High P.E. and Low P.E.

	Private Boys (N = 25)	
	High P.E. (n = 15)	Low P.E. (n = 10)
Mean	76.70	63.10
S.D.	3.85	5.5
t-test	6.8	

N = 25, df = 23

The result shows significant difference in the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the private school boys.

(xi) The effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the girls of Private Higher Secondary Schools.

Table-11

Showing the Mean and Standard Deviation of the academic achievement of the private girls getting High Parental Encouragement. and Low Parental Encouragement

	Private Girls (N = 25)	
	High P.E. (n = 12)	Low P.E. (n = 13)
Mean	77.13	61.67
S.D.	4.48	4.80
t-test	8.35	

N = 25, df = 23

The result shows significant difference in the effect of Parental Encouragement on the academic achievement of the Private School girls.

(xii) Comparison between the boys and girls of Private Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

Table-12

Showing the Mean and Standard Deviation of the academic achievement of the Private Higher Secondary School boys and girls

	Private Students (N = 50)	
	Boys (n = 25)	Girls (n = 25)
Mean	71.28	69.09
S.D.	7.91	9.17
t-test	.90	

N = 50, df = 48

The result shows no significant difference in the comparison between the boys and girls of private Higher Secondary Schools with respect to the effect of Parental Encouragement on the academic achievement.

Major Findings:-

The major results show that there is no difference in the amount of Parental Encouragement received by the Govt. boys and girls, at the same private boys and girls also show no difference in the amount of Parental Encouragement received by them.

The academic achievement of the Govt. boys and girls show a great difference in the amount of Parental Encouragement received by them. The mean of the academic achievement of the Govt. boys show that they get more amount of Parental Encouragement than girls. Whereas the academic achievement of the Private boys and girls show no difference in the amount of Parental Encouragement received by them.

Suggestions (for parents):-

- The parents should motivate their wards to show better performance.
- Parents should help, guide and coax the child, so that he/she may not feel disheartened at a particular point of difficulty.

- The parents should become more conscious of the responsibilities towards their children in moulding and shaping their academic performance.
- Parental Encouragement plays a great role in high achievement of a student, so the parents should encourage their children to achieve better.
- The parents should keep positive attitude and motivate their child to show better performance.
- The family structure exerts a greater influence on child's personality, so a healthy atmosphere should be created in the family to develop fully the personality of the student.
- The members of the family must try to make the child feel stable and confident by giving him importance in the family, as due to lack of emotional stability the child may lose the capacity of doing good.
- Parents should visit their ward's school regularly for their better performance.
- Parents should help their children to achieve their desired goal.
- Parents should help their children in choosing the appropriate subject according to their interest.
- Parents should appreciate their child on his/her better performance.
- The parents must try to recognize the nature of the child and consequently make use of the praise or reproof in encouraging and inspiring him.
- The parents should be very careful in using rewards or punishment as an incentive to encourage their children.
- Wise parents should try to make use of the competition based on co-operation and the feeling of 'we' and 'us'.
- The parents should try to inculcate the feeling self-improvement in the student.

Recommendations for further study:-

Parental Encouragement is a very important topic for the research study as it plays a great role in a child's high achievement, but it has been neglected and not given much importance in the research study in India. This topic needs a vast study. The following areas of future research work have been suggested-

- Similar studies can be under taken on pre-primary, primary, middle, high school, secondary and college level.
- Some other factors like- teacher, family, environment etc. also affect the educational development of a student. So these topics can also be undertaken as research study.
- 'Encouragement techniques' can also be the topic of further research.

References

- Asthana, Bipin, 2007 'Measurement and Evaluation in Psychology and Education.'
- Baron, R.A., 2001 'Essentials of Educational Psychology' Pearson Education, Inc. and Dorling, Kinderley, Publishing Inc.
- Garrett, H.E. 2005: ' Statistics in Psychology and Education', London Longmans Green co.
- Good, C.V., 1945 'Dictionary of Education Mc Gram Hill Book Co., USA
- Karlinger, F.N., 1964 'Foundation of Behaviour Research', Indian Report
- Koul Lokesh, 2004: 'Methodology of Educational Research', New Delhi Vikas Publishng House Pvt. Ltd.
- Mouly, G.J., 1964 'The science of education 'Research' New Delhi, Eurasian Publishing House
- NCERT, 2006 'Indian Educational Abstracts'
- W.B. John, 1963 'Research in Education', Prentice Hall of India (P) Ltd., New Delhi.

****

Quality Crisis In Higher Education in India

Problems and Challenges in the Education System of India

Mohini Sakargayen*

Introduction

India is still lagging behind in providing basic education to its children. A recent study by the United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization (UNESCO) has placed India fourth from the bottom in terms of the number of children out-of-school. However, on a positive note, the study also says that India has made good progress in getting children into classrooms.

The political will to provide wider access to education, in the form of the Right to Education Act, has helped reduce the number of out-of-school children from 20 million in 2000, to 2.3 million in 2006 and 1.67 million in 2010-11. This has helped push the country up by one position to fourth from bottom, with Ethiopia (1.7 million out-of-school children) taking its earlier place. Nigeria, with 10.54 million out-of-school children is at the very bottom of the list, while Pakistan comes second-last with 5.43 million. However, with about 57 million children being out of school globally in 2011, the world is far from achieving the target of ensuring that all children get proper schooling by 2015 - one of the millennial development goals of the UN.

It begins at the school level

In 2008, only about 50 percent of Standard 3 students could read a std. 1 text, but by 2012, it declined to 30 percent - a fall of 16 percent. About 50 percent of the std. 3 kids cannot even correctly recognize digits up to 100, where as they are supposed to learn two digit subtraction. In 2008, about 70 percent of the kids could do this. Not only that the country is unable to improve the learning skills of half its primary school children, in the last four years, it has fallen to alarming lows. Similar deterioration in standards of education was also noted among std. 5 students. Importantly, the report notes that the decline is cumulative, which means that the "learning decline" gets accumulated because of neglect over the years. The poor quality of education from std. 1 pulls down their rate of learning progressively so that by the time they are in std. 5, their level of learning is not even comparable to that of std. 2. The private schools are "relatively unaffected" but their low standards remain low. They have also shown a "downturn" in math beyond number recognition. The poor quality of education and rate of decline are however not uniform across India. Some states are low in quality, but are staying where they are (Karnataka, Tamil Nadu and Andhra Pradesh) while some have higher levels of education, which are neither improving nor deteriorating (Himachal Pradesh, Kerala and Punjab). It also says that the decline is more noticeable since 2010, when the RTE came into effect, indicating targets of blanket coverage compromising quality and standards.

At a college level -

India's higher education system is the world's third largest in terms of students, next to China and the United States. Unlike China, however, India has the advantage of English being the primary language of higher education and research. India educates approximately 11 per cent of its youth in higher education as compared to 20 percent in China. The main governing body at the tertiary level is the University Grants Commission (India), which enforces its standards, advises the government, and helps coordinate between the centre and the state. Universities and its constituent colleges are the main institutes of higher education in India.

One of the most dismaying news that the country had this year was that we have over two crore students, 33 central universities and 16IITs, not a single university or IIT or NIT has found place in the list of top 200 universities of the world. Also, out of every thousand students eligible in the age-group between 18 and 24, access to higher education in India is only seven against 21 in Germany and 34 in the US.

The growth of higher education in India has been largely guided by the serviceable prerequisite of the economy. After independence, the role of the state in planning out a development path and also in building higher education institutions was guided by mutuality of purpose. Most observers of higher education in India feel that performance of higher education institutions has been less than

***Asst. Professor of Home Science M.L.C. Govt. Girls College, Khandwa (M.P.) INDIA**

satisfactory in terms of access, equity and quality. Now there is an urgent need to work for the development of the educational sector to meet the need of the emerging opportunities, increasing younger generation population and challenges of the 21st century.

Education system is a business opportunity -

The present system of higher education does not serve the purpose for which it has been started. In general education itself has become so profitable a business that quality is lost in the increase of quantity of professional institutions with quota system and politicization adding fuel to the fire of spoil system, thereby increasing unemployment of graduates without quick relief to mitigate their sufferings in the job market of the country.

Employability factor for companies -

Around 25% of engineering graduates are directly employable (Infosys, an IT giant, last year sorted through 1.3 million applicants only to find that around two percent were qualified for jobs.) Quality of education delivered in most institutions is very poor. While India has some institutions of global repute delivering quality education, such as (Indian Institute of Management) IIMs and (Indian Institute of Technology) IITs, we do not have enough of them. It has very narrow range of course options that are offered and education is a seller's market, where is no scope of incentive to provide quality education. There is clearly a lack of educated educators and teaching is not an attractive profession. It's a last choice in terms of career. Number of Ph.D.'s produced each year is very low and those required by academia is far higher. In fact, at many institutions fresh graduates are employed to teach, leading to poor quality of classroom instruction.

Lack of information -

While some things have changed post the implementation of the RTE Act, lack of awareness about the various provisions of the RTE Act - not only among parents but also school authorities themselves - remains the big challenge. For instance, none of the schools had even heard of, let alone formed, School Management Committees (SMCs). The intent behind the SMCs was to bring parents on board and make them part of the decision-making process. But such committees are non-existent. Schools are not even aware of it. The Act says that schools have to form SMCs, arrange for awareness programs and enroll parents in such committees. But that is not happening. Parents are not aware about quality of the mid-day meals that is being served or about the lack of cleanliness in the schools. The children carry lunch and water bottles to schools to avoid the mid-day meals because there have been cases where students have fallen ill after eating the meals.

Suggestions -

Considering the above problems, we are putting some of the suggestions:

A. For Primary Education -

- Strengthening and improvement in public school system by reviewing state syllabus at par with C.B.S.E. syllabus.
- Teachers' ability to teach the students should be checked every year by conducting exams, as most of the teachers are incompetent due to lack of skill, knowledge, absenteeism, laziness and lack of accountability.
- There should be a system where students and parents can judge about their teachers, their school, curriculum etc. on half and yearly basis to take corrective steps.
- A complaint/suggestion register should be made available in every school with a stamp and signature of education department.
- A special toll free helpline should be provided to let the district and state authorities know the schools' problem.
- Improving teaching and technical skill like computers etc. the teachers need to retrain in Information Technology and modern methods of teaching and increase efficiency in classroom teaching so that students need not depend on home work and tuition.
- Other major recommendation is that students should get any one or two basic technical skills at school level itself. It'll be helpful for the students in further studies.

B. For College Education -

- Industry and Academia should connect to ensure curriculum and skills in line with requirements.
- Vocational and Diploma courses need to be made more attractive to facilitate specialized programs being offered to students.
- Incentives should be provided to teachers and researchers to make these professions more attractive for the younger generation.
- Efforts are required to improve the country's innovative capacity, yet the efforts should be to build on the existing strengths in light of new understanding of the researchinnovation-growth linkage.
- Methods of teaching through lectures will have to

subordinate to the methods that will lay stress on self-study, personal consultation between teachers and pupils,and dynamic sessions of seminars and workshops. Methods of distance education will have to be employed on a vast scale.

- A combination of arts subjects and computer science and science and humanities or literature should be introduced so that such courses could be useful for the students to do jobs after recruitment in some companies which would reduce unnecessary rush to higher education.
- Academic and administrative audit should be conducted once in three years in colleges by external experts for ensuring quality in all aspects of academic activities.
- Fees for education in general should not be high; especially, the fees for higher studies should be within the reach of every class of people in the nation.
- Meritorious doctoral students should be recognized through teaching assistantships with stipends over and above the research fellowships Identifying talented, meritorious students and encouraging them through recognition is very important to attract students into research and teaching.
- Examination reforms, gradually shifting from the terminal, annual and semester examinations to regular and continuous assessment of student's performance in learning should be implemented.

Conclusion -

While physical expansion of education infrastructure is necessary, at the same time emphasis on the quality of education must be given.

It is such a tragedy that by next year, when UPA seeks fresh mandate for all its welfare schemes, 41 percent of the primary school children will be paying for their education and there is no guarantee that what they learn is of any quality or consequence. At this rate, sooner than later, India's education sector will resemble its crumbling public health system in which three-fourth of the people pay for their health expenditure.

Finally, education should be for the flowering of personality but not for the suppression of creativity or natural skill. In the globalized world opportunities for the educated people are naturally ample in scope. As a result business process outsourcing (BPO) activities have increased competition in the world trade leading towards the production of quality goods and their easy availability everywhere in the world market. That is the way the world can be developed for peace, prosperity and progress by able and skillful men.

We need an educational system that is modern, liberal and can adapt to the changing needs of a changing society, a changing economy and a changing world.

The thrust of public policy for higher education in India has to be to address these challenges. However, one university can't make much difference. If the government welcomes more such initiatives, the future will be ours. We will be able to match and compete with other countries and the dream to be the world's greatest economy won't be difficult to achieve.

"Education is the most powerful weapon which you can use to change the world." ***-Nelson Mandela***

****

उच्चशिक्षा में संवादहीनता : एक चुनौती (सर्वेक्षण अध्ययन)

डॉ. अकीला कुरैशी * डॉ. शहजाद कुरैशी **

गुणवत्ता न केवल किसी कार्य का गुण है, अपितु वह तत्संबंधी कार्य को और अधिक निखारने का नाम भी है। किसी कार्य को कितने अच्छे तरीके से किया जाय कि वह ठोस तथा स्थाई होते हुए उद्देश्य की यथोचित प्राप्ति में सहायक हो।

उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रबंधन के अन्तर्गत :-

1. उच्च शिक्षा का संगठनात्मक ढाँचा
2. जिम्मेदारियाँ
3. विधियाँ
4. संसाधन

हमारी उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रबंधन की जिम्मेदारी के अन्तर्गत शिक्षार्थी, शिक्षक और पालक व अभिभावक महत्वपूर्ण त्रिकोण है। हमारा प्रस्तुत शोधपत्र इसी गुणवत्ता त्रिकोण पर केन्द्रित है।

भारतीय शिक्षा प्रणाली मूल्य आधारित एवं मनुष्य आधारित शिक्षा प्रणाली है। चाहे गुरूकुल हो या स्वतंत्र भारत के प्रारंभिक शिक्षण संस्थान, वहाँ छात्रों की समझ में प्रतिष्ठा और गरिमा सर्वोपरि रही है। विगत् कुछ दशकों से शिक्षा जगत में बाजार, रोजगार, भूमण्डलीकरण और सूचना क्रांति के प्रभाव ने शिक्षा की अवधारणा को परिवर्तित किया हैं, शिक्षा में डिग्री प्राप्त करना यांत्रिक प्रक्रिया बन गया है। जहाँ प्रवेश, परीक्षा, परीक्षण और परिणाम के बाद नौकरी की भागमभाग है। शिक्षण संस्थानों की बढ़ती हुई संख्या, शिक्षकों की उत्प्रेरक की भूमिका से पलायन, अभिभावकों की सक्रियता का अभाव और प्रबंधन के अनुउत्तरदायी व्यवहार की चुनौती है। इसके अतिरिक्त सबसे बड़ी चुनौती शिक्षक और विद्यार्थी, शिक्षक और अभिभावक एवं शिक्षक और समाज के बीच संवेदनहीनता का बढ़ता दायरा है। अत: उच्च शिक्षा में गुणवत्ता की संकल्पना को साकार करने में संवादहीनता की स्थिति सर्वथा एक बड़ी चुनौती भरा कार्य है। वर्तमान उच्च शिक्षा पूर्णतया परीक्षा केन्द्रित हो जाने के कारण ' केम्पस कल्चर ' समाप्त हो रहा है। शिक्षा संप्रेषण एवं संवाद है। यह केवल ज्ञान का हस्तांतरण नहीं है। अत: वर्तमान में शिक्षार्थी, शिक्षक और अभिभावक के बीच संवाद होना अत्यावश्यक है।

वर्तमान उच्च शिक्षा परिवेश में शिक्षक और शिक्षार्थी के बीच गतिरोध का अत:हीन सिलसिला कायम हो रहा है। इसे रोकने के उपायों के लिए शिक्षाविद् एवं समाज चिन्तित हैं। दोनों के बीच की अन्तरंगता और विश्वसनीयता प्रश्नों के घेरे में है। उच्च शिक्षा की गुणवत्ता और मूल्य के लिए यह अच्छा संकेत नही है।

इसके प्रमाणिक अध्ययन हेतु खण्डवा शहर के 160 निदर्शन का चयन किया गया। इसमें 60 विद्यार्थी 50 शिक्षक एवं 50 पालकों को लिया गया। आर्टस, कामर्स, साइन्स एवं होमसाइन्स चारों फैकल्टी से 15-15 विद्यार्थियों को चुना गया। इन्ही विद्यार्थियों के पालकों से एवं महाविद्यालय के 30 एवं अन्य महाविद्यालय के 20 शिक्षकों से प्रश्नावली भरवाई गई। प्राप्त तथ्यों के आधार पर वर्गीकरण एवं विश्लेषण के पश्चात् परिणाम प्राप्त किये गये।

1. 99 प्रतिशत विद्यार्थी विषय चयन अपनी मर्जी से करते हैं। केवल एक प्रतिशत अपने माता पिता की सलाह से विषय चयन करते है।
2. 99 प्रतिशत विद्यार्थी अपनी रूचि के ही विषय चुनते हैं।

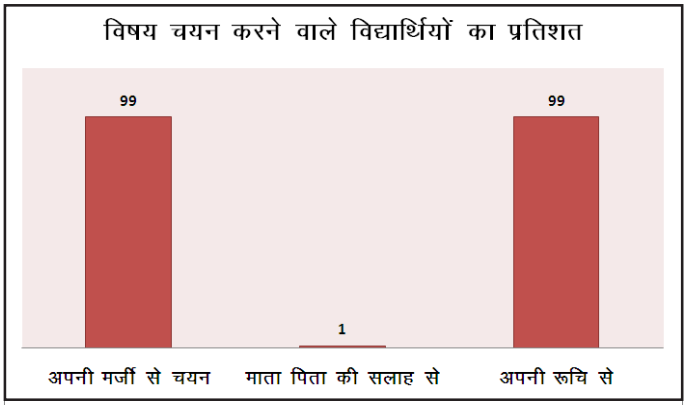

3. 50 प्रतिशत विद्यार्थी नियमित कक्षा में जाते हैं।
4. 40 प्रतिशत विद्यार्थी पाठ्यक्रम (पढ़ाई) के अतिरिक्त अन्य गतिविधियों में भाग लेते हैं।
5. 80 प्रतिशत विद्यार्थी पाठ्यक्रम को छोड़कर अन्य समस्याओं के सम्बन्ध में शिक्षक अभिभावक से सम्पर्क नहीं करते हैं।
6. 100 प्रतिशत विद्यार्थी डिग्री लेने के बाद नौकरी करना चाहते हैं।

प्रश्न:- किस क्षेत्र में नौकरी करना चाहते है?

उत्तर:- केवल 40 प्रतिशत विद्यार्थी स्पष्ट क्षेत्र बता पाये। 60 प्रतिशत ने उत्तर नही दिया।

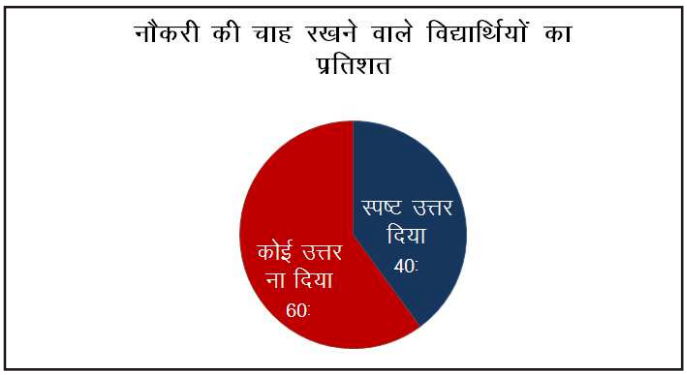

पालकों से प्राप्त तथ्य -

1. 50 प्रतिशत पालकों की बच्चों से पढ़ाई सम्बन्धी बात होती हैं। 50 प्रतिशत कभी कभी चर्चा करते हैं।
2. 80 प्रतिशत पालकों को बच्चों के कॉलेज के प्रारम्भ होने का निश्चित समय नही मालूम था। 50 प्रतिशत केवल इतना बता पाये कि सुबह लगता है अथवा दोपहर में लगता है।
3. 40 प्रतिशत अभिभावक सेमेस्टर प्रणाली के बारें में बच्चों से पूछते हैं। 60 प्रतिशत केवल यह जानते हैं कि सेमेस्टर प्रणाली में साल में दो बार परीक्षा होती है। 100% अभिभावक सेमेस्टर पद्धति को उचित मानते हैं, क्योंकि इससे बच्चों को एक साथ पढ़ाई का बोझ नहीं पढ़ता हैं।

* सहा. प्राध्यापक, गृहविज्ञान विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय,मून्दी खण्डवा (म.प्र.) भारत

4. 40 प्रतिशत अभिभावक बच्चों के पाठ्यक्रम एवं कॉलेज की अन्य गतिविधियों के बारे में जानकारी रखते हैं। 20 प्रतिशत नही एवं 30 प्रतिशत ने कोई उत्तर नही दिया।

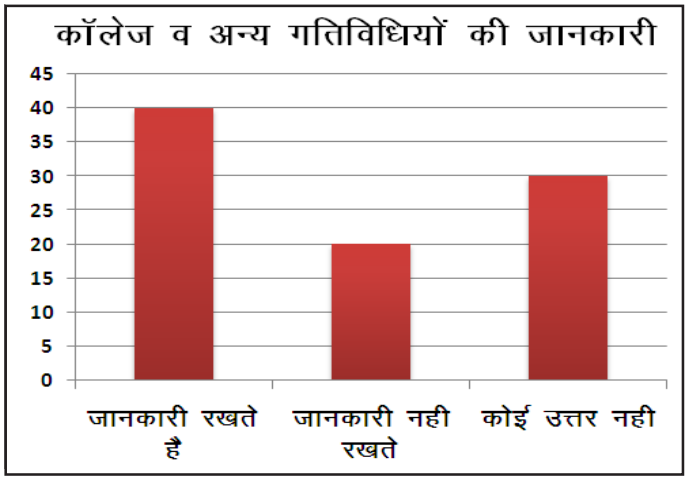

5. 40 प्रतिशत अभिभावक शिक्षक अभिभावक मीटिंग में जाते है। 20 प्रतिशत नही जाते एवं 40 प्रतिशत ने कोई उत्तर नही दिया।

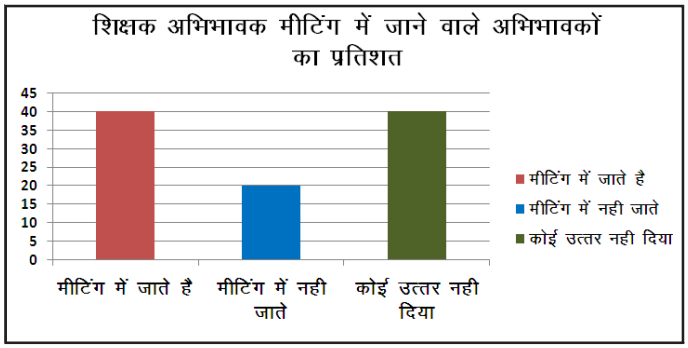

6. शिक्षा के स्तर में गिरावट के लिये 50 प्रतिशत अभिभावक विद्यार्थियों को दोषी मानते हैं। 30 प्रतिशत शिक्षक विद्यार्थी दोनो को दोषी मानते हैं और 20 प्रतिशत ने कोई जवाब नही दिया।

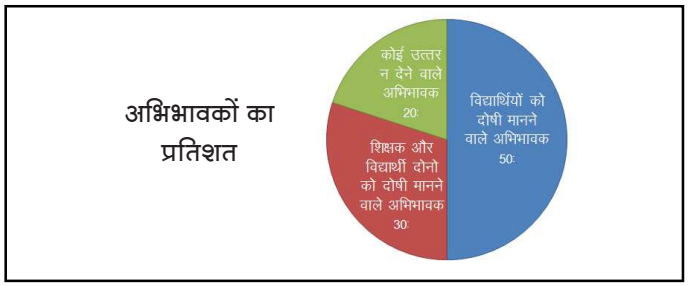

7. 90 प्रतिशत अभिभावक शिक्षकों से व्यक्तिगत रूप से नही मिलते हैं।
8. 50 प्रतिशत अभिभावक बच्चों द्वारा अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों को और 50 प्रतिशत शिक्षक को जिम्मेदार मानते हैं।
9. आपका बच्चा रोज कॉलेज जाता है? इस पर 80 प्रतिशत ने हाँ में उत्तर दिया, 20 प्रतिशत ने कोई उत्तर नही दिया।

शिक्षकों से प्राप्त तथ्य –

1. 100 प्रतिशत शिक्षक यह मानते हैं कि वह विद्यार्थियों में गुणवत्ता वृद्धि हेतु प्रयास करते हैं।
2. 40 प्रतिशत गुणवत्ता हेतु किये गये प्रयासों का रिकॉर्ड रखतें हैं।
3. 70 प्रतिशत पाठ्यक्रम व अन्य कठिनाई के सम्बन्ध में शिक्षक, अभिभावक से सम्पर्क नही करते हैं।
4. नियमित कक्षा में उपस्थित नही होने पर 90 प्रतिशत शिक्षक पालकों को सूचित करते हैं। प्रतिक्रिया स्वरूप छात्राएँ कक्षा में आने लगती हैं।
5. 50 प्रतिशत शिक्षक मानते हैं कि सेमेस्टर पद्धति से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हुआ हैं, और 50 प्रतिशत इसे नही मानते हैं। 50 प्रतिशत शिक्षक सेमेस्टर पद्धति से सन्तुष्ट हैं।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष –

उच्च शिक्षा को केवल परीक्षा, मूल्यांकन और परिणाम तक सीमित नहीं रखा जा सकता है। विद्यार्थी को सक्रिय ज्ञानक्रिया और चिन्तनशील बनाने के लिए '' मौलिक ग्रन्थों के अध्ययन हेतु प्रेरित करना अत्यावश्यक है। व्याख्यान शैली में कुछ ऐसे प्रश्न रखें जो गाइड, 20-क्वेश्चन या अन्य साधनों से परे विषय को खोलते हैं। अपने और विद्यार्थी के अनुभवों को ज्ञान में शामिल करें। '' तो उच्च शिक्षा में गुणात्मक परिवर्तन होंगे। अच्छे शिक्षकों तक विद्यार्थी स्वयं जाए और उनसे सीखें एवं संवाद की प्रक्रिया को बहाल करें। अच्छे शिक्षक जो पढ़ाई लिखाई, देश दुनिया और जीवन से जीवंत रिश्ता रखते है। वे छात्रों से संवाद में विश्वास रखते हैं। उनके हित के लिए सदैव तैयार रहते है।

अध्ययन अध्यापन की नई तकनीकें शिक्षा में आई हैं। क्या वे पर्याप्त हो सकती है ? जैसे इंटरनेट या ब्लागिंग या अन्य तकनीकें। इन्हें जीवन और समय के अनुरूप रखने की आवश्यकता तो है, लेकिन ज्ञान की दुनिया में इनके प्रयोग को ही शिक्षा का सबसें बड़ा पैमाना न बनाया जाये। यदि अध्यापकों और छात्रों में संवाद नही होगा तो तकनीकी क्षेत्रों में हो रहे विकास से ज्ञान तो प्राप्त हो सकता है, लेकिन अध्यापकीय संवादहीनता से विद्यार्थी में संवेदनशीलता का निरन्तर अभाव होगा। जो उच्च शिक्षा के राष्ट्रीय महत्व के लिए सबसे बड़ी हानि है।

सुझाव :-

1. शिक्षक छात्र अनुपात 1:30 हो ताकि शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी से प्रत्यक्ष सम्पर्क में रहेगा। हिन्दी इंग्लिश की कक्षाओं में जहाँ 80 बच्चे होते है, '' शिक्षक केवल सी.सी.ई. के समय शीट पर हस्ताक्षर लेते समय व्यक्तिगत रूप से बच्चे से मिलता है। ''
2. 'फील्ड वर्क' को अधिक प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जिससे विद्यार्थियों को अनुभव बताने के अभ्यास से बोलने की क्षमता को प्रोत्साहन मिल सकें।
3. गाइड, 20-क्वेश्चन प्रतिबन्धित की जाएँ। अच्छी पाठ्य पुस्तकें विद्यार्थियों को उपलब्ध कराई जाए। इस हेतु ग्रन्थालयों का विकास आवश्यक है, ताकि बच्चों को पुस्तकें आसानी से उपलब्ध हो सके।
4. कक्षा में पढ़ाई के साथ साथ विद्यार्थियों को समुचित मार्गदर्शन प्रदान करना चाहिए।
5. विद्याार्थियों का सतत् मूल्यांकन पाठ्यक्रम के अतिरिक्त भी होना चाहिए।
6. अभिभावकों की प्रत्येक सेमेस्टर में कम से कम एक मीटिंग अवश्य होनी चाहिए।
7. 75 प्रतिशत उपस्थिति का नियम कठोरता के साथ लागू किया जाए।
8. दो विषय में पूरक की पात्रता समाप्त की जाए।

महर्षि अरविन्द ने बहुत पहले माना था – '' हम लोगों ने इस देश में शिक्षा को ज्ञान प्राप्ति के साथ उलझा दिया और ज्ञान प्राप्ति को एक मात्र संकीर्ण तथा अशिष्ट अर्थ स्मृति में परिभाषित किया है। छात्र को ज्ञान प्रदान करना आवश्यक है, किन्तु उससे अधिक आवश्यक है, उसके अन्दर अपने ज्ञान की ' प्रयोग शक्ति ' का निर्माण करना। ''

संदर्भ– व्यक्तिगत सर्वेक्षण

मप्र के इंदौर संभाग के मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक विकास एवं पोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (3 से 14 वर्ष आयु वर्ग)

श्रीमती मोहिनी सकरगायें * डॉ. शारदा त्रिवेदी **

विश्व के विकसित एवं विकासशील देश वर्तमान में बच्चों के विकास के प्रति जागरूक होते जा रहें है। यूनीसेफ, विश्व स्वास्थ्य संगठन, तथा विभिन्न देशों मे सरकारी प्रयास, सामाजिक संगठन आदि अन्य योजनाएं बच्चों के भविष्य निर्माण में सहभागिता का निर्वाह कर रहे है। उल्लेखनीय है कि बच्चों की दुनिया का एक भाग ऐसा है जो उपर्युक्त सुविधाओं से वंचित है या सरकारी प्रयास अथवा संगठन उन तक पहुँचने में सफल नहीं है।

प्रत्येक देश में 'नि:शक्त' बच्चों के प्रति सरकारी प्रयासों में जागरूकता आती जा रही है। शारीरिक नि:शक्त (मूक बधिर, दृष्टिहीन एवं गतिक नि:शक्त) के लिए शिक्षा में छात्रवृत्ति एवं अन्य सुविधाएँ है। आजीविका हेतु नौकरी में आरक्षण, व्यापार व्यवसाय में प्रोत्साहन अनुदान दिया जा रहा है। मानसिक नि:शक्त बच्चों को भरण-पोषण हेतु निश्चित अनुदान के अतिरिक्त कोई अन्य सुविधा नहीं है। 'मानसिक नि:शक्त बच्चों के लिए उपलब्ध पुनर्वास केन्द्रों के संचालन की स्थिति दयनीय है। ''दुर्बल व्यक्ति वह व्यक्ति है जिनमें स्थायी मन्दता अथवा सीमित मानसिक विकास पाया जाता हैं। सीमित मानसिक विकास बाल्यकाल से होता है। मानसिक रूप से दुर्बल व्यक्ति स्वयं अपना काम करने और अपनी स्वयं की ही सहायता कर पाने के अयोग्य होते है।''

शोध की उपकल्पना – मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक विकास में असमानताएँ पायी जाती है।

शोध के उद्देश्य– शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र के 3-14 वर्ष आयु वर्ग के मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक विकास का अध्ययन ।

शोध विधि – समग्र के चुनाव के लिए बहुस्तरीय उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति का उपयोग किया गया है। इस प्रकार उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के आधार पर शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र से क्रमश: 70,70,70 बच्चे अर्थात् कुल 210 बच्चों का चयन शोध हेतु किया गया। शरीर की वृद्धि व विकास वंशानुक्रम एवं वातावरण पर आधारित होता हैं। शरीर के विकास पर आहार एवं पोषण का भी प्रभाव पड़ता हैं।

शारीरिक विकास के अध्ययन मे एन्थ्रोपोमेट्रिक मेजरमेंट मुख्य भूमिका निभाता है। शोध अध्ययन में अवलोकन के समय पाया कि शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र के सामान्य प्रतिसादकों का ही एन्थ्रोपोमेट्रिक मेजरमेंट आय.सी.एम.आर. के प्रतिपादित मानक से कम या अधिक है।

इस शोध अध्ययन के लिए एन्थ्रोपोमेट्रिक मेजरमेंट विधि द्वारा आंकड़ों की प्राप्ति की गई है । शारीरिक विकास मापन में जिन मापों का उपयोग किया गया हैं वे इस प्रकार हैं : **वजन, ऊंचाई, हैड सरकमफॅरेन्स, चेस्ट सरकमफॅरेन्स एव आर्म सरकमफॅरेन्स** ।

वजन का अध्ययन

वजन	सामान्य प्रतिसादक	मानसिक नि:शक्त प्रतिसादक
सामान्य से कम	10.0	57.14
सामान्य	42.86	1.43
सामान्य से अधिक	47.14	41.43
कुल	100	100

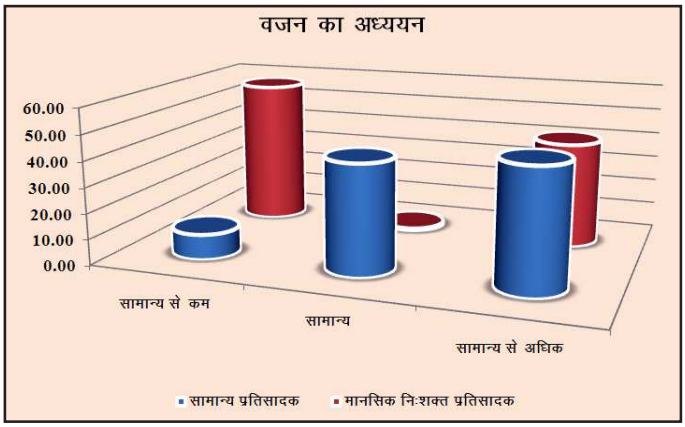

उपरोक्त ग्राफ में 3 से 14 वर्ष आयुवर्ग हेतु वजन के आय.सी.एम.आर. के प्रतिपादित मानक के आधार पर सामान्य एवं मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के वजन का विवरण दिया गया है।

शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र के कुल 210 सामान्य प्रतिसादकों में से 10 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य से कम वजन के हैं वहीं कुल 210 मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से 57.14 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य से कम वजन वाले है। सामान्य 210 प्रतिसादकों में से 42.86 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य वजन वाले हैं। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से 1.43 प्रतिशत प्रतिसादक ही मानक के आधार पर सामान्य वजन वाले है। तीनों ही क्षेत्रों के सामान्य प्रतिसादकों में से 47.14 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य से अधिक वजन वाले है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से 41.43 प्रतिशत प्रतिसादक सामान्य से अधिक वजन वाले है।

नवजात शिशु का वजन 6 से 8 पाउण्ड अर्थात् 2.7 किलो से 3.6 किलो होता है। प्रतिसादकों के विकास में वंशानुक्रम महत्वपूर्ण होता है, वहीं वातावरण की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। बालक के शारीरिक विकास में संतुलित भोजन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शारीरिक विकास के अन्तर्गत वजन का मानक से कम या अधिक होना वंशानुक्रम से अधिक आहार पर निर्भर होता है।

शोध अध्ययन में प्राप्त परिणामों के निष्कर्ष के अनुसार सामान्य प्रतिसादकों की अपेक्षा मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों के वजन का प्रतिशत आय.सी.एम.आर. के प्रतिपादित मानक की तुलना में सामान्य से कम एवं सामान्य से अधिक में क्रमश: 57.14 प्रतिशत एवं 41.43 प्रतिशत है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से 98.57 प्रतिशत प्रतिसादकों का वजन असामान्य है। असामान्यता का मूल कारण कुपोषण है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादक कुपोषण के दोनों ही प्रकार अल्प पोषण एवं अति पोषण से ग्रसित पाये गए।

शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र के सामान्य प्रतिसादकों की तुलना निर्धारित मानक से करने पर मात्र 42.86 प्रतिशत प्रतिसादक सामान्य

* सहायक प्राध्यापक, माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** सेवानिवृत्त प्राध्यापक (गृहविज्ञान विभाग) इंदौर (म.प्र.) भारत

वजन के पाये गये । वहीं सामान्य से कम एवं समान्य से अधिक क्रमश: 10 प्रतिशत एवं 47.14 प्रतिशत प्रतिसादक असामान्य का शिकार है। प्रतिसादकों में से 57.14 प्रतिशत सामान्य प्रतिसादक भी कुपोषण से पीड़ित है। अध्ययन से प्राप्त परिणामों के आधार पर सामान्य प्रतिसादक अल्पकुपोषण की अपेक्षा चार गुना अधिक अतिपोषण कुपोषण से पीड़ित है। यह कुपोषण प्रतिसादकों के खान-पान की बदली हुई आदतों के कारण है। क्षेत्रीय अध्ययन के समय अवलोकन एवं चर्चा के दौरान पाया गया कि सामान्य प्रतिसादक घरेलू भोज्य पदार्थों की अपेक्षा वर्तमान में प्रचलित फास्ट फूड का उपयोग अधिक करते हैं।

ऊंचाई का अध्ययन

ऊंचाई	सामान्य प्रतिसादक	मानसिक नि:शक्त प्रतिसादक
सामान्य से कम	11.43	57.14
सामान्य	42.38	1.43
सामान्य से अधिक	46.38	41.43
कुल	100	100

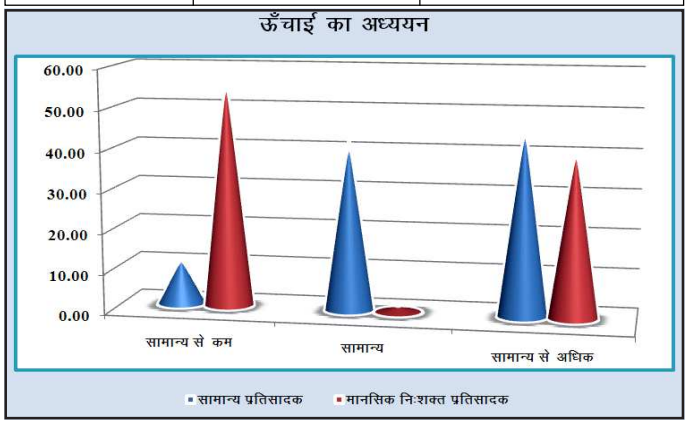

उपरोक्त ग्राफ में 3 से 14 वर्ष आयुवर्ग हेतु ऊंचाई के आय.सी.एम.आर. के प्रतिपादित मानक के आधार पर सामान्य एवं मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों की ऊंचाई का विवरण दिया गया है।

शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्र के कुल 210 सामान्य प्रतिसादकों में से 11.43 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य से कम ऊंचाई वाले हैं वहीं 210 मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से 57.14 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य से कम ऊंचाई वाले है।

सामान्य प्रतिसादकों में से 42.38 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य ऊंचाई वाले है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से मात्र 1.43 प्रतिशत प्रतिसादक ही मानक के आधार पर सामान्य ऊंचाई वाले है। अर्थात् तीनों ही क्षेत्रों से सामान्य प्रतिसादकों में से 46.19 प्रतिशत प्रतिसादक मानक के आधार पर सामान्य से अधिक ऊंचाई वाले है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों में से 41.43 प्रतिशत प्रतिसादक सामान्य से अधिक ऊंचाई वाले है।जन्म के समय शिशु की ऊंचाई 18 से 20 इंच होती है। नवजात अवस्था से परिपक्वता तक ऊंचाई में निरंतर वृद्धि होती है। जन्म के समय बालक-बालिकाओं की अपेक्षा लम्बे होते है। शिशु की ऊंचाई वंशानुक्रमण की प्रक्रिया पर निर्भर होती है। साथ ही ऊंचाई पर परिवार की आर्थिक-सामाजिक स्थिति, पोषण स्तर एवं वातावरण का प्रभाव पड़ता है।

शोध अध्ययन में प्राप्त परिणामों के निष्कर्ष के रूप में सामान्य की अपेक्षा मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों की ऊंचाई का प्रतिशत आय.सी. एम. आर. के निर्धारित मानक की तुलना में सामान्य से कम एवं सामान्य से अधिक में क्रमश: 57.14 एवं 41.43% है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादकों की ऊंचाई में कुल 98.57% प्रतिसादकों की ऊंचाई असामान्य है। यहाँ असामान्यता का कारण वंशानुक्रम के अलावा कुपोषण है। मानसिक नि:शक्त प्रतिसादक कुपोषण के दोनों प्रकार अल्प पोषण एवं अधिक पोषण से पीड़ित है।

निष्कर्ष -मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक विकास की स्थिति :-

परिणामों के आधार पर शहरी, ग्रामीण एवं आदिवासी तीनों ही क्षेत्रों में से 57.14 प्रतिशत मानसिक नि:शक्त प्रतिसादक बच्चे शारीरिक विकास के निर्धारित मानक से पिछड़े हुए हैं। परिवार में छोटे या बड़े अन्य स्वास्थ्य बालक की उपस्थिति एवं माता-पिता की मानसिक नि:शक्त बालक की समुचित देखभाल के प्रति माता-पिता अभिभावकों में उदासीनता उत्पन्न करती है। परिणामस्वरूप मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिका के शारीरिक विकास के लिये आवश्यक पोषक तत्वों की उसके आहार से पूर्ति नहीं हो रही है। इस प्रकार उचित परिस्थितियों के अभाव में मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिका शारीरिक विकास के क्षेत्र में निर्धारित मानक से पिछड़ रहे है। जिसका मुख्य कारण माता-पिता का निम्न शैक्षिक स्तर, परिवार की निम्न सामाजिक-आर्थिक स्थिति, उचित देखभाल के प्रति उदासीनता, अज्ञानता एवं जागरूकता का अभाव है।

सुझाव -गर्भावस्था में उचित देखभाल के प्रति सकारात्मक पहल

महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य समुदाय में विशेषकर महिलाओं को स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा देना है। इस कार्यक्रम के माध्यम से महिलाओं को गर्भावस्था में संतुलित आहार के महत्व, नशीले पदार्थो का भ्रुण के विकास पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभाव, संक्रामक एवं वायरल रोग से बचाव एवं शीघ्र उपचार का महत्व, नियमित व्यायाम, स्वास्थ्यवर्धक वातावरण में रहना, तनावपूर्ण स्थितियों से बचना एवं टीकाकरण का महत्व इन बातों की जानकारी आसानी से दी जा सकेगी। साथ ही समेकित बाल विकास योजना के अर्न्तगत जननी सुरक्षा योजना, जननी एक्सप्रेस योजना, गोद भराई योजना, स्वास्थ्य परीक्षण, विशेषज्ञ सुविधाएं, रोग निरोधन, प्रसव सहयोगी योजना एवं शिशु के स्वस्थ्य जीवन में प्रथम स्तनपान के महत्व की जानकारी आसानी से दी जा सकेगी।

सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों की मातृ एवं शिशु कल्याणकारी योजनओं के प्रति जागरूकता लाना

सरकारी मातृ एवं शिशु कल्याणकारी योजनाएँ यूनिसेफ एवं समेकित बाल विकास योजना के साथ मिलकर सम्पूर्ण भारत वर्ष में लागू की गयी है। जिनमें शिशु जन्म के पूर्व गर्भवती माता के लिये विभिन्न योजनाएँ चलायी जा रही हैं। वहीं शिशु जन्म के पश्चात् राष्ट्रीय टीकाकरण योजना, पूरक पोषण, आहार योजना, रोग निरोधन, स्वास्थ्य परीक्षण, विशेषज्ञ सुविधाएं, शाला पूर्व शिक्षा एवं कुपोषण ग्रस्त होने पर पोषण पुर्नवास केन्द्र के अन्तर्गत पोषण उपचार योजनाएं चलायी जा रही है। जिस प्रकार से सामान्य बच्चों के कल्याण के लिए स्वास्थ्य मेले एवं स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन हो रहा हैं उसी प्रकार विशेष रूप से मानसिक नि:शक्त बालक एवं बालिकाओं के लिये भी स्वास्थ्य मेले एवं स्वास्थ्य शिविरों का पृथक से आयोजन किया जाना चाहिये क्योंकि इन बच्चों की आवश्यकताएँ सामान्य बच्चों की आवश्यकताओं से भिन्न होती है। इन मेलों या शिविरों में माता-पिता एवं अभिभावकों को मानसिक नि:शक्तता की शीघ्र पहचान के तरिकों से अवगत कराया जाना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य हैं। जिससे शीघ्र पहचान के पश्चात बच्चों की विशेष एवं समुचित देखभाल की जा सकेगी।

पाठशाला के बजाए बच्चे काम पर जा रहे है

डॉ. सीमा कदम*

बाल श्रम एक सार्वभौमिक समस्या है, जो प्रत्येक समाज में किसी न किसी मात्रा में विद्यमान है। बाल श्रम का उपयोग सामान्यत: बुरा नहीं है परन्तु जिन परिस्थितियों एवं शर्तों पर इन्हें काम में लगाया जाता है वह बुरा है। इस संबंध में कहा जा सकता है 'बचपन में काम करना सामाजिक अच्छाई है और राष्ट्रीय हित में है' लेकिन बाल श्रम एक सामाजिक बुराई और राष्ट्रीय पतन भी है। यहाँ सामाजिक बुराई एवं सामाजिक अच्छाई से अर्थ यह है कि जब तक किसी भी वस्तु का सदुपयोग होता है वह सामाजिक हित कहलाती है किंतु जब उनका दुरुपयोग होने लगता है तो वह सामाजिक बुराई का कारण बन जाती है।

'' बालक का मन प्रारंभ में कोरे कागज के समान बिल्कुल साफ होता है उसमें कोई भी पूर्व संचित विचार या अनुभूतियाँ नहीं होती। वातावरण के प्रभाव से उस पर जैसा चाहे अक्षर हम अंकित कर सकते है।''

आज सारे संसार में बाल श्रम पर तहर-तरह के प्रतिबंध लगाये गये है फिर भी विकसित कहलाने वाले अमेरिका में बेशुमार लैटिनों बच्चें अवैध रूप से खेतों में काम करते है। उनके परिवार दक्षिण अमेरिका से पलायन के बाद अमरिका के ग्रामीण क्षेत्रों में खप जाते है। फल तोड़ने, फसल काटने जैसे काम उनके बच्चें भी उन्हीं के साथ करते है।

तीन-चार महिने एक जगह फिर दसूरी जगह। बच्चों की शिक्षा जगह-जगह से प्रभावित होकर ऐसी लकीर बन जाती है, जिसका कोई अस्तित्व नहीं होता। ये बच्चें बड़े होकर मकान बनाने, खेतों एवं कारखानों में भरपूर मजदूरी के लिये यहीं के होकर रह जाते है। 350 वर्ष पहले यहाँ गुलाम बनाकर लाये गये अफ्रीकियों का भाग्य अब भी लगभग ऐसा ही है। यहाँ ए.सी. ऑफिसों या कारखानों में बाल मजदूर कानून के डर से नहीं मिलते लेकिन कड़कती सर्दी और गर्मी में बार, खेतों में काम करने वालों की सही संख्या का अंदाजा किसी को भी नहीं है।

इन स्थितियों को सभी सरकारें, सभी संस्थाएँ जानती है, लेकिन सस्ते दामों पर काम करने के लिये सभी देशों, समाजों को बाल मजदूर की आवश्यकता होती है।

चीन में खिलौने, आतिशबाजी और वस्त्र उद्योग में, अफ्रीका से दुनिया भर में घरेलू नौकर, खेत मजदूर और बाल सैनिक बनाने के लिये बच्चें चाहिए। जिन विद्रोही संस्थाओं के पास नियमित सेनाएँ नहीं है वे दूसरों के दिए हुए धन से बाल सैनिक भर्ती करते है।

दस साल का बच्चा भी कंधे पर बंदूक रखकर चलने में अजीब शक्ति संचार का अनुभव करता है। इसके बदले परिवार को आर्थिक मदद मिल जाती है। अर्थात बच्चों को मिलती हैं बन्दूक, और परिवार को भोजन। यूगांडा, अंगोला, कोलम्बिया, बर्मा, लाईबेरिया आदि कुछ नाम ऐसे है जिन देशों में बाल सैनिक नियमित रूप से काम पर तैनात है। इनमें अधिकतर बच्चें अपहरण करके लाए गए होते है। उन्हें नशीली दवाओं (ड्रग्स) पर रखा जाता है।

एक अध्ययन के अनुसार:-

संसार में लगभग 25 करोड़ बच्चें नियमित रूप से श्रम करते हुए भी भूखे मर रहे है। इन 25 करोड़ बच्चों का प्रतिशत इस प्रकार है-

सहारा रेगिस्तान के नीचे के अफ्रीकी भाग में	-	29 %
संपूर्ण एशिया में	-	19 %
दक्षिण अमेरिका और कैरेबियन क्षेत्र में	-	16 %
उत्तरी अफ्रीका और मध्य-पूर्व के देशों में	-	15 %
शेष बच्चें विकसित देशों में	-	21 %

भारत में बाल श्रमिकों को देखने हेतु केवल नज़र उठाना ही काफी है। नजरों के सामने कोई न कोई बच्चा श्रम करना दिखाई देगा।

सड़क बनाते हुए, बकरियाँ चराते हुए, कुलीगिरी करते हुए, कचरा बिनते हुए, मछलियाँ बेचते हुए, चाय बनाते हुए, गलियों में तमाशा करते हुए, गुब्बारे-अखबार बेचते हुए, साईकिल की दुकानों में मरम्मत करते हुए, भीख माँगते हुए, माँ-बहन की गालियाँ खाते हुए, बूट-पालिश करते हुए, और बहुत जगहों पर मालिक की हवस का शिकार बनते हुए। कहाँ और क्या नहीं दिखेगा ? ये बच्चें केवल नाम के बच्चें है, काम में ये वयस्क को मात देते नजर आते है।

श्रम मंत्रालय के सर्वेक्षण के अनुसार- भारत में हर तीसरे परिवार में एक बाल श्रमिक होता है और पाँच से पन्द्रह वर्ष की आयु में हर चौथा बच्चा श्रमिक होता है।

कुछ कारखानों में तो 90% तक मजदूर बच्चें ही होते है। मेघालय की खानों तथा देश की माचिस फैक्ट्रियों में काम करने वाले 28 हजार बच्चें ऐसे है जिनकी आयु मुश्किल से पाँच वर्ष है।

दिल वालों की दिल्ली में बाल श्रमिकों का दर्द सुनने वाला कोई नहीं है। यहाँ उद्योग धंधों में अत्यंत दयनीय स्थिति में लगभग तीस हजार बाल श्रमिक कार्यरत है।

अकेले मध्यप्रदेश के बीड़ी उद्योग में ही दो लाख से भी अधिक बाल मजदूर काम में लगे हुए है। भोपाल में छ: हजार से भी अधिक बच्चें होटलों, कारखानों, लुहारी, चर्मकारी आदि में अत्यंत अस्वास्थ्यप्रद वातावरण में कार्यरत है।

समस्या की गहराई का अनुमान तमिलनाडू राज्य के रामनाथपुरम जिले में स्थित शिवाकाशी के दियासलाई व बारुद के कारखानों में काम करने वाले बच्चों से लगाया जा सकता है कि यहाँ 14 साल से कम उम्र के 40 हजार बच्चें कार्यरत है। इनमें से 8 हजार बच्चें 4-5 वर्ष की उम्र के है।

ये बच्चें प्रतिदिन सुबह 3-4 बजे अपने घरों से निकलते है। इन्हें बहुत ही बदबूदार कमरों में आतिशबाजी की वस्तुएं बनाने में सुबह 6 से शाम 7 बजे तक रहना मजबूरी बन गया है। इनका कमजोर शरीर, मैले कुचैले कपड़े, निस्तेज चेहरा, इनकी करुण कहानी कहता है।

इसके अतिरिक्त फिरोजाबाद के काँच उद्योग, मिर्जापुर के गलीचा उद्योग, अलीगढ़ के ताला उद्योग, मन्दसौर के स्लेट उद्योग आदि में भी बाल श्रमिकों की दयनीय स्थिति आसानी से देखी जा सकती है। इसके बाद भी न तो सरकार और न स्वयं सेवी संगठन इनके उत्थान हेतु कुछ कर रही है।

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान विभाग) माखनलाल चतुर्वेदी स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

दक्षिण एशिया में बाल श्रमिकों की स्थिति

क्रं.	देश	कार्यरत बच्चें (5-14 वर्ष)	बच्चों का योग (5-14 वर्ग)
1	बांग्लादेश	5.05 मिलीयन	35.06 मिलीयन
2	भारत	12.6 मिलीयन	253 मिलीयन
3	नेपाल	1.660 मिलीयन	6.225 मिलीयन
4	पाकिस्तान	3.3 मिलीयन	40 मिलीयन
5	श्रीलंका	0.475 मिलीयन	3.18 मिलीयन

स्त्रोत- यू.एन.डी.पी. ह्यूमन डेवलोपमेन्ट रिपोर्ट

''भारत में कुल बच्चों का 20 प्रतिशत परिवारों से दूर रहकर घरेलू नौकर के रूप में कार्य कर रहे है।''

- दक्षिण एशिया घरेलू बाल श्रम रिपोर्ट

संविधान की 45वीं धारा में चौदह वर्ष की उम्र के सभी बच्चों के लिये शिक्षा की व्यवस्था है। मगर आज तक इसे लागू नहीं किया गया है। देश के 15% सबसे गरीब बच्चों का क्या हो, इस पर सभी खामोश है ? बाल सम्मेलन में 108 देशों ने उस घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये है जो बच्चों को बेहतर स्वास्थ्य और शिक्षा देने की बात करता है लेकिन मेहनत करने वाले नन्हें हाथों की पूरी बात कब सुनी जाती है यह देखना है। पिछले पाँच दशकों के दौरान शिक्षा के अधिकाधिक प्रचार-प्रसार के बावजूद भारत में प्राथमिक शिक्षा का स्तर काफी निराशाजनक है।

विश्व के बच्चों की स्थिति नाम रिपोर्ट के अनुसार-

1. स्कूल में दाखिला न लेने वाले निरक्षर बच्चों की सर्वाधिक संख्या इस समय भारत में है।
2. करीब 50% बच्चें 5वीं कक्षा तक पहुँचते पहुंचते पढ़ाई बंद कर देते है।
3. 6 से 11 वर्ष आयु वर्ग के लगभग आधे भारतीय बच्चें स्कूल नहीं जाते।
4. असम, बिहार, आंध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, जम्मू और कश्मीर, उड़ीसा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल भारत के प्राथमिक शिखा की दृष्टि से सबसे पिछड़े राज्य है।
5. भारत में 53.4% बच्चें कुपोषण का शिकार है और 5 वर्ष की आयु तक पहुंचते-पहुंचते 15.2 % बच्चें अकाल मृत्यु के मुंह में समा जाते है।

स्वाधीनता के बाद पाँच दशकों में हमने प्रत्येक क्षेत्र में ऊंचे-ऊंचे कीर्तिमान स्थापित किये है। काफी सूझबूझ के साथ विश्व पर नजर रखते हुए विकास कार्यक्रमों को अंजाम दिया, समाज के हर क्षेत्र के लिये समुचित कदम उठाये है। इसमें कोई दो राय नहीं है।

फिर भी देश के लगभग 37 करोड़ 50 लाख बच्चें जो हमारे देश का भविष्य है आज अशिक्षा, कुपोषण, भूखमरी समेत तमाम जानलेवा बीमारियों से जूझ रहे हैं। बाल विकास के लिये चलाए जा रहे तमाम कार्यक्रम, बड़ी-बड़ी योजनाएँ, ऑफिसों और फाईलों तक ही सीमित नजर आ रही है। तो आप ही सोचिए हमारे देश का भविष्य क्या होगा ?

आजकल की शिक्षण संस्थाएँ कोई दीपावली के दीप नहीं है जों हमारी गलियों का अंधेरा कम रहे। यह स्कूल हमें कई तरह से स्कूल न जाने पर मजबूर करते है । ये शिक्षण संस्थाएँ सब कुछ लेकर कुछ न देने वाली संस्थाएँ है।

ये प्रायवेट स्कूल, नोट - बूक, वर्दियों, भारी बस्ते, भारी फीस, हिंसक प्रतियोगिताएँ, युद्ध भूमि समान खेल के मैदान आदि का बोझ दे सकती है परन्तु नहीं दे सकती व्यवहारिक शिक्षा एवं रोजगार मुखी प्रशिक्षण कार्यक्रम।

अध्ययन के उद्देश्य-

1. बच्चों द्वारा स्कूल न जाने के कारणों को ज्ञात करना।
2. श्रमिक बालकों के माता-पिता की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति ज्ञात करना।
3. बाल श्रमिकों की समस्याओं को ज्ञात करना।
4. बाल श्रमिकों की अवस्था सुधारने हेतु सुझाव देना।
5. बाल श्रम रोकने हेतु सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों का अध्ययन करना।
6. वर्तमान शिक्षा पद्धति का अध्ययन करना।
7. मध्यान्ह भोजन के कारण प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों पर बालकों की उपस्थिति पर प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना

1. निर्धनता एवं भूखमरी के कारण बच्चें बाल श्रम की ओर अग्रसर होते है।
2. अशिक्षित माता-पिता अपने बच्चों को कम आयु में ही काम पर लगा देते है।
3. उद्योग-धंधों में बाल श्रम कानूनों की अनदेखी की जा रही है।
4. प्रायमरी शिक्षा की बजाए उच्च शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।
5. पालकों में नशाखोरी की आदत बच्चों को शाखा छोड़ने एवं श्रम करने पर मजबूर करती है।
6. बच्चों के प्रति सौतेला व्यवहार उनके अशिक्षा एवं बाल श्रम का कारण है।

विश्लेषण और परिणाम:

अध्ययन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि 98% बाल श्रमिक केवल निर्धनता के कारण शाला नहीं जा सके।

माता-पिता के अशिक्षित होने का प्रभाव निश्चित ही उनके बच्चों पर होता है। मजदूरी करने वाले अधिकतर मातापिता अपने बच्चों को बाल श्रम हेतु भेजते हैं।

अध्ययन में यह बात भी सामने आई है कि बहुत से बच्चें शिक्षित होते हुए भी बेरोजगार हैं तो हमारा बच्चा शिक्षित होकर क्या करेगा ? अभिभावकों का यह प्रमुख प्रश्न रहा है।

बच्चों की शाला जाने में कम रूचि है। इसका कारण शाला में शिक्षकों के द्वारा गरीब बच्चों के प्रति किया जाने वाला सौतेला व्यवहार भी महत्वपूर्ण है। यकीनन महाभारत काल से ही ऐसा होता चला आ रहा है। एकलव्य से द्रोणाचार्य ने भी सौतेला व्यवहार किया था। 12% बच्चों ने स्कूल न जाने का कारण शिक्षक द्वारा उन्हें मारा जाना बताया।

एक परिवार में जब दो से अधिक बच्चें हैं तो निश्चित ही उनके शिक्षा, स्वास्थ्य एवं विकास पर प्रतिकूल प्रभाव देखा गया।

दोयम पेशा परिवारों के बच्चों में अशिक्षा एवं बालश्रम के साथ साथ अपराधी प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। पढ़ाई में पिछड़ना स्कूल छोड़ने का एक कारण है और उसके शिकार अधिकतर गरीब तबके के बच्चें होते है। आज भी गाँव में लड़कियों की शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जाता है। इन्हें पराया धन कहा जाता है। इस शोध पत्र का यह निष्कर्ष निकलता है कि स्कूल न जाना भी बाल अपराध का प्रमुख कारण है।

कई स्कूलों की परिस्थिति ऐसी होती है कि वहाँ पर बच्चें अधिक देर तक रुक नहीं सकते हैं इन्हें कक्षा में बैठने की रूचि नही होती तथा स्कूलों में अनुपस्थित रहने लगते है। वे पूरा समय स्कूल से बाहर रहकर सिगरेट पीते हैं, जुआ खेलते हैं, लड़कियों पर व्यंग फबतियाँ कसते हैं तथा सिनेमा तथा अपराधी कहानियाँ एक दूसरे को सुनाते है। ऐसे लड़के परीक्षा में फेल हो जाते

हैं तथा बाल अपराधी बन जाते है। जो बच्चें कम उम्र में काम पर लग जाते हैं वे ज्यादातर आगे जाकर समाज विरोधी कार्यों में लिप्त हो जाते है और पेशेवर अपराधी बन जाते है। वे परिस्थिति वश जल्द ही नशे के आदी हो जाते है। साथ ही वे कमजोर एवं बीमार भी हो जाते है। धीरे-धीरे अपराध की ओर अग्रसर होकर यह बड़े होने पर अपना ग्रुप बना लेते है।

सरकार द्वारा चलाई जा रही मध्यान्ह भोजन योजना एक सराहनीय कार्य है। एक मजदूर अभिभावक ने प्रश्नों के उत्तर देते हुए कहा कि मैं मेरे बच्चें को स्कूल इसलिये भेज रहा हूँ ताकि उसे एक समय का भरपेट खाना मिल सके क्योंकि मजदूरी का काम नियमित नहीं मिलता जिसके कारण अनेकों बार हमें भूखा सोना पड़ता है।

सुझाव

व्यक्ति एवं समाज से संबंधित कोई भी विषय में केवल कानून बना देने से ही उनका निवारण नहीं होता। उनमें जन जागरूकता अहम भूमिका निभाती है। हमें प्रत्येक समाज में बाल शिक्षा, बाल श्रम एवं बाल अपराध आदि विषयों पर अधिक से अधिक जानकारी देना चाहिए। जिसके एक संपूर्ण कार्यक्रम बनाकर इसका निवारण किया जा सके।

1. वर्तमान शिक्षा पद्धति में कुछ संशोधन कर उसे रूचिकर बनाया जाना चाहिए ताकि बच्चें खेल खेल में सीख सकें।
2. शिक्षा वही दी जानी चाहिए जो काम आ सके। प्राईमरी शिक्षा की बजाए अधिक ध्यान उच्च शिक्षा पर देना गलत है, क्योंकि उच्च शिक्षा का महल तभी बन पाएगा जबकि स्कूली शिक्षा की नींव मजबूत होगी।
3. हमारे समाज में यह धारणा भी प्रचलित है कि बाल श्रम उनके परिवारों के जिंदा रहने का आधार स्तंभ है। रोजगार के अवसर बढ़ाकर इस धारणा को बदलना होगा।
4. सही मायने में बच्चों को बाल श्रम से तभी रोका जा सकता है जब गाँव के गरीबों के लिये गाँव ही रोजगार योजना लागू की जावे। जिससे कि परिवारों का पेट भरने के लिये बच्चें शहर की ओर रूख करके मजदूर न बन जाएं।
5. समाचार पत्र, मासिक, साप्ताहिक पत्रिकाओं द्वारा बच्चों के मानवाधिकारों में समय-समय पर चर्चा व विचार विमर्श होना चाहिए।
6. विकलांग बच्चों को समाज द्वारा उचित सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार तथा समाज में पुनर्वास के लिये उचित प्रशिक्षण व सुविधाएँ प्रदान करना चाहिए।
7. पाठ्य पुस्तकों के अलावा अन्य पत्र-पत्रिकाएँ, देश-विदेश का साहित्य आदि पढ़ना, सैर-सपाटा, नाटक, पेंटिंग, संगीत से सम्पर्क व सामाजिक वर्ग के अनुरूप टीवी के कार्यक्रम सब स्कूल में सफलता दिलाने में सहायक बनते हैं।
8. गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले सभी समाज के विद्यार्थी को स्कूली शिक्षा के साथ साथ उच्च शिक्षा भी पूर्ण रूप से मुफ्त प्रदान की जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ. प्रमिला कपूर- किशोरियाँ माता-पिता से तनाव तथा टकराव
2. जगत सिंह- बच्चें क्यों बिगड़ते है ?
3. डॉ. बेंजामिन खान- बाल मनोविज्ञान
4. कृष्ण किशोर- अन्यथा
5. डॉ. सरयुप्रसाद चौबे, राजनाथ शर्मा, विनोदकुमार अग्रवाल- बाली समस्या
6. संगीता तेज, तेजस्कर पाण्डेय- समाज कार्य के क्षेत्र
7. नई दुनिया, दैनिक भास्कर, राज एक्सप्रेस- इन्दौर

****

ग्वालियर शहर की किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. नीरू त्रिपाठी * डॉ. मंजु दुबे **

''जान है तो जहान है, सेहत है तो शान है''

मनुष्य जीवन का सुख है निरोगी काया जिसकी प्राप्ति संतुलित भोजन व उत्तम पोषण से होती है, और इसके लिये पोषण शिक्षा ग्रहण करना आवश्यक है। किशोरावस्था में बालिकाओं की वृद्धि एवं विकास तीव्रगति से होता है, अत: उन्हें संतुलित, पोष्टिक एवं पर्याप्त भोजन लेना आवश्यक होता है, स्वस्थ बालिकायें ही भविष्य में स्वस्थ नारी का रूप लेती है, स्वस्थ नारी ही स्वस्थ शिशु को जन्म देती है तथा उसकी देखभाल कर उसे स्वस्थ बालक, स्वस्थ किशोर व स्वस्थ युवा के रूप में परिवार व समाज को समर्पित करती है। एक स्वस्थ नारी ही अपने बच्चों व परिवार के अन्य सदस्यों के पोषण व स्वास्थ्य स्तर को उन्नत बनाये रख सकती है ।

चूंकि आज की किशोर बालिकायें कल की भावी माता हैं, इन पर परिवार, समाज व राष्ट्र को स्वस्थ रखने का उत्तरदायित्व है, अत: इनको पोषण शिक्षा देना अत्यंत आवश्यक है। इस विचार को दृष्टिगत रखते हुये शोध का विषय ''ग्वालियर शहर की किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन'' चुना गया है।

शोध के उद्देश्य –

1. किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान का अध्ययन करना।
2. किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का प्रभाव ज्ञात करना।
3. पोषण शिक्षा के प्रचार प्रसार हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पना –

शोध कार्य करने के लिये निम्नानुसार शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया। ''किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।

शोध प्रविधि –

शोध अध्ययन हेतु ग्वालियर शहर के विभिन्न विद्यालयों में से 13 से 19 वर्ष की 300 किशोर बालिकाओं का दैव निदर्शन विधि से चयन किया गया। अध्ययन कार्य तीन चरणों में सम्पन्न किया गया।

प्रथम चरण में बालिकाओं का पोषण संबंधी ज्ञान ज्ञात करने के लिये प्रश्नावली का उपयोग किया गया द्वितीय चरण में विद्यालयों के दैनिक शालेय कार्यक्रम में से एक कालखण्ड का चुनाव कर तीन महीनों तक पोषण शिक्षा प्रदान की गयी तृतीय चरण के अन्तर्गत पोषण शिक्षा प्राप्त किशोर बालिकाओं का पुन: प्रश्नावली के माध्यम से पोषण संबंधी ज्ञान प्राप्त किया गया इस प्रकार बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण का प्रभाव ज्ञान करने हेतु पोषण शिक्षा देने के पूर्व एवं बाद के प्राप्त आंकड़ों का तुलनात्मक विश्लेषण कर परिणाम प्राप्त किये।

सांख्यिकी विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन विधियों का उपयोग किया गया (देखिए तालिका क्रमांक 1, ग्राफ क्रमांक1) परिणामों की सार्थकता ज्ञात करने हेतु 'टी' टेस्ट का उपयोग किया गया।

अ. पोषण शिक्षा देने के पूर्व मध्यमान व मानक विचलन।

इ. पोषण शिक्षा देने के पश्चात् मध्यमान व मानक विचलन।

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि 13 से 15 वर्षीय बालिकाओं को पोषण शिक्षा देने के पूर्व एवं पश्चात् ''पोषण ज्ञान है'' का टी परीक्षण मूल्य 121.19 पोषण ज्ञान नहीं है'' का मूल्य 22.00 तथा ''पोषण ज्ञान स्पष्ट नहीं है'' का मूल्य 45.08 प्राप्त हुआ। जो 212 स्वातंत्रयांश पर 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया।

इसी प्रकार 15–17 वर्ष की बालिकाओं को पोषण शिक्षा देने से पूर्व एवं पश्चात् ''पोषण ज्ञान है'' का टी परीक्षण मूल्य 123.19 ''पोषण ज्ञान नहीं है'' इसका मूल्य 23.70 तथा ''पोषण ज्ञान स्पष्ट नहीं है'' का मूल्य 52.75 प्राप्त हुआ जो 248 स्वातंत्रयांश पर 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया।

17–19 वर्ष की बालिकाओं को पोषण शिक्षा देने से पूर्व एवं पश्चात् ''पोषण ज्ञान है'' का टी परीक्षण मूल्य 112.15, ''पोषण ज्ञान नहीं है'' का मूल्य 17.27 तथा ''पोषण ज्ञान स्पष्ट नहीं है'' का मूल्य 26.32 प्राप्त हुआ। जो कि 134 स्वातंत्रयांश पर 0.01 स्तर पर सार्थक पाया गया।

अत: शोध कार्य का उद्देश्य ''किशोर बालिकाओं के पोषण ज्ञान पर पोषण शिक्षा के प्रभाव का अध्ययन करना'' के लिये निर्मित शून्य परिकल्पना ''किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।'' अस्वीकृत होती है। उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि पोषण संबंधी ज्ञान पर पोषण शिक्षा का प्रभाव पड़ता है। अत: शिक्षण के पश्चात् किशोर बालिकाओं के पोषण ज्ञान में शत–प्रतिशत वृद्धि होती है।

निष्कर्ष –

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि पोषण शिक्षा का किशोर बालिकाओं के पोषण संबंधी ज्ञान पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सुझाव –

पोषण शिक्षा का पोषण संबंधी ज्ञान पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अत: प्रचार प्रसार हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत है।

1. माध्यमिक व उच्चतर माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम में पोषण शिक्षा अनिवार्यता प्रदान की जानी चाहिये।
2. विद्यालयों में आहार विशेषज्ञ की काउंस्लर के रूप में नियुक्ति की जानी चाहिये।
3. महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा चलाये जा रहे जागृति शिविरों में महाविद्यालयों के एन.एस.एस. एवं एन.एस.सी. की छात्राओं की सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिये। उनके द्वारा नाटक, प्रदर्शन, फिल्म शो आदि द्वारा रोचक तरीके से पोषण शिक्षा प्रदान करने में सहयोग लिया जा सकता है।

* अतिथि विद्वान (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.) भारत

** संकायाध्यक्ष (डीन) एवं विभागाध्यक्ष (गृह विज्ञान) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1. त्रिवेदी आर.एन., शुल्क डी.पी., रिचर्स मेथालॉजी कॉलेज बुक डिपो, 2008।
2. मिश्रा उषा एवं अग्रवाल अल्का, आहार एवं पोषण विज्ञान, नवीन संस्करण साहित्य प्रकाशन, पृष्ठ 12-13।
3. नारायण सुधा आहार विज्ञान, 1982।
4. कुलकर्णी ज्योति सामान्य एवं उपचरात्मक पोषण पृष्ठ 67-68।
5. मुकर्जी रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2010।
6. मुकर्जी रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2010।
7. श्रीवास्तव डी.एन., वर्मा प्रीति, मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।

तालिका क्रमांक - 1

किशोर बालिकाओं के पोषण ज्ञान के मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण की तालिका

क्रं.	समूह	मध्यमान		मानक विचलन		टी परीक्षण का मान	DF	मध्यमान
		A	B	A	B			
1.	समूह 13-15 वर्ष ज्ञान है।	18-56	105-89	6-76	3-14	121-19	212	0-01
2.	ज्ञान नहीं हैं	37-11	10-11	16-63	3-14	22-00	212	0-01
3.	स्पष्ट ज्ञान नहीं हैं	51-33	निरंक	11-7	निरंक	45-08	212	0-01
4.	समूह 15-17 वर्ष ज्ञान है	21-22	123-33	7-67	5-11	123-19	248	0-01
5.	ज्ञान नहीं हैं	42-56	1-67	18-7	4-71	23-70	248	0-01
6.	स्पष्ट ज्ञान नहीं हैं	61-22	निरंक	12-97	निरंक	52-75	248	0-01
7.	समूह 15-17 वर्ष ज्ञान है।	8-33	67-67	4-26	0-94	112-15	134	0-01
8.	ज्ञान नहीं हैं	22-44	0-33	10-52	0-94	17-27	134	0-01
9.	स्पष्ट ज्ञान नहीं हैं	37-22	निरंक	11-66	निरंक	26-32	134	0-01

A- *पोषण शिक्षा देने के पूर्व मध्यमान व मानक विचलन*

B- *पोषण शिक्षा देने के पश्चात मध्यमान व मानक विचलन*

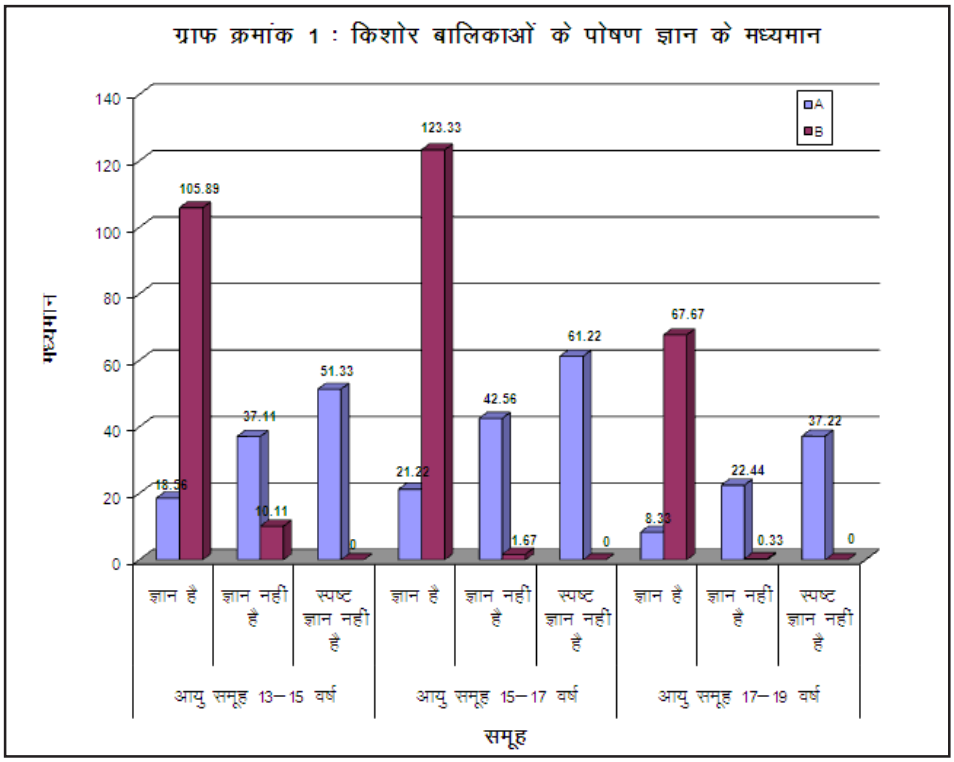

वेतनभोगी महिलाएँ एवं व्यावसायिक समायोजन के संदर्भ में एक अध्ययन

डॉ. गीताली सेनगुप्ता *

भारतीय समाज में स्त्रियों और पुरूषों के कार्यो अधिकारों और स्थितियों पर दृष्टिपात करने से यह प्रतीत होता है कि देश के इतिहास के विभिन्न कालों में इनकी स्थिति गिरती एवं उठती रही है। वर्तमान समय में पुरूष की अनुगामिनी भारतीय नारी के जीवन में जो आशातीत परिवर्तन घटित हुआ है अब उसकी सहगामिनी की स्थिति शिथिल हो रही है। स्वतंत्रता के बाद की बदली हुई सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों में स्त्री की शिक्षा और रोजगार के अवसरों में अत्यधिक वृद्धि हुई है। अत: वर्तमान में व्यवसाय संलग्न महिलाओं को आज दोहरी भूमिका निभानी पड़ रही है, प्रथम पत्नि माँ व गृहिणी तथा द्वितीय नौकरी की। घर और नौकरी दोनों दोहरी मांगो व तनावों के कारण उन्हें परस्पर विरोधात्मक स्थितियों का सामना करना पड़ रहा है। एक तरह नारी होने के नाते उन्हें नैतिक क्रियाएँ पूरी करनी होती है तो दूसरी तरफ संस्कृति द्वारा निरूपित उनका नारी रूप है, जिसके अनुरूप उन्हें अपनी भूमिका का निर्वाह करना पड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन इस संदर्भ में किया गया है कि वेतनभोगी महिलाएँ जो विभिन्न कार्य क्षेत्रों से जुड़ी हुई है वे व्यावसायिक समायोजन कैसे करनी है यहाँ इस तथ्य का स्पष्ट उल्लेख करना आवश्यक है कि वेतनभोगी महिलाओं से क्या तात्पर्य है – ''वर्तमान में सरकारी एवं अर्द्ध सरकारी तथा सार्वजनिक संस्थाओं में पूरे समय काम करते हुए नियमानुसार वेतन प्राप्त करने वाली महिला, वेतनभोगी महिला है।''

उद्देश्य 1. परम्परागत भारतीय नारी का परिवेश परिवर्तित हुआ है।
2. कुछ महिलाएँ अपनी शिक्षा के सदुपयोग एवं आत्म संतुष्टि के लिये नौकरी करती है।
3. भारतीय नारी दिन प्रतिदिन नई-नई भूमिकाएँ ग्रहण कर रही है।

प्राकल्पना :-मेरी प्राकल्पना रही है कि आधुनिक मनोवृत्ति और आर्थिक दबाव के कारण वर्तमान समय में महिलाओं का झुकाव नौकरी में प्रवेश की ओर बढ़ रही है। दोहरी एवं परस्पर विरोधात्मक स्थितियों का सामना करते हुए भी व्यावसायिक समायोजन में सक्षम होती है।

समग्र एवं निदर्शन :- शोध अध्ययन हेतु खण्डवा शहर की 250 वेतनभोगी महिलाओं का सप्रयोजन व स्तरित निदर्शन के आधार पर चुनाव किया गया है।

अध्ययन पद्धति :-समाज वैज्ञानिक अनुसंधान की मानक विधियों जैसे – साक्षात्कार अनुसूची, असहभागी अवलोकन प्रणाली तथा साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया है। नगरीय परिवेश में वेतनभोगी महिलाओं का जीवन भूमिका संघर्ष, कार्य द्वन्द्व, तनाव तथा असंमजन एवं संमजन दोनों को ही मिश्रित अभिव्यक्ति करता है। वास्तव में वेतनभोगी महिलाएँ व्यवसाय में संलग्नता की स्थिति में अनुभव करती है कि उनके सामने विविध भूमिका पुंज उनकी सामाजिक स्थिति को असंतुलित कर रही है फिर भी वे व्यवसायजन्य चुनौतियों का सामना करने में अपनी योग्यता एवं क्षमता से तैयार है।

पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने के लिए वर्तमान नौकरी छोड़ देना

क्रमांक	प्रत्यूत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	9	3.6
2	नहीं	241	96.4
	योग	250	100

विश्लेषण :- पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने के लिए वर्तमान नौकरी छोड़ देना के प्रत्युत्तर में 3.6 प्रतिशत महिलाओं ने सकारात्मक जबकि सर्वाधिक 96.4 प्रतिशत ने नकारात्मक प्रतिक्रिया प्रकट की।

वर्तमान नौकरी छोड़ देने में परिवार का पक्ष

क्रमांक	प्रत्यूत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	9	3.6
2	नहीं	241	96.4
	योग	250	100

विश्लेषण :- सारणी में प्रस्तुत वर्तमान नौकरी छोड़ देने में परिवार के पक्ष की आवृत्ति के संमकों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि 3.6 प्रतिशत सूचना दात्रियों ने यह स्वीकार किया है उनके परिवार के सदस्य इस पक्ष में है कि पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने के लिए वर्तमान नौकरी छोड़ देनी चाहिए जबकि 96.4 प्रतिशत महिलाओं ने नकारात्मक प्रतिक्रिया प्रकट की है अर्थात परिवार के सदस्य उन्हें नौकरी छोड़ देने के पक्ष में नहीं है।

नौकरी के कारण घर की उचित ढंग से देखभाल न हो पाना

क्रमांक	प्रत्यूत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	199	79.6
2	नहीं	51	20.4
	योग	250	100

विश्लेषण :- सर्वाधिक 76.6 प्रतिशत सूचना दात्रियों ने यह अभिव्यक्ति व्यक्त की है कि नौकरी करने के कारण घर की उचित ढंग से देखभाल नहीं कर पाती है जबकि 20.4 प्रतिशत सूचना दात्रियों ने नकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की है। तथ्यों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि पारिवारिक देखभाल में वेतनभोगी महिला गत्यावरोध का अनुभव करती है क्योंकि उन्हें नौकरी और घर की दोहरी भूमिका निभानी पड़ती है जिससे समायोजन एवं आत्म संतुष्टि के लिए व्यवधान उत्पन्न होता है। यह उल्लेखनीय है कि बढ़ते हुए संकट एवं समस्याओं से घिरे इस समाज में एक पूर्णत: भिन्न प्रकार की नैतिकता आचरण एवं क्रिया जो जीवन की समस्त प्रक्रिया से उत्पन्न होती है हमारी एक अनिवार्य आवश्यकता बन गई है।

निष्कर्ष :- ❊ आधुनिक महिलाएँ व्यवसाय के आर्थिक पक्ष के महत्व को समझती है, यही कारण है कि अधिकांश महिलाएँ वर्तमान नौकरी को छोड़ने के पक्ष में नही है।❊ यह उल्लेखनीय है कि अर्थ पारिवारिक जीवन को सुखमय बनाने का एक प्रमुख आधार तथ्य है। ❊ महिलाओं के व्यावसायिक समायोजन में परिवार की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। ❊ कुछ वेतनभोगी महिलाएँ नौकरी को पारिवारिक देखभाल के लिए बाधक तत्व नहीं मानती। ❊ निष्कर्ष स्वरूप यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि कुछ वेतनभोगी महिलाएँ व्यावसायिक समायोजन में सक्षम है तथा आत्म संतुष्टि की मात्रा भी अन्य की अपेक्षा इनमें अधिक है।

सन्दर्भ : ❊ जे. कृष्णमूर्ति – आन लर्निंग (अनु.) 1992, कृष्णमूर्ति फाउन्डेशन इंडिया, वाराणसी, पृ. 1-24 ❊ कुप्पुस्वामी बी – इन इनट्रोडक्शन टू सोशल साइकोलजि, बाम्बे, एशिया पब्लिशिंग हाउस 1961 ❊ नीरा देसाई – वोमन इन मार्डन इंडिया बम्बई, बोरा एण्ड को पब्लिशर्स, प्राइवेट लिमिटेड 1957 पृष्ठ 25 ❊ प्रमिला कपूर – द चेजिंग स्टेट्स ऑफ वर्किंग वीमेन इन इण्डिया दिल्ली,विकास पब्लिशिंग हाउस, 1974 ❊ शर्मा.के.एन. – भारतीय समाज एवं संस्कृति कानपुर, 1962, पृ. 411

* विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय,खण्डवा (म.प्र.) भारत

Economical Analysis of Production and Marketing of Banana Crop in Nimar Anchal

Dr. Pratap Rao Kadam *

Methodology Adopted:

Various methods of research have been adopted to collect the data for the financial analysis of production and marketing of the banana crop in the Nimar region. The complete information related to this research was gathered from different sources. One to one discussion, questionnaire, group discussions, related publications and the information received from the institutions concerned, had been the base of collection of the data computation and survey methods have been resorted to where found suitable.

The largest holding in M.P. for the commercial crop Banana is in the Nimar Region. Primary data has been gathered by questionnaire, observation and interviewing those who are engaged in this activity directly or indirectly co-operation has been extended by the farmers, labourers, agriculture scientists, banks, traders, consumers, agencies as middlemen, wholesalers, peddlers and those who run fruit shops.

From plantation to consumption all the aspects of the commercial crop banana have been mentioned as under.

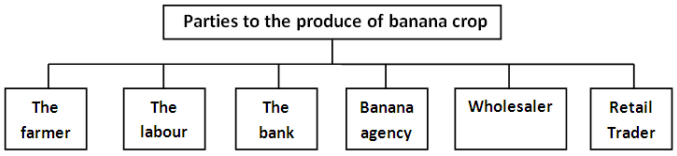

Selection of the subject:

The subject 'A financial analysis of the production and Marketing of banana crop in Nimar Region' has always been the matter of interest and curiosity for me. Banana, being the major commercial crop of this region, many economic, marketing and employment related activities are linked to it directly or indirectly.

As a bumper banana crop strengthens the economic activities, marketing, commercial banking and employment related activities of this region, at the same time any fall in the crop affects all the region adversely. The same phenomenon inspired me to analyze the factors of selection of the subject, I resolved to study it.

While referring the data of previous years I found that the area of traditional crops has gradually reduced and for cash crops it has gradually increased. May it be soyabean, sugar cane, cotton, pulses, oil seeds or many it be banana crop. Alongwith farmer awareness being a reason behind it, market pressure, financial institutions, employment national and international marketing conditions has also been instrumental in this change.

Taking into consideration:

All these reasons one by one, factual conclusions where arrived at. Today the farmers are less inclined towards the traditional farming and more interested in the cash/commercial crops. The following graph shows the decline in the area of traditional crops.

Area of traditional crops of the entire Nimar Region.

(Rakba in hector)

Year	Wheat	Peddy	Millet (Jwar)	Maze	Gram	Pulse Arhar (Cajamus indicus)	Pulse Urad
2007-08	113082	17887	100081	28159	21274	24574	9794
2008-09	93700	16897	94186	28744	75146	24877	8514
2009-10	132201	16334	98635	28016	27105	23679	8310
2010-11	145482	15317	81316	34178	26823	22668	8472

Source- Supdt., Land records Khandwa, Burhanpur, Khargone, Barwani, M.P.

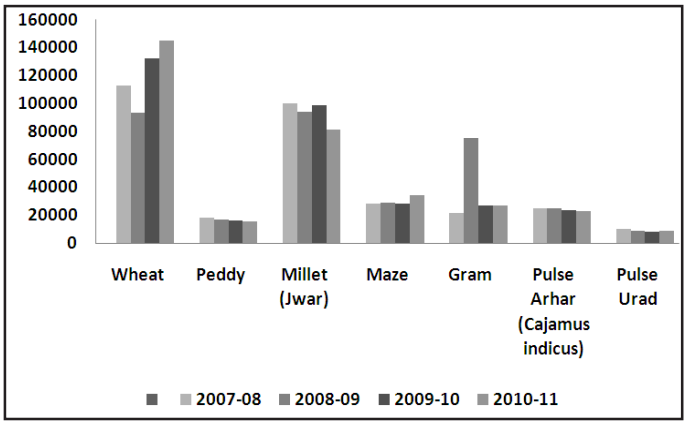

The above table shows that the area of cultivation of Peddy, Millet, gram, pulses among traditional crops. Though the area of wheat and maze has increased but taking into. Consideration the overall area of traditional crop, it has either reduced continuously or the growth is meager as compared to that of cash crops.

* M.L.C. Govt. P.G. Girls College, Khandwa (M.P.) INDIA

Area of cash crops of the entire Nimar Region.

(Rakba in hector)

Year	Soya-bean	Sesame seed	Ground nut	Sugar cane	Cotton	Banana
2007-08	208956	4636	16967	2189	245863	16300
2008-09	209207	4587	15738	2422	252590	18600
2009-10	220391	3942	15519	6808	318143	20200
2010-11	219283	3342	15063	8482	323867	26350

Source- Supdt., Land records Khandwa, Burhanpur, Khargone, Barwani, M.P.

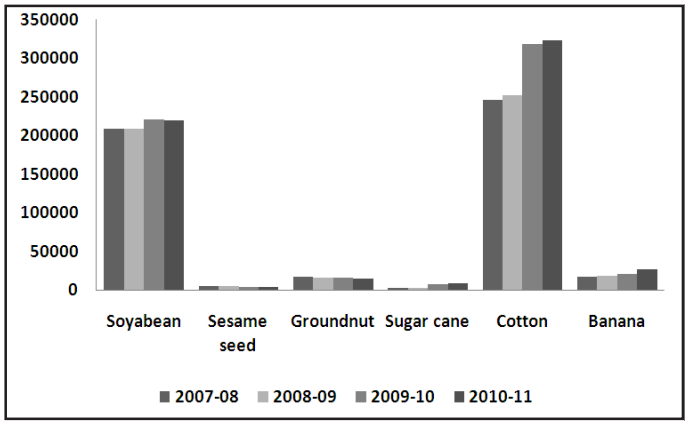

The reasons for Farmers' inclination towards cash crops has been shown through the following graph.

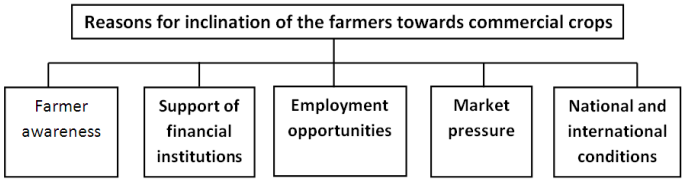

Conception:

1) The farmer is more inclined towards the commercial farming instead of the traditional farming.
2) Commercial crops are more lucrative than the traditional crops.
3) The government tends to encourage the commercial farming as well.
4) Banks and loan providing institutions prome. Commercial farming.
5) The labourers engaged in commercial farming get higher wages as compared to traditional farming.
6) More employment opportunities in commercial farming.
7) Interest component on loans in commercial farming is higher which increases the cost.
8) The farmers borrow from other institutions instead of banks, where as the bank loans is cheaper.
9) Requirement of labourers is always there in the banana trade.
10) There is a demand all through the year for the commercial crop banana.
11) Other crops can be taken alongwith the commercial crops.
12) Financial position of the farmers has improved due to commercial crops.
13) Knowledge of marketing management is emmencely beneficial in commercial crops.
14) Higher financial assistance is granted for compnercial crops than for traditional crops.
15) Commercial crops need more amount of water for irrigation.
16) Storage facility is a must in commercial crops.

Banana cultivation area and development of the Nimar Region Introduction:

Banana is an important commercial crop all over the world. The history of banana crop traces long back. It is mentioned in not only in the 'Arthshastra' of Kautilya but also in the holy scripture 'the Ramayana'. Its reference is available in the 'Arth Shastra' of Kautilya during 400 to 300 B.C.

Carring of banana fruit can be noticed in the historical caves of Ajanta and Elora.

Some scholars consider it to be a produce of Malasia and some of them accept its origin in Assam (India). Apart from this, possibilities of its advent is considered to be in Thailand or the mountainious regions of Indo China. Where from it may have reached hot zones and Africa, Australia and Newzeland. Thereafter it must have advanced to Philipine and Hawai Island.

Wherever it may have originated from, it is found in every country on the globe and consumed by everybody.

Ingrediants of the Fruit 'banana'

Ingrediants	In percent	Ingradiants	In percent
Moisture	60.4	Carbohidrate	36.4
Protein	1.3	Calcium	0.01
Fats	0.2	Phosphorus	0.05
Minerals	0.7	Iron	0.4

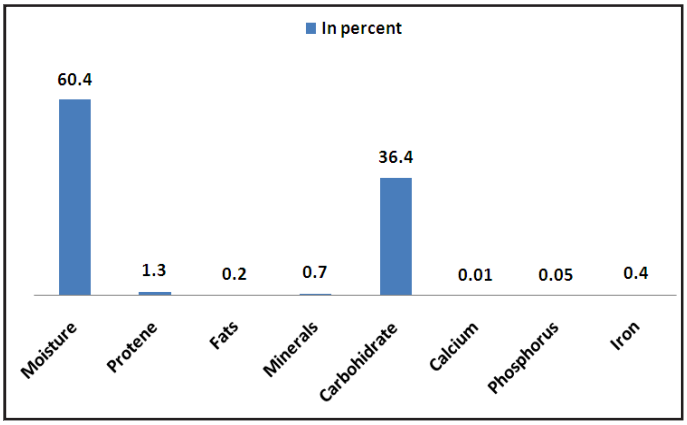

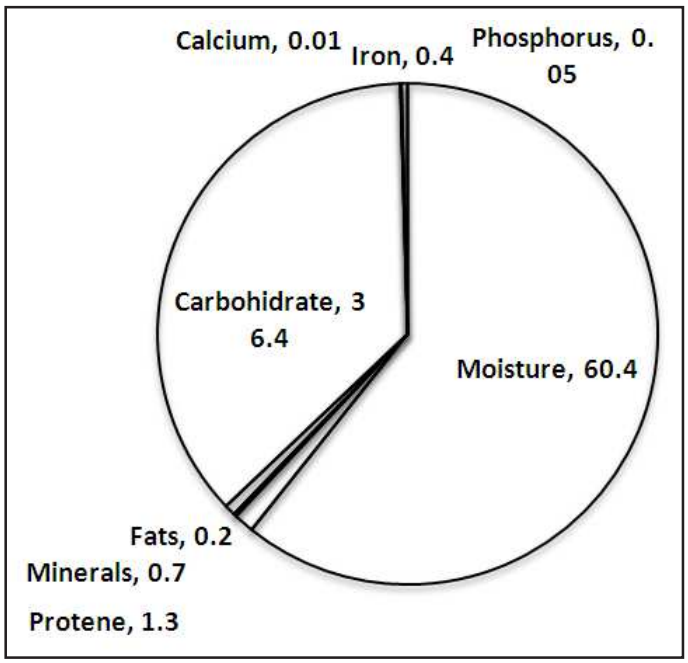

Wholesome ingradiants of banana (per 100 gm.)

Calorific Value	153
Vitamin 'A' unit	Trace
Vitamin 'B' m.g.	150
Nikotenic Amla	0.3
Raiboclevin m.g.	30
Vitamin 'C' mg.	1

Various products from banana

Banana	Banana chips, banana fig, banana flour, banana papad, banana halwa (a desert), banana cake
Banana stem and leaves	Organic manure/fertilizer (Leaves and stems of one hectare area of banana can make 100 tonnes of wormy compost)
Residue of banana plant	Oyster mushroom
Banana stem and stalk	Banana powder, banana canning synthetic fibre
Banana crush	Fast color by colour manufacturing companies
Banana stem and leaves	Card board, hand paper
Banana fruit	Wine, whisky, fooder
Banana leaves	Leaf cups, leaf plates, mats, fodder

Fixed and working capital:

Both fixed capital and working capital is required for the production of banana crop.

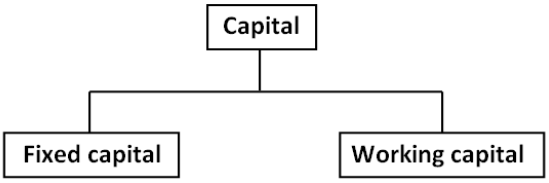

Fixed capital is the capital which is required , certainly in all the conditions.

Working capital is the part of capital, which is required to meet day to day expences.

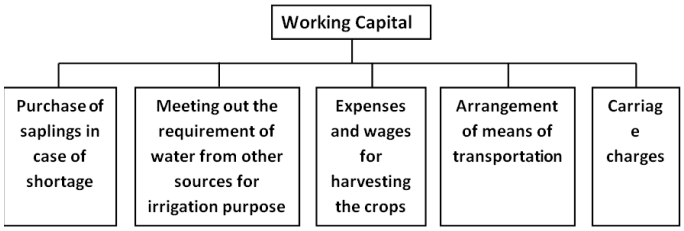

Both fixed capital and working capital is equally important in the production of banana crop. Ploughing the field according to the advice of agriculture scientists from time to time. So that the plant, can be prepared timely, is important. Irrigation and fertilizers are the crucial factors after plantation. A slight omission in this aspect can adversely affect the production of Banana.

Working capital is equally important. Safety of the plant so as to get the quality crop at appropriate time is the purpose of providing working capital. Any laxity in maintenance, harvesting, transportation can cost the farmer heavy.

Banana crop matures in 15 to 18 months. As a result, the cost of Aadan is higher as compared to other crops. Particulars of cost of production per hectare is shown below in the table and graph.

Particulars of Cost

S.N.	Particulars	Amount	Percentage
1	Ploughing the field, plantation, harvesting, carriage etd.	3157.71	10.46
2	Expenses for bullocks, labour charges etc.	2072.26	6.86
3	Cost of machienery	1033.65	3.42
4	Purchase of saplings	4448.19	14.74
5	Organic manuqre, YM compost	3154.59	10.45
6	Fertilizers (As recommended)	7548.67	25.01
7	Irrigation	3021.57	10.01
8	Depreciation, small reforms and land revenue	950.63	3.15
9	Interest on working capital	4799.68	15.90
	Total Cost	30186.95	100.00

Particulars of cost

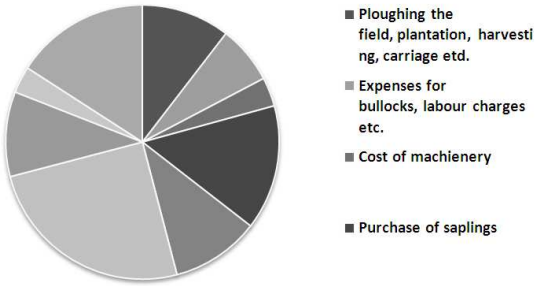

The condition of banana farmers is no different from other farmers of the country. The labour and hard work of the entire family including himself, his wife, children, and other family members is never taken into account in cost particulars although they are equally engaged in the same agriculture task. This factor applies equally on any other farmers of the country as well as the farmers of the Nimar region. This also affects the financial, social and political status of the farmers. Despite the presence of financial institutions in the banana prolific areas of the Nimar region, mostly the farmers take financial assistance from other sources instead of public sector banks and pay out a large amount as interest. This phenomen came to the fore while analyzing the expenses list.

Local market of Banana producer

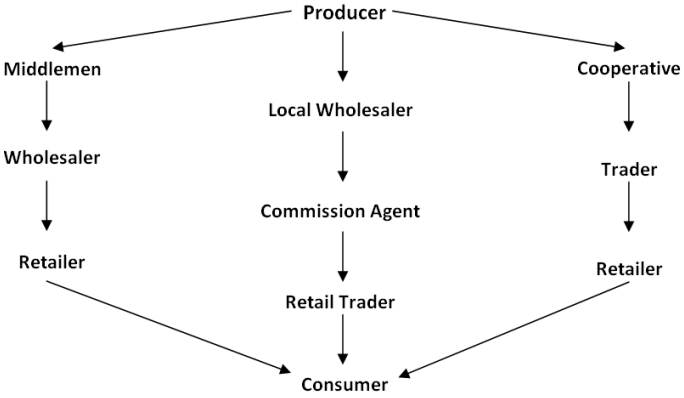

Three channels have been observed for sale of banana by the producing farmers. The same has been shown in the above sketch. First channel being through the middlemen wholesaler and retailer the produce reaches upto the end user that is consumer. Secondly, through local wholesaler to commission agent and retail trader to the consumer. Thirdly, they can chose the channel through co-operative society to the wholesaler, retail trader and to the consumer. Here, the local consumer gets the produce directly through local retail traders; local commission agent or local wholesaler who has bought or received the goods on certain conditions but the consumers in far flung areas. Who are in other cities or states, can be targated through the third channel only i.e. middlemen or the co-operative societies.

(See Table No. 1)

Financial Status:

Financial status of the banana producing farmers of the Nimar region is better as compared to other farmers. Banana being a cash commercial crop that brings the cash payment is the prime reason for this. As the crop ripes, the produce is ready for sale to the KELA GROUPS or traders in the field itself. Drying and gathering is not as tradious as it is in other grops. The yield is instant after the crop is ready.

The another reason is that the farmers don't hesitate to spend more on this crop because the profit percentage is higher in comparison to other crops. That is why the farmers enjoying advanced irrigation facility prefer this crop.

Retrospection:

Burhanpur, a district of East Nimar of the Nimar region is the largest producer of banana in the state. Banana of about 25 to 30 crore Rupees is sent to the various provinces of India. Approximately 60 to 70 thousand people including the farmers, labourers, banana traders, employees and labourers of transport sector are engaged in this activity. The farmer has prospered because of banana crop only. In short we can call it to be the lifeline of the Nimar region.

The government is also earning revenue of lacs of rupees from Banana trade. Rail transport earns the carriage and freight to transport this produce. The Krishi Upaj Mandi Burhanpur books the income of 1.5 to 1.70 crore every year from this business. This MANDI (market) has broketn a record income in the state by dint of Banana trade.

Despite all the achievements, this trade has not flourished as it should have only the government can be held responsible if the reasons are paid attention to

1) Political and Natural reasons
2) Responsibility of the government or Expectation from the government
3) Irrigation crisis
4) Non Export of banana fruit
5) Marketing related reasons
6) Because of rival commercial grops.

Conclusion:

It can be deduced after studying all the above six points that the commercial crop banana is in the state of crisis presently. Co-operation of government is necessary to resolve it. To provide adequate facilities to the farmer is the responsibility of the government.

Resolving the problem of irrigation and expedition of opening the first Ripening centre for banana development which is already under process, are the expectations from government authorities, the ripening centre is going to be opened in the Barwani District of the Nimar region. To find out a solution for non export of banana, "APK Banana World Group" will conduct a special visit to launch this ripening centre. The process should be speeded up by the government so as to make the export possible very soon and the farmers may get a higher price of their produce.

Besides this, the government should solve the marketing problems and try to do away with the agency system or

middlemen system to save the farmer from exploitation. Multipurpose utility of banana crop should be promoted. So that the farmer are not deprived of the better price and return on their produce thereby fortifying the prosperity of the farmer.

Table No. 1
Income and expenditure of banana farming

Sr. No.	Particulars	Major crop		First Jadi		Second Jadi		Grand Total	
		Traditional	Tissue culture	Traditional	Tissue culture	Traditional	Tissue culture	Traditional	Tissue culture
01	Distance (in ft.)								
	Row to row	5	6	-	-	-	-	-	-
	Plant to plant	5	5	-	-	-	-	-	-
02	No. of plants	1742	1452	1742	1452	1742	1452	-	-
03	Cost of cultivation (Rupees per plant)	22	36	19	24	19	24	-	-
04	Cost of cultivation (Rs. Per acre)	38324	52272	33098	34848	33098	34848	104520	121968
05	Gestation	18	12	12	9	12	9		
06	Weight of an average bunch per plant	15	25	16	26	15	25	46	76
	No. of Non crop plants	174	0	174	0	174	0		
	Produce per acre (metric ton)	23.52	36.30	25.08	37.75	23.52	36.30	72.1188	110.352
07	Sale price (per m.t.)	3000	3000	3000	3000	3000	3000		
08	Total income	70551	108900	75254.4	113256	70551	108900	216356.4	331056
09	Net income	32227	56628	42156	78408	37453	74052	111836.4	209088

****

A Study Of Skill Gap Analysis With Special Reference To Barwani District

Dr. Sapna Soni * Dr. D.C. Kumrawat ** Prof. Shikha Kumrawat ***

Abstract - Education and training create assets in the form of knowledge and skills which increase the productive capacity of manpower and this is referred to as human capital. Education is considered to be a process of skill formation and in this aspect it is treated at par with the process of capital formation. Economists argue that as demand for educational training increases, the systems need to meet the country's requirement for people with high levels of skill and knowledge. But the major stumbling block in this growth path is the inadequate skill set of the workforce.

Skill Gap is the difference in the skills required on the job and the actual skills possessed by the employees. A skill gap analysis is a business tool used to assess the difference between the current state and a future goal state. This tool can be used to assess the current skills possessed and identify areas for improvement. This tool will basically help an organization in refining and defining the skills the agency needs, now and in the future.

Keywords:- Education, skills, skill gap analysis, capital formation.

Intoduction:-

Education is regarded as one that contributes to social, political and cultural and economic transformation of a country. The social sector of a country, namely, health, rural development, education and employment generation has assumed great significance in the new economic regime. The prosperity of any nation is intrinsically linked to its human resources. Human capital is one of the most important assets of a country and a key determinant of a nation's economic performance.

An increase in the human development index would lead to high levels of economic growth of the country.

Overall, our survey findings are remarkably consistent with previous Skills Gap studies, with 67% of respondents reporting a moderate or severe shortage of available, qualified workers and 56% anticipating the shortage to grow worse in the next three to five years.

In addition, our survey indicates that 5% of current jobs at respondent manufacturers are unfilled due to a lack of qualified candidates. These results underscore the tenacity of a worsening talent shortage that threatens the future effectiveness of the U.S. manufacturing industry

It doesn't help that today the skills gap is hitting where it hurts the most. Manufacturers are having the hardest time filling skilled production jobs that fuel their ability to innovate and grow, even in the face of high unemployment.

By that same token, their efforts to develop the skills of current employees are falling short. Meanwhile, the manufacturing industry itself is evolving at such a rapid clip that companies are putting themselves at risk of falling behind too far, too fast.

Literature Reviews:-

Mr. Manish Sabharwal, Chairman, Team Lease Services speaking on 'Employment to Employability', at the CII Global Summit on Skills Development, held in New Delhi on September 17-18, 2008 said, "Success comes from three Es, they are 'Education', 'Employability' and 'Employment'. As per Nasscom Press Information note "From India's young demographic profile which is an inherent advantage, to its vast network of academic infrastructure that churns out 3.1 million graduates annually, to its English speaking workforce, the country offers an unmatched mix of human -power benefits to organizations." Despite the strong fundamentals, there are already growing concerns about parts of the existing available talent pool being unsuitable for employment due to a skill gap.

Objectives:-

- Socio-economic profile - demography, economic profile of Barwani district
- Identify developmental opportunities keeping in mind factor endowments and stakeholder perspectives.

Methodology-

- This study is analytical and comprises secondary data which is collected from books and periodicals, journals, literature review and content analysis, Websites and newspaper.

Social Profile of BARWANI Distt.

Barwani was formed on 25th May 1998 by carving out of West-Nimar and Khargone district. Barwani is situated on the south-west side of Madhya Pradesh with river Narmada at its northern border.

District is surrounded by Satpura (in South)and Vindhyachal (in North) forest ranges. The district covers an area of 3,665 sq km. The district is bound in the north

*** Professor of Commerce ** Asst. Professor of Commerce SBN Govt. College, Badwani (M.P.) INDIA**
***** Guest Faculty of BBA**

by Dhar district, in the south and east by Khargone district405 of Madhya Pradesh and west by Dhule district of Maharashtra State.

District	M.P.	Barwani
Population(2011)	72,597,565	1,385,659
Decadal Population Growth Rate(2001-11)	20.3%	27.5%
Population Density Per Sq.km(2011)	236	256
Level of Urbanization(2011)	27.6%	22.3%
Gender Composition-Female Per 1000 Male Population(2011)	930	981
Proportion of ST Population(2001)	20.3%	67.0%
Literacy Rate(2011)	70.6%	50.2%
Male-Female Literacy Rate Gap(2011)	20.5%	14.2%

Censuses Profile 2011

The district has a population of 13.85 lakhs as of 2011. Barwani has population density of 256 per sq km which is higher than the state average of 236 per sq km. Urbanization in Barwani is lower than that of state average, with only 14.7% of population living in urban areas - in contrast to average MP urban population of 27.6%. As of 2011, gender ratio of the district stands at 981 females per 1000 male population whereas child sex ratio (0-6 years) is lower at 940 girls per 1000 boys.

District Economy-

The district economy had registered a growth rate of 10.5411 percent CAGR between 2003-04 and 2008-09 as in comparison to the state growth rate of 9.07% during the same period. Tertiary and Primary sectors are the key drivers of the district economy, contributing 45 and 39 percent respectively to the district income, while growing at 10.16 and 9.56 percent CAGR respectively, over the past 5 years412. Though in absolute value terms, secondary sector had grown at a faster rate (14.01 percent), given the contribution of secondary sector of around 16% of the GDDP, it is less significant to the overall district's economic growth. The district per capita income is INR 14,837, which is much less than the state average of INR 24,709.

Agriculture and allied sectors

Total geographical area of Barwani district is 3665 km^2. Forest area is 6.67% of total land in the district, whereas area under cultivation is 63.5% of total district land. Net sown area constitutes 88% of total cultivable land. Also, 19% of cultivated land is dual cropped which is low in comparison to state average of 38%.

Generally, five types of soils are found in the district namely Kali-I, Kali-II, Kali-III, Halki Khadri and Bardi. The soils of Barwani district are classified as medium black cotton soils, containing nearly 50% silt and clay together. Mostly the soils are lighter, open and drained. Alluvial type of soil is found on both the sides of the river Narmada and in some patches on the banks of its tributaries like Goi, Deb & Bour. This type of soil is deep fertile & well drained.

The soils of the rest of the district are mostly shallow & poor in fertility.415 Shallow soil constitutes 65.66 percent of total soil available in Barwani. The total area irrigated by canals is 4.95 km2 of the total area sown, of 2,325.82 km2.The total area irrigated by tube wells is 119.42 km , by open wells 216.86 km2 and by ponds & Tanks 385.11 km2. The total area under assured irrigation from various sources is 655.38 km2. This is only 28.17% of the net sown area. Hence, almost 72% of the sown area in the district is rain-fed. Dairy farming, goatery and sheep rearing are key agri-allied activities in the district. Cotton is cultivated on 23.84% of agriculture land, Sorghum is cultivated on 20.35% of agriculture land and Maize is cultivated on 14.2% of total agriculture land. Chilli is another major crop in Barwani and is grown on 6.8% of agriculture land. There are 4,34,350 cattle, 98,304 buffaloes and 1,62,150 goats present in Barwani. Between 2002-03 and 2006-07, usage of tractors in the district grew at 6.4 percent CAGR, indicating healthy growth in the extent of mechanization. However, the presence of 1.3 tractors per sq km of agricultural land in Barwani, still indicates low level of mechanization in the district. Agricultural products are marketed through Madhya Pradesh Agricultural Products Marketing Committee. The committee

management has markets (Krishi Upaj Mandi) at Barwani, Anjad (Thikri Tehsil), Sendhwa, Barwani (Tehsil Sendhwa) and Khetia (Tehsil Pansemal). Being the district head quarter, Barwani is having a semi developed market. Other places like,Sendhwa and Rajpur also have similar types of market.

Workforce Distribution in the district

Current Employment Scenario in Barwani

Work participation rate in the district (48.43 percent) is relatively higher than the state average of 31.7 percent. Percentage of people employed as agricultural workers accounts to 84.35%427 of the total working population, indicating high level of worker participation in the primary sector. Worker participation is low amongst women at 43.71 percent in comparison to male WPR at 53.01 percent Typical migration in Barwani is outbound. Unskilled labour move towards Madhya Pradesh and Maharashtra for industrial and construction jobs. Migration in Barwani not only occurs both in search of livelihood, and for extra income generation. Inbound migration is negligible in the district.429 Barwani has 69 slum pockets and 21,033 slum population.

Estimation of Supply of Manpower in Barwani

According to KPMG Estimates, Barwani district has a significant demographic dividend, with rising working age population and a sizeable population in the lower working age spectrum. By 2022, there will be 6.9 lakh431 people participating in the labour market system of the district. Ensuring adequate skilling of the available workforce will ensure increased Productivity in the district economy, thus propelling state growth.

District	Estimated Population 2022)	Working Age Population (2022)	Labour Force (2022)	Work Force (2022)	Incremental Supply during 2012-22
Barwani	1718342	1082555	690591	643959	253817

District Specific Recommendations

Barwani, being an agrarian district, has more employment opportunities in the primary sectors. Formal employment in the district is limited due to shortage of organized players in services sector and large industrial units. Significant training from Government initiatives is expected to be targeted towards agri-Allied activities and construction. However, within the services sector, employment generation is expected to happen in the informal segment of retail industry, where there is limited penetration of training. Recommendations for skill development in the district are made considering the following points related to skill ecosystem in the district.

- An agrarian economy
- Retail, Banking and Education sectors to provide significant employment opportunities after Agri-Allied activities
- Employment in manufacturing driven by . food processing and textile industry
- Low per capita income and limited employment opportunities in organized sectors compared to working age population growth
- District youth aspirations to migrate and work in cities for better livelihood opportunities

Barwani is a district with immense agricultural potential, especially in cotton production. Hence building a support infrastructure and identifying key possibilities from existing synergies will be the key to Barwani's development.

Conclusion

Human resources, in terms of quality and quantity, are India's biggest assets. A favourable demographic structure (with about 50 percent of the population below 25 years of age) adds to this advantage. However, to capitalize fully on this opportunity and not face the possibility of a skills-shortage, it is essential to gear up the education system through innovative initiatives

Refrences:-

- www.ijmbs.com/23/ipadmini.pdf
- www.drrodenglish.blogspot.com
- Teichler, "Research on the relationships between higher education and the world of work; past achievements, problems and new challenges", Higher education, 1999, Vol. 38, pp. 169-190
- Yorke, M., "Employability in higher education: what it is - what it is not", Enhancing Student Employability Coordination Team (ESECT), The Higher Education Academy, 2006.
- http://www.rajivudyogasri.gov.in

****

Impact Of FII On Stock Market Return & Volatility

Dr. Ratneshwar Prasad Dwivedi * Abhay Kumar Pandey **

Abstract :- Foreign institutional investors have gained a significant role in Indian capital markets. Availability of foreign capital depends on many firm specific factors other than economic development of the country. In this context this paper examines the contribution of foreign institutional investment particularly among companies included in Stock market return and returns. Also examined is the relationship between foreign institutional investment and firm specific characteristics in terms of ownership structure, financial performance and stock performance. It is observed that foreign investors invested more in companies with a higher volume of shares owned by the general public.

Introduction :-

Foreign institutional investors is a legal entity such as an investment fund or mutual fund that puts money into a business venture or project in a country other than the one in which the investors lives or its based. FII have influenced stock market Development i.e return & volatility in India. An insight into this issue is of great importance for policy makers in the developing countries who may be weighing the costs and benefits of various economic liberalization initiatives. There are many the increased capital flows that are many the increased capital flows that are typically the product of liberalization can make policy makers nervous.

Since the beginning of liberalization(1991) FII flows to India have steadily grown in importance, any economy in the world is major affected by the foreign investment and the movement of its capital market, as an indicator of performance of its various companies in a particular industry. The dawn of 21st century has shown the real dynamism of stock market and the various benchmarking of sensitivity index (Sensex) in terms of its highest.

Impact of FII investment on -Average Return :-

Table 1 Shows the relative average returns during various periods before and after the entry of FIIs. the statistical significance of difference in the mean returns of the corresponding periods is tested by using the Mann Whiteney U test., the U test like the Kruskall-Wallis test, is a rank sum test but it is use when only two populations are to be compared.

The average daily return for the 12 months prior to the entry of the FIIs is calculated to be 0.150%, whereas for the 12 months following it is 0.137 %. When the returns for 24 months before 0.223 % and after FIIs entry 0.102% are compared, the returns subsequent to opening up are found to decrease. The post

FIIs entry average returns decrease further to 0.032% as compared to 0.198% for the pre-FII entry period when a 36 month horizon is considered.

Table 1

BSE Sensex : Average Daily Return Before and After the Entry of FIIs .

Period	*Average daily return Before entry*	*Average daily return After entry*	*Levene Statistic (2-tail p value)*
12 months	0.150	0.137	-0.0283(0.9774)
24 months	0.223	0.102	-1.3244(0.1854)
36 months	0.198	0.032	-2.2742(0.0230)
Full period	0.203	0.045	-2.4362(0.0148)

The Mann-Whitney test reveals that the null hypothesis , i.e., there is no significant difference in the average daily return before and after the entry of FIIs, is strongly supported two -tail probability is 0.9774 only for the 12 month period. The evidence in favour of the null hypothesis considerably reduces when 24 months two -tail probability is 0.1854 and 36 months periods two-tail probability is 0.0230 are considered. Therefore, the null hypothesis is rejected in these cases . This means that the returns in the post-FII period have decreased significantly although it took some time for the effect of the FIIs investments to manifest itself. The effect strengthened with the passage of time.

Impact of FII investments on Volatility :-

Table 2 summarizes the volatility of daily returns for various periods before and after the entry of FIIs. The daily volatility for the 12 months prior to entry of FIIs is 3.361 %, whereas for the 12 months after the entry of FIIs is 1.839 % . The corresponding values for 24 month and 36 month periods are 2.712% and 1.639 % and 2.908 % and 1.523% respectively. It is clear from the table that there has been a significant drop I stock market volatility after the entry of FIIs in the market. The modified Levene statistic rejects the null hypothesis of equal volatility for all the periods (two-tail probability for all the periods being near zero).

*** Prof & HOD Comm., Govt.S.K.N.College, Mauganj, Rewa ** Research Scholar APS University, Rewa (MP) INDIA**

This is consistent with the empirical evidence available from other developing markets. For example, Richards10 found no evidence to support the hypothesis that volatility in emerging markets increased in recent years concurrent with the boom in foreign portfolio investment inflows. Indeed, his results suggest a decline in absolute volatility. IMF11 also found that absolute volatility of stock market returns did not increase during periods of high and volatile portfolio inflows in Korea, Mexico and Thailand. Bekaert and Harvey as well observe that the volatility of returns remained unchanged or declined in 13 countries out of their sample of 17 countries after liberalization of their capital market. **Kim** and **Singal**, based on average volatilities, suggest that openings up of the market lead to rise in stock prices and fall in volatility. The relationship is though not contemporaneous.

Table 2:
BSE Sensex: volatility of Daily Returns Before and After the Entry of FIIs

Period	*Average daily return Before entry*	*Average daily return After entry*	*Levene Statistic (2-tail p value)*
12 months	3.361	1.839	27.154
24 months	2.712	1.639	38.196
36 months	2.908	1.523	67.264
Full period	2.907	1.605	162.87

In their analysis certainly there is no evidence that market opening have harmful effect on domestic investors either in a return or risk dimension. However, a study by Levine and Zervos, which found that external liberalization increased asset price volatility, is an exception.

Conclusion :-

It is firmly proved that due to the entry of FIIs there has been no increase in market volatility. However, whether their entry has been a factor in decreasing volatility, cannot be said with certainty. There could be other factors as well, which might have been responsible for decreasing volatility in the post FII period. it is found that Indian market has become larger in size and more liquid in the post liberalization period .The expansion of the Indian stock market in post liberalisation period is truly impressive but in terms of quality there has been a regress. Trading has become increasingly concentrated in some sectors and companies and the higher volatility in the market, without corresponding higher returns, portends greater risk and more instability for investors.

Reference :-

1. Nagaraj , R (1996): 'Indian Capital Market Growth: Trends,Explanations and Evidences',Economic and Political Weekly, 35,September.
2. Singh , A (1977) : 'The Stock Market ,Industrial Development and the Financing of Corporate Growth in India' in D Nayyar (ed), Trade and Industrialisation Oxford University Press.
3. Nagaishi Mokoto (1999) : Stock Market Development And Economic Growth -Dubious Relationship , Economic And Political Weekly, July 17,1999 P2004-12.
4. Demirgue-Kunt , A And R Levine (1996) : " Stock Market Development And Financial Intermediation: Stylished Facts" WBER, No .2 May Vol.10.No.2
5. Biswas Joydeep (2005) : "Fpis And Stock Market Behaviour In A Liberalized Economy : An Indian Experience " , Asian Economic Review August , Vol.47,No2.
6. Indian Securities Market -A review , Vo.IIX 2010 from www.nseindia.com.
7. A Hand book annual report 2009 & 10 .
8. www.sebi.gov.in
9. "City development " , A report to the Durbar of Indore by Patrick Geddes . Part I Indore :Historic Development ,1918 .
10. Source : M P Stock Exchange , Annual Report 2009-10.
11. Sorce: Bombay Stock Exchange . The Stock Market in India , Bombay 1992 .

****

Economic development through social Enhancement - Role of Information and communication Technology (ICT)

Dr. Jaya Sharma*

Abstract - "India has been an under developed economy for many year and is still underdeveloped. India's economy had suffered a long period of stagnation under the British Rule only after Independence this long spell of stagnation was broken. After independence India faced many social problems which kept Government concentrating on them instead of its economic development, But after about two years with the development of economic planning in terms of five year plans India got an era of economic development. This beginning of development also experienced many problems like poverty, illiteracy, unemployment which stopped the acceleration of development.

This was the time when the country experienced that without social development it is not possible to progress economically. As a result all the major planning and activities of the government were based on social upliftement of the people. The present paper is an attempt to find out how economical development of a country like India can be done through social enhancement and role of the Information and Communication Technologies (ICTs) to achieve social development by helping in eradication of many social problems."

Key Words: Economic Development , ICT, Enhancment

Economic development generally relates with increase in the economic terms like the Gross Domestic Product or the Gross National Product. These two involves many other developing factors which are responsible for the overall results like structure of production, employment, and also share of agriculture. When Indian economic development was planned and applied as the first five year plan and even in the second five year plan also it was realized that above 50 percent of the population had not benefited at all from economic growth during the period. Now, the question arises that what was the problem behind it?

Perhaps the narrow definition of economic development needed to be changed at that time and there was a need to apply new dimensions like reduction or elimination of poverty, inequality and unemployment in the context of getting a fast growing economy. The same was the situation form many of the developing counties of the world during 1950s to 1960s. So, these new dimensions which related with the social development were accepted by many of the developing counties for their economic development.

As to talk of India, we have been facing many problems since independence. With the passage of time our country realized that we are not lacking in resource but we are lacking in utilizing them. We had a plenty of natural resource and human resource but due to lake of proper management neither we could explore our natural resource nor could we provide employment to our human capital. As a result instead of economic development we faced many social problems like poverty, illiteracy, inequality, terrorism, child labor, environmental problems etc. Thus it became important to plan economic development with social enhancement in the form of making our country free from the basic social problems. A great volume of population and poverty has been major obstacle for the economic development of India. But there are some changes with the development of technology and increase in the literacy rate it is now turning to a growing economy, which has more literate population and wide technological base to give it the strength of emerging as a major power in the world.

Information and communication technology which is formally known as ICT has become the backbone of economic development in today's world. Previously it was being used as the business resource for the basic business operations, but now it has captured the overall business environment. Every aspect of economy like Agriculture, Industries, Infrastructure, services etc. is somewhere has the involvement of ICT in today's world. ICT involves innovation in microelectronics, computing (hardware and software), telecommunications, and opto-electronics- microprocessors, semiconductors, fiber optics.[1] It has been recognized that ICT plays an important role in bridging the divide between the poor and the non-poor and haves and have-nots. Pursuing with the same objective the advancement of ICTs in the form of communication and internet facility are proving to be very helpful in providing various services to all like education, health care, banking etc.

Although only the 11th biggest economy in the world, India is the second fastest-growing behind China. According to a study by Morgan Stanley, driven by a sterling demographic dividend, continuing structural reform and globalization, India is poised to accelerate its growth rate to 9-9.5% over 2013-15.[2] The main target of Indian economy has been eradication of poverty and optimum utilization of national resources. There have been efforts from international level also to eradicate the

*** Asst. Professor of commerce, Govt. Girls college Sehore (M.P.) INDIA**

barriers to development. Specially in case of poverty the United Nations summit on the Millennium Development goals, from 20-22 September 2010, concluded with the adoption of global action plan to achieve the eight anti -poverty goals by the 2015[3].

The world member agreed on the following eight goals:

1. Eradicate extreme poverty and hunger.
2. Achieve universal primary education.
3. promote gender equality and empower women
4. Reduced child mortality
5. Improve maternal health
6. Combat HIV/AIDS, malaria, and other diseases,
7. Ensure environmental sustainability &
8. Develop a global partnership for development.

The present paper tries to suggest how ICT can help in achieving the above goal more effectively. ICT can help to achieve the above goals (which targets at social upliftment of people) as it enables rapid, easy and efficient exchange of information around the world. Latest improvement and advancements in the technology are affecting the application ,acquisition, creation, and sharing of knowledge, which in turn affect a wide range of economic and social activities some among them are like how industries, service providers and government are organized and how they are performing their duties?

The technological advancements are reducing transaction costs, ending time and distance barriers, enabling the mass production of goods and services.

The following is a brief explanation how the goals of social enhancement can be achieved more effectively involving the new Information and communication Technologies:-

1. India faced poverty and hunger due to improper methods of agriculture and distribution of agriculture products this problem has been resolved up to a large extend only through the ICT. In order to eradicate poverty and hunger the ICT can help through increasing access to relevant market information. Through ICT it is now possible to know about the prices of goods and services so that no one can take extra money form the people who do not know the actual price of a particular product. The Eleventh Five Year Plan (2007-12) of India highlights the need for inclusive growth. In the Foreword to the Eleventh Five Year Plan document, Hon'ble Prime Minister emphasized the need to ensure that growth must be widely spread so that its benefits, in terms of income and employment, are adequately shared by the poor and weaker sections of our society. For this to happen, the growth must be inclusive in the broadest sense. It must occur not just in our major cities but also in our villages and small towns4. Government is also spreading information through audio and visual sources so that the poor people can fulfill their need and can be benefited through the government efforts.

   We can take the example of an effort made by the Government to provide wheat and Rice at a reduced rate for the people below poverty line. The massive positive effect of this scheme has been possible only through the technological advancement which has spread the information to the last point of the society and all are aware of this.

   Previously the government help could not reach the target due to the intermediatories who misguided people and kept all the money with them instead of providing to the society.

   Through reducing cost of transaction it can help the traders and farmers also the farmers can get the expert advice about various corps online and get better production also the requirements of the market can be forecasted. In this way the ICT is helping in getting information about the production, distribution and utilization of the products to all.
2. It is has been proved over the past few years that only if any country wants to sustain its economy and develop there is a strong need of literate population for this. According to the Economist Intelligence Unit (EUI) Indian is expected to be the world's fastest growing economy by 2018. India has been suffering from acute shortage of trained teachers but through virtual and distance learning method of ICT we can overcome the problem and the people from remote villages and avail better teaching experience. This is going to be a major step towards achieving 100% literacy. Many students from the far distance areas are now able to get the latest educational information and are being equally benefited.
3. Women empowerment has become the word of the day everyone is aware of it and is talking about it thanks to the advancement through ICTs. The tendency of differentiation between boy from a girl child is changing only through the awareness spread through the new technology. Various programmes are being telecast which guide people about the equality of all. The effects of these programmes are being displayed in the society. Women are getting aware of their rights and are now coming forward. India has also awakened and people are considering boys and girls equal. Girls are getting same rights even at some points more rights than boys. Especially the poor girls are being given more attention. The state government of Madhya Pradesh has launched various schemes like Ladli lakshmi Yojna, Gaon ki Beti Yojna, Pratibha Kiran Yojna to facilitate the girls and provide them better educational and social environment.
4. To reduce the child mortality awareness campaigns are run. Information is spread through various communication measures regarding child diagnosis and specialist consultation. This helps people form remote areas contact

for care and nutrition of child. Also the traditional assumptions regarding child care are being replaced by the new consultation and scientifically proven methods. People are taught by live examples and old assumptions are checked in front of them. The affect of live demonstrations related to child care help people save their children from many diseases.

5. The maternal mortality rate is also going down the data from the Ministry of public health and welfare shows that the MMR (Maternal Mortality Rate) have gown down in comparison to 2004-05 in the year 2010-11. The factors behind it are better dissemination of information, knowledge and facilities to people which ultimately is due to the ICT.
6. To combat HIV/AIDS, malaria, and other diseases ICT has been very helpful people are aware of this diseases and have trust about their treatment. In India there has been a time when people used to boycott the sufferer of such diseases but with updated information and live discussion with the experts the society is helping people fight with such diseases.
7. To ensure environmental sustainability again involves people's participation and co-operation. Large campaigns are run with the target of saving the environment and people engage in it because they are able to see how much damage it can cause if we loose our environmental sustainability. The wild life saving campaign and many more programmes are successful only through proper watch and security provided by the measures of ICT.
8. In order to develop a global partnership for development among the world the ICT has been a major tool. The Globalization concept could be possible only with ICT. The latest technologies without the barriers of time and distance are helping the world become a global village and India is also in the race. We have been benefited from the positive impact of globalization only because we are today developed in the field of Information and communication Technology.

   The above discussion are very limited the role of ICT is much more than what we discussed but the main part of this is that without ICT no social enhancement can be even planned . We have to get into ICT for any development. As the case suggests for Economic development it becomes a must to develop socially first and to gain social development the dissemination of information in a right way is essential which can be promptly done only through the Information and communication Technology.

References:

1. UNDP , human Development Report 2001 (New York , 2001), p.30.
2. http://economictimes.indiatimes.com/news/economy/indicators/India-to-become-worlds-fastest-growing-economyby-2013-15-Morgan-Stanley/articleshow/6322333.cms.
3. United Nations: The Millennium Development Goals report, 2010
4. Planning Commission: Eleventh Five Year Plan (2007-2012), Foreword

****

Channels of Business Communication (A brief in vertical channel)

Dr. Vivek Kumar Patel * Dr. Pallavi Mishra **

Introduction:- Communication is as old as human being on this earth. It is communication (with the metal faculty and physical senses) which is only responsible for the human's progress on this earth. Communication is the most important factor in today's world. The term communication comes from the Latin word 'communism' or 'communicated' which means to share, make common or to ease the difficulty. In every walk of life, communication plays very significant role in order to generate ideas and thoughts, to express emotions and feelings, to develop the organizational and to share or exchange the knowledge and information. Without communication one cannot imagine any type of progress in any branch of knowledge or in any organization (government, institution, family, social and political institution, etc.). No human being is without communication. Even he is at rest, he communicates with himself. Although he appears silent, he communicates secretly with his inner voice. Communication doesn't mean only talking to someone. It includes verbal and non-verbal element. Communication is everywhere wherever we are.

Communication is life blood of any business organization. The process of retention or detention of any employee in an organization depends largely on communication as it provides information about internal and external activities of the organization which can be either favorable or unfavorable to that organization. Business objectives of an organization can be achieved by collective efforts, which are possible only through exchange of facts thoughts, opinions or emotions of persons in that organization are also included.

Definitions cited below provide us a sense for the meaning of communication:-

- 'Communication is interdependent and interrelated aspect of sharing and exchanging information'.
- 'Communication is a process for generation knowledge'.
- 'Communication is not a linguistic tool were, but a social phenomenon.'
- 'Communication is a democratic process of sharing ideas intended to specific meaningful progressive end.'
- 'Communication is nothing but the survival identity of an individual, a group, organization or a nation.'
- 'Communication is an intellectual gap where sender and receiver reach to fulfill it.'
- 'Communication doesn't mean manipulation of ideas but cooperation to unite the past, present and future for the better cause of humanity.'
- 'Communication is a goal to achieve something, to do something and fulfill something.'

All the above definitions prove the objectives of communication:- Strictly speaking, we all are aware the fact that nothing inherent in this world, everything is subject to change. Human being can not be static and on the country he is progressive for this change so many factors are responsible which incurrage or compel instigate to go forward and accept or reject certain conditions of mental and physical activity. We have so many examples of great people, scientists are leaders who become great because of certain negetive conditions or out of advice impect on them.

Here, only I want to intract with you with only one channal of communication which is very important for improving the relationship and meking the progress of any organization. Generally I so many problem relating to the various types of relationship including family, Institutions, and other organisation. I hope following aspects and point will help you think better and control your communication in order to settle you on the path of meaningful progress with your organisational objectives.

Organisational Communication is of two types:-

a) Verbal (Oral and written)
b) Non- verbal (Body Movement and visual)

Communication is divided in two ways:-

a) **Formal :**- A type of organisation communication trough proper channel with certain norms and objectives.
b) **Informal:-** A type of unofficial communication. (i.e. rumour, back-biting, hearsay, friendly talk, etc.)

Formal Channels Include:-

- Downward channel ⇩
- Upnward channel
- Vertical channel ⇕
- Horizontal channel ⇔
- Diagonal channel ⤫

*** Asst. Prof. of Commerce, Govt. College Kotma, Distt.- Anuppur (M.P.) INDIA**
**** Guest Faculty Dept. of Commerce, Govt. S.K.N.P.G. College, Mauganj, Distt. - Rewa (M.P.) INDIA**

Formal channel Is as follows :-

- Grapevine

Vertical channel of communication:-

When senior, elders, higher authority, or commanding authority or superiors communicate with the junior, younger or lower ones or inferior and vice-versa ,this is called vertical Channel of communication. Communication starts from the higher level to the lower level and the lower level respond it effectively and democratically.

This channel is consider to be the best channel of communication as it is for both sides. It is a balanced network of downward and upward channel of communication. Without downward channel of communication,vertical channel of communication. Without downward channel of communication, vertical channel of communication is impossible.it is this channel which brings out the human resources from the human being. Because of this, everyone get the opportunity to share and to involve in the progress of the organisation. All barriers are removed and harmony is created which celebrates the value and respect for human being. We know we all are eqal, but because of certain genetic and socioenvironmental condition we differ in some respects. These differences should not become barriers in the progress of communication. We should keep in mind the term 'human resource'. It points out that everyone has something which can be used in the progress of the organisation.

Example:- 1.

Principal

⇕

Head of the Departments + Non Teaching Staff

⇕

Teaching Staff Members

⇕

Students

Example:- 2.

Board of Director

⇕

Managing Directors

⇕

Departmental Managers

⇕

Supervisors

⇕

Clerks & Operatives

You must have understood the above two way process of communication which percolates from the higher to lower one and is forwarded toward the higher one.if vertical channel is in smooth flow,it maintains a perfect balance in the process and progress of communication.

Advantages of Vertical Channel of Communication:-

- This is one of the best channels of communication.
- It is democratic communication.
- It removes inequality regarding to caste, religion, class, age or qualification.
- It creates awareness for human values.
- It brings out the dormant qualities and potentiality.
- It respects all and creates no hierarchy.
- It satisfies the situational need.
- It provides opportunity to express.
- It creates a fellow-felling telling us that we are for other and not for ourselves.
- It tells us our responsibility and love for our country.
- It creates confidence among all.
- It is a model for progress.
- Knowledge is imparted, shared and understood.
- It is effectively used in family and for social and professional interaction.
- It removes tension.
- It avoid mental slavery and creates self respect.
- It is true discipline.
- This is true adjustment, allows to know others and gives proper feedback.
- This maintain a harmony and good relationship.
- This removes personal differences.
- This helps to plan strategy, conduct meeting, and instruct concerned persons.

Problems generally faced in the process of communication :-

- The meaning of communication is not understood properly by both sides.
- Due to gap in communication (no network of communication)
- Only for the sake of impression, respect, authority.
- Fear to destroy status.
- Hierarchical mind-set up.
- Others progress is not desired.
- Fear to spoil(children, students, employs, or juniors)
- Because of jealousy.
- No development, no knowledge, no cultivation of thoughts.
- Narrowness of professionalism.
- No sharing no understanding.
- False discipline.

- Worshiping makes man slave.
- Identity crisis.
- For the sake of personal interests.
- Negative attitude.
- Always in doubt.

Barriers to communication:-

There are some underlying barriers to communication which obstruct the smooth flow of communication. Study the following barriers:

- Linguistic barriers
- Environmental barriers
- Technical barriers
- Mental barriers
- Cross-cultural barriers
- Socio-psychological barriers

After all we want the progress of any organisation including family. In order to overcome these barriers to communication and problems generally faced by the higher one or seniors, followings are important suggetions which will help to eradicate such complexities and to achieve the target the organisation wants.

- To possess analytical ability for the criticism or doubts.
- To maintain impartiality and objectivity.
- To control the temper and maintain play way and free will spirit.
- To develop reasoning ability and qualities of leadership.
- Ti keep yourself unaffected and intact.
- To develop knowledge of inter-cultaralism and multiculturalism.
- To learn human psychology with human weaknesses.
- To avoid bias or preconceptions (gender, age, caste, religion, culture, etc).
- To know the objectives and ultimate goals of the organisation.
- To develop knonledge of law and scientific temper.

Suggestion :-

Following are the suggestions for the lower ones, juniors and younger ones to involve in the process of vertical channel of communication in order to develop the spirit of progress.

- Remove false impression of age, caste, qualification, gender, caste or any other negative aspects.
- Feel eqal and democratic.
- Consider a part of the organisation.
- Avoid worshipping seniors, elders or superiors.aviod mental slavery.
- Follow the good qualities of seniors. Learn from the good leaders.
- Respect elders but avoid fear. Do not five too much importance to someone.
- Express what you think for the betterment of the situation, either in written or in oral.
- Develop a balanced and positive personality.
- Avoid biasness and preconceptions.
- Show readiness to accept the responsibility related to the organisation assigned by the concerned authority.
- Do hard-work as you are new and in the learning stage. (never avoid duty).
- Be honest and avoid laziness.
- Not for salary but for duty.
- Be punctual and disciplined.
- Abide by the rules and regulatons.
- Inform your seniors regarding to leave for absence or any other concerned activity.
- Take prior [ermission for taking any steps.
- Understand the difference between personal liberty and professional liberty.
- Improve your professional weakness (like drafting, speaking, etc).
- Understand the professional relationship.
- Avoid the sense that I can do better than the senior or elders (though you have better skill) instead, you concentrate on your work and do progress in it so that you will be understood by the seniors because of your hard work and honesty.

Conclusion:-

Communication is a two way process of exchanging and sharing information, ideas, thought and feelings. Successful communication conveys effective feedback. There are so many complexities and difficulties.i if you want to win the situation with your objectives, you have to be very cautious and careful in using the process of communication. First,you have to understand and to develop the above mentioned suggestions.

Thus, we have to understand the very philosophy that man is maker and unmaker and very responsible for his actions. After all what we face is the result of our action. That's why we have to follow the principle of live and let live.

References:-

- http://en.wikipedia.org/wiki/communication.
- Dr.n.mishra, business organisation and communication, SBPD publishing house, 2013 section B page no.01.
- P.D. chaturvedi, business communication: concepts, cases and application, dorling Kindersley pvt. Ltd. 2009.
- Murphy herta A, effective business communication, Tata Mcgrah hill publication, new delhi 2008.

****

River Corridor Planning And Management

Dr. Praveen Ojha *

The river corridor is a primary tool in avoidance strategy to restore and protect the natural values of rivers and minimize flood damage. "River corridor" means all land, inclusive of islands, not regulated under the Metropolitan River Protection Act, or the Coastal Marshland Protection Act, in areas of a protected river and being within 100 feet horizontally on both sides of the river as measured from the river banks. River corridor delineations are based primarily on the lateral extent of stable meanders, the meander belt width, and a wooded riparian buffer to provide stream bank stability. An important way to keep rivers from becoming unbalanced or to allow them to re-establish balance is to protect their 'riparian corridors'- the river channel, the banks on either side and areas close to the river that carry excess water during storms and heavy rains. River protection and corridor management elicit many different, and sometimes conflicting, ideas and perspectives. The most meandering plans emerge from a process which reshapes these conflicting ideas into a coherent whole. Improved water quality has led to competing river uses, such as water withdrawal for public water supplies or snow making, and maintaining adequate water levels for aquatic life. In 1988, the legislature recognized these various demands by enacting The Rivers Management and Protection Act, which established the Rivers Management and Protection Program. The Act is designed to help communities accommodate a wide range of uses without adversely affecting the very qualities that make rivers such rich resources.

The Rivers Management and Protection Program are administered by NHDES through a State Rivers Coordinator. The Rivers Coordinator assists individuals and groups with river nominations and management plans, regardless of whether the river is designated under the Rivers Management and Protection Program. When a river is nominated into the Rivers Management and Protection Program, it is classified as natural, rural, rural community, or community. Each category reflects a different degree of development within the river corridor and has different protection measures associated with it. The same river may have more than one classification. For example, the river may originate in a remote, forested, essentially "natural" setting, become more "rural" as it flows through an agricultural area and "community" where it flows through an urban centre. The Rivers Coordinator helps groups connect with resource people at NHDES and other state agencies, federal agencies such as US Fish & Wildlife Service, environmental organizations in New Hampshire and other local river groups. Implementing river corridor plans will require a long-term commitment and without a corridor plan, encroachments will continue, compounding the cost of flood covey, and necessitating river management that is both economically and ecologically unsustainable. There are six basic tasks in developing a management plan:

1. Getting Organized
2. Identifying River Values and Threats
3. Setting River Corridor Management Goals and Defining Management Options
4. Creating the Plan
5. Getting the Plan Approved
6. Implementing and Updating the Plan

The rivers coordinator, with the cooperation and assistance of the office of state planning, shall develop detailed guidelines for river corridor management plans, including but not limited to model shoreline protection ordinances. The rivers coordinator shall hold a public hearing regarding the proposed guidelines and model ordinances. The rivers coordinator shall provide technical assistance to regional planning commissions, municipalities, and river corridor commissions and shall encourage the development and implementation of river corridor management plans.

The Rivers Management and Protection Act stipulates that river corridor management plan include discussion and description of:

- permitted recreational uses and activities
- permitted non-recreational uses and activities
- Existing land uses
- Protection of flood plains, wetlands, wildlife and fish habitat, and other significant open space and natural areas
- Dams, bridges, and other water structures
- Access by foot and vehicles
- Setbacks and other location requirements
- Dredging, filling, mining, and earth moving
- prohibited uses

The plan is an excellent tool for planning and managing development within the corridor and is intended to advise local government in land use planning and decision-making. The plan may also recommend appropriate actions at the

*** Prof. and Head, Faculty Of Commerce, Dr. Bhagwat Sahai Govt. College , Gwalior (M.P.) INDIA**

state and federal levels. It is most effective when there is coordinated; inter municipal cooperation as well as individual town action in implementing the plan. The State of Vermont utilizes the river corridor planning process to identify "key attenuation assets." Attenuation areas are based on the river corridor delineation laid out in this Guide and include riparian floodplains, wetlands, and vegetation, connected to geomorphically sensitive streams that store flood flows and sediments and reduce the transport of organic material and nutrients from the watershed. Focusing the limited conservation dollar on the protection of key attenuation assets, and the ecological processes they provide, is a critical component of our watershed and corridor plans to reduce flood and fluvial erosion hazards and provide for water quality and habitat improvement.

River Corridor Protection Plans shall provide for the construction of road crossings and utility crossings of river corridors, provided that construction of such road and utility crossings shall meet all requirements of the Erosion and Sedimentation Control Act of 1975, and of any applicable local ordinances on soil erosion and sedimentation control. River Corridor Protection Plans shall address, at a minimum, the following considerations with regard to river corridors:

1. The plans shall consider the effect of activities in the river corridor on public health, safety, welfare, and the private property rights.
2. The plans shall consider any characteristics of the river corridor that make it unique or significant in the conservation and movement of flora and fauna including threatened, rare, and endangered species. The plans shall establish the local government's policies regarding such flora and fauna rather than identifying specific sites containing such species.
3. The plans shall consider the effect of any activities within the river corridor on the function of the protected river and river corridor including the flow and quality of the river water, erosion and shoaling of the river bed or margins, and to the navigability of the river.
4. The plans shall consider the effect of activities in the river corridor on fishing or recreational use of river corridors.
5. The plans shall consider whether the effects of activities in the river corridor are temporary or permanent in nature and, if temporary, the length of time of the impact.
6. The plans shall consider the preservation of significant state historical and archaeological resources within the river corridor.
7. The plans shall consider the effect of activities within river corridors on immediately adjacent sensitive natural areas. The plans shall establish the government's policies regarding such adjacent sensitive natural areas rather than identifying specific sites.

The department shall prepare and adopt a long-range comprehensive plan for each designated river or segment which shall address the management and protection of instream values and state lands within the corridor. State land within the designated river corridor shall be administered and managed in accordance with the plan, and state management of fisheries, streams, waters, wildlife, and boating shall be consistent with the plan. In developing this plan, the department shall cooperate with the department of resources and economic development, the department of fish and game, the office of state planning, the department of agriculture, and the local rivers management advisory committee.

One of the most important goals of a river corridor management plan should be increasing public awareness and understanding of the river, its many resources and the impact of our actions on the river and its resources. Educational programs should be tailored to the intended audience: riverside landowners, recreational users, elected officials, school children, civic groups, business and industry, conservation and preservation groups, and many others.

A very effective way to engage the community and improve aesthetics and the water quality of the river is to conduct a river cleanup. Improving recreational access to the river can be a very effective way of bringing people in contact with the unique resources of the river. Several land conservation techniques can be used, each with different levels of capital cost and control over use and management.

References

1. www.vtwaterquality.org/rivers.com
2. www.des.nh.gov/organization/commissioner/pip/publications
3. www.crjc.org/corridor-plan/plan
4. Wetlands and River Corridor Management: Proceedings of an International Symposium - Jon A. & Sally Daly Kusler.

****

Green Marketing - New Initiatives With Challenges In India

Dr. L.N. Sharma *

Introduction

According to the American Marketing Association, green marketing is the marketing of products that are presumed to be environmentally safe. Thus green marketing incorporates a broad range of activities, including product modification, changes to the production process, packaging changes, as well as modifying advertising. Yet defining green marketing is not a simple task where several meanings intersect and contradict each other; an example of this will be the existence of varying social, environmental and retail definitions attached to this term. Other similar terms used are Environmental Marketing and Ecological Marketing.

Thus "Green Marketing" refers to holistic marketing concept wherein the production, marketing consumption an disposal of products and services happen in a manner that is less detrimental to the environment with growing awareness about the implications of global warming, non-biodegradable solid waste, harmful impact of pollutants etc., both marketers and consumers are becoming increasingly sensitive to the need for switch in to green products and services. While the shift to "green" may appear to be expensive in the short term, it will definitely

prove to be indispensable and advantageous, cost-wise too, in the long run.

Keywords: Green marketing , Global warming , Ecological marketing , Corporate Social Responsibility , Green Marketing Mix, Marketing Audit.

Why Green Marketing?

It is really scary to read these pieces of information as reported in the Times recently: "Air pollution damage to people, crops and wildlife in the US totals tens of billions of dollars each year". "More than 12 other studies in the US, Brazil Europe , Mexico , South Korea and Taiwan have established links between air pollutants and low birth weight premature birth still birth and infant death".

As resources are limited and human wants are unlimited, it is important for the marketers to utilize the resources efficiently without waste as well as to achieve the organization's objective. So green marketing is inevitable.

There is growing interest among the consumers all over the world regarding protection of environment. Worldwide evidence indicates people are concerned about the environment and are changing their behavior. As a result of this, green marketing has emerged which speaks for growing market for sustainable and socially responsible products and services.

History

Green marketing was given prominence in the late 1980s and 1990s after the proceedings of the first workshop on Ecological marketing held in Austin, Texas (US), in 1975. Several books on green marketing began to be published thereafter. According to the Joel makeover (a writer, speaker and strategist on clean technology and green marketing), green marketing faces a lot of challenges because of lack of standards and public consensus to what constitutes "Green". The green marketing has evolved over a period of time. According to Peattie (2001), the evolution of green marketing has three phases.

First phase was termed as "Ecological" green marketing, and during this period all marketing activities were concerned to help environment problems and provide remedies for environmental problems. Second phase was "Environmental" green marketing and the focus shifted on clean technology that involved designing of innovative new products, which take care of pollution and waste issues. Third phase was "Sustainable" green marketing. It came into prominence in the late 1990s and early 2000.

Green marketing is a vital constituent of the holistic marketing concept. It is particularly applicable to businesses that are directly dependent on the physical environment; for example, industries like fishing, processed foods, tourism and adventure sports. Changes in the physical environment may pose a threat to such industries. Many global players in diverse businesses are now successfully implementing green marketing practices.

Why Is Green Marketing Chosen By Most Marketers?

Most of the companies are venturing into green marketing because of the following reasons:

a. Opportunity

In India, around 25% of the consumers prefer environmental-friendly products, and around 28% may be considered healthy conscious. Therefore, green marketers have diverse and fairly sizeable segments to cater to. The Surf Excel detergent which

* Professor of Commerce, Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

saves water and the energy-saving LG consumers durables are examples of green marketing.

We also have green buildings which are efficient in their use of energy, water and construction materials, and which reduce the impact on human health and the environment through better design, construction, operation, maintenance and waste disposal. In India, the green building movement, spearheaded by the Confederation of Indian industry (CII) - Godrej Green business Center, has gained tremendous impetus over the last few years. From 20,000 sq ft in 2003, India's green building footprint is now over 25 million sq ft.

b. Corporate Social Responsibility

Many companies have started realizing that they must behave in an environment-friendly fashion. They believe both in achieving environmental objectives as well as profit related objectives.

The HSBC became the world's first bank to go carbon-neutral last year. Other examples include Coca-Cola, which has invested in various recycling activities. Walt Disney World in Florida, US, has an extensive waste management program and infrastructure in place.

c. Governmental Pressure

Various regulations rare framed by the government to protect consumers and the society at large. The Indian government too has developed a framework of legislations to reduce the production of harmful goods and by products.

These reduce the industry's production and consumers' consumption of harmful goods, including those detrimental to the environment; for example, the ban of plastic bags in Mumbai, prohibition of smoking in public areas, etc.

d. Competitive Pressure

Many companies take up green marketing to maintain their competitive edge. The green marketing initiatives by niche companies such as Body Shop and Green & Black have prompted many mainline competitors to follow suit.

e. Cost Reduction

Reduction of harmful waste may lead to substantial cost savings. Sometimes, many firms develop symbiotic relationship whereby the waste generated by one company is used by another as a cost-effective raw material.

For example, the fly ash generated by thermal power plants, which would otherwise contributed to a gigantic quantum of solid waste, is used to manufacture fly ash bricks for construction purposes.

Countries Ranked According To Their Response Level On Green Marketing

Rank	Countries
1	India
2	UK
3	US
4	Thailand
5	Australia
6	Canada
7	China

source:- google.com

Top 10 Companies That Practicing India Green

01. Suzlon Energy
02. ITC Limited
03. Tata Metaliks Limited (TML)
04. Tamil Nadu Newsprint and Papers Limited (TNPL)
05. Wipro Technologies
06. HCL Technologies
07. Oil and Natural Gas Company (ONGC)
08. IndusInd Bank
09. IDEA Cellular
10. Hero Honda Motors

Green Marketing Mix

Every company has its own favorite marketing mix. Some have 4 P's and some have 7 P's of marketing mix. The 4 P's of green marketing are that of a conventional marketing but the challenge before marketers is to use 4 P's in an innovative manner.

Product

The ecological objectives in planning products are to reduce resource consumption and pollution and to increase conservation of scarce resources (Keller man, 1978).

Price

Price is a critical and important factor of green marketing mix. Most consumers will only be prepared to pay additional value if there is a perception of extra product value. This value may be improved performance, function, design, visual appeal, or taste. Green marketing should take all these facts into consideration while charging a premium price.

Promotion

There are three types of green advertising: -

1. Ads that address a relationship between a product/service and the biophysical environment
2. Those that promote a green lifestyle by highlighting a product or service
3. Ads that present a corporate image of environmental responsibility

Place

The choice of where and when to make a product available will have significant impact on the customers. Very few customers will go out of their way to buy green products.

Benefits Of Green Marketing

Today's consumers are becoming more and more conscious about the environment and are also becoming socially responsible. Therefore, more companies are responsible to consumers' aspirations for environmentally less damaging or neutral products. Many companies want to have an early-mover advantage as they have to eventually move towards becoming green. Some of the advantages of green marketing are,

1. It ensures sustained long-term growth along with profitability.
2. It saves money in the long run, thought initially the cost is more.
3. It helps companies market their products and services keeping the environment aspects in mind. It helps in accessing the new markets and enjoying competitive advantage.
4. Most of the employees also feel proud and responsible to be working for an environmentally responsible company.

Challenges Ahead

1. Green products require renewable and recyclable material, which is costly.
2. Requires a technology, which requires huge investment in R & D.
3. Water treatment technology, which is too costly.
4. Majority of the people are not aware of green products and their uses.
5. Majority of the consumers are not willing to pay a premium for green products.

Paths To Greenness

Green marketing involves focusing on promoting the consumption of green products. Therefore, it becomes the responsibility of the companies to adopt creativity and insight, and be committed to the development of environment-friendly products. This will help the society in the long run. Companies which embark on green marketing should adopt the following principles in their path towards "greenness."

1. Adopt new technology/process or modify existing technology/process so as to reduce environmental impact.
2. Establish a management and control system that will lead to the adherence of stringent environmental safety norms.
3. Using more environment-friendly raw materials at the production stage itself.
4. Explore possibilities of recycling of the used products so that it can be used to offer similar or other benefits with less wastage.

Marketing Strategies For Indian Companies

The marketing strategies for green marketing include: -

1. Marketing Audit (including internal and external situation analysis).
2. Develop a marketing plan outlining strategies with regard to 4 P's.
3. Implement marketing strategies.
4. Plan results evaluation.

Conclusion

Now this is the right time to select "Green Marketing" globally. It will come with drastic change in the world of business if all nations will make strict roles because green marketing is essential to save world from pollution. From the business point of view because a clever marketer is one who not only convinces the consumer, but also involves the consumer in marketing his product. Green marketing should not be considered as just one more approach to marketing, but has to be pursued with much greater vigor, as it has an environmental and social dimension to it. With the threat of global warming looming large, it is extremely important that green marketing becomes the norm rather than an exception or just a fad. Recycling of paper, metals, plastics, etc., in a safe and environmentally harmless manner should become much more systematized and universal. It has to become the general norm to use energy-efficient lamps and other electrical goods.

Marketers also have the responsibility to make the consumers understand the need for and benefits of green products as compared to non-green ones. In green marketing, consumers are willing to pay more to maintain a cleaner and greener environment. Finally, consumers, industrial buyers and suppliers need to pressurize effects on minimize the negative effects on the environment-friendly. Green marketing assumes even more importance and relevance in developing countries like India.

References:-

- www.wikipedia .com and www.google.com
- green marketing in india pavan mishra* & payal sharma**
- green marketing by susan ward, about.com guide
- jacquelyn ottman on www.greenmarketing.com
- green marketing in india- mrs. r. sudha ,coimbatore
- www.greenmarketing.net/stratergic.html
- www.epa.qld.gov.au/sustainable_ industries
- www.chillibreeze.com

Status Of Women And Their Active Role In Building Modern India

Dr. Vimmi Behal * Dr. O.P.Sharma **

Role of women in modern India can be called phenomenal. Women is the magnificient creation of god, a multi faceted personality with the power of benevolence, adjustability, integrity and tolerance. She is companion of man gifted with equal mental faculty a protector and provider, the embodiment of love and affection. The role given to women in a society is a measuring role and true index of its civilization and cultural attainment.

Our women have a great part of play In the progress of our country, as the mental and physical contact of women with life is much more lasting and comprehensive than that of men. For nothing was it said, " The hand that rocks the cradle rules the world ". In the apron string of women is hidden the revolutionary energy , which can establish paradise on this earth - *Dr. Rajendra Prasad*

The transition of women from the past to present is worth mentioning. Woman who once considered to be master in the art of home making are now considered to be the forces that shape a country with the dawn of freedom, particularly during India's national struggle, the position of women took a turn for the better. Mahatma Gandhi, Dr. Rajendra Prasad began to think deeply about the urgent need of women's emancipation. They realized that so long as women of the country were not uplifted and granted quall status with men in all walks of life - political, social, economic, domestic educational, India could neither progress nor make any significant advance in any field .

Indira Gandhi, our late minister was held in high esteem the world over. Vijaya lakshimi Pandit created a record by becoming the first women of the united Nations General assembly. In the modern age, we find the role of women in every filed. The myth that certain fields were only meant for men has been demolished by women. Women have proved to be more Vibrant dynamic, sincere and perfect in every field . They have the ability to immerse themselves wholly in any task they undertake.

Modern women in the present age occupy top rank and attain immense success in all the field such as sports, politics, performing arts, police, administration, medicine and etc. Mother Teresa, P T Usha, Ms Subbulakshmi, Kiran Bedi, Dr. Padmavati, Sushma Swaraj, the great environmentalist and activist, have become great names in different fields of their work. Now with the encouragement of co-education, women have cast off the age old inferiority complex and are marching side by side with men in every walk of life. Women are actually proving to academically better and socially more active. When we come across the results of competitive examinations in all India civil services and Indian Universities we are happily surprised to note that women capture most of the merit seats. They are making sustained efforts to scale the leaders of social progress by dint of this zeal and dynamism. They are contributing extensively towards the social transformation and building of the nation.

Women writers like Mahashweta Devi, Pratibh Roy, Arundati Roy have established in the modern literary world and contributed to the Literacy excellence of the nation. It is heartening to know that today we have in India the educated women who are very keen on taking up administration work. In the field of healthcare also women as doctors and nurses can give a healing touch to patients. It has been found that women on account of their tender hearts are better nurses and due to their naturally delicate and soft hands they are better doctors. Therefore it can be said, **" A woman Voice is cure and her touch in balm."**

Even in the area of family planning women can render admirable service of explaining to the village women the importance of family planning by taking into them confidence and can guide them be creating awareness about different methods of birth control. If all educated women accept the challenge of time and make up their mind to serve the nation in checking the population growth.

Really women are less selfish and more dedicated to duty and have much patience them by nature. We must Liberate Indian women of many social taboos, mere legislation cannot empancipate the lot of our women. This needs a radical change in our mental make up our and our social structure. In order to give them more scope of participation in the economic growth of the country, the government has

*** Prof. ** H.O.D. Govt. College, Kalapipal (M.P.) INDIA**

implemented major program like Mahila Samridhi Yojana , Women's developemtn corporation etc.

According to Rabindranath Tagore , **" Women is god's best creation"** she adds beauty and charm to every aspect of life.

Modern women have risen far above the domestic drudgery. They are educated and aware enough to deal with any situation competently. It reminds one of **Lord Byron**, who said, **" There is a tide in the affairs of women God knows nowhere ".**

As a result of the efforts of Gandhiji, the position of women has changed and they are gradually emerging as a force in social, cultural as well as political fields of our country. The talent , patience inner strength , power of tolerance, insight, efficiency of a responsible and good women helps in the governance of the country and its overall progress.

Ralph Waldo Emerson says, **" A sufficient measures of civilization is the influence of good women''. Victor Hugo once said , " Men have sight, women insight".** Women runs to extremes, takes advanced measures of the progress of the country with their power of mental strength and extraordinary talent .

Despite hurdles like male indifference towards them, women have proved their worth as teachers, administrators , officers, entrepreneurs, doctors, nurse and almost in all the spheres of activity contributing to social transformation and nation building.

'Mother Day' is a real tribute to women who shaped generation after generation . It is high time we enact the legislation for reservation for women in parliament. Women have proved their credentials in Panchyats and municipalities.

References :-

1. Human development report United Nations development programme 2013.
2. Women in history (National resource centre for women) 24 Dec. 2006.
3. Kumar radha (1993) The history of doing an account of women's right and feminism in India.
4. A.K.Shiva Kumar(2001) women in India How free ? How equal .

****

Environmental Planning: An Overview

Praneeta Ojha *

A successful city cannot operate efficiently in isolation from its environment. It must balance social, economic and environmental needs. A successful city must offer investors security, infrastructure and efficiency, and should also put the needs of its citizens at the forefront of all its planning activities. Poor urban planning and management can have grave results for the economy, the environment and society. Poorly managed settlements will be unable to keep pace with expansion, and subserviced slums will proliferate, bringing with them poor health, poverty, social unrest and economic inefficiency. Environmental hazards are responsible for the most common causes of ill-health and mortality among the urban poor. Over the years, together with a spreading of environmental consciousness, there has been a change in the traditionally-held perception that there is a trade-off between environmental quality and economic growth as people have come to believe that the two are necessarily complementary. The current focus on environment is not new- environmental considerations have been an integral part of the Indian culture. The need for conservation and sustainable use of natural resources has been expressed in Indian scriptures, more than three thousand years old and is reflected in the constitutional, legislative and policy framework as also in the international commitments of the country. Environmental activities can be targeted at different levels. Cities can also use different instruments to integrate the environment into urban planning and management approaches: policy instruments, process instruments, planning instruments and management instruments. Even before India's independence in 1947, several environmental legislation existed but the real impetus for bringing about a well-developed framework came only after the UN Conference on the Human Environment. A policy framework has also been developed to complement the legislative provisions. The Policy Statement for Abatement of Pollution and the National Conservation Strategy and Policy Statement on Environment and Development were brought out by the MoEF. The success of environmental control measure can only be understood by proper monitoring of the environmental parameters.

The State's responsibility with regard to environmental protection has been laid down under Article 48-A of our Constitution, which reads as follows: "The State shall endeavour to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wildlife of the country". Environmental protection is a fundamental duty of every citizen of this country under Article 51-A(g) of our Constitution which reads as follows: "It shall be the duty of every citizen of India to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wildlife and to have compassion for living creatures."

Guiding Principles for Environmental Planning

1. During reconstruction, there are two principal environmental concerns: restoring damage to the environment from a disaster and minimizing the environmental impact of the reconstruction process itself.
2. Site planning in new settlements should be governed by ecological concerns.
3. Construction methods, building designs, and choice of materials all have an environmental impact; they should be based on local practices while being eco-friendly.
4. Disaster debris is a valuable resource that should be reused during reconstruction whenever possible. However, materials that can be harmful to workers or the environment, such as asbestos or toxic substances, must be managed carefully.

There are several planning tools and techniques that can be encouraged on a county-wide or watershed scale for reducing impervious area and soil loss due to erosion and hence, protecting sensitive open space associated with site development. Four environmental planning approaches: comprehensive planning, local integrative ordinances, preserving open space, and minimizing land disturbances, provide a variety of source control alternatives to traditional forms of costly treatment mitigation. A fifth planning approach, performance criteria, provides a flexible mechanism to encourage the use of general goals when considering site specific conditions. The chosen tool and/ or technique will differ greatly among communities based on their given circumstances.

Community participation is absolutely critical at each stage of environmental planning and assessment. Public hearings, held to inform the community of environmental assessments and planned actions, can bring together all stakeholders, including project proponents, environmental agencies, NGOs, citizens, and project-affected persons. Lack of basic infrastructure such as water, sanitation, and waste

*** Research Scholar, Jivaji University, Gwalior (M.P.) INDIA**

management can cause serious environmental and environmental health problems and can lead to low occupancy rates of new and reconstructed housing. Sphere standards, which establish minimum health, sanitation, water supply, and housing standards for humanitarian operations, can be useful as a frame of reference in reconstruction.

Important Laws regarding environment are -

1. The Electricity Act, 2003
2. The Forest (Conservation) Act, 1980
3. Environmental (Protection) Act, 1986
4. Air (Prevention And Control Of Pollution) Act 1981
5. Water (Prevention & Control) Act 1974
6. Wildlife Protection Act, 1972
7. The Biological Diversity Act, 2002hazardous Wastes (Management And Handling) Amendment Rules, 2003
8. Ozone Depleting Substances (Regulation And Control) Rules, 2000

Challenges in Environmental Planning

Ignoring environmental issues in any phase of reconstruction and not involving environmental experts in decision making at the policy and programmatic level. Delays in conducting the environmental assessment increase environmental risks created by the disaster. Dangerous or hazardous rubble and debris (such as toxic or ignitable substances, asbestos, explosives, collapsing buildings) are not handled with caution, with negative effects on communities and the environment Damage to infrastructure leads to secondary impacts like fire and floods before problems are identified and addressed. Political and institutional factors, rather than community and environmental priorities, drive site-selection decisions. Poor planning permanently destroys environmental assets, such as endangered habitats, coastal sand dunes, and mangroves. Infrastructure and site development negatively affect groundwater quality and quantity. Social and cultural assets are destroyed because of ad hoc development planning. Community participation in environmental decision making is downplayed because of political and commercial interests. Local building practices are combined in an unsafe way with practices promoted by external actors. Commercial interests influence material and technology selection, with negative ramifications on the environment and community.

Recommendation and Conclusion

Include government staff and consultants in the environmental assessment teams so that they acquire firsthand knowledge of environmental issues in the affected area and can identify how incentives for environmentally sustainable reconstruction can be incorporated in the reconstruction policy. Identify the legal framework for environmental management to be applied in reconstruction early on, how it will be implemented and by whom, and how it will be monitored and evaluated. Mobilize the post-disaster debris management effort immediately after the disaster, carrying out a rapid planning exercise if a debris management plan was not in place before the disaster. Ensure that the environmental requirements for reconstruction are effectively and continually communicated to all agencies participating in the reconstruction program. In developing the reconstruction policy, government, UN shelter cluster partners, and environmental organizations should work together to minimize the environmental impact and maximize the local sustainability of the building materials and practices to be used. Use the environmental review process to evaluate the ecological footprint of a relocation site or in-situ reconstruction project and to select the site, develop mitigation measures for the project and its construction, and adjust project parameters.

Many communities have been dealing with the challenges of balancing the need to protect the environment and quality of life with economic growth and development. In some areas of the state, more intense land development activities have made it necessary to consider alternative ways to promote the protection of natural treatment functions, surface flow pathways and absorbing capacities of the environment. The two key concepts underlying the planning tools and techniques presented in this publication revolve around promoting the reduction of imperviousness and minimizing necessary disturbances associated with land development. By linking land use and water quality together through comprehensive and integrated local planning, communities can create opportunity for balancing the "best of both worlds." Environmental planning at both the watershed and site scale provides a way to integrate local development initiatives with the protection of sensitive open spaces and the other multiple benefits provided to communities by this common theme.

References

1. www. web.mit.edu/dusp.com
2. www.tandfonline.com/loi
3. www.arch.virginia.edu
4. Times of India
5. Environmental Land Use Planning and Management - John Randolph

****

FDI In Retail Is A Boom For India

Dr. Vimmi Behal * Dr. Anil Shivani **

Foreign direct investment refers to foreign capital that is invested to enhance the production capacity of the economy. However, FDI in retail is different from the investment in corporate, manufacturing or infrastructure sectors. Retail can be single or multi brand and may be described as a sale to the ultimate consumer at a margin of profit.

While the FDI in single brand retailing was allowed earlier, FDI in multi brand retailing is being allowed now. These means a retail store with foreign direct investment can sell multiple brands under one roof.

The Indian retail sector is highly fragmented with around 97% of its business being run by unorganized retailers. With the entry of FDI, the retails sector will become organized. Foreign investment in food based retailing would ensure adequate flow of capital into the country and its productive use.

FDI will promote welfare of farmers by agriculture growth and thereby increasing their income level. Indian farmers at present , realize on 1/3rd of the final price paid by the consumer as against 2/3rd realized by farmers in the countries with a greater share of organized retail. FDI will assist in reducing the dominance of value chain by intermediaries.

FDI in retail will make the consumer happy as well. In the absence of intermediaries, the consumer will end up paying lower prices for a better product. In the unorganized sector , consumer has to argue and fight a lot in case he has to return some faulty product to the retailer. This process will be standardized.

Allowing FDI in multi-brand retail will bring about supply chain improvement, investment in technology, manpower and skill development , upgrade in the agricultural sector and benefits to the government through greater GDP and tax income . The organized sector will also lay stress on producing more and will generate more employment in production as well as retail industry.

Advantages :-

1. This will bring modern technology to the country & more option for the consumer.
2. Improves rural infrastructure. It would help build infrastructure and create a competitive market.
3. Enable our farmers to get better prices for their crops.
4. More investments in the end supply chain for the foreign multi-brand retailers , entering India later would be a significant disadvanges and they would try and introduce a lot of innovations, they would invest heavily into an do end supply chains including world class cold storage faculties.
5. Low spillage and wastage - In India the supply chain is considered highly inefficient due to the huge wastage during the transportation. The global world class retailers would introduce quality standards that are second to none and would lead to more farm produce reaching the end consumable condition.

Disadvantages :-

1. **Our interest rates today** are as high as 14 to 16 %how do we compete with the economies which have a 4% **interest rate.**
2. **Existence of Indian biggies :-** already multiple Indian corporate are well entrenched in to the Indian market with their organized multi- brand retail offerings. Under this situation is an FDI influx truly required ? That is one of the biggest questions that are being asked.
3. **Little incremental value: -** The cities of the move say that India as a country requires different fundamentals to survive and deliver value to the consumer. The last mile delivery of a lot of goods happen to the consumer in India and not the oter way round thus far in a lot of cases.
4. **Will prices reduce for consumers: -** not at all will there is a net gain for consumers in term of price saving ? Not at all. Not even the biggest supporters of FDI in retail claim that the consumer will spend less from his/her pocket due to this FDI in retail influx.

Conclusion :- Government is taking this decision in good faith. Few persons and lobbies controlling the rates of food commodities in India. And bringing more competition in market will bring better prices for buyers as well as seller for commodities. Parties protesting against FDI's in retail have choice to not allow. FDI's in the state they should make a regulatory body for the commodity trade as we have for cellular services.

Bibliography :-

Websites :-

1. www.cci.in
2. www.rbi.org.in
3. www.retailguru.com

*** Prof. ** H.O.D., Atal Behari Vajpaye Hindi University, Bhopal (M.P.) INDIA**

बुरहानपुर जिले में पर्यटन एवं कृषि की सम्भावनाओं का अध्ययन

डॉ. हेमसिंह मण्डलोई *

समृद्ध सांस्कृतिक विरासत वाला शहर बुरहानपुर 15 अगस्त 2003 को पूर्व निमाड़ जिला खण्डवा से पृथक होकर स्वतंत्र रूप से बुरहानपुर, नेपानगर व खकनार तहसील को मिलाकर जिले के रूप में अस्तित्व में आया। दक्षिण के द्वार के रूप में बुरहानपुर का सामरिक महत्व तो हमेशा से ही रहा। दाउदी बोहरा समाज के लिए बुरहानपुर एक महत्वपूर्ण तीर्थ है। जहाँ दरगाह-ए-हकीमी में दुनिया भर से लाखों की तादाद में लोग अपनी श्रद्धा लेकर आते है। बुरहानपुर कई मायनों में भी खण्डवा से काफी आगे रहा है। इस शहर की आबादी खण्डवा से ड्योढ़ी तो है ही, राजस्व के मामले में भी यह खण्डवा से कहीं आगे है।बुरहानपुर जिले का केला व गन्ना न केवल प्रदेश में बल्कि विदेशों में भी अपनी अलग पहचान रखता है।

किसी क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति वह नींव है जिससे उस क्षेत्र के आर्थिक विकास का महल खड़ा किया जा सकता है 15 अगस्त 2003 को अस्तित्व में आया बुरहानपुर जिला म.प्र. का एक नवगठित जिला है। मध्य प्रदेश का बुरहानपुर जिला पश्चिम पठार एवं पहाडी अपकृषि जलवायु क्षेत्र में स्थित है, जो निमाड़ पठार के क्षेत्रीय जलवायु मंडल के अंतर्गत आता है जिसकी स्थिति 21.12 से 21.35 उत्तरी अक्षांश एवं 75.48 पूर्वी देशांतर के मध्य है।जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 3427 वर्ग कि.मी. है बुरहानपुर जिला तीन तहसील व दो विकासखण्ड में बॅटा है। जिले के कुल ग्रामों की संख्या 262 है तहसीलों में बुरहानपुर, नेपानगर व खकनार है इनमें सबसे बड़ी तहसील बुरहानपुर है व विकासखण्डों में खकनार व बुरहानपुर है जिसमें बुरहानपुर विकास खण्ड खकनार विकास खण्ड से बड़ी है। जिले के पूर्व में खण्डवा पश्चिम व दक्षिण में पड़ोसी राज्य महाराष्ट्र के जिले लगे हुए है व उत्तर में खरगोन जिले की सीमाओं से घिरा हुआ है।

बुरहानपुर का इतिहास -

निमाड़ क्षेत्र, मध्यप्रदेश की प्राचीनतम संस्कृति और सभ्यता का केन्द्र स्थल रहा है, निमाड़ का नाम लेते ही, उस भू-भाग का स्मरण हो आता है जिसकें हृदय में नर्मदा रूचि अमृत सरिता, सूर्य पुत्री ताप्ती प्रवाहित होती है। जहाँ विध्यांचल और सतपुड़ा सजग प्रहरी से जिसकी रखवाली में तत्पर है। सम्पूर्ण निमाड़ का इतिहास महाभारत, श्री कृष्ण, अश्वस्थामा, खरदूषण, दण्डकारण्य, सातवाहन, कनिष्ठ, अमीरों, हर्ष, चालुक्य, भोज, होल्कर, मुगलों, ब्रिटिश शासकों के इतिहास के साथ जुड़ा है।

निमाड़ की क्षेत्र सीमा समय-समय पर घटती बढ़ती रही है कभी यह प्रांत निमाड़ कहलाता था जिसके अन्तर्गत नर्मदा घाटी का बहुत सा हिस्सा था। सन् 1872 में पेशवाओं ने इसे होल्कर, सिंधियॉ व पवार राजाओं में बांट दिया। किन्तु अंग्रेजों की तरफ प्रभुसत्ता बढ़ने पर अंग्रेजों ने इसे उक्त तीनों मराठा शासकों से छिनकर अपने अधिकार में ले लिया। क्षेत्रफल की कॅाट-छाट हुई और नाम भी परिवर्तन किया गया। अंग्रेजों ने प्रांत निमाड़ से प्रांत हटाकर जिला निमाड़ कर दिया। सन् 1864 में जिले का मुख्यालय मण्डलेश्वर से खण्डवा अंतरित किया गया इस प्रकार खण्डवा जिले का गठन हुआ।

शोध का उद्देश्य -

15 अगस्त 2003 को अस्तित्व में आये नवगठित जिला बुरहानपुर में जो विकास की अपार सम्भावनाएँ भविष्य के गर्भ में छिपी हुई है उन पर प्रकाश डालना है संक्षेप में शोध के उद्देश्य निम्नानुसार है :-

1. बुरहानपुर जिले में कृषि व्यवसाय की स्थिति स्पष्ट करना और पर्यटन की सम्भावनाओं को विशिष्ट रूप से रेखांकित करना।
2. जिले में कृषि के विकास में जो महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है, उसकी जानकारी प्राप्त करना।
3. पर्यटन को बढावा देने हेतु जो प्रयास किये जा रहे है उससे जिले के पर्यटन स्थल अपनी पहचान अन्य पर्यटन स्थलों के समान बना पा रहे है का पता लगाना।

शोध का क्षेत्र एवं सीमाएं :-

मेरे शोध प्रबंध का क्षेत्र बुरहानपुर जिले में कृषि एवं पर्यटन की सम्भावनाओं को तलाश करने तक सीमित रखा है। मैंने बुरहानपुर जिले की कृषि एवं पर्यटन के क्षेत्र में जो कठिनाईयों है उन कठिनाईयों को दूर करने के प्रयास एवं सुझाव तक अपने अध्ययन के क्षेत्र को सीमित रखा है।

बुरहानपुर के पर्यटन स्थल :-

बुरहानपुर जिले के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखे तो मुगल शासकों ने इसे काफी महत्व दिया। दक्षिण के द्वार के रूप में बुरहानपुर का सामरिक महत्व हमेशा रहा। इसी वजह से बुरहानपुर को मुगलों ने काफी विकसित किया। यहाँ की ऐतिहासिक धरोहरें इसी बात का प्रमाण है कि मुगल शासन में यह काफी समृद्ध शहर था। धार्मिक दृष्टि से भी बुरहानपुर अनेक धर्मो के लिए काफी महत्वपूर्ण रहा है। दाउदी बोहरा समाज के लिए बुरहानपुर एक महत्वपूर्ण तीर्थ है। जहाँ दरगाह-ए-हकीमी में दुनिया भर से लाखों की तादाद में लोग अपनी श्रद्धा लेकर आते है। गुरू गोविंदसिंह जी ने तो बुरहानपुर में काफी लम्बे समय तक रहकर यहाँ स्वयं अपने हाथो लिखी स्वर्णाक्षरों से गुरूग्रंथ साहिब स्थानीय गुरूद्धारें को सौपी थी, जो बुरहानपुर के लिए इतिहास की एक अनमोल धरोहर के रूप में आज भी सुरक्षित है।

मुस्लिम शासकों ने न केवल इसे सैन्य नगरी के रूप में विकसित किया, बल्कि 600 वर्ष पुरानी शाही मस्जिद के रूप में ऐसी धरोहर दी है कि संप्रदाय और भाषा वाद के झगड़ों के बीच यह ऐसी मस्जिद है। जिसके निर्माण की जानकारी यहाँ खुदे हुए पत्थरों में फारसी के साथ संस्कृत में भी मिलती है। जैन धर्मावलंबियों के लिए भी बुरहानपुर महत्वपूर्ण रहा है। यहाँ किसी समय जैन धर्म तेजी से विस्तारित हुआ था। यह प्रमाण यहाँ की ऐतिहासिक मूर्तियां देती है। कबीर पंथ यहाँ आज भी जिन्दा है कबीर के नाम पर यहाँ एक आश्रम आज भी कबीर की शिक्षा को प्रसारित कर रहा है।

खूनी भंडारा के रूप में अब्दुल रहीम खानखाना ने सन् 1640 में एक ऐसी जीवंत धरोहर बुरहानपुर को सौपी, जो आज भी इस शहर का कंठ तर किए हुए है। भूमिगत जल प्रबंध प्रणाली का यह दुनिया में अद्वितीय नमूना है। ऐसी अनेक ऐतिहासिक धरोहरें बुरहानपुर में मौजूद है जो पर्यटन की सम्भावनाओं को स्पष्ट रूप से रेखांकित करती है।

बुरहानपुर का कृषि परिचय -

प्रदेश के अन्य जिलों के समान बुरहानपुर जिला भी कृषि प्रधान है। बुरहानपुर कई मायनों में अपने पड़ोसी जिला खण्डवा से काफी आगे रहा है। इस शहर की आबादी खण्डवा से ड्योढ़ी तो है ही, राजस्व के मामले में भी यह

* सहा.प्राध्यापक (वाणिज्य), महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

खण्डवा से कहीं आगे है। कृषि क्षेत्र में भी इस क्षेत्र ने खण्डवा की तुलना में काफी समृद्धि पायी है पावरलूम उद्योग के साथ ही अन्य उद्योगों में भी बुरहानपुर खण्डवा पर भारी रहा है। कपास के कारोबार में सेंधवा के बाद बुरहानपुर में मध्यप्रदेश की दूसरी सबसे बड़ी मंडी है। केला, कपास, गन्ना जैसी नगदी फसलों के कारण बुरहानपुर मंडी ने इतना राजस्व बटौरा है कि यह मध्यप्रदेश की सर्वाधिक महत्वपूर्ण मंडियों में शुमार है।

जिले की आर्थिकी मुख्यत: कृषि पर निर्भर है जिले के कुल कार्यशील जनसंख्या में 60 प्रतिशत कृषि पर निर्भर है, यहाँ की मुख्य फसलें केला, गन्ना, कपास है। जिले की कृषि को मुख्यत: खरीफ व रबी की फसलों में विभाजित किया जा सकता है। जिले की ज्यादातर कृषि खरीफ फसलों पर ही निर्भर है खरीफ की फसल में मुख्यत: कपास, ज्वार, दाले सोयाबीन, मक्का, बोया जाता है जिले की आर्थिकी मुख्यत: केले पर निर्भर है। केला करीब 2000 हेक्टेयर क्षेत्र में, 8000 हेक्टेयर क्षेत्र में गन्ना बोया जाता है। जिले में 41,772 हेक्टेयर सिंचित क्षेत्र है जो कुल का 36 प्रतिशत है तथा रबी की फसलें द्विफसल करीब 13,397 हेक्टेयर में ली जाती है। (देखिए तालिका 1)

निष्कर्ष –

इस प्रकार म.प्र.के बुरहानपुर जिले में पर्यटन एवं कृषि की अपार सम्भावनाएं है यहाँ पर बने असीरगढ़ का किला, खूनी भंडारा व दरगाह-ए-हाकीमी व अन्य ऐसी अनेक ऐतिहासिक धरोहरें है जिन्हें देखने के लिए न केवल देश के अनेक राज्यों से बल्कि विदेशों से भी लाखों की तादाद में वर्ष भर देशी-विदेशी पर्यटकों का आना जाना लगा ही रहता है।जिले की बहुत सी ऐसी ऐतिहासिक धरोधरें है जो उचित प्रचार-प्रसार एवम् देखभाल के अभाव में खंडरों में तब्दील होने के कगार पर है जिनका उचित प्रचार प्रसार करना आवश्यक है एवं जो धरोहरे बुरहानपुर को विरासत के रूप में मिली है उनका ठीक प्रकार से रखरखाव कर इन्हें पर्यटन हेतु संरक्षित किया जावें।

कृषि के क्षेत्र में भी जिले के कृषकों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। यहाँ पैदा होने वाला केला राज्य व देश में तो प्रसिद्ध है ही निर्यात के क्षेत्र में भी अपनी महत्वपूर्ण स्थिति दर्ज करा रहा है।यदि जिले के कृषकों को सही समय पर आर्थिक सहायता , सब्सिडी तथा भण्डारण की उचित व्यवस्था मिल जाये तो बुरहानपुर कृषि के क्षेत्र में भी देश के मानचित्र पर अपनी एक अलग पहचान छोड़ सके।

संदर्भ सूची –

1. ग्रामीण एवं भारतीय अर्थव्यवस्था,लेखक-श्री सुबहसिंह यादव
2. भारतीय अर्थव्यवस्था, लेखक डॉ.हरीष प्रधान डॉ. जी एल जैन,प्रकाशक-संदीप शिक्षा साहित्य इन्दौर
3. मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास,लेखक-राव एवं कोजवार
4. कृषि प्रदीपीका, लेखक-नारायण दुलीचंद व्यास

पत्र पत्रिकाऐं –

1. सामान्य अध्ययन 2.प्रतियोगिता दर्पण 3.प्रतियोगिता निर्देषिका 4.दैनिक भास्कर की कृषि भास्कर व माइलस्टोनस् बुरहानपुर पत्रिका

अन्य– www.mpinfo.ac.in भास्कर,नई दुनियॉ, राज एक्सप्रेस, इकोनोमिक्स टाईम्स,आर्थिक जगत आदि।

तालिका क्रमांक-1

खरीफ व रबी की फसलों के अंतर्गत क्षेत्र (हेक्टेयर में)

खरीफ			रबी		
वर्ष	खाद्य	अखाद्य	वर्ष	खाद्य	अखाद्य
1999-2000*	165957	269472	112769	3002	551200
2000-01	147127	287496	37507	239	472369
01-02	149684	284828	68632	434	503578
02-03	134073	295931	84773	443	515220
03-04**	48179	54802	13635	154	116770
04-05	42637	60514	14141	90	173882
05-06	43102	60683	14057	37	117879

** बुरहानपुर जिला गठन के पूर्व के समंक* बुरहानपुर जिला गठन के बाद के समंक*

स्त्रोत- 1. जिला सांख्यिकी भू अभिलेख कार्यालय खण्डवा 2.सहायक अधिक्षक भू अभिलेख कार्यालय बुरहानपुर।

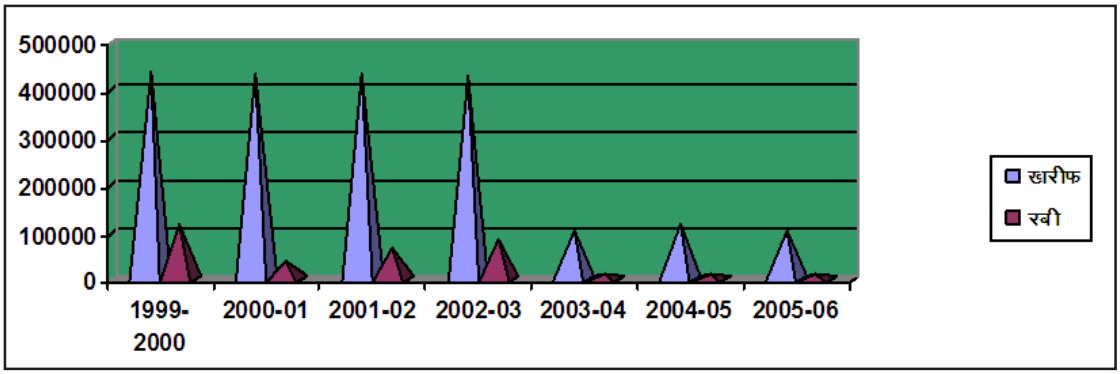

1. 1999-2000 से 2002-2003 तक बुरहानपुर जिला गठन के पूर्व के समंक।

2. 2003-04 से 2005-06 तक बुरहानपुर जिला गठन के पश्चात् के समंक।

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण - एक विश्लेषण

डॉ. सपना सोनी *

प्रस्तावना – महिला सशक्तिकरण अपने आप में एक व्यापक अवधारणा है। सशक्तिकरण का अर्थ पुरूष की बराबरी करना न होकर, समाज में नारी को सशक्त करना है। महिला सशक्तिकरण आन्दोलन, बीसवीं शताब्दी के आखरी दशक का एक महत्वपूर्ण राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक विकास कहा जा सकता है। महिलाएँ हमारे देश की आबादी का लगभग आधा हिस्सा है, इसलिए राष्ट्र-विकास के महान कार्य में महिलाओं की भूमिका तथा योगदान को पूरी तरह सही परिप्रेक्ष्य में रखकर ही राष्ट्र निर्माण के कार्य को समझा जा सकता है। स्वतन्त्रता के बाद से ही महिलाओं का विकास हमारी आयोजन प्रणाली का हिस्सा रहा है।

इस सम्बन्ध में पिछले चालीस वर्षो में कई नीतिगत बदलाव आए है। 1970 के दशक में जहाँ ''महिला कल्याण'' की अवधारणा अपनाई गई, वही 1980 के दशक में ''महिला विकास'' पर बल दिया गया। 1990 से ''महिला सशक्तिकरण'' पर जोर दिया जाने लगा। इन सभी के पीछे यही भावना रही कि ऐसे प्रयास किए जाऐं, जिससे प्राचीन वैदिक काल के पश्चात् से नारी की सामाजिक स्थिति में आई गिरावट को दूर कर उन्हें समाज में बराबरी का स्थान मिल सके व महिलाएँ शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो, उनकी शोषण व दासता से मुक्ति हो तथा उन्हें वैधानिक एवं राजनैतिक अधिकारों में बराबरी प्राप्त हो। 12 दशक पूर्व ही स्वामी विवेकानंद ने विश्वमंच पर कहा था कि ''औरतों की स्थिति में सुधार लाए बिना कल्याण असंभव है। जैसे कि एक पंख से उड़ान भरना''

इसी कल्याण मूलक भावना के साथ राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव 1975 की संयुक्त राष्ट्र संघ की घोषणा के बाद आया। अब यही भावना समय के साथ बदलकर विकास मूलक हो गई है। सन् 1984 में भारत सरकार ने पृथक महिला-विभाग की स्थापना की जिसमें स्वास्थ्य शिक्षा और रोजगार जैसी प्राथमिकताऐं रखी गई थी। अगले ही वर्ष महिला सशक्तिकरण पर चर्चा नैरोबी में सम्पन्न हुई। संयुक्त राष्ट्र सभा के बाद इस कार्य ने सन् 1985 में गति पकड़ी और 1993 में 73 वा 74 वाँ संविधान संशोधन विधेयक पारित कर महिलाओं को पंचायतों तथा नगर निकायों में एक तिहाई 33 प्रतिशत स्थान आरक्षण कर राजनैतिक सत्ता में उनकी भागीदारी सुनिश्चित कर दी गई।

उस समय तक भारतीय संविधान में महिला व पुरूष को समान दर्जा और अधिकार दिये जाने के बावजूद भी इस तत्थ से इनकार नहीं किया जा सकता था कि विकास और समाजिक स्तर की दृष्टि से महिलाएँ अभी भी पुरूषों से काफी पीछे थी। विकास के अधिकतर क्षेत्रों में महिला व पुरूषों की स्थिति में भारी अन्तर मौजूद था। इसी अन्तर को कम करने के लिए चिन्तन स्वरूप हर वर्ष आठ मार्च का अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाना सुनिश्चित किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2000 को महिला वर्ष घोषित किया। परन्तु भारत ने इसे और अधिक आर्थिक महत्व देते हुए 2001 को राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया, इसी वर्ष ''राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति'' 2001 बनाई जिसकी चर्चा के बाद ही इसके क्रियान्वयन की बात करना सही होगा। इस नीति में महिलाओं के उत्थान और समुचित विकासार्थ आधारभूत निम्न व्यवस्थाएँ निर्धारित की गई।

(1) देश में महिलाओं की शिक्षा,रोजगार,स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा में सहभागिता निश्चित करना।
(2) महिलाओं हेतु ऐसा वातावरण निर्मित करना कि वे अनुभव करे कि वे स्वयं सामाजिक और आर्थिक नीतियाँ बना सकती है।
(3) किसी भी प्रकार के भेदभाव को दूर करने हेतु समुचित कानून तथा सामुदायिक प्रक्रिया विकसित करना।
(4) इन्हें मानवधिकारों के उपयोग में सक्षम बनाना।
(5) सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन हेतु महिलाओं पुरूषों को समाज मे समान भागीदारी निभाने हेतु प्रोत्साहित करना।
(6) बालिकाओं एवं महिलाओं के प्रति विविध अपराध के रूप में व्याप्त असमानताओं को खत्म करना।

उपर्युक्त बिन्दुओं से सम्बन्धित आवश्यक कानूनों के निर्माण के साथ देश-भर में पूरी तरह से लागू करने हेतु 10 साल की समय-सीमा रखी गई।

महिला सशक्तिकरण के लिए किए गए शासकीय प्रयास – महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए समय समय पर ऐसी अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया, जिससे ग्रामीण महिलाओं का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित किया जा सके। प्रथम एवं द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास के लक्ष्य (सभी का समान रूप से विकास) में पंचायत राज के माध्यम से महिला की भागीदारी अप्रत्यक्ष रूप से सुनिश्चित की गई। वही प्रत्यक्ष भागीदारी की सुनिश्चितता की दृष्टि से आर्थिक स्वावलंबन हेतु ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं के लिए ''डवाकरा'', स्वर्णजयंती ग्राम रोजगार योजना, जवाहर रोजगार योजना नि:शुल्क आवास स्वामित्व हेतु इन्दिरा विकास योजना, राष्ट्रीय महिला कोष राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम, राष्ट्रीय वृद्ध पेन्शन योजना, राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना, परिवार नियोजन सहायता कार्यक्रम, न्यूनतम मजदूरी कानून 1948, बालिका अनिवार्य शिक्षा एवं कल्याण विधेयक 2002, वेश्यावृत्ति निवारण एक्ट 1986, प्रसुति लाभ एक्ट 1961, अश्लील चित्रण एक्ट 1986, महिला समृद्धि योजना, बाल-जीविता एवं सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम,पोषकीय रक्ताल्पता एवं विटामिन्स कार्यक्रम, शिक्षा-विकास हेतु संस्थाओं में प्रवेश हेतु महिला सीट का आरक्षण, विभिन्न छात्रवृत्ति वितरण योजना, पिछड़ावर्ग, अनुसूचित जाति- जनजाति महिला-छात्रावास, महिला वोकेशनल प्रशिक्षण कार्यक्रम, महिला औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना, कार्यकारी महिला हेतु छात्रावास, प्रौढ़ महिलाओं हेतु पाठयक्रम, प्रशिक्षण एवं रोजगार हेतु कार्यक्रम का क्रियान्वयन कर उनका सामाजिक आर्थिक, शैक्षिक मार्ग प्रशस्त किया वही राजनैतिक दृष्टि से समानता और उन्नति हेतु पंचायत, नगरनिकायों, में 33 से 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित हुई।

इसी क्षेत्र में एक ओर कदम 84 वाँ महिला प्रस्तावित संशोधन विधेयक जिसमें सर्वोच्च निकाय संसद ने महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण होना प्रक्रियाधीन है। दूसरी और महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों के लिए परित्यक्ता व तलाकशुदा महिला गुजारा भत्ता कानून 1946, सम्पति-

* प्राध्यापक-वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी, जिला बड़वानी (म.प्र.) भारत

अधिकार कानून 1937, दहेज निरोधक अधिनियम 1961, हिन्दु उतराधिकार अधिनियम 1956, भारतीय दण्ड संहिता 1872 में गर्भपात सम्बन्धी प्रावधान धारा 313, अपराधिक बल प्रयोग धारा 354, विभिन्न उद्देश्यों से की गई हिंसा सम्बंधी धारा प्रावधान दण्ड प्रावधान 359-366 तक, वैश्यावृत्ति हेतु क्रय हेतु दण्ड प्रावधान धारा 373, बलात्कार धारा 375, जैसी विभिन्न दण्डात्मक प्रावधानों को जोडा गया। यहीं नहीं कामकाजी महिलाओं को पुरूष अधिकारी या सहकर्मी द्वारा किये गये यौन शोषण भी व उत्पीड़न से बचाव हेतु भी 1997 में महिला आयोग का गठन, राज्य एवं राष्ट्रीय महिला सेल/ थानों का निर्माण कर महिलाओं को समाज में बराबरी व सम्मान पूर्व दर्जा देने के व्यवहारिक प्रयास किए गये।

शासकीय प्रयासो की सार्थकता – नि:सन्देह सच है कि महिला सशक्तिकरण की दिशा में किए गये प्रयास, एवं विभिन्न नीतियों का निर्माण और क्रियान्वयन महिला जागरूकता व आत्मनिर्भरता की दिशा में उठाये गये सशक्त कदम है। जिसका प्रभाव आज दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों तक देखने को मिल रहा है। शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की वर्तमान स्थिति का आकलन शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार पंचायतीराज, महिला उद्यमिता, सामाजिक समानता आदि से सम्बन्धित निम्न तथ्यात्मक विश्लेषण से लगाया जा सकता है।

(1) शिक्षा – महिला सशक्तिकरण की दिशा में शिक्षा पहला पायदान है। देश में महिलाओं की साक्षरता-दर में बढ़ोत्तरी हुई है। देश में 2011 की जनगणना के आधार पर स्पष्ट है कि 1 अरब 21 करोड कुल जनसंख्या है जिसमें 62 करोड 37 लाख पुरूष, 58 करोड 65 लाख महिलाएँ है। जिसमें पुरूषो में साक्षरता की दर 80.53 तथा महिलाओं में महिला साक्षरता दर 2001 की तुलना में 6 प्रतिशत साक्षरता दर 54.16 से बढ़कर 60.02 प्रतिशत हो गई। यह नगरीय एवं ग्रामीण दोनो ही क्षेत्रों में उन्नत शिक्षा, सतत् शिक्षा, व महिला साक्षरता के सतत् प्रयास का परिणाम है। यहाँ इस सम्बन्ध में यह कहना बिल्कुल उचित होगा कि महिला साक्षरता दर, जनसांख्यिकीय व्यवहार को प्रभावित करती है।

जैसे विभिन्न शोधों से स्पष्ट है कि महिला साक्षरता और प्रजनन क्षमता में नकारात्मक सम्बन्ध पाया जाता है। अर्थात शिक्षित महिलाओं के सन्तुलित या आदर्श परिवार (अधिकतम दो बच्चे) देखने को मिलते है। यही नहीं शिक्षा के क्षेत्र में सर्वशिक्षा अभियान, में (14 वर्ष नि:शुल्क) अनिवार्य शिक्षा अधिनियम लागू होने एवं स्वजागरूक होने से ग्रामीण क्षेत्रों में भी अब बालिकाएँ घरेलु कामकाज, कृषि या अन्य कार्यो के स्थान पर अध्ययन हेतु स्कूलों में जाना पसंद करती है।

तालिका क्र. 01
महिला साक्षरता दर

वर्ष	शहरी	ग्रामीण	कुल साक्षरता
1951	7.90	2.00	8.86
1961	12.90	4.30	15.34
1971	18.70	8.40	21.99
1981	24.82	12.20	29.75
1991	32.40	18.00	39.42
2001	64.60	30.30	54.16
2011	अप्राप्त	अप्राप्त	60.02

स्त्रोत :- विभिन्न जनगणना समंको पर आधारित

(2) स्वास्थ्य पोषण एवं जीवन स्तर – देश में महिला शिक्षा को बढ़ावा मिलने से उनके स्वास्थ्य पोषण एवं जीवन-स्तर दर में भी वृद्धि आई है। आज कि महिलाएँ विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों जैसे टीकाकरण, बाल टीकाकरण, परिवार नियोजन, गर्भनिरोधक प्रयोग, रक्तालपता निवारण हेतु फोलिक अम्ल गोलियॉ, भोजन आहार में फल सब्जीयों दालों की खपत के प्रति जागरूक है। परिणाम स्वरूप प्रजनन दर, शिशु मृत्यु दर, प्रसव दौरान मृत्यु दरों में कमी आई है। शहरी क्षेत्र ही नहीं ग्रामीण क्षेत्रों में भी महिलाएँ बीमारियों से सुरक्षा, सफाई, एवं गम्भीर बीमारियों (एड्स, कैंसर) के प्रति जागरूक है।

(3) रोजगार एवं आत्मनिर्भरता – यह सत्य है कि किसी भी समाज की तस्वीर बदलने में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान होता है। सामाजिक और आर्थिक विकास की दृष्टि से आज अधिकतर महिलाएँ, राष्ट्रीय विकास में मुख्य धारा में अपनी भूमिका निभा रही है। जो निम्न तालिका क्रमांक 2 व 3 से विवेचन से स्पष्ट है।

तालिका क्र. 02
कृषि मजदूरी आधार पर पुरूष महिला श्रमिको की संख्या (प्रतिशत)

वर्ष	1961	1971	1981	1991	2001	2011
महिला	27.7	54.4	47.7	58.2	65.7	78.2
पुरूष	18.1	25.0	24.3	23.1	27.5	30.4

तालिका क्र. 03
कार्य में लगी महिलाएँ

महिलाएँ	ग्रामीण	शहरी
प्रशिक्षित	10.31	30.52
अप्रशिक्षित	89.69	69.48
राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण	100	100

स्त्रोत :- राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण

आज शहरी के साथ साथ ग्रामीण महिलाओं को भी मेहनत और काम के आर्थिक नजरिये से देखा जाने लगा है। उनकी आर्थिक गतिविधियों, प्रशिक्षण, नवविकसित प्रोद्योगिकी व सहज ऋण सुविधा का लाभ उठा ग्रामीण महिलाएँ भी रोजगाररत् हो रही है। खासकर ग्रामीण कुटीर तथा अति लघु उद्योगों के क्षेत्र में चुड़ी वाले हाथ भी आगे बढ़े है। यह भी ग्रामीण महिलाओं के सरलीकरण का एक भाग है। आज समग्र कार्यशील महिला की भागीदारी बढ़ी है। कार्यशील महिलाओं मे से आज 78 प्रतिशत महिलाएँ कृषि क्षेत्र में, 10.9 प्रतिशत महिलाएँ निर्माण एवं खनिज, 3.5 प्रतिशत व्यापार में, 7.6 प्रतिशत महिलाएँ सेवा क्षेत्र से जुडी होकर पूरी दक्षता के साथ अपने दायित्वों का निर्वाहन कर रही है।

(4) राजनैतिक समानता :- बीसवी सदी को महिला जागरण का युग कहा गया है। क्योंकि इसमें स्त्री शिक्षा को बल मिलने से ''महिला आन्दोलन'' संगठनात्मक स्वरूप लेने लगा है। भारत का संविधान भी महिलाओं को मौलिक अधिकारों में समानता एवं समान अवसरों की गारन्टी देता है। इसी कारण आज महिलाएँ भी गृह अर्थव्यवस्था के साथ साथ राजनैतिक के क्षेत्र में भी अपनी सशक्त भूमिका निभा रही है। पंचायतों में 33 प्रतिशत आरक्षण तथा निकायों विधानमण्डल एवं संसद में प्रस्तावित एक तिहाई आरक्षण प्रस्ताव लागू होने से उनकी भागीदारी में और अधिक

सुनिश्चिता स्थापित होगी। आज महिला सरपंचो की संख्या 838245, जिला पंचायत महिला अध्यक्षों की संख्या 4923 के लगभग है। यदि राज्यवार राजनीति में महिलाओं की स्थिति केरल 57.24 प्रतिशत, आंध्रप्रदेश 33.04 प्रतिशत, असम 50.38 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ 32.75 प्रतिशत, गुजरात 49.30 प्रतिशत, कर्नाटक 43.60 प्रतिशत, तमिलनाडु 36.73 प्रतिशत, उतरांचल 37.85 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 35.14 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है। इस तरह महिलाओं की औसतन भागीदारी 46 प्रतिशत के करीब है। इस भागीदारी को बढ़ाने में पंचायत राज आरक्षण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज दिल्ली, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, उत्तरप्रदेश जैसे राज्यों में महिला मुख्यमंत्रियों का अपना सुशासन है। आज वह सरपंच पति की 'डमी' न होकर राजनैतिक बैठकों, मतदान केन्द्रों सम्मेलनों, आन्दोलनों मे अपनी सशक्त भूमिका का निर्वाहन कर रही है।

(5) वैधानिक सुदृइता :- महिलाओं को सशक्त बनाने, उन्हें सामाजिक विकास व न्याय देने हेतु सरकार व समाज के प्रत्येक वर्ग-जनप्रतिनिधि, शासक-प्रशासक जनसमुदाय, मीडिया आदि ने अपनी-अपनी भूमिका निभाकर महिलाओं को अत्याचार, शोषण हिंसा से निपटने के लिए सशक्त बनाया है। सामाजिक सुरक्षा से संबंधित अभी तक किए गये प्रावधानों व्यवस्थाओं, नीतियों, संविधान-संशोधनों, कानूनों, योजनाओं और कार्यक्रमों के अच्छे परिणाम भी सामने आ रहे है। स्वतन्त्रता के पश्चात् बनाये गये विभिन्न अधिनियमों से अनेक महिलाओं ने शोषण व प्रताड़ना से मुक्त होकर गरिमामय जीवन जीने का अधिकार प्राप्त किया। वही पुरूषों के समान अधिकार से ही वह पति व पिता की सम्पत्ति में उतराधिकारी नाबालिक बच्चों की सम्पत्ति की संरक्षक होने का अधिकार सुरक्षित किया।

अभी और बढ़ाने होगे कदम :- उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समाज के हर क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी तो बढ़ी है। आज उनकी जागरूकता में वृद्धि आई है। स्थिति में सुधार हुआ है। उनका आत्मसम्मान बढ़ा है। उनकी कार्य पद्धति व सोच में बदलाव आया है। उनके निर्णय लेने की क्षमता में इजाफा हुआ है। यह सब हमारी नीतियों कार्यक्रमों, कानूनों के क्रियान्वयन का परिणाम है। किन्तु यहाँ इस तत्थ का जिक्र करना आवश्यक है कि जिन स्थानों पर महिलाएँ अशिक्षित है वहाँ कि महिलाएँ अभी भी रूढ़िवादिता एवं सशंय के जंजाल में जकड़ी हुई हैं।

कुछ स्थानों पर ऐसा भी देखने में आया है कि महिला या महिलाओं के समूह को जागरूकता दिखाने या अधिकारों के प्रति उत्सुकता दिखाने के कारण प्रताड़नाओं और अपशब्दों का सामना करना पड़ा है। इन स्थानों पर यह रेखांकित नही होता कि केवल संविधान में अधिकारों की व्यवस्था कर देने मात्र से ही वे अधिकार सम्पन्न हो गई। संविधान की भावनाओं को व्यावहारिक बनाने के लिए अशिक्षित एवं ग्रामीण महिलाओं को शिक्षित कर सशक्त करने की जरूरत है। उन्हें शिक्षा, सहयोग और उन्नत सुरक्षित वातावरण उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। उनमें जाति-लिंग भेदभाव को दूर करना है। तभी देश में सच्चा लोकतंत्र स्थापित होगा और इसके लिए हर व्यक्ति को अपने स्तर पर तैयार रहना होगा। तभी ग्रामीण स्तर पर सशक्तिकरण की न्यायपूर्ण व्यवस्था का निर्माण हो सकेगा।

निष्कर्ष - महिला सशक्तिकरण के लिए किए जा रहे तमाम प्रयासों व योजनाओं के क्रियान्वयन से स्पष्ट है कि हर स्थानों पर आरक्षण के आधार पर महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि सुनिश्चित हुई है। इसे शहरी महिलाओं के संदर्भ संतोषजनक माना जा सकता है। किन्तु ग्रामीण महिलाओं को प्रभावशील भूमिका में निभाने लायक बनाने में समय और लगेगा। उन्हें शिक्षित होना होगा सरकार को भी उनके लिए साक्षरता या सर्वशिक्षा अभियान ही नही अपितु उच्च शिक्षा के अवसरो को सुलभ बनाना है। जिससे उनका सम्मान बना रहें। तभी महिलाएँ सही मायने में सशक्त होगी।

संदर्भ सूची -

1- योजना पत्रिका
2- कुरूक्षेत्र
3- **rural.nic.in**

****

भारत में आर्थिक विकास दर : दशा एवं दिशा

डॉ. गणेश प्रसाद दावरे *

भारत में आर्थिक विकास के लिये योजनाबद्ध आर्थिक विकास के मार्ग को अपनाया गया है। भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना 01 अप्रेल 1951 से आरम्भ हुई। तब से अब तक की कुछ कठिनाईयों को छोड़कर भारत में ग्यारह पंचवर्षीय योजनाएं पूर्ण हो चूकी है तथा बारहवीं (2012-2017) योजना चल रही है। योजनाबद्ध विकास के दौर में वर्ष 1991 से प्रारम्भ हुए उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के पश्चात् औसत रूप से देश 6.5 से 7 प्रतिशत की आर्थिक विकास दर प्राप्त करता रहा जो 1991 के पूर्व की तुलना में सराहनीय है।

सात-आठ वर्ष पूर्व भारत की आर्थिक प्रगति दर से सम्पूर्ण विश्व प्रभावित हो रहा था। इस समय यह बड़ी तेजी से उभारा गया था कि भारत में युवाओं की संख्या स्वर्णिम काल में पहुंच गई है। इस प्रतिभाशाली युवा शक्ति के बल पर वैश्वीकरण एवं उदारीकरण की नीतियों के पश्चात् देश ने 10: की आर्थिक विकास दर को छूने की अभूतपूर्व कोशिशों में कामयाब भी हुआ था। लेकिन क्या कारण है कि पिछले दो वर्षों में भारत की आर्थिक प्रगति में तुलनात्मक रूप से गिरावट का दौर रहा है। प्रस्तुत पत्र में पिछले दो वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में हुए सकारात्मक परिवर्तनों के साथ आर्थिक विकास की दर एवं दिशा का एक विश्लेषणात्मक मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। क्योंकि इन दो वर्षों में आर्थिक विकास दर में गिरावट का परिदृश्य दिखाई दिया है। उत्पादन वृद्धि में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के योगदान को भी जानने का प्रयास किया गया है।

स्वतंत्रता पश्चात् योजनाबद्ध विकास के सहारे अर्थव्यवस्था को विकास पथ पर आगे ले जाने के लिए सरकार निरन्तर प्रयासरत है तथा उसे एक सीमा तक अच्छी सफलता भी मिली है। आज भारतीय अर्थव्यवस्था GDP के आधार पर विश्व की दसवीं सबसे बड़ी तथा क्रय शक्ति के आधार पर विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन पाई है। वर्ष 2003 में गोल्डमैन सैश ने अपने पूर्वानुमान में कहा था कि वर्ष 2035 में भारत GDP के आधार पर अमेरीका और चीन के बाद विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जायेगी। विश्व की सभी विख्यात रैटिंग एजेन्सियों स्टैण्डर्ड एंड पुडर्स, गोल्डमैन सैश, मुडीज आदि ने भी पूर्वानुमान लगाये हैं कि आने वाले वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था की विकास दर 5 से 5.5 प्रतिशत रहने की सम्भावना है। **यू.एन.ओ. ने कहा है ''विकास केवल आर्थिक वृद्धि ही नहीं है वरन् इसमें आर्थिक वृद्धि के साथ सामाजिक, सांस्कृतिक एवं संस्थागत परिवर्तन भी शामिल है। विकास का सम्बन्ध न केवल मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं से हैं, बल्कि जीवन की सामाजिक स्थिति में सुधार से भी है।''** अत: आर्थिक विकास के लिये प्रतिव्यक्ति आय, शिक्षा, स्वास्थ्य, उपभोग स्तर आदि में सुधार का मूल्यांकन आवश्यक है। भारत की प्रतिव्यक्ति आय 2004-05 के मूल्यों के आधार पर वर्ष 2011-12 में लगभग 38,039 रूपये थी। प्रति व्यक्ति आय के आधार पर विश्व में भारत का स्थान 141वां तथा क्रय शक्ति के आधार पर 130वां है, जो निश्चित रूप से निम्न औसत जीवन स्तर का संकेत देता है। सन् 2010 में अमरीका की प्रतिव्यक्ति 47,140 डॉलर तथा इंग्लैण्ड की 38,540 डॉलर थी, जबकि भारत में 1340 डॉलर थी। विश्व विकास रिपोर्ट 2012 के अनुसार जिन देशों की प्रति व्यक्ति आय 1006 डॉलर या इससे कम है, वह निम्न आय अर्थव्यवस्था में आते हैं।

क्रं.	वर्ष	आर्थिक विकास दर
1	2005-06	9.48
2	2006-07	9.57
3	2007-08	9.32
4	2008-09	6.72
5	2009-10	8.59
6	2010-11	9.32
7	2011-12	6.21
8	2012-13	4.96
9	2013-14 *	5.3

* प्रत्याशित * स्त्रोत आर्थिक सर्वेक्षण 2005-06-2011-12

यद्यपि 2010-11 के मध्य भारत की जनसंख्या वृद्धि दर में 3.9 प्रतिशत की कमी आयी है, फिर भी जनसंख्या वृद्धि की गति बहुत तेज है। 2011 की जनगणना में भारत में साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत है, परन्तु चिन्तनीय बिन्दु यह है कि पुरूष-महिला साक्षरता दर में 16.68 प्रतिशत का अन्तर अभी भी बना हुआ है। 2010-11 में सम्भावित आयु 66.1 आंकी गई है जो स्वास्थ्य क्षेत्र में अत्यन्त धीमी प्रगति को दर्शाता है। यू.एन.डी.पी. के मानव विकास सूचकांक में 186 देशों की सूची में भारत का स्थान 136वां पाया गया है, जो कि दयनीय है। इस स्तर से ऊपर न उठ पाने के मुख्य कारणों में स्वास्थ्य पर लक्ष्य के सापेक्ष स्तर व्यय (4.1%) तथा व्यय की गुणवत्ता में कमी मुख्य रूप से शामिल है। भारत में लोगों को प्रतिदिन औसतन 2100 कैलोरी ही प्राप्त होती है, जबकि स्वस्थ जीवन के लिये 2400 कैलोरी चाहिए।

भारत के हजारों गाँव अभी भी पक्की सड़क से जुड़े हुए नहीं है और इस कारण वे राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़ने से वंचित है जबकि भारत का सड़क नेटवर्क विश्व में तीसरे स्थान पर है।

एक विचारणीय बिन्दु यह है कि देश की 55 से 60 प्रतिशत श्रम शक्ति को रोजगार देने वाला क्षेत्र कृषि है, लेकिन देश के कुल उत्पादन में इसका योगदान मात्र 17 प्रतिशत है। 1951 की तुलना में आज खाद्यान्न उत्पादन में लगभग 5 गुना वृद्धि हुई है, परन्तु प्रति व्यक्ति उपलब्धता की दृष्टि से यह 2011 में मात्र 463 ग्राम ही पाया गया है। बढ़ती हुई जनसंख्या तथा खाद्य पदार्थ आधारित महंगाई की उच्च दर इसके मुख्य कारक है। कृषि की वृद्धि दर भी 4 प्रतिशत से कम ही प्राप्त हुई है।

वैश्विक मन्दी, मुद्रा स्फीति की उच्च दर एवं घटते हुए निजी निवेश के कारण देश के औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि दर भी विगत 20 वर्षों में औसतन 2 प्रतिशत से कम ही रही है। थोक मुल्य सूचकांक की तुलना में उपभोक्ता मूल्य सूचकांक अधिक रहने से निम्न एवं मध्यम आय वर्ग का

* प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय बड़वाह, जिला- खरगौन (म.प्र.) भारत

जीवन स्तर पौष्टिकता की दृष्टि से घटता जा रहा है। आम आदमी के जीवन स्तर पर खाद्य-पदार्थों की महंगाई दर ने सर्वाधिक प्रतिकूल प्रभाव डाला है।

देश के विदेशी मुद्रा भण्डार से उसके विदेशी व्यापार एवं विदेशी निवेश की स्थिति का मूल्यांकन किया जा सकता है। देश का सुदृढ विदेशी व्यापार इस बात पर निर्भर करता है कि उसके आयातों का कितना भाग निर्यातों द्वारा वित्तीय रूप से प्रदान किया जाता है। वर्ष 2012-13 में हम कुल आयातों का लगभग 61 प्रतिशत ही निर्यातों का भुगतान कर पाए, जबकि 2003-04 में कुल आयातों में से लगभग 82 प्रतिशत का भुगतान निर्यातों द्वारा किया गया था। यह स्थिति बढ़ते हुए व्यापार घाटे को प्रदर्शित कर रही है, जो अन्ततोगत्वा रूपये की घटती हुई कीमत के लिये जिम्मेदार है।

जहाँ 21वीं सदी के प्रारम्भिक दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था ने नई सम्भावनाओं की ओर संकेत दिये। सम्पूर्ण सेवा क्षेत्र विशेषकर सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विश्व में अपनी सफलता का डंका बजाया, वहाँ द्वितीय दशक में वृद्धि दर, आर्थिक असमानता, निर्धनता, राजस्व आय, विदेशी विनिमय दर आदि को लेकर चिन्ताएं बढ़ी है। भ्रष्टाचार, कालाधन, लालफीताशाही, नेतृत्व की अक्षमता आदि मुख्य कारक रहे हैं, जो अर्थव्यवस्था की सामर्थ्य से कम परिणाम दे रहे हैं। यदि देश के अन्दर आंतरिक स्तर पर दृढ़ता, निष्ठा एवं ईमानदारी से नीतियों का क्रियान्वयन हो पाए तो निश्चित रूप से आने वाले वर्षो में युवा पीढ़ी की प्रतिभा एवं जोश के बल पर हम वांछित परिणामों को प्राप्त करने में सफल होंगे।

देश की प्रगति कृषि एवं उद्योग के विकास पर ही निर्भर है। कृषि क्षेत्र की प्रगति के लिये ऊर्जा, वित, परिवहन आदि में सुधार आवश्यक है। इसी प्रकार उद्योगों में उत्पादन के लिये मशीनरी, प्रबंध, ऊर्जा, बैंक, बीमा, परिवहन आदि साधनों पर विशेष ध्यान देना होगा। योजनाओं की सफलता के लिये जनसहयोग भी आवश्यक है। ''देश की समृद्धि आपकी समृद्धि है।''

सन्दर्भ :-

1. World Development Report 2012
2. Statistical Outline of India 2002-03
3. Economic Survey 2012-13
4. H.W. Singer ; International Development : Growth and Change
5. Census of India 2001 and 2011

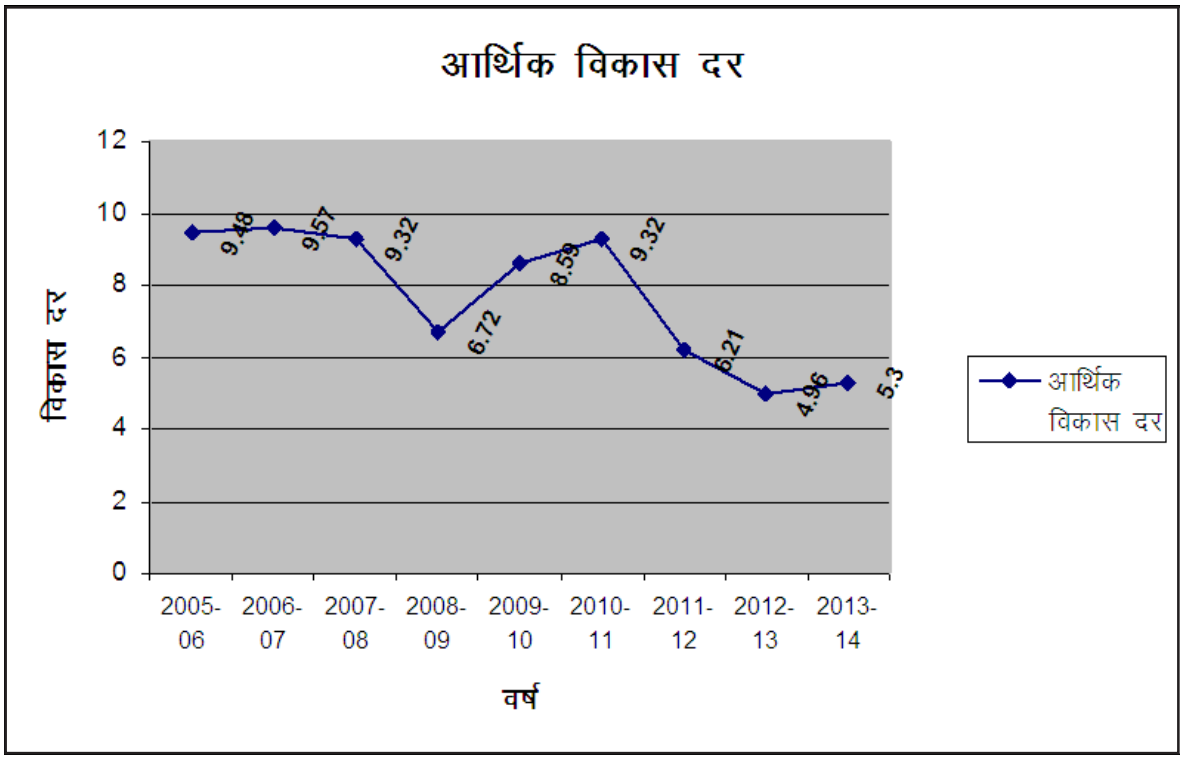

****

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का मूल्यांकन

(2005-06 से 2011-12 के विशेष संदर्भ में)

डॉ. पी.एन. वैश्य * भारती खरे **

संक्षेपिका – बैंकों का हमारे आधुनिक, सामाजिक व आर्थिक जीवन में बहुत महत्व है, क्योंकि आय की व्यापारिक प्रणाली और हमारा आर्थिक जीवन सुदृढ़ बैंकिंग व्यवस्था के अभाव में सुचारू रूप से नहीं चल सकता है। किसी भी आर्थिक क्षेत्र की क्रियाओं को भली प्रकार संचालित करने के लिये वित्त या ऋण की आवश्यकता होती है। जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक से आशय जिला स्तर पर स्थापित होने वाली उस सहकारी संस्था से होता है, जिसका कार्य जिले में कृषि एवं अन्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अल्पकालीन, मध्यकालीन, साख सुविधायें उपलब्ध कराना होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का अध्ययन किया गया है, इस हेतु द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है। सभी आवश्यक समंक संबंधित बैंक एवं अन्य शासकीय व अशासकीय संस्थाओं से लिये गये हैं।

परिचय – भारत में सहकारी बैंकिंग व्यवस्था का उदय 1904 के लगभग हुआ है। विदिशा जिला मध्यप्रदेश के पश्चिम में तथा मालवा के पठार के उत्तर पूर्व पर स्थित है। माधव डिस्ट्रक्ट कॉ-ऑपरेटिव बैंक के नाम से 21 जनवरी 1912 को जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक ने अपना कार्य प्रारंभ किया उस समय ग्वालियर राज्य में कोई सहकारी विधान नहीं था। अत: बैंक ने अपना कार्य बिना पंजीयन के ही किया । वर्ष 1918 में सहकारी विधान प्रभावशील होने पर इस बैंक का पंजीयन किया गया। इस प्रकार 19 जुलाई 1918 से पंजीकृत सहकारी बैंक का प्रदुर्भाव हुआ। तत्पश्चात् बैंक प्रगति की ओर अग्रसर होता रहा परिणाम स्वरूप उद्योग सहकारी समितियों, सहकारी कृषि समितियों, प्राथमिक उपभोक्ता भण्डार, सहकारी दुग्ध उत्पादन समितियों का गठन हुआ। सहकारी बैंक सहकारिता के सिद्धांतों पर कार्य करते हैं इन बैंकों के संगठन में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है, मध्यप्रदेश में सहकारिता आन्दोलन त्रिस्तरीय है जिसमें जिला स्तर पर जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक राज्य स्तर पर राज्य सहकारी बैंक एवं ग्राम स्तर पर सहकारी समितियां कार्य करती हैं। जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक जिला स्तर पर प्राथमिक समितियों के केन्द्रीय बैंक के रूप में होता है । जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक राज्य सहकारी बैंक व सहकारी समितियों के बीच एक कड़ी का कार्य करता है, यह अपनी शाखाऐं जिले के विभिन्न भागों में खोलते हैं। ताकि प्राथमिक समितियों को मदद मिल सके व उन पर नियंत्रण किया जा सके। बैंक का कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण विदिशा जिला है। जिसमें 10 तहसीलें 7 विकासखण्ड हैं। जिले के 1221 ग्रामों में कुल 2,47,549 कृषक परिवार हैं तथा 1,22,538 व्यक्ति सहकारी संस्थाओं के सदस्य हैं एवं ऋणी सदस्यों की संख्या 1,30,024 है। वर्तमान में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की 21 शाखाएं कार्यरत् हैं। जिनमें से 18 ऋण शाखाऐं कृषि ऋण, अकृषि ऋण एवं व्यक्तिगत ऋण आदि समस्त व्यवसाय करती हैं एवं शेष 3 शाखाऐं अमानत शाखाऐं हैं जो कि अमानतों के साथ-साथ ऋण व्यवसाय कर प्रात: सायंकाल में अमानतदारों को सेवाएं प्रदान करती हैं, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा के अन्तर्गत 154 कृषि समितियां तथा 133 अकृषि समितियां कार्यरत् हैं।

शोध विषय का औचित्य –

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का अध्ययन करने के लिए शोध विषय का अध्ययन किया गया है।

साहित्य का पुनर्वलोकन –

- यासीन अंसारी ने वर्ष 1992 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य ''शाजापुर जिले में सहकारी बैंकों का कृषि क्षेत्र में योगदान'' विषय को लेकर सम्पादित किया और पाया कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की स्थापना मुख्यत: कृषि क्षेत्र से जुड़े लोगों की सहायता करने के लिये की जाती है। अपने अध्ययन से स्पष्ट किया कि शाजापुर जिले में सहकारी बैंकों का कृषि के क्षेत्र में कितना योगदान रहा है।
- खान मुवीन मोहम्मद ने वर्ष 1998 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य ''मानव संसाधन प्रबंध: म.प्र. राज्य सहकारी बैंक मर्यादित एवं पंजाब नेशनल बैंक का तुलनात्मक अध्ययन'' विषय को लेकर सम्पादित किया और पाया कि दोनों ही बैंकों ने अपने मानव संसाधन को दक्ष एवं कुशल बनाने की ओर विशेष ध्यान दिया है।
- सक्सेना अनन्त कुमार ने वर्ष 2004 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य ''मध्यप्रदेश के ग्रामीण विकास में जिला सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक का योगदान'' विषय को लेकर सम्पादित किया और पाया कि मध्यप्रदेश के ग्रामीण विकास में जिला सहकारी एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का सर्वाधिक योगदान रहा ।
- रघुवंशी राधेश्याम ने वर्ष 2004 में बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल के वाणिज्य संकाय में अपना शोध कार्य ''कृषि वित्त में सहकारी बैंकों की भूमिका एवं प्रभाव'' विषय को लेकर किया और पाया कि कृषि एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को वित्त की आवश्यकता पड़ती है। सहकारी बैंकों द्वारा कृषि वित्त की पूर्ति कैसे की जाती है, तथा उसका कृषक की जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। यह अपने अध्ययन में बताया है।

शोध के उद्देश्य –

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा वितरित ऋणों का अध्ययन करना।

* विभागाध्यक्ष वाणिज्य, एस.एस.एल.जैन पी.जी. कॉलेज, विदिशा (म.प्र.) भारत ** पी.एचडी.(शोधार्थी) बरकतउल्लाह विवि. भोपाल (म.प्र.) भारत

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा ऋण वसूली की स्थिति का अध्ययन करना।
- शोध के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत करना।

परिकल्पना –

- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, विदिशा की ऋण वितरण एवं ऋण वसूली में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध प्रवधि – किसी भी समस्या एवं विषय का अध्ययन करने के लिए विभिन्न सूचनाओं एवं तथ्यों की आवश्यकता होती है जिन्हें विभिन्न विधियों से संग्रहित करना होता है प्रस्तुत शोध पत्र में परीक्षणात्मक शोध प्रवधि का उपयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में तथ्यों का संकलन द्वितीय समंकों द्वारा किया गया है। द्वितीय समंकों का संकलन वार्षिक प्रतिवेदनों एवं लेखा विवरणों, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा तथा विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं तथा संदर्भित पुस्तकों द्वारा किया गया है और इनके माध्यम से ही जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा द्वारा ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का अध्ययन किया गया है।

शोध अध्ययन की सीमाऐं –

- इस शोध अध्ययन के लिए द्वितीय समंकों का उपयोग किया गया है।
- द्वितीय समंकों की विश्वसनीयता अंकेक्षण पर निर्भर करती है।

निष्कर्ष –जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा की ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का अध्ययन करने पर पाया कि विगत 7 वर्षों में बैंक की ऋण वितरण में लगातार वृद्धि हुई है तथा बैंक के द्वारा ऋण वसूली में भी लगातार वृद्धि हुई है। जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित विदिशा के ऋण वितरण एवं ऋण वसूली का परीक्षणात्मक अध्ययन करने पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि बैंक की ऋण वितरण एवं ऋण वसूली में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

संदर्भ सूची –

- अग्रवाल डॉ. एम.डी., डॉ. एन.पी. अग्रवाल 1997 वित्तीय प्रबंध, रमेश बुक डिपो–जयपुर।
- भार्गव चन्द्रशेखर, 2010 बैंकिंग प्रणाली, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
- शुक्ल डॉ.एस.एम., डॉ.शिवपूजन सहाय, 2010 उच्च सांख्यिकी, विश्लेषण, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
- जिला विकास पुस्तक, 2011 जिला सांख्यिकी कार्यालय, जिला विदिशा मध्यप्रदेश।
- वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2005–06 से 2011–12 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, विदिशा (म.प्र.)

तालिका क्रमांक 1

वर्ष	ऋण वितरण	ऋण वसूली	अंतर (D)	$D - \bar{D}$	$(D-\bar{D})^2$
2005-06	10421.37	10221.35	200.02	-4696.0857	22053220.9017
2006-07	24532.72	24759.51	-226.79	-5122.8957	26244060.353
2007-08	13145.90	9223.44	3922.46	-973.6457	947985.95
2008-09	22595.75	19201.06	3394.69	-1501.4157	2254249.1042
2009-10	26896.26	19773.23	7123.03	2226.9243	4959191.8379
2010-11	28877.76	25600.09	3277.67	-1618.4357	2619334.115
2011-12	51533.54	34951.88	16581.66	11685.5543	136552179.298
Total	178003.3	143730.56	34272.74		195630221.559

$$\bar{D} = \frac{\sum D}{n} = \frac{34272.74}{7}$$

$$\bar{D} = 4896.1057$$

$$S = \sqrt{\frac{(D-\bar{D})^2}{n-1}} = \sqrt{\frac{19563022}{7-1}}$$

$$S = 5710.082$$

$$t = \frac{\bar{D}\sqrt{n}}{S} = \frac{4896.1057\sqrt{7}}{5710.082}$$

$$t = 2.267$$

$$Table\ Value\ 2.447$$

6d.f. के लिए 5% सार्थकता स्तर

$$t_{.05} = 2.447$$

$$2.267 < 2.447$$

अत: बैंक की ऋण वितरण एवं ऋण वसूली में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

कपास प्रौद्योगिकी मिशन की संवर्द्धनशील एवं विकासपरक गतिविधियों का मूल्यांकन

डॉ. लक्ष्मीचन्द्र गुप्ता *

विगत वर्षो में देश में कपास उत्पादन में उल्लेखनीय रूप से मात्रात्मक वृद्धि हुई है। देश में 70 के दशक में 8 से 9 लाख कपास की गाठों का आयात होता था। सरकार द्वारा क्रमिक पंचवर्षीय योजनाओ को आरम्भ करने के बाद कपास उत्पादन के क्षेत्र में वृद्धि से तथा हाडब्रिड किस्मों की बुआई से कपास उत्पादन को प्रोत्साहन मिला। इस कारण देश के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गया। भारत सरकार द्वारा ''कपास प्रौद्योगिकी'' मिशन सन् 2000 में की गई। इसके पश्चात् कपास के उचित स्थानान्तरण, बेहतर फार्मे प्रबंधन की प्रथाओं, बी टी कॉटन, हाईब्रीड आदि खेती के अधीन वृद्धि हुई। देश में कपास खेती के अर्न्तगत होने वाले मूलभूत परिवर्तनों से भविष्य में उत्पादकता वृद्धि की संभावना भी है। देशी वस्त्रोद्योग से बढ़ी हुई कपास खपत को पूरा करने के बाद कपास का निर्यात किया जा रहा है।

प्राचीन भारत में केवल कपड़ा उद्योग के ही निर्माण में निपुणता प्राप्त थी, लेकिन देश में औद्योगिक रुग्णता एक सामाजिक समस्या एवं अभिशाप बनता जा रहा है। इस समस्या के निवारण में भारतीय कपास निगम ने महति भूमिका निभाई हैं।

भारतीय कपास निगम निम्न नियम व शर्तो के अधीन वाणिज्यिक कार्य करता है:-

(1) जमा राशि:-

खरीददार संविदागत रूई के मूल्य के 05 प्रतिशत के समकक्ष न्यूनतम राशि संविदा की तारीख से 07 दिन के अन्दर भूगतान करता है। गोदाम भण्डारण सुविधा के अंतर्गत, खरीददार मील को अतिरिक्त 05 प्रतिशत अग्रिम राशि जमा करनी होगी, जिसका उपयोग बिक्री कर तथा अन्य अनुशांगिक खर्चो के लिए किया जाता है। खरीददार द्वारा संविदागत रूई के मूल्य की अग्रिम राशि निर्धारित समय में जमा न करने पर विक्रेता को संविदा रद्द करने का अधिकार होता है।

गाठों के उठाव के लिए प्राप्त जमा राशि पर, जमा राशि की प्राप्ति की तारिख से निकासी के समय समयोजित की गई तारीख तक अनुपातिक रूप में ब्याज का लाभ 10.50 प्रतिवर्ष की दर से जमाकर्ता को दिया जाता है।

(2) संविदागत रूई का चयन:-

खरीददार या उसके प्राधिकृत प्रतिनिधि इस संविदा के अर्न्तगत प्रस्ताव की तारीख से 3 दिन के अन्दर रूई का चयन करता है, यद्यपि यह चयन रूई की सुपुर्दगी की तारीख के पूर्व होगा । सीसीआई निम्नलिखित विनिर्दिष्ट अवधि के अन्दर गांठों का प्रस्ताव देता है:-

क्र.	बेची गई मात्रा	प्रस्तावित अवधि
01	600 गांठों से कम	संविदा की तारीख से 10 दिन के अंदर
02	3000 गांठों से कम	संविदा की तारीख से 20 दिन के अंदर
03	3000 गांठों या उसमें अधिक	संविदा की तारीख से 20 दिन के अंदर: 50 प्रतिशत संविदागत मात्रा का तथा शेष 40दिन के अन्दर

विनिर्दिष्ट अवधि में यदि गाठें प्रस्तावित नहीं की जाती है तो अप्रस्तावित मात्रा पर यथाअनुपात अतिरिक्त मुफ्त अवधि दी जाएगी। प्रस्तावित मात्रा संविदागत मात्रा के 20 प्रतिशत होगी ताकि खरीददार चयन पूरा कर सके। यदि संविरागत मात्रा 600 गाठों से कम है तो खरीददार को किसी कटौती के बिना 100 प्रतिशत अनुमोदन देना है तथा 600 गाठों से उपर की मात्रा के लिए संविदागत मात्रा के मूल्य का 90 प्रतिशत चयन का अनुमोदन दिया जाता है। खरीददार या उसका प्रतिनिधि चयन करने के पहले स्वयं को पूर्णत: सन्तुष्ट करते हैं।

(3) तुलाई, सुपुर्दगी और भुगतान शर्ते:-

खरीददार के नियंत्रक/प्रतिनिधि की उपस्थिति में सुपुर्दगी के समय स्पॉट पर गाठों की 100 प्रतिशत तुलाई की जाती हैं और इस प्रकार की तुलाई अंतिम एवं बाह्यकारी होती हैं। खरीददार द्वारा अग्रिम भुगतान की स्थिति में 48 केन्द्रीय प्रति 100 गांठों की दर पर गिने गए वनज के आधार पर भुगतान किया जाता है। सभी प्रकार की बिक्री स्पॉट आधार पर होगी तथा वनज के बाद के खर्च खरीददार के खाते पर होते हैं।

खरीददार द्वारा सभी प्रकार के भुगतान केवल क्रासट अकाउण्ट पेयी डिमांड ड्राफ्ट, पेनआर्डर, बैंकर्स चैक द्वारा निगम के पक्ष में या इलेक्ट्रॉनिक फन्ड ट्रांसफर द्वारा केवल निगम के खाते में किये जाते हैं। यदि भुगतान चैक द्वारा या ईलेक्टॉनिक फंड ट्रांसफर द्वारा किया जाता है, तो विक्रेता के खाते में भुगतान की राशि जमा होने की पुष्टि के पश्चात् ही सुपुर्दगी करने की अनुमति दी जाती हैं।

खरीददार को संविदा की पुष्टि की तारीख से दी गई नि:शुल्क अवधि के अंदर गांठों का भुगतान करना होगा और सुपुर्दगी लेनी होती हैं। यदि खरीददार की ओर से ऐसा नहीं किया जाता है तो विक्रेता को संविदा रद्द करने का अधिकार होता है। इस प्रकार के रद्द होने की स्थिति में विक्रेता को सम्पूर्ण या शेष मात्रा को किसी भी समय किसी भी प्रकार, जैसा उचित समझें, उसकी पुन: बिक्री का अधिकार होता है। क्षति की स्थिति में उसकी वसूली का भी अधिकार होता है।

(4) रूई का रखरखाव:-

रूई का रखरखाव के प्रावधान होते हुए भी, विक्रेता खरीददार की ओर से नि:शुल्क सुपुर्दगी अवधि के आगे रूई का रखरखाव कर सकता है अथवा रूई रोक सकता है, बशर्ते की खरीददार निम्न शर्तो का अनुपालन करें:-

(अ) खरीददार विक्रेता को लिखित रूप से निशुल्क सुपुर्दगी अवधि समाप्त होने के बाद उसकी ओर से रूई रखने का अनुरोध करेगा अथवा न उठाई गई शेष मात्रा के लिए गाठे उठाने की समय सारिणी देगा । खरीददार जिस अवधि तक रूई रखना चाहता है, उसके रख-रखाव प्रभार का अग्रिम भुगतान करता है।

(ब) रखरखाव की दर रूई की सुपुर्दगी तक प्रतिमाह 30दिन के पहले 60दिनों के लिए 1.50 प्रतिशत की दर से तथा उसके पश्चात् रूई की सुपुर्दगी तक प्रतिमाही 30 दिन के लिए 1.60 प्रतिशत

* सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय राजगढ़-ब्यावरा (म.प्र.) भारत

की दर से रख रखाव प्रभार की गणना मासिक रेट के आधार पर की जावेगी। जब तक सुपुर्द की जाने वाली गांठों का पूरा भुगतान प्राप्त नहीं होता है, तब तक ऊपर कथित दर के अनुसार रख-रखाव प्रभार लिया जायेगा । यदि भुगतान की देय तिथि को अवकाश तो रखरखाव प्रभार की गणना अगला कार्य दिवस तिथि माना जाता है।

बिना किसी पक्षपात अथवा पूर्वाग्रह के, विक्रेता खरीददार की ओर से सम्पूर्ण रूई या उसका कुछ भाग ग्रेस पीरीयड की समाप्ति के 90 दिन तक अथवा विक्रेता के विवेक के अनुसार आगे विस्तारित अवधि तक रख सकता है। खरीददार को विस्तारित अवधि के दौरान रूई के मूल्य का और रखरखाव प्रभार की राशि का पूरा भुगतान करना होगा।

यदि भुगतान नहीं किया जाता है, और सुपुर्दगी विस्तारित अवधि में नहीं ली जाती है, तो विक्रेता को अधिकार है कि इस प्रकार की अग्रिम राशि, जिससे रख-रखाव प्रभार की राशि शामिल है, को जब्त कर ले तथा अपनी सुविधा के अनुसार, समय पर रूई की पुन: बिक्री कर दे तथा खरीददार से इस प्रकार की पुन: बिक्री पर हुई हानि/क्षति की वसूली करे, जिसमें मूल्य अन्तर, रखरखाव प्रभार और ब्याज शामिल हैं। इस संविदा को भंग करने के बारे में प्रावधान स्वत: उद्धत और परिचालित होगें, जिसके लिए विक्रेता द्वारा खरीददार को कोई सूचना देने की आवश्यकता नहीं है।

(5) नकद छूट:-

खरीददार संविदा अनुसार अपेक्षित से पहले प्राप्त भूगतान के लिए दिनों की संख्या के आधार पर 10.50 प्रतिवर्ष की दर से उपयोग न की गयी मुफ्त अवधि के लिए अनुपातिक रूप से नगद छूट प्राप्त करने का पात्र होगा। यदि एफ सी तथा बीजी के अन्तर्गत निगम द्वारा किये गये प्रावधान के अनुसार मुफ्त अवधि का उपयोग नहीं किया जाता है, तो भुगतान की तारिख से उपयोग में न लायी गयी अवधि के लिए 8.50 प्रतिशत की दर से अनुपातिक आधार पर छूट का अधिकार खरीददार को निम्न शर्तो के अधीन होता है:-

(क) खरीददार के अनुरोध पर साख-पत्र की डिस्काउटिंग की गई है।

(ख) साख-पत्र की डिस्काउन्टीग के संबंध में सभी प्रकार के खर्च को खरीददार द्वारा वहन किया गया है।

(6) बिक्री कर/वेट:-

खरीददार कपास के मूल्य पर सुपुर्दगी लेने की तारीख पर कर/वेट का भुगतान करेगा। संगत बिक्री कर अधिनियम के अधीन पंजीकृत खरीददार को, विक्रेता से बीजक प्राप्त होने की तारीख से 3 दिन के अन्दर आवश्यक 'स' फार्म प्रस्तुत करना होता है।

(7) ब्याज:-

पुराने देय, क्लीन क्रेडिट के अर्न्तगत सुपुर्दगी, साख पत्र बैंक गारण्टी के आधार पर ब्याज दर पीएलआर प्लस 1 प्रतिशत प्रतिवर्ष दर होगी पीएलआर के लिए प्रचलित बैंक ऑफ बड़ौदा का पीएलआर आधार माना जाएगा। अतिदेय यू बी, एल/सी तथा बैंक गारण्टी पर मासिक आधार पर जी एल आर प्लस 3 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से दाण्डिक ब्याज लागू है।

(8) गोदाम प्रभार:-

यदि खरीददार को गोदाम भण्डारण सुविधा उपलब्ध की जाती है और गोदाम में गाठों की प्राप्ति की तारीख से 30 दिनों से अधिक समय तक गांठे नहीं उठाई गयी, तो खरीददार से 30 दिन की अवधि के लिए प्रति गांठ 30 रूपये का सेवा प्रभार वसुला जाता है। 15 दिन या उससे कम अवधि के लिए प्रति गांठ 5 रूपयें और 15 दिन से 30 दिनो तक खरीददार को 10 रूपये प्रति गांठ देना होता है।

(9) मध्यस्थता :-

कपास की गुणवत्ता के बारे में किसी विवाद को, जिसे संविदा के खण्ड-2 के अधीन विनिर्दिष्ट रूप से छोड़ा गया है, के अतिरिक्त इस संविदा से संबंधित या उत्पन्न किसी विवाद या अन्तर के मामले में, उसे विक्रेता निदेशक (विपणन) या निदेशक (वित) द्वारा नियुक्त किसी मध्यस्थ (विक्रेता के किसी कर्मचारी के अलावा) को भेजा जाएगा तथा मध्यस्थ का निर्णय अंतिम और बाह्यकारी माना जायेगा। मध्यस्थ को मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के प्रावधानों द्वारा या किसी सांविधिक संशोधनों या पुनर्धिनियम द्वारा नियन्त्रिक किया जाता है।

(10) अपरिहार्य घटना:-

विक्रेता के नियन्त्रण के बाहर की परिस्थितियो में जैसे प्राकृतिक आपदा, हड़ताल, दंगे, युद्ध या अपरिहार्य घटना की परिस्थितियों के कारणो से हुए नुकसान/विनाश/कमियों की सीमा तक संविदा रद्द हो जायेगी। विक्रेता इस प्रकार की कमी की मात्रा के बारे में क्रेता को 30 दिन के अन्दर सूचित करेंगा। खरीददार एतद द्वारा रद्द की गई कम मात्रा के लिए सहमत होगा और इसके लिए विधिक कार्यवाही नहीं करेगा, न ही उसके संबंध में किसी प्रकार की क्षतिपूर्ति की मांग करेगा।

तालिका क्र. 01

भारतीय कपास निगम का वित्तीय कार्य-निष्पादन

भारतीय कपास द्वारा घोषित लाभांश

भारतीय कपास निगम की अधिकृत पूंजी 75 करोड़ रूपये है और निगम 1988-89 से निरन्तर लाभ अर्जित कर रहा है। (2000-01 के दौरान हुई हानि को छोड़कर)

क्र.	वर्ष	लाभांश(करोड़ रूपये)
01	2002-03	2.50
02	2003-04	5.00
03	2004-05	5.41
04	2005-06	5.00
05	2006-07	6.11
06	2007-08	7.32
07	2008-09	8.61
08	2009-10	11.28
09	2010-11	12.35

स्त्रोत:- भारतीय कपास निगम, नवी मुंम्बई

देश में कपास के उत्पादक, क्षेत्र तथा उपज की प्रगति को निम्न तालिका से स्पष्ट किया गया है:-

तालिका क्र. 01

देश में कपास उत्पादन/उपज की प्रगति

क्षेत्र लाख हेक्टर में/उत्पादन लाख गॉठो में, उपज कि.ग्रा. प्रति में है

वर्ष	क्षेत्र	उत्पादन	उपज
1996-97	91.66	177.90	330
1997-98	89.04	158.00	302
1998-99	92.87	165	302

1999-00	87.91	156	302
2000-01	85.76	140	278
2001-02	87.76	158	308
2002-03	76.67	136	302
2003-04	76.30	179	399
2004-05	87.86	243	470
2005-06	86.77	244	478
2006-07	91.58	270	501
2007-08	96.48	282	568
2008-09	98.26	317	630
2009-10	106.42	330	654
2010-11	111.61	312	475

स्त्रोतः- भारतीय कपास निगम लि., नवी मुम्बई

इस तालिका से यह तथ्य प्रभावित होता है कि देश में कपास उत्पादक, क्षेत्र एवं उपज में निरन्तर विकास एवं विस्तार हो रहा है।

निष्कर्ष भारतीय निगम निरन्तर लाभांश घोषित कर अपनी साख बनाए हुए है। यद्यपि निगम की व्यावसायिक गतिविधियो में अतिरिक्त लाभ की संभावना रहती है परन्तु नियम व्यवस्था के अधीन रहकर कार्य सम्पादित करने से यह लाभ प्राप्त नहीं किया जाता है।

कपास उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि लाने के लिए तथा कपास की गुणवत्ता में सुधार के साथ-साथ कपास उत्पादकों आय में वृद्धि के लिए और वस्त्रोद्योग मिलों और वस्त्रोद्योग मिलों की गुणवत्तावाली कपास की अधिकतम आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए निगम विस्तार गतिविधियो के रूप में विभिन्न विकासशील गतिविधियो का संचालन करता रहा है।

फरवरी, 2000 में कपास प्रोद्योगिकी मिशन की स्थापना के साथ उनमें से अधिकांश गतिविधियों मिनी मिशन 1 एंड 2 के अधीन संचालित की गयी। इस समय भी निगम कपास उपज सर्वेक्षण, सघनित कीट प्रबंधन और कपास खेती (संविदा खेती) जैसी कुछ विकासशील गतिविधियों का संचालन कर रहा है, ताकि विभिन्न कपास उत्पादक राज्यो में भारत सरकार और राज्य कृषि विभाग के प्रयत्नों में सहायता दी जा सके।

संदर्भ ग्रंथ

1. उपाध्याय, शर्मा, दयाल : व्यवसाय, समोंज एवं सरकार, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2012
2. माथुर, डॉ. वी. एल. : लघु उद्योग वित्ता, अर्जुन पब्लिशिंग हांउस, नई दिल्ली, 2012
3. भारतीय कपास निगम लिमिटेड, (सी. सी. आई.), नवी मुम्बई
4. http://www.Cotcrop.gov.in
5. http://texmin.nic.in/

****

धार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ऋण का विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रो.बी.एस. सिसौदिया * डॉ. महेन्द्रकुमार जैन *

प्रस्तावना :- कोई भी उद्योग, सेवा व व्यवसाय मुद्रा के बिना न तो प्रारंभ किया जा सकता है और न ही उस व्यवसाय का विकास संभव है। 'वित्त' व्यवसाय का मूलाधार है। वित्त का अभिप्राय मुद्रा से होता है तथा वित्त में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार, विनियोक्ता, उद्यमी, सरकारे तथा वित्तीय संस्थाऐं अपने वित्त का प्रबंध एवं संचालन करती है। व्यवसायिक आवश्यकताओं के लिए विभिन्न साधनो से उचित शर्तो पर वित्त प्राप्त करना तथा व्यावसायिक उद्देश्यो की पूर्ति हेतु उसका उपयोग एवं प्रबंधक करना शामिल होता है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत शिक्षित बेरोजगार युवाओं को अपना स्वरोजगार स्थापित करने में सहायता प्रदान की जाती है। इस योजनान्तर्गत हितग्राही की शैक्षणिक योग्यता आठवी उत्तीर्ण होना चाहिए तथा उसकी आयु 18 से 35 वर्ष के बीच होना चाहिए। अ.जा., अ.ज.जा., विकलांग भूतपूर्व सैनिक एवं महिलाओं को आयु 18 से 45 वर्ष के बीच होनी चाहिए तथा जिनकी समस्त स्त्रोतो से प्राप्त आय 1 लाख रू. वार्षिक से कम हो को किसी भी उपक्रम को प्रारंभ करने के लिए व्यापारिक इकाई के लिऐ ऋण की अधिकतम राशि 2 लाख रू. तक एवं उद्योग इकाईयो में ऋण की अधिकतम राशि 5 लाख रू. तक दी जाती है।

अध्ययन का उद्देश्य :-धार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्रदान कराने में बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा किये गये प्रयास कितने सार्थक रहे है। प्रस्तुत शोध पत्र में इस बात का अध्ययन किया गया है। इस हेतु निम्न उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए किया गया है :-

- इस योजनान्तर्गत अध्ययन अवधि में कितने हितग्राहियों को वित्तीय सहायता/ऋण दिये जाने का लक्ष्य था ?
- निर्धारित लक्ष्य की तुलना में बैंकों द्वारा कितने हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये ?
- बैंकों द्वारा स्वीकृत ऋणो एवं वितरित ऋणो का लक्ष्य से प्रतिशत क्या रहा ?
- बैंकों द्वारा स्वीकृत ऋण राशियो की तुलना में वितरित ऋण राशियो का प्रतिशत कितना है ?

विधि :- प्रस्तुत अध्ययन म.प्र. राज्य के आदिवासी बाहुल धार जिले में किया गया है। अध्ययन में संग्रहित किये गये द्वितीयक समंक जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार एवं पीथमपुर से संग्रहित किये गये है।

समंक का संकलन वर्ष 2000-2001 से वर्ष 2007-08 तक कुल 08 वर्षो का किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में कुल 08 वर्षो के समंको के आधार पर औसत, अनुपात एवं प्रतिशत जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियो का प्रयोग कर अपेक्षित परिणाम ज्ञात किये गये है। इस योजना के अन्तर्गत वर्ष 2001 से 2008 तक में लाभांवित हितग्राहियों की स्थिति को अणु तालिका क्रमांक 1 में प्रदर्शित किया गया है ।

विश्लेषण एवं परिणाम :- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वर्ष 2000-01 से 2007-08 तक धार जिले में लक्ष्य के अनुपात में बेरोजगार हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित वित्तीय सहायता/ऋण राशि का विश्लेषण शोधार्थी द्वारा अग्र तालिका में किया गया है। यह विश्लेषण हितग्राहियों की संख्या व ऋण राशि के आधार पर किया गया है, साथ ही तालिका क्रं. 01 में स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों एवं ऋण राशियो का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमांक 1 के निरीक्षण से स्पष्ट होता है कि धार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत विगत 08 वर्षो (2000-01 से 2007-08) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा निर्धारित 5116 बेरोजगारों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लक्ष्य के अनुपात में वाणिज्यक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा कुल 5583 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये तथा वितरण 4508 बेरोजगारों को किया गया है।

औसत के आधार पर प्रतिवर्ष 639.00 बेरोजगारों के लक्ष्य के अनुपात में 697.87 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये है, जो कि 109 प्रतिशत के बराबर है, जबकि वितरण औसत रूप से मात्र 563 बेरोजगारों को ही हो पाया है। यह वितरण लक्ष्य की तुलना में लगभग 88.10 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 80.67 प्रतिशत के बराबर है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत 08 वर्षो में कुल 5583 बेरोजगारों को 40 करोड़ 45 लाख 23 हजार रू. की वित्तीय सहायता/ऋण राशि जिले की राष्ट्रीयकृत बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा स्वीकृत की गई थी, किन्तु इसमें से वितरण मात्र 4508 बेरोजगार हितग्राहियों को लगभग 27 करोड़ 83 लाख 55 हजार रूपयो का ही हो पाया है। औसत रूप से प्रतिवर्ष 697 बेरोजगारों को 5 करोड़ 5 लाख 65 हजार रूपये स्वीकृत किये जाकर वितरण मात्र 563 हितग्राहियों को 3 करोड़ 47 लाख 94 हजार रूपये का ही किया गया है। यह वितरण स्वीकृत राशि की तुलना में लगभग 68.81 प्रतिशत के बराबर है। वर्ष 2000-01 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 590 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 590 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये, जो शत-प्रतिशत रहा है, लेकिन वितरण मात्र 400 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 67.800 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 40 करोड़, 4 लाख, 77 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 25 करोड़, 2 लाख, 60 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 62.40 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2001-02 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 630 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 771 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो 122.38 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 634 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 100.63 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 82.23 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 51 करोड, 2 लाख, 95 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 33 करोड़, 59

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 64.45 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2002-03 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 642 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 662 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो 103.11 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 543 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 84.57 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 82.02 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 46 करोड़, 6 लाख, 60 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 32 करोड़, 7 लाख, 77 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 70.24 प्रशित के बराबर है।

वर्ष 2003-04 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 528 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 615 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो लक्ष्य के 116.47 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 549 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 103.97 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 89.26 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 41 करोड़, 2 लाख, 25 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 35 करोड़, 18 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 84.94 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2004-05 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 670 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 617 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो लक्ष्य के 92.08 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 566 बेरोजगारों को ही किया गया । यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 84.47 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 91.73 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 48 करोड़, 7 लाख 50 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 35 करोड़, 3 लाख 6 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 72.42 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2005-06 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 804 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 840 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो 104.47 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 727 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 90.42 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 86.54 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 61 करोड़ 9 लाख 25 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 46 करोड़ 9 लाख 80 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 75.86 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2006-07 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 835 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैको द्वारा 888 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो 106.34 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 616 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 73.77 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 69.36 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 65 करोड़ 3 लाख 60 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 38 करोड़, 3 लाख, 82 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 58.72 प्रतिशत के बराबर है।

2007-08 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 417 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 600 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये जो 143.88 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 475 बेरोजगारों को ही किया गया।यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 113.90 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में 79.16 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 48 करोड़, 8 लाख, 31 हजार रू. की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 31 करोड़, 5 लाख, 73 हजार रू. का ही किया गया जो लगभग 64.65 प्रतिशत के बराबर है।

निष्कर्ष :- प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन के अंत में निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि धार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 08 वर्षो में निर्धारित लक्ष्य संख्या 100 के अनुपात में 109.91 प्रकरणों में ऋण स्वीकृत किया जाकर 88.11 प्रकरणों में ऋण वितरण की प्रक्रिया पूरी की गई है। इसी प्रकार बैंकों द्वारा प्रत्येक 100 स्वीकृत प्रकरणों में से 80.74 प्रकरणों में ऋण वितरित किया गया है। वित्तीय सहायता/ऋण राशि के अनुसार प्रत्येक 01 लाख रू. की स्वीकृति में बैंकों द्वारा लगभग 68.81 हजार रूपये वितरित किये गये है।

संदर्भ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था - रूद्र दत्त के.पी.एम. सुन्दरम।
2. ''कुरूक्षेत्र'' ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली।
3. आगे आये लाभ उठाये, - जनसंपर्क विभाग, (म.प्र.)
4. योजना
5. प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम (मार्गदर्शिका)- म.प्र. वाणिज्य, उद्योग एवं स्वरोजगार विभाग, भोपाल।
6. प्रधानमंत्री रोजगार योजना कार्यक्रम (मार्गदर्शिका)- जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, धार (म.प्र.) दर्शक

तालिका क्रं. - 01 (प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत स्वीकृत व वितरित वित्तीय सहायता का विवरण)

वर्ष	लक्ष्य संख्या	कुल प्रकरण (हितग्राहियों की संख्या)					कुल राशि (लाख रूपए में)		
		स्वीकृत प्रकरण		वितरित प्रकरण			स्वीकृत	वितरित	प्रतिशत
		संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	स्वीकृत से प्रतिशत			
2000-01	590	590	100	400	67.80	67.80	404.77	252.60	62.40
2001-02	630	771	122.38	634	100.63	82.23	512.95	330.59	64.45
2002-03	642	662	103.11	543	84.57	82.02	466.60	327.77	70.24
2003-04	528	615	116.47	549	103.97	89.26	412.25	350.18	84.94
2004-05	670	617	92.08	566	84.47	91.73	487.50	353.06	72.42
2005-06	804	840	104.47	727	90.42	86.54	619.25	469.80	75.86
2006-07	835	888	106.34	616	73.77	69.36	653.60	383.82	58.72
2007-08	417	600	143.88	475	113.90	79.16	488.31	315.73	64.65
योग	5116	5583	109.91	4508	88.11	80.74	4045.23	2783.55	68.81
औसत	639.00	697.87	109.00	563.00	88.10	80.67	505.65	347.94	68.81

स्त्रोत:- जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार एवं पीथमपुर (म0प्र)।

जीवन बीमा व्यवसाय में निजीकरण का प्रभाव

धीरज नेगी *

भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना सन् 1956 में हुई थी, यह देश की सबसे बड़ी जीवन बीमा कम्पनी है। यह देश की सबसे बड़ी निवेशक कम्पनी भी है। यह पूरी तरह से भारत सरकार के स्वामित्व में है। इसका मुख्यालय भारत की वित्तीय राजधानी मुम्बई में है। निगम के 8 आंचलिक कार्यालय और 101 संभागीय कार्यालय देश के विभिन्न भागों में स्थित है। इसके लगभग 2048 कार्यालय देश के कई शहरों में स्थित है और इसके 10 लाख से ज्यादा एजेण्ट भारत भर में फैले हैं।[1] भारत की संसद ने सन् 1956 में देश में बीमा व्यवसाय के कार्यरत् 245 से अधिक बीमा कम्पनियों का विलय कर भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना की थी। भारतीय जीवन बीमा निगम का बोध वाक्य ''योगक्षेम वहाम्यहम'' अर्थात् आपका कल्याण हमारी जिम्मेदारी है।[2] अगस्त 2000 में भारत सरकार ने बीमा क्षेत्र का उद्धार करने के लिए एक कार्यक्रम की शुरुआत की और इसे निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया। सन् 1956 से जीवन बीमा व्यवसाय के राष्ट्रीयकरण से भारतीय जीवन बीमा निगम को जो एकाधिकार प्राप्त था वह सन् 2000 में समाप्त हो गया।

भारतीय जीवन बीमा निगम ने निजी बीमा कम्पनियों से प्रतिस्पर्धा हेतु स्वयं को तैयार करने के लिए परिस्थितियों के अनुरुप अपनी रणनीति बनाई। निगम ने शीघ्र ही अपनी समस्त शाखाओं को कम्प्यूटरीकृत कर दिया। बोनस दरों में बढ़ोत्तारी के साथ-साथ निगम ने नयी तरह की पॉलिसीयाँ भी जारी की हैं, ताकि उपभोक्ता अपनी आवश्यकतानुसार उत्पाद खरीद सकें।3

तालिका क्र. 01 भारत में जीवन बीमा व्यवसाय में प्राप्त कुल प्रीमियम

क्र.	बीमा कम्पनी	कुल जीवन बीमा प्रीमियम (करोड़ रु.)	
		2000-01	2010-11
1.	भारतीय जीवन बीमा निगम	34892.02	203473.40
2	निजी कम्पनियाँ	6.45	88131.60
	कुल	34898.47	291605

स्त्रोत:-www.irda.gov.in

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से निम्न निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:-

- निजी क्षेत्र की बीमा कम्पनियों की तुलना में भारतीय जीवन बीमा निगम दस वर्षो के बाद भी बीमा व्यवसाय पर अपना अधिकार बनाए हुए हैं। सन् 2010-11 में कुल जीवन बीमा प्रीमियम का 69.7770 प्रतिशत भाग भारतीय जीवन बीमा निगम से प्राप्त किया है।
- निजी क्षेत्र की बीमा कम्पनियाँ भी निरन्तर बाजार में अपना विस्तार कर रही हैं। सन् 2000-01 में इन कम्पनियों के प्राप्त कुल प्रीमियम 0.1848 प्रतिशत था जो बढ़कर सन् 2010-11 में 30.2293 प्रतिशत हो गया है।

भारत में बीमा व्यवसाय का लगभग 80 प्रतिशत भाग शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित है। भारत में लोगों ने जीवन बीमा में अधिकांशत: कर से बचत उद्देश्यों को लेकर ही जीवन बीमा में निवेश किया है। भारत सरकार ने बीमा व्यवसाय के नियमन एवं इसे बढ़ावा देने के लिए बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण (आई. आर. डी. ए.) का गठन किया गया। इसने बीमा जागरुकता हेतु 'बीमा बेमिसाल' के ब्राण्ड नाम के अभियान और उपभोक्ता शिक्षा की पहल शुरु की हैं। भारत सरकार ने बीमा व्यवसाय में 26 प्रतिशत तक की विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) को बढ़ाकर सन् 2013 में 49 प्रतिशत एफडीआई का प्रस्ताव किया है। जीवन बीमा एक पेशेवर सेवा है। सन् 1999 तक भारत में जीवन बीमा व्यवसाय के अन्तर्गत भारतीय जीवन बीमा निगम को एकाधिकार प्राप्त था। सरकार ने बीमा व्यवसाय में उदारीकरण की नीति के कारण जीवन बीमा व्यवसाय के क्षेत्र में निजी कम्पनियों को व्यवसाय की अनुमति दी है। इस समय देश में 23 निजी कम्पनियाँ जीवन बीमा के क्षेत्र में व्यवसाय कर रही हैं।[4]

भारत में निजी क्षेत्र की बीमा कम्पनियाँ:-

1. मेक्स न्यूयार्क लाईफ इंश्योरंस कं. लि. 2. बजाज आलियांज लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 3. भविष्य जनरली लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 4. टाटा एलआईजी लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 5. एचडीएफसी स्टेण्डर्ड लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 6. बिरला सन लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 7. एस टी आई लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 8. भारती एक्सा लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 9. डी एल एफ प्रामेरिका लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 10. आईसीआईसीआई प्रुडेंसियल लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 11. सहारा इण्डिया लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 12. स्टार यूनियन दाई इची लाईफ इंश्योरंस कम्पनी 13. रिलायंस लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 14 इण्डिया फस्ट लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 15. अरीवा लाईफ सन्स 16. आईएनजी वैश्य लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 17. कोटक महिन्द्रा ओम लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 18. श्रीराम लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 19. वोमसें लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 20. एमोन रेवियर लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 21. आईडीटीआई फेडरल लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 22. मेट लाईफ इण्डिया लाईफ इंश्योरंस कं.लि. 23. एडलवाहस टोक्यो लाईफ इंश्योरंस कं.लि.

तालिका क्र. 02 भारत में जीवन बीमा निगम का व्यवसाय

क्र.	वर्ष	नव-व्यवसाय पालिसियाँ (करोड़ में)	प्राप्त प्रीमियम रु. करोड़ में)
1.	2009-10	3.88	26193
2.	2010-11	3.70	26483
3.	2011-12	3.57	26189

स्त्रोत:-www.irda.gov.in

उपर्युक्त तालिका की विवेचना से स्पष्ट है कि गत तीन वर्षो में भारतीय जीवन बीमा व्यवसाय की नवीन-व्यवसाय की पालिसीयों से प्राप्त प्रीमियम राशि में निरन्तर गिरावट हो रही हैं। यह भारतीय जीवन बीमा निगम के लिए चिंता का विषय हो सकता है। भारतीय जीवन बीमा निगम के नवीन व्यवसाय पर निजी कम्पनियों की प्रतिस्पर्धा का प्रभाव इस तालिका के समंको से स्पष्ट प्रतीत हो रहा है। भारतीय जीवन बीमा निगम ने निजी क्षेत्र की बीमा कम्पनियों से प्रतिस्पर्धा करने के लिए 31 दिसम्बर 2013 से अपनी चुनिन्दा 4-6 जीवन बीमा पॉलीसियों को छोड़कर शेष सभी परम्परागत जीवन बीमा पॉलीसियों को बन्द करने का निर्णय लिया है। भारतीय जीवन बीमा निगम ने यह रणनीति बनाई हैं कि परम्परागत पॉलीसियों के स्थान पर नवीन उत्पाद जारी कर बीमा बाजार में अपना स्थान बनाए रखें।

संदर्भ ग्रंथ

1- hiwikipedia.org/wiki
2- en.wikipedia.org/lifeinsuranceco.
3. विश्नोई, डॉ. आर. के. : बीमा व्यवसाय के सिद्धान्त, एसबीपीडी पब्लिकेशन्स, आगरा, 2012
4- Insurance Regulatary and development Authority.

* सहायक प्राध्यापक वाणिज्य, सरदार वल्लभ भाई पटेल महाविद्यालय, मण्डलेश्वर, जिला खरगौन (म.प्र.) भारत

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) : ग्रामीण रोजगार का एक सशक्त आधार

डॉ. अभय मूंगी *

भारत का वैभव नगर की गगनचुंभी अट्टालिकाओं में नहीं वरन् ग्राम की झोपड़ियों में छिपा हुआ है। ग्रामवासियों को उचित आवास और रोजगार की सुविधा उपलब्ध कराने से ही उनको अपने रचनात्मक कार्यों जैसे-सफाई, सड़कें, ग्राम पंचायतें आदि के लिए प्रेरित कर सकते हैं, क्योंकि ऐसी अवस्था में वे मानसिक निश्चितता से अपने कल्याण के प्रति जागरुक रह सकते हैं।'[1]

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 को द्वारा 23 अगस्त 2005 को पारित किया गया था और यह 7 सितंबर 2005 को लागू किया गया। इस अधिनियम के आधार पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का शुभारंभ डॉ. मनमोहन सिंह ने 2 फरवरी 2006 को किया। प्रारंभ में इसे देश के 200 जिलों में तथा अगले 3वर्ष में इसे देश के 624 जिलों में चरणबद्ध तरीके से कवर किया गया।[2]

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के तहत् महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना (मनरेगा) केन्द्र सरकार द्वारा प्रारंभ की गई ऐसी महत्वाकांक्षी योजना है, जिसने न केवल भारतीय ग्रामीण गरीब परिवारों के लिए रोजगार की नई ऊंचाई दी है वरन् देश के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन पर बहुआयामी स्थाई प्रभाव छोड़े हैं। यह योजना अस्थाई रुप से न्यूनतम निर्धारित मजदूरी पर अकुशल शारीरिक श्रम करने के लिए तैयार किसी भी ग्रामीण को 15 दिनों के अंदर रोजगार की वैधानिक गारंटी प्रदान करती है। मांगने पर रोजगार निर्धारित समयावधि (15 दिवस) में उपलब्ध नहीं होने पर बेरोजगारी भत्ता प्राप्त करने का अधिकार है। इस योजना का उद्देश्य वित्तीय वर्ष में ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले प्रत्येक परिवार के वयस्क सदस्य को जो अकुशल श्रम (मजदूरी) करने का इच्छुक है, की आजीविका सुरक्षा बढ़ाने के उद्देश्य से एक वित्तीय वर्ष में कम-से-कम 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराने की गारंटी और स्थायी परिसम्पत्तियों का सृजन करना है।[3] यह एक ऐसा पहला कार्यक्रम है जो पूर्णत: गरीबों के प्रति समर्पित है। आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को कानून के माध्यम से आवाम तक पहुंचाने का प्रयास किया गया है। इसमें यह प्रयास किया जाता हैं कि कार्य आवेदक के ग्राम पंचायत (आवास क्षेत्र) से 5 किलोमीटर के में उपलब्ध कराया जाता है। कार्य दूर होने की स्थिति में मजदूरी का 10 प्रतिशत आवास भत्ता तथा दैनिक यात्रा भत्ता भी दिया जाता है।[4]

प्रारंभिक प्रारुप में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के अन्तर्गत देश के कुल 200 जिलों को लिया गया जिसमें बाद में 130 जिलें और शामिल किए गए परंतु वर्तमान समय में इस योजना के तहत् देश के सभी 624 जिले आते हैं।[5] सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना को महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना 2006 मनरेगा में सम्मिलित कर दिया गया है।[6] देश में योजना के क्रियान्वयन के लगभग आठ वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। देश भर में जहां नहर, तालाब, सड़क निर्माण के जरिये रोजगार प्रदान किया जा रहा है, वही इन कार्यों में वृद्धि कर वन संरक्षण, भूमि संरक्षण, खेतों बगीचों में सुधार, सूखा राहत कार्य तथा स्वच्छता अभियान चलाकर गांवों की तस्वीर बदलने का भी प्रयास किया जा रहा है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का उद्देश्य देश में कृषि विकास में सुधार हेतु कपिलधारा उपयोजना के अंतर्गत निजी कृषि भूमि पर सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराने के लिए कपिलधारा उपयोजना का क्रियान्वयन किया गया। इस योजना का लाभ गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले हितग्राही के साथ-साथ अन्य चिन्हित वर्ग के हितग्राही परिवारों की जमीन में सिंचाई के साधन जैसे-कुआँ, तालाब, सेंटरी चेक डेम, स्टाप डेम, छोटे तालाब आदि बनवायें जाते हैं। प्रति वर्ष प्रत्येक गाँव से 25 हितग्राहियों को योजना से लाभ प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।[7]

दिसंबर 2010 तक ही इस योजना के तहत सरकार देश के चार करोड़ दस लाख परिवारों को रोजगार मुहैया करा चुकी थी। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से रोजगार पाने वाले इन परिवारों की सामाजिक स्थिति और इनके वर्गीय चरित्र का आकलन किया जाए तो इस योजना की सफलता और भी उल्लेखनीय जान पड़ती हैं। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से रोजगार पाने वाले लोगों में जहां 47 प्रतिशत महिलाएं थी तो वहीं 28 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति तथा 24 प्रतिशत लोग अनुसूचित जनजाति के थे। इस दृष्टिकोण से महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना न केवल अकुशल ग्रामीण मजदूर को रोजगार उपलब्ध कराने वाली योजना बन सकी वरन् इसने सामाजिक रुप से पिछड़े वर्गों के आर्थिक सशक्तिकरण के द्वारा सामाजिक न्याय के महत्वपूर्ण और प्रभावी औजार के रुप में भी कार्य किया है। इस योजना ने जाति, संप्रदाय तथा लिंग भेद से अलग हटकर समाज के सबसे अधिक कमजोर वर्गों के आर्थिक सशक्तिकरण का काम कर ग्रामीण रोजगार का एक सशक्त माध्यम बनी हैं। इतना ही नहीं महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ने के कारण देश के ग्रामीण क्षेत्रों में अपना वेतन पाने के लिए 10 करोड़ लोगों को बैंक या स्थानीय डाकघर में खाते खोले हैं, जिससे की ग्रामीण मजदूरों की मजदूरी सीधे उनके खाते में जमा हो जाए तथा ग्रामीण गरीब मजदूरों में जमा और बचत की भावना का भी प्रसार हुआ है। इसके लिए केन्दीय वित्त मंत्रालय और भारतीय रिजर्व बैंक में खाता खुलवाने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के जॉबकार्ड को मान्यता प्रदान कर दी है। केन्द्रीय ग्रामीण विकास विभाग मंत्रालय ने जॉबकार्ड में सम्बन्धित परिवार या व्यक्ति की अन्य कई जानकारियां समाहित करने के निर्देश दिए है। बैंक खाते के लिए जॉबकार्ड को मान्यता मिलने के बाद इनमें अब यूनिक आइडेंटिटी नंबर, सदस्य और उसके परिजनों के फोटों बैंक तथा पोस्ट ऑफिस खाता संख्या, इंश्योरेंस पॉलिसी, मतदाता पहचान-पत्र के नंबर, आवेदक के हस्ताक्षर, अंगूठा निशानी, जॉबकार्ड पंजीकृत करने वाले अधिकृत व्यक्ति की मुहर, हस्ताक्षर तथा सत्यापन करने वाले सरकारी अधिकारी या विकास अधिकारी के हस्ताक्षरों का इंद्राज किया गया है।[8]

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत् 2010-11 में 5.49 करोड़ परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराए गए। कुल मिलाकर 257.15 करोड़ श्रम दिवस रोजगार का सृजन सन्दर्भित वर्ष में इस योजना के तहत् किया गया। पूर्व वर्ष में 2009-10 में 5.26 करोड़ परिवारों को इस योजना के तहत् रोजगार उपलब्ध कराया गया था तथा 283.59 करोड़ श्रम दिवस रोजगार सृजित किए गए थे। ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश ने यह जानकारी देते हुए 16 अगस्त 2011 को राज्य सभा में बताया कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) को और ज्यादा प्रभावी बनाने ओर राज्यों में कार्य निष्पादन को बेहतर बनाने के लिए सरकार

* सहायक प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय बड़वाह, जिला- खरगौन (म.प्र.) भारत

ने कई कोशिशें की हैं। इन कदमों में प्रबन्धन और प्रशासनिक मदद सरंचना को सुदृढ़ बनाना, प्रशासनिक व्यय की सीमा में दो प्रतिशत की वृद्धि करना, राज्य रोजगार गारंटी कोष बनाने पर जोर देना आदि शामिल हैं।[9] (देखिए तालिका क्रमांक 01)

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की मजदूरी को उपभोक्ता मूल्य सूचकांक से जोड़ दिया है लेकिन अभी कई राज्यों में मिलने वाली मजदूरी न्यूनतम मजदूरी से कमत्तर है। योजना के प्रारंभ में योजना का पारिश्रमिक 57 रुपये प्रतिदिन था, जिसे बाद में बढ़ाकर 100 रुपये किया गया। वर्तमान में यह 125 रुपये से लेकर अलग-अलग राज्यों में 180 रुपये तक है। पारिश्रमिक की दर पुरुष और महिलाओं के लिए एक समान हैं, इसमें कोई लैंगिक भेदभाव नहीं हैं। इस लैंगिक समानता के अलावा महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ने महिला सशक्तिकरण की एक नई पटकथा लिखी हैं। बड़ी संख्या में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में सूख गए जलाश्यों, पोखरों, बावड़ियों और तालाबों को पुनर्जीवित और संरक्षित करने का प्रभावी काम हो पाया है। यह राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कानून ही है, जिसके क्रियान्वयन के बाद से कृषि क्षेत्र में न्यूनतम मजदूरी दोगुनी हुई हैं। दरअसल कम कृषि मजदरी ही ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का मुख्य कारण रहा है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के लागू होने रोजगार की संभावनाएं बनने तथा कृषि मजदूरी में बढ़ोतरी के कारण गांवों से मजदूरों के विस्थापन और पलायन में भी कमी आई हैं। इसके अलावा इस कानून की एक बड़ी उपलब्धि ग्रामीण क्षेत्रों में सामुदायिक संसाधनों का निर्माण भी है जिसमें ग्रामीण इलाकों में सड़कों, परंपरागत जलाशयों का संरक्षण और नए स्त्रोतों का निर्माण भी किया गया है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की यह ऐसी उपलब्धियां हैं, जो ग्रामीण समाज पर व्यापक एवं दूरगामी प्रभाव छोड़ रही हैं और जिसके नतीजे आने वाले समय में भी सकारात्मक और बहुआयामी साबित होगें।[9]

यदि रोजगार सृजन करने और उपलब्ध कराने के संदर्भ में सरकार की यह महत्वपूर्ण उपलब्धि कहीं जा सकती हैं। योजना आयोग के उपाध्यक्ष के अनुसार 'वर्तमान में सरकार ने तीन गुना रोजगार मुहैया कराए हैं और इस सफलता का श्रेय मनरेगा को ही जाता है।' इस योजना की शिल्पकारों ने जहां इस योजना की अब तक की उपलब्धियां गिनाईं, इस योजना को न केवल ग्रामीण क्षेत्रों के समग्र विकास के लिए अहम माना जा रहा है, बल्कि दूसरी हरित क्रांति के सपने को साकार करने में उसकी प्रमुख भूमिका देखी जा रही हैं वहीं इसके अमल में भ्रष्टाचार पर चिंता जताते हुए उस पर रोक लगाने और योजना का दायरा बढ़ाने की जरुरत भी जताई हैं। बेशक इस योजना ने अपने सात वर्ष के सफर में ग्रामीण जनजीवन पर सकारात्मक असर डाला है। उसने ग्रामीणों के आर्थिक उन्नयन में अपनी भूमिका निभाई है और इसकी बदौलत गांवों से लोगों के पलायन में कमी भी आई हैं। समय-समय पर कुछ गैर सरकारी संगठनों की अध्ययन रिपोर्टों में इस योजना के क्रियान्वयन में हुई अनियमितताएं उजागर हुए हैं। सरकारी एजेंसियों ने भी इस आशय की शिकायतों की तस्दीक की है और संसद की वित्त मंत्रालय की स्थायी समिति ने इस योजना में व्याप्त धांधलियों को रेखांकित किया है। मनरेगा में भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए सोशल ऑडिट और सूचना प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के जो उपाय बताए वे एक सीमा तक ही प्रभावी हो सकते हैं। भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए और भी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। भविष्य में मनरेगा को और प्रभावी और परिणाममूलक बनाने के लिए जरुरी होगा कि जवाबदेही के साथ-साथ ग्राम पंचायतों को उनकी जरुरत के अनुसार कार्य चुनने और इसमें मनरेगा के मजदूरों को भागीदार बनाने के लिए ज्यादा अधिकार दिए जाएं।[10] मनरेगा ग्रामीण रोजगार का एक सशक्त माध्यम बनी हैं। इससे ग्रामीण जनता का रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन भी रुक गया है वहीं शहरी क्षेत्र के जिन मजदूरों को कार्य नहीं मिल रहा था अब वे गांव की ओर देख रहे हैं। गांवों का सर्वांगीण विकास के साथ-साथ पौधारोपण, जल संरक्षण, भूमि संरक्षण तथा सड़क निर्माण से ग्रामीण परिवेश में सुधार हुआ है। अनेक तरह की अनियमितताओं और भ्रष्टाचार के आरोपों और आलोचनाओं के बीच भी मनरेगा ने भारतीय समाज के जनजीवन पर कई रुपों में क्रांतिकारी परिवर्तन किए है।

संदर्भ ग्रंथ -

1. कुरुक्षेत्र : ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अक्टूबर, 2006, पृष्ठ संख्या 14
2. **http://www.mgnregaup.in/**
3. ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाएं एवं कार्यक्रम पुस्तिका, महात्मा गांधी राज्य ग्रामीण विकास संस्थान, अधारताल, जबलपुर (म.प्र.), 2010, पृष्ठ संख्या 3
4. शर्मा, डॉ. दीपक : मनरेगा : ग्रामीण रोजगार हेतु क्रांतिकारी कदम, कुरुक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अक्टूबर, 2013, पृष्ठ संख्या 40
5. राठी, महेश : वंचितों के सशक्तिकरण का औजार बनती मनरेगा, उद्योग व्यापार पत्रिका, इण्डिया टुडे प्रमोशन आर्गनाइजेशन, नई दिल्ली, (अंक-जनवरी, 2013), पृष्ठ संख्या 34
6. पन्त, डॉ. डी.सी. : भारत में ग्रामीण विकास, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2009, पृष्ठ संख्या 224
7. नेमा, डॉ. डी. के., पाराशर, शरद कुमार : मध्यप्रदेश के सागर संभाग में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी क्रियान्वयन का मूल्यांकन, रिसर्च रिवाल्यूशन, इन्दौर, सितंबर, 2013, पृष्ठ संख्या 55
8. शर्मा, डॉ. दीपक : मनरेगा : ग्रामीण रोजगार हेतु क्रांतिकारी कदम, कुरुक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अक्टूबर, 2013, पृष्ठ संख्या 43
9. प्रतियोगिता दर्पण, समसामयिक वार्षिकी 2012, 2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा, 2012, पृष्ठ संख्या 248
10. राठी, महेश : वंचितों के सशक्तिकरण का औजार बनती मनरेगा, उद्योग व्यापार पत्रिका, इण्डिया टुडे प्रमोशन आर्गनाइजेशन, नई दिल्ली, (अंक-जनवरी, 2013) पृष्ठ संख्या 34
11. नईदुनिया, दैनिक समाचार-पत्र, इंदौर, दिनांक 05 फरवरी 2013, पृष्ठ संख्या 6

तालिका क्र. 01 मनरेगा से मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य परिवार को रोजगार की प्राप्ति की स्थिति

क्र.	वर्ष	जारी किए गए जॉब कार्ड की संख्या	रोजगार प्राप्त करने वाले परिवार की संख्या	अनुसूचित जाति परिवार (प्राप्त मानव दिवस) (लाख में)	अनुसूचित जनजाति परिवार (प्राप्त मानव दिवस) (लाख में)	अन्य परिवार (प्राप्त मानव दिवस) (लाख में)	कुल
1	2007–08	7238784	4346916	491.96	1342.46	918.59	2753.01
2	2008–09	11229546	5204924	525.07	1379.54	1042.35	2946.97
3	2009–10	11292252	4722409	484.35	1188.25	950.52	2623.12
4	2010–11	11384370	4384683	428.19	954.72	821.1	2204.01

*स्त्रोत:**http://www.manrega.nic.in/***

गरीबी व भूख का अर्थशास्त्र : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. गणेश प्रसाद दावरे *

भारतीय अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या है – गरीबी। भारत की लगभग 60 फीसदी आबादी अभी भी भरपेट खाना नहीं खा पाती। गरीबी से लोगों का आत्म सम्मान गिर रहा है। उनमें कुंठा, हताशा और आक्रोश पैदा हो रहा है, जो हिंसा की ओर ले जाते हैं। यही गरीबी लोकतंत्र एवं शान्ति तथा सुरक्षा के लिये चुनौती बनी हुई है। भूख का अपना व्याकरण होता है और उसमें अधिकारों के अलंकरण की कोई जगह नहीं होती। देश में आर्थिक विकास के साथ आर्थिक असमानताएँ बढ़ती जा रही है।

भारत में गरीबी तय करने के लिये बनाये गये अनेक मापदण्ड विवादित बने हुए हैं। गरीबों की संख्या को लेकर योजना आयोग एवं विभिन्न संगठनों के समंको में काफी अन्तर है। योजना आयोग गरीबी रेखा को परिभाषित करने के लिये कैलोरी को आधार मानता है।

आयोग के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों के लिये 2400 व शहरी क्षेत्रों के लिये 2100 कैलोरी जितना भोजन प्रतिदिन नहीं मिलता है तो यह माना जायेगा कि वह व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे है। पौष्टिकता को मौद्रिक रूप में देखा जाए तो यह 107 रू. प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह गाँवों में तथा 122 रू. प्रतिमाह शहरी क्षेत्रों में आता है। इसके बाद ग्रामीण क्षेत्रों में 11060 रू. एवं शहरी क्षेत्रों में 11850 रू. प्रतिगृह वार्षिक उपभोग व्यय का मापदण्ड निर्धारित किया गया। योजना आयोग के नवीनतम आँकड़ों के अनुसार शहरी क्षेत्रों में 26 रू. प्रतिदिन एवं ग्रामीण क्षेत्रों में 21 रू. प्रतिदिन से कम मजदूरी पाने वाले व्यक्ति गरीबी रेखा के नीचे माने जाते हैं। वातानुकुलित कमरों में बैठे अफसरों को पता ही नहीं कि गरीबी क्या होती है। उन्हें पता ही नहीं कि महंगाई आसमान छू रही है तथा जीवनावश्यक वस्तुओं की कीमतें क्या है?

देश की जनता गरीबी एवं भूख से जुझ रही है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा गरीबी व भूख पर आयोजित सम्मेलन में कहा गया कि विश्व में हर 03 सेकण्ड में एक आदमी भूख से मर रहा है। एन.एस.एस. के अनुसार इस समय देश में गरीबी रेखा के नीचे अपना जीवन यापन करने वालों का प्रतिशत देश की कुल जनसंख्या का 19.7%अनुमानित किया गया है।

जब किसी देश में विकास होता है तो गरीबी धीरे–धीरे कम होने लगती है। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने के साथ–साथ प्रतिव्यक्ति आय बढ़ने लगती है। विकास एवं गरीबी में धनात्मक सहसम्बन्ध का होना माना जाता है, लेकिन कुछ विद्धानों के अनुसार देश के विकास के साथ–साथ गरीबी घटने के स्थान पर बढ़ी है। नेशनल कौंसिल ऑफ एम्प्लायड इकॉनोमिक रिसर्च (NCAER)के अनुसार ''एक प्रतिशत परिवारों के पास कुल राष्ट्रीय सम्पत्ति का 14: है, जबकि 50% परिवारों के पास कुल राष्ट्रीय सम्पत्ति का मात्र 7% ही पाया गया है।''

आर्थिक आँकड़े, भारतीयों का जीवन स्तर, आर्थिक विषमताओं की गहरी खाई, कुपोषण से हो रही मौतें आदि इस बात को स्पष्ट करते हैं कि भारत में अन्य देशों के मुकाबले गरीबी की स्थिति चिन्तनीय है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार विकास दर के साथ गरीबी कम तो हो रही है, लेकिन जनसंख्या में तीव्र वृद्धि दर ने गरीबी की कम होती दर को काफी धीमा कर दिया है।

तालिका क्र0 – 01

वर्ष	कुल जनसंख्या में गरीबी का प्रतिशत
1973–74	54.9
1987–88	38.9
1993–94	36.0
2004–05	27.5
2008–09	19.34

स्त्रोत : Economy Survey 2009-10, P-213

तालिका क्र0 – 02
इण्डिया विजन – 2020

क्र.	विकास के संकेत	2020 में सम्भावना
1	गरीबी रेखा के नीचे की आबादी	13%
2	बेरोजगारी की दर	6.8%
3	वयस्क पुरूष साक्षरता	96%
4	वयस्क महिला साक्षरता	94:
5	प्राथमिक विद्यालयों में दाखिला	9.9:
6	शिक्षा पर खर्च (जी.डी.पी. का प्रतिशत)	4.9%
7	जीवन प्रत्याशा	69 वर्ष
8	05 वर्ष से कम के बच्चों में कुपोषण	8%

तालिका क्र. 01 के समंकों से स्पष्ट होता है कि सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारतीय जनसंख्या में गरीबी का प्रतिशत निरन्तर कम हो रहा है, जो वर्ष 1973–74 में 54.9: से घटकर 2008–09 तक 19.34: रह गई है। अन्य तथ्यों के आधार पर भी सन् 1950–51 में चालू मूल्यों के आधार पर देश में प्रतिव्यक्ति आय जो 225 रू0 मात्र थी, वह 2009–10 में बढ़कर 40,745 रू. हो गई है। 1955–56 में भारत में खाने के तेलो की प्रतिव्यक्ति उपलब्धता 2.5 किलोग्राम थी, वह 2008–09 में बढ़कर 12.1 किलोग्राम हो गई। इसी अवधि में चीनी की उपलब्धता 05 किलोग्राम से बढ़कर 18.8 किलोग्राम हो गई। घरेलू बिजली की खपत 2.4kwhसे बढ़कर 106kwh हो गई। इन समंको से यह बात सिद्ध होती है कि भारत में गरीबी में कमी आयी है।

देश की पंचवर्षीय योजनाओं का एक मुख्य उद्देश्य ही गरीबी एवं असमानता पर प्रहार करना तथा देश को आत्मनिर्भरता के स्तर पर पहुंचाना रखा जाता रहा है। योजनाओं में 'सामाजिक न्याय' की बात की जाती रही लेकिन गरीबों की संख्या में कोई विशेष कमी दृष्टिगोचर नहीं हुई। सरकारी आंकड़ों के विपरीत सुरेश तेन्दुलकर समिति की एक रिपोर्ट के अनुसार देश में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वालों की संख्या कुल आबादी की 37.2: है। छठवीं योजना में यह स्वीकार किया गया कि भारत की लगभग 50: जनसंख्या काफी लम्बे समय से गरीबी रेखा से नीचे पायी गई है।

* प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय बड़वाह, जिला – खरगौन (म.प्र.) भारत

छठवीं योजना के 10 प्रमुख उद्देश्यों में से एक ''गरीबी व बेरोजगारी के भार को उत्तरोत्तर कम करना'' रखा गया था। सातवीं योजना में भी गरीबी उन्मुलन की बात कही गई, जबकि आठवीं योजना में इसे प्रमुख स्थान दिया गया। नौवीं योजना में कृषि व ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देकर गरीबी को कम करने के प्रयास थे। दसवीं व ग्यारहवीं योजना में भी गरीबी उन्मुलन को मुख्य उद्देश्यों में रखा गया। नौवीं पंचवर्षीय योजना में 1996-97 के लिये निर्धनता के अनुमान 1993-94 तथा 1996-97 के दौरान अनुभव की गई वृद्धि दर के आधार पर अनुमान लगाया गया कि पिछले तीन वर्षो के दौरान 6.5% की औसत वृद्धि दर के परिणामस्वरूप 1996-97 में ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता अनुपात कम होकर 30.55% , शहरी क्षेत्रों में 25.58% तथा सम्पूर्ण देश में घटकर 29.18% हो गया। दसवीं योजना में लक्षित 8% की वार्षिक वृद्धि के साथ निर्धनता अनुपात को 19.34% होने का अनुमान व्यक्त किया गया था।

ग्रामीण विकास एवं ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों के माध्यम से गरीबी पर सीधा प्रहार करने की नीतियां भी वांछित परिणाम दिलाने में असफल रही है। पांचवी पंचवर्षीय योजना से ही ग्रामीण गरीब जनता के लिये बहुत से विशेष रोजगारमूलक कार्यक्रम तैयार किए गए जैसे - सूखा सम्भाव्यता क्षेत्र कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम खेतीहर मजदूर रोजगार गारन्टी कार्यक्रम, महात्मा गांधी रोजगार गारन्टी कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, काम के बदले अनाज योजना आदि।

सरकार को देश में खुशहाली हेतु भूख से निपटने हेतु ठोस नीति बनानी चाहिए और यह सुनिश्चित करे कि मदद सही हाथों में पहुंचे। विकास की गति तेज करनी चाहिए। विकास की गति के साथ रोजगार सुविधाएं बढ़ेगी। ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे-छोटे कुटीर एवं लघु उद्योग स्थापित करके गांवों में रोजगार के अवसर बढ़ाने की जरूरत है। गांवों में सार्वजनिक कार्य तेजी से शुरू किये जाने चाहिए। इसके लिये सड़के, नहरें, कुएं, ग्रामीण मकान, बिजली आदि के निर्माण कार्य प्रारम्भ किये जा सकते हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी कम होगी और गरीबी को कम करने में सहायता मिलेगी। सरकार को सामाजिक सेवाएं जैसे - स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन आदि का विस्तार करना चाहिए और जनता को जागरूक किया जाना चाहिए कि कम आय में वह किस प्रकार अच्छा जीवन व्यतीत कर सकती है। जनसंख्या को नियंत्रित करने के लिए परिवार कल्याण कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए। निष्कर्ष में गरीबी को कम करने का कार्य एक चुनौती है। प्रशासन को यह सुनिश्चित करना होगा कि किसी भी व्यक्ति की भूख से मौत न हो।

तालिका क्र. 02 में सन् 2020 में गरीबी के समंकों पर सम्भावित दृष्टि डाली गई है। देश में गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बिताने वालों की स्थिति में सुधार करने के लिय 'विजन -2020 फॉर इण्डिया' नाम से एक महत्वाकांक्षी नीतिगत दस्तावेज केन्द्र सरकार द्वारा तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य एक निश्चित समय सीमा के अन्दर गरीबी की रेखा से नीचे आने वाले व्यक्तियों का विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा स्थिति में सुधार लाना है, ताकि अगले 20 वर्षो में देश में से गरीबी को पूरी तरह से दूर किया जा सके। नोबेल पुरस्कार विजेता प्रो. अमर्त्य सेन ने अपनी पुस्तक में लिखा है ''देश के रूप में भारत की सम्पन्नता दिखती है, लेकिन बड़े वर्ग तक सम्पन्नता का अंश आज भी नहीं पहुंच पाया है। यही विकास बढ़ती खाई का कारण बन रहा है।

राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक को सम्बोधित करने हुए प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने भी एक बार कहा था ''विकास अपने आप में पर्याप्त नहीं है। यदि यह ऐसे लाभ पैदा नहीं करता, जिसका पर्याप्त रूप में चारों ओर विस्तार नहीं हुआ हो। इसलिए विकास प्रक्रिया ऐसी हो, जो सभी को अपने में समाहित कर सके।

सन्दर्भ :-

1. Economic Survey 2009-10, 2010-11
2. योजना आयोग, नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002)
3. भारतीय अर्थव्यवस्था, के0पी0एम0 सुन्दरम
4. राजस्थान पत्रिका, 11 फरवरी 2007 (रविवारीय)

****

बड़वानी जिलें की अर्थव्यवस्था में कपास उद्योग का योगदान- एक समीक्षात्मक मूल्यांकन

डॉ. एम.आर. महाले*

भारतीय अर्थव्यवस्था में आज भी कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। मध्यप्रदेश के बड़वानी जिले की अर्थव्यवस्था मुख्यत: कृषि पर निर्भर हैं। जिले की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि तथा कृषित्तर कार्यो में लगी हुई हैं। जिले की सभी तहसीलों में बड़ी संख्या में जनजातीय समुदाय के लोग निवास करते हैं। इनमें भील, भीलालें, बारेला तथा बंजारा जाति के लोग हैं। इनके पास जो कृषि भूमि हैं वह निम्न दर्जे व अलाभप्रद हैं। गैर-जनजातीय लोग पाटीदार, यादव, गुर्जर व सिंर्वी हैं। इनके पास उन्नत किस्म की कृषि भूमि हैं। यहाँ के अग्रवाल, जैन, गुप्ता, महाजन, पालीवाल तथा सिंधी परिवारों की आमदनी का प्रमुख स्त्रोत व्यापार हैं।

सिंचाई के साधनों के पर्याप्त विस्तार न होने के कारण बड़वानी जिले की कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता हैं। जिले की खरीफ की फसलों में मुख्य रुप से कपास, ज्वार, मुंगफली व दालों की पैदावार होती हैं। रबी की मुख्य फसलें गेहूँ तथा चना हैं। कपास बड़वानी जिले की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल हैं जिसकी खेती यहाँ की 26.12 प्रतिशत कृषि भूमि पर की जाती हैं। मात्रा की दृष्टि से मध्यप्रदेश में कपास का सर्वाधिक उत्पादन करने वाला यह जिला देश भर में विख्यात हैं। कपास के उत्पादन के संबंध में राज्य में जिले का लम्बे समय से एकाधिकार बना हुआ हैं।

वैश्वीकरण और उदारीकरण के दौर में कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था के साथ कपास उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका हैं। कपास उद्योग ने प्रदेश की अर्थव्यवस्था में बड़ा योगदान दिया हैं। जिनिंग, प्रेसिग व आईल मिलों के खुलने से एक और ग्रामीणों को रोजगार मिला हैं वहीं सरकार की उपेक्षित नीति ने इस उद्योग को हतोत्साहित किया हैं।

बड़वानी जिले का प्रमुख एवं परम्परागत लघु उद्योग कपास उद्योग हैं। यह उद्योग स्वतंत्रता के पूर्व से जिले का गौरव बना हुआ हैं। जिले में लघु उद्योगों की शुरुआत जिनिंग फेक्ट्रियों से हुई हैं। बाद में कपास की और भी अधिक पैदावार होने से इस उद्योग की अधिक से अधिक इकाइयां लगाई जाने लगी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सूती वस्त्र की निरन्तर बढ़ती मांग के कारण जिले में भी इस उद्योग का लगातार विस्तार होता चला गया। स्वतंत्रता पूर्व कपास उद्योग बड़वानी नगर एवं इस रियासत के निकटस्थ ग्रामों विशेषकर अंजड़ एवं तलवाड़ा में ही अधिक केन्द्रित था लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात् अन्य स्थानों जैसे सेंधवा, खेतिया, पानसेमल आदि स्थानों पर भी इसकी इकाइयॉ स्थापित की जाने लगी। वर्तमान में जिले की सर्वाधिक जिनिंग-प्रेसिंग इकाइयाँ सेंधवा में हैं।

बड़वानी रियासत बीसवीं सदी में जिनिंग-प्रेसिंग उद्योग की भांति तेल उद्योग भी काफी विकसित अवस्था में था। कपास के साथ-साथ तिलहनों के बढ़ते उत्पादन के प्रति कृषकों का आकर्षण बढ़ता गया दूसरी ओर कपास की विपुल एवं बढ़ती पैदावार के कारण जिनिंग उद्योग को भी प्रोत्साहन मिला, जिससे कपास्या (काकड़ा) का उत्पादन निरन्तर बढ़ने लगा फलस्वरुप कपास्या (काकड़ा) से तेल निकालने वाली मिले भी अधिक संख्या में स्थापित होने लगी।

बड़वानी जिले में कपास की उपलब्धता (कच्चे माल के रूप में), सस्ते और सुगम श्रम की उपलब्धता तथा कपड़ा उद्योग की बढ़ती मांग के कारण यहां कपास उद्योगों का बढ़ावा मिला। यहां लगभग 1989 से 1990 के दौरान जिले में कपास उद्योग की सबसे अधिक औद्योगिक इकाईयां स्थापित हुई है। इसका प्रमुख कारण यह माना जाता है कि इस क्षेत्र में कपास उद्योग को पल्लवित करने के लिए राज्य शासन ने विक्रय कर में भारी छूट प्रदान की थी। बड़वानी जिले का कपास तथा सीमावर्ती राज्यों महाराष्ट्र तथा गुजरात से काफी बड़ी मात्रा में कपास की आवक होती थी। इस क्षेत्र में महाराष्ट्र राज्य के कृषकों को उनके माल का उचित एवं नगद मूल्य उसी समय प्राप्त हो जाता था तथा महाराष्ट्र राज्य में कपास पर फेडरेशन संगठन लागू होने से वहां के किसान अपना कपास महाराष्ट्र में बेचने में उचित समर्थन मूल्य प्राप्त नहीं कर पाते थे तथा अनेक प्रकार की असुविधा होती थी।

इस जिले में वर्तमान में स्थापित सर्वाधिक कपास उद्योग सेंधवा नगर में स्थापित हैं। इसके पश्चात् क्रमश:: अंजड़, बड़वानी, पानसेमल, खेतिया, राजपुर, ओझर, आदि नगरों का स्थान हैं। बड़वानी जिले में बड़वानी में 12, अंजड़ में 7, पानसेमल में 13, खेतिया में 10 तथा सेंधवा में 135 कपास उद्योग की इकाइयाँ कार्यरत थी। जिले के सेंधवा नगर के कपास उत्पादन का महत्व सम्पूर्ण एशिया में माना जाता था परन्तु यह भूतकाल की बात हो गई हैं। सरकार की उपेक्षापूर्ण एवं दोषपूर्ण नीति के चलते यहाँ की 80 जिनिंग फेक्ट्रियां बन्द हो चुकी हैं।

इस उद्योग के चौपट हो जाने से निमाड़ की 250 जिनिंग फेक्टरियों में से 180 फेक्ट्रियॉ महाराष्ट्र की ओर पलायन कर चुकी हैं। इससे लगभग एक लाख मजदूर बेरोजगार हुए हैं। कपास उद्योग पलायन का प्रमुख कारण शासन इस उद्योग के प्रति उपेक्षा तथा दोषपूर्ण नीति है। कपास उद्योग पर अधिक करो का बोझ तथा कपास उद्योग प्रोत्साहन की योजना न होने से कपास उद्योग बड़वानी जिले से महाराष्ट्र तथा गुजरात पलायन हुए।

बड़वानी जिले में बेरोजगारों के लिए कोई सरकारी उपक्रम स्थापित हैं। यहाँ के स्थानीय छोटे-बड़े उद्यमियों के श्रम व धन से कपास उद्योग को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पहचान मिली थी। मध्यप्रदेश शासन की उपेक्षापूर्ण नीति के कारण इस उद्योग को इस क्षेत्र में भारी क्षति हुई। लगभग एक हजार करोड़ के इस व्यवसाय ने महाराष्ट्र व गुजरात की ओर मुंह कर लिया हैं। यहां की अर्थव्यवस्था पर इस क्षेत्र से उद्यमिता पलायन के प्रभाव को स्पष्टत: देखा जा सकता हैं।

सभी उद्योगों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध रोजगार से होता हैं। इसलिए सरकार की नीति यह होती हैं कि देश के हर क्षेत्र में औद्योगिक विकास हो। बड़वानी जिले में कपास आधारित उद्योगों की स्थापना हुई। लेकिन दीर्घ अवधि तक इन उद्योगों की इकाइयां संचालित नहीं हो सकी। इस उद्योग से बड़वानी जिले में एक लाख से अधिक श्रमिकों रोजगार उपलब्ध था। उद्यमिता के पलायन का सर्वाधिक प्रभाव सेंधवा व अंजड़ नगर पर पड़ा हैं, सेंधवा से ही लगभग 50 हजार श्रमिकों का रोजगार छिन गया हैं।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय बड़वाह, जिला-खरगौन (म.प्र.) भारत

तालिका क्र.1
बड़वानी जिले में कपास का उत्पादन

वर्ष	कपास का उत्पादन (क्विंटल में)
2001-02	25517
2002-03	25641
2003-04	47398
2004-05	51210
2005-06	56840
2006-07	62772
2007-08	78438
2008-09	82390
2009-10	86270
2010-11	91633

स्त्रोत- जिला उद्योग कार्यालय, बड़वानी

जिले के कपास उद्योग से श्रमिक, दलाल, मुनिम, आढ़तियां, अकाउंटेट, हम्माल, तुलावटी, फीटर, तेलवाला, बायलरमेन, आदि पदों पर रोजगार प्राप्त व्यक्ति प्रभावित हुए हैं। इनमें लगभग 80 प्रतिशत व्यक्ति अनुसूचित जाति व जनजाति परिवारों के हैं।

जिले से कपास उद्योग के पलायन से स्थानीय निकायों की आय, ट्रांसपोर्ट व्यवसाय, इंजीनियरिंग वर्क्स के व्यवसाय, कन्सट्रक्शन व्यवसाय, किसानों पर, सरकारी राजस्व में कमी पशुपालन एवं डेयरी व्यवसाय, होटल व्यवसाय, कपड़ा व्यवसाय, इलेक्ट्रानिक्स, जनरल स्टोर्स, स्टेशनरी, अनाज, किराणा, कास्मेटिक्स, चिकित्सा, शिक्षा, बैंकिंग, बीमा, परिवहन, पान-दुकान, हेयर सेलून, फल-सब्जी की दुकान, ड्राइव्हर, टायर एवं ऑटो पार्टस, साबुन उद्योग आदि जैसे अनेकानेक व्यवसाय एवं उद्योग प्रभावित हुए हैं जिससे कई लोगों के रोजगार छिन गये। जिस समय कपास उद्योग अपने चर्मोत्कर्ष पर था तब ये सभी व्यवसाय लाभान्वित कर मिलने वाले रोजगार से अनेक लोगों की जीविकापर्जन का साधन था, लेकिन यहाँ के कपास आधारित उद्यमिता पलायन से यहाँ के मजदूर दो जून की रोटी को मजबूर हैं।

बड़वानी जिले में स्थित कॉटन इण्डस्ट्रीज ने देश और प्रदेश की अर्थव्यवस्था में आर्थिक सुदृढ़ता प्रदान की हैं। एक समय जब जिनिंग, प्रसिंग और आईल मिलो के खुलने से ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्र के लोगों को रोजगार के अवसर मिले लेकिन अब इन उद्योगों के बन्द होने से उनके समक्ष रोजी-रोटी का संकट उत्पन्न हो गया हैं। यद्यपि देर से ही सही मध्यप्रदेश सरकार ने इस उद्योग को संकट से उभारने के प्रयास आरम्भ कर दिए हैं। प्रवेश शुल्क व मण्डी शुल्क में रियायत दी जा गई हैं। इससे यह उद्योग पुर्नस्थापित हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ -

1. मिश्र, डॉ. जयप्रकाश : कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2012
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, बड़वानी, 2011
3. दैनिक भास्कर, कॉटन इंडस्ट्री एट ए ग्लांस, 2006
4. श्रीवास्तव, प्रेमनारायण : पश्चिम निमाड़ जिला गजेटियर, जिला गजेटियर विभाग, म. प्र., भोपाल, 1971
5. विकास यात्रा, दैनिक भास्कर, 2006
6. जिला उद्योग कार्यालय पुस्तिका, बड़वानी, 2011
7. कॉटन ब्रोकर श्री रामकुमार ठाकुर से साक्षात्कार
8. मुनिम श्री गोपाल सोनी से साक्षात्कार।

****

भारतीय कपास निगम की कपास उद्योग में भूमिका

डॉ. मनोहरलाल गुप्ता *

भारतीय कपास निगम (सी. सी. आई.) की स्थापना 31 जुलाई 1970 को कम्पनी अधिनियम 1956 के अधीन पंजीकृत एक सरकारी कम्पनी के रूप में हुई। स्थापना के प्रारंभिक समय मे इसे वस्त्रोद्योग के विभिन्न के घटकों के बीच कपास के समान संवितरण का दायित्व दिया गया तथा कपास के आयात के सरलीकरण के लिए एक साधन के रूप में भी जिम्मेदारी सौंपी गई। कपास परिदृश्य में परिवर्तन के साथ निगम की भूमिका और कार्यकलापों की समय-समय पर समीक्षा भी की गई तथा उसमे आवश्यक संशोधन भी किए गए। वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा वर्ष 1985 के नीति निर्देशों के अनुसार जब कभी कपास के मूल्य (सीड कॉटन) समर्थन स्तर पर पहुँचने लगें, तब निगम को भारत सरकार की नोडल एजेन्सी के रूप में समर्थन मूल्य पर कार्य करने के लिए नामित किया गया।

वस्त्र उद्योग नीति के अनुसार निगम की विनिर्दिष्ट भूमिका इस प्रकार निर्धारित की गई है:-

1. जब कभी कपास के मूल्य भारत सरकार द्वारा घोषित समर्थन मूल्य तक पहुँचते हैं, तब बिना किसी मात्रात्मक सीमा के समर्थन मूल्य कार्य संचालन करना।
2. सी. सी. आई. की अपनी जोखिम पर वाणिज्यिक खरीद कार्य करना।
3. वचनबद्धता को पूरा करने के लिए कपास खरीदना।
4. कपास प्रौद्योगिक मिशन के मिनी मिशन के लिए कार्यान्वयन एजेन्सी के रूप मे कार्य करना।

भारत सरकार की नोडल एजेन्सी के रूप में, निगम समर्थन मूल्य पर कार्य संचालन हेतु सदैव तत्पर रहता है। जब कभी कपास के मूल्य न्यूनतम समर्थन मूल्य के स्तर तक पहुँच जाता है, तब कपास की खरीद न्यूनतम समर्थन मूल्य पर बिना किसी मात्रात्मक सीमा, कपास खरीदी जाती हैं। इस न्यूनतम समर्थन मूल्य पर कपास किसान सी. सी. आई. को बेच सकते है और निगम इस तरह कपास की खरीद तब तक जारी रखता है, जब तक कि कपास मूल्य न्यूनतम समर्थन मूल्य पर आ जाए।

कपास मूल्यों के न्यूनतम समर्थन मूल्य स्तर से ऊपर बने रहने की स्थिति में, निगम राज्य क्षेत्र और निजी क्षेत्र की मीलों को कपास की आपूर्ति करने के लिए अपनी लागत पर कपास की आपूर्ति करने के लिए अपनी लागत पर कपास की वाणिज्यिक खरीद कार्य करता है। इन सभी कार्यो का मूल उद्देश्य एक ओर कपास उत्पादकों को लाभ देना तथा दूसरी ओर वस्त्र मीलों को गुणवत्ता वाली कपास उपलब्ध कराना है।

भारतीय कपास निगम लिमिटेड, भारत सरकार का उपक्रम है। यह देश में कपास विपणन में कार्यरत मुख्य संगठन है। देश के सभी कपास उत्पादक राज्यों में कपास आपकों के पहले दिन से मौसम के अन्त तक देश के 262 मार्केट यार्डस में अत्यन्त प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर कपास उपज बेचने में कपास उत्पादकों को आवश्यक विपणन समर्थन देना ही निगम का प्रमुख कार्य है। भारतीय कपास निगम का उद्देश्य है कि कपास उत्पादकों को उनके उपज का मूल्य और उनके हित की रक्षा सुनिश्चित हो। समर्थन मूल्य पर कपास की सम्पूर्ण मात्रा खरीदना ताकि किसानों को मजबुत बिक्री से बचाया जा सके। भारतीय वस्त्र उद्योगों में, उनकी आवश्यकतानुसार कपास उपलब्ध कराना तथा गुणवत्ता वाली यार्न के उत्पादन के लिए बेहतर संदूषणमुक्त कपास प्राप्त करना। जिससे वस्त्र उद्योग अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना कर सके।

भारतीय कपास निगम निम्नलिखित दो उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कार्य करता है:-

1. सार्वजनिक सेवा द्वारा कपास उत्पादन किसानो को सहायता देना।
2. निगम की स्थिर प्रगति के लिए वाणिज्यिक लाभ प्राप्त करने का प्रयत्न करना

देश के सभी कपास उत्पादक राज्यों में भारतीय कपास निगम (सी. सी. आई.) के क्रिया-कलाप परिचालित होते हैं। निगम को निम्न तीन अंचलों में विभाजित किया गया है:-

(अ.) उत्तरी अंचल (पंजाब, उत्तरप्रदेश, राजस्थान)
(ब.) मध्य अंचल (गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश)
(स.) दक्षिण अंचल (कर्नाटक, तमिलनाडू, आंध्रप्रदेश)

तालिका क्र. 01
भारत में कपास पैदावार की स्थिति (वर्ष 2010-11)

State	Area	Production	Yield
Punjab	5.30	16.00	513
Haryana	4.95	14.00	481
Rajasthan	3.34	9.00	458
North total	13.59	39.00	488
Gujrat	26.33	102.00	659
Maharashtra	39.73	82.00	351
Madhyapradesh	6.51	17.00	444
Central total	72.57	201.00	471
Andhra Pradesh	17.76	53.00	507
Karnataka	5.34	10.00	318
Tamil Nadu	1.30	5.00	654
South Total	24.40	68.00	474
Orissa	0.75	2.00	453
Other	0.30	2.00	1133
Grand total	111.61	312.00	475

Source:- Cottan Advisory Board, Mumbai

उक्त तालिका में कपास उत्पादक राज्य एवं उत्तर, दक्षिण एवं केन्द्रीय झोन में कपास उत्पादन, क्षेत्र एवं उपज का ब्यौरा दिया गया है। वर्ष 2010-11 के समंक स्पष्ट करते हैं कि तीनों स्तर पर मध्यप्रदेश, गुजरात व महाराष्ट्र राज्य से पीछे हैं।

सी. सी. आई. पिछले तीन दशकों से भारतीय किसानों के हितो की रक्षा कर रहा है, तथा यह क्षेत्र में सबसे बड़ी कम्पनी है। यह अखिल भारतीय स्तर पर 300 से अधिक प्रचलित खरीद केन्द्रों द्वारा देश के कपास उत्पादक

* प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय राजगढ़-ब्यावरा (म.प्र.) भारत

किसानों को उनकी उपज का मूल्य प्राप्त कराने का कार्य कर रहा है। यह कड़ी प्रतिस्पार्धात्मक शर्तों के आधार पर गुणवत्ता पूर्वक कपास की आपूर्तिकर्ता की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए वस्त्र उद्योग के लिए कार्य करता है। सी. सी. आई. प्रतिस्पार्धात्मक दरों पर वस्त्र उद्योग को कपास की आपूर्ति करता है। यह कपास बिक्री पर लाभ नहीं कमाता है। निगम पारदर्शितापूर्वक कार्य करते हुए उदारतापूर्वक व्यवहार में विश्वास करता है। निगम के द्वारा कपास उत्पादक किसानों को उचित मूल्य तथा कपास खरीददारों को बिक्री पूर्व तथा पश्चात् उत्कृष्ट सेवा दी जाती हैं।

भारतीय कपास निगम सार्वजनिक क्षेत्र में एक मुख्य संगठन के रूप में अधिकृत ए. पी. एम.सी. यार्डस में कृषि उत्पाद बाजार समिति द्वारा आयोजित खुली नीलामी द्वारा कपास (सीड, कॉटन) खरीदनें में अहम भूमिका निभाता है। सी. सी. आई. के अधिकारी इन नीलामियों में कपास आपकों के पहले दिन से अंतिम आवक वाले दिन तक उपस्थित रहते हैं। सी. सी. आई. द्वारा इन बाजारों में नियमित कपास खरीद से किसानों को उनकी उपज की गुणवत्ता के अनुरूप मूल्य प्राप्त करने में सहायता देते हुए प्रतिस्पर्धा का वातावरण बनाती हैं। कपास की सम्पूर्ण मात्रा खुली नीलामी में तथा ए. पी. एम. सी. अधिकारियों के कई पर्यवेक्षण के अंतर्गत अन्य व्यापारियों और मीलों के साथ प्रतिस्पर्धा में खरीदी जाती हैं।

समर्थन मूल्य:-

भारत सरकार प्रत्येक उपज वर्ष के लिए कपास दो किस्मों जे-34 (राजस्थान) और एच-4 के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम. एस. पी.) निश्चित करती हैं। अन्य किस्मों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य आयुक्त कार्यालय, मुम्बई द्वारा गुणवत्ता अंतर तथा विभिन्न किस्मों के बाजार अंतर पर निर्भर करते हुए निश्चित किये जाते हैं तब सी. सी. आई. भारत सरकार की नोडल एजेन्सी के रूप में तुरन्त बाजार में हस्तक्षेप करता है और बिना किसी मात्रात्मक सीमा के कपास न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदता है। विभिन्न किस्मों के न्यूनतम समर्थन मूल्य, एफ. क्यू. ग्रेड कपास के लिए न्यूनतम गुणवत्ता मापदण्ड, स्टेपल लेंडथ और मायक्रोनेयर पर निर्धारित करते हुए निश्चित किये जाते हैं। चूँकि मार्केट यार्ड में आयी हुई कपास की मुल आवके निर्धारित एफ. क्यू. ग्रेड की मापदण्डों के अनुरूप नहीं होती हैं, इसलिए निगम एफ. क्यू. ग्रेड से नीचे की कपास भी गुणवत्ता के अनुरूप तथा संबंधित किस्म के न्यूनतम समर्थन मूल्य देतें हुए खरीदी करता है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य निगम द्वारा कपास की खरीद में देश के कपास उत्पादक किसानों को उनकी उपज के निश्चित मूल्य तथा समय पर भुगतान सुनिश्चित करते हुए, बड़े स्तर पर लाभ पहुँचता है तथा कपास पैदावार में उनकी रूचि बनाए रखने में भी सहायता दी हैं। वैश्वीकरण की प्रकिया के आरम्भ के पहले वर्ष 1990 के दशक के अन्त तक, देश में न्यूनतम समर्थन मूल्य के अवसर बहुत ही विरल थे, क्योंकि देशी कपास का मूल्य सामान्यत: अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों पर निर्भर था। वैश्वीकरण के पश्चात् कपास के देशी मूल्यों के अन्तर्राष्ट्रीय मूल्यों के समक्ष बने रहनें के कारण कपास मूल्यों के न्यूनतम समर्थन मूल्य स्तर तक पहुँचने के अवसर बढ़ गये हैं।

वणिज्यिक कार्य:-

न्यूनतम समर्थन मूल्य कार्य के अभाव में सी. सी. आई. देशी बाजार में मीलों को कपास की आपूर्ति के लिए केवल अपनी जोखिम पर लाभप्रद वाणिज्यिक कार्य संचालन करता है। वाणिज्यिक कार्य संचालन के अधीन कपास की खरीद अधिकृत मार्केट यार्डस में ए. पी. एम. सी. द्वारा आयोजित नीलामी में होती हैं। ये वाणिज्यिक कार्य संचालन मूलत: मांग-पत्र तथा संस्थागत क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र के अधीन मीलों से अपेक्षित मांग के अनुरूप होती हैं। इन संचालनों का मुख्य उद्देश्य निगम द्वारा समर्थन मूल्य कार्यो के लिए अनुरक्षित न्यूनतम संरचना की वार्षिक लागत को पूरा करना होता है। यहाँ पुन: सी. सी. आई. के अधिकारी बाजार में निजी व्यापारी और मीलों के साथ अन्य खरीददारों की प्रतिस्पर्धा में कपास उत्पादकों से कपास खरीद प्रतिस्पर्धी मूल्यों का भुगतान करते हैं।

कपास उत्पादकों के लाभ के लिए, सी. सी. आई. बाजार स्थिर होने की स्थिति में त्वरित गति से और बाजार मूल्य ऊँचे होने पर गति धीमी करके खरीद करता है, ताकि आवश्यक स्थिरता बाजार में लायी जा सके तथा विद्यमान बाजार मूल्यों को वांछित दिशा दी जा सके। सी. सी. आई. द्वारा दिये गये मूल्य न केवल समर्थन मूल्यों से ऊँचे होते हैं, बल्कि बाजार में विद्यमान मूल्यों के समक्ष होते हैं।

इसके अलावा कपास वे सभी ग्रेडस के लिए खरीदी एक साथ की जाती हैं, ताकि किसान अपनी उपज बिना कठिनाई के बेच सके तथा अपनी उपज की गुणवत्ता के अनुरूप बिक्री मूल्य प्राप्त कर सके। यद्यपि वाणिज्यिक कार्य संचालन वाणिज्यिक लाभप्रदता को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। फिर भी यह कपास मूल्यों के स्थिरीकरण द्वारा कपास उत्पादकों को लाभ देता है।

कपास की बिक्री:-

भारतीय कपास निगम द्वारा विपणन कार्य मुख्यत: निम्न दो उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है:-

1. कपास उत्पादकों को आवश्यक विपणन समर्थन देना।
2. वस्त्र मीलों को विशेषत: निर्यातोन्मुख मीलों की गुणवत्ता वाली कपास की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करना।

वस्त्र मीलों की गुणवत्ता वाली कपास की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए किस्मवार एवं ग्रेडवार कपास की खरीद की जाती हैं। इस हेतु संसाधन, पैंकिग, नमूना परिक्षण और गोदामों में कपास गाठों के वैज्ञानिक भण्डारण द्वारा एक डील की जाती हैं। कपास में संदूषण की समस्या के संसाधन की व्यवस्था आधुनिक जिनिंग और प्रेसिंग फेक्ट्रियो में की जाती हैं। इसके अलावा कपास गाठो की अच्छी गुणवत्ता के ग्रे क्लाथ का अधिकतम् उपयोग किया जाता है। जहाँ आधुनिक फेक्ट्री नहीं है, वहाँ सभी प्रकार के मिलावटी तत्वों को निकालने के लिए अतिरिक्त मजदूर लगाये जाते हैं।

इन सभी कार्यो के विक्रय उन्मूखी होने के कारण ग्राहक-मीलों की विशिष्ट मांग को पूरा करने के लिए किसी भी विशिष्ट ग्रेड और मानदंडों की गुणवत्ता वाली कपास की आपूर्ति की जा सकती हैं। गुणवत्ता मे उच्च मानदण्ड बनाए रखने की अपनी प्रतिष्ठा के लिए निगम ने गत वर्षो से बिक्री से पहले और बाद की सेवाएँ देने के साथ-साथ कपास की बड़ी मात्रा की आपूर्ति करने के लिए गुणवत्ता वाली कपास की प्रतिष्ठा प्राप्त की हैं।

देश मे कई प्रतिष्ठित ग्रुपों ने, जिनमें निर्यातोन्मुख ईकाईयाँ शामिल है, सी. सी. आई. की कपास में रूचि दिखाई गई और इसके फलस्वरूप निजी क्षेत्र में मीलों में देशी बिक्री में काफी वृद्धि हुई हैं। मौसम (सीजन) के दौरान टर्नओवर में वृद्धि लाने के लिए निगम इन तथ्यों पर बल देते हुए बहुत आक्रामक विक्रय नीति अपनाता है। जो इस प्रकार से है:-

1. कपास विपणन में पूर्णत: सक्षम निगम के वरिष्ठ अधिकारी सभी ग्राहकों से उपज संभवना, अपेक्षित उत्पादन, आवक पैटर्न, गुणवत्ता मानदण्ड, मूल्य प्रवृति के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय कपास परिदृश्य पर नियमित रूप से विचार-विनिमय करते रहते हैं ताकि वे तत्काल आवश्यकता हेतु एवं तत्कालीन अवधि के लिए कपास खरीदने का अपना कार्यक्रम बना सके।

2. सभी किस्मों/ग्रेड में उपलबध कपास की समान बिक्री के लिए प्रस्ताव किया जाता है तथा ''दैनिक बिक्री कोटस'' जो सी. सी. आई. के वेबसाईड http://www.Cotcrop.gov.in पर उपलब्ध है, दिखाया जाता है।
3. कपास की आपूर्ति टाईप नमूना आधार/वास्तविक नमूना आधार/ किस्मों के विशिष्ट ग्रेड के आधार पर की जाती हैं, जिससे उन्हें यार्न काउटस के लिए उपयुक्त कपास की किस्में चुनने की सुविधा हो सके। खरीदारों से प्राप्त प्रस्ताव पर उच्च स्तर की समिति द्वारा विचार किया जाता है।
4. कपास की संविरागत मात्रा के अनुमोदन की पुष्टि के पहले स्पॉट पर खरीददार को प्रस्तावित गुणवत्ता के लाट का निरीक्षण करना।
5. सभी प्रकार की बिक्री संविरागत मात्रा के 05 प्रतिशत मूल्य की सामान्य जमा राशि के आधार पर की जाती है, जिससे मीलों को अपनी कार्यशील पूँजी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कपास खरीदने का कार्यक्रम बनाने में सहायता मिलती हैं।

   अग्रणी अवधि में कटौती करने तथा शेल्फ से कपास की सुपुर्दगियों की सुविधा देने के लिए मील गोदाम मे कपास गांठो के भण्डारण के रूप मे एक अनुपम सुविधा (गोदाम भण्डारण सुविधा) भी सम्मिलित है, जो नियमित ग्राहक मीलों को मूल्य की 05 प्रतिशत अतिरिक्त राशि पर दी जाती हैं।
6. कपास परिदृश्य के सभी पक्षों पर विचार-विनिमय के लिए तथा निगम की आपूर्ति एवं सेवाओं पर विचार-विमर्श के लिए महत्वपूर्ण स्थानों पर नियमित अंतराल पर खरीददार बैठक आयोजित की जाती हैं। इससे मिलने वाले फीड-बेक का उपयोग गुणवत्ता मानदन्डों, सेवाओं और प्रतिस्पर्धा को पुन: निश्चित करने के लिए किया जाता है।

वस्त्रद्योग की परिवर्तित आवश्यकता के अनुकुल एक बिक्री नीति अपनाते हुए सी. सी. आई. देश में निर्मातान्मुख ईकाइयों क साथ अत्यन्त प्रतिष्ठित वस्त्रोद्योग समूहों की गुणवत्ता वाली कपास की आपूर्ति करते हुए नेतृत्व की भूमिका निभा रहा है। देशी कपास के क्षेत्र में सी. सी. आई. कपास और उसकी सेवाएँ एक ब्राण्ड नाम है तथा इसकी कपास खरीद की 90 प्रतिशत से अधिक खपत निजी क्षेत्र को मीलों द्वारा होती हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. भारतीय कपास निगम लिमिटेड, (सी. सी. आई.), नवी मुम्बई
2. वस्त्र मंत्रालय, भारत सरकार
3. http://www.Cotcrop.gov.in
4. http://texmin.nic.in/

****

नारी उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध सशक्त कदम

डॉ. सुनील मोरे*

सनातन काल से भारत में नारी विभिन्न रुपों में उत्पीड़ित और शोषित हुई हैं। देव अवतार काल चाहे वह रामायण काल की सीता अग्नि परीक्षा हो, या महाभारत कालीन द्रोपदी चीर हरण। हर युग में नारी अहिल्या रुपी शीला ही बनी हैं। पुरुष प्रधान भारतीय समाज ने उसे पति, पुत्र, भाई व नाना प्रकार के रिश्तों में बांधकर उसका शोषण किया है।

क्या यह सच नहीं हैं कि 'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते', 'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी', 'पिता रक्षति कौमार्य', 'भर्ता रक्षति योवने' या 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो', जैसे तमाम जुमलों के बावजूद नारी को सशक्त और अधिकार सम्पन्न बनाना शेष है। पृथ्वी के आधे संसाधनों की हकदार नारी को अधिकार दिए बिना वास्तविक कल्याण या विकास नहीं हो सकता है।[1]

नारी उत्पीड़न और रुढ़ियाँ:-

रुढ़ियाँ, किसी भी विकासशील देश के लिए एक अवरोध है, जिसके कारण उसकी विकास की गति तीव्र नहीं हो पाती। यह सत्य है कि यह रुढ़ियाँ जिस समय प्रारम्भ हुई थीं उस समय की परिस्थितियों तथा उस समय के परिवेश में उचित रही हो लेकिन बदलती हुई परिस्थितियों में उनमें परिवर्तन होना नितान्त आवश्यक है, जबकि रुढ़ियाँ अपने प्राचीन रुप में चल रही हैं जिस कारण नारियों का उत्पीड़न हो रहा है। उनके जन्म को अभिषाप माना जाता है, जिसका प्रमाण भ्रूण परीक्षण के रुप में हमारे सामने हैं।

तमिलनाडु के बेलुकुरिची नामक गाँव में जन्म लेने वाली 90 प्रतिशत नवजात बच्चियों को मार दिया जाता है। यहाँ पर ''इरुकंयल'' नाम का एक पौधा उगता है, जिसका गाढ़ा रस नवजात बच्चियों को चटा दिया जाता है और उसके प्रभाव से बच्ची का शरीर नीला पड़ने लगता है। साँस उखड़ने लगती है और कुछ ही घंटों में बच्ची की जीवन-लीला समाप्त हो जाती हैं। आश्चर्य इस बात का है कि यह काम स्वयं बच्ची की माँ करती हैं। आज इन रुढ़ियों, की बेटी का जन्म अभिशाप है, बेटे के बिना जीवन अधूरा है या पिण्ड दान कौन करेगा, बेटा बुढ़ापे का सहारा है, आदि को समाप्त करना होगा। परिवार में बेटी के जन्म पर भी उतनी ही खुशियाँ मनानी चाहिए, जितनी बेटे के जन्म पर। माता-पिता को बेटी को भी वही स्थान तथा सम्मान देना चाहिए जो बेटे को प्राप्त है।[2]

खाप पंचायत का फैसला आया कि लड़कियां मोबाइल नहीं रख सकती हैं तो उन्होंने सबसे पहले मोबाइल बंद किया। उनका कहना है कि लड़कियां जो बात कर रही हैं, अपने फैसले ले रही हैं तो ये हमारी गिरफ्त से बाहर जा रही हैं।[3]

कानून तथा नारी सशक्तिकरण:-

संवैधानिक और कानूनी सशक्तिकरण के लिए स्वाधीनता के पश्चात् भारत सरकार ने विभिन्न कानून लागू किए हैं, जिससे नारियों को न्याय दिलाने में सहायता मिल रही हैं। इसमें अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1956, दहेज निषेध अधिनियम 1961, स्त्री अशिष्ट रुप (निषेध) अधिनियम 1986, सती प्रथा (निवारण) अधिनियम 1987 और यौन उत्पीड़न में नारियों का संरक्षण विधेयक 2005 शामिल है।[4]

यद्यपि नारियों में जागृति और सशक्तिकरण के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय सम्मेलन, संवैधानिक आदेश और निर्देश, महिला अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष और महिला दशक की घोषणा तथा विभिन्न सरकारी योजनाएं और नीतियां नारी सशक्तिरण की राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय चिंता की सूचक है।

नारियों के लिए कुछ खास कानून बनाए गए हैं। लेकिन मूल मुद्दा यह है कि क्या ये वास्तव में नारियों के अधिकार में कारगर हैं। अगर हैं तो कहां तक। इसलिए सारभूत कानूनों, उनके क्रियान्वयन और नारियों को अधिकार सम्पन्न बनाने में उनकी भूमिका का लेखा-जोखा करना उचित होगा।

नारी सशक्तिकरण का सबसे प्रभावी अंग वित्तीय सुरक्षा और संपत्ति पर अधिकार है। भारत में विभिन्न व्यक्तिगत कानूनों में नारियों को अलग-अलग उत्तराधिकार प्राप्त हैं। इस संबंध में अगर किसी कानून ने नारियों को सबसे ज्यादा अधिकार दिये हैं। तो वह है-हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956। इस अधिनियम ने संपत्ति पर नारी के अधिकार में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। एक नारी को पुरुष उत्तराधिकारी की तरह ही उत्तराधिकार के बराबर अधिकार मिल गए हैं। संपत्ति पर पूर्ण स्वामित्व होने के नाते नारियों को बिना रुकावट वसीयत करने का अधिकार है।[5]

नारी सशक्तिकरण की प्रक्रियाएँ:-

नारी के लिए शक्ति के एक साम्यिक और सक्रिय हिस्से की माँग करने के लिए प्रयास करना सशक्तिकरण प्रक्रिया का प्रमुख उद्देश्य है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए उन विचारों और मूल्यों के बोझ को झेलना पड़ता है, जो नारियों पर बचपन से ही उनकी सामाजिक प्रक्रिया के भाग के रुप में उन्हें हस्तांतरित कर दी जाती हैं। यह सामाजिक अनुबंधन नारियों के व्यक्तित्व और मानसिकता का एक महत्वपूर्ण अंग बन जाता है और उसके व्यवहार पर प्रभाव डालता है। नारी, समुदाय या समाज के एक हिस्से के रुप में रहती हैं तो बदले में अपने पितृसत्तात्मक मूल्यों और व्यवहार संबंधी अपेक्षित मानकों को उनके ऊपर थोप देता है। अत: सशक्तिकरण ही प्रक्रिया की शुरुआत इस कार्य से ही करनी चाहिए कि नारी सबसे पहले अपने व्यवहार और दृष्टिकोणों में परिवर्तन करें। इसका अर्थ यह है कि सर्वप्रथम नारियों की चेतना को ही बदलना चाहिए।

नारियों को अपनी अवधारणाओं में परिवर्तन करना होगा। उनके आत्मसम्मान और आत्मविश्वास में वृद्धि होनी चाहिए। उन्हें उनकी अपनी ताकत और सामर्थ्य को पहचानना व समझना चाहिए। उनकी सोच और व्यवहार में विकास होना चाहिए ताकि वे और अधिक आत्मनिर्भर बन सकें। उन्हें स्वयं को महत्व देने का और अपने ज्ञान एवं कौशलों को पहचानना चाहिए। घर-परिवार और समाज को संपाषित करने में उनके योगदान को समझा व सराहा जाए, इसके लिए भी उन्हें स्वयं ही प्रयास करने होंगे। अपने मौलिक अधिकारों पर, जो कि उनके मानवाधिकार भी हैं, दृढ़ रहने के महत्व को भी उन्हें समझ लेना चाहिए।

राष्ट्रीय महिला आयोग:-

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के व्यवहार में आने से पूर्व ही नारियों की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं वैश्विक प्रस्थिति

* विभागाध्यक्ष-वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत

को बेहतर दिशा एवं दशा देने हेतु संसद ने 1990 में ''महिलाओं के राष्ट्रीय कमीशन अधिनियम'' पारित किया, इस अधिनियम को राष्ट्रपति की सम्मति 30 अगस्त 1990 को प्राप्त हुई थी। अधिनियम के प्रावधानों के तहत् जनवरी 1992 में महिलाओं के लिए राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की गई।

भारतीय नारियाँ राष्ट्र-समाज के विकास की दिशा एवं दशा निर्धारण में अहम् भूमिका निभाती हैं, इन्हीं के जीवन-बेहतरी में राष्ट्र की तरक्की सुनिश्चित है। अस्तु राष्ट्र के कर्णधारों को आदर्श व्यक्तित्व गुणों से पुष्ट करने वाली नारियों के प्रति सहयोगी एवं तादत्म्यपरक मान रखते हुए उन्हें विकास की दौड़ में बराबरी का हक देना, उनका सम्मान करना पुरुष समाज का परम कर्तव्य है। नारियों में अधिकारों एवं कर्तव्यों का अवबोधन भी वर्तमान की सबसे बड़ी आवश्यकता है, जिससे वे संवैधानिक एवं विधिक अधिकारों का सम्यक् रुप से उपभोग कर सकें।

नारी उत्पीड़न को रोकने तथा उन्हें स्वस्थ मनोशारीरिक, सामाजिक, आर्थिक विकास का अवसर सुलभ कराने के संदर्भ महिलाओं के राष्ट्रीय आयोग की व्यवस्था निश्चित रुप से एक सराहनीय कदम है।[6]

आर्थिक सशक्तिकरण:-

स्व-सहायता समूहों से नारियों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। यह सहायता समूह नारियों को थोड़ा-थोड़ा पैसा बचाने योग्य बनाता है। इस बचत राशि का प्रयोग एक-दूसरे को ऋण देने के लिए किया जाता है। जिसके निम्नलिखित लाभ होते हैं:-

1. नारियाँ अल्प धन राशि की बचत कर सकती हैं जो समूह में सुरक्षित रहती हैं। घर में जरुरत पड़ने पर वे इसका इस्तेमाल कर सकती हैं। नारियाँ पुरुषों और बच्चों से पैसे छुपा के रखती हैं, ताकि उन्हें इस राशि का पता न चलें। हालांकि वे आपातकाल के लिए ही पैसा बचाना चाहती हैं।
2. समूह सदस्यों को दिये जाने वाले ऋण पर ब्याज लिया जाता है और इससे नारियों को ब्याज से लाभ होने की संभावना रहती हैं।
3. स्व-सहायता समूहों में नारियाँ अपनी आय को बढ़ाने वाले तरीकों पर चर्चा करती हैं। चर्चा में प्राय: अपने वर्तमान व्यवसाय में सुधार और नई आय-उत्पादक गतिविधियों को प्रारंभ करना शामिल होता है।
4. परिवार के सदस्य नारियों को ज्यादा सम्मान देते हैं क्योंकि वे ऋणों की व्यवस्था कर सकती हैं जो स्व-सहायता समूहों के जरिये अपेक्षाकृत सस्ते पड़ते हैं।

पंचायती राज और नारी सशक्तिकरण:-

संविधान के 73वें संशोधन के द्वारा पंचायतों में नारियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था ने इस सबको बदल दिया। नारियों के लिए आरक्षण की नीति के औचित्य की पुष्टि विभिन्न अध्ययनों से हो चुका है और यह परिणाम निकला है कि नारियों ने असाधारण रुप से अच्छा काम किया है। नारियों की अध्यक्षता वाली कई पंचायतों में नारियों की भागीदारी और नेतृत्व का न केवल जमीनी प्रशासन पर असर पड़ा है, बल्कि घरों से बाहर शक्ति और जिम्मेदारियां सम्भाल पाने की असमर्थता के बारे में कई भ्रांतियां दूर हो गई हैं।7

आधुनिक भारत में नारी उत्पीड़न और सशक्तिकरण के लिए राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन के साथ-साथ मानसिक बदलाव भी आवश्यक है। देश के नगरीय क्षेत्रों की नारियों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में नारी जागरुकता का नितांत अभाव है। अत: आवश्यकता है कि ग्रामीण नारी सशक्तिकरण हेतु जन-जागरण अभियान चलाकर जिसमें नारी शिक्षा, स्वास्थ, स्वावलंबन आदि मुद्दों पर विशेष रुप से ध्यान दिया जाए।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. रस्तोगी, डॉ. अलका : आदिवासी सामाजिक संरचना एवं महिलाओं की प्रस्थिति, हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर
2. जौहरी, डॉ. रचना, गुप्ता, डॉ. सुभाष चन्द्र : महिला उत्पीड़न, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009
3. अहा!जिंदगी, वार्षिक विशेषांक-2012, दैनिक भास्कर, जयपुर
4. कुरुक्षेत्र : ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, मार्च, 2007
5. पाण्डेय, जया : सूचना का अधिकार और महिला सशक्तिकरण, रोशनी पब्लिकेशंस, कानपुर, 2012
6. कुरुक्षेत्र : ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, मार्च, 2007
7. पाण्डेय, जया : सूचना का अधिकार और महिला सशक्तिकरण, रोशनी पब्लिकेशंस, कानपुर, 2012

****

सार्वजनिक उपक्रम - कल आज और कल

डॉ. दिनेश कुमार चौधरी *

विश्व व्यापीकरण के दौर में सार्वजनिक क्षेत्र की प्रासंगिकता पर लगातार प्रश्न उठाए जा रहे हैं ऐसे विशेषज्ञों की कमी नहीं हैं जो इस कवायद से सहमत हों, उनके लिये प्रश्न सार्वजनिक क्षेत्र के अप्रासंगिक होने का नहीं है बल्कि वे सार्वजनिक क्षेत्र की बदलती भूमिका को रेखांकित कर अर्थव्यवस्था में इसके योगदान को सकारात्मक आधार देना चाहते हैं। इस संवाद को अधिक सार्थक बनाने के लिये सबसे पहले हमें उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखना होगा जिसके सापेक्ष राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका को परिभाषित किया गया। उन ऐतिहासिक कारकों को रेखांकित करने की आवश्यकता होगी जिसके फलस्वरूप सार्वजनिक क्षेत्र को आधुनिकीकरण का इंजन बनाया गया। यह भी देखना होगा कि स्वातंत्र्योत्तर भारत में सार्वजनिक क्षेत्र अपने निर्धारित लक्ष्यों को किस हद तक पूरा कर पाया या नहीं कर पाया। यह परखना भी जरूरी होगा कि सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका को सीमित करने की राज्य की नीति के पीछे विशुद्ध आर्थिक कारकों की भूमिका रही थी या बाह्य दबाव की राजनीति ने इस परिवर्तन की रूपरेखा को निर्धारित किया था। यह देखना भी महत्वपूर्ण होगा कि अगर एक बार सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका को सीमित कर नई आर्थिक नीति के तहत निजीकरण को बढ़ावा देने का फैसला कर ही लिया गया तो फिर राज्य की इस नई रणनीति के परिणाम किस रूप में सामने आ रहे हैं? यह भी महत्वपूर्ण हैं कि नई आर्थिक नीति के इस परिवेश में भी सार्वजनिक क्षेत्र के योगदान का सही मूल्यांकन किया जाये। इस प्रयास के बाद ही निजीकरण की दिशा और उसमें विनिवेश के मुद्दे को समझने की चेष्टा हो। वैश्विक स्तर पर हो रहे बदलाव और अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिये विनेवेश आवश्यक ही मान लिया जाये तो यह भी देखना होगा कि विनिवेश किन सार्वजनिक उपक्रमों का किया जाये ? नवरत्न कंपनियों के विनिवेश के प्रश्न का निबटारा किस तरह किया जाये ? क्या विनिवेश छोटे-छोटे टुकड़ों में हो या फिर रणनीतिक विनिवेश की नीति पर अमल किया जाये ? इन सब प्रश्नों के सापेक्ष ही सार्वजनिक क्षेत्र की प्रासंगिकता पर पुनर्विचार हों।

सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र :-

भारत के नवनिर्माण के लिये अर्थव्यवस्था को दो भागों में बाटा गया - सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र। मुख्य रूप से इस विभाजन का आधार राष्ट्रवादी नेताओं की अपनी वैचारिक पृष्ठभूमि, तत्कालीन अंतर्राष्ट्रीय प्रवृत्तियां एवं भारत की आर्थिक बाध्यताएँ थी। यह तो स्पष्ट ही है कि राष्ट्रवादी नेताओं में एक बड़ा गुट (नेहरू सहित) समाजवादी विचारधारा से प्रभावित था। समाजवादी अर्थव्यवस्था में आधुनिकीकरण चाहे वह तत्कालीन सोवियत संघ का मामला हो या चीन का, सार्वजनिक उपक्रमों के कंधों पर किया गया था। दूसरे, नवनिर्माण के लिये उद्यत भारत में पूंजी की उपलब्धता न के बराबर थी जिसका मतलब था निजीकरण की नीति को अपना कर तीव्र आधुनिकीकरण के लक्ष्य को पूरा नहीं किया जा सकता था। बुनियादी ढांचे के तीव्र विकास के लिये जिस पर भारी उद्योग की आधारशिला रखी जा सके, बड़े पैमाने पर पूंजी की आवश्यकता थी, इसकी पूर्ति केवल राज्य के द्वारा संभव थी। अत: स्वाभाविक रूप से सार्वजनिक क्षेत्र को बढ़ावा देने की रणनीति नवोदित भारत द्वारा अपनाई गई। पुन: विकास इस तरह किया जाना था ताकि क्षेत्रीय असंतुलन एवं वर्गीय अंतर्विरोध अधिक तीखा न हो। इसके लिये भारी उद्योगीकरण का लाभ भारत के हर क्षेत्र को एवं भारत के हर वर्ग को मिले यह आवश्यक था। इस कारण भी आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में सार्वजनिक क्षेत्र को सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी प्रदान की गई।

प्राचीन विकास मॉडल :- सन् 1947 से 1964

इन बाध्यताओं के मद्देनजर तथा अपने वैचारिक झुकाव से भी प्रभावित होकर पं. जवाहर लाल नेहरू ने 1956 में जो औद्योगिक नीति प्रस्ताव (इंडस्ट्रीयल पॉलिसी रिजॉल्यूशन या आइपीआर) पेश किया था, वह समाजवादी विकास का आर्थिक मॉडल था। इसकी प्रमुख बातें इस प्रकार है

1. आर्थिक विकास की गति तेज करने और देश के उद्योगीकरण में मदद करना तथा जरूरी बुनियादी संरचना का निर्माण करना।
2. निवेश के जरिये धन अर्जित करना और फिर विकास के लिये संसाधनों का निर्माण।
3. आय और संपत्ति के पुनर्वितरण को बढ़ावा और रोजगार के अवसर पैदा करना।
4. लघु और सहायक उद्योगों के विकास में मदद और
5. विदेशी मुद्रा का संचयन।

मुद्दे और प्राथमिकताएँ :-

आइपीआर में यह तय किया गया था कि सार्वजनिक उपक्रम राष्ट्र के आर्थिक एवं औद्योगिक विकास को एक नई दिशा देंगे जिसके तहत जरूरी बुनियादी ढांचे को खड़ा किया जायेगा ताकि इसका लाभ उठाकर सार्वजनिक क्षेत्र भी निजी क्षेत्र के साथ ही भारत के दीर्घकालिक विकास को सुनिश्चित कर सके। इस प्रक्रिया में आय का पुनर्वितरण, रोजगार सृजन और क्षेत्रीय असंतुलन दूर करने जैसे लक्ष्य हासिल किये जाने थे। राष्ट्रवादी आंदोलन की मानसिकता भी उस विकास के मॉडल की वकालत करती थी जिसमें नीति निर्धारण का अधिकार आम लोगों के हाथों में हो।

सार्वजनिक क्षेत्र का आगाज़ :-

1951 में जब पहली पंचवर्षीय योजना शुरू हुई उस समय सार्वजनिक क्षेत्र में केवल 5 इकाइयां थीं जिनमें 29 करोड़ रू. विनियोजित थे। 1961 के बाद सार्वजनिक क्षेत्र में बहुत तेजी से विस्तार हुआ। 31 मार्च 2002 तक कुल 240 उपक्रमों (सार्वजनिक क्षेत्र) में 3,24,614 करोड़ रू. निवेशित रहे। इन उद्यमों में निवेश की औसतन वृद्धि दर 1960-61 से 1995-96 के बीच 16.5 प्रतिशत रही। इस दौर में संगठित क्षेत्र का 70 फीसदी रोजगार सार्वजनिक क्षेत्र में था। 31 मार्च 2003 तक लगभग 187 लाख लोगों को रोजगार मिला और सार्वजनिक क्षेत्र ने सामाजिक कार्यो पर 3,147 करोड़ रू. खर्च किये। सार्वजनिक उद्यमों द्वारा विदेशी मुद्रा भंडार में योगदान 1965-66 में 35 करोड़ रू. था जो 1995-96 के दौरान 1,5211 करोड़ रू. हो गया। निवेशित पूंजी पर कर पश्चात शुद्ध लाभ का प्रतिशत छठीं पंचवर्षीय योजना तक औसतन 1.5 प्रतिशत वार्षिक से अधिक नहीं था जबकि यह 1985-86 से 1995-96 के दौरान 3.6 प्रतिशत वार्षिक था। 1995-96 में 101 ऐसे उद्यम थे जो घाटे में चल रहे थे। 134 ही ऐसे थे जिन्होंने लाभ अर्जित किया था। वर्तमान में 2009-10 में छोटे उद्योगों ने बहुत प्रगति की

* सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

है एवं इनकी संख्या लगभग 1000 तक पहुंच गई है।

भारतीय उद्योगों के छायाचित्र

सार्वजनिक उपक्रम के छायाचित्र

सार्वजनिक उपक्रम का सुनहरा युग :-

1960 और 1970 के दशक के मध्य तक सार्वजनिक उपक्रम अपने निर्धारित लक्ष्यों की तरफ बढ़ते रहे। इस अवधि के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र ने कुल जीडीपी के 20 प्रतिशत का योगदान किया। अगर हम इसी काल में विश्व अर्थव्यवस्था की तरफ देखते हैं तो निश्चित रूप से समाजवादी देशों में विकास की प्रक्रिया सार्वजनिक उपक्रमों को केन्द्र में रखकर ही चलाई जा रही थीं। यूरोप में नाटो के अंतर्गत आने वाले देशों में भी पुनर्निर्माण की प्रक्रिया सार्वजनिक उपक्रमों के कंधों पर ही चलाई गई। चाहे फ्रान्स का मामला हो, इंग्लैंड का या पश्चिम जर्मनी का,सभी जगह यही प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। दूसरे शब्दों में चाहे समाजवादी अर्थव्यवस्था हो या पूंजीवादी दोनों ही मॉडलों में सार्वजनिक उपक्रमों के सकारात्मक पहलुओं को स्वीकार किया गया।

अस्सी के दशक का बुरा दौर :-

1980 के दशक में सार्वजनिक क्षेत्र में स्टाफ की जरूरत से ज्यादा संख्या, समय और लागत वृद्धि के कारण जरूरत से ज्यादा खर्च क्षमता उपयोग का न्यूनतम स्तर, निर्णय प्रक्रिया में राजनैतिक एवं नौकरशाही के हस्तक्षेप, प्रबंधन की अकुशलता, उद्यम पर सामाजिक जिम्मेदारी का बोझ, उत्पाद के मूल्य निर्धारण की अकुशल प्रक्रिय, सामाजिक कल्याणकारी व्यय तथा बड़े-बड़े उद्योगों के निर्माण में घरेलू सार्वजनिक क्षेत्र की कीमत पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों पर निर्भरता आदि कुछ ऐसे कारक थे जिनसे सार्वजनिक क्षेत्र की कार्यकुशलता नकारात्मक रूप से प्रभावित हुई।

प्रतिस्पर्धा का दबाव :-

हाल के वर्षो में सार्वजनिक क्षेत्र के उन उद्यमों का प्रदर्शन खास तौर पर निराश करने वाला रहा है जहां निजी क्षेत्र की प्रतिस्पर्धा का दबाव है इन उपक्रमों के निष्पादन की समीक्षा से पता चलता है कि अधिकांश सार्वजनिक उपक्रम या तो घाटे में चल रहे हैं या फिर अत्यंत कम लाभ में। खास तौर से विनिर्माण के क्षेत्र से जुड़े उपक्रमों का प्रदर्शन बहुत ही खराब रहा है। हालांकि कुछ सार्वजनिक उपक्रमों का प्रदर्शन बहुत अच्छा रहा है, लेकिन इनमें पेट्रोलियम ऊर्जा और दूरसंचार जैसे एकाधिकार वाले क्षेत्रों के उपक्रम शामिल है। लेकिन जैसे ही इन क्षेत्रों पर से नियंत्रण हटाया गया तो इन पर प्रतिस्पर्धा का दबाव आ गया और अंतत: इनके लाभ में कमी दर्ज की जाने लगी। सेल ऐसे उपक्रमों का सबसे अच्छा उदाहरण है। उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू होने के बाद जब उसे विदेशी और देसी कंपनियों से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ी तो इसका लाभ घटने लगा। 31 मार्च 2006 को खत्म हुये वित्त वर्ष में इसका शुद्ध लाभ 59 फीसदी तक घट गया।

भारतीय राज्यों के उद्यमों का बुरा हाल :-

पहले यह माना जाता था कि केन्द्र के अधीन काम करने वाले उद्यम घाटे में चल रहे हैं लेकिन वास्तविकता यह है कि, राज्य सरकारों के अधीन काम करने वाले उद्यम भी घाटे में चल रहे है। आंकड़ों से पता चलता है कि भारी घाटे वाले उद्यमों में राज्य बिजली बोर्ड और सिंचाई परियोजनाएँ हैं अनुमान है कि 1991-92 में राज्य बिजली बोर्डो का घाटा 4,117 करोड़ रू. था जो 2003-04 तक बढ़कर 21,517 करोड़ रू. हो गया। इस घाटे का मुख्य कारण यह था कि बिजली उपलब्ध कराने की दर 240 पैसे प्रति इकाई थी जबकि इसकी प्रति इकाई उत्पादन एवं वितरण लागत 350 पैसे थी। इसी प्रकार, 1997-98 में राज्य सड़क परिवहन उद्यमों का कुल घाटा 1,282 करोड़ रू. था भारी घाटे के कारण म.प्र.राज्य सड़क परिवहन निगम बन्द हो गया।

लाभ में शीर्ष उपक्रम (करोड़ रू.)		घाटे में शीर्ष उपक्रम (करोड़ रू.)	
उपक्रम	शुद्ध लाभ	उपक्रम	शुद्ध लाभ
1. तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम	12,98305	भारतीय उर्वरक निगम लि.	1,209,85
2. भारत संचार निगम लि.	6,81697	भारत कुकिंग कोल लि.	95943
3. स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया	10,18329	हिंदुस्तान फर्टिलाइजर लि.	87800
4. नेशनल थर्मल पॉवर कार्पो.	5,80701	वेस्टर्न कोलफील्ड्स लिम.	67920
5.इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन	4,89138	इंडियन ड्रग्स एंड फार्मा लि.	51243
6.राष्ट्रीय इस्पात निगम लि.	2,00809	हिंदुस्तान फोटो फिल्मस लि.	49641
7.गैल इंडिया लि.	1,95391	नेशनल जूट मैन्यूफैचरर्स	42506
8.न्यूलियर पॉवर कार्पोरेशन	1,70459	आईटीआई.लि.	30982
9.भारतीय जहाजरानी निगम	1,41991	कोंकण रेलवे कार्पोरेशन	30548
10.कोल इंडिया लि.	1,32492	हैवी इंजी कार्पोरेशन लि.	28458
कुल	49,093.1	कुल	6,060.26

नई आर्थिक नीति और निजीकरण :-

1991 में उदारीकरण के साथ निजीकरण की शुरूआत हुई। इसी वर्ष भारत सरकार द्वारा नई औद्योगिक नीति की घोषणा की गई इन औद्योगिक नीति में सार्वजनिक उपक्रमों के बुनियादी ढांचे एवं सामरिक महत्व के उद्योगों पर विशेष ध्यान दिया गया। ऐसे सार्वजनिक उपक्रम जो जीर्ण-क्षीर्ण स्थिति में थे उन्हें फिर से लाभ की स्थिति में लाने के लिये नीतियां बनाई गई। साथ ही एम.ओ.यू. का सहारा लेकर नई निजी कंपनियां एवं अन्य कंपनियों को इस नई औद्योगिक नीति के साथ जोड़ा गया। आर्थिक विकास में साथ देने वाली इस नीति की भारी प्रशंसा की गई।

संदर्भ :-

1. इंडिया टुडे, ज्ञान भंडार अगस्त 2006 पृ.क्र. 72
2. रोजगार समाचार साप्ताहिक समाचार पत्र पृ.क्र. 12 दिनांक 10.02.2004
3. दैनिक भास्कर दिनांक 02.07.2002, पृ.क्र. 05
4. घटना चक्र फरवरी 2006 पृ.क्र. 84
5. योजना नवम्बर 2007 पृ.क्र. 54
6. कुरूक्षेत्र फरवरी 2002 पृ.क्र. 12
7. प्रतियोगिता दर्पण दिसम्बर 2003 पृ.क्र. 18
8. वार्षिक रिपोर्ट वित्त मंत्रालय भारत सरकार 2005 पृ.क्र. 135
9. वार्षिक प्रतिवेदन उद्योग एवं वाणिज्य मंत्रालय भारत सरकार 2004 पृ.क्र. 100
10. उद्योग समाचार मासिक पत्रिका 2002 पृ.क्र. 103

भारत सरकार द्वारा संचालित उद्यमिता विकास कार्यक्रमों का महत्व

राकेश बघेल * प्रो. मोहन वास्केल * *

उद्यमिता का विकास आज प्रत्येक राष्ट्र की आवश्यकता एवं उत्तरदायित्व बन गया है। विकासशील देशों की कई महत्वपूर्ण समस्याओं जैसे :- बेरोजगारी, असतुंलित क्षैत्रीय विकास, आर्थिक सत्ता का केन्द्रीयकरण, न्यून उत्पादकता, विनियोजन आदि का निवारण उद्यमिता के विकास कार्यक्रमों के द्वारा ही किया जा सकता है इसीलिए आज प्रत्येक देश की सरकार उद्यमियों के विकास पर सर्वाधिक ध्यान दे रही है। जिसके लिए अनेक योजनाएं एवं कार्यक्रम उसके द्वारा संचालित किये जा रहे है। साथ ही उद्यमियों को प्रेरणाएँ एवं सुविधाएँ भी प्रदान किये जा रही है।

उद्यमिता के विकास में सामाजिक एवं व्यक्तिगत घटकों का भी गहन प्रभाव होता है। यदि व्यक्ति मूल रूप से कल्पनाशील, सृजनात्मक, दूरदर्शी, परिश्रमी, स्वप्रेरित, लक्ष्य प्रवृत, अवसर खोजी, सकारात्मक दृष्टिकोण वाले नहीं है तो मात्र सुविधाऐं एवं अनुदान देने से ही उद्यमिता का समुचित विकास संभव नहीं होता है।

इसी प्रकार उद्यमिता के विकास में सामाजिक परम्पराओं, मूल्यों व सिद्धान्तों का भी अत्यधिक महत्व होता है अत: स्पष्ट है कि उद्यमिता के समुचित विकास के लिए विभिन्न सुविधाओं और प्रेरणाओं का विकास भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त साहसिक वातावरण एवं ढाँचे का भी उद्यमिता के विकास पर गहरा प्रभाव पडता है।

उद्यमिता विकास कार्यक्रम का आशय :- उद्यमिता एवं विकास जिसका शाब्दिक अर्थ है- उद्यमिता की वृति का उत्तरोतर विकास। अत: उद्यमिता विकास कार्यक्रमों से आशय उन सभी व्यक्तिगत एवं सामूहिक, निजी क्षेत्र के या सरकारी प्रयासों से है। जिसके द्वारा किसी व्यक्ति में उद्यमिता की वृति का विकास किया जाता है।

व्यक्ति के मन में दृढ़ निश्चय उत्पन्न कर उसे उद्यमिता का मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित किया जाता है, उसकी आतंरिक शक्तियों का विकास किया जाता है ताकि वह सफल उद्यमी बन सके। उसे शिक्षण और प्रशिक्षण प्रदान कर उसकी क्षमताओं का परिमार्जित किया जाता है, तथा उसे बौद्धिक, तकनीकी एवं वैचारिक क्षमताओ से युक्त एवं सम्पन बनाया जाता है।

उद्यमिता विकास कार्यक्रम के प्रमुख संस्थान :-

भारत मे उद्यमिता विकास के लिए सतत प्रयास किये जा रहे है। इसके लिए उद्यमियों को आवश्यक सुविधाऐं प्राप्त कर उन्हें प्रोत्साहित करने की कोशिश की जा रही है। और उद्यमिता के विकास हेतु संचालित सस्थान निम्नलिखित प्रकार स्पष्ट है।

1. **भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान, अहमदाबाद –** इस संस्थान की स्थापना एक स्वायत संस्था के रूप में 1983 में गुजरात सरकार और भारतीय औद्योगिक विकास बैंक, औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम, औद्योगिक वित्त निगम और भारतीय स्टैट बैंक के सहयोग से हुई थी
2. **राष्ट्रीय उद्यमिता एवं लघु व्यवसाय विकास संस्थान** – उद्यमिता एवं लघु उद्योगों के विकास, मार्गदर्शन एवं प्रशिक्षण प्रदान करने वाली इस शीर्ष संस्था की स्थापना 6 जुलाई 1983 को भारत सरकार के उद्योग मंत्रालय द्वारा निम्न उद्देश्यों के लिये की गई थी।
   1 विभिन्न एजेंसियों के कार्यक्रम में समन्वय स्थापित करना तथा उनकी क्रियाओं का निरीक्षण करना।
   2 उद्यमिता के विकास के लिए अनुसंधान करना।
   3 आदर्श उद्यमिता पाठ्यक्रम तैयार करना एवं परीक्षाएँ आयोजित करना।
   4 प्रशिक्षण लेने वालों और लघु साहसियों के लिए प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाना।
   5 लघु उद्यमियों के लिए सम्मेलन और विचार-गोष्ठियों आयोजित करना।
   6 उद्यमिता एवं लघु व्यवसाय के विकास में संलग्न संस्थाओं को मार्गदर्शन प्रदान करना।
3. **लघु उद्योग सेवा संस्थान –** लघु उद्योग सेवा संस्थान 1956 में स्थापित हुआ। प्रत्येक राज्य और नई दिल्ली में एक-एक लघु सेवा संस्थान कार्यरत है। इन संस्थानों के माध्यम से औद्योगिक विस्तार सेवा का संचालन हो रहा है।
4. **राष्ट्रीय उद्यमिता विकास बोर्ड** – यह बोर्ड देश में उद्यमिता विकास के लिए एक शीर्ष संस्था है। यह बोर्ड उद्यमिता प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त सुविधाऐं एवं प्रोत्साहन की भी सिफारिश करता है।
5. **भारतीय पैकेजिंग संस्थान** – लघु उद्योग को पैकेजिंग के क्षेत्र में सहयोग प्रदान करने के उददेश्य से भारत सरकार द्वारा भारतीय पैकेजिंग संस्थान की स्थापना की गई है।
6. **राष्ट्रीय परीक्षण गृह –** लघु उद्योग में उपयोगी कच्चें माल, तैयार माल, रसायन आदि की गुणवत्ता की जाँच के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय परीक्षण गृह की स्थापना की गई। यह परीक्षण गृह अलीपुर एवं कोलकाता में स्थापित है।
7. **उद्योग निदेशालय –** भारतीय संविधान के अन्तर्गत लघु उद्योगों के विकास व नियंत्रण का कार्य राज्यों को सौंपा गया है। इस कार्य को पूर्ण करने के लिए राज्य सरकारों के द्वारा उद्योग निदेशालय की स्थापना की गई है।
8. **लघु उद्योग विकास संगठन –** लघु उद्योगों को तकनीकी, विपणन, संचालन एवं वित्तीय प्रबन्ध संबंधी सलाह, प्रशिक्षण एवं सहायता उपलब्ध कराने के उददेश्य से केन्द्र सरकार ने 1954 में लघु उद्योग विकास संस्थान की स्थापना की थी।
9. **राष्ट्रीय लघु उद्योग विस्तार प्रशिक्षण संस्थान –** इसकी स्थापना 1960 में की गई थी। इसका मुख्य कार्य लघु उद्यमीयों को प्रशिक्षण देने के लिए पाठ्यक्रम चलाना है। यह संस्थान लघु उद्यमियों एवं कामगारों

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य विभाग) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य विभाग) शासकीय महाविद्यालय थान्दला (म.प्र.) भारत

के लिए सेमिनार भी आयोजित करता है।

10. **राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम –** इसकी स्थापना केन्द्र सरकार द्वारा 1955 में की गई थी। निगम अपने विपणन सहायता कार्यक्रम के अंतर्गत लघु उद्योगों के उत्पादों के लिए व्यापक बाजार की व्यवस्था करता है। यह बाजारो की खोंज करता है।

उद्यमिता विकास कार्यक्रमों का महत्व :-

हमारे देश में उद्यमिता विकास कार्यक्रम के महत्व को निम्नलिखित प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है।

1. **औद्योगिकरण की गति में तीव्रता –** इसके कारण देश में औद्योगिकरण की पृष्ठभूमि तैयार होने की गति में तेजी आई है। इन कार्यक्रमों द्वारा उद्यमियों को शिक्षण-प्रशिक्षण दिया जाता है और औद्योगिकरण के लिए आवश्यक संसाधन जुटाएं जाते है।
2. **उद्यमिता विकास की संस्थानों की स्थापना –** उद्यमिता विकास कार्यक्रमों के कारण देश में बड़ी से संख्या में उद्यमिता विकास संस्थानों की स्थापना की गई है। जैसे:- भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान, प्रबन्धकीय विकास संस्थान, लघु उद्योग सेवा संस्थान आदि है।
3. **रोजगार के अवसरों में वृद्धि –** उद्यमिता विकास कार्यक्रमों की यह उपलब्धि रही है कि इसके कारण देश में अनेक बड़े एवं लघु उद्योगों की स्थापना की गई है। जिससे रोजगार के अतिरिक्त अवसर निर्मित हुए है और बेरोजगारी की समस्या के समाधान में मदद मिली है।
4. **देश का संतुलित औद्योगिक विकास –** यदि उद्योग किसी एक ही क्षेत्र में केन्द्रित हो जाएँ तो सम्पूर्ण देश का विकास रूक जाता है। इन कार्यक्रमों के कारण जीन-जीन क्षेत्रों में विकास की गति धीमी होती है। वहा शिक्षित एवं प्रशिक्षित उद्यमी आकर क्षेत्र के विकास की गति में तीव्रता लाते है। जिससे संतुलित विकास को प्रोत्साहन मिलता है।
5. **नवीन उपक्रमों की स्थापना –** उद्यमिता विकास कार्यक्रमों का एक प्रमुख उद्देश्य उद्यमियों को उद्यम प्रारम्भ करने की प्रकिया एवं कार्यविधि को समझाना है। इन कार्यक्रमों की एक प्रमुख उपलब्धि नवीन उपक्रमों की स्थापना एवं उनका विकास करना रहा है। उद्यमिता विकास कार्यक्रम द्वारा उद्यमियों में अनेक गुण पैदा किये जाते है। जैसे :- दूरदर्शिता, कल्पनाशक्ति, अथक साहस, धैर्य, तकनीकी ज्ञान आदि। यह भी कार्य शिक्षण व प्रशिक्षण द्वारा ही किये जाते है।

उद्यमिता विकास कार्यक्रमों का आलोचनात्मक मूल्यांकन :-

पिछले कुछ वर्षो से हमारे देश में उद्यमिता विकास कार्यक्रमों पर काफी जोर दिया जा रहा है। इस कार्य के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार ने अनेक संस्थाओं की स्थापना की है। जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। कुछ आलोचकों का कहना है कि अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ होना शेष है। अभी भी उद्यमिता विकास कार्यक्रमों में कुछ कमियॉ है। जिनका वर्णन निम्नलिखित प्रकार स्पष्ट है।

1. **अपर्याप्त सरकारी सुविधाऐं और प्रेरणाऐं** – देश में उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ने पर्याप्त सुविधाऐं एवं प्रेरणाऐं उपलब्ध नहीं कराई है। उद्योगों के लिए अभी भी देश में आधारभूत सुविधाओं का अभाव है। अनेक राज्य बिजली एवं पानी की कमी से जूझ रहे है। इन सुविधाओं की कमी के कारण उद्यमियों पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है
2. **प्रशासनिक शिथिलता –** प्रशासनिक शिथिलता उद्यमिता विकास के मार्ग सबसे बड़ी बाधा है। सरकारी विभागों और संस्थाओं में अकार्यकुशलता, नौकरशाही, लालफीताशाही, प्रशासनिक भ्रष्टाचार, पक्षपात, विलम्ब, नियमों को पकड़कर बैठना आदि बुराईया मौजूद है। इन्हीं कारणों से उद्यमियों को परियोजना प्रतिवेदन के अनुमोदन, ऋण व अन्य सुविधाओं की प्राप्ति आदि कार्यो में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
3. **लोगो में उद्यमिता मनोवृति का अभाव –** जो युवक उद्यमिता विकास कार्यक्रमों की ओर आकर्षित होते है। उनमें उपयुक्त व्यावसायिक रूचि, तकनीकी योग्यता, जोखिम उठाने की क्षमता, उद्यमी भावना आदि प्रवृत्तियों का अभाव होता है। इसी कारण देश में उद्यमिता का वांछित विकास नहीं हो पाया है।
4. **तकनीकी और व्यावसायिक प्रशिक्षण का निम्न स्तर –** हमारे देश के उद्यमिता विकास संस्थाओं में भावी उद्यमियों को जो तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण दिया जाता है। इसका स्तर बहुत नीचा है। यह प्रशिक्षण व्यवसायिक दृष्टि से व्यावहारिक नहीं हो पाता है। प्रशिक्षकों में व्यावहारिक ज्ञान का अभाव होता है।
5. **उपयुक्त चयन प्रकिया का अभाव –** उद्यमिता विकास कार्यक्रम के लिए उपयुक्त संभाव्य उद्यमियों का चयन होना आवश्यक है। अगर चयन प्रकिया उपयुक्त नहीं तों इस पर खर्च किया गया धन और समय व्यर्थ चला जाएगा जो ठीक नहीं है।

उद्यमिता विकास कार्यक्रम में प्रमुख बाधाएँ :-

भारत में उद्यमिता विकास कार्यक्रम में औद्योगिक साहस एवं उद्यमवृत्ति के विकास मे बहुत सें तत्व बाधक बने हुए है। इससे हमारे देश में औद्योगिक विकास की गति अंत्यत धीमी है। कुछ प्रमुख बाधाएँ निम्नलिखित प्रकार स्पष्ट है।

1. **सामाजिक रूढ़िवादिता एवं कुरीतियॉ –** किसी भी देश में उद्यमिता के विकास के लिए समाज का प्रगतिशील होना बहुत जरूरी है। हमारे देश में उद्यमिता का विकास न होने का प्रमुख कारण है। समाज की दोषपूर्ण जाति व्यवस्था, भाग्यवादिता, पुरानी रूढियों में समाज का बंधन होना, सामाजिक कुरीतिया, दहेज प्रथा आदि इन सभी कारणों से लोगो में उद्यमशीलता की भावना का विकास नहीं हो पाता है।
2. **पिछड़ा दृष्टिकोण –** हमारे देश में लोग नए एवं सृजनशील विचारों में कोई भरोसा नहीं रखतें है। उद्योगों में भी अनुसंधान एवं शोध पर बहुत कम राशि खर्च की जाती है। लोगो में अनुसंधान एवं शोध करने की भावना नहीं होती है। इन्हीं कारणों से भारतीय समाज परम्पराओं व लींक से बंधा हुआ है।
3. **पुँजी का अभाव –** विकसीत देशों की तुलना में हमारे देश में लोंगो की आय कम होने से बचत नहीं हो पाती है। लोग अपनी पुँजी को उत्पादक कार्यो में न लगाकर सोना, आभूषण, अंचल सम्पत्ति, आवश्यक वस्तुओं का संग्रहण आदि में व्यय कर देते है। एवं अपनी पुँजी को अनुउत्पादक कार्यो मे लगाते है। पुँजी का अभाव भी हमारे देश में उद्यमिता के विकास के मार्ग में एक बड़ी बाधा है।
4. **अपर्याप्त सरकारी सुविधाएं एवं प्रेरणाएं –** भारत जैसे विशाल देश में उद्यमियों को प्रोत्साहित करने हेतु सरकार ने पर्याप्त सुविधांऐं एवं प्रेरणाए उपलब्ध नहीं करवाई है। जो उद्यमियों के लिए आधारभूत एवं आवश्यक तत्व है।
5. **प्रशासनिक सुस्तता एवं जड़ता** – हमारे देश की प्रशासनिक मशीनरी बहुत सुस्त एवं जड़ है। नौकरशाही, अकार्यकुशलता, लालफीताशाही, भ्रष्टाचार, पक्षपात, विलम्ब नियमों की जड़ता भारत की प्रशासनिक

मशीनरी की प्रमुख विशेषता है। इससे उद्यमिता के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

उद्यमिता विकास कार्यक्रम के लिए सुझाव :-

भारत में उद्यमिता का विकास एक नवीन विचारधारा है। इसको तीव्रता से लागू करने के लिए सरकार, वित्तीय संस्थाओं, बैंकों व अन्य एजेन्सीयों का सक्रिय सहयोग आवश्यक है। नवयुवकों में विद्यमान उद्यमिय योग्यताओं एवं क्षमताओं के उचित निर्धारण, विकास एवं प्रयोग हेतु व्यापक कार्यक्रम संचालित किए जाने आवश्यक है। उद्यमियों के तीव्र विकास हेतु निम्नलिखित सुझााव दिये जा सकते है।

1. **शिक्षा पद्धति में परिवर्तन –** उद्यमिता के विकास के लिए शिक्षा पद्धति में परिवर्तन किया जाना चाहिए। उसे रोजगार व साहस अभिमूखी बनाया जाना चाहिए।
2. **परामर्श सेवाओं का विस्तार** – उद्यमिता के विकास के लिए उद्यमियो हेतु परामर्श सेवाओं का विस्तार किया जाना चाहिए।
3. **उद्यमियों के प्रशिक्षण व अभिप्रेंरण की उचित व्यवस्था –** उद्यमिता के विकास के लिए उद्यमियों व कामगारों के प्रशिक्षण व अभिप्रेरण की उचित व्यवस्था की जाना चाहिए।
4. **पिछड़े क्षेत्रों से उद्यमियों की पहचान –** उद्यमिता के विकास के लिए पिछड़े क्षेंत्रों में उद्यमियों की पहचान पद्धति का विकास किया जाना चाहिए।
5. **तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षा केन्द्रों की संख्या में वृद्धि** – उद्यमिता के विकास के लिए तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षा केन्द्रों की संख्या में वृद्धि की जाना चाहिए।
6. **उद्यमी साहित्य का प्रकाशन** – उद्यमिता के विकास के लिए उद्यमिता साहित्य का व्यापक प्रकाशन व विस्तार किया जाना चाहिए।
7. **शोध परियोजनाओं को प्रोत्साहन –** उद्यमिता से संबंधित शोध परियोजनाओं को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

इस तरह निष्कर्ष के रूप कहा जा सकता है कि भारत में उद्यमिता का विकास एक नवीन विचारधारा का विषय है। इसको तीव्रता से लागू करने के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार वित्तीय संस्थाओं, बैंको व अन्य साख एजेंसियों का सक्रिय सहयोग आवश्यक है।

नवयुवकों में विद्यमान उद्यमीय योग्यताओं एवं क्षमताओं के उचित निर्धारण, विकास एवं प्रयोग हेतु व्यापक कार्यक्रम संचालित किये जा रहे है और उद्यमिता विकास कार्यक्रम को संगठित करने में सरकार अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

संदर्भ सूची

- भारत मे उद्यमिता विकास :- अग्रवाल एवं गुप्ता
- भारतीय अर्थव्यवस्था :- उमाकान्त सिंह
- उद्यमिता विकास :- श्रीपाल सकलेचा
- प्रतियोगिता साहित्य सीरीज :- डॉ. आर .पी. शुक्ला
- प्रतियोगिता दर्पण :- डॉ. एस. पी.अग्रवाल
- उद्यमिता कौशल विकास :- डॉ. पी.सी. जैन
- अर्थशास्त्र के सिद्धांत :- जी. पाण्डेय

****

पंचायती राज व्यवस्था का ग्रामीण जीवन में प्रभाव - विश्लेषणात्मक मूल्यांकन

डॉ. गोपाल जायसवाल*

भारतीय अर्थव्यस्था मूलत: ग्रामीण एवम् कृषि प्रधान है। देश के सर्वांगीण आर्थिक सामाजिक एवम् सांस्कृतिक विकास में ग्रामीण विकास का महत्वपूर्ण स्थान होता है। भारत की कुल जनंसख्या का 74.3 प्रतिशत भाग 5.5 लाख गाँव में निवास करता हे और लगभग 70 प्रतिशत भाग प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अपनी आजीविका के लिये कृषि पर निर्भर रहता है। इस दृष्टिकोण से ग्रामीण क्षेत्र के चहुँमुखी विकासीय रणनीति निर्धारित करने की परिकल्पना में सत्ता का विकेंद्रीकरण अनिवार्य है। ग्राम स्तर पर स्थानीय पंचायती राज व्यवस्था विकेन्द्रित प्रशासन हेतु महत्वपूर्ण कदम है। जिससे एक ओर 21 वी सदी में भारत अग्रसर होगा तो दूसरी ओर महात्मा गाँधी का सपना साकार हो सकेगा।

पंचायती राज व्यवस्था लोकतंत्र की रीढ़ है और विकेंद्रीकरण का सशक्त साधन, पंचायती राज से ही भारत के विकास का तंत्र ऊर्जित एवम् फलीभूत हो सकता है। पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से त्वरित और गतिशील ग्रामीण विकास सुनिश्चित् करने के उद्देश्य से 73 वाँ संविधान संशोधन विधेयक सम्पूर्ण भारत में 24 अप्रैल 1993 में लागू किया गया। जिसे भारत में शक्तिशाली स्वायत् शासन की स्थापना के लिए स्वर्णिम युग की शुरूआत करने वाला क्रांतिकारी कदम कहा जा सकता है। इस संशोधन के माध्यम से अधिकांश राज्यों में नवीन पंचायतों का गठन कर लिया गया है तथा संशोधित पंचायती राज व्यवस्था में अनेकों ग्रामीण विकास कार्यक्रम संचालित एवम् क्रियान्वित किये गये है। संविधान की 11 वीं अनुसूची में 29 विषय सम्मिलित किये गये है जिसके अन्तर्गत कृषि, भूमि विकास, लघु सिंचाई, पशुपालन, सामाजिक वानिकी, लघु तथा खादी ग्रामोद्योग, ग्रामीण विद्युतीकरण गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, परिवार कल्याण, समाज कल्याण, सार्वजानिक वितरण प्रणाली, कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास, पेयजल एवम् स्वच्छता आदि है।

73 वें संशोधन संविधान अधिनियम में स्थानीय स्वशासन की इकाईयों के रूप में तीन स्तर की पंचायतों की स्थापना प्रावधान है। इसमें पंचायत संस्थाओं के लिए नियमित चुनावों, एक राज्य निर्वाचन आयोग और एक राज्य वित्त आयोग की स्थापना, अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं के लिये आरक्षण, पिछड़ी जातियों के लिये आरक्षण अधिकार प्रदान करने वाले प्रावधानों की व्यवस्था की गई है । इन संस्थाओं को उपयुक्त स्तरों पर पर्याप्त अधिकार दायित्व सौंपे जाएंगे ताकि वे आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिये योजनाएँ तैयार कर सके। ग्राम सभा को पंचायती राज प्रणाली का आधार माना गया है। यह राज्य विधान मण्डलों द्वारा निर्देशित कार्यो तथा अधिकारों का इस्तेमाल करेगी । ग्रामीण एवम् जिला स्तरों पर पंचायतो में राज्य निर्वाचन क्षेत्रों से चुनावी प्रक्रिया अपनायी जायेगी। ऐसे निर्वाचन क्षेत्र की जनसंख्या और क्षेत्र के लिये निर्धारित स्थानों का अनुपात पूरे पंचायत क्षेत्र में समान रहेगाा। प्रत्येक स्तर की पंचायत का कार्यकाल पाँच वर्ष का होगा तथा भंग की स्थिति में छह महीनों के भीतर चुनाव कराना अनिवार्य होगा ।

पंचायतों को राज्य कानून के अन्तर्गत जो कर लगाने का अधिकार है,उनको राज्य और पंचायतो के मध्य तथा विभिन्न स्तरों की पंचायतों के मध्य बाँटा जायेगा। इस प्रकार कुल प्राप्तियों का एक हिस्सा ही पंचायतों को मिलेगा। पंचायतों की आवश्यकताओं, उनके कार्यक्षेत्र, आकार और उन्हें सौंपे गये दायित्वों के अनुरूप पंचायतों को वर्तमान वसूली वृद्धि के पर्याप्त उपाय करने होगें। पंचायतों को परियोजनाओं के सम्बन्ध में केन्द्र व राज्य सरकार अनुदान देती रहेगी। लेकिन संसाधन जुटाने के उपायों पर राज्य वित्त आयोग को विचार होगा।

पंचायती राज्य संस्थाओं को आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के कार्यक्रम तैयार करने और उन्हें लागू करने का दायित्व सौंपा गया है। इस दायित्व से जहाँ तक एक ओर विकास में प्रतियोगी प्राथिमिकताओं के कारण क्षेत्रीय योजनायओं पर ज्यादा ध्यान देना होगा वहीं दूसरी ओर इसके लिये किसी विशेष क्षेत्र के लिये छोटी योजनाएँ बनानी होगी जिससे सम्पूर्ण जिले की सामान्य विकास याजना का रूप ले सके। ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम हेतु प्रशासनिक प्रबन्ध की समीक्षा समिति ने सिफारिश की है कि जिला और निचली स्तर की पंचायती राज्य संस्थाओं की ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने उन्हें क्रियान्वित करने निगरानी रखने के लिये महत्वपूर्ण भूमिका सौंपी जानी चाहिये।

ग्रामीण विकास की परिकल्पना:-

सामाजिक आर्थिक परिवर्तन के इस दौर में ग्रामीण की मूलभूत बुनियादी आवश्यकताओं से सम्बन्धित समस्याएँ लगभग प्रत्येक गाँव में विद्यमान होती है। इनके समुचित निराकरण की परिकल्पना में पंचायत राज संस्थाओं के प्रतिनिधियों कीपहल से लोगों में जाग्रति उत्पन्न कर उनके जीवन स्तर को सुधारने का प्रयास किया जाना चाहिए । साथ ही ग्रामीण लोगों को स्वच्छता एवम् पेयजल के प्रति जागरूकता एवम् उपलब्धता सुनिश्चित् कर उनके स्वास्थ में गुणात्मक सुधारा ला सकते है।

अशिक्षा विकास के मार्ग में बाधक है अत: पंचायती राज संस्थाओं का यह उत्तरदायित्व है कि ग्रामीण बालक-बालिकाओं की शिक्षा का सामूहिक प्रयास, साधन एवम् प्रेरणा देकर साक्षरता कार्यक्रम को सफल बनाने में योगदान दे सकती हे। ग्रामीण लोगों की आजीविका का प्रमुख स्त्रोत कृषि एवम् कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने के लिये भूमि विकास, चकबन्दी, पड़त भूमि को उपजाऊ बनायें ताकि जलग्रहण क्षेत्र एवम् पशुपालन के लिये शासकीय योजनाओं का अधिनियम लाभ लेकर गाँव की आर्थिक समृद्धि करने का यथासंभव प्रयास पंचायतें कर सकती है। स्थानीय व्यक्ति मजदूरी के लिये पलायन न करे अथवा वृद्ध, बच्चों एवम् महिलाओं का शोषण न हो इससे निपटने के लिये ग्रामीण रोजगार योजनाओं का क्रियान्वयन कर विकास एवं कल्याण कार्य पंचायत कर सकती है।

पंचायत प्रतिनिधि ग्रामीण रोजगार के अवसरो में वृद्धि के फल स्वरूप खादी तथा ग्रामोद्योग के अन्तर्गत लघु उद्योंगों की स्थापना हेतु मार्गदशन

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

एवम् प्रेरणा दे सकते है इसके आलावा विभिन्न याजनाओं की समुचित जानकारी के लिये पंचायतें शासकीय प्रयासों से सहायता कर सकती है। राष्ट्रीय आवास नीति, कुटीर ज्योति, सुलभ शौचालय आदि अनेकों कल्याणकारी योजनाओं का लाभ सुनिश्चित् कराने में पंचायती राज संस्थाएँ प्रमुख भूमिका का निर्वहन कर सकती हैं। पंचायतों के माध्यम से यह भी आवश्यक है कि वे जनसंख्या नियंत्रण के सम्बन्ध में ग्रामीणों को समझाए, प्रेरणा एवं प्रोत्साहन देकर कम सन्तान सुखी इंसान के सपने साकार बनायें । इस प्रकार गाँव सहकारिता के केन्द्र बनें तथा संगठित होकर पंचायती राज द्वारा ग्रामीण विकास की परिकल्पना को मूर्तरूप देने के लिये सहर्ष तैयार हो ।

ग्रामीण जीवन पर प्रभाव:-

73 वाँ संशोधित अधिनियम लागू होने के पाँच वर्षों में ग्रामीण सामाजिक एवम् आर्थिक जीवन में पंचायती राज संस्थाओं की जड़े जमाने की दिशा में उत्साहजनक प्रगति हुई है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीयकरण के रूप में पंचायती राज व्यवस्था ने भारतीय ग्रामीण जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। वर्तमान संदर्भ में पंचायती राज संस्थाए देश के सभी भागों में कार्यान्वित हो चुकी है तथा विभिन्न इकाईयों के द्वारा एक समन्वित विकास कार्यक्रम को व्यवहारिक रूप दिया जा रहा है। इस व्यवस्था के अनुसार प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण से सम्बधित सभी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को गाँव स्तर पर लागू करने के लिय पंचायती राज एक महत्वपूर्ण संस्था है।

पंचायती राज व्यवस्था के प्रभाव से ग्रामीणों की परम्परागत जाति संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे है। ग्रामीणो को मतदान का अधिकार मिलने से जाति संरचना में केवल ध्रुवीकरण की प्रकिया ही आंरभ नहीं हुई बल्कि विभिन्न जातियों के निकट सम्पर्क में आने के अवसर भी प्राप्त हुए है। पंचायती राज की स्थापना से अनुसूचित जातियों एवम् जनजातियों में आत्मसम्मान की भावना का संचार हुआ है। इसके अतिरिक्त गाँवों के अधिक उत्साही तथा प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले व्यक्तियों में नेतृत्व की नई क्षमताओं का विकास हुआ है। सम्बद्ध विभिन्न विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप ग्रामीणों के जीवन स्तर तथा प्रति व्यक्ति आय में भी पर्याप्त सुधार हुआ है। पंचायती राज के प्रभाव से आज ग्रामीण गतिशीलता में वृद्धि हुई है। यह गतिशीलता सामाजिक तथा आर्थिक सभी क्षेत्रों में विद्यमान हैं। पंचायत प्रतिनिधियों द्वारा गाँव में स्वच्छता, पेयजल, स्वास्थ सुविधाए एवम् शिक्षा के प्रचार में निर्दिष्ट प्रावधानों के प्रति जागरूकता बनाये हुए है। पंचायती राज व्यवस्था का ग्रामीण जीवन पर एक स्पष्ट प्रभाव जाति पंचायतों का ह्रास देखने को मिलता है। जो अंधविश्वास, भाग्यवादिता तथा आर्थिक असमानता में वृद्धि करने के लिये एक बड़ी सीमा तक उत्तरदायी था। इस प्रकार आज पंचायती राज व्यवस्था ने ग्रामीण जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया है।

अनेक लाभकारी प्रभावों के पश्चात् पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण जीवन में कुछ विघटनकारी प्रवृत्तियों को भी जन्म दिया है। जिनमें गुटबंदी, संघर्ष एवम् व्यक्तिवादिता आदि प्रमुख मुद्दे है। आज गाँव में भी नगरों के समान व्यक्तिवादिता तथा मूल्यों के ह्रास की समस्याए उत्पन्न हुई है। कुछ लोगों का विचार है कि ये दुष्परिणाम पंचायती राज व्यवस्था के होकर दोषपूर्ण क्रियान्वयन के है। वास्तविकता यह है कि पंचायती राज के दुष्परिणाम इससे प्राप्त लाभों की तुलना में बहुत कम है। किसी भी समाज अथवा समुदाय की प्रगति का वास्तविक आधार उसके सदस्यों की समाजिक और आर्थिक जागरूकता पंचायती राज व्यवस्था ने ऐसी जागरूकता उत्पन्न करने में निश्चय ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

विश्लेषणात्मक मूल्याकंन:-

नये पंचायती राज व्यवस्थपा के क्रियान्वयन को पाँच वर्ष व्यतीत हो चुके है और पंचायती राज व्यवस्था के ग्रामीण विकास पर प्रभाव परिलक्षित होने लगे हैं । इन पाँच वर्षो का मूल्यांकन किया जाये तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि ग्रामीण विकास की सफलता के लिये जागरूकता एक महत्वपूर्ण शर्त है । इससे प्रत्येक व्यक्ति को यह जानकारी होगी कि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में उसके लिये क्या उपयोगी है । इनक कार्यक्रमों से सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से क्या लाभ होगा । पंचायती राज के प्रतिनिधि का राजनीतिक दलों के साथ अपने स्वतन्त्र विचारों के आधार पर प्रत्यक्ष सम्बन्ध कम ही है । लेकिन इतना तय है कि पंचायती राज का दलीकरण हुआ है और इसका प्रदेश एवं देश की दलीय राजनीति पर भविष्य में दूरगामी प्रभाव पड़ने की सम्भावना हैं । वित्तीय संसाधनों के सम्बन्ध में भी स्थिति सन्तोषजनक नहीं है । पंचायतों के साधन स्त्रोत अस्पष्ट होने से साधनो की समुचित व्वस्था के अभाव में पंचायतें को सुचारू ढंग से नहीं चलाया जा सकता है। चूंकि अधिकांश राज्यों में वित्तीय आयोग गठित हो चुके है और उनकी कार्यप्रणाली से पंचायतों को पर्याप्त लाभ नहीं हो रहा है। पंचायती राज व्यवस्था का मूल उद्देश्य स्थानीय स्तर पर उन्हें स्वशासी सरकार की स्थापना करना हे इसी आधार पर आर्थिक ताकि सामाजिक न्याय के लिये योजनाएँ बनाने का अधिकार भी दिया गया है। इसका आशय यह हुआ कि पंचायतों को कार्यात्मक वित्तीय तथा प्रशासनिक स्तर पर स्वायत् होना चाहिए । लेकिन उन्हें किसी भी प्रकार की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है । यदि व्यवहारिक धरातल पर देखा जाये तो पंचायतों की हालत काफी दयनीय है तथा पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधि लगभग अशिक्षित या अल्प शिक्षित होते है जिससे पंचायत सदस्य को बुलाने की प्रविधि का ज्ञान नहीं होता और प्रस्ताव बनाना, प्रसारित करना, बजट बनाना, लेखा तैयार करना, अंकेक्षण कराना, सरकारी योजनाओं की अनभिज्ञता आदि महत्वपूर्ण कारणों से पंचायत सदस्य भली भाँति अपने कर्तव्यों का निष्पादन करने में असफल सिद्ध होते है अत: आवश्यक है कि इन प्रतिनिधियों के लिए सन्तोषजनक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जावें ।

निष्कर्ष :-

उपरोक्त विवेचनात्मक अध्ययन से स्पष्ट संकेत मिलते है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दिशा में स्वतंत्रता के पश्चात् से ही अब तक के सतत् प्रयासों में नि:संदेह 73 वा संविधान संशोधन अधिनियम सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं गंभीर प्रयास है । इस व्यवस्था से लोकतंत्र सही अर्थो में गाँव के अन्तिम व्यक्ति तक पहुँचा है । यदि यह प्रक्रिया निर्विवाद रूप से क्रियान्वित रही तो पिछड़े एवं उपेक्षित ग्रामीण समाज में सजगता और नवीन चेतना की अभिवृद्धि होगी । निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि पंचायतों को कार्यात्मक उत्तरदायित्वों के अधिकार के साथ पर्याप्त वित्तीय स्त्रोत होना चाहिए । तभी राज हमारा अधिकार हमारा, शासन का हर द्वार हमारा का लक्ष्य प्राप्त हो सकेगा ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था प्रतियोगिता दर्पण, 2/11 ए स्वदेशी बीमा नगर आगरा, वर्ष 2012-13,
2. पंचायती राज अपडेट-इंस्टीट्यूट ऑफ शोसल साइंसेज वर्ष 7 व 5 मई 20002 एवं वर्ष 17 अंक 10 2012,
3. उद्योग व्यापार पत्रिका -इन्डिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गनाईजेशन प्रगति भवन, नई दिल्ली, मई 2013 पृष्ठ-7
4. वार्षिक रिर्पोट, सूचना प्रकाशन कार्यालय नई दिल्ली वर्ष 2011-12
5. पंचायती राज व्यवस्था कुरूक्षेत्र हिन्दी पत्रिका ग्रामीण विकास मंत्रालय नई दिल्ली वर्ष-2010

मध्यप्रदेश सरकार की कृषि ऋण योजनाएँ

अदिति श्रीवास्तव *

परिचय :-

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहां की 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आश्रित है। भारत के आर्थिक विकास में कृषि का महत्तवपूर्ण स्थान है, वास्तव में कृषि हमारे देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग-धंधा ही नहीं है, बल्कि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी है।

स्व. पंडित जवाहर लाल नेहरू जी ने कहा था कि - ''कृषि को सर्वाधिक प्राथमिकता देने की आवश्यकता है, यदि कृषि असफल रहती है तो सरकार एवं राष्ट्र दोनों ही असफल रहते हैं।'' वस्तुत: कृषि की प्रधानता केवल मध्यप्रदेश में ही नहीं अपितु समस्त भारत देश में है, जब तक आधुनिक संसाधनों का कृषि कार्य में उपयोग नहीं होता था तब तक पारंपरिक साधन ही कृषि कार्य के लिए उपयोग में लाये जाते थे साथ ही कृषि कार्य प्राकृतिक वातावरण से प्रभावित होता था। यह स्थिति आज भी है, किंतु आधुनिक संसाधनों के द्वारा कृषक ने विपरीत परिस्थितियों से संघर्ष करना सीख लिया है, और कृषि कार्य में जितनी क्षति पहले हुआ करती थी अब उनसे बचा जा सकता है।

वर्तमान में यह अवधारणा बना ली गई है कि कृषि से अधिक से अधिक लाभ लिया जाये खेत फालतू के न छोड़े जायें, हमारी प्रदेश सरकार ने संकल्प लिया कि हम प्रदेश की खेती को लाभ का व्यवसाय बनायेंगे। विगत दस वर्षों में इस संदर्भ में वर्ष 2011-12 के मध्य कृषि विकास दर 18 प्रतिशत से अधिक रही जो कि प्रदेश के इतिहास में सर्वाधिक है, इस उच्चतम कृषि विकास दर को प्राप्त करने के फलस्वरूप ''चैम्बर ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज'' के द्वारा 20 सितम्बर 2012 प्रदेश का सम्मानित किया गया है। इन्हीं कृषि योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु ''एग्रीकल्चर टुडे'' समूह द्वारा राज्य को सर्वश्रेष्ठ राज्य घोशित करते हुए ''बेस्ट लीडर अवार्ड'' प्रदान किया गया है। इसी क्रम में राष्ट्रपति द्वारा ''कृषि कर्मठ पुरूस्कार'' मध्यप्रदेश को प्रदान किया गया।

परिभाषा :-

कृषि साख से अर्थ उस साख से है, जिसकी आवश्यकता कृषि कार्य करने में होती है, यह आवश्यकता बीज, खाद्य यंत्र क्रय करने या मालगुजारी देने व कृषि संबंधी अन्य कार्य करने के लिए हो सकती है। इस वित्त की पूर्ति साहूकार, सहकारी साख संस्थाऐं, भूमि विकास बैंक, भूमि बंधक बैंक, व्यापारिक बैंक, सरकार व अन्य वित्तीय निगमों के द्वारा की जाती है। राज्य सरकार ने सहकारी संस्थाओं के माध्यम से मध्यप्रदेश में कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कारगर बनाने के लिए ठोस प्रयास किए है, राज्य सरकार ने भी प्रभावी पहल करने के लिए कृषि को लाभदायक व्यवसाय बनाया है, चालू वित्त वर्ष से शून्य प्रतिशत ब्याज पर किसानों को ऋण उपलब्ध कराया जायेगा। यह भी इस पहल का एक ऐतिहासिक हिस्सा है। इसके अलावा सहकारी संस्थाओं के माध्यम से किसानों को उर्वरक और बीज उपलब्ध कराने के लिए भी ऋण उपलब्ध कराया जायेगा।

अग्रणी मध्यप्रदेश सरकार द्वारा सहाकारी क्षेत्र के लिए गए निर्णयों के कारण राज्य में सहकारी बैंक लाभ कमा रहे हैं। प्रदेश में खेती को लाभ का व्यवसाय बनाने के लिए किसानों के हित में अनेकों निर्णय लिए गए हैं, जिसमें किसानों के लिए प्रदेश सरकार द्वारा कृषि से संबंधित ऋण योजनाऐं संचालित हैं। इन ऋण योजनाओं के कारण कृषि जगत में एक क्रांति की लहर देखने को मिली।

पूर्व में कृषि ऋण योजना के अभाव में किसानों को गांव के साहूकार से ऋण लेना पड़ता था जो कि अपने मासिक ब्याज दर पर देते थे, इस प्रकार किसान ऋण से उबर नहीं पाता था और पीढ़ी दर पीढ़ी ऋण चुकाता रहता था, इसीलिए कहा जाता है कि ''भारतीय कृषक ऋण में जन्म लेता है ऋण में पलता है और ऋण में ही मर जाता है।'' पर प्रदेश सरकार ने किसानों की हालत को देखते हुए उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार करने के लिए विभिन्न बैंकिंग संस्थाओं एवं सहकारी समितियों द्वारा ऋण योजनायें चलाई जा रही हैं।

किसान इन कृषि ऋण योजनाओं को अपनी जरूरत के हिसाब से संस्थाओं से कम से कम ब्याज दर पर ऋण प्राप्त कर लेता है। पहले कृषि कृषकों के लिए पेट पालने का जरिया था लेकिन वर्तमान में कृषि ऋण योजनाओं के कारण कृषि लाभ का व्यवसाय बन चुका है।

मध्यप्रदेश सरकार की कृषि ऋण योजनाएं

मध्यप्रदेश एक कृषि प्रधान प्रदेश है तथा किसी भी देश या प्रदेश का विकास कृषि पर निर्भर करता है। कृषि के विकास के लिए आवश्यक है, कि कृषक अधिक से अधिक उत्पादन कर तथा उनके उपयोग की सभी वस्तुऐं जैसे कृषि यंत्र, अच्छी किस्म के खाद-बीज, रसायन, उर्वरक, सिंचाई की आवश्यकता होती है।

किसानों के पास पर्याप्त धन के अभाव के कारण वह कृषि की आधुनिक तकनीक के बजाय परम्परागत तकनीक का उपयोग करते हैं, जिससे कृषि का अपेक्षाकृत उत्पादन कम होता है, जिससे किसानों की स्थिति निरंतर दयनीय बनी रहती है। जिससे किसानों का आर्थिक शोषण होता है।

प्रदेश में किसानों की हालत सुधारने तथा प्रदेश सरकार द्वारा किसानों को उचित ऋण प्रदान करने के उद्देश्य से बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया।

कई वर्षो से कृषि केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार की शीर्ष प्राथमिकताओं में से एक प्राथमिकता के रूप में उभरी है।

इस बात को ध्यान में रखते हुए कृषि उत्पादकता में वृद्धि तथा कृषकों की आर्थिक दशा को सुधारने एवं उनके जीवन स्तर को उन्नत करने के लिए प्रदेश सरकार विभिन्न बैंकिंग संस्थाओं एवं सहकारी समिति द्वारा जो ऋण योजनायें चलाई जा गई है वो निम्नानुसार हैं :-

01. आवास ऋण योजना
02. रियल स्टेट ऋण योजना
03. रेन्टल ऋण योजना
04. शिक्षा ऋण योजना
05. किसान केडिट कार्ड ऋण योजना
06. शासकीय गोदामों में भंडारित माल का गोदाम रसीदों के विरूद्ध मांग या ऋण ओव्हर ड्राफ्ट सुविधा ऋण योजना।
07. वेयर हाउस रसीदों के विरूद्ध वित्त पोषण निर्देशन।
08. ट्रेड ऋण योजना।

* शोधार्थी , करेली, जिला - नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

09. वेयर हाउस में भंडारित माल की प्रतिभूति के विरूद्ध कृषकों को ऋण देने हेतु ओवर ड्राफ्ट सुविधा ।
10. किसान शक्ति योजना
11. शुष्क भूमि कृषि के लिए सेकेण्डहैण्ड ट्रैक्टर्स खरीद योजना।
12. कृषि औजारों, साधनों, सिंचाई सुविधाओं के सृजन हेतु अनुसूचित जाति या जनजाति वर्गों की वित्तीय सहायता।
13. कृषि मजदूर एवं सीमांत, लघु कृषकों हेतु लघु इकाई, बकरी पालन ऋण योजना।
14. कृषक मोटर साइकिल ऋण योजना।
15. कृषि उपकरण हेतु ऋण योजना।
16. किसान गोल्ड योजना।
17. फसल ऋण एवं कृषि गोल्ड ऋण।
18. किसान समाधार कार्ड
19. लघु सिंचाई एवं कुआ खुदाई योजना, पुराने कुओं के विकास की योजना।
20. भूमि विकास योजना।
21. संयुक्त फसल कटाई मशीन की खरीद ऋण योजना।
22. ड्रिप सिंचाई एवं छिड़काव।
23. कृषि भूमि, परती, बंजर भूमि की खरीद योजना।
24. बंजर भूमि विकास।

प्रदेश सरकार द्वारा किसानों के लिए अल्पकालीन ऋण शून्य प्रतिशत ब्याज दर से उपलब्ध कराया जा रहा है।

प्रदेश में वर्तमान में चलाई जाने वाली कृषि ऋण योजनाओं से किसान अपनी जरूरतों को पूरा करता है। कृषि ऋण योजना के माध्यम से प्रदेश में कृषि की पैदावार बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं। वर्ष 2010-11 में 18.67 लाख मीट्रिक टन रासायनिक उर्वरकों का वितरण किया गया जबकि वर्ष 2011-12 के माह नवम्बर तक 11.64 लाख मीट्रिक टन रासायनिक उर्वरकों का वितरण किया गया।

पहले के वर्षों के दौरान किसानों को फसल ऋण 15 से 16 प्रतिशत ब्याज की दर से उपलब्ध कराया गया था जो कि बहुत अधिक था छोटे किसानों के हितों को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकार ने वर्ष 2006-07 और 2007-08 में 7 प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया गया। 2007-08 और 2008-09 में 5 प्रतिशत तथा 2008-09 से 2010-11 में 3 तथा 2010-11 से 2011-12 में 1 प्रतिशत तथा 2011-12 से 2012-13 में 0 प्रतिशत ब्याद दर पर ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है।

मध्यप्रदेश देश का एकमात्र ऐसा राज्य है जहां कृषि विकास की दर अधिकतम है। इसका श्रेय राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही कृषि ऋण योजनाओं को जाता है। मध्यप्रदेश 18 प्रतिशत वृद्धि दर हासिल करने वाला देश का एकमात्र राज्य है, इस प्रकार कृषि विकास की दर में वृद्धि के कारण प्रदेश देश का अग्रणी राज्य के रूप में पहचाना जाएगा।

निष्कर्ष

1. मध्यप्रदेश सरकार ने जो कृषकों को ऋण योजनायें प्रदान की हैं किसान उनसे अत्यधिक लाभान्वित हो रहे हैं।
2. वर्तमान में किसानों को सबसे कम दर अर्थात् शून्य प्रतिशत ब्याज पर अल्पकालीन ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है।
3. किसानों को उनकी कृषि संबंधी व्यय की भरपाई करने के लिए केडिट कार्ड योजना उपलब्ध कराई गई।
4. किसान हमेशा प्राकृतिक आपदा जैसे अतिवृष्टि व अल्पवृष्टि से ग्रसित रहते हैं, जिससे उनकी फसल नष्ट हो जाती है, इस स्थिति से निपटने के लिए सरकार द्वारा राष्ट्रीय बीमा योजना उपलब्ध कराई गई, जिससे किसान अपनी फसलों का बीमा कराकर प्राकृतिक आपदा से नष्ट होने वाली फसलों के नुकसान की भरपाई कर सकता है।
5. कृषि ऋण योजना के माध्यम से किसान अपनी खेती में लगने वाले उपकरण जैसे ट्रेक्टर, हार्वेस्टर, मशीनें, सिंचाई के साधनों को खरीद सकता है, और अपने उत्पादन में वृद्धि कर सकता है।
6. कृषि ऋण योजना के माध्यम से किसान अपने विभिन्न प्रकार के सामाजिक व्ययों की पूर्ति कर सकता है, क्योंकि किसान अपने कृषि कार्य के लिए जो ऋण लेते हैं, इससे उनके उत्पादन में वृद्धि होती है, जिससे उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत होती है, जिससे वह अपनी सारी जरूरतों को पूरा कर सकता है। जैसे बेटी की शादी, बच्चों की शिक्षा, जन्म मृत्यु के कारण।
7. जो किसान ऋण चुकाने में असमर्थ है जो सीमांत किसान हैं और ऋण नहीं चुका सकते उनके लिए कर्ज माफी योजना भी चलाई गई है।
8. कृषि ऋण योजनाओं के माध्यम से किसानों के आर्थिक शोषण ऋणगस्तता, आत्महत्या, प्राकृतिक आपदा जैसी स्थिति से निपटने में काफी हद तक मुक्ति मिली है।
9. देश में मध्यप्रदेश ही एक ऐसा राज्य है जहां किसानों को अल्पकालीन ऋण शून्य प्रतिशत ब्याज दर पर दिया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारतीय कृषि - ए. एन. अग्रवाल
2. कृषि साख की अर्थव्यवस्था - अरूण कुमार बंदोपाध्याय
3. भारत में कृषि विकास के लिए -एस. बी. वशिष्ठ कृषक प्रशिक्षण
4. सिंचित कृषि -आर. के. गुरजर
5. भारत में कृषि का इतिहास -एन. एस. राधाना
6. कृषि का प्रबंध-आर. एस. सिंह
7. भारतीय कृषि का विकास - जी. एस. भल्ला, गुरमेत सिंह
8. कृषि और तकनीक - सुमित राय

****

21वीं शताब्दी में म.प्र. के पर्यटन स्थलों में होटल सेवा क्षेत्र

डॉ. पी.पी. पाण्डेय * डॉ. प्रभा पाण्डेय **

पर्यटन आज विश्व का सर्वाधिक गतिशील, रोजगारोन्मुख, श्रम अभिमुख विकासशील, धुआ रहित एवं विदेशी मुद्रा अर्जन करने वाला उद्योग है। आज विश्व के सम्मुख विशेषकर विकासशील देशों के सामने भुगतान असतुंलन, विदेशीमुद्रा भण्डार एवं विदेशी मुद्रा अर्जन एक बड़ी समस्या बनकर उभरी है। पर्यटन एक ऐसा उद्योग है, जो बिना कुछ निर्यात किए अन्तर्राष्ट्रीय जगत की विदेशी मुद्रा भुगतान की समस्या के निराकरण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। पर्यटन आज का युगधर्म है। कोई भी मनुष्य जो विश्व के किसी भी कोने में रहता हो, चाहे वह किसी धर्म, सम्प्रदाय जाति या विचारधारा से सम्बन्ध रखता हो, पर्यटन के कारण उसे पूरी दुनिया जानी पहचानी एवं घरतुल्य लगती है।

21वीं सदी में पर्यटन न केवल एक आर्थिक क्रिया बनकर उभरा है, अपितु यह विश्व के सबसे लाभप्रद एवं सबसे बड़े उद्योग के रूप में प्रतिष्ठित होने जा रहा हैं। पर्यटन वस्तुत: आराम करने का प्रयास है जिससे आम जीवन के विपरीत कुछ भी नियमित, नियंत्रित और बंधा-बंधाया कार्य नहीं होता है। इस दौरान वह कुछ खास दर्शनीय स्थलों पर जाता है। उसके मन में इन दर्शनीय स्थलों को देखने की ललक होती है और वह इनमें कुछ अनूठेपन की खोज करता है, जिसमें कुछ आम जीवन से हटकर हो, जिसमें उसे सुख एवं आनन्द की प्राप्ति हो।

पर्यटन का अर्थ चारों ओर घूमना अर्थात इधर-उधर घूमना या भ्रमण करना होता है।पर्यटन की दृष्टि से मध्यप्रदेश अन्य पर्यटन प्रदेशों की तुलना में अधिक सम्पन्न पर्यटन प्रदेश है। म.प्र. को पर्यटकों का स्वर्ण कहा जाये तो अतिश्योक्ति न होगा। म.प्र. राज्य पर्यटन संचालनालय की वार्षिक प्रतिवेदन 1995-96 के अनुसार राज्य में लगभग 450 आकर्षक पर्यटन स्थल है। राज्य में पर्यटन स्थलों के विकास के उद्देश्य से वर्ष 1978 में मध्यप्रदेश राज्य पर्यटन विकास निगम की स्थापना की गई थी। निगम का उद्देश्य राज्य में पर्यटन सुविधाओं का विकास करना है।

पर्यटन के विविध स्वरूप

1. सांस्कृतिक पर्यटन
2. ऐतिहासिक पर्यटन
3. वैकल्पिक पर्यटन
4. परम्परागत पर्यटन
5. पर्यावरणीय पर्यटन
6. मनोरंजनात्मक पर्यटन
7. मेडिकल पर्यटन
8. जातीय पर्यटन
9. परिस्थितिकीय पर्यटन
10. धार्मिक पर्यटन
11. साहसिक पर्यटन
12. रात्रि पर्यटन
13. ग्रामीण पर्यटन
14. फार्म हाउस पर्यटन
15. अन्य पर्यटन

म.प्र. के पर्यटन स्थलों में खजुराहो विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने वाला प्रमुख आकर्षण स्थल है, जहां कुल विदेशी पर्यटकों का 62.44 प्रतिशत पर्यटक प्रतिवर्ष पहुंचते हैं। भारत वर्ष में विदेशी पर्यटकों के मध्य कलात्मक व ऐतिहासिक पर्यटन स्थल सर्वाधिक लोकप्रिय है और इन आकर्षण स्थलों के विकास के सम्बन्ध में केन्द्र सरकार का उत्तरदायित्व है। विश्व के पर्यटन मानचित्र में खजुराहो आज शीर्षस्थ स्थान पर है।

खजुराहो के मंदिर विश्व के पर्यटकों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है जो भारत की प्राचीन हिन्दू शिल्पविद्या का उत्कर्ष नमूना है जिसके आगे हर व्यक्ति ठगा सा खड़ा रह जाता है। खजुराहो के मंदिरों की मूर्तियो में गंभीरता और सौम्यता के स्पष्ट दर्शन होते हैं। बुंदेलखण्ड क्षेत्र के प्राचीन सांस्कृतिक स्थलों में खजुराहो अपना विशिष्ट स्थान रखता है। यह छतरपुर जिले में स्थित है, इसका सबसे निकटतम् रेल्वे स्टेशन हरपालपुर 94 कि.मी. है।

आवासीय सुविधाएँ -

1. होटल पायल, म.प्र. पर्यटन विकास निगम।
2. शंकर होटल, म.प्र. पर्यटन विकास निगम।
3. टूरिस्ट बंगला, म.प्र. पर्यटन विकास निगम।
4. टूरिस्ट विलेज, म.प्र पर्यअन विकास निगम।

अन्य आवासीय सुविधाएँ -

चंदेला होटल, जान्स ओबेराय होटल, अशोका होटल, होटल ललित टेम्पल न्यू, होटल रमादा, होटल रेडीसन, होटल क्लार्क, होटल हारमोनी टोटल उषा बुंदेला, होटला सूर्या आदि।

म.प्र. में वर्तमान पर्यटन स्थल एवं नये संभावित पर्यटन -

स्थल- पचमढ़ी, भेड़ाघाट, सांची, ओंकारेश्वर, मांडू, कन्हा राष्ट्रीय उद्यान, बांधवगढ़ नेशनल पार्क, शिवपुरी, उज्जैन, महेश्वर, ग्वालियर, भोपाल, अमरकंटक।

आधुनिक म.प्र. 01 नवम्बर 1956 को अस्तित्व में आया। म.प्र. भारत का हृदय प्रदेश है व पर्यटकों का स्वर्ग है, जिससे व्यक्ति स्वमेव आकर्षित हो जाता है। इसकी सांस्कृतिक विरासत अत्यन्त प्राचीन है।

वर्गीकृत होटल -

1. श्रंखला होटल
2. स्वतन्त्र होटल
3. सरकारी स्वामित्व वाले होटल
4. हैरिटज होटल

अवर्गीकृत होटल

1. पंजीकृत होटल
2. अपंजीकृत होटल
3. वैकल्पिक आवासीय सम्पत्तियां।

* प्राध्यापक-वाणिज्य ** प्राध्यापक-अर्थशास्त्र शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला-सतना (म.प्र.) भारत

वर्तमान समय में खजुराहो के प्रमुख मंदिरों की संख्या 26 है। इनमें प्रमुख है –

1. वैष्णव मंदिरों के नाम –

1. लक्ष्मण मंदिर 2. वराह मंदिर
3. लक्ष्मी मंदिर 4. देवी जगदंबी मंदिर
5. बह्मा मंदिर 6. वामन मंदिर
7. चर्तुभुज मंदिर 8. हनुमान मंदिर
9. जवारी मंदिर 10. खाकरा मंदिर

2. शैव मंदिरों के नाम –

1. कंदारिया महादेव मंदिर
2. विश्वनाथ का मंदिर
3. दुलादेव का मंदिर
4. महादेव का मंदिर
5. मांगतेश्वर का मंदिर
6. नदी का मंदिर
7. लालगुआन महादेव मंदिर

3. सौर्य मंदिर –

1. चित्रगुप्त मंदिर
2. चौसठ योगनियों का मंदिर

तालिका –1

म.प्र. के पर्यटन स्थल खजुराहो में देशी एवं विदेशी पर्यटकों के आगमन 2002 से 2010 तक

वर्ष	देशी पर्यटकों का आगमन	विदेशी पर्यटकों का आगमन	कुल पर्यटकों का आगमन
2002	133444	33610	167054
2003	128183	29870	15053
2004	125375	44364	169739
2005	146946	70726	217672
2006	164406	73843	238249
2007	193764	84887	278651
2008	201443	89169	290612
2009	228503	68839	297342
2010	234950	90721	325671

विदेशी पर्यटकों की समस्याएँ –

1. वीजा–पासपोर्ट तथा भ्रमण अवधि, अपराध, लूट, यौन शोषण
2. भाषा निर्देशन एवं विनिमय
3. आवास एवं आहार की समस्या
4. वायु, सेवा, रेल एवं आरक्षण सम्बन्धी समस्याएँ
5. धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याएँ
6. विदेशी विनिमय, मार्ग सुविधा तथा सुरक्षा की समस्या
7. साफ–सफाई, चिकित्सा सुविधा
8. पैकेज टूअर्स की समस्या

देशी पर्यटक की समस्या –

1. यातायात व परिवहन समस्या
2. प्रचार प्रसार की समस्या
3. संचार, वाणिज्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी समस्या
4. अपराधिक समस्याएँ
5. मनोरंजन तथा आमोद–प्रमोद की समस्या
6. चोरियों का भय

सुझाव –

1. विदेशी पर्यटकों के प्रति हमारी नीति भी सहयोग की नहीं है। हम उन्हें ठगने के चक्कर में ज्यादा रहते हैं। उनके मन में राज्य के प्रति गलत छवि पैदा होती है।
2. पर्यटन स्थलों पर शराब चलन अनिवार्य सा हो गया है, इस कारण से पावन तीर्थ अपावन होते जा रहे हैं। इसे रोकने के प्रयास हैं।
3. पुराने पर्यटन वृत्तों के सहारे विदेशियों को ज्यादा आकर्षित नहीं किया जा सकता है, इसके लिए जलक्रीड़ा, युवा पर्यटन, वन्य जीव पर्यटन, साहसिक पर्यटन को अधिक बढ़ावा दिया जाना चाहिये।
4. ट्रेवल एजेन्सियों एवं गाइडों की समग्र दृष्टि सैलानियों के पैसे पर रहती है। इनकी देख–रेख के लिए एक विशेष सेल की स्थापना की जाये।
5. विदेशी पर्यटकों के लिए रेल परिवहन एवं सड़क परिवहन की सुविधाओं का विकास किया जाय।
6. कुशल व प्रशिक्षित गाइड पर्यटकों की नियुक्ति की जाय।
7. राज्य के महत्वपूर्ण पर्यटन केन्द्रों को वायु परिवहन से जोड़ा जाए।
8. पर्यटन साहित्य का प्रचार–प्रसार हिन्दी भाषा के साथ–साथ अन्य भाषाओं में भी उपलब्ध है।
9. म.प्र. राज्य पर्यटन विकास निगम की अशंपूंजी में वृद्धि किया जाय, साथ ही कुशल एवं योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति की जाय।
10. पर्यटन जागरूकता विकास कार्यक्रम पाठ्यक्रमों में लागू किया जाय।

****

कृषि एवं ग्रामीण विकास में भूमि सुधार का प्रयोग क्यों असफल रहा? एक मूल्यांकन

डॉ. आनंद तिवारी *

ग्रामीण विकास हेतु भूमि सुधार का औचित्य – भूमि सुधारों का कृषि विकास में इस दृष्टि से महत्व है कि जब भी कृषि संबंधों में मध्यस्थों या बिचोलियों को हटाकर काश्तकार को भूमि का स्वामित्व दे दिया है तो कृषि भूमि पर स्थायी सुधार के लिए अनुकूल स्थिति बनती है इस स्थिति में काश्तकार कृषि भूमि पर विनियोग करने हेतु तैयार होता है जिससे उत्पादकता बढ़ती है, भूमि सुधार सामाजिक न्याय की दृष्टि से भी आवश्यक होते है क्योंकि सामाजिक संरचना के अनुसार भूमि उन्ही के स्वामित्व में होना चाहिए जो उस पर कृषि क्रिया निष्पादित करते है। विश्व के कतिपय राष्ट्रों में जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, ताईवान, मेक्सिको आदि में भूमि सुधार द्वारा आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है, भारतीय परिप्रेक्ष्य में भूमि सुधार हेतु पुनीत कार्यक्रम की महत्ता एवं प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। भारतीय आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था मूलत: गांव से जुड़ी है। प्रकृति की अपार एवं महत अनुकम्पा से भारत में प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन भरपूर उपलब्ध है।

महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत की आत्मा गांव में बसती है और आप यदि भारत का विकास करना चाहते है तो गांव का विकास पहले करना होगा। गांव का समग्र विकास मूलत: कृषि व्यवस्था से सम्बद्ध है क्योंकि यह भारत की ग्रामीण जनसंख्या के दो तिहाई से ज्यादा लोगों की अजीविका का साधन है। प्रथम पंचवर्षीय योजना से अब तक हमने ग्रामीण एवं कृषि विकास को प्राथमिकता प्रदान की है परन्तु फिर भी ग्रामीण गरीबी एवं बेकारी लगभग यथावत है। कृषि विकास की दृष्टि से हमने हालांकि काफी सफलता अर्जित की है। खाद्यान्न क्षेत्र में आत्मनिर्भरता इस बात का जीवंत उदाहरण हमारे सामने है। कृषि क्षेत्र में तकनीकी परिवर्तन के अंतर्गत हरित क्रांति के परिणामस्वरुप खाद्यान्न उत्पादकता का सूचको का उल्लेखनीय रुप से बढ़ा है परन्तु आम ग्रामीण भारतीय की हालत में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। यद्यपि बेहतर बंधुआ मजदूरों की आर्थिक बदहाली दूर करने हेतु संस्थागत परिवर्तनों के अंतर्गत मध्यस्थों का बीड़ा उठाया गया। काश्तकारी व्यवस्था में सुधार किया गया जोतों की सीमाबंदी की गई। चकबंदी हटाई सहकारी और सामूहिक खेती को बढ़ावा दिया गया।

भूमि सुधार कार्यक्रमों का मूल्यांकन : भूमि सुधार हेतु अनेक कार्यक्रम भिन्न-भिन्न राज्यों में क्रियान्वित किये गये जिसमें मध्यस्थों की समाप्ति की गई, काश्तकारी व्यवस्था में सुधार किया, जोतों की सीमाबंदी की गई सहकारी खेती को प्रोत्साहित किया गया और भूदान आंदोलन द्वारा भी भूमि सुधार का कार्य किया गया। जिसमें जमींदारों का उन्मूलन चकबंदी व सहकारी कृषि सुधारों के अलावा शेष सभी असफल रहे। हमने अपने आलेख में भूमि सुधार के कार्यक्रमों में असफलता के बुनियादी कारणों पर चिंतन व्यक्त किया है :

*** कानूनी कमियां :**

(1) खुद काश्तकार की परिभाषा अस्पष्ट – विभिन्न राज्यों के कानूनों में 'खुद-काश्त' शब्द की परिभाषा अस्पष्ट है वस्तुत: खुद भारत का आशय अपने 'नाम से खेती' होता है परन्तु अधिकांश राज्यों में खुद देखरेख को खुदकाश्त का हिस्सा मान लिया है और भू-स्वामी के परिवार के किसी सदस्य द्वारा देखरेख को पर्याप्त मान लिया गया। खुद काश्त की अस्पष्ट परिभाषा के आधार पर व्यापक पैमाने पर काश्तकारों को भूमि से बेदखल कर दिया जो कि भूमि सुधारों के लक्ष्यों के विपरीत था।

(2) खुद काश्त के लिए भूमि अपने रखने की सीमा – न केवल खुदकाश्त की परिभाषा अस्पष्ट एवं दोषपूर्ण थी अपितु खुदकाश्त के लिए मध्यस्था को अपने पास रखने की अनुमति दी गई। जिसके परिणामस्वरुप जमींदारों को अपने लिए बहुत बड़ी भूमि रखने की छूट मिल गई जो जमींदारी उन्मूलन के उद्देश्यों से बिलकुल विपरीत था। कानूनों के कार्यान्वयन के बाद ये लोग दूरवासी भूस्वामी बन गये है।

(3) परिवार के लोगो को भूमि का हस्तांतरण – जोतों की सीमाबंदी के कानूनों से बचने के लिए जमीदारों ने काफी भूमि अपने परिवार के सदस्यों के नाम हस्तांतरित कर दी ऐसे हस्तांतरण को रोकने के जिए कतिपय राज्यों में कुछ समय तक कोई कानून नहीं था। जिन राज्यों में कानून था वहां भी 'खुद काश्त' की लचर परिभाषा के कारण जमींदारी को बचाने के लिए बहुत से तरीके थे। यद्यपि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में यह सुझाव दिया गया था कि कपटपूर्ण हस्तांतरण को रोकने के लिए ऐसी व्यवस्था हो जिससे सीमाबंदी निश्चित करते समय हस्तांतरित भूमि को भी भूस्वामी की भूमि में शामिल करके सीमाबंदी की जाये परन्तु इस दिशा में कोई पहल नहीं की गई।

(4) स्वैच्छिक समर्पण की समस्या – अनेक बार भू-स्वामियों ने काश्तकारों को इस बात के लिए बाध्य किया कि वे अपने इच्छा से भूमि के अधिकार का परित्याग कर दें, इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु काश्तकारों के प्रति साम, दाम, दंड, एवं भेद चारों नीतियों का प्रयोग किया गया जिसके फलस्वरुप काश्तकारों ने स्वेच्छापूर्वक भूमि का परित्याग कर दिया। कोई भी कानूनी व्यवस्था इस अत्याचार को रोकने के लिए नहीं थी। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में पहली बार इस समस्या के समाधान हेतु सुझाव दिया गया कि स्वेच्छिक समर्पण केवल राज्य के पक्ष में ही करने की अनुमति दी जानी चाहिए, परन्तु व्यवहार में कम ही राज्यों में इस सुझाव को स्वीकार किया गया।

(5) सीमाबंदी कानूनों में कमियां – सीमाबंदी कानूनों में अनेक विसंगतियां न केवल दो या दो अधिक राज्यों में बल्कि एक ही राज्य के अनेक क्षेत्रों में थी। सीमाबंदी कानून में एकरुपता लाने के उद्देश्य से 1972 में राज्यों के मंत्रियों की गोष्ठी आयोजित की गई, परन्तु तब तक हस्तांतरण संबंधी बहुत सी गड़बड़ियां हो चुकी थी जिसका कोई लाभ नहीं मिल सका।

*** राजनैतिक इच्छाशक्ति की कमी –**

यह बात निर्विवाद रुप से सत्य है कि किसी भी कानून एवं व्यवस्थागत प्रावधानों का नियमन तभी संभव होता है जबकि उसकी व्यावहारिक रुप ठोस एवं संकल्पित भावनाओं से किया जाये परन्तु राजनैतिक इच्छाशक्ति के अभाव में ऐसी नीतियां केवल कागजी रुप में दस्तावेज बनकर रह जाती

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष वाणिज्य विभाग, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

है। भूमि सुधार के क्षेत्र में असफलता इस बात का जीवंत उदाहरण है। वस्तुत: राज्य सरकारें भूमि सुधार कानूनों के क्रियान्वयन में बहुत हद तक स्वयं उत्सुक नहीं रही केवल समाजवादी मुखौटा पहनकर राजनैतिक लाभ अर्जित करना चाहती थी। भूमि सुधार के संदर्भ में कृषि संबंधों पर टास्क फोर्स समिति के प्रतिवेदन का उद्धरण करना ज्यादा प्रासांगिक होगा। आजादी के बाद सार्वजनिक जीवन के किसी भी क्षेत्र में सिद्धांत व व्यवहार के बीच तथा नीति घोषणा और उसके क्रियान्वयन के बीच इतनी चौड़ी खाई कहीं नही रही है जितनी की भूमि सुधार के क्षेत्र में पायी गयी है।

❋ प्रशासनिक वर्ग की उदासीन एवं निर्पेक्ष भावना

राज्य व प्रशासन एक दूसरे के पूरक व अन्तर्संबंधित होते है परन्तु भूमि सुधार के संबंध में जहां कहीं प्रशासनिक अनुशासन सक्त रहा वहां राजनैतिक हस्तक्षेप होने के कारण ऐसे कार्यक्रम विधिवत ढंग से लागू नहीं हो सके कई मामलों में ऐसा देखा गया कि प्रशासन के कुछ महत्वपूर्ण पदाधिकारी या तो स्वयं बड़े भू-स्वामी थे या उनके निकटतम संबंधी थे और कई मामलों में प्रशासन में बड़े किसानों से गठजोड़ स्थापित कर लिया। कुल मिलाकर भूमि सुधार के कार्यक्रम में राजनीतिज्ञ, प्रशासक एवं बड़े किसानों को ही लाभ मिला है, हरचरण सिंह समिति की रिपोर्ट इस बात की मूक साक्षी है इस रिपोर्ट में कहा गया है कि ये वे सरकारी अधिकारी व महत्वपूर्ण व्यक्ति है जिन्होंने कानून को अपने हाथों में लिया व अपने अधिकार व प्रभाव के दुरुप्रयोग द्वारा स्थानीय जनता को डरा धमकाकर बड़े भूमि क्षेत्र पर अधिकर जमाया है तथा पुलिस व राजस्व अधिकारियों की मिलीभगत से काश्तकारों को भूमि से बेदखल करवाया है। स्थानीय जनता इस वर्ग से इतनी डरती थी कि जब समिति ने इन लोगो की भूमि का सर्वेक्षण किया और उसकी जानकारी चाही तो स्थानीय जनता ने इनके खिलाफ कुछ भी कहने से मना कर दिया।

निष्कर्ष – ग्रामीण खेतीहर बंधुआ मजदूर की आर्थिक हालत को सुधारने की दिशा में भूमि सुधार कार्यक्रम एक अच्छी सोच थी परन्तु जिन लोगों पर इन कार्यक्रमों के नियमन तथा नियंत्रण की जिम्मेदारी सौंपी गई उन्होंने स्वयं विश्वासघात किया। राजनैतिक प्रशासक और लम्बरदारों की तिकड़ी के फलस्वरुप धनी किसान वर्ग की शक्ति उभरकर सामने आयी है जो आज गांव व खेत के किनारे फार्म हाउस संस्कृति के जन्मदाता है। कहने को वे कृषक है परन्तु अपने कालेधन को सफेद धन बनाने में कामयाब है। कोकाकोला एवं पेप्सी कोला पीकर मारुति वेन में घूमकर ग्रामीण संस्कृति के संवाहक बनकर उसको मूलरुप से खत्म करने को तुले है।

भूमि सुधार हेतु एक सार्थक प्रयास महात्मा गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी कहे जाने वाले संत विनोवा भावे ने किया। अहिंसा और अपरिग्रह के सिद्धांत द्वारा अमीर लोगों के हृदय परिवर्तन कर उन्होंने लगभग 5 करोड़ एकड़ भूमि का स्वामित्व आम आदमी को दिलवाया हालांकि ये भूमि भी ऐसी थी जो परती एवं बेकार थी परन्तु भावे जी का प्रयास सराहनीय रहा। आज ऐसे क्रांतिकारी प्रयासों की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

नई आर्थिक नीति और ग्रामीण विकास – भारतीय अर्थव्यवस्था मूलत: कृषि आधारित ग्राम्य अर्थव्यवस्था है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अधोसंरचनात्मक विकास में कृषि क्षेत्र जहाँ एक ओर आय में महत्वपूर्ण अंशदान प्रदान करता है वहीं निर्यात संवर्धन में इसका उल्लेखनीय योगदान होता है। साथ ही असंगठित क्षेत्र में रोजगार उपलब्धता का आधारभूत क्षेत्र भी है। नई आर्थिक का लाभ ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कितना मिल सका है यह समझने हेतु 10 वर्ष की अवधि समुचित कही जा सकती है इसे महज संयोग ही कहा जायेगा कि जब से नवीन आर्थिक नीति का क्रियान्वयन किया गया है तब से उत्पादकता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है और सरकार दावा कर रही है कि कृषि उत्पादकता में वृद्धि का मूल कारण नवीन आर्थिक सुधार है। वस्तुत: विगत सात-आठ वर्षो से जलवायु एवं मानसून कृषि का सहयोग दे रही है। इसलिए कृषि उत्पादकता में वृद्धि को आर्थिक नीति का संकेत मानना भूल होगी।

खाद्यान्न आयात पर मात्रात्मक प्रतिबंध हट जाने से भारतीय बाजार अमरीका एवं यूरोपीय संघ के सस्ते कृषि निर्यात पर सबसिडी भी देता है, लेकिन भारत निर्यातो पर किसी प्रकार की सबसिडी नही देता इसलिये भारतीय कृषकों के लिये कृषि निर्यात व्यापार में अपनी पैठ बनाना असंभव लगता है। भारत के लिये तो केवल खाद्यान्न आयात पर ही नहीं बल्कि गाय के गोबर जैसे आयात पर भी इन्कार करना कठिन हो जायेगा। बाजार में गेट समझौते पर हस्ताक्षर करते समय अमरीका व यूरोप ने बड़ी चतुराई से एक शांति-विच्छेद जोड़ दिया था, जिसके तहत यूरोपीय संध के सामने कृषि निर्यात सबसिडी को सन् 2003 तक किसी भी प्रकार की चुनौती नहीं दी जायेगी। दूसरे शब्दों में यह अनुच्छेद अमरीका व यूरोप को सबसिडी के लिये लिखित अधिकार प्रदान करता है। हैरत की बात तो यह है कि भारत सरकार ने अपनी मात्रात्मक पाबंदियों को खत्म करते हुये इस अनुच्छेद की समाप्ति पर जोर नहीं दिया।

भारत के पेटेन्ट अधिनियम के अंतर्गत केवल निर्माण प्रक्रिया का पेटेन्ट किया जाता है जबकि डब्ल्यू. टी. ओ. द्वारा प्रस्तावित पेटेन्ट प्रावधानों के अंतर्गत निर्माण प्रक्रिया माल दोनों का पेटेन्ट किया जायेगा। व्यक्ति की बौद्धिक उपलब्ध को उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति मानते हुये तथा उसके अधिकार को संरक्षित रखते हुये बीस वर्ष तक पेटेन्ट देने की मुख्य बात है। यह परिवर्तन हमारी शोध एवं विकास प्रक्रिया में बाधक सिद्ध होगा। अब कोई भी बहुराष्ट्रीय कम्पनी दुनिया के किसी भी देश के किसी भी पौधे का प्राणी जैविक द्रव्य अलग करके इस पर पेटेन्ट प्राप्त कर इसे अपनी सम्पत्ति घोषित कर सकती है। उदाहरण के लिये डब्ल्यू. आर ग्रेस ने नीम पर 30 से अधिक पेटेन्ट प्राप्त किया है। ऐसा लगता है कि कुछ दिन बाद हमारे पीपल, जामुन, बरगद, तुलसी आदि जिनका हमारे ग्रामीण आर्थिक जीवन में सर्वाधिक महत्व है, हमारे नहीं रहेगे।

ग्राम्य के उद्योग धंधे चौपट हो रहे है उनका स्थान बहुराष्ट्रीय कम्पनियां ले रही है। स्वदेशी जूता, साबुन, शर्बत, चिप्स, बालपैन आदि जो गांवो में बनता था उसका उत्पादन ये कम्पनियां करने लगी है। इसी प्रकार बीकानेरी भुजिया पेप्सी द्वारा बनाये जाने पर राजस्थान में 2 लाख बेरोजगार हो गये है। यहीं नहीं अतिलघु उद्योगों के लिये निवेश की सीमा 5 लाख से बढ़ाकर 25 लाख रुपये और लघु उद्योगों के लिये 60 लाख से बढ़ाकर तीन करोड़ रुपये कर दी गई है। निवेश की सीमा बढ़ाने का अति लघु उद्योगों के लिये सुरखित रियायतों का मध्यम आकार के उद्योगों द्वारा छीन लिया जाना। नीति निर्माताओं ने उद्योगों को तकनीकी रुप से विकसित करने और उनके आधुनिकीकरण तथा प्रदूषण विरोधी उपायों में निवेश की बढ़ती जरुरतों के संदर्भ में इस सीमा वृद्धि को भी उचित ठहराया, इससे उद्योगों की श्रमिकों के बदले मशीन बनाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलेगा। आरक्षित वस्तुओं के मामले में गैर-लघु उद्योगों में लागू 75 प्रतिशत के निर्यात की बाध्यता को घटाकर 50 प्रतिशत करने के निर्णय से लघु उद्योगों पर दबाव और बढ़ जाने की संभावना बलवती हो गई है।

****

नरसिंहपुर जिले के कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति - एक अध्ययन

नाज़िया शायमा *

कृषि श्रमिकों का परिचय :- कृषि की पूरी सफलता कृषि मजदूरों पर ही निर्भर होती है, यदि कृषि मजदूर न हो तो कृषि कार्य संभव नहीं है।

यह तथ्य व्यापक रूप से स्पष्ट है कि भारत में कृषि श्रमिक वर्ग अन्य सभी वर्गों में से सबसे अधिक उपेक्षित है भारत में कृषि श्रमिकों की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है। खेतिहर मजदूर फसल उत्पादन के कार्यों में लगे रहते हैं। कृषि श्रमिकों की सबसे गंभीर समस्या गरीबी, अविकास, बेकारी की है। इन्हें सामान्य रूप से बुरी परिस्थितियों में कार्य करना पड़ता है। तथा इसके बाद भी इन्हें कम मजदूरी दी जाती है। कृषि श्रमिकों से अधिक मेहनती कार्य कराये जाते हैं और उसके अनुसार इन्हें अधिक वेतन भी नहीं दिया जाता। कृषि श्रमिकों को कार्य करने के अवसर भी कम होते हैं। तथा इनके परिणामस्वरूप उनकी आय भी कम होती है। इन्हें कार्य कौशल व प्रशिक्षण भी नहीं दिया जाता तथा जिससे इन्हें वैकल्पिक कार्य के अवसर भी नहीं दिए जाते। कृषि श्रमिकों में मुख्यत: अनुसूचित जातियां व जनजातियां आती हैं।

कृषि श्रमिक संगठित क्षेत्रों के अंतर्गत नहीं बल्कि असंगठित क्षेत्रों के अंतर्गत आते हैं। अत: ये अपने अधिकारों के लिए लड़ नहीं सकते हैं। इसी कारण कृषि श्रमिक अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने में असफल रहे हैं। तथा इसी कारणवश कृषि श्रमिकों की आर्थिक व सामाजिक समस्या कई गुना बढ़ रही है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था की बुनियादी समस्या उत्पादकता कम आय व अनियमित रोजगार है तथा इस ओर ध्यान क्रेन्द्रित करना व इसे समाप्त करने हेतु प्रयास करना आवश्यक है। कृषि श्रमिक मुख्य रूप से एक लघु एवं सीमांत कृषक या कारीगर हो सकते हैं परन्तु जब कोई व्यक्ति किसी अन्य कृषक के पास जाकर कार्य कर अपनी जीविका चलाता है तो वह भी कृषि श्रमिकों की श्रेणी में आता है।

नरसिंहपुर में कृषि श्रमिक :-भारत कृषि प्रधान देश है यहां की जनसंख्या का 80 प्रतिशत भाग कृषि पर आधारित है नरसिंहपुर जिला जो कि मध्यप्रदेश के मध्य में स्थित है यहां भी जनसंख्या का एक बड़ा भाग कृषि पर निर्भर है। इनमें से कुछ भूमिहीन तथा कुछ श्रमिकों के पास भूमि का छोटा सा भाग है तथा वे भूमि के धारक श्रमिकों के पास जाकर कृषि संबंधी कार्य करते हैं श्रमिकों के पास खेती करने के लिए साधन उपलब्ध नहीं हैं साधनों का अभाव होने के कारण ये श्रमिक अन्य श्रमिकों के पास जाकर कार्य करते हैं। नरसिंहपुर जिले में कृषि श्रमिक वर्गों में अनुसूचित जाति व जनजातियां आती हैं। जिनमें अहिरवार, गौंड़, भील आदि आते हैं। यह श्रमिक कृषकों के पास जाकर कृषि संबंधी कार्य कर जीविका चलाते हैं कुछ श्रमिक भूमिहीन होते हैं तथा कुछ श्रमिकों के पास भूमि होती है व कुछ श्रमिकों के पास भूमि का कुछ भाग होता है।

कृषि श्रमिकों की श्रेणियाँ :- कृषि श्रमिकों के संबंध में राष्ट्रीय श्रम आयोग ने कृषि श्रमिकों को तीन भागों में विभाजित किया है।

कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति :- खेतिहर श्रमिकों की समस्या मुख्य रूप से अपूर्ण रोजगार की है। यहां श्रमिक गरीबी रेखा से नीचे हैं झुग्गी झोपड़ी में निवास करते हैं तथा कृषि के अन्य साधनों से आय प्राप्त करते हैं। इनमें पशुपालन, मत्स्य पालन, मजदूरी, कपड़ों की बुनाई जैसे कार्य आते हैं। नरसिंहपुर जिले में कृषि श्रमिक कई स्त्रोंतों से आय प्राप्त करते हैं ये सूत कातना, रस्सी बुनना, निवाड़ बनाना, बीड़ी बनाना, खाट व पंलग बुनना तथा बड़ी पापड़ उद्योगों आदि में कार्य करना तथा बीड़ी व गुड़ बनाने की मिलों में, दालमिल शुगर मिल आदि में कार्य करके आय प्राप्त करते हैं। कृषि श्रमिकों के पास भूमि का अभाव है ये भूमिहीन मजदूर है तथा ये बड़े किसानों, जमीदारों के यहां कृषि संबंधी कार्य व अन्य कार्य करते है जैसे फसलें बोना, काटना, सिंचाई व्यवस्था करना, कुछ श्रमिक करते हैं कृषि श्रमिकों की समस्या आर्थिक व सामाजिक पिछड़ापन है। नरसिंहपुर जिले में कृषि श्रमिक मुख्यत: भूमिहीन होते है इनके पास खेती के लिए भूमि नहीं होती अत: ये बटाई फसल बोने काटने का कार्य करते हैं अत: यदि कोई नुकसान होता है तो उन्हें घाटा सहन करना पड़ता है। जिसके परिणाम स्वरूप कृषि श्रमिकों को भी घाटा उठाना पड़ता है। नरसिंहपुर जिले में कृषि श्रमिकों की आय बहुत कम है। यहां मजदूरी की दर कम होने के कारण श्रमिकों को बहुत कम मजदूरी दी जाती है कृषि श्रमिक कृषि कार्य के अतिरिक्त रोजमर्रा से जुड़ी वस्तुओं का निर्माण कार्य करते हैं। कृषि श्रमिकों द्वारा कृषि से संबंधित कार्य तथा निर्माण कार्यों को संपादित करते हुए मजदूरी भी प्राप्त की जाती है।

किसान वर्ग भी अपनी आजीविका चलाने के लिए कृषि के अतिरिक्त व्यवसाय भी करते हैं क्योंकि नरसिंहपुर जिले में उद्योग धंधों का अभाव है। अत: यहां कृषक कृषि व उद्योग धंधों द्वारा भी अपना व्यवसाय चलाते हैं। यहां सभी वर्ग के कृषक उपलब्ध हैं अमीर वर्ग, मध्यम वर्ग व गरीब वर्ग। अमीर वर्ग के कृषक पर्याप्त मात्रा में साधन अर्थात धन उपलब्ध होने से वे अपना कृषि कार्य बगैर किसी समस्या व परेशानी के आसानी से पूरा करते हैं परन्तु मध्यम वर्ग व गरीब वर्ग के किसानों को बैंकों व अन्य संस्थाओं या सरकार से ऋण प्राप्त करते हैं ताकि वे अपना कृषि उत्पादन कार्य आसानी से कर सके। सरकार किसानों को ऋण उपलब्ध कराती है तथा इन किसानों के यहां कार्य कर कृषि श्रमिक अपनी आजीविका चलाते हैं।

भारत के प्रत्येक राज्य के कृषि श्रमिकों की समस्या भिन्न है। अत: श्रमिकों का जीवन स्तर व रहन-सहन मजदूरी आदि में भी भिन्नतायें पायी जाती हैं। तथा नरसिंहपुर जिले में कृषि श्रमिकों को आवास की समस्या तथा अन्य आर्थिक शोषण की समस्या का सामना करना पड़ता है तथा इस कारण श्रमिकों के जीवन स्तर में लगातार गिरावट आ रही है। कृषि श्रमिकों को बहुत कम दैनिक मजदूरी मिलती है तथा मजदूरी कम मिलने के कारण समाज के अन्य वर्गों की अपेक्षा पिछड़ जाते हैं। कृषि श्रमिकों में अनुसूचित जातियां व जनजातियां आती हैं इसमें मेहरा, चमार, अहिरवार जातियां हैं। यहां इन जातियों को समाज की छुआछूत व उत्पीड़न का सामना भी करना पड़ता है।

कृषि श्रमिकों की आर्थिक समस्याऐं- पिछले पंद्रह वर्षों से ग्रामीण जनता की हालत काफी खराब हो गयी है। कृषि श्रमिक ग्रामीण आबादी का एक तिहाई भाग है। इनका अस्तित्व मुख्य रूप से रोजगार पर निर्भर था। 2004-05 के सर्वेक्षण में यह उल्लेख किया गया है कि एक वर्ष में कितने ग्रामीण मजदूरों को रोजगार देने से मना किया। इनकी संख्या लगभग 57 प्रतिशत से 60 प्रतिशत आंकी गई। मजदूरों के काम करने के घंटों में वर्तमान में लगातार कमियां आ रही हैं। कई स्थानों पर कृषि कार्य में यंत्रीकरण के कारण कृषि श्रमिकों को रोजगार के लिए कठिनाई का सामना करना पड़ता है। विश्व व्यापार संगठन के अंतर्गत बनाई गई नीतियां जो भारतीय शासकों

* शोधार्थी, करेली, जिला - नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

द्वारा प्रतिपादित की जा रही हैं उस कारण भी कृषि श्रमिकों के कार्यों में कमी आ रही है। भारत का शासक वर्ग इस छोटे उत्पादकों जैसे सीमांत किसानों, बुनकरों, गांव व कृषि श्रमिकों के अधिकारों को छीनने और उन्हें खत्म करने का अथक प्रयास कर रहा है। इसके लिए पहले वे उनकी नौकरियों पर हमला करते हैं। इसके पश्चात उनकी सम्पत्ति को अधिकार में लेकर उनके स्थान पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का निर्माण या अन्य उच्च व मध्यम वर्ग के बाजारों का निर्माण कर अपनी हिंसक नीतियां प्रतिपादित कर रही है। श्रम बचत मशीन व कीटनाशकों का उपयोग फसल की नकद फसलों में स्थानांतरित करके कार्य को बढ़ाया व नौकरियों को कम किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त 1991 व 2001 के बीच देश में 30 लाख से 3 करोड़ लोगों ने अपनी जमीन खोई तथा भूमिहीन और प्रवासी श्रमिकों में शामिल हुए। इस समस्या ने हमारे पास कोई विकल्प नहीं छोड़ा परन्तु भारतीय संविधान द्वारा सही ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना द्वारा ग्रामीणों के जीवन के लिए चलाई गई। परन्तु उद्योगों व निजी उद्योग में विकास की दर बढ़ाई गई परंतु ये बड़ी मात्रा में बेरोजगार हुए श्रमिकों, कारीगरों और सीमांत किसानों के लिए पर्याप्त नहीं है। विश्व व्यापार संगठन द्वारा यह निर्धारित किया गया कि सभी देश की सरकारों द्वारा रोजगार संबंधी नीतियां बनाई जाए बेरोजगार के लिए एक विकल्प सुनिश्चित किए जाए।

जिले में कृषि की नई नकनीकों व उपकरण के प्रयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है परन्तु कृषि श्रमिकों के कार्य व नौकरियों में लगातार कमी आ रही है। इस क्षेत्र में निम्न लिखित समस्याऐं उत्पन्न हो रही हैं :-

1. बेरोजगारी की समस्या।
2. कम उत्पादकता
3. कम मजदूरी ओर कम आय।
4. ऋण ग्रस्तता

इन समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार द्वारा अनेक प्रयास किए गए हैं कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार करना व उनके आर्थिक समस्याओं का समाधान करना अत्यंत आवश्यक है।

कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति निम्न होने के कारण :-

अनेक कारणों से कृषि श्रमिकों की संख्या में सतत व भारी वृद्धि हुई है।

1. **न्यूनतम सामाजिक स्थिति :-** अनेक कृषि श्रमिक मुख्यत: दलित वर्ग से संबंधित होते हैं। ये मुख्यत: विकलांग होते हैं और उनका स्वयं का कोई साहस नहीं होता उनके पास साहस की कमी होती है।
2. **असंगठित :-** कृषि श्रमिक निरक्षर व अज्ञानी होते हैं ये बिखरे हुए गांव में रहते हैं इसलिए उन्हें आसानी से संघों में आयोजित किया जा सकता है।
3. **मौसमी रोजगार :-** कृषि श्रमिक औसतन वर्ष में 200 दिन कार्य ढूंढ़ता है और वर्ष के बाकी दिन वह बेकार रहता है। बेरोजगारी व अल्प रोजगार दो महत्त्वपूर्व तथ्य न्यूनतम आय के लिए जिम्मेदार कारण हैं जिसके कारण कृषि श्रमिकों के रोजगार की कमी का मुख्य कारण मौसमी और आंतरिक रोजगार है।
4. **गैर कृषि रोजगार की कमी :-** ग्रामीण क्षेत्रों में गैर व्यवसायों की कमी महत्वपूर्ण कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में कमी का मुख्य कारण है। ग्रामीण क्षेत्र की जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण भूमिहीन मजदूरों की संख्या बढ़ने से आर्थिक स्थिति लगातार कम हो रही है।
5. **ग्रामीण ऋणग्रस्तता :-** साधारणत: कृषि श्रमिक भारी मात्रा में ऋणग्रस्त हैं इन्हें भूमि के मालिकों या जमीदारों से उधार लेना पड़ता है जिनके यहां वे कार्य करते हैं वे मजदूरी से कोई सुरक्षा की मांग नहीं करते वे स्वयं प्रतिज्ञा कर बंधुआ मजदूर बनकर रहते हैं।
6. **जनसंख्या में वृद्धि :-** कृषि श्रमिक वर्ग हेतु जनसंख्या वृद्धि के साथ सामान्यत: रोजगार के अवसर उपलब्ध करना संभव नहीं है। इसी प्रकार कृषि श्रमिकों की संख्या में वृद्धि के परिणाम स्वरूप भी रोजगार उपलब्ध कराना संभव नहीं है।

निष्कर्ष - नरसिंहपुर जिले के कृषि श्रमिकों की आर्थिक स्थिति एक अध्ययन शीर्षक से अभिव्यक्ति विषय पर एक शोधपूर्ण कार्य के अंतर्गत अध्ययन किया जिसके अंतर्गत कृषि श्रमिकों के संबंध में यह पाया गया कि नरसिंहपुर जिले के कृषि श्रमिक प्रगतिशील हैं किन्तु उन्हें समुचित प्रोत्साहन, संरक्षण व पर्याप्त आय नहीं मिलती वे वर्ष में लगभग 200 दिवस का औसत कार्य करते हैं उन्हें अन्य स्त्रोतों से आय अर्जित करने हेतु प्रयास करना होता है जिससे वे कृषि कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य करते हैं जिसकी तलाश में वे प्रदेश के अन्य जिलों में भी जाते हैं। कभी-कभी उन्हें प्रदेश के बाहर भी जाना पड़ता है। उन्हें परिवार से दूर होना पड़ता है। जिससे परिवार की देखभाल व बच्चों का लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा ठीक ढंग से नहीं हो पाती जिस कारण वे समाज की मुख्यधारा से पिछड़ जाते हैं।

कृषि श्रमिक अपने इस प्रकार के विस्थापित जीवन के कारण आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। रोजगार की तलाश में अन्य स्थानों पर जाने पर उन्हें तुरंत रोजगार प्राप्त नहीं होता अपितु कुछ समय तक उन्हें प्रतीक्षा कर रोजगार की तलाश करनी पड़ती है। जिससे उनका संक्षिप्त धन भी व्यय हो जाता है।

श्रमिकों को अन्य दूसरे स्थानों पर जाने से भौगोलिक व प्राकृतिक वातावरण बदली हुई परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। जिससे उनके स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जिससे वे अपनी आय का बहुत बड़ा भाग बीमारी पर इलाज के लिए व्यय करते हैं। जो कि आज के मंहगे इलाज की भेंट चढ़ जाता है। जिससे उन्हें आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। सरकार ने कृषि श्रमिकों को रोजगार देने हेतु योजनाऐं बनायी हैं वे पर्याप्त नहीं हैं। उन योजनाओं में उनके बच्चों के स्वास्थ्य, शिक्षा के संबंध में वांछित अवसर नहीं हैं।

कृषि श्रमिकों का आर्थिक स्तर अच्छा नहीं है इसकी व्याख्या के लिए एक सूक्ति उल्लेखित करना चाहूंगी -''भारतीय कृषक ऋण में जन्म लेता है उसी में पलता है और ऋण में ही मर जाता है।'' जब कृषकों की यह स्थिति है तो यह कृषक नहीं अपितु कृषि श्रमिक है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उन्हें आधिभौतिक आवश्यकता की पूर्ति हेतु कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता होगा।

इसके अतिरिक्त कृषि श्रमिकों को कार्य के लिए प्रशिक्षित एवं संगठित व शिक्षित करना अत्यंत आवश्यक है ताकि वे अपने अधिकारों की रक्षा कर सकें। कृषि श्रमिक वर्ग संगठित होगा। सरकार द्वारा कृषि श्रमिकों के विकास हेतु दशा सुधारी जा सकती है सरकार द्वारा कृषि श्रमिकों के विकास हेतु योजनायें चलाई जा रही है परन्तु वे पर्याप्त नहीं हैं। श्रमिकों के कल्याण के लिए योजनाओं का ठीक तरह से क्रियान्वयन होना चाहिए तथा समाज के द्वारा उन्हें सहयोग दिया जाना चाहिए। अत: समाज के अन्य वर्गों तथा सरकार की नीतियों उपायों व सहयोग के द्वारा ही कृषि श्रमिकों की आर्थिक दशा सुधारी जा सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कृषि विपणन 2. श्रमिक अधिकार एवं श्रम मानक 3. विकासशील अर्थव्यवस्था में कृषि 4. भारत में कृषि विकास हेतु कृषक प्रशिक्षण 5. कृषि प्रबंध 6. Indian Net Zon Agrrian Crisis 7. www.narsinghpur.nic.in 8. www.indiangaretteerofindia.com

ग्रामीण विकास के बदलते आयाम

डॉ. एम. एल. सोनी *

भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार गाँव ही हैं। गाँवों के समुचित विकास की कल्पना के बिना राष्ट्र के आर्थिक विकास की प्रत्येक योजना अर्थहीन एवं राष्ट्र की प्रगति का प्रत्येक स्वप्न अधूरा रहेगा। सन् 2011 की जनगणना के ताजा आंकड़ों के अनुसार भारत की लगभग 69 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में बसती है। 121 करोड़ भारतीयों में 83.3 करोड़ ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 37.7 करोड़ शहरों में निवास करते हैं। यही कारण है कि प्राचीन काल से भारत के सम्पूर्ण राष्ट्रीय जीवन की इकाई इसके गाँवों में ही केंद्रीयकृत रही है। प्राचीन काल में भारत आर्थिक दृष्टि से एक सम्पन्न देश रहा है, किन्तु समय के परिवर्तन के साथ – साथ भारत की आर्थिक तथा सामाजिक व्यवस्था में अनेक परिवर्तन होते गये।

महात्मा गाँधी की मान्यता थी कि सच्ची आजादी प्राप्त करनी है तो लोगों को गाँव में रहना चाहिए। उन्होंने कहा था कि सत्य और अहिंसा के बिना मनुष्य जाति का विकास नहीं हो सकता। सत्य और अहिंसा हमें ग्रामीण जीवन की सादगी में ही प्राप्त हो सकती है। गाँधीजी गाँवों में प्रजातंत्र और पंचायत के माध्यम से गाँव का विकास करना चाहते थे। वास्तव में गाँधी के विचारों को अपनाकर गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को अर्थव्यवस्था की बागडोर संभालने के लिए सक्षम बनाना एक अद्भुत व्यवस्था है।

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का निर्माण प्राचीन काल से ग्रामीण समुदाय की नींव पर ही हुआ है। आज भारतीय संस्कृति मुख्य रूप से गाँवों में ही जीवित है। राष्ट्र का जीवन गाँवों द्वारा ही पोषित हो रहा है। गाँवों की उन्नति की अनदेखी करना या उन्हें पतन की ओर जाने देना एक गंभीर भूल होगी। आज ग्रामीण आबादी का बहुत बड़ा वर्ग गरीबी के अभिशाप से पीड़ित है। कई ग्रामीण परिवारों की हालत तो ऐसी है कि उन्हें दो जून की रोटी भी नसीब नहीं होती है। आजादी के 64 वर्ष बाद भी ग्रामीण जनता के पास मूलभूत सुविधायें जैसे – रोजगार, आवास, शिक्षा, बिजली, स्वास्थ्य, स्वच्छता, शुद्ध पेयजल आदि उपलब्ध नहीं हैं।

यदि इसके मूल में देखा जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में अनेक समस्याएं विद्यमान हैं जो न केवल ग्रामीण विकास हेतु अपितु सम्पूर्ण देश के विकास में बाधक हैं। वास्तव में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रथम सामुदायिक विकास परियोजना (1952) के द्वारा ही प्रथम बार ग्रामीण समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया गया था। वर्ष 1956 में राज्यों के पुनर्गठन होने के पश्चात् मध्यप्रदेश राज्य को सर्वाधिक ग्रामीण आबादी और समस्याओं वाला भाग विरासत में मिला था। सन् 2000 में हुए पुन: विभाजन के पश्चात् भी शेष मध्यप्रदेश की स्थिति में कोई खास बदलाव दृष्टिगोचर नहीं होता है। यद्यपि स्वाधीन भारत में विगत वर्षों में आर्थिक, औद्योगिक, सामाजिक एवं विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय विकास हुआ, परन्तु पृथक मध्यप्रदेश में समुचित विकास की जो संकल्पना की गई थी, उसमें प्रदेश के कई क्षेत्र आज भी पिछड़े हुए हैं। विकास की धारा शहरों में तो तेज है, परन्तु अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में विशेषकर सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में तथा इन क्षेत्रों में लोग विकास की रोशनी से आज भी वंचित हैं। यद्यपि शासन द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जा रहा है।

प्रतिवर्ष सरकार नई–नई योजनाओं की घोषणा एवं उनके कार्यान्वयन में करोड़ों रुपये व्यय करती है। साथ ही राज्य सरकारें भी ग्रामीण क्षेत्रों की बदहाली दूर करने के लिए आकर्षक योजनाओं की घोषणा करती हैं। वास्तव में आज यदि हम सरकार के पिछले वादों का मूल्यांकन करें तो पाते हैं कि आजादी के बाद हमारे गाँवों एवं ग्रामीणों की दशा में सुधार तो हुआ है, परन्तु जिस अनुपात में विकास के लक्ष्य निर्धारित किये गये और धनराशि खर्च की गई उस अनुपात में गाँवों एवं ग्रामीणों की दशा में सुधार नहीं हुआ। अत: लोगों के जेहन में यह बात घर करने लगी है कि क्या ग्रामीण विकास के वायदे बस कागजी हैं? अगर उनका शुभारम्भ हो भी जाता है तो निर्धारित समय में क्रियान्वयन नहीं हो पाता।

फलस्वरूप इन योजनाओं पर होने वाले खर्च की राशि बढ़ती जाती है तथा विकास के लक्ष्य अधूरे रहते हैं। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रोफेसर अमर्त्य सेन ने न्यायिक विकास में निर्धनता और विषमता को ही बाधक माना है और अपने अध्ययन में चर्चा की है कि भूख और गरीबी ही अर्थशास्त्र के अध्ययन की बुनियादी आवश्यकता है। न्याय और नैतिकता के नये प्रतिमान तथा अर्थशास्त्र की नई अवधारणा तभी विकसित की जा सकती है, जबकि वंचित शोषित और विषमता पीड़ित साधारण व्यक्ति के यथार्थ का तर्कसंगत विश्लेषण प्रस्तुत किया जाये।

वास्तव में ग्रामीण भारत में बदलते स्वरूप के बीच ऐसे अनेक सच भी हैं, जो प्रगति के दावों को झुठला देते हैं। यद्यपि अर्थ व्यवस्था की संरचना में बदलाव आया है। प्रशासनिक क्षेत्र की भूमिका घटी है और तृतीयक क्षेत्र का महत्व बड़ा है। यही कारण है कि सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्सा घटकर 18.5 प्रतिशत रह गया है। वैश्वीकरण की आँधी ने देश के परम्परागत लघु एवं कुटीर उद्योगों की कमर तोड़ दी है। खेती की बढ़ती लागत व उत्पादन में स्थिरता से खेती घाटे का सौदा बन गई है। दूसरों का पेट भरने वाले किसानों का पेट आज खाली है। इसलिए अन्नदाता किसान, आत्महत्या करने पर विवश हो रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में कमी से शहरों की ओर पलायन बढ़ा है।

कृषि क्षेत्र की गतिहीनता व घरेलू उद्योगों के पतन के कारण ग्रामीण गरीबी, बेरोजगारी व भुखमरी में वृद्धि हुई है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की रिपोर्ट के अनुसार 28.3 प्रतिशत ग्रामीण व 25.7 प्रतिशत शहरी जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने के लिए अभिशप्त है

* सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

तथा देश की पांच प्रतिशत जनसंख्या भुखमरी की शिकार है। ग्रामीण भारत की उपर्युक्त बदहाली की तस्वीर से ग्रामीणों का जीवन निम्नतर प्रतीत होता है। इस स्थिति का एक बहुत बड़ा कारण जनसंख्या वृद्धि भी है।

यूरोपीय देशों में विकास की जो लहर दिखाई पड़ती है, उसका कारण यह है कि वहाँ जनसंख्या वृद्धि दर लगभग नगण्य है। इसके अलावा देश में व्याप्त अशिक्षा, भ्रष्टाचार, नियम कानून की जटिलता, भाई-भतीजावाद, विकास के लाभ का समान वितरण रोकते हैं।

साथ ही भारत कोई समरूप देश नहीं है, यहां भौगोलिक, सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक विविधताएं विद्यमान हैं। ऐसी स्थिति में देश का समरूप विकास कठिन है। ग्रामीण क्षेत्र में जागरूकता की अत्यधिक कमी है, जिससे विकास का लाभ अंतिम व्यक्ति तक नहीं पहुँच पाता है।

यद्यपि ग्रामीण विकास की राह के इन अवरोधों को दूर करने के लिए सरकार प्रयत्नशील है। सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 एक ऐतिहासिक कानून है जो पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए लागू किया गया है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता फैल रही है। पंचायतों को अधिकार सम्पन्न बनाने से स्थानीय स्तर पर नीति निर्माण और कार्यान्वयन हो रहा है। संचार क्रांति से दूरी घटी है।

कृषि एवं किसानों की समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार सहकारिता को पुनर्गठित कर उसे संवैधानिक रूप देने के प्रस्ताव पर विचार कर रही है। ग्रामीणों को त्वरित गति से न्याय उपलब्ध कराने के लिए ग्राम न्यायालयों की स्थापना की जा रही है। ग्रामीण विकास से सम्बंधित योजनाओं में भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिए सभी कार्यक्रमों की निरंतर निगरानी और मूल्यांकन की अति आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्वामी गुप्ता, ग्रामीण विकास एवं सहकारिता, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2009 अखिलेश एस. एवं शुक्ला संध्या, भारत में ग्रामीण विकास, गायत्री पब्लिकेशन रीवा, 2010
3. घोष शंकर, सामान्य अध्ययन, यूनीक पब्लिकेशन, दिल्ली 2011
4. पाण्डेय पी. एन., ग्रामीण विकास एवं संरचनात्मक परिवर्तन, रावत पब्लिकेशन्स जयपुर 2006
5. वशिष्ट बी. के. एवं सोमदेव, लोक अर्थशास्त्र, इंडस वैली पब्लिकेशन्स जयपुर, 2008
6. थामस जे., मध्यप्रदेश सामान्य ज्ञान, सेठी पब्लिकेशन्स, जयपुर - 2012
7. सिंह जय एवं दहिया कैलास, भारत 2011 प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय, भारत सरकार
8. वर्मा सावलिया बिहारी, ग्रामीण अर्थशास्त्र एवं सहकारिता विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 2009

****

अनुचित प्राकृतिक दोहन से परिवर्तित होती भारतीय जलवायु

डॉ.आर.सी. गुप्ता *

सारांश – श्री ब्रम्हाजी ने जब पृथ्वी पर सृष्टि की रचना की तब उन्होंने अपनी सृष्टि में इतनी सूक्ष्म व्यवस्था रखी है कि ग्रहों, नक्षत्रों, उपग्रहों आदि की स्थिति और गति में अंशमात्र का परिवर्तन भी नहीं होता। मनुष्य अभी इतना योग्य नहीं हुआ था सौर मण्डल उसकी पहुंच से बाहर है इसलिए वह सृष्टि के नियमों में छेड़छाड़ नहीं कर पाता लेकिन जो पृथ्वी उसके रहने खाने की व्यवस्था करती है वह उससे छेड़छाड़ करता रहता है। इसी छेड़छाड़ का परिणाम भूकम्प, सुनामी, अकाल, अतिवृष्टि जैसी प्राकृतिक आपदाओं के रूप में सामने आते रहते है। इन आपदाओं के कारणों की व्याख्या वैज्ञानिक अपने ढंग से करते है पर्यावरण विद् अपने ढंग से। बहुत तेजी से बढ़ती मंहगाई भी प्रमाण है कि दुनिया में संसाधनों का अभाव होने लगा है। एक बढ़ी आबादी पानी, अन्न और ऊर्जा से भी वंचित होने लगी है आज जरूरी है कि हम अपने आस-पास मंडराते खतरे को समझें और सुधार करें।

क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा इन पाँच तत्वों से जो मनुष्य का शरीर बना है यह पांचों तत्व प्रकृति में सन्निहित है। मौसम या ऋतु चक्र में सारी व्यवस्थायें वैश्वानर अर्गन और उसके कारण अन्तरिक्ष में चलने वाले यज्ञ की उपज है। मनुष्य के शरीर से लेकर परमेष्ठि मण्डल तक यह वैश्वानर यज्ञ अलग अलग आयाम में चलता है। इसमें किसी तरह का विघ्न डालने का अर्थ है, प्रकृति की व्यवस्था से छेडखानी करना। इस छेड़छाड़ से शरीर के स्तर पर स्वास्थ्य प्रभावित होता है और विश्व के स्तर पर ऋतुचक्र । अर्गन वायु आदित्य रूप प्राणाग्नियां क्रमश: पृथ्वी अन्तरिक्ष एवं सूर्य मण्डल की अग्नियां स्वरूप से ये घन तरल विरल है। इन तीनों के संघर्ष से चौथी वैश्वानर अग्नि उत्पन्न होती है। यह जठर स्थान में रहता हुआ सर्वांग शरीर में व्याप्त है कान नाक बंद करने पर जो धक धक सुनाई देती है वह वैश्वानर की ध्वनि है।

एक वेद में इस बात का उल्लेख है कि वरूण देव ने अन्तरिक्ष को वनों पर और सोम को पर्वतों पर बिछा दिया हमने वनों का विनाश किया तो अन्तरिक्ष से आने वाली हर वस्तु हमें कष्ट देने लगेगी हमने पर्वतों को नुकसान पहुचाया तो बारिश और नमी का चक्र प्रभावित हो गया । इस सृष्टि के मालिक जिसे हम भगवान कहते है ने तो पूरी प्रकृति पृथ्वी हमें सजाकर परोसी थी लेकिन इस सजावट को हमनें भोगने की बजाय लूटना शुरू कर दिया। आज पृथ्वी खतरे में है लेकिन लगता है कि हम अभी भी जागरूक नहीं हुये है क्यों कि अनेक मनुष्य यह मानकर चलते है कि हमारे अकेले भोग या विनाश करने से क्या होगा। पृथ्वी वहुत विशाल है वह हमेशा हमारी आवश्यकताओं को पूरा करती है जलवायु परिवर्तन का इससे बड़ा खतरा और क्या होगा कि इससे सम्पूर्ण मानव जीवन ही खतरे में पड़ जायेगा । यदि परिवर्तन का चक्र यू ही चलता रहा तो एक दिन जीव जगत ही नष्ट हो जायेगा। क्योंकि जितनी तेजी से ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन बढेगा उतनी ही तेज रफ्तार से जलवायु परिवर्तन भी होगा। यह जलवायु परिवर्तन हो ही इसलिए रहा है क्योंकि हम लगातार विकास के नाम पर प्रकृति से दूर होते गये है। जल और जंगल का सम्मान करना होगा वर्तमान समय में जो गर्मी देखने को मिल रही है वह ग्लोबल वार्मिंग की वजह से है चिंता की बात है मौसम के पैटर्न में बदलाव आ रहा है वर्षा की तीव्रता बड़ी है पर वर्षा के दिन देश भर में कम हुये हैं।

उपरोक्त शोध से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वास्तव में जलवायु नहीं बदली है, हम बदल गये हैं। पिछले कुछ सालों में हमारा रहन सहन इस तेजी से ऐसे गलत कामों में लग गया है जिससे मजबूर होकर प्रकृति को जलवायु बदलनी पड़ रही है। अब सामान्य और सरल तरीका यह है कि हम सबको अपनी जरूरतें कम करते जाना चाहिए और ग्रीन हाउस गैसों के उपयोग को तब तक लगातार कम करते जाना चाहिए जब तक कि हमें इनका दूसरा अच्छा विकल्प न मिल जाए। यदि हम प्रकृति के साथ सह जीवन की तरफ कदम नहीं बढ़ायेंगे तो प्रकृति हमें मजबूर करेगी उस तरफ बढ़ने के लिए। क्योंकि जलवायु परिवर्तन हो ही इसलिए रहा है क्योंकि हम लगातार विकास के नाम पर दूर होते जा रहे है। हम सबको जल और जंगल का सम्मान करना होगा और प्रकृति के प्रति सबमें देव भाव को जाग्रत करना होगा।

जलवायु परिवर्तन के प्रमुख क्षेत्र :-

हिमालय :- हिमालय की तरफ जब हम लोग नजर उठाकर देखते हैं तो लगता है कि जैसे वह बहुत दबाव में है और कभी भी फट पडेगा। 29029 फीट ऊंचे हिमालय में बर्फ की चट्टानों तथा ग्लेशियर की सैकडों झीलें हैं विशेषज्ञों का कहना है इसमें से 20 झीलों का फूटने का खतरा है।

नष्ट होती गंगा नदी :- मैली होती गंगा नदी का सच हम सभी जानते हैं पहले गंगा के किनारे रहने वाले लोग अपने आपको गौरवान्वित महसूस करते थे लेकिन अब यही लोग तरह तरह की जानलेवा बीमारियों से पीडित होकर मरने लगे हैं। गंगा जल में इतने धातु कण जहरीले रसायन होने लगे हैं कि उसका पानी मनुष्य व अन्य जीवों को तबाह करने लगा है। भारत की करीब 40 प्रतिशत आबादी को गंगा प्रभावित करती है। इसी प्रकार भारत की अन्य महत्वपूर्ण नदियां दम तोड़ने लगी हैं।

सागर का रूखापन :- एक अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि आज कल सागर का जलस्तर बढ़ रहा है। पिछले 100 वर्षों में सागर के जलस्तर में करीब सात इंच की बढ़ोत्तरी हुई है कई द्वीपों और टापुओं के डूबने का खतरा बढ़ गया है। आधुनिकीकरण और मानव की बढ़ती भूख ने सागर के दोहन को इतना बढ़ा दिया है कि सागर के अन्दर भी विनाश की प्रक्रिया शुरू हो गयी है।

नष्ट होते जंगल :- जलवायु परिवर्तन का सबसे गहरा भार जंगलों पर पड़ा है। ऊर्जा, फर्नीचर और दैनिक जरूरतों के लिए जंगलों की बेइंतहां कटाई जारी है। जंगल में आग लगने की घटनायें बढ़ गयी हैं। वन्य जीवों की बढ़ी क्षति हो रही है। सघन वन कम हुये हैं, तापमान में परिवर्तन आ रहा है, कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा बढ़ रही है।

एक नेशनल क्रिएटिव टीम ने सन 2070 की कल्पना करते हुये लिखा है कि ये 2070 है मुझे याद है उस वक्त में पाँच साल का था उन दिनों ये धरती बहुत अलग थी भरपूर बाग बगीचे थे, इतना पानी था कि में आधे आधे घण्टे तक नहाया करता था आज हालात यह है कि तोलिए पर मिनरल आयल लगाकर स्किन साफ करनी पडती है औरतों ने सिर ही मुंडवा लिये हैं क्योंकि उन्हें धोने के लिए पानी नहीं है आज सिर्फ आधा गिलास पानी पीने की अनुमति है पानी की कमी में त्वचा इस कदर सूख गयी है कि 20 साल का आदमी 40 साल का दिखता है बच्चे कमजोरियों के साथ पैदा हाते है।

स्त्रोत :-

(1) लक्ष्य भोपाल। (2) पत्रिका भोपाल। (3) मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास। (4) योजना।

* प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बीना (म.प्र.) भारत

मादक द्रव्य का सेवन : कारण एवं प्रभाव मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक अध्ययन

डॉ. आनंद तिवारी *

शोध समस्या का चुनाव – मादक द्रव्यों का सेवन एवं आसन्न संकट विषय पर प्रस्तुत शोध आलेख का चुनाव मूलत: तीन आयामों से सम्बद्ध है एक तो स्वास्थ्य से सम्बद्ध पहलू है दूसरा पहलू सामाजिक सरोकार से जुड़ा है और तीसरा मनोवैज्ञानिक एवं भावनात्मक आयाम से सम्बद्ध है। भारतीय संदर्भ में यह तथ्य रेखांकित करने योग्य है कि उत्तर आधुनिकता की आँधी की चपेट में भारतीय जनमानस मादक द्रव्यों का सेवन पश्चिमी समाज की नकल कर स्वयं को अति–आधुनिक सिद्ध करने हेतु अपना रहा है वस्तुत: पश्चिमी समाज में मादक द्रव्यों के सेवन का महत्वपूर्ण कारण वहाँ की भौगोलिक स्थिति एवं शीतोष्ठा जलवायु का होना है।

शोध परिकल्पनाएँ –

1. मानवीय संबंधों में भावनात्मक एवं रिश्तों की कमजोरी के कारण मादक द्रव्यों का सेवन किया जाता है।
2. मादक द्रव्यों का सेवन नगरीय एवं ग्रामीण अंचलों में निरंतर बढ़ रहा है जो सामाजिक नैतिक एवं राष्ट्रीय चरित्र के गिरावट का संकेत है।
3. मादक द्रव्य मानवीय स्वास्थ्य से सम्बद्ध एक महत्वपूर्ण पहलू है जब हम स्वस्थ भारत की कल्पना करते हैं तो एक बड़ा अवरोधक मादक द्रव्य का सेवन किया जाता है।

शोध प्रविधि – शोध समस्या का चिंतन समाज में व्याप्त मादक द्रव्य का सेवन से संबंधित पारिवारिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं से आसन्न संकट पर व्यक्तिगत अनुभव एवं विचारों का संकलन है। प्रश्नावली में माध्यम से ऐसे परिवार जिनमें मादक द्रव्यों का सेवन बहुतायत से होता है उनके कारण एवं प्रभावों को समझने का प्रयास समय सीमा के अभाव में संभव नहीं हो सकता है द्वितीयक शोध सामग्री के रुप में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी प्रतिवेदन का तथ्यात्मक अध्ययन एवं विश्लेषण को संकलित करने का लघु प्रयास किया है।

अध्ययन एवं विश्लेषण – मादक द्रव्य का सेवन मानव शरीर में अल्कोहल की मात्रा को बढ़ाता है जो 50 प्रतिशत सड़क दुर्घटनाएँ, 50 प्रतिशत अपराध एवं 50 प्रतिशत आत्महत्या का कारण होता है। जीवन की अनुमानित प्रत्याशित आयु को 10 वर्ष कम कर देता है। मादक पदार्थ चाहे वह किसी भी रुप में (कोकीन, कैफीन, अफीम, हेरोइन, डैनविप, निकोटीन आदि) सेवन किया जाए, मानव मस्तिष्क एवं बाडी मण्डल को प्रभावित किए बिना नहीं रहता इन द्रव्यों का सेवन शारीरिक के साथ–साथ मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी डालता है व्यसनों का अधिकाधिक सेवन मानवीय मूल्यों को इतना गिरा देता है कि मनुष्य समाज में मदविहीन एवं अनैतिक आचरण करने लगते हैं इससे आत्मविश्वास की कमी कुण्ठा एवं तनाव मादक द्रव्य के सेवन के प्रमुख कारक होते हैं।

निष्कर्ष – मादक द्रव्य का बढ़ता सेवन किसी राष्ट्र की आर्थिक अर्थव्यवस्था की दृष्टि से सुखद संकेतक हो सकता है क्योंकि राज्य के राजस्व का एक बड़ा भाग इन्ही मादक पदार्थों के विपणन से अर्जित होता है और सामाजिक सेवाओं की व्ययों की आपूर्ति का समायोजन ऐसे ही राजस्व से पूरा होता है परन्तु सामाजिक दृष्टि से ऐसा कृत्य समाज में अनुत्पादकता को बढ़ाता है। नैतिक एवं राष्ट्रीय चरित्र की गिरावट के साथ मानवीय स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। आवश्यकता इस बात की है कि शासन स्तर पर मादक द्रव्यों के अति सेवन पर प्रतिबंध लगाया जाये।

संदर्भ ग्रंथ –

1. अखण्ड ज्योति – पत्रिका शांतिकुंज, हरिद्वार।
2. शाकाहार या माँसाहार – क्यों... जैन कुक एजेन्सी कनाट प्लेस दिल्ली।
3. जनसत्ता, समाचार पत्र : नई दिल्ली में संकलित आलेख।
4. अहिंसक खेती पत्रिका, 2009।

****

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष वाणिज्य विभाग, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

धार जिले में कृषि विकास हेतु चलाई गई विभिन्न योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रो. राजेश मईडा *

जिले का सामान्य परिचय –

आदिवासी संस्कृति एवं जनसंख्या बाहुल्य जिला धार इंदौर संभाग के अंतर्गत आता हैं। जिसमें धार , बदनावर, सरदारपुर, मनावर, गंधवानी, धरमपुरी, कुक्षी, डही को मिलाकर आठ तहसीलें आती हैं। जिले का कुल क्षेत्रफल 8153300 हेक्टेयर हैं जो मध्यप्रदेश के दक्षिण–पश्चिम में 22°00 से 23°10 उत्तर अशांस पर एवं 74°28 से 75°42 पूर्व देशांस पर स्थित हैं। जिला इंदौर संभाग के मुख्यालय से 60 किमी दक्षिण पश्चिम में स्थित हैं। जिले की सीमाऐं पूर्व में इंदौर एवं पश्चिम में झाबुआ , उत्तर में रतलाम और उज्जैन और दक्षिण में पश्चिम निमाड़ के जिले खरगोन और बड़वानी से मिलती हैं। ऐतिहासिक आधार पर यह माना जाता है कि जिला मुख्यालय धार का नाम धारा नगरी यानि तलवारों का शहर था।

जिले की कुल जनसंख्या जनगणना 2011 के अनुसार 2184672 लाख हैं। जिसमें प्रति 1000 पुरुष पर महिलाओं की संख्या 961 हैं। कुल जनसंख्या का 81.1 प्रतिशत जनसंख्या गांवो में निवास करती हैं जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि एवं कृषि की सहायक क्रियाऐं हैं।

जिले में भारत का डेल्टा कहा जाने वाला उद्योगों का प्रमुख नगर पिथमपुर औद्योगिक क्षेत्र हैं जिसमें 685 वृहत, मध्यम एवं लघु उद्योग इकाईयां स्थापित है जिसमें 22468 व्यक्ति कार्यरत हैं परन्तु परिवहन व अन्य सुविधाओं के अभाव में इसका पुरा लाभ जिले के निवासियों को प्राप्त नहीं हो सका। इसके साथ ही धार , मनावर, कुक्षी ,गंधवानी , बाग में भी सीमेंट उद्योग हेतु सीमेंट फ्रेक्ट्री स्थापित की गई हैं।

धार जिले में कृषि की स्थिति –

प्रदेश के अन्य जिलों के समान ही धार जिला एक कृषि प्रधान जिला हैं। जिले की कुल जनसंख्या का लगभग 81.1 प्रतिशत गांवों में निवास करती हैं जिनका प्रमुख व्यवसाय कृषि हैं।कुल कार्यशील जनसंख्या का 73.68 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य कर अपना जीवन निर्वहन करती हैं। जिले में अधिकतर खरीफ की फसले बोई जाती हैं जैसे – सोयाबीन , कपास , मक्का , मुंगफली , ज्वार आदि एवं रबी फसलों के अंतर्गत चना और गेहूं हैं। कुछ क्षेत्र में आलु , लहसुन , प्याज , मटर आदि भी अपनी उत्पादकता के कारण जिले में प्रमुख फसल के रुप में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाती हैं। जिले से लगे निमाड़ क्षेत्र में जहां पर मध्यप्रदेश की जीवन रेखा कही जाने वाली प्रमुख नदी नर्मदा के किनारे पर लगे क्षेत्रों में गन्ना , मिर्ची , केले की खेती भी की जाती हैं। कुल कृषि योग्य रकबा 504.500 हेक्टेयर है जिसमें खरीफ फसल का रकबा 504.200 एवं रबी फसल का रकबा 276.00 हेक्टेयर है। जिसके अंतर्गत सिंचित कृषि भूमि का क्षेत्रफल 313.383 हेक्टेयर है।

शोध का उद्देश्य –

प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य आदिवासी बाहुल्य जिले में कृषि विभाग द्वारा चलाई गई विभिन्न कृषि विकास योजनाओं का अध्ययन करना एवं उन योजनाओं का लाभ किसानों को मिल पा रहा है या नहीं इस बात का पता लगाना एवं जो आवंटन प्राप्त होता है उसका वितरण पूरा हो रहा है या नहीं का अध्ययन करना हैं।

शोध प्रविधि –

प्रस्तुत शोध में कृषि विभाग धार की विभिन्न योजनाओं के आवंटन एवं व्यय के आंकडों एवं जानकारी के द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया हैं।

जिले में संचालित प्रमुख कृषि विकास योजनाओं का संक्षिप्त परिचय–

1. **आईसोपाम –** यह योजना तिलहन एवं मक्का की एकीकृत योजना हैं इस योजना का उद्देश्य तिलहन एवं मक्का की उत्पादकता को बढ़ाना हैं।
2. **राष्ट्रीय जलग्रहण योजना–**राष्ट्रीय जलग्रहण क्षेत्र विकास योजना के अंतर्गत प्रत्येक विकासखंड में अनुमानित 500 हेक्टेयर वर्षा आधारित क्षेत्र के एक माइक्रो जलग्रहण क्षेत्र का चयन किया जाता हैं। जलग्रहण क्षेत्र के हितग्राहियों के सामाजिक एवं आर्थिक स्तर में सुधार लाना योजना का मुख्य उद्देश्य हैं। कार्यक्रम का नियोजन एवं क्रियान्वयन जनभागीदारी पध्दति से ग्राम स्तर पर वाटरशेड समिति गठित कर किया जाता हैं। योजनांतर्गत एकीकृत जलग्रहण क्षेत्र का उपचार , भूमि एवं जल संरक्षण के कार्यो जैसे – मिट्टी और पत्थर के चैक्स , छोटी छोटी जल संरचनाओ के साथ ही जलग्रहण क्षेत्र में उत्पादन वृध्दि के लिए उन्नत बीज का प्रयोग बढ़ाना आदि प्रावधान हैं।
3. **आर.के.व्ही.व्हाय.–**राष्ट्रीय कृषि विकास योजना केन्द्र संचालित , समन्वित तथा बहुउद्देशीय योजना हैं जिसमें कृषि तथा सम्बध्द विभाग और संस्थाओं जैसे – पशुपालन , मत्स्यपालन , उद्यानिकी ,बीज प्रमाणीकरण संस्था आदि के अतिरिक्त निजी संस्थाओं के सहयोग से कृषि उत्पादन से जुडे संसाधनों का विकास कर किसानों को लाभ पहुंचाना और देश की घरेलू विकास दर में कृषि का योगदान बढ़ाना हैं।
4. **राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन** –भारत सरकार द्वारा शत् प्रतिशत पोषित यह एक बहुआयामी योजना हैं। धान , गेहूं और दलहन फसलों के क्षेत्र विस्तार उत्पादकता एवं उत्पादन वृध्दि के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन उन क्षेत्रों में संचालित है जहां इन फसलों की उत्पादकता कम हैं। योजना का उद्देश्य सत्त रुप से तकनीकी का विस्तार कर कृषि उपज में वृध्दि करना और कृषकों की आर्थिक स्थिति सुधारना हैं।
5. **बलराम तालाब –**बलराम तालाब योजना के अंतर्गत वर्षा एवं भूमिगत जल की उपलब्धता को समृध्द करना। इस याजना के अंतर्गत समस्त वर्ग के कृषक पात्र होते है एवं योजना के अंतर्गत एक तालाब हेतु ही अनुदान प्राप्त होता हैं।

उपरोक्त योजनाओं के अतिरिक्त भी कृषि विभाग द्वारा नलकूप योजना, आत्मा , कृषि यंत्रीकरण , अन्नपूर्णा आदि योजनाऐं संचालित कि जाती हैं।

तालिका क्रमांक 1 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि आईसोपाम तिलहन योजना के अंतर्गत जो आवंटन प्राप्त होता है उसका कुछ भाग पूर्ण रुप से व्यय नहीं हो रहा है जबकि इसके आवंटन में प्रतिवर्ष वृध्दि की जा रही है। राष्ट्रीय जलग्रहण योजना के अंतर्गत आवंटन की संपूर्ण राशि का व्यय किया गया हैं। वर्ष 2009–10 एवं 2012–13 में इस योजना के लिए कम आवंटन प्राप्त हुआ हैं इसका मुख्य कारण इन वर्षो में वर्षा की स्थिति का सामान्य होना हैं। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना हेतु जो आवंटन प्राप्त होता

* सहायक प्राध्यापक–वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

उसका वर्ष 2009-10 एवं 2010-11 में पूर्ण वितरण नहीं हो पाया हैं जबकि 2011-12 एवं 2012-13 में इसका पूर्ण वितरण किया गया क्योकि विभाग द्वारा कृषि विकास जागरुकता कार्यक्रमों के कारण किसानों में इन योजनाओं की जानकारी का होना हैं।

इसी प्रकार बलराम तालाब एवं नलकूप योजना के आवंटन का भी प्रतिवर्ष पूर्ण व्यय किया गया हैं। कृषि यंत्रीकरण का भी आवंटन लगभग प्रतिवर्ष पूर्ण व्यय किया गया है इसके आवंटन में भी प्रतिवर्ष वृध्दि हो रही हैं। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के अंतर्गत प्राप्त होने वाले आवंटन में भी प्रतिवर्ष वृध्दि हो रही है परन्तु किसानों की जागरुकता के अभाव में सम्पूर्ण व्यय नहीं हो पा रहा हैं।

निष्कर्ष - धार जिला जो कि एक पिछड़ा हुआ जिला है यहां शासन द्वारा कृषि विभाग के माध्यम से विभिन्न योजनाऐं चलाई जा रही है परन्तु जिले का अधिकांश कृषि भू-भाग पहाडियों एवं उबड़-खाबड़ जगह पर होने के कारण एवं सिंचाई सुविधाओं के पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होने एवं अधिकांश कृषकों का निरक्षर होने के कारण कृषि विभाग द्वारा जो कीटनाशक एवं यंत्रीकरण , खाद-बीज आदि की योजनाऐं चलाई जा रही है वे कुछ ही कृषकों को उपलब्ध हो पा रही हैं। परन्तु जैसे-जैसे कृषकों में जागरुकता आ रही हैं एवं कृषि में आधुनिक तरीकों का इस्तेमाल होने लगा है उससे प्रति एकड़ उत्पादन क्षमता में वृध्दि तो हुई है परन्तु दूर -सुदुर अंचल में बसे छोटे किसानों तक पर्याप्त सुविधाऐं पहुंचे इसके लिए गांव-गांव कृषक जागरुकता अभियान चलाया जाए एवं कृषकों को योजनाओं से होने वाले लाभों के बारे में भी अवगत कराऐ जिससें कृषक अधिक से अधिक शासकीय योजनाओं का लाभ उठा सके।

संदर्भ सूची -

1. ग्रामीण एवं भारतीय अर्थव्यवस्था - श्री सुबहसिंह यादव
2. म.प्र. का आर्थिक विकास - राव एवं कोजवार
3. राज्य कृषि विकास कार्यक्रम योजना पुस्तिका
4. किसान कल्याण कृषि विकास विभाग पुस्तिका म.प्र.
5. उपसंचालक किसान कल्याण तथा कृषि विकास वार्षिक पत्रक
6. जिला योजना सांख्यिकी पुस्तिका 2009
7. अग्रणी बैंक वार्षिकी साख योजना 2013-14

तालिका क्रमांक 1

शासन द्वारा धार जिले में चलाई गई प्रमुख कृषि विकास योजनाओं का आबंटन एवं व्यय तालिका

क्रं.	योजना का नाम	वर्ष 2009-10		वर्ष 2010-11		वर्ष 2011-12		वर्ष 2012-13	
		आवंटन	व्यय	आवंटन	व्यय	आवंटन	व्यय	आवंटन	व्यय
1.	आईसोपाम तिलहन	125.00	124.92	224.70	223.23	360.57	360.54	296.46	296.43
2.	राष्ट्रीय जलग्रहण योजना	41.05	41.05	55.00	55.00	48.45	48.45	29.00	29.00
3.	राष्ट्रीय कृषि विकास योजना	242.30	218.854	678.93	673.17	1542.55	1542.55	413.11	413.11
4.	राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन दलहन	203.17	199.86	220.00	218.24	217.36	217.30	240.00	231.63
5.	राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन. गेहूँ	उपलब्ध नहीं	उपलब्ध नहीं	215.22	215.22	208.48	208.48	230.29	200.00
6.	बलराम तालाब	114.51	114.51	194.70	194.70	56.70	56.70	25.75	25.75
7.	नलकूप	4.59	4.59	9.49	9.49	12.66	12.65	9.79	9.79
8.	कृषि यंत्रीकरण	71.72	70.10	109.77	109.28	153.71	153.68	193.22	193.22

स्त्रोत -उपसंचालक किसान कल्याण तथा कृषि विकास पत्रक 2009-10 से 2012-13

****

बड़वानी जिले के ग्रामीण गरीब परिवारों के लिये स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोगार योजना एक वरदान (बड़वानी जिले के संदर्भ में)

श्रीमती इन्दु डावर * डॉ. नटवरलाल गुप्ता **

प्रस्तावना

भारत सरकार की नीति में गरीबी उन्मूलन हमेशा से एक प्राथमिकता रही है। आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रो में अभी भी लगभग 27.1प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा के नीचे आती है, इसलिये पिछले दशकों में सतत प्रयासों के बावजुद ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी अच्छी-खासी गरीबी दिखाई पडती है जो देश के विकास को काफी प्रभावित करती है।

हमारी भारत सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में तेजी से विकास और सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन लाने के प्रयास में जुटी है। ग्रामीण लोगों का जीवन स्तर सुधारने और विकास कार्य करने में लोगों की प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित करने के प्रयास जारी है। सरकार के राष्ट्रीय एजेण्डे में गरीबी उन्मूलन, पेयजल और आवास को प्राथमिकता दी गई है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये ग्रामीण विकास के कुछ प्रमुख योजनाओं में परिवर्तन का फैसला किया गया।

हमारे देश में गरीबों की सहायता के लिये बहु-एजेन्सी एवं बहु-कार्यक्रमों के दृष्टिकोण को अपनाया गया है बहुत सारे कार्यक्रमों तथा कार्यान्वयन कर रही विभिन्न संस्थाओं के बीच पर्याप्त समन्वय न होने के कारण प्रयासों में दोहराव होने के साथ-साथ भारी मात्रा में संसाधनों की क्षति हुई है। बडे पैमाने पर एकीकृत दृष्टिकोण अपना कर ग्रामीण गरीबों को स्वरोजगार के अवसर प्रदान करने की दिशा में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) पहला बड़ा प्रयास था।

यह कार्यक्रम वर्ष 1998-99 तक लागू किया गया, इसी प्रकार सरकार लागू किये गये अन्य प्रमुख कार्यक्रमों में ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण (TRYSEM), ग्रामीण क्षेत्र महिला और बाल विकास (DWCRA), ग्रामीण कारीगरों को बेहतर उपकरण आपूर्ति(SITRA), गंगा कल्याण योजना (GKY), तथा मिलियन वेल स्कीम प्रमुख थे।

यद्यपि ये कार्यक्रम एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के साथ-साथ लागू किए गए, फिर भी कार्यान्वयन की दृष्टि से इन कार्यक्रमों को अलग माना गया, इससे न ही सामाजिक प्रेरणा जागरूक हुई, न ही उचित सहबद्धता बन पाई और न ही सहभागिता उभर पायी, इसके फलस्वरूप ग्रामीण परिवारों द्वारा सतत् आमदनी बढ़ने के स्थान पर प्रत्येक कार्यक्रमों के अधीन लक्ष्य की उपलब्धि चिंता का विषय बन गया।

संसाधनों की खपत और उपब्धियों के बीच की खाई को देखते हुए भारत सरकार ने टिकाऊ आधार पर ग्रामीण परिवारों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिये बडे पैमाने पर स्वरोजगार के अवसर तथा स्थानीय समुदायों की सहभागीता को अपने विचार के केन्द्र बिन्दु में रखते हुए एक कार्यक्रम तैयार करने का विचार किया।

तदनुसार, भारत सरकार ने 01 अप्रैल 1999 से स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई) नामक एक नये कार्यक्रम को लागू किया। स्वयं सहायता समूहों (SHG) :- समरूप ग्रामीण निर्धनों द्वारा स्वैच्छा से गठित एक समूह है जिसमें समूह से सदस्य अपने आप से जितनी भी बचत आसानी से कर सकते है, उसका अंशदान उत्पारक अथवा आपात कालीन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण के रूप में देने के लिए परस्पर सहायक होते है। स्व-सहायता समूह एक जैसी आर्थिक स्थिति वाले शक्तिशील ग्रामीण गरीबों का एक छोटा समूह होता है, जिसमें समूह के लोग स्वैच्छा से नियमित रूप से थोड़ी-थोड़ी राशि बचाते है और सामूहिक निधि के रूप में समूह के अध्यक्ष या समूह के किसी सदस्य के पास प्रतिमाह एक निश्चित राशि जमा की जाती है।

समूह के सदस्य एक जैसी परिस्थितियों का सामना करते है। एक बार समूह के सदस्य हो जाने पर अपनी समस्याएँ सुलझने में ये सभी एक दूसरें की मदद करते है तथा स्वयं सहायता समूह अपने सदस्यों से नियमित रूप से छोटी-छोटी बचतें करने के लिए प्रेरित करते है। स्वयं सहायता समूहों में सामूहिक निर्णय लेते है। किसी भी कार्य को करन से पहले समूह में चर्चा के पश्चात् उचित निर्णय लिया जाता है, जिससे किसी भी सदस्य को परेशानी का सामना न करना पड़े।

आज के बिखरे हुए शहरीय, ग्रामीण परिदृश्य में विभिन्न जातीय समूह अलग-अलग नगरों (मोहल्लों) में निवास करते है। यह समूह अपनी-अपनी समस्याओं को कॉफी हद तक आपस में निपटा लेते है।

इन समूहों के अलग-अलग सदस्य भूमिहिन खेतीहर मजदूर, छोटे किसान, कारीगर एवं लघु व्यवसायी होते है और व्यक्तिगत रूप से छोटी हैसीयत होने के कारण गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे है। उन्हे संस्थागत स्त्रोंतों से भी किसी प्रकार की सहायता नही मिल पाती है। स्वयंसेवी बचत समूह की संकल्पना इसी संदर्भ से उत्पन्न हुए है।

उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध पत्र को बड़वानी जिले के ग्रामीण गरीब परिवारों के लिये शासन द्वारा चलाई जा रही स्वर्णजयंती ग्रामस्वरोजगार योजना में जुडने के पश्चात उने सामाजिक एवं आर्थिक जीवन पर होने वाले परिवर्तन का अध्ययन करना :-

1. गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की आर्थिक स्थिति का पता लगाना।
2. उनके आर्थिक जीवन पर स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का क्या प्रभाव पड़ा।
3. स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के द्वारा संचालित कार्यक्रमों से गरीबो को प्राप्त लाभ का अध्ययन।
4. रोजगार के अवसर उपलब्ध होने के बावजूद गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों को मजदूरी के लिये एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन के कारणों का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि :-

प्रस्तुत शोध पूर्णत: द्वितिय समंको पर आधारित है। इन समंकों का संकलन जिला पंचायत बड़वानी, पत्र-पत्रिकाओं, शासकीय एवं गैर शासकीय संस्थाओं तथा इन्टरनेट आदि के द्वारा प्राप्त किया गया है।

* शोधार्थी ** प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

तालिका क्र.1
बड़वानी जिले में गठित स्वयं सहायता समूहों के हितग्राहियों की संख्या का विवरण

क्रमांक	ब्लाक का नाम	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
1	बड़वानी	3137	12.49%
2	सैंधवा	8975	25.73%
3	राजपुर	4018	15.99%
4	ठिकरी	1724	6.86%
5	निवाली	2003	7.97%
6	पाटी	3224	12.85%
7	पानसेमल	2036	8.11%
	योग	**25120**	**100.00%**

स्त्रोत : जिला पंचायत बड़वानी (म.प्र.)

उपर्युक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि जिले में 25120 हितग्राही SHG से जुड़े है सेंधवा ब्लॉक में सबसे अधिक हितग्राहियों को SHG के अंतर्गत योजना का लाभ लेने के लिए जोड़े गये है जिनकी संख्या 8975 है कुल हितग्राहियों की संख्या का 35.73: है। सबसे कम हितग्राही ठीकरी ब्लॉक में समूहों के अंतर्गत जोडे ग़ये है। जिनकी संख्या 1724 है जो कुल हितग्राहियों का 6.86: हैं।

तालिका क्र. 2
बड़वानी जिले में स्वर्ण जंयति रोजगार योजना के अंतर्गत गठित स्वयं सहायता समूहों का जातिगत आधार पर विवरण

क्रमांक	वर्ग	हितग्राहियों की संख्या	प्रतिशत
1	सामान्य	2072	8.25%
2	अनुसूचित जाति	1351	5.38%
3	अनुसूचित जनजाति	21591	85.95%
4	अल्पसंख्यक	106	0.42%
	योग	**25120**	**100.00%**

स्त्रोत : जिला पंचायत बड़वानी (म.प्र.) 2008

उपर्युक्त तालिका के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि बड़वानी जिले में गठित स्वयं सहायता समूहों में अनुसूचित जनजाति वर्ग के हितग्राही अधिक संख्या में जुड़े हुए है, जिनकी संख्या 21591 है जो कुल हितग्राहियों की संख्या का 85.95% है। सामान्य वर्ग के हितग्राहियों की संख्या 2072 है जो कुल हितग्राहियों की संख्या का 8.25% है, अनुसूचित जाति वर्ग के हितग्राहियों की संख्या 1351 जो कुल हितग्राहियों की संख्या 5.38% है। अल्पसंख्यक वर्ग के हितग्राहियों की संख्या 106 जो कुल हितग्राहियों की संख्या 0.42% है। इससे यह ज्ञात होता है कि समूहों के गठन में अनुसूचित जनजाति वर्ग के हितग्राहियों ने काफी रूची दिखाई है, साथ ही योजना के क्रियान्वयन में अपना सहयोग देकर अपनी एवं उस पर आश्रित परिवार के सदस्यों के जीवन स्तर में परिवर्तन लाने में सफल रहे है।

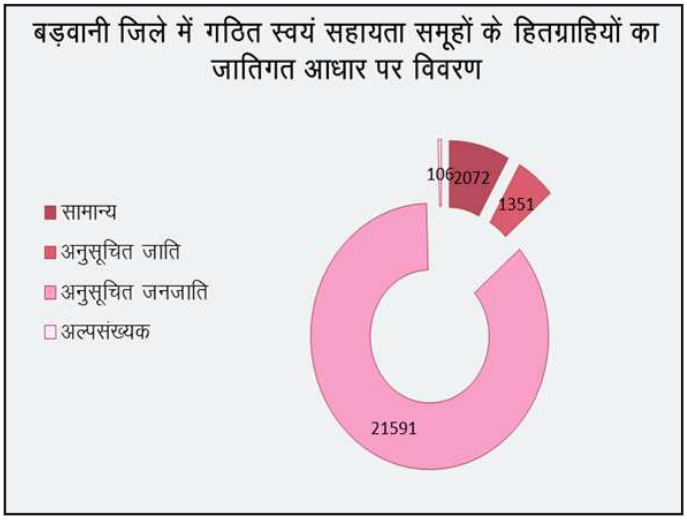

कठिनाईयां :-

- स्वयं सहायता समूहों के चयन में आने वाली कठिनाईयाँ।
- गरीब ग्रामीणों द्वारा बचत की कठिनाई।
- बैंको द्वारा प्रदत्त ऋण एवं अनुदान संबंधित व्यवहारिक कठिनाईयाँ।
- समूह के सदस्य के विशेष तकनीकी प्रशिक्षण संबंधी कठिनाईयाँ।
- समूह द्वारा ऋण वापसी संबंधी कठिनाईयाँ।
- योजना के क्रियान्वयन की शासकीय कठिनाईयां।

सुझाव :-

1. हितग्राही समूह सदस्यों को स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना की अधिक से अधिक जानकारी होना चाहिए जिससे कि वह अन्य गरीब सदस्यों को इस योजना से जोड़ सके।
2. समूह सदस्यों के बीच निरन्तर संप्रेषण होना चाहिए जिससे कि कार्यक्रम (नये-पुराने) की जानकारी सतत् मिलती रहे। संचार के साधनो के उपयोग द्वारा व्यक्ति अपनी समस्या स्वंय हल कर सकता है। अत: समूहो को सशक्त करने हेतु उन्हे समय:-समय पर परामर्श व नये नियमों की जानकारी देना चाहिए।
3. सदस्यों को आर्थिक रुप से सशक्त करने हेतु नये कार्यक्रमों की शुरुआत की जानी चाहिए।
4. समूह के द्वारा सामूहिक निर्णय के अनुसार सदस्यों के बीच आय संवर्द्धन संबधित कार्यक्रम चलते रहने चाहिए।
5. परिवार नियोजन के कार्यक्रमों को बढ़ावा देकर जन-जागरुकता शिविर आयोजित किये जाना चाहिए जिससे की जनसंख्या पर नियंत्रण हो सके।
6. सदस्यों को आर्थिक रुप से आत्मनिर्भर बनाने हेतु अधिक से अधिक ऋण सुविधा, सरल एवं आसान किश्तो पर स्वयं के लघु एवं कुटीर उद्योगों हेतु दी जाना चाहिए। जिससे की गरीब समुदाय सशक्तिकरण की दिशा मे बढ़ सके।

निष्कर्ष :-

जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को यह छुट दी गई कि अच्छे और स्वच्छ छवि वाले गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.)/संस्थाओं को सामाजिक चेतना जगाने, स्वयं सहायता समूह बनाने और उनकी क्षमताएँ बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण आदि देने के काम से जोड़े।

जहाँ भी सरकारी प्रशासन और स्वैच्छिक संगठनों ने मिल-जुलकर काम

किया है, उसके नतीजें अच्छे मिलें है। स्वयं सहायता समूह मिलकर बड़े-बड़े संघ बनाकर काम करने का तरीका अपना रहे है।

इन्होने अपने गांव में ही नही आपसपास के गांवों में भी समाज को ऊँचा उठाने, कुरूतियाँ हटाने, आर्थिक विकास के काम शुरू करने और इसके लिए जरूरी ढाँचा खड़ा करने की अलख जगाई है। सभी तरह के वित्तीय एवं सामाजिक काम अपने हाथ में लिए है। इसी तरह आगे बढ़ते रहे तो ये जमीनी स्तर पर देश की बहुत बड़ी ताकत बनकर उभरेंगे और एक दिन बहुत नाम कमायेंगे। जगह-जगह स्वयं सहायता समूह अभी से पंचायती राज संस्थाओं के संबल बन गए है और उन्हे नेतृत्व प्रदान कर रहे है।

सामाजिक बुराईयों को दूर करने में जुट जाने के साथ-साथ ये समूह विकास कार्यो में बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रहे है। कुछ जगहों पर तो इन समूहों ने अपने बैंक शुरू कर दिये है। इससे यह साबित हो चुका है कि गरीबी हटाने की जितनी भी स्कीमें अब तक शुरू की गई थी, उनमें ''एस.जी.एस.वाय'' सबसे कारगर और कामयाब योजना है जो गरीबों के सामाजिक, आर्थिक, सशक्तिकरण की तेज धार वाली ताकत बन चुकी है।

इसकी बुनियाद पर विश्वास से जुड़ी तमाम पहलों के महल खड़े किये जा सकते है। वास्तव में यह राष्ट्रीय अभियान बन सकता है और देश से गरीबी हटाने का मूल मंत्र हो सकता है।

संदर्भ सूची :-

1. मेहता, बसंत-गरीबी एवं बेरोजगारी उन्मूलन में बैंको की भूमिका-शिवा पब्लिशर्स, उदयपुर 1994
2. गुप्ता, सुरेश-आगे आये लाभ उठाये (एल.के. जोशी) - आयुक्त, जनसंपर्क, भोपाल
3. जिले के प्रमुख ऑकडे, जिला सांख्यिकी विभाग, बड़वानी- वर्ष 2001
4. भारत, ग्रामीण विकास विभाग, नई दिल्ली-वर्ष 1996 से 2002 तक
5. जनसंख्या पुस्तिकाएँ, जिला सांख्यिकी विभाग, बड़वानी - वर्ष 1998 से 2001
6. विवरणिका सहकार्य योजना, जिला उद्योग केन्द्र बड़वानी - वर्ष 2000- 2001
7. बैंक ऋण एवं वसूली प्रक्रिया, जिला सहकारी बैंक, जिला बड़वानी।

संदर्भ पत्रिकाएँ -

1. कुरूक्षेत्र पत्रिका।
2. आगे आए लाभ उठाये।
3. एस.जी.एस.वाई. प्रशिक्षण : ग्रामीण विकास मंत्रालय।
4. जिला सांख्यिकी 2008 : जिला सांख्यिकी विभाग, बड़वानी।
5. समग्र ग्राम विकास 2004 : वनवासी कल्याण परिषद, मुबंई।
6. स्वयं सहायता समूह (गठन, प्रक्रिया एवं मार्गदर्शन) 2000 :उद्यमिता विकास केन्द्र।
7. Progress of SHG Bank Nabard link in India.

****

Impacts of Global warming on tourism
(Special reference to Gwalior district)

Dr. Vasudha Agrawal *

Introduction -

Tourism is related to sightseeing and visiting recreational and historical areas and staying over there for a couple of days. Journey takes a traveler beyond his home ambience and because of this unfamiliarity it becomes an important part of travel experience. In ancient times, Saddi, a Persian poet said "the benefits of travel are many the freshness it brings to the heart, the delight of beholding new cities, the meeting of unknown friends and the learning of high manners." But the term tourism is relatively a recent phenomenon and is distinguishable by its mass character from travel. The use of term 'tourism' has led to a range of complex meaning which have become associated with, the movement of people a sector of economy, an identifiable industry, services which need to be provided for travelers.

Tourism potential and types -

Tourism is now considered one of the world's largest industries, with an annual outlay of over $ 3.5 trillion US i.e. of 6% of world GNP. According to the world tourism organization 698 million people traveled to a foreign country in the year 2000 and spent more than US $ 478 billion. International tourism and transport receipts currently total more than US $ 575 billion - making tourism the world number one export earner, ahead of automotive products, chemicals, petroleum and food.

India has a tremendous tourism potential considering its picturesque landscape and the wide options that the country offers to the tourists, ranging from the majestic Himalayas to the desert and forts of Rajasthan and from the backwaters of Kerala, to the beaches of Goa. However, India has failed to realized its potential as a favoured tourist destination oil around the globe. Out of the total world tourism earning of US $ 474billion. India's share is only US $ 2.9 billion (0.61%). India therefore needs to develop the tourism sector as an important industry. Although the country has sufficient resource, in terms of places of interest for tourists, but perhaps there needs to be more focus in the development to related infrastructure.

A. Forms of tourism

a. Domestics tourism
b. International tourism

B. Types of tourism

a. Wildlife tourism (Flora and fauna)
   i. Wildlife sanctuary
   ii. Wildlife sanctuaries of M. P.
   iii. National parks and tourism
   iv. . National parks of M. P
b. Natural beauty and adventure tourism
c. Places of worship
d. Cultural tourism
e. Historical locales
f. Environmental attractions.

Gwalior geographical position -

Gwalior is located at 26.22ºN and 78.18ºE in northern Madhya Pradesh 300km (186 miles) from Dehli. It has average elevation of 197 meters (646 feet). Gwalior has a sub tropical climate with hot summers from late to early July, the humid monsoon season from late June to early October, and a cool dry winter from early November to late February. Underkoppen's climate the city has a humid subtropical climate. The highest recorded tempreture was 48º C and the lowest was - 1ºC.

Table no. 1
Month wise temperature in Gwalior district year 2011 (in ºC)

Months	Average maximum	Average minimum	Average temperature
January	22.3	8.4	15.35
February	26.8	8.4	17.60
March	36.2	10.4	23.30
April	37.2	19.6	28.70
May	44.1	25.7	34.90
June	43.5	28.2	35.85
July	35.8	27.0	31.40
August	35.5	26.7	31.30
September	34.6	24.2	29.40
October	32.6	18.0	25.30
November	28.9	12.4	20.65
December	23.9	8.9	10.40
Yearly average	**33.5**	**18.17**	**25.16**

Source - book of district statistical District Gwalior year - 2011.

Summer start in late march, and along with other cities like

* HOD & Professor , Department of Economics, Dr. Bhagwat Sahai Govt. college, Gwalior (M.P.) INDIA

Nagpur and dehli, are among the hottest in India and the world. Tempareture peak in may and june with daily averages being 33-35º C (93- 95ºF), and end in late June with the onset of the monsoon. Gwalior received 970mm (39 in.) of the rain every year, most of which is concentrated in the monsoon months from late June to early October. August is the wettest month with about 310mm (12 in.) of rain.

Winter in Gwalior starts in late October, and is generally very mild with daily temperatures averaging in the 14-16ºC (58-62ºF) range, and mostly dry and sunny conditions. January is the coldest month with average lows in the 5-7ºC range (40-45ºF) and occasional cold snaps that plummet temperatures to close to freezing.

Table no. 2

Center wise tourist inflow and day visitors : 2010 - 11

Center	Domestic tourist inflow	Foreign tourist inflow	All tourist inflow	Day visitors	Tourist inflows DV
Bhopal	1074842	11834	1086679	622383	1709062
Sanchi	17341	2500	19843	13411	33254
Panchmadi	213681	692	2143374	50044	264418
Jabalpur	262436	3093	265527	67659	333186
Amarkantak	222585	1388	223972	271401	495373
Khajuraho	83286	81447	164736	27909	192645
Gwalior	483874	7909	491783	431895	923678
Shivpuri	84619	108	84728	110981	195709
Indore	396511	905	397416	68632	466048
Ujjain	69476	252	69728	9858	79586

Source:- Collection of Domestic tourist statistics for the state of M.P.

Global warming is the increase of Earth's average surface temperature due to effect of greenhouse gases, such as carbon di oxide emissions from burning fuels or from deforestation, which trap heat that would otherwise escape from Earth. This is the type of greenhouse effect.

Table no. 3

Center wise, month wise distribution of domestic tourist inflow year 2010 - 11

Month	Domestic tourist in Gwalior	Day visitors in Gwalior
January	47499	22467
February	47574	89915
March	37373	13940
April	28076	76198
May	30175	23084
June	32910	22245
July	113178	85902
August	34704	23286
September	30271	23157
October	29574	21560
November	31786	16497
December	21153	13644
Total	**483874**	**431895**

Global tourism is closely linked to climate change. Tourism involves the movement of people from their homes to other destinations and accounts for about 50% of traffic movements; rapidly expanding air traffic contributes about 2.5% of the production of CO2. Tourism is thus a significant contributor to the increasing concentration of greenhouse gases in the atmosphere.

Table no. 4

Classification according to Annual income (in US $)

Annual income US $ household	Domestic tourist	Foreign tourist
Up to 15,000	15.1	35.3
15,000 to 35,000	27.9	32.9
35,000 to 50,000	25.7	11.7
50,000 to 70,000	22.3	8.0
70,000 to 1,80,000	6.9	5.5
Above to 1,80,000	2.1	6.6
Total	100.0	100.0

Impacts of Global warming on tourism: -

Tourism not only contributes to climate change, but is affected by it as well. Climate change likely to increase the severity and frequency of storm and severe weather events, which can have disastrous effects on tourism in the affected regions. Some of the other impacts that the world risks as a result of global warming are drought, diseases and heat waves.

Positive impacts of tourism -

- Jobs for local people
- Income for the local economy
- Helps preserve rural services like buses, village shops and post offices
- Increased demand for local food and crafts
- Tourists mainly come to see the scenery and wildlife, so there is pressure to conserve habitats and wildlife

Negative impacts of tourism -

- Damage to the landscape: litter, erosion, fires, disturbance to livestock, vandalism
- Traffic congestion and pollution

- Local goods can become expensive because tourists will pay more
- Shops stock products for tourists and not everyday goods needed by locals
- Demand for holiday homes makes housing too expensive for local people
- Demand for development of more shops and hotels
- Jobs are mainly seasonal, low paid with long hours

Opportunity -

- More proactive roles from the Govt. of India in terms of framing policies.
- Availability of high quality of resources.
- Allowing entry of more multinational cooperation, providing global perspective.
- Growth of domestic tourism; the advantage here is that domestic tourism and international tourism can be separate easily owing to the difference in the period of holidays.

Making tourism sustainable

National park authorities work with local communities and other organizations to try and make tourism more sustainable. Here are just some of the things we do:

- Encourage visitors to leave their cars behind and uses greener travel, like bikes, buses, boats and trains.
- Encourage visitors to buy local products and food.
- Ask local communities for their views and ideas by setting up forums, groups and consultations.
- Reduce erosion caused by visitors, by creating and repairing footpaths.

Conclusion

Tourism in India is growing and it has vast potential for generating employment and earning large amount of foreign exchange besides giving a fillip to the country's overall economic and social development. As its multi dimensional and service industry, it would be necessary that all wings of the central and state governments, private sector and voluntary organization become active partners in the Endeavour to attain sustainable growth in tourism.

References -

- Bagri, S. C. (1997). What is tourism? Concepts and definitions, Journal of travel and tourism. "Indian institute of Tourism and travel management, Gwalior. Vol -1 no. 1 PP.77-79 ref. 77
- Cohen, E. (1974) who is a tourist? A conceptual classification sociological review, Vol -22
- Leiper, N. (1990) tourism systems, Development of management systems occasional paper 21 Massey University Auckland, New Zealand.
- www. World_tourism.org.
- www.wttc.org
- www.rbi.org
- Geography of india - Tiwari, R. C.
- www.tourism.gov.in
- Principle of operation research - Mishra, R. C.

****

मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था पर पर्यटन उद्योग का प्रभाव

बलराम सिंगोतिया * कविता धुर्वे **

प्रस्तावना – म.प्र. भारत का हृदय प्रदेश तथा पर्यटको का स्वर्ग है। यहॉ दर्शनीय स्थलों में विविधता के अनेक रंग बिखरे हुए है। ये स्थल पौराणिक,ऐतिहासिक, ही नहीं बल्कि धार्मिक व सांस्कृतिक महत्व भी रखते है पर्यटन विकास निगम के अनुसार राज्य में 342 ऐसे केन्द्र है जो पर्यटको को लुभाते है। उनमें 20 केन्द्र ऐसे है जो राष्ट्रीय एंव अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है ।म.प्र. में पर्यटन की अभुतपूर्व संभावनाऍ है ।

प्रदेश की अर्थव्यवस्था जिस तरह 10.2 प्रतिशत की दर से विकास कर रही है उनमें पर्यटन उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पर्यटन उद्योग प्रदेश की अर्थव्यवस्था के विकास सहायक हो रहा है पर्यटन उद्योग में रोजगार के नये अवसरो का सृजन हुआ है ।

पर्यटन उद्योग में विकास की लहर दौड़ने से पूरे प्रदेश में आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक, विदेशी संपर्क, राष्ट्रीय पार्को एंव परिवहन व होटल आदि का विकास हुआ है। पर्यटन उद्योग में कुशल लोगों के साथ ही अकुशल लोगों को भी हस्तकला जैसे उद्योगों में रोजगार मिल रहा है। अत: पर्यटन उद्योग प्रदेश के विकास में एक सशक्त क्षेत्र बन कर उभार है। जिसने म.प्र. को देश विदेश में एक नई पहचान दिया है ।

अध्ययन के उद्देश्य

- प्रदेश के पर्यटन स्थलों का अध्ययन करना।
- पर्यटन क्षेत्र में नये रोजगार सृजन का अध्ययन करना।
- पर्यटन द्वारा प्रदेश की अधोसंरचना विकास में पडने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि– प्रस्तुत शोध प्रबंध के अध्ययन हेतु द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक समंकों का संकलन भारत सरकार एवं मध्यप्रदेश सरकार की विभिन्न रिपोर्ट, प्रकाशित ऑकडों, संबंधित वेबसाइटस और विभिन्न शोधार्थियों के द्वारा किये गये शोध से किया गया है।

म.प्र. में पर्यटन की स्थिति– म.प्र. पर्यटन की अपार संभावनाओं से समृद्ध राज्य है। राज्य की विशिष्टता, पर्यटन की विविधता अपनी समृद्ध विरासत, पौराणिक तीर्थ केंद्रों , प्राकृतिक सुंदरता और अद्वितीय वन्य जीवों के कारण है। पर्यटन प्रदेश की अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभर रहा है। पिछले पॉच वर्षो (2006–20012) में प्रदेश की NSDP में पर्यटन का योगदान 16 प्रतिशत रहा है। पर्यटन के क्षेत्र में निवेश करने के लिये सरकार निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित कर रही है। राज्य सरकार के ऑकडे बतलाते है कि पिछले चार वर्षो में पर्यटन उद्योग से दुगुनी आमदानी प्राप्त हुई है।

वर्ष 2008 में म.प्र. में आने वाले पर्यटकों की कुल संख्या 22340600 थी जबकि वर्ष 2011 में पर्यटकों की संख्या लगभग दुगुनी 4438900 हो गई। प्रदेश के पर्यटक स्थलों ने 64.8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर के साथ वर्ष 2010 में 38079595 घरेलु पर्यटकों को और 24.7 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर के साथ विदेशी पर्यटकों को आकर्षित किया है।

प्रदेश में वर्ष 2009 और 2010 में देशी पर्यटकों को आकर्षित करने में 6 वें और विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने में 13 वें स्थान पर है। प्रदेश में पर्यटकों के आगमन में निरंतर वृद्धि हो रही है। इससे प्रदेश देश और विश्व में पर्यटन का महत्वपूर्ण केंद्र बनकर उभर रहा है।

म.प्र.में पर्यटकों के आगमन की प्रवृत्ति तालिका क्र. 01

वर्ष	देशी पर्यटक	विदेशी पर्यटक	विकास दर % में	
			देशी	विदेशी
2002	49003242	67319	1.3	–25.4
2003	5968719	92278	–9.2	–9.3
2004	8619426	14375	34.85	47.98
2005	7250952	163423	40.81	40.98
2006	11040190	189637	52.3	16.0
2007	13894500	234204	25.9	23.5
2008	22088927	251733	16.8	12.6
2009	23106206	200819	4.6	20.2
2010	38079595	250430	64.8	24.7
2011	44119820	268800	–	–

Sourse:1.Census India.gov.in
2. IL&FS Infrastructure april ,2012 Interim report m.p. page 07

म.प्र. के पर्यटन स्थल– म.प्र. के पर्यटन स्थलों को मुख्यतय: चार वर्गो में विभाजित किया जा सकता है–

सांस्कृतिक पर्यटन	ग्वालियर, दतिया, ओरछा, खजूराहो, भोपाल, माण्डू, बुरहानपुर।
वन्यजीव एवं एडवेंचर पर्यटन	पचमढ़ी, अमरकंटक, कान्हा, बांधवगढ़, पन्ना, तिगरा, गाँधीसागर ,सतपुडा व पेंचव्हेली नेशनल पार्क आदि।
अवकाश एवं व्यापारिक पर्यटन	पचमढ़ी, खजुराहो, तामिया, भोपाल, ग्वालियर, इन्दौर, जबलपुर।
तीर्थयात्रा पर्यटन	उज्जैन, महेश्वर, ओमकारेश्वर, चित्रकूट, भोपाल, सॉची, ओरछा, अमरकंटक।

Sourse: M.P. state tourism development corporation Ltd.

प्रदेश में 382 पर्यटन स्थल एवं 03 विश्व धरोहर है । राज्य के प्रमुख पर्यटन स्थल निम्नानुसार है:–

- **बॉधवगढ़:–** यह विंध्याचल की घनी पहाडियों के बीच उमरिया जिले के बीच में स्थित है । यह राष्ट्रीय उद्यान 448 वर्ग किमी. में फैला हुआ है। इस उद्यान में बाघों की सर्वाधिक संख्या है।
- **भेड़ाघाट:–** यह नर्मदा नदी पर स्थित है। जो जबलपुर से लगभग 10 किमी. की दूरी पर स्थित है। इस जल प्रपात में 18 फीट उचाई से पानी नीचे गिरता है जो कि धुएँ के समान दिखाई देता है। यहॉ का बंदर कूदनी कुण्ड आकर्षण का केन्द्र है। इस कुण्ड में नर्मदा नदी इतनी संकीर्ण हो जाती है कि बंदर एक किनारे से दूसरे किनारे पर आसानी से कूद सकते है।

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र शा. महा. सौंसर ** सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शास. विज्ञान महावि. पांढुर्ना, जिला–छिन्दवाडा (म.प्र.) भारत

- **कान्हा :-** वन्य प्रजातियों के संरक्षण के लिये प्रोजेक्ट टाइगर योजना 1974 के तहत कान्हा राष्ट्रीय उद्यान स्थापित किया गया है। इस उद्यान में शेर, बारहसिंगा को संरक्षित किया जाता है।
- **माण्डू:-** यहॉ का नक्काशीदार खूबसूरत असरफी महल अफगानों की कला का भव्य नमूना है। जो कि कटोरी की भॉति बना हुआ है। यह सुंदर महल, झील और प्राकृतिक सौंदर्यता से समृद्ध स्थल है।
- **सॉची:-** यह डेटिंग, स्तूप, मठों, मंदिरों और स्तम्भों के लिये माना जाता है। सॉची स्तूप मौर्य सम्राट अशोक ने बनवाया था।
- **खजुराहों:-** यह छतरपुर जिले में स्थित है। यहॉ चंदेलवंश के राजाओं ने 950 ई.सी. से 1050 ई.सी. के मध्य 85 मंदिरों का निमार्ण करवाया। जिसमें वर्तमान में 25 मंदिर शेष है। यहॉ शैव, वैष्णव तथा जैन धर्म से संबंधित मंदिरों का निमार्ण बलुआ पत्थरों से किया गया।
- **पचमढ़ी:-** यह म.प्र. में सतपुडा पवर्तमाला में स्थित एक खूबसूरत पतर्वमाला है। पचमढ़ी में घाटियों की घाटी, नालों और भूलभुलैया, महादेव पहाडियों की गुफायें, शैलचित्र आदि पर्यटन के महत्वपूर्ण स्थल है।

भारत में पर्यटन की स्थिति:-

भारत में पर्यटन रोजगार सृजन और आर्थिक ,सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। भारत में वर्ष 2011 के दौरान विदेशी पर्यटकों के आगमन की वृद्धि दर 8.9 दर्ज की गई। जो कि विगत वर्ष की 4.4 प्रतिशत वृद्धि दर की तुलना में दुगुनी रही। जिससे भारत देश को वर्ष 2011 में 16.56 बिलियन डॉलर मुद्रा की प्राप्ति हुई। जबकि 2010 में 14.19 बिलियन डॉलर आय प्राप्त हुई। पर्यटन में 2011 में 16.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। मंत्रालय पर्यटन स्थलों का विकास एवं उनमें बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराने हेतु निरंतर प्रयास कर रहा है। वर्ष 2011-12 में पर्यटन मंत्रालय ने देश के विभिन्न राज्यों के साथ मिलकर पर्यटन स्थलों या सर्किटों में अधोसंरचना विकास करने के लिये 710.02 करोड की लागत के 160 पर्यटन प्रोजेक्ट संचालित किये है।

Sourse: 1. ministry of tourism annual report 2011-12 page 05,
2. Tourism potential in India page 03

भारत में विदेशी पर्यटकों के आगमन की प्रवृत्ति तालिका क्र. 01

वर्ष	विदेशी पर्यटक (बिलियन में)	विगत वर्ष की तुलना परिवर्तन (% में)	विदेशी मुद्रा आय (बिलियन में)	% परिवर्तन
2001	2.54	-4.2	3198	-7.6
2002	2.38	-6.0	3103	-3.0
2003	2.73	14.3	4463	43.8
2004	3.46	26.8	6170	38.2
2005	3.92	13.3	7493	21.4
2006	4.45	13.5	8634	15.3
2007	5.08	14.3	10729	24.3
2008	5.28	4.0	11832	10.3
2009	5.17	-2.2	11136	-5.9
2010	5.78	11.8	14193	27.5
2011	6.29	8.9	16564	16.7
2012	3.24	7.4*	8455 *	8.2 *

Sourse:Ministry of tourism , govt. of India 2011-12 , India tourism statistics, page 02-04

म.प्र. में पर्यटन की संभावनाएँ

म.प्र. में पर्यटन की अपार संभावनाएँ मौजूद है। सरकार के प्रयास के चलते प्रदेश में पर्यटन क्षेत्र में बहुत तेजी से विकास हो रहा है। अपनी प्राकृतिक ,सांस्कतिक ,धार्मिक विरासत के कारण प्रदेश में पर्यटन क्षेत्र में अत्याधिक वृद्धि हो रही है। वर्तमान में पर्यटन ने एक उद्योग का रूप ले लिया है। जिसमें अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्र पर्यटन के साथ नजदीकी से जुडे हुए है।

यदि सरकार सार्वजनिक-निजी क्षेत्र की सहभागिता के साथ पर्यटन क्षेत्र में निवेश बढ़ायें तो पर्यटन उद्योग का वर्तमान जितना अच्छा है भविष्य भी उतना ही सुनहरा होगा। प्रदेश में पर्यटन की संभावनाओं को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से दर्शाया जा सकता है।

इको पर्यटन

- एडवेंचर स्पोर्ट पर्यटन
- होटल-3 स्ट्रार, 4 स्ट्रार, 5 स्ट्रार
- विरासत होटल
- परिवहन एजेंट एवं परिवहन लक्जरी कोच
- टूर गाइड
- पर्यटन सुविधा केंद्र
- मल्टीप्लेक्स एवं मनोरंजन केंद्र
- रिसेप्सन सेंटर
- थीम पार्क
- गोल्फ पार्क
- हस्तकला उत्पाद उद्योग

मेडिकल पर्यटन

- स्वास्थ्य संबंधी फर्म-प्रत्येक जिले में एक राज्य अस्पताल
- आयुर्वेदिक इलाज केंद्र
- ध्यान एवं योग शिविर केंद्र

जल पर्यटन

- गॉधी सागर (मंदसौर)
- इंदिरा सागर (खण्डवा)
- ओमकारेश्वर धाम (खण्डवा)
- बरगी (जबलपुर)
- बाण सागर (रीवा)

नवीन संभावनाएँ

- 1200 क्षमता वाला राज्य कला उद्योग केंद्र
- चयनित क्षेत्रों में कार्बन पर्यटन
- विस्तार एवं नाश्ता स्कीम

ईको टूरिज्म एवं मध्यप्रदेश

प्रदेश सरकार ने 1995 में पर्यटन नीति घोषित की। जिसमें मुख्यतया: वन्य जीव, रोमांचक पर्यटन, पर्यावरण चेतना व शिक्षा को बढ़ावा देने के का लक्ष्य रखा। पर्यटकों की रूचि में आ रहे बदलाव और पर्यटन के बदलते स्वरूप को ध्यान में रखते हुए सरकार ने पर्यटन के नये स्वरूप में इको टूरिज्म और साहसिक पर्यटन को बढ़ावा देने की दिशा में कार्य कर रही है।

पर्यटन की विविध विधाओं को लोकप्रिय एवं विकसित करने के लिये पहली बार निजी निवेशकों की भागीदारी ली जा रही है। इको टूरिज्म में प्राकृतिक सौन्दर्य से समद्ध स्थलों की सैर, पर्यावरण चेतना व पर्यावरण शिक्षा, आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहन, स्थानीय लोगों का सशक्तीकरण आदि को मजबूत करना ष्षामिल है। प्रदेश में अद्वितीय सौन्दर्य स्थल है।

नदियॉ, पर्वत एवं वन विविधता की अनुकूल परिस्थितियॉ है। अत:शासन योजनाबद्ध नीति निर्मित करके पर्यटन में संभावनाये तलाषें तो प्रदेश ईको टूरिज्म का देश-विदेश में प्रमुख केंद्र बन कर उभरेगा।

Sourse: 1. Eco and adventure tourism policy m.p. 2000-02
2. Twenty years perpective plan of tourism for the state of m.p. final report vol II page 24.

म.प्र. की आधारभूत संरचना एवं कनेक्टीविटी

भौतिक अधोसंरचना

1. **सड़क:-** प्रदेश में कुल 20 राष्ट्रीय राज्य मार्ग है। राष्ट्रीय राज्य मार्ग की लम्बाई कुल 4709 किमी. व राज्य मार्ग की लम्बाई 1050 किमी. है। प्रदेश सड़कों के माध्यम से देश के अन्य महानगरों से जुडा हुआ है।
2. **रेल:-** प्रदेश में रेल मार्गो की लम्बाई लगभग 4948 किमी. है। प्रदेश का पश्चिम सेन्ट्रल जोन का मुख्यालय जबलपुर में स्थित है। रेल्वे सेवा विभाग का मुख्यालय भोपाल में है।
3. **वायुयान:-** प्रदेश में 5 हवाई अडडे है। जो खजुराहों भोपाल ग्वालियर जबलपुर में है। कान्हा राष्ट्रीय उद्यान हवाई पटटी से जुडा हुआ है। बॉधवगढ़ (उमरिया) में हवाई पट्टी निमार्णाधीन है। भोपाल अंतर्राष्ट्रीय स्तर का एयरपोर्ट है।

म.प्र. की अधोसंरचना तालिका क्र.02

मापदण्ड	मध्यप्रदेश	भारत
भौतिक अधोसंरचना		
विघुत क्षमता	83813	173626.4
जी.एस.एम. उपभोक्ता	31677228	618284322
ब्राण्डबैंड उपभोक्ता	418091*	10737850
राष्टीय मार्ग की लम्बाई किमी.	5027	70934
वायुयान	05	133
सामाजिक घटक		
साक्षरता दर %	70.6	74.0
जन्मदर प्रति 1000 जनसंख्या	27.7	22.5
निवेश		
एफ.डी.आई. इक्विटी प्रवाह यू.एस. डॉलर बिलियन	0.6	132.9
अन्य स्त्रोतों से निवेश यू.एस. डॉलर बिलियन	293.3	7449.3
औद्योगिक अधोसंरचना		
सार्वजनिक निजी सहभागिता प्रोजेक्ट	89	808
सेज SEZ	05	380

Sourse: 1. The Land of diamond m.p. November, 2011 page 04-05
2. www.ibef.org

ब. आवासीय सुविधा तालिका क्र. 03

स्थान	5 स्टार डिलक्स	5 स्टार	4 स्टार	3 स्टार	2 स्टार	1 स्टार	विरासत	अवर्गीकृत होटल	कुल
बालाघाट	–	–	–	3 133	1 19	–	–	–	–
भोपाल	–	–	–	–	–	–	2 137	2 22	7 292
छतरपुर	–	–	–	–	–	–	–	1 10	1 10
धार	–	–	–	–	–	–	1	–	1 16
ग्वालियर	–	–	–	2 96	–	–	16		4 214
होशंगाबाद	–	–	–		–	–	–	1 6	1 6
इंदौर	–	1 84	–	5 440	–	–	–		6 524
जबलपुर	–	–	1 52	4 177	1 33	–	–		6 262
टीकमगढ	–	–	–	1 14	–	–	–		1 14
खजुराहों	1 94	3 244		2 170	–	–	–	1 47	7 555
पना	–	–	–	1 28	–	–	–	–	1 28
सिवनी	–	–	–	1 28	–	–	–	–	1 20
शिवपुरी	–	–	–	1 19	–	–	–	–	1 19
उज्जैन	–	–	–	1 28	–	–	–	–	1 28
उमरिया	–	–	–		1 18	–	–	–	1 18
कुल होटल	1	4	1	21	3	0	3	7	40
कुल कमरा	94	328	52	1125	70	0	153	203	2025

Sourse:India tourism statistics, 2009

तालिका क्र.03 से यह स्पष्ट है कि महानगरों में अधिक आवासीय सुविधाएँ उपलब्ध है। भोपाल, जबलपुर ,इंदौर, खजुराहों में होटलों की संख्या अधिक है। प्रदेश में सर्वाधिक 3 तारा होटलों की संख्या 21 है। उसके पश्चात अवर्गीकृत होटलों की संख्या 203 है। जबकि 5 तारा होटलों की संख्या 328 है। प्रदेश में कुल 40 होटल है। जिनमें कुल 2025 कमरे उपलब्ध है जो कि पर्यटकों को आवासीय सुविधाएँ दे रहे है।

म.प्र. में पर्यटन की सीमाएँ

म.प्र में आकर्षक पर्यटन स्थल एवं विश्व धरोहर है। जो कि पर्यटकों को लुभाते है। प्रदेश में पर्यटन की अपार संभावनाएँ होने के बावजूद भी इस क्षेत्र में कुछ समस्याएँ है। जो कि निम्न है-

- म.प्र. एक विशाल क्षेत्रफल में फैला हुआ विकासशील राज्य है। प्रदेश में पर्यटन केंद्रों के बीच लम्बी दूरी होने के साथ यात्रा करने में अधिक समय और अधिक मुद्रा खर्च होती है।
- प्रदेश में पर्यटन स्थल प्रमुख बंदरगाहों के निकट स्थित नहीं है। इसलिए प्रदेश को भीतरी आर्थिक लाभ प्राप्त नहीं हो पाता है।
- पर्यटन केंद्रों में बुनियादी सुविधाओं एवं संपर्क के माध्यम पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है।
- पर्यटन क्षेत्र में सरकार के विकास से संबंधित अन्य विभागों के बीच

समन्वय का अभाव होने के कारण प्रदेश में आर्थिक क्षमता मौजूद होने के बावजूद भी दीर्घावधि वाली विकास योजनाओं का अभाव है।

- होटल परिवहन और ट्रेवल्स एजेंसियों के व्यवसाय में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बीच समन्वय की कमी है।
- एक उद्योग के रूप में पर्यटन क्षेत्र को विकसित करने हेतु निजी क्षेत्र में प्रोत्साहन प्रभावकारी नहीं है।
- पर्यटन क्षेत्र से जुडे विभिन्न उत्पाद और उनकी व्यापक विपणन व्यवस्था अपर्याप्त है।
- स्थानीय निवासियों में पर्यटन द्वारा होने वाले आर्थिक ,सामाजिक और सांस्कतिक लाभ के बारे में जागरूकता की कमी है।
- मानव विकास संसाधन और आवश्यक गुणवत्ता हेतु पर्याप्त मात्रा में प्रशिक्षण सुविधाओं की कमी है। जिससे अकुशल श्रमिकों को पर्याप्त रोजगार नहीं मिल पा रहा है।

म.प्र. में पर्यटन विकास हेतु आवश्यक सुझाव

- प्रदेश में सरकार द्वारा पर्यटन क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिये पर्यटन नीति की घोषणा के साथ इको टूरिज्म की स्थापना पर्यटन विकास हेतु आवश्यक है।
- पर्यटन स्थलों में आवश्यक बुनियादी सुविधाओं को विकसित करने हेतु निजी क्षेत्र के निवेश को आकर्षित किया जाये।
- पर्यटन से जुड़े हस्त कला उद्योग में लगे अकुशल श्रमिकों हेतु व्यावसायिक प्रशिक्षण सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाये।
- पर्यटन स्थलों तक पहुँच हेतु सुविधाजनक यातायात संसाधनों का विकास किया जाये।
- स्थानीय लोगों को जागरूक करके आर्थिक, सामाजिक लाभ दिया जाये ताकि कमजोर वर्ग में व्याप्त पलायन प्रवृत्ति को रोजा जा सके।
- विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए पर्यटन स्थलो में विश्वस्तरीय गुणवत्ता वाली सुविधाएँ उपलब्ध करवायी जाये।
- पर्यटन विकास हेतु सरकार के विभिन्न विभागों के बीच आपसी समन्वय होना चाहिए।

निष्कर्ष

म.प्र. की अर्थव्यवस्था 10.2 प्रतिशत विकास दर के साथ विकास कर रही है। राज्य सकल घरेलु उत्पाद में पर्यटन उद्योग की हिस्सेदारी निरंतर बढ़ी है। पिछले पॉच वर्षो (2006-2012) में एसएनडीपी में पर्यटन उद्योग का योगदान 16 प्रतिशत रहा है। प्रदेश में स्थित 9 नेशनल पार्क और 25 अभ्यारणों सहित 382 पर्यटन स्थलों ने देशी-विदेशी पर्यटकों को आकर्षित किया है। प्रदेश में वर्ष 2011 में 2.80 करोड पर्यटकों और वर्ष 2012 में 5.40 पर्यटकों का आगमन हुआ है। जिससे प्रदेश सरकार को लगभग 700 करोड़ की आमदनी हुई है।

प्रदेश में पर्यटन को बढ़ाने की दिशा में किये जा रहे सुनियोजित प्रयासों के चलते प्रदेश की अर्थव्यवस्था में पर्यटन उद्योग का सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही प्रभाव दे रहे है। पर्यटन उद्योग से युवाओं को होटल, रेस्टॉरेंट, परिवहन एजेंट व टूर गाइड आदि के रूप में नये रोजगार प्राप्त हो रहे है। पर्यटन उद्योग से जुडे अन्य हस्तकला उद्योगों के विकास के साथ ही लोगों को रोजगार मिला और उनकी क्रय शक्ति वृद्धि हुई है।

पर्यटन में नये निवेश को आकर्षित करने के लिए सरकार ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश करने की 100 प्रतिशत अनुमति प्रदान की है जिससे पर्यटन उद्योग में विकास की नई लहर दौड़ रही है। प्रदेश का आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय पार्को के विकास के साथ ही विदेशी सम्पर्क आसान हुए है। स्थानीय सरकारों को शुल्क व करों के रूप में निरन्तर आय प्राप्त हो रही है।पर्यटन उद्योग का प्रदेश की अर्थव्यवस्था पर कुछ नकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिल रहे है जैसे :-जल व विद्युत का अनावश्यक, उपयोग भूमि उपयोग में प्रतियोगिता, कीमतों में तेजी से वृद्धि, और स्थानीय निम्न आय स्तर के लोगों का अन्य क्षेत्रों की ओर पलायन आदि।

प्रदेश सरकार पर्यटन उद्योग को बढ़ाने के लिये सुनियोजित विकास नीति के साथ निवेश में वृद्धि कर रही है । पर्यटन से जुडे कई संगठनों एंव संस्थाओं का गठन किया जा रहा है। जिससे पर्यटन से पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को समाप्त किया जा सके। अत: कहा जा सकता है कि पर्यटन उद्योग प्रदेश के विकास में सक्रिय भूमिका निभा रहा है जिससे प्रदेश को देश-विदेश में एक नई पहचान मिल रही है।

संदर्भ सूची

- M.p. develovment report, planning commission govt. of india 2011, page 204
- Census India.gov.in
- IL&FS Infrastructure april ,2012 Interim report m.p. page 07
- M.P. state tourism development corporation Ltd.
- ministry of tourism annual report 2011-12 page 05,
- Tourism potential in India page 03
- Ministry of transport and highways, annual report 2010-11
- Economy survey of m.p. 2010-11
- The Land of diamond m.p. November, 2011 page 04-05
- www.ibef.org
  - India tourism statistics, 2009
  - Ministry of tourism interim reort m.p. 2012, pape 07
  - Eco and adventure tourism policy m.p. 2000-02, pape 01,03.
  - Twenty year percentive lan of tourism for state of m.p. final report vol II, page 24
  - Investers guide to tourism, m.p., page 11
  - Rai K. ashok and baredar dr. prashant, empirical findings and situation analysis of tourism in the state of m.p. international journal of research in management vol 06 page 17.

****

सामाजिक एवं आर्थिक विकास में स्व-सहायता समूहों की प्रासंगिकता

प्रो. आई.एस.पंवार * डॉ.के.आर. कुमेकर**

प्रस्तावना :-

निर्धनों की ऋण आवश्यकताओं को देखने से पता चलता है, कि उन्हें छोटे, लेकिन नियमित और तात्कालिक कर्जो की आवश्यकता होती है, जबकि इसका विकल्प सरकार द्वारा स्वीकृत तथा नियोजित कार्यक्रमों तक ही समिति है, जिसके कारण उनकी बहुत सी आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाती है। इसके विपरित उनकी जरूरतों के लिये छोटे-छोटे कर्ज साहूकारों से तत्काल मिल जाते है, लेकिन ये साहूकार इन निर्धनों विशेषकर ग्रामीण निर्ध्रनों का शोषण करते है।

गरीब आदमी एक बार उनके पास जाता है, तो उसके चक्रव्यूह में फंसता ही चला जाता है। यह अनुभव है कि असिंचित भूमि वाले ज्यादातर किसान, जो अपने उपयोग के लिये कर्ज लेते है, कुछ वर्षो के अंदर ही उनकी भूमि साहूकारों के यहॉ बंधक हो जाती है, क्योंकि ये कर्ज वापस करने की स्थिति में नहीं होते है। दूसरा, बैंके छोटा मोटा कर्ज देने के लिये राजी नहीं होती है और न ही वे निजी कार्यो के लिये ऋण देते है।

वास्तविकता तो यह है कि कर्ज लेने वालों में ज्यादातर लोग निजी और फौरी जरूरतो के लिये ही कर्ज लेते है, फिर जरूरत के समय उन्हें कोई भी कर्ज तत्काल नहीं मिल सकता है, इसलिये एक सोच पैदा हुई कि, बैंक निर्धनों को कर्ज देने के लिये पर्याप्त/उपयुक्त प्रणाली नहीं है। अत: इसके विकल्प की खोज प्रारंभ हुई। मायरा (बैंगलोर) सेवा (अहमदाबाद) डब्ल्यू.डब्ल्यू.एफ. (मद्रास) समाख्या (हैदराबाद), अन्नपूर्णा महिला मण्डल (मुम्बई) आदि ने देहाती तथा शहरी क्षेत्रों में महिलाओं के लिये ऋण सुविधाएँ उपलब्ध कराने हेतु वैधानिक आधार पर कुछ प्रयोग किये। इनके अनुभवों के आधार पर स्व-सहायता समूहों की अवधारणा सामने आई।

अध्ययन का उद्देश्य -

1. आर्थिक रूप से कमजोर इस क्षेत्र के व्यक्तियों में व्याप्त गरीबी एवं बेरोजगारी के कारण उन्हें दूर करने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।
2. ग्रामीण कृषक एवं गैर कृषक परिवारों में ऋणग्रस्तता का पता लगाना एवं उसके प्रभावों का अध्ययन करना।
3. क्षेत्र में संचालित स्व-सहायता समूहों की प्रगति का मूल्यांकन करना।
4. इस बात का अध्ययन करना कि स्व-सहायता समूहों में समूह के सदस्यों में बचत करने की प्रवृत्ति कितनी एवं कैसे विकसित की है।
5. समूहों के माध्यम से कितने व्यक्ति लाभान्वित हुए एवं किस प्रकार लाभान्वित हुए इस बात का विश्लेषण करना।
6. स्व-सहायता समूहों की ऋण चुकौती की स्थिति क्या है ? का अध्ययन करना आदि।

शोध प्रविधि -

किसी समुदाय के सदस्यों की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन अनुसंधान में महत्वपूर्ण कारक होता है। यह वह चर है जो इस समुदाय की प्रस्थिति को स्पष्ट करता है। अनुसंधान कार्य में खरगोन जिले में 100 स्व-सहायता समूहों के प्रत्येक समूह के 5 सदस्यों का अध्ययन हेतु चयन किया गया। अध्ययन हेतु साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया -

1.सदस्यों की सामुदायिक स्थिति -

जाति या वर्ग समुदाय में प्रतिष्ठा सूचक माना जाता है। वर्ग विशेष का कार्य या सेवा से विशिष्ट संबंध होता है।

तालिका क्रमांक 1 स्व-सहायता समूहों की सामुदायिक स्थिति

क्र.	वर्ग	संख्या	प्रतिशत
1	सामान्य	67	13.40
2	पिछड़ा वर्ग	165	33.00
3	अनुसूचित जनजाति	185	37.00
4	अनुसूचित जाति	83	16.60
	योग	500	100.00

2. शैक्षणिक स्थिति -

शिक्षण न केवल व्यक्तित्व के विकास के लिये जरूरी है, बल्कि सामाजिक एवं आर्थिक विकास का आधार भी है। शिक्षा अंधविश्वास एवं रूढ़िवादिता तथा अनावश्यक परम्पराओं के निर्वहन के लिये एक नई सोच पैदा करती है । शिक्षा शोषण मुक्त समाज के निर्माण में भी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सर्वेक्षित सदस्यों की शैक्षणिक स्थिति निम्नानुसार है -

तालिका क्रमांक 2 सदस्यों की शैक्षणिक स्थिति

क्र.	शैक्षणिक स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अशिक्षित 58	11.60	
2	स्वाक्षर या 5 वीं कक्षा तक	216	43.20
3	6 टी से 8 वीं कक्षा तक	123	24.60
4	9 वीं से 12 वीं कक्षा तक	83	16.60
5	उच्च शिक्षा	20	4.00
	योग	500	100.00

3. व्यवसाय की स्थिति -

भारतीय अर्थव्यवस्था ग्राम प्रधान अर्थव्यवस्था है, जिससे रोजगार का प्रमुख साधन आज भी कृषि है। ग्रामीण की जीविका का प्रमुख साधन कृषि एवं कृषि श्रमिक के रूप में कार्य करना है। स्व-रोजगार नाम पात्र का है। कृषि मे सिंचाई सुविधाओं का पर्याप्त विकास न होने से कृषि कार्य कुछ समय के लिये संचालित होता है। अत: अधिकांश समय परिवार के सदस्य बेरोजगारी का सामना करते है। स्व-सहायता समूह के सदस्यों से उनकी व्यवसायिक स्थिति की जानकारी प्राप्त की गई।

तालिका क्रमांक 3 सदस्यों की व्यावसायिक स्थिति

क्र.	व्यवसाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1	कृषक	266	53.20
2	श्रमिक	171	34.20
3	स्व-रोजगार	44	8.80
4	अन्य	19	3.80
	योग	500	100.00

4. आय का स्तर -

आय का स्तर व्यक्ति के जीवन स्तर को प्रभावित करता है। प्रति व्यक्ति

* सहायक प्राध्यापक अर्थ शास्त्र ** सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय महाविद्यालय,सनावद, जिला-खरगोन (म.प्र.) भारत

आय में वृद्धि परिवार की आय का स्तर बढ़ाती है। चूंकि सर्वेक्षित परिवार गरीब परिवारों से संबंध रखते है इसलिये इनकी आय का स्तर संतोषजनक नहीं है।

तालिका क्रमांक 4 सर्वेक्षित सदस्यों की आय की स्थिति

क्र.	वार्षिक आय	संख्या	प्रतिशत
1	10,000 रू. से कम	136	27.20
2	10,001 से 15000 तक	196	39.20
3	15,001 से 20,000 तक	125	25.00
4	20,000 रूपये से अधिक	43	8.60
	योग	500	100.00

5. भू-जोत की स्थिति –

ग्रामीण कृषक परिवारों के अधिकांश सदस्यों के पास कृषि कार्य के लिये उपलब्ध जोत का आकार अनुकुल नहीं है। ग्रामीण स्वरूप इन्हें कृषि के साथ-साथ निर्वाह के लिये श्रमिक के रूप में भी कार्य करना पड़ता है। स्व-सहायता समूह के सदस्यों की भू-जोत स्वामित्व की स्थिति को निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट किया गया है –

तालिका क्रमांक 5 सर्वेक्षित सदस्यों के पास उपलब्ध भू-जोत

क्र.	भू-जोत	आवृत्ति	प्रतिशत
1	भू-स्वामी	247	49.40
2	भूमिहीन	253	50.60
	योग	500	100.00
	0 – 2 एकड़	138	58.87
	2 – 4 एकड़	87	35.22
	4 एकड़ से अधिक	22	08.91

6. समूह का सदस्य बनने का कारण –

समान आर्थिक एवं सामाजिक पृष्ठ-भूमि के 10 से 20 व्यक्ति पुरूष/महिला आपस में मिलकर एक स्व-सहायता समूह का गठन कर सकता है। समूह का गठन करने के पीछे हर सदस्य का उद्देश्य अलग-अलग हो सकते है। सर्वेक्षित 500 सदस्यों से उनके समूह में सम्मिलित होने का कारण ज्ञात किया गया और जिसे निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक 6 समूह का सदस्य बनने का कारण

क्र.	कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	नियमित बचत की आदत	223	20.36
2	ऋण प्राप्त करना	288	26.30
3	स्व-रोजगार	203	18.53
4	साहूकार से प्राप्त ऋण का भुगतान	165	15.06
5	आवश्यकता पड़ने पर मुद्रा की प्राप्ति	103	9.40
6	अतिरिक्त आय (ब्याज) की प्राप्ति	1095	100

7. ऋण की प्राप्ति (समूह के गठन के पूर्व)-

स्व-सहायता समूह गठन के पूर्व समूह के सदस्य अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये विभिन्न माध्यमों से ऋण प्राप्त करते थे। उनकी ऋण प्राप्ति के स्त्रोतों को निम्नलिखित तालिका से दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक 7 समूह गठन से पूर्व ऋण राशि के साधन

क्रं.	साधन	संख्या	प्रतिशत
1	साहूकार/महाजन	262	52.40
2	सहकारी संस्थाएँ	198	39.60
3	मित्र/रिश्तेदार	17	3.40
4	बैंक	23	4.60
	योग	500	100.00

8. ऋण की प्राप्ति समूह गठन के पश्चात् –

स्व-सहायता समूह का गठन सदस्यों की आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं के समय मदद करने के लिये किया जाता है। समूह के अधिकांश सदस्य निर्धन होने से उन्हें अपनी साख की आपूर्ति पर एवं पर्याप्त रूप में नहीं पाती। समूह बैंकिंग के साथ व्यवहार कर सदस्यों की ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने के प्रयास करता है। समूह का गठन एवं सदस्य बनने के पश्चात् सदस्यों द्वारा किससे ऋण प्राप्त किया गया को निम्न तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक 8 समूह के सदस्य बनने के पश्चात् ऋण की प्राप्ति

क्र.	साधन	संख्या	प्रतिशत
1	स्व-सहायता समूह से	356	71.20
2	साहूकारों/महाजन/मित्र रिश्तेदार	83	16.60
3	सहकारी संस्थाएँ/बैक	54	10.80
4	ऋण नहीं लिया	07	01.40
	योग	500	100.00

9. ऋण प्रयोजन-

समूह के सदस्यों की कई प्रकार की आवश्यकताएँ होती है, जिन्हें वे बिना सहायता प्राप्त किये पूरा करने में असमर्थ रहते है। सदस्य उत्पादक क्रियाओं के साथ-साथ अनुत्पादक क्रियाओं को पूरा करने के लिये ऋण प्राप्त करते है। समूह के सदस्यों द्वारा समूह से ऋण निम्नलिखित उद्देश्य को पूरा करने हेतु लिया गया है।

तालिका क्रमांक 9 स्व-सहायता समूह से ऋण प्राप्ति का प्रयोजन

क्र.	प्रयोजन	संख्या	प्रतिशत
1	कृषि कार्य	247	50.10
2	स्व-रोजगार	23	4.66
3	पुराने ऋण की चुकौती	41	8.31
4	चिकित्सा	15	3.04
5	शिक्षा	28	5.67
6	घरेलू कार्य	44	8.92
7	सामाजिक परम्पराएँ	76	15.41
8	अन्य	19	3.85
	योग	500	100.00

10. अग्रिम की राशि –

सदस्यों ने अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु जो ऋण अग्रिम प्राप्त किया उसे निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है-

तालिका क्रमांक 10 समूह से प्राप्त अग्रिम

क्र.	राशि (रूपयों में)	संख्या	प्रतिशत
1	0001 – 1500	98	19.87
2	1501 – 3000	132	26.77
3	3001 – 4500	147	29.81
4	4501 – 6000	85	17.24
5	6001 से अधिक	31	6.28

11. ऋण पुर्नभुगतान (वापसी) –

तालिका क्रमांक 10 ऋण पुर्नभुगतान की स्थिति

क्र.	ऋण वापसी	संख्या	प्रतिशत
1	पूर्ण ऋण की वापसी	122	24.74
2	75 प्रतिशत पुर्नभुगतान	159	32.25
3	50 प्रतिशत पुर्नभुगतान	167	33.87
4	25 प्रतिशत पुर्नभुगतान	36	7.30
5	कालातीत	09	1.84
	योग	493	100.00

निष्कर्ष एवं सुझाव –

इस अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष एवं सुझाव निम्नानुसार है –

1. खरगोन जिले के निर्धन परिवारों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु स्व–सहायता समूहों के गठन को बढ़ावा दिया जा रहा है। जिससे ये परिवार सूक्ष्म साख के द्धारा अपने परिवार की सामजिक एवं आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ कर सके ।
2. स्व–सहायता समूहों के गठन के पश्चात् उनकी स्थिति एवं सदस्यों की सामाजिक आर्थिक स्थिति का विश्लेषण करने पर पाया कि खरगोन जिले में गठित स्व–सहायता समूहों में 37 प्रतिशत समूह अनुसूचित जनजाति वर्ग से संबंध रखते है। आदिवासी समुदाय में भी अपने विकास के प्रति जाग्रति आयी है और वे भी विकास कार्यो में सहभागिता करने लगे है। सर्वेक्षित समूहों में से 83 समूह अनुसूचित जाति वर्ग के थे, जिनका प्रतिशत 16.60 है। पिछड़ा वर्ग के 33 प्रतिशत समूह थे तथा सबसे कम समूह 67 जिनका प्रतिशत 13.40 है, सामान्य वर्ग के थे। समूहों का गठन जनसंख्या के अनुपात में बहुत कम है। इस क्षेत्र की जनसंख्या को स्व–सहायता समूहों का गठन के लाभ समझाकर इनको इनसे जोड़ने की आवश्यकता है।
3. युवा किसी कार्य को करने के लिये बहुत उत्सुक रहते है। आयु वह चर है जो उद्देश्य प्राप्ति में सहायता करती है। सर्वेक्षित 500 सदस्यों का आयु अनुसार विश्लेषण करने पर पाया कि स्व–सहायता समूह के गठन में 20–20 वर्ष की आयु वालों का प्रतिशत 53 है। 30–40 वर्ष से अधिक उम्र के व्यक्तियों ने समूह गठन में 5.80 प्रतिशत का योगदान दिया। इसी प्रकार 20 वर्ष से कम उम्र के व्यक्तियों ने भी 13.60 प्रतिशत गठन किया। 40 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों को समूह गठन हेतु प्रेरित करना चाहिए।
4. छोटा परिवार सुखी परिवार का आधार होता है । समूह के परिवारों का औसत आकार आदर्श परिवार की स्थिति में नहीं है। 79.20 प्रतिशत सदस्य ऐसे है जिनके परिवारों की सदस्य संख्या 5 से 7 व्यक्तियों के बीच है। कहीं–कहीं 8 से अधिक सदस्य भी एक परिवार में पाये गये किन्तु इनमें से कुछ परिवार संयुक्त परिवारों के रूप में निवास करते है। परिवार के सदस्यों की संख्या अधिक होने का प्रमुख कारण इस क्षेत्र में संदूर इलाकों में परिवार कल्याण कार्यक्रमों की पहुॅच नहीं होना है। शिक्षा का विस्तार एवं परिवार कल्याण कार्यक्रमों को सुदूर ग्रामीण इलाकों में प्रचारित कर इस समस्या को रोका जा सके।
5. शिक्षा न केवल व्यक्तित्व विकास के लिये जरूरी है, बल्कि सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाने का एक सशक्त माध्यम है। सर्वेक्षित सदस्यों की शैक्षणिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करने पर पता चला कि समूह में अभी 11.60 प्रतिशत सदस्य अशिक्षित है। शिक्षित सदस्य भी अधिकांश तथा साक्षर या मात्र 5 वीं कक्षा तक औपचारिक शिक्षा ग्रहण किये हुए है। इनका प्रतिशत 43.20 है । 6 से 8 कक्षा तक शिक्षित सदस्यों का प्रतिशत 24.60 है। समूह 4 प्रतिशत सदस्य ही उच्च शिक्षा प्राप्त किए हुए है। सदस्यों की शिक्षा के स्तर को बढ़ाना जरूरी है ताकि वे और अधिक कुशलता से अपने समूह की गतिविधियों का विस्तार कर सके।
6. खरगोन जिले की अर्थव्यस्था ग्रामीण एवं कृषि प्रधान होने से सर्वेक्षित समूह के सदस्यों में भी लघु एवं सीमांत कृषकों का प्रतिशत अधिक है। 53 प्रतिशत समूह के सदस्य कृषि कार्य में संलग्न है। कृषि ही उनका प्रमुख व्यवसाय है। 34.20 प्रतिशत सदस्य श्रमिक हैं मजदूरी कर वे अपना जीवन यापन करते है। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने के कारण श्रमिक कृषि कार्यो में ही मजदूरी करते है। स्व–रोजगार वाले मात्र 8.80 प्रतिशत सदस्य थे। स्व–सहायता समूहों के माध्यम से स्व–रोजगार को बढ़ावा देना चाहिए जिससे कृषि क्षेत्र में अनावश्यक श्रम को रोका जा सके।
7. स्व–सहायता समूहों का गठन लोगों के आर्थिक स्तर को ऊॅचा उठाने के लिये किया जाता है। समूह के सदस्य सामान्यत: बहुत कम आय वाले होते है । जब यह जानने का प्रयास किया गया कि सदस्यों की आय का स्तर क्या है ? तो जो स्थिति सामने आयी उसमें 10,000 रूपये से कम वार्षिक आय प्राप्त होने वाले सदस्यों का प्रतिशत 27.20 था। 10,000 से 15000 रूपये रूपये वार्षिक के बीच आय प्राप्त करने वाले 39.20 प्रतिशत सदस्य थे 15,000 से 20,000 रूपये के बीच आय अर्जित करने वाले 25 प्रतिशत सदस्य पाये गये । 20,000 रूपये से अधिक आय प्राप्त करने वाले सदस्य 8.6 प्रतिशत है। आय स्तर बढ़ाने के लिये स्व–रोजगार कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्र होने से पशुपालन, भेड़ एवं बकरी पालन के कार्य अधिक उपयुक्त रहेंगे।

Reference -

1. Desai B.M.- 1984, Group based savings and credit programmme in Rural India for Rural Poor.
2. Gupta R.C., 1994, Management of Savinds and Credit Programme by NGo's Har Anand Publication, New Delhi.
3. Karmakar K.G.1999, Rural Credit and self help group : Micro Finance Need and Concepts in Indian Sage Publication, New Delhi.
4. Kurtz, Lind Farr's 1997 - Self Help and Support Groups. A Hand book for practitioners, Sage Publication.
5. NABARD, 1989 Studies on Self Help Groups of the rural poor, NABARD, Mumbai.
6. Nagarjum B.S. and Lalitha N, 1997 Critical Study of women self help groups in selected district of Tamilnadu- ICSSR, New Delhi.
7. Gopal Krishna, B.K.,1998 SHGs and Social Defence, Science welfare, vol. 44(10)pp. 30-34 January] 198
8. Pathak P.A., 1992, Self Help Goups and their linkages with Banks. National Bank Revies, 7(11)

****

भारत में रोजगार और आर्थिक वृद्धि

रावेन्द्र सिंह पटेल *

Abstract – रोजगार मानव के जीवन का आधार है। रोजगार के बिना एक खुशहाल समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। भारत में प्रथम पांच पंचवर्षीय योजनाओं तक योजना निर्माताओं की यही धारणा रही है कि आर्थिक वृद्धि से रोजगार अपने आप बढ़ जायेगा लेकिन वास्तव में ऐसा हुआ नहीं। हमारे देश में जॉबलेस ग्रोथ हुई है। जहाँ देश में आर्थिक वृद्धि और आर्थिक विकास में धनात्मक सहसंबंध होना चाहिए था, वहीं ऋणात्मक सहसंबंध देखने को मिला है। रोजगार वृद्धि न बढ़ पाने का एक कारण यह रहा है कि आर्थिक सुधारों से केवल विनिर्माण क्षेत्र के उत्पादन में वृद्धि हुई है और दूसरा कारण यह रहा है कि ऐसे प्रत्याशित ढ़ांचागत बदलाव नहीं हो पाए जिनसे उद्योगों को श्रम बहुल बनाया जा सकता। वर्तमान समय में आर्थिक वृद्धि का लाभ शनै:-शनै: नीचे तक पहुँचने का सिद्धान्त अपनी प्रासंगिकता खो चुका है। अब यह माना जाने लगा है कि रोजगार सृजन और गरीबी दूर करने के लिए केवल आर्थिक वृद्धि पर्याप्त नहीं है।

Keywords –आर्थिक वृद्धि, रोजगार, समावेशी विकास, जॉबलेस ग्रोथ, कॉब डगलस प्रोडक्सन फन्कसन, पूँजी प्रधान तकनीक, श्रम प्रधान तकनीक।

Introduction - आर्थिक वृद्धि एवं रोजगार के मध्य संबंध जानने से पहले दोनों का अर्थ जानना जरूरी है। वृद्धि (Growth) किसी व्यक्ति, समूह, क्षेत्र या देश में होने वाली मात्रात्मक (quantitative) प्रगति को कहते हैं। अर्थशास्त्री इसका प्रयोग अर्थव्यवस्था में आने वाली मात्रात्मक प्रगति को दर्शाने के लिए करते हैं और यह हमेशा तुलनात्मक रूप से ही प्रयुक्त होता है। मीर व राउच[1] (2006) के अनुसार मात्रात्मक आर्थिक प्रगति ही आर्थिक संवृद्धि है। आर्थिक संवृद्धि धनात्मक व ऋणात्मक दोनों हो सकती है। बेरोजगारी से आशय उस श्रम शक्ति से है, जो काम करने के इच्छुक हैं, काम करना चाहते हैं, काम ढूढ़ने का प्रयास करते हैं, फिर भी उन्हें काम नहीं मिल पाता है। भारत ने पिछले 22 वर्षो में तीव्र आर्थिक प्रगति की है। 1980-81 से 1990-91 के दौरान देश की आर्थिक वृद्धि दर 5.2 % थी, जो सुधार काल के उपरान्त 1990-91 से 2000-2001 के दौरान बढ़कर 5.6 % हो गयी। तत्पश्चात् 2000-01 से 2003-04 के मध्य 6 % रही जो तीव्र गति से बढ़कर 2004-05 से 2009-10 के बीच 8.7 % हो गयी।[2] विकास और मुद्रा स्फीति के मोर्चे पर देश ने वैश्विक वित्तीय संकट तक में अच्छा प्रदर्शन किया। एक ओर जहाँ विकसित देशों की वृद्धि दर 2 % रही, वहीं दूसरी ओर भारत अपनी वृद्धि दर 6 % बनाए रखकर अपनी अर्थव्यवस्था की मजबूती का परिचय दिया। आज एक आम आदमी से लेकर नीति निर्माताओं, अर्थशास्त्रियों, राजनेताओं, समाज सुधारकों आदि सबके मन में प्रश्न उठता है कि क्या यह आर्थिक वृद्धि रोजगार को बढ़ाने में सफल रही है?, क्या गरीबी को कम करने में सफल रही है? तथा क्या आर्थिक असमानता को कम कर सकी है? प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास किया गया है।

Objectives -

1. आर्थिक वृद्धि एवं रोजगार के बीच संबंध ज्ञात करना।
2. कृषि, उद्योग एव सेवा क्षेत्र में उपलब्ध रोजगार का विश्लेषण करना।

Methodology -

1. **Area of the study** – प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन हेतु अध्ययन क्षेत्र के रूप में संपूर्ण भारत को समाहित किया गया है।
2. **Period of the study**–शोध अवधि के अंतर्गत 1972-73 से 2009-10 के अखिल भारतीय स्तर पर समंकों को प्रयुक्त किया गया है।
3. **Applied variables** – प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन हेतु निम्नलिखित चरों का प्रयोग किया गया है – (1) आर्थिक वृद्धि (2) रोजगार वृद्धि (3) कृषि क्षेत्र में वृद्धि (4) उद्योग क्षेत्र में वृद्धि (5) सेवा क्षेत्र में वृद्धि
4. **Data Collection** – प्रस्तुत शोध में द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है। इसके संग्रहण हेतु योजना आयोग की रिपोर्ट, आर्थिक सर्वेक्षण तथा केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO) की रिपोर्ट का सहारा लिया गया है।
5. **Data Analysis** – प्रतिशत विधि व रेखाचित्र के माध्यम से समंको का विश्लेषण किया गया है।

भारत में पिछले दो दशकों का अनुभव दर्शाता है कि तीव्र आर्थिक वृद्धि के बावजूद जो रोजगार के अवसर बनाए गए वे अपर्याप्त थे जो कि निम्न सारणी से स्पष्ट है।

भारत में जी डी पी वृद्धि और रोजगार वृद्धि

अवधि	जी.डी.पी. वृद्धि	रोजगार वृद्धि
1972-73 से 1983	4.66	2.44
1983 से 1993-94	4.98	2.02
1993-94 से 2004-05	6.27	1.84
1999 से 2009-10	7.52	1.50
2004-05 से 2009-10	9.08	0.22

स्त्रोत – पपोला से व्युत्पन्न (2012), एस महेन्द्र देव का आलेख 'रोजगार और आर्थिक वृद्धि' योजना, अक्टूबर 2013 में प्रकाशित

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि जैसे-जैसे देश की आर्थिक संवृद्धि बढ़ी है वैसे-वैसे रोजगार में वृद्धि की रफ्तार घटी है। अर्थात दोनों चरो के मध्य विपरीत संबंध देखने को मिला है। अत: भारत में जॉबलेस ग्रोथ हुई है।

भारत में जी.डी.पी. वृद्धि और रोजगार वृद्धि

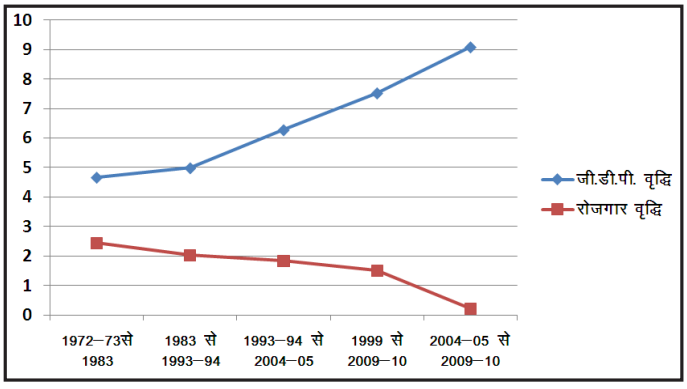

* सहायक प्राध्यापक-अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

भारत में जी.डी.पी. वृद्धि और रोजगार वृद्धि – उपरोक्त रेखा चित्र में दोनों वक्र एक -दूसरे के विपरीत हैं और दोनों के बीच का अंतर लगातार बढ़ता जा रहा हैं जो अत्यन्त चिंताजनक है। स्ट्रीटवर्ट और स्ट्रेटेन[3] के अध्ययन का निष्कर्ष भारत के संदर्भ में सत्य प्रतीत होता है कि उत्पादन वृद्धि और रोजगार के विस्तार में विरोध हो सकता है जब रोजगार आयोजन की और ध्यान न दिया जाए तो आर्थिक विकास की गति तेज होने के बावजूद भी बेरोजगारी की समस्या बनी रहे।

जी.डी.पी. में वृद्धि के अनुरूप रोजगार में वृद्धि न होने के प्रमुख कारण निम्नलिखित है- भारत में वर्तमान में 53.2 प्रतिशत लोगों को कृषि क्षेत्र में रोजगार प्राप्त होता है। 1993-94 में 61 प्रतिशत, 1999-2000 में 56.6 प्रतिशत तथा 2004-05 में 52.1 प्रतिशत लोगों को रोजगार प्राप्त होता था।[4] लेकिन कृषि में कुल निवेश जी.डी.पी. के प्रतिशत के रूप में 1999-2000 में केवल 2.8 प्रतिशत था। किन्तु कृषि-निवेश का यह निम्न स्तर भी कायम न रखा जा सका और 2003-04 के दौरान यह गिरकर 2.4 प्रतिशत हो गया। जबकि अर्थव्यवस्था ने निवेश की तीव्र वृद्धि अनुभव की और यह 2009-10 में जी.डी.पी. का 36.5 प्रतिशत हो गया।[5] वर्तमान में कृषि का निवेश में भाग जी.डी.पी. का 3.0 प्रतिशत तक स्थिर रखना बहुत ही अपर्याप्त है, ऐसा उस परिस्थिति में और निराशाजनक प्रतीत होता है यदि इस बात का ध्यान रखा जाए कि कृषि 53.2 प्रतिशत जनसंख्या के लिए अजीविका का स्त्रोत है।1990 से 2010 के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था औसतन छह से सात फीसदी की विकास दर से आगे बढ़ी है और किसी भी लिहाज से यह विकास दर खराब नहीं कही जा सकती है। दिक्कत यह रही है कि भारतीय अर्थव्यवस्था ने यह विकास सेवा क्षेत्र खासकर सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियों के दम पर हासिल किया है। यही वजह हमारे विकास से समावेशी शब्द को अलग कर देती है। भारत की जी.डी.पी. में सेवा क्षेत्र की हिस्सेदारी 60 फीसदी से ज्यादा है जबकि जी.डी.पी. में विनिर्माण क्षेत्र का योगदान मात्र 16 फीसदी है। चीन, सिंगापुर, जापान, दक्षिण कोरिया और दुनिया के विकसित देशों की जी.डी.पी. में विनिर्माण क्षेत्र की हिस्सेदारी 30 फीसदी से ज्यादा है। विनिर्माण क्षेत्र को दुनियाभर में अहमियत दिए जाने की मुख्य वजह यह है कि इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर नौकरिया पैदा होती हैं और इन नौकरियों में कम प्रशिक्षित युवाओं से लेकर उच्च कौशल वाले अधिकारियों तक हर तबके को खपाया जा सकता है। वहीं सेवा क्षेत्र में बहुत कम नौकरियां पैदा होती है और इन कम नौकरियों में भी बेहद उच्च कौशल वाले लोगों की माँग होती है। भारतीय अर्थव्यवस्था की ऊँची विकास दर को रोजगार विहीन विकास (जॉबलेस ग्रोथ) का दौर कहा जाता है। सेवा क्षेत्र में पैदा हुई ऊँचे वेतन वाली नौकरियों का फायदा भारतीय शहरों में रहने वाले पहले से ही संपन्न तबकों के लोगों ने उठाया है। पहले से ही हशिये पर रह रही देश की विशाल ग्रामीण आबादी की हालत इस दौर में और ज्यादा बिगड़ गई। ऊँची विकास दर के बावजूद हम चीन और दक्षिण कोरिया की तरह बेरोजगारी व गरीबी दूर नहीं कर पाए क्योंकि हमारा विकास सेवा पर हद से ज्यादा निर्भर था। ब्रिटेन से लेकर चीन और दक्षिण कोरिया तक दुनिया के सारे देशों ने विकास का एक ही रास्ता अपनाया है। सबसे पहले सरकार शिक्षा-स्वास्थ्य जैसी बुनियादी जरूरतों में निवेश करके कौशल युक्त कामगार तैयार करती है और इसके बाद विनिर्माण क्षेत्र को मजबूत करके इस कामगार आबादी के हाथ में रोजगार दिया जाता है। जैसे-जैसे लोगों को विनिर्माण क्षेत्र में ऊँचे वेतन पर ज्यादा उत्पादक काम मिलता है, उसी रफ्तार से कृषि क्षेत्र पर दबाव कम होता जाता है। चूंकि कृषि क्षेत्र में जरूरत से ज्यादा जुड़े लोगों को धीरे-धीरे विनिर्माण क्षेत्र में समायोजित कर लिया जाता है, लिहाजा कुछ समय बाद कृषि क्षेत्र भी लाभ का धंधा बन जाता है। विनिर्माण क्षेत्र के सहारे लंबे समय तक विकास करने के बाद अर्थव्यवस्थाओं में ऐसा दौर आता है जब देश विकसित हो जाता है और कृषि क्षेत्र से पूरी तरह किनारा करके सेवा क्षेत्र का रूख कर लेता है। अफसोस, भारतीय आर्थिक विकास का मॉडल इस परखी हुई राह पर नहीं चल रहा है। हमारी अर्थव्यवस्था ने कृषि क्षेत्र से विनिर्माण क्षेत्र में जाने की बजाय सीधे ही सेवा क्षेत्र में छलाँग लगा दी है।[6] भारत में आर्थिक वृद्धि के साथ-साथ रोजगार में वृद्धि न होने का एक प्रमुख कारण कॉब डगलम प्रोडक्सन फन्कसन[7] के आधार पर विकास करने की स्वत्रंता है।[8]

$$Q = AL^{\alpha} K1^{-\alpha} \quad OR \quad AL^{\alpha} K^{\beta}$$

जहाँ Q = उत्पादन, L = श्रम, K = पूंजी, A, α और β = धनात्मक प्रांचल

इस प्रोडक्सन फन्कसन में पूंजी की जगह श्रम को और श्रम की जगह पूँजी का प्रतिस्थापन किया जा सकता है और प्रतिस्थापन किसी भी हद तक किया जा सकता है लेकिन उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात न तो उत्पादन बढ़ता है और न ही उत्पादन घटता है। इसकी एक और विशेषता है कि इन दोनों में से कोई एक साधन की मात्रा शून्य नहीं होना चाहिए, नहीं तो उत्पादन शून्य हो जायेगा। इस प्रोडक्सन फन्कसन का प्रभाव यह पड़ा की उद्योगपतियों ने पूंजी की जगह श्रम का प्रतिस्थापन करना लगातार शुरू कर दिया जिसके परिणामस्वरूप रोजगार घटने लगा।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भारत में आर्थिक वृद्धि के साथ-साथ रोजगार में वृद्धि नहीं हो पायी है। इसके लिए आवश्यक है कि कृषि क्षेत्र का तीव्र गति से विकास किया जाए तत्पश्चात् विनिर्माण क्षेत्र का और उसके बाद सेवा क्षेत्र को प्राथमिकता दी जाए। साथ ही जहाँ श्रम प्रधान तकनीक से उत्पादन करने की संभावना हो वहाँ पूंजी प्रधान तकनीक का प्रयोग न किया जाए। जैसा कि लेविस [9] महोदय का भी कथन है कि जब प्रचलित मौद्रिक मजदूरी दर पर श्रम का आधिक्य हो तो उस मजदूरी दर पर पूँजी को उत्पादक नहीं मना जा सकता यदि वह ठीक वही काम करती है जिसे श्रम भी उतनी ही अच्छी तरह कर सकता है। इस तरह के निवेश पूँजीपतियों के लिए भले ही लाभप्रद हों लेकिन समाज के दृष्टिकोण से वे अलाभकारी होगें क्योंकि उनसे बेरोजगारी बढ़ेगी न कि उत्पादन।

संदर्भ ग्रंथ –

1. **Gerald M Meier and James E. Rauch, " Leading issues In Economic Development' Oxford university Press, New Delhi, 2006, P. 12-14**
2. **Central Statistical organisation 2012**
3. **F stewart and PP streeten " Conflicts beetween output & Employment objectives" third world employment, Harmonds worth, 1973, PP - 367-84**
4. **Planning commission Eleventh Five year plan, 2007-12, NSSO 66th Round**
5. **Datt & Sundram, Indian Economy, Schand & Company, New Delhi, 2012, P 233**
6. **Sen, Arvind Kumar "Jansankhakiya Labhansha Ya Jansankhakiya Abhishap' Aalekh, Yojana, Oct, 2013, P. 23-25**
7. **ADN Baj Payee Speech on Employment at Govt P.G. College Satna , 21 Feb. 2005**
8. **C.W. Cobb and P.H. Douglas " A Theory of Production' AER (Supplement), 1928**
9. **W.A. Lewis 'The Theory of Economic Growth' Oxford University press, London, 1955, P -356**

छतरपुर जिले में असंगठित क्षेत्र का आकार

डॉ. जे. पी. मिश्रा * अनूप शुक्ला **

प्रस्तावना:- असंगठित क्षेत्र या अनौपचारिक क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था का अत्यन्त महत्वपूर्ण क्षेत्र है। कुल भारतीय कार्यबल का 90 प्रतिशत से अधिक भाग इसी क्षेत्र में रोजगार प्राप्त करता है तथा सकल राष्ट्रीय उत्पाद में 60 प्रतिशत से अधिक भाग का योगदान इसी क्षेत्र द्वारा किया जाता है। सामाजिक और आर्थिक रूप से अल्प विकसित समुदाय का बडा भाग इसी क्षेत्र में रोजी-रोटी का प्रबंध करता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था ने पिछले दो दशको में तीव्र आर्थिक वृद्धि दर दर्ज की है जो अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र एक दूसरे से संबंधित तथा निर्भर होते हैं। जब अनौपचारिक पर असंगठित क्षेत्र का विस्तार होता है तो इस क्षेत्र के लोगों की आय बढती है। यह क्षेत्र कम आय वाला क्षेत्र होता है, इसलिए इस वर्ग की सीमांत उपयोग प्रवृत्ति (एम.पी.सी.) अधिक होती है। परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्थाा की प्रभावी मांग में वृद्धि होती है। समग्र रूप से अर्थव्यवस्था उच्च संतुलन की ओर बढने लगती है।

शोध उद्देश्य:- प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित उद्देश्य है-

1. छतरपुर जिले में संगठित और असंगठित क्षेत्र के आकार का ज्ञान प्राप्त करना।
2. असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के नियोजन के विभिन्न क्षेत्रों के बारे में जानकारी प्राप्त करना।
3. असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए उपाय के बारे में विचार करना।

परिकल्पना:- प्रस्तुत शोध की निम्नलिखित परिकल्पना ली गई है-

1. छतरपुर जिले में असंगठित क्षेत्र का आकार कुल श्रमबल का 90 प्रतिशत से अधिक भाग है।
2. असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त कमजोर होती है और वे अपने परिवार को जीवन की मूलभूत सुविधाए उपलब्ध कराने में भी असमर्थ होते हैं।

शोध समस्या:- छतरपुर जिले में असंगठित क्षेत्र का आकार

छतरपुर जिला बुर्देलखंड का एक अत्यन्त पिछडा जिला है, जहाँ आधारिक संरचना तथा उद्योगों का विकास बहुत कम हुआ है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार जिले की जनसंख्या 14,74,723 थी, जिसमें 7,88,933 पुरूष तथा 6,68,790 महिला जनसंख्या थी। जिसे कि कुल जनसंख्या का 40.18 प्रतिशत भाग कार्यशील जनसंख्या के रूप में था, जिनकी कुल संख्या 5,92,470 थी। कुल कार्यशील जनसंख्या में 3,88,777 पुरूष तथा 2,03,693 महिलाएँ थी। पुरूषों का कुल कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत 49.28 था, जबकि महिला कार्यशील जनसंख्या का अनुपात मात्र 29.70 प्रतिशत ही था।

कार्यशील जनसंख्या जिले में मुख्य रूप से कृषि कार्य, खेतिहर मजदूर, पारिवारिक उद्योग, स्वनियोजित तथा अन्य व्यवसायों में संलग्न है। महिला कार्यशील जनसंख्या का अनुपात अत्यन्त कम होने के अनेक कारण है, जैसे- अशिक्षा, सामाजिक रूढिवादिता, उच्च वर्गों की सामंतवादी प्रवृत्ति, सामाजिक चेतना का अभाव आदि।

छतरपुर जिले में संगठित और असंगठित क्षेत्र में नियोजन को निम्नलिखित तालिका में प्रदर्शित किया गया है:-

तालिका संख्या- 1

छतरपुर जिले में संगठित और असंगठित क्षेत्र में नियोजन

नियोजन क्षेत्र	2005-2006	2006-2007
असंगठित क्षेत्र में नियोजन	4,09,456 (97.51)	4,22,614 (97.72)
संगठित क्षेत्र में नियोजन	10,422 (2.49)	9,861 (2.28)
कुल नियोजन	4,19,878 (100)	4,32,475 (100)

नोट:- कोष्ठक में प्रतिशत दिया गया है।

उपरोक्त आंकडों से छतरपुर जिले में फैले असंगठित क्षेत्र के विस्तृत आकार का ज्ञान प्राप्त होता है। वर्ष 2004-2005 में संपूर्ण देश में असंगठित क्षेत्र का कुल रोजगार में भाग 92.30 प्रतिशत था और संगठित क्षेत्र का कुल नियोजन में योगदान 7.70 प्रतिशत मात्र था।

छतरपुर जिले में वर्ष 2005-2006 में कुल 4,19,878 व्यक्तियों को विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त था। इस वर्ष असंगठित क्षेत्र के अंतर्गत कुल 4,09,456 व्यक्ति पूरे जिले में रोजगार प्राप्त करते थे, जो कुल कार्यशील जनसंख्या का 97.51 प्रतिशत था। वर्ष 2006-2007 में छतरपुर जिले में कुल 4,32,475 व्यक्ति रोजगार में लगे थे, इनमें 4,22,614 व्यक्ति असंगठित क्षेत्र में रोजगार प्राप्त करते थे। जो उस वर्ष की कुल कार्यशील जनसंख्या के 97.72 प्रतिशत भाग के बराबर थे।

वर्ष 2005-2006 की तुलना में वर्ष 2006-2007 में असंगठित क्षेत्र में कार्य करने वाले मजदूरों की संख्या 4,09,456 व्यक्तियों से बढकर 4,22,614 व्यक्ति हो गई। मजदूरों की संख्या में वृद्धि के साथ ही साथ 2005-2006 की तुलना में 2006-2007 में असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों का अनुपात 97.51 प्रतिशत से बढकर 97.72 प्रतिशत हो गया। वहीं दूसरी ओर संगठित क्षेत्र में वर्ष 2005-2006 में नियोजित व्यक्तियों की

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष (अर्थशास्त्र विभाग) शा. महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
** पी.जी.टी. (अर्थशास्त्र) जवाहर नवोदय विद्यालय नौगाँव जिला- छतरपुर (म.प्र.) भारत

संख्या 10,422 से घटकर 9,861 वर्ष 2006-2007 में हो गई। इसका अर्थ है कि कुल श्रमबल में संगठित क्षेत्र में नियोजन का अनुपात 2005-2006 में 2.49 प्रतिशत से घटकर 2006-2007 में 2.28 प्रतिशत रह गया।

इस प्रकार छतरपुर जिले में संगठित क्षेत्र का आकार संकुचित हो रहा है तथा असंगठित क्षेत्र के आकार में वृद्धि हो रही है। इस परिवर्तन के अनेक कारण हो सकते हैं जैसे- उद्योगों का अभाव, सरकारी क्षेत्र की कमी, नई आर्थिक नीति का प्रभाव आदि। संक्षेप में मध्यप्रदेश के इस विशाल जिले में नियोजन के क्षेत्र में असंगठित क्षेत्र का अनुपात राष्ट्रीय औसत 92.30 (2004-2005) से भी अधिक है।

छतरपुर जिले के असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के नियोजन के संदर्भ में शोध के दौरान 240 प्रतिदर्शों से सूचना प्राप्त की गई। नियोजन के क्षेत्रों को चार वर्गों में विभाजित किया गया- खेत में काम करने वाले, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में काम करने वाले, लघु उद्योगों में काम करने वाले तथा दैनिक मजदूर के रूप में निजी क्षेत्र के अंतर्गत कार्य करने वाले। असंगठित क्षेत्र के अंतर्गत कार्य करने वाले श्रमिकों का सबसे बडा भाग लगभग 50 प्रतिशत श्रमिक कृषि क्षेत्र के अंतर्गत खेतिहर मजदूर के रूप में रोजगार प्राप्त करता है। व्यापारिक प्रतिष्ठानों और दुकानों में केवल 12.08 प्रतिशत श्रमिक नियोजित पाया गया। छतरपुर जिले में उद्योगों का विकास बहुत कम हुआ है, इसका प्रभाव असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के नियोजन में भी दिखाई पडता है। इसीलिए लघु उद्योगों में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों का मात्र 4.16 प्रतिशत भाग ही नियोजित पाया गया। दैनिक मजदूर जो निजी क्षेत्र के अंतर्गत रोजगार प्राप्त करता है, उसका अनुपात कुल असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों में 33.75 प्रतिशत भाग है। इन आँकडों से स्पष्ट है कि खेतिहर मजदूर और दैनिक मजदूर का भाग असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों का तीन चौथाई से अधिक है। इस वर्ग के श्रमिक कमजोर आर्थिक स्थिति में पाये जाते हैं, इनकी प्रतिव्यक्ति आय कम है तथा कार्य दशायें भी प्रतिकूल पाई जाती हैं।

असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार के सुझाव-

असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाने चाहिए-

1. असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को संगठित करने के लिए प्रत्येक गाँव और शहर के वार्डों में मजदूर समितियों का निर्माण किया जाना चाहिए।
2. श्रमिकों को शिक्षित करने का प्रयास किया जाना चाहिए, यदि शिक्षित करना संभव न हो तो इन श्रमिकों को जागरूक अवश्य किया जाना चाहिए। जिससे वे अपने अधिकारों, अवसरों, दायित्वों तथा सामाजिक महत्व को जान सकें।
3. सरकार द्वारा संचालित रोजगार कार्यक्रमों (मनरेगा) के प्रभावी क्रियान्वयन के लिये जवाबदेह, उत्तरदायी, प्रशासनिक ढाँचे का निर्माण किया जाना चाहिए, जिससे योजना का लाभ पात्रों को 15 प्रतिशत के स्थान पर कम से कम 85 प्रतिशत अवश्य पहुँचे।
4. असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के कल्याण के लिए भारत सरकार द्वारा निर्मित कानून ''असंगठित कामगार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 2008'' को संपूर्ण देश के श्रमिकों पर लागू किया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. National commission for enterprises in the unorganized sector, government of India, Chairman- Shri Arjun K.Sengupta
2. A Comparative Study between Organised and Unorganised Manufacturing Sectors in India written by Ruchika Gupta Departments of Higher Education New Delhi
3. National Statistical Commission Government of India February 2012 Cairman- Prof.R.Radhakrishna
4. India Year Book 2008 & 2012 Manpower Prifile ,Institute of Appled manpower Research, Narela Delhi 110040

****

धार जिले में कृषि के बदलते स्वरूप का अध्ययन

डॉ. एस.एस. बघेल *

भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ कि जनसंख्या गांवों में निवास करती है जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि हैं। भारतीय कृषि मुख्य रूप से परम्परागत कृषि के रूप में की जाती रही है। जिससे कृषि क्षेत्रों में उल्लेखनीय परिवर्तन नही पाया है। किन्तु आधुनिकीकरण के युग में भारतीय कृषि में परिवर्तन स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहे है। कृषि आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ ही मानी जाती है। इसलिए कृषि प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती है। आज भी देश की कुल जनसंख्या का 58 प्रतिशत कृषि कार्यो में संलग्न है और भारत की कुल राष्ट्रीय में कृषि का 14.6 प्रतिशत योगदान है। कृषि से नाना प्रकार के उद्योगों के लिए कच्चा पदार्थ उपलबध होता है। भारत के विदेशी व्यवहार में भी कृषि का बड़ा योगदान है। विगत वर्षो में कृषि क्षेत्र एवं कृषि उत्पादकता में वृद्धि अवश्य हुई है किन्तु वह संतोषजनक नहीं हैं।

देश के नीति निर्माताओं तथा कृषि विशेषज्ञों कृषि से सम्बन्धित क्षेत्रों में सुधार हेतु सोचने के लिए मजबूर हो गये हैं। एक और देश में सवा अरब जनता का पेट भरने के लिए कृषि पर निर्भर रहना पड़ता है, वही दूसरी और कृषि, बाढ़, अकाल, सुखे से प्रभावित है। ऐसी स्थिति में कृषि उत्पादकता एवं कृषि उत्पादन को बढ़ाने के प्रयास समय-समय पर किये जाते रहे हैं। जिससे कृषि में विकास दर बढ़ती रहे।

भारत में कृषि आधुनीकीकरण का दौर 1960 के दशक से प्रांरभ होना माना जाता है। तब से देश की कृषि में कृषि क्षेत्रों को बढ़ाना, पंचवर्षीय योजना तथा हरित क्रान्ति नित नये-नये परितर्वन हुए है। कृषि में नये-नये तकनीको का उपयोग बढ़ा, कृषि में रासायनिक खाद, उर्वरक, कीटनाशकों, बीज आदि में वृद्धि होने से कृषि उत्पादकता बढ़ी हैं। देश में नई-नई किस्मों के बीजों का उपयोग होने से देशवासियों को विदेशी कृषि उत्पादन भी देश में ही प्राप्त होने लगे है। कृषि के हरेक पहलु में वृद्धि होने लगी है। कृषक नई-नई फसलों को उत्पादन करने में उत्साही हो रहे। किन्तु तमाम आधुनिक तकनीकों के प्रयोग के बाद भी आज भारतीय कृषि विदेशी कृषि से कहीं कोसो दूर दिखाई देती है। अत: कृषि क्षेत्र में आवश्यक सुधार की नितांत आवश्यकता हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र धार जिले में कृषि के बदलते स्वरूप के अध्ययन पर केन्द्रित है। धार जिले में कृषि क्षेत्र में हुए परिवर्तन का जिले की अर्थव्यवस्था में हुए परिवर्तनों को इंगित करने का प्रयास किया गया हैं।

धार जिले का परिचय -

धार जिला मध्यप्रदेश के इन्दौर संभाग में विध्यांचल पर्वत श्रेणी में स्थित है। विंध्यपर्वत मालाओं ने धार जिले को दो प्राकृतिक उपखण्डों में विभाजित किया है - 1. उत्तर में मालवा का पठार तथा 2. दक्षिण में नर्मदा घाटी व निमाड़ का मैदान मालवा का पठार। मालवा का पठार समुद्र की सतल से 1500-2500 वर्ग फिट तक ऊँचा है।

जिले का कुल क्षेत्रफल 8153 वर्ग कि.मी. है एवं इसकी भौगोलिक स्थिति $22^0$1 उत्तरी अक्षांश से $23^0$10 उत्तरी अक्षांश तथा पूर्वीदेशान्तर $74^0$28. से $75^0$42 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है इसमें पश्चिम भाग में अलीराजपुर, झाबुआ जिले उत्तर में रतलाम व उज्जैन व दक्षिण में बड़वानी व खरगौन तथा पूर्व में इन्दौर जिले से घिरा हुआ हैं।

प्रशासनिक दृष्टि से जिले को 8 तहसीलों तथा 13 विकास खण्डों में विभाजित किया गया हैं। जिले में मुख्यरूप से लाल, काली, दोमट, भूरी मिट्टी पायी जाती है। जिले की प्रमुख फसलें सोयाबीन, कपास, मूंगफली, मक्का, उड़द, मूंग, ज्वार, बाजरा, गेहूँ, चना आदि हैं।

जिले की 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 2,184,672 है जिसमें पुरूष 1,114,267 तथा 10,70,405 महिला हैं। जिले की साक्षरता दर 60.57 प्रतिशत है। जिले की जनसंख्या घनत्व 268 वर्ग किलोमीटर तथा लिंगानुपात 961 हैं।

इस प्रकार धार जिला वनवासी बहुल जिला हैं, जहाँ प्राकृतिक संसाधन भरपूर मात्रा में उपलब्ध हैं, प्राकृतिक संसाधन का सही अनुमान लगाकर उचित दोहन करने की आवश्यकता है। जिले के पिछड़ा तथा कमजोर श्रेणी के वर्ग में आने के कारण यहां पर्याप्त मात्रा में विकास संसाधनों की व्यवस्था करने की नितांत आवश्यकता हैं।

शोध अध्ययन के उद्धेश्य -

1. कृषि में उपयोग किये जाने वाले उन्नत बीज, तकनीक, रासायनिक खाद, जैविक खाद, कीटनाशक आदि की जानकारी का अध्ययन करना।
2. कृषि क्षेत्र में हुए परिवर्तनों का अध्ययन करना।
3. परम्परागत कृषि एवं आधुनिक कृषि का अध्ययन करना।
4. जिले में कृषि भूमि एवं उत्पादकता का अध्ययन करना।
5. जिले में कृषि वितरण का अध्ययन करना।

परिकल्पनाऐं -

1. उन्नत किस्मों के बीजों, खाद, कीटनाशकों का उपयोग जिले के कृषकों द्वारा किया जा रहा हैं।
2. जिले की कृषि अर्थव्यवस्था आधुनिकता की और अग्रसर हो रही हैं।
3. कृषि कार्यो में नये-नये यन्त्रों के प्रयोग से कृषि में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं।
4. कृषि कार्यो के प्रति जिले के कृषकों के नजरिये में परिवर्तन हुआ है।

शोध प्रविधि -

प्रस्तुत शोध पत्र मध्यप्रदेश के धार जिले में कृषि के बदलते स्वरूप के अन्तर्गत कृषि भूमि उपयोग, सिंचाई विकास एवं आधुनिक कृषि आदानों, कीटनाशकों, फसलों ने परिणाम किया जाता है। आंकडों तालिका एवं मानचित्र के माध्यम से इस अध्ययन का विश्लेषण किया गया हैं।

कृषि भूमि उपयोग -

भूमि के स्वरूप का विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहता है उपलब्ध भूमि का पूर्ण उपयोग करने पर ही कृषि विकास संभव है। वर्तमान में भूमि उपयोग स्वरूप के आधार पर ही किसी क्षेत्र की कृषि योजना का निर्धारण किया जाता है। शोध क्षेत्र धार जिले का भूमि उपयोग यहाँ की कृषि के प्रयुक्त भूमि एवं अन्य प्रकार के उपयोग में ली गई भूमि से संबंधित है।

जिले के कुल क्षेत्रफल का 40 प्रतिशत भूमि कृषि योग्य है। शेष अनुपजाऊ

* प्रभारी प्राचार्य, महाराजा भोज शासकीय, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

या एक फसली तथा चारगाहों के रूप में आती हैं।

सिंचाई विकास –

कृषि विकास में सिंचाई का महत्वपूर्ण योगदान होता हैं। वर्तमान समय में मानसून की बेरूखी, बाढ़ के कारण कृषि फसल प्रभावित हो जाती है जिससे उत्पादकता में भी कमी होती है। ऐसी स्थिति में कृषि फसल एवं उत्पादकता बढ़ाने का एकमात्र साधन सिंचाई हैं। धार जिले में सिंचाई की साधनवार स्थिति को अग्रतालिका में दर्शाया गया हैं।

तालिका

सं.	साधन	संख्या	हेक्टर	प्रतिशत
1	नहरें	74	13.3	4.72
2	तालाब	741	12.0	4.25
3	कुएं	52034	88.0	29.0
4	नलकूप	34185	122.7	43.0
5	अन्य	–	52.0	18.9

स्त्रोत – भू–अभिलेख कार्यालय, जिला–धार (म.प्र.)

जिल में सिंचाई का मुख्य स्त्रोत भूमिगत जल तथा वर्षा जल है। कुल सिंचित क्षेत्र का 85 प्रतिशत क्षेत्र में भूमिगत जल स्त्रोतों से सिंचाई की जाती है। जिले में सर्वाधिक सिंचाई कुओं तथा नलकूपों के माध्यम से की जाती है। जिले में 29 प्रतिशत कुऐं तथा 43 प्रतिशत नलकूपों के माध्यम से सिंचाई की जाती है।

कृषि नवाचार/कृषि उपकरण (हरित क्रांति)–

वैश्वीकरण के युग में कृषि आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में धार जिले में नई कृषि तकनीकों का प्रयोग बढ़ता जारहा हैं। विगत् 2 दशकों में मशीनों एवं उन्नत बीज, खाद के उपयोग के कारण कृषि में क्रान्ति आयी है। जिले में कृषि कार्यो में प्रयुक्त कृषि यन्त्र, औजार एवं आधुनिक तकनीक से विकसित बीज, खाद एवं कीटनाशक दवाईयों के प्रयोग में आशातीत वृद्धि हुई है। इन दो दशकों में शासन द्वारा कृषकों हेतु चलाई जा रही योजनाओं के अन्तर्गत ऋण व अनुदान उपलब्ध करवाकर कृषि उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ कृषकों के आर्थिक, सामाजिक विकास में भी वृद्धि हुई है। कृषि आधुनीकीकरण से जिले में आधुनिक कृषि यंत्र जैसे ट्रेक्टर, कल्टीवेटर, थ्रेसर, लोहे के हल, विद्युत पम्प सेट, डीजल पम्प सेट, पावर टिलर्स, फव्वारा सेट, ड्रिप सिंचाई सेट।

आधुनीकीकरण के इस युग में धार जिले के कृषक भी पीछे नही रह रहे है। विदेशी कृषि के तरीके जानकर कृषि कार्य कर रहे। शासन द्वारा भी समय–समय पर कृषि तकनीको की जानकारी उपलब्ध करायी जाती है। जिले के कृषकों द्वारा वैश्विक बाजार की कृषि उत्पादों का उत्पादन करने लगे है सन् 1990 तक कृषकों द्वारा उत्पादन की पुरानी तकनीक, खाद, बीज का ही उपयोग करते थे किन्तु अब उत्पादन की समस्त नवीनतम तकनीक तथा उन्नत किस्म के बीज, खाद, कीटनाशक तथा अधिकतम उत्पादन वाली फसलों का उत्पादन कर उनके जीवन स्तर तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि की हैं। जिले में सन् 1995–96 में 80.21 प्रतिशत उन्नत किस्म के गेहूँ तथा सोयाबीन का कास्त क्षेत्र था जो 2009–10 में बढ़कर 96.37 प्रतिशत हो गया है तथा रासायनिक उर्वरकों का उपयोग 1995–96 में 41.06 प्रति क्विंटल था जो 2009–10 में बढ़कर 198.40 क्विंटल हो गयी हैं। मालवा में कहावत भी है कि –

''पग पग रोटी, डग डग नीर''

''धार जिले में मालवा भूमि अत्यधिक उपजाऊ व कृषि के लिए आदर्श भूमि उपयोग'' वर्तमान में मालवा सोयाबीन प्रदेश के नाम से जाना जाता हैं।

सारांश –

अत: निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि वर्तमान में जिले में कृषि का स्वरूप आधुनिकता की और तेजी से बढ़ता जारहा है। कृषि के हर क्षेत्र आधुनिक तरीकों के द्वारा उत्पादन कार्य किया जा रहा है। जिले में कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता में भी वृद्धि के परिणाम परिलक्षित हो रहे।

शासन द्वारा कृषि कार्यो हेतु विभिन्न योजनाओं का लाभ देकर कई जिले के कृषकों में उन्नत किस्म के बीज, किसान क्रेडीट कार्ड व बैंकों से ऋण, कृषि उपकरणों में म.प्र. व भारत सरकार द्वारा कीटनाशक तथा यंत्रों का उपयोग करने कृषि नीतियों एवं योजनाओं इत्यादि सुविधा प्रदान करना में काफी उत्साह देखा जा सकता है। जिसका परिणाम कृषि में बम्पर उत्पादन है। धार जिला विशेष रूप से भौगोलिक दृष्टि से काफी ऊँचा नीचा है। जिसमें कृषि कार्य करना आसान ही नही है बल्कि मुश्किल है फिर भी ऐसी परिस्थिति में जिले के कृषकों द्वारा आधुनिक उत्पादन की तकनीक अपनाकर जिले के कृषि आदानों के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि कर रहे हैं जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार हो रहा है। कृषकों का माल विभिन्न बाजारों में बिकने जा रहा है। यहां तक की विदेशों में भी जिले के कृषि उत्पादों की मांग हैं।

किन्तु इसका एक दूसरा पहलू यह भी है कि यहाँ जनसंख्या निरंतर बढ़ती जा रही है जनसंख्या बढ़ने से परिवार बढ़ने से कृषि स्त्रोतों का आकार छोटा होता जा रहा है। जब कृषि जोतें छोटी होगी तो आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग नही होगा तथा उत्पादन तथा उत्पादकता में कमी होगी। जिससे कृषकों के जीवन स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। दूसरी समस्या यह है कि यहाँ जल स्तर धीरे–धीरे नीचे जा रहा है।

तालाबों तथा बांधों में पानी का जमाव कम होता जा रहा है। अत: इस हेतु सुझाव के रूप में कहा जा सकता है कि जिले में असंख्य छोटे–छोटे बांधों का निर्माण किया जाना चाहिए, बारिश के पानी को रोकने की उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। कृषकों की जोतों के आकार में कमी होने से टोकने के लिए चकबंदी जैसे कानून प्रभावी बनाया जाना चाहिए। कृषकों को कृषि उत्पादों का उचित मूल्य प्राप्त होने चाहिए। समय–समय पर कृषि फसलों तथा कृषि उत्पादों हेतु शासन द्वारा योजनाओं का प्रचार–प्रसार कर आवश्यक सुविधाऐं उपलब्ध करायी जानी चाहिए। कृषि बीमा योजना का लाभ वास्तविक कृषकों सही समय पर देना चाहिए। बाढ तथा अकाल मे शासन द्वारा कृषकों के हित की उचित रक्षा करना चाहिये। डॉ. वानथ्यूनन का कृषि पेटी एवं सिद्धातों एवं डॉ. व्हीटलसील कृषि प्रदेश विश्व को 13 कृषि प्रदेशों में विभाजित किया एवं भारत में डॉ. मोहम्मद सेफी तथा मालवा पठार कृषि के लिए उपयुक्त भूमि उपयोग।

अत: अंत में कहा जा सकता है कि जिले में कृषकों को कृषि में उत्पादन तथ उत्पादकता को बढ़ाने हेतु शासन की योजनाओं का सही समय पर लाभ मिल जाये तो जिले के कृषकों में खुशहाली ही खुशहाली होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. कृषि भूगोल – डॉ. माजिद हुसैन, जयपुर प्रकाशक
2. 2- Dhankaur 1988 "Changing" Pattern of Agriculturel Landuse" Rawat Pablication, Jaypur
3. चांदना – आर.सी. 2003– जनसंख्या भूगोल कल्याणी पब्लिशर्स, दिल्ली
4. कृषि भूगोल – डॉ. प्रमीला कुमार हिन्दी अकादमीक ग्रंथालय, भोपाल
5. भू–अभिलेख कार्यालय–धार, जिला–धार

****

किशोरावस्था में मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन

डॉ. शक्ति जैन *

प्रत्येक देश की स्वस्थ जनसंख्या ही इस देश की वास्तविक शक्ति और सम्पत्ति होती है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन एवं स्वस्थ आत्मा का निवास होता है। अस्वस्थता कार्यक्षमता को घटाती है, अस्वस्थता व बीमारियाँ व तनाव देश की श्रमशक्ति को नष्ट करती है। बालश्रम नियंत्रण के संबंध में जो कानून बना है उसका संबंध अप्रत्यक्ष रूप से देश की श्रम शक्ति से है। छोटी उम्र से कार्य करेगा तो लंबे समय तक कार्य नहीं कर पायेगा।

किशोरावस्था में होने वाली अस्वस्थता का देश के आर्थिक विकास में घनिष्ठ संबंध है। किशोरावस्था मानव विकास की अत्यधिक महत्वपूर्ण अवस्था व काल हैं क्योंकि इसी अवस्था में मानव का शेष काल या भविष्य निश्चित होता है। किशोरावास्था का महत्व इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि मनोवैज्ञानिकों का ध्यान सबसे ज्यादा इसी अवस्था ने आकर्षित किया है।

क्रो तथा क्रो इस अवस्था का महत्व इन शब्दों में कहते हैं ''किशोर ही वर्तमान की शक्ति तथा भावी आशा को प्रस्तुत करता है।''

किशोरावस्था में बालक-बालिकाओं का स्वस्थ रखना बहुत ही आवश्यक है मानसिक स्वास्थ्य का उद्देश्य व्यक्ति की बुद्धि और विकास के कार्यों के धनात्मक शक्ति में वृद्धि हो उनका जीवन सहज हो। उनके जीवन में कोई तनाव न हो। क्योंकि किशोर ही देश का भविष्य है।

आज शिक्षा का उद्देश्य बालकों का सर्वांगीण विकास करना है पाठ्यक्रम का निर्माण बालक की मानसिक स्थिति, रूचि व अन्य योग्यताओं को आधार मानकर तैयार किया जाता है। परंतु किशोरावास्था जो परिवर्तन की अवस्था कही जाती है। उस अवस्था में दी जाने वाली शिक्षा संपूर्ण जीवन की महत्वपूर्ण शिक्षा है। इस समय केवल पढ़ाई की शिक्षा ही आवश्यक नही है बल्कि स्वास्थ्य पर ध्यान देना भी आवश्यक है।

यदि बालक किशोरावस्था में स्वस्थ नहीं होगा तनावग्रस्त होगा तो उसका प्रभाव उसकी पढ़ाई पर पड़ेगा वह शिक्षा का पूर्ण लाभ नहीं उठा सकेगा। जिन बच्चों में भय, चिंता, निराशा तथा अन्य समायोजन दोषों का विकास होता है उनका मन पढ़ने में नहीं लगता और वह आगे नहीं बढ़ पाता एवं वह तनाव व कुंठा से भ्रमित होता है। किशोरावस्था में एक बालक/बालिका में शारीरिक व सामाजिक विकास के साथ-साथ मानसिक विकास होता है बिना मानसिक विकास के उपयुक्त सामाजिक विकास संभव नहीं है। एक बालक/बालिका जिसका मानसिक विकास संतुलित ढंग से हुआ है व किसी भी कार्य को दूसरों में अधिक ठीक प्रकार से कर सकता है।

बाल्यावस्था के समाप्त होते ही किशोरावस्था का आगमन होता है किशोरावस्था का आरंभ 13 वर्ष की आयु से माना जाता है 13 वर्ष से 18 वर्ष की अवस्था को किशोरावस्था कहा गया है। भारत देश में 12 से 18 वर्ष की अवस्था को किशोरावस्था माना है।

ब्लेयर जोन्स तथा सिम्पसन के विचारानुसार - ''किशोरावस्था प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का वह काल है जो बाल्यावस्था के अंत में आरंभ होता है और प्रौढ़ावस्था के आरंभ में समाप्त होता है।'' मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि इस अवस्था की अवधि साधारणत: 7 या 8 वर्ष की होती है साधारणतया बालकों की किशोरावस्था लगभग 13 वर्ष की आयु में और बालिकाओं की लगभग 12 वर्ष की आयु में प्रारंभ होती है।

किशोरावस्था को परिवर्तन का काल कहा जाता है उस समय उचित शिक्षा मिलना आवश्यक है। उचित शिक्षा से तात्पर्य पढ़ाई के साथ नैतिक एवं सामाजिक शिक्षा का होना।

''इस अवस्था में प्राप्त ज्ञान व सीखे गये आदर्शों पर ही व्यक्ति का पूरा जीवन निर्भर करता है। अत: इस काल में घर में अच्छा स्वस्थ वातवरण, अभिभावकों, शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

किशोरावस्था की मुख्य विशेषएँ :-

1. किशोरावस्था परितर्वन का काल है इस अवस्था में कई तरह के परिवर्तन होते हैं जैसे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक आदि।
2. किशोरावस्था में शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है यह बालक तथा बालिकाओं में शारीरिक भिन्नता के कारण अलग-अलग होता है।
3. किशोरावस्था में बालक-बालिकायें दोनों ही अपने शरीर की सुंदरता की ओर ध्यान देते हैं।
4. इस अवस्था में विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण बढ़ता है। कामशक्ति की परिपक्वता का समय होता है।
5. स्वतंत्रता की उत्कंठ इच्छा होती है।
6. घनिष्ठ व व्यक्तिगत मित्र की ओर झुकाव होता है।
7. दोस्तों को अधिक महत्व देना।
8. बालक व बालिकाओं की रूचि में अंतर होता हे।
9. किसी विशिष्ट व्यक्ति को आदर्श, सबसे ऊँचा मानकर पूजा करना।
10. आक्रामक व अपराध प्रवृत्ति भी होती है।
11. कुछ संवेगात्मक (Emotion problems) भी उत्पन्न होती है।

किशोरावस्था की विशेषताएँ बताना इसलिए आवश्यक है क्योंकि ये विशेषताएँ ही इस अवस्था की समस्या बन जाती है। इस अवस्था में कुछ बालक-बालिका को सही दिशा मिल जाती है, स्वस्थ सामाजिक व पारिवारिक वातावरण मिल जाता है वह तनाव रहित होकर आगे बढ़ता जाता है लेकिन समस्या उन बालक-बालिकाओं के साथ हो जाती है जिन्हें घर व परिवार, समाज एवं स्कूल में सही वातावरण नहीं मिलता है गलत संगति (दोस्तों की) मिल जाती है इस तरह सही मार्गदर्शन के अभाव में कई बालक-बालिकायें उद्दण्ड, अपराध प्रवृत्ति वाले हो जाते हैं।

स्टेनले हॉल - ने किशोरावस्था को बढ़े संघर्ष, तनाव, तूफान और विरोध की अवस्था कहा है इसका मुख्य उद्देश्य है -

1. किशोरावस्था में छात्रों का अच्छा मानसिक स्वास्थ्य क्या महत्व रखता है तथा इसमें परिवार, शिक्षक, समाज व सरकार की क्या भूमिका है।
2. इस शोधपत्र में द्वितीयक समंकों के आधार पर ग्रामीण और शहरी विद्यालय के बालक, बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन किया है।
3. किशोरावस्था में विद्यालयों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा क्या महत्व रखती है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

प्रथम उद्देश्य

सामान्य रूप से मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ है दैनिक जीवन में भावनाओं, इच्छाओं, महत्वाकांक्षाओं और आदर्शों में संतुलन बनाने की योग्यता। किशोरावस्था में मानसिक विकास का बहुत महत्व है मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में सहनशीलता, आत्मविश्वास, जीवन दर्शन, सामंजस्य की योग्यता, निर्णय करने की योग्यता, आत्मसम्मान की भावना आदि विशेषएँ होती हैं। मानसिक स्वास्थ्य की अवनति के कई कारक होते हैं –

1. दुश्चिन्ता, 2. अवसाद, 3. भग्नाशा, 4. तनाव, 5. संघर्ष आदि।

किशोरावस्था बाल्यावस्था एवं युवावस्था के बीच का समय है इस समय में बालक/बालिका का अच्छा मानसिक स्वास्थ्य बहुत महत्व रखता है। एक सर्वे के अनुसार भारत देश में किशोरावस्था में गरीब वर्ग के लगभग अधिकांश बालक/बालिकायें पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं हैं। किशोरावस्था में होने वाली अस्वस्थता व्यक्ति के संपूर्ण जीवन स्तर को प्रभावित करती हैं।

किशोरावस्था में बालक/बालिकाओं के अच्छे मानसिक स्वास्थ्य में निम्न कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

1. परिवार की भूमिका

घर का अच्छा वातावरण, माता–पिता का अच्छा स्वास्थ्य को बालक/बालिकाओं के विकास (खाना–पीना–रहना) पर ध्यान देना। माता–पिता का व्यवहार बच्चे के प्रति सहज होना उनकी समस्याओं को सुनना, अच्छा वातावरण देना नैतिक शिक्षा देना, अपने से बड़ों का सम्मान, गुरू का सम्मान, अनुशासन सिखाने इन सभी में परिवार की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण है।

2. समाज की भूमिका

समाज मानसिक स्वास्थ्य को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है व निभा सकता है। समाज आधारभूत आवश्यकतायें पूर्ण करके, सुरक्षा प्रदान करके, उत्तम शिक्षा व्यवस्था का संचालन कराना, चिकित्सा सुविधायें विकसित कराना तथा एवं अगर किसी परिवार में कोई समस्या है जैसे माता–पिता का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, बालक/बालिका का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, या अन्य कोई पारिवारिक समस्या है तो समाज इसमें पहल कर महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। शिक्षा व स्वास्थ्य का अच्छा वातावरण प्रदान करने में समाज महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

3. विद्यालय व शिक्षक की भूमिका

अच्छे मानसिक स्वास्थ्य में विद्यालय व शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका है। विद्यालय में शिक्षक का सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, विभिन्न व उपयुक्त पाठ्यक्रम, विभिन्न पाठ्य सहगामी गतिविधियों व प्रतियोगिताओं का आयोजन, पर्याप्त गृहकार्य, नैतिक शिक्षा व शारीरिक शिक्षा, पर्याप्त मनोरंजन, छात्रों के लिए अभिभावक (शिक्षक–अभिभावक) का कार्य करना, अनुशासन सिखाना ये सभी कार्य किशोरावस्था के लिये बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस अवस्था में रखी गयी नींव आगे युवावस्था में खुशनुमा स्वस्थ महल बनाती है।

वर्तमान में जो समाज में विकृति मुख्य रूप से बालकों में दिखाई दे रही है उसके उदाहरण सामने आ रहे हैं (गैंगरेप, बलात्कार, आदि का बढ़ता ग्राफ, गुण्डागर्दी) वर्तमान में छात्र/छात्राओं को इस संबंध में शिक्षा की आवश्यकता है। किशोरावस्था में मानसिक विकृति की शुरूआत हो जाती हैं इसे दूर करने के लिये शिक्षक विद्यालय महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। बालक व बालिका के लिए अलग–अलग शिक्षा इस अवस्था में देना आवश्यक है। अलग–अलग शिक्षा से तात्पर्य बालक की इस अवस्था में अलग समस्या होती है बालिकाओं की अलग समस्या होती है। इसके लिए विद्यालय में योग्य शिक्षक की व्यवस्था कर शिक्षा दी जा सकती है।

4. सरकार की भूमिका

विद्यालय में स्वास्थ्य संबंधी जाँच करवाना, अनिवार्य छात्रों को अगर स्वास्थ्य संबंधी कोई समस्या है तो उसे दूर करने के लिए चिकित्सा सुविधायें देना, विद्यालयों का निरीक्षण हो कि छात्रों में अपराध प्रवृत्ति (गुण्डा गर्दी, सिगरेट, शराब, अफीम, चरस तथा सेक्स से संबंधित) तो नहीं फैल रही है। जिन विद्यालय में से किसी तरह की शिकायत आती है तो उसकी जाँच करना उसे रोकना।

उस शिक्षक को प्रोत्साहित करना जो बालक/बालिका का विशेष ध्यान रखते है। सरकार के द्वारा विद्यालयों में इस अवस्था में आने वाली समस्याओं के लिए विशेष कक्षा व विशेष व्याख्यान किए जाना चाहिए।

एक सर्वे से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि किशोरावस्था में छात्रों को अच्छा स्वास्थ्य होना बहुत महत्वपूर्ण है इसमें प्रमुख रूप से परिवार व शिक्षक (विद्यालय) की महत्वपूर्ण भूमिका है।

इस शोध का दूसरा उद्देश्य शहरी व ग्रामीण किशोर बालक–बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन है जो कि द्वितीय समंक पर आधारित है इस कार्य के लिए ग्रामीण व शहरी शासकीय विद्यालयों के कक्षा 11वीं में में अध्ययनरत बालक–बालिकाओं से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई है। 15–17 वर्ष के किशोर बालक–बालिकाओं का अध्ययन कर निम्न निष्कर्ष निकाले गये –

1. शहरी किशोर बालक–बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययन द्वारा ज्ञात होता है कि उनका मानसिक स्वास्थ्य, ग्रामीण किशोर बालक/बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य स्तर की तुलना में कम है। जिसमें शहरी, किशोर बालकों के मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उनका मानसिक स्वास्थ्य ग्रामीण किशोर बालकों की तुलना में कम है। लेकिन शहरी किशोर बालिकाओं एवं ग्रामीण किशोर बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य स्तर लगभग समान हैं।
2. शहरी किशोर बालकों के मानसिक स्वास्थ्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उनका मानसिक स्वास्थ्य शहरी किशोर बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य की तुलना में अच्छा है। इसी तरह ग्रामीण बालकों का स्वास्थ्य ग्रामीण बालिकाओं के स्वास्थ्य स्तर की तुलना में अच्छा है।

यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि मानसिक स्वास्थ्य के अंतर्गत, दुश्चिन्ता, अवसाद, भग्नाशा, तनाव, संघर्ष, दबाव इन सभी को लेकर प्रश्नावली के माध्यम से निष्कर्ष निकाले गये हैं।

इसमें कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये हैं उनमें से कुछ प्रमुख निम्न हैं –

1. विद्यालय में बालक–बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर बालक–बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देने की आवश्यकता है तथा उनके स्वास्थ्य की जाँच विद्यालय में की जानी चाहिए।
2. अध्ययन, अध्यापन के समय ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न न हो जिनसे विद्यार्थियों में तनाव, दबाव, डिप्रेशन, संघर्ष आदि स्थिति उत्पन्न न हों।
3. अध्ययन व अध्यापन प्रणाली में आवश्यकतानुसार सुधार की आवश्यकता है।
4. विद्यालय में परामर्श एवं निर्देशन हेतु उचित व्यवस्था अनिवार्य होना।
5. परीक्षा प्रणाली में सुधार (नकारात्मक परिणाम आने पर विद्यार्थी घर से भाग जाने या आत्महत्या जैसे कदम न उठाये)।
6. बालक/बालिकाओं की शक्तियों (योग्यता) को किसी लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में निर्देशित करना जिससे भटक न सके।

7. परिवार और विद्यालय का वातावरण विवेक और समझदारी पर आधारित होना चाहिए।
8. शिक्षकों द्वारा कम मानसिक स्वास्थ्य स्तर के विद्यार्थियों पर ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए।
9. विद्यालयीन पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा, आदर्श समायोजन, नीति, श्लोक, लघु-कथाओं एवं खेल गतिविधियों का आयोजन अनिवार्य रूप से हो।
10. शिक्षकों द्वारा निडर होकर अभिभावक से बालक/बालिका की प्रवृत्ति पर चर्चा करना चाहिए।
11. एक अच्छा पुस्तकालय होना।
12. विद्यार्थियों को असंतोषजनक परिस्थितियों का सामना करने और उनसे उपयुक्त समायोजन करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
13. अभिभावक को इस अवस्था में अपने बालक/बालिकाओं के व्यवहार का अवलोकन करना उनके स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए।

किशोरावस्था में विद्यालय में दी जाने वाली शिक्षा का छात्र-छात्राओं के स्वास्थ्य का घनिष्ठ संबंध है। अच्छा स्वास्थ्य की तरफ कहा जाये तो स्वास्थ्य अच्छा रहेगा, बालक का मन पढ़ाई में अच्छी तरह से लगेगा। विद्यालय की सभी गतिविधियों में अच्छी तरह उत्साह से भाग लेना। कहा भी जाता है कि ''स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का रहता है।''

शिक्षा की तरफ से कहा जाये तो इस अवस्था में दी जाने वाली उचित शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। उचित शिक्षा के अंतर्गत - नैतिक शिक्षा व अनुशासन दोनों बहुत ही आवश्यक हैं। ये दोनों एक बालक-बालिका के जीवन में नींव का पत्थर का कार्य करती हैं। इस प्रकार अच्छी शिक्षा व अच्छे स्वास्थ्य का घनिष्ठ संबंध है। वर्तमान समय में जो वीभत्स घटनायें दर्दनाक घटनायें (गैंगरेप 9 दिसम्बर, 2012 दिल्ली, प्रतिदिन होने वाले बलात्कार घटनायें जो प्रतिदिन समाचार पत्र आदि से पढ़ने, सुनने में मिलता है) हो रही हैं वहाँ कहीं न कहीं मानसिक विकृति है समाज में नैतिकता का गिरता मूल्य है। अत: किशोरावस्था में अच्छी व उचित नैतिक शिक्षा का बहुत महत्व है।

उपसंहार

जीवन में स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण घटक है जिसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष संबंध देश के आर्थिक विकास से जुड़ा है। भारत देश में स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है। देश को यदि विकसित देश की श्रेणी में आना है तो स्वास्थ्य घटक पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। वर्तमान में बारहवीं पंचवर्षीय योजना स्वास्थ्य को समर्पित है।

स्वास्थ्य व शिक्षा पर अधिक विनियोग करके देश को उसका प्रति कई गुणक प्राप्त होगा। भारत देश में युवा वर्ग की बढ़ती संख्या देश के आर्थिक विकास का द्योतक है इसलिए किशोरावस्था में दी गयी अच्छी शिक्षा व अच्छा मानसिक स्वास्थ्य उसके लिए नींव का कार्य करती है। क्योंकि किशोरावस्था के बाद आने वाली युवा अवस्था एक महत्वपूर्ण अवस्था होती है। इसलिए किशोरावस्था में दी जाने वाली अच्छी शिक्षा व अनुशासन का विद्यार्थी के संपूर्ण जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। इसके लिए अभिभावक (परिवार), विद्यालय, समाज व सरकार की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में होने वाली तकनीकी प्रगति, पाश्चात्य सभ्यता का बढ़ता प्रभाव इनका सही उपयोग बालक/बालिका के लिए किशोरावस्था में ही सिखाना आवश्यक है। अत: किशोरावस्था में शिक्षा व स्वास्थ्य का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. माथुर एस.एस. (2010) - शिक्षा मनोविज्ञान।
2. डॉ. इंदिरा दुल एवं डागर (2009) - शिक्षा एवं अधिगम का विज्ञान।
3. पाठक, पी.डी. (2011) - शिक्षा मनोविज्ञान।
4. समाचार पत्र - इंडिया टुडे, दैनिक भास्कर।
5. लघु-शोध प्रबंध, डॉ. गिरीश मिश्र।
6. योजना, अक्टूबर, 2012।

****

भारत में ग्रामीण गरीबी उन्मूलन में रोजगार कार्यक्रमों का योगदान

डॉ. आर. एस. मण्डलोई*

''मानव समाज में अत्याधिक संपति और अत्याधिक गरीबी आत्मा के विकास में एक बढ़ी बाधा है। दुनिया में महान लोग मध्यम वर्ग से आते है। वहां बल संतुलित और समान रूप से समायोजित होता है।''

– स्वामी विवेकानन्द

भूमिका:–

भारत एक ग्राम प्रधान देश है। यहां कि 72 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है,और उनमें से 76 प्रतिशत जनसंख्या का मुख्य व्यवसाय कृषि हैं।अत: देश का विकास गामीण विकास एवंकृषि विकास के बिना संभव नहीं हैं। देश के विकास के संदर्भ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि 'देश का विकास ग्रामीण एवं कृषि विकास पर निर्भर है।इसी के संदर्भ में पं. जवाहरलाल नेहरू का कथन है कि 'भारत का विकास प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से ग्रामीण एवं कृषि विकास पर निर्भर करता है।यदि जिस वर्ष कृषि असफल रहती है तो सम्पूर्ण राष्ट्र असफल हो जाता है।

अत: ग्रमीण क्षेत्रों के लोगो का जीवन स्तर ऊपर उठाये बिना राष्ट्र का विकास होना असंभव है क्योंकि एक चौथाई जनसख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने के कारण इन क्षेत्रों में गरीबी का प्रतिशत भी अधिक है।जब ग्रामीण लोगों का विकास होगा ,तो उनके रहन–सहन के स्तर सुधार होगा, उनकी आय बढेगी, आय बढ़ेगी तो क्रयशक्ति भी बढ़ेगी, उनके समग्र जीवन स्तर में सुधार होगा। इस प्रकार विकास चक्र प्रारम्भ होगा और गांव विकसित होंगे तो शहर विकसित होंगेंतथा देश एवं राज्य भी विकसित होंगें।भारत का विकास गांवो के विकास से ही प्रारम्भ हाता है।

भारत में गरीबी की अवधारणा

''गरीबी से आशय है कि समाज का वह भाग या परिवार जो अपने जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओ की पूर्ति करने में असमर्थ रहता है।''

गरीबी की परिभाषा विभिन्न देशों में भिन्न –भिन्न प्रकार से दी गई है, तथापि इन सबका का आधार न्यूनतम जीवन स्तर की कल्पना ही है। भारत में विद्वान अर्थशास्त्रियों एवं संस्थाओं ने गरीबी दूर करने के लिए अपने अपने प्रमाप बनाये है। इन सभी अध्ययनों का आधार 2250 कैलोरी के बराबर है। योजना आयोग द्वारा गठित समिति के अनुसार ''ग्रामीण क्षेत्रों में एक व्यक्ति के प्रतिदिन के भोजन में 2400 कैलोरी तथा शहरी क्षेत्रों में एक व्यक्ति के प्रतिदिन भोजन में 2100 कैलोरी होनी चाहिये।

उक्त कैलोरी प्रतिदिन ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में जिन्हे प्राप्त नहीं हो पाती है उसे गरीबी रेखा के नीचे माना गया है ।भारत में गरीबी का आंकलन सन् 1967–68 में बी. एस. मिन्हास ने अनुमान लगाया था, जिसमें 37.1 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे थे।

पी.के.वर्धन के अनुसार 54 प्रतिशत, एम.एस. आहलूवालिया के अनुसार 56.5 प्रतिशत, वी.एम. दाण्डेकर एवं रथ के अनुसार 40 प्रतिशत लोग गरीबी के नीचे जीवन यापन कर रहे थे। योजना आयोग के अनुसार भारत में 1994 में 36 प्रतिशत तथा 2010 में 21.8 प्रतिशत गरीबी है। इस प्रकार भारत में गरीबी का प्रतिशत धीरे–धीरे घट रहा है जिसका प्रमुख कारण ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन है।

ग्रामीण भारत में गरीबी के कारण:–

ग्रामीण भारत में गरीबी के मुख्य कारण निम्नलिखित है।

- भारत में ग्रामीण गरीबी का मूल कारण कृषि में अर्द्धसामंती उत्पादन संबंधों का होना है। देश में एक और जनसंख्या बेहताशा बढ़ती जा रही है दूसरी और श्रम की वास्तविक प्रतिव्यक्ति आय कम होती जा रही है।
- कृषि में उत्पादन की पुरानी तकनीकों का प्रयोग करना भी गरीबी का कारण है।आज भी अधिकांश ग्रामीण कृषक उन्नत बीज, खाद,उर्वरक तथा तकनीक का प्रयोग नहीं करते हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि उद्योग धन्धों का सर्वथा अभाव है।
- वर्तमान में भी भारतीय कृषक विपणन व्यवस्था के लिए बिचौलियों पर निर्भर है, जिस कारण किसानों को उनके उत्पादनों का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।
- भारतीय कृषि आज भी मानसून पर निर्भर है।
- ग्रामीण भारत में गरीबी का मूल कारण यह भी है कि भारत में शिक्षा प्रणाली दोषपुर्ण है। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यावसायिक शिक्षा का नामों निशान तक नहीं है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों के लिए सरकार द्वारा चलाए जाने वाली याजनाओं की जानकारी का अभाव होना भी गरीबी का कारण है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी निवारण कार्यक्रमों का प्रचार प्रसार नहीं हाने के कारण उन कार्यक्रमों का लाभ उनको नहीं मिल पाता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों का अभाव होना
- कृषि भूमि का आकार कम होना।

रोजगार कार्यक्रमों का क्रियान्वयन

देश का विकास ग्रमीण विकास पर निर्भर है। इस हेतु शासन द्वारा ग्रामीणविकास एवं पिछड़े क्षेत्रों के विकास के लिए अनेक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया जा रहा है। जिनमें से प्रमुख कार्यक्रमों की प्रगति निम्नानुसार है:–

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना

गरीबों के लिए स्वरोजगार योजना 1 अप्रैल 1999 से प्रारम्भ की गई है। इस योजना के दो प्रमुख घटक है।

1. Activity Clusters 2. Group Approach

यह योजना ग्रामीण गरीबो को संगठित कर स्वयं सहायता समूह का निर्माण किया जाता है। योजना के अन्तर्गत 2011–12 तक 53 लाख सहायता समूह का गठन किया जा चुका है, और 170 लाख स्वरोजगारियों को 42130 करोड़ रूपये के कुल परिव्यय से सहायता प्रदान की गई है।

इंदिरा आवास योजना

यह योजना 1985–86 से प्रारम्भ की गई है। बाद में इसे 1996 से अलग कर स्वतंत्र योजना के रूप में लागू की गई है।इस योजना के अन्तर्गत 2005 से 2009 के दौरान 21700 करोड़ रूपये की लागत से 71.76 लाख मकानों का निर्माण किया जा चुका है। वर्ष 2010 में 33.86 लाख मकान, 2011 में 27.15 लाख मकानों तथा 2012 में 23.93 लाख मकानों का

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय धार (म.प्र) भारत

निर्माण किया जा चुका है। इस योजना में 2012-13 में 10000 करोड़ रूपये का आवंटन का प्रावधान किया गया है।

प्रधानमंत्री सड़क योजना

ग्रामीण सड़कों द्वारा गांवों को जोड़ने तथा देश के समग्र विकास हेतु 25 दिसंबर 2000 से प्रधानमंत्री सड़क योजना को प्रारम्भ किया गया।इस योजना में 2010में 20 हजार करोड़ रूपये, 2011 में 24 हज़ार करोड़ रूपये व्यय गये। 2012-13 में 24 करोड़ रूपये व्यय हेतु आवंटित किये गये है। वर्ष 2011-12 में 66859 किमी. सड़कों का निर्माण किया गया है। तथा 2012 तक 42531 बसावटों को सड़क मार्ग तक जोड़ दिया गया।

भारत निर्माण योजना- यह योजना 2005 को प्रारम्भ की गई। इस योजना में विशेषकर छ: क्षेत्रों का विकास किया गया है-

1. **सिंचाई :-**भारत निर्माण के तहत सिंचाई हेतु प्रतिवर्ष 31792.2 करोड़ रूपये खर्च किये गये है। 2005 से 2012 तक इस योजना में कुल 2617992.2 करोड़ रूपये व्यय कर 10.81 मिलियन हेक्टेयर सिंचाई क्षमता का सृजन किया गया।
2. **सडक:-**इस योजना के तहत वर्ष 2005-06 के दौरान ग्रामीण सड़को की कुल लम्बाई 22891 किमी. थी, जो 2009-10 में बढ़कर 54821 किमी.हो गई है। मनरेगा के तहत वर्ष 2010-11 एवं 2012 तक कुल 631783 ग्रामीण सम्पर्कता सड़क कार्यो को पूरा किया गया है।
3. **आवास-**इस योजना के अन्तर्गत 2005-06 से 2009 तक 21720 करोड़ रू की लागत से 71.76 लाख मकानों का निर्माण किया गया है। 2009-10 में 40.52 लाख, 2010-11 में 27.15 लाख तथा 2011-12 में 23.93 लाख घरों का निर्माण किया जा चुका है।
4. **जल आपूर्ति :-**सम्पूर्ण भारत में पेयजल की व्यवस्था हेतु 2009 - 10 में 8000 करोड़ रू., 2010 -11 में 9000 करोड़ रू. 2011 - 12 में 11000 करोड. रू. व्यय किया गया तथा 2012-13 में 14000 करोड़ रूपये आवटित किये गये।
5. **विद्युतीककरण** -योजना के अर्न्तगत वर्ष 2002-07तक 68763 गांवों को बिजली प्रदान की गई है।इसके लिये 5000 करोड़ रूपये व्यय किये गये। 2008 -11 तक 10017 गांवों को बिजली देने हेतु 28000 करोड़ रूपये की सब्सिडी प्रदान की गई है।
6. **दूरसंचार :-** देश के हर गांव को दूरसंचार एवं सूचना प्रोद्यौगिकी से जोड़ने की दिशा में हर सम्भव प्रयास किया जा रहा है देश में 62302 गांवों में से 62088 गांवों को सार्वजनिक टेलिफोन से जोड़ा जा चुका है।। वायरलेस उपभोक्ताओं की संख्या 2012 में 960.90 मिलियन हो गई है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना

यह योजना 2 फरवरी 2005 से प्रारम्भ की गई। इस योजना में प्रत्येक गरीब परिवार को 100 दिन का गारंटीशुदा वेतन रोजगार मुहैया कराया जाता है। 2006-07 में इस योजना हेतु 418432.42 लाख रू. 2007-08 में 121188.28 लाख रू. 2008-09 में 96766.77 लाख रू. 2009-10 में 39100 करोड़ रू. 2010-11 में 42100 करोड़ रू.तथा 2011-12 में 43100 करोड़ रूपये व्यय किये गये तथा लगभग 37.80 करोड़ परिवारों को रोजगार उपलब्ध कराया गया। इस प्रकार देश में 2012 तक कुल 113.45 लाख मानव कार्य दिवस रोजगार का सृजन किया गया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण ग्राम आजीविका मिशन

यह योजना 24 जून 2010 को स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगर योजना का पुर्नगठन कर इसका नया नाम राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन कर दिया है।इस योजना में सत्र 2010-11 एवं 2011-12 में कुल 13500 करोड़ रू. व्यय कर 16 लाख युवकों को कौशल विकास के लिए प्रशिक्षित किया गया।

रोजगार कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में समस्याऐं

ग्रामीण विकास एवं रोजगार कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की प्रमुख समस्याऐं निम्नलिखित है -

1 जागरूकता का अभाव
2 अशिक्षा एवं अज्ञानता
3 भ्रष्टाचार
4 सतत मॉनीटरिंग एवं मूल्यांकन का अभाव
5 मजदूरी का सही समय पर एवं सही हितग्राहियों को भुगतान नहीं होना
6 नियमित ग्रामसभा का आयोजन न होना तथा ग्राम सभा की जानकारी अधिकांश ग्रामीणों नहीं होना
7 ग्रामीण क्षेत्रों में योजनाओं का प्रचार प्रसार नहीं होना
8 आवंटित राशि का पूर्ण उपयोग नहीं होना

गरीबी उन्मूलन हेतु सुझाव

ग्रामीण भारत में गरीबी निवारण के लिए निम्न सुझाव श्रेयस्कर हो सकते है-

- भ्रष्टाचार को जड़ से मिटाना होगा
- हर भारतीय नागरिक, अधिकारी,कर्मचारी, तथा नेताओं को ईमानदारी का परिचय देना चाहिये
- ग्रामीण लोगों में जागरूकता होनी चाहिये। प्रत्येक ग्रामीण को ग्रामीण विकास योजनाओं तथा अपने अधिकारों की जानकारी होना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में मिश्रित एवं सघन कृषि को बढ़ावा देना चाहिए।
- गरीबी निवारण में गरीब लोगों को भी अपनी सक्रिय भागीदारी निभानी चाहिए। पंचायती राज संस्थानों, स्वैच्छिक संगठनों तथा स्वसहायता समूहों की भागीदारी को बढ़ाना भी आवश्यक होगा।
- प्राकृतिक संसाधनों का भरपूर दोहन किया जाना चाहिए।
- समय, धन, भूमि आदि का उचित प्रबंधन किया जाना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पुरानी रीतिरीवाजों, रूढ़िवादी परम्परा आदि समाप्त किया जाना चाहिए।
- ग्रामीण विकास क्रार्यक्रमों का लाभ वास्तविक लाभार्थियों को दिया जाना चाहिए।
- मजदूरी वाले कार्यक्रमों में कार्यरत मजदूरों को सही समय पर मजदूरी का भुगतान किया जाना चाहिए।
- आवंटित राशि का पुर्ण उपयोग किया जाना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पानी, बिजली तथा सड़क की उचित व्यवस्था की जाना चाहिए।
- शासन द्वारा नयी-नयी योजना प्रति वर्ष लागू करने के बजाय पुरानी योजनाओं को एकीकृत कर निर्धारित लक्ष्य प्राप्त किया जाना चाहिए।
- ग्रामीण योजनाओं का प्रचार-प्रसार होना चाहिए

निष्कर्ष

विश्व के सबसे बढ़े लोकतंत्र वाले भारत की समृद्धि एवं खुशहाली का रास्ता गांव की गलियों से होकर ही गुजरता है। चूँकि भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है। जब भारत की आत्मा गांवों में बसती है तो इनका अपने आप में सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सुदृढ़ होना आवश्यक है।निश्चित ही

इस सन्दर्भ में भारत सरकार के प्रयासों की प्रशंसा करनी होगी जो 1951 से लेकर ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना तक ग्रामीण विकास को पूर्ण रूप से समर्पित होकर इसके लिए गम्भीर प्रयास कर रही है जिसके कारण स्वतंत्रता के उपरान्त से भूमण्डलीकृत भारत के ग्रामीण क्षेत्र विकास की और उन्मूख होकर आत्मनिर्भरता को प्राप्त कर रहे है।

सरकार के प्रयासों के कारण से ही स्वतंत्रता के पश्चात् परिवर्तन और विकास की गति में तीव्रता लाने हेतु सहकारिता,सामुदायिक विकास कार्यक्रम, बीस सूत्रीय कार्यक्रम, गरीबी हटाओ, हरित क्रांति, एवं क्रांति लाने में सार्थक प्रयास किये गये। वैश्वीकरण, उदारीकरण, आधुनिकीकरण, बहुराष्ट्रीय कंपनियां, औद्यौगिकीकरण, पंचायती राज संस्थाऐं, विदेशी पूंजी तथा ग्लोबल विलेज की धारणा ग्रामो में विकास एवं परिवर्तन को गति दी है। भारत में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के द्धारा ग्रामीण क्षेत्रों में क्रान्तिकरी परिवर्तन हुआ है। समाज के सभी वर्गो में विशेषकर पिछड़े वर्गो में अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है जिससे वह सतत ऊपर उठने का प्रयास कर रहे है। विभिन्न कुप्रथाओं के उन्मूलन से ग्रमीण समाज की संरचना एवं कार्यप्रणाली में परिवर्तन आया है। नवीनीकरण एवं औद्यौगीकरण के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के जीवन स्तर में सुधार हुआ है । जातिगत बंधन शिथिल हुए है असमानता में कमी आई।

सरकारी पहल के कारण विकासोन्मूख अर्थव्यवस्था ने कृषि के परंपरागत साधनों के स्थान पर नये साधनों को बढ़ावा दिया जा रहा है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में विशेषकर मनरेगा तथा भारत निर्माण जैसे कार्यक्रमों भारतीय ग्रमीणों की जीवन दशा ही बदल दी है।ग्रामीण लोगों की क्रयशक्ति बढ़ी, ग्रामीण क्षेत्रों में मांग बढ़ी, उत्पादन बढ़ा, इस प्रकार ग्रामीण विकास कार्यक्रम लागू करने से ग्रामीण क्षेत्रों में आमूलचूल परिवर्तन हो रहे है। ग्रामीण क्षेत्र अब ग्रामीण नहीं रहे हैं शहरों में तब्दील हो रहे है।

इस प्रकार ग्रामीणों में हर प्रकार से प्रतिस्पर्धा की उत्सुकता बढ़ी है। अत: ग्रामीण विकास में सरकार का सतत प्रयास रहा हैं। किन्तु यह केवल एक पक्ष हैं इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि जो विकास एवं प्रगति के दावों को झूठला रहे हैं।अर्थव्यवस्था की संरचना में परिवर्तन आया है क्योंकि इसमें प्राथमिक क्षेत्र की भूमिका घटी हैं और तृतीयक क्षेत्र का महत्व बढ़ा हैं। यही कारण है कि सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्सा घटकर 18 प्रतिशत रह गया हैं।भूमण्डलीकरण के प्रभाव से देश के परम्परागत लधु एवं कुटीर उद्यौगों का ह्रास हुआ है।विदेशों से आयातित सस्ती वस्तुओं ने घरेलू उद्योगों की कमर तोड़ दी है। गांव में आज भी अशिक्षा, गरीबी, बिजली, पानी, सड़क जैसी मूलभूत समस्याओं से ग्रसित है।

आज भी विकास एवं खुशहाल की दौड़ में जनसंख्या का बहुत बढ़ा हिस्सा काफी है और उन्हें भी विकास का लाभ मिलना चाहिए । यदि निचला तबका सबल नहीं होगा तो भारत जैसे कृषि प्रधान देश का सर्वांगीण विकास संभव नहीं है। आज विश्व की आर्थिक महाशक्ति के रूप में उभरते नये भारत के विकास के लिए केवल योजनाए एवं उद्घोषणाएं ही नहीं बल्कि नये संकल्प भी अपरिहार्य है जिससे गांव – शहर में विषमता कम होने के साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों के सामाजिक – आर्थिक विकास के लक्ष्य बेहतर ढंग से एवं शीघ्रता से प्राप्त किये जा सके जो अद्यतन आर्थिक विकास का मुख्य लक्ष्य भी है।

अंत में कहा जा सकता है कि देश का आर्थिक विकास तभी संभव है जब तक देश में निवासरत सम्पूर्ण जनसंख्या को सम्मानजनक जीवन जीने का माहौल प्राप्त हो। गरीब वर्गो को दो समय का पुख्ता इंतजाम हो, इन्हें रहने के लिए छत तथा पहनने के लिए वस्त्र मिल जाये तो निश्चित रूप से देश स्वत: उन्नति करेगा। इसके लिए शासकीय योजनाओं का सही क्रियान्वयन करना तथा योजनाओं में जनभागीदारी सुनिश्चित हों।

सन्दर्भ सूची :–

1. मोहनदास करमचन्द्रगाँधी (1969), ''मेरे सपनो का भारत'', सर्व सेवा संघ वारणासी, पृ. क्र. 15।
2. जवाहरलाल नेहरू (1986), ''विश्व इतिहास की झलक'', सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली, पृ. क्र. 589।
3. मिश्र एवं पूरी, (2007), '' भारतीय अर्थव्यवस्था '', हिमालया पब्लिशिंग हाउस ,दिल्ली, पृ. क्र. 171।
4. प्रतियोगिता दर्पण, (2013), विशेषांक, भारतीय अर्थव्यवस्था, उपकार प्रकाशन, दिल्ली।
5. योजना ,(मासिक पत्रिका), प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण विभाग, भारत सरकार, दिल्ली।
6. दत्त एवं सुन्दरम (2011), भारतीय अर्थव्यवस्था , एस. चन्द एण्ड कम्पनी दिल्ली।
7. Government of India , planning commission seventh five year plan New delhi, 1986,p.50
8. अमर्त्य सेन, पावर्टी एण्ड इकोनोमिक डेवेलोपमेंट ,नई दिल्ली पृ. 246।

****

भारतीय संदर्भ में सूचना के अधिकार की प्रासंगिकता

डॉ. सीताराम गोले *

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 के अन्तर्गत सूचना के अधिकार को मौलिक अधिकार माना गया है और उन सभी संस्थाओं को इसमें लोक प्राधिकारी का दर्जा दिया गया हैं जो जनता के लिये या नागरिक के लिये किसी तरह की सार्वजनिक गतिविधियां संचालित करते हैं और उनकी समस्त कार्यवाही पारदर्शी रखे जाने योग्य, संविधान के अनुच्छेद 12 के अन्तर्गत जो संस्थायें राज्य की परिभाषा में आती हैं केवल उन संस्थाओं तक ही यह अधिनियम प्रयोज्य नहीं हैं, उसका क्षेत्र इससे भी अधिक व्यापक है।[1] अर्थात् सूचना प्राप्त करना आम जनता का एक मौलिक अधिकार माना गया है। इसका मूल कारण यह है कि सूचना के अधिकार के कारण प्रत्येक लोक प्राधिकारी के कार्यप्रणाली में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व को बढ़ाया जा सके।

लोकप्राधिकारीगण के अधीन जो भी सूचनायें हैं उन तक पहुंच सुनिश्चित करने के उद्देश्य से नागरिकों के लिये सूचना के अधिकार का प्रशासन उल्लेखित करने के लियें केन्द्रीय सूचना व राज्य सूचना आयोग गठित किये गये ताकि आम जनमानस को सूचनाएं प्राप्त करने में दिक्कत का सामना न करना पड़े। भारतीय लोकतंत्र में सूचना का अधिकार हर विभाग में कार्य की पारदर्शिता की अपेक्षा करना है। साथ ही भ्रष्टाचार पर नकेल कसने के लिये और सरकार तथा उसके परिकारणों को शासित के प्रति उत्तरदायी बनाने के लिए महत्वपूर्ण है। वास्तविक व्यवहार में सूचना के प्रकरण से लोकहित सरकारों के दक्ष प्रचालन सीमित राज्य वित्तीय संसाधनो के अधिनियम उपयोग और संवेदनशील सूचना की गोपनीयता को बनाये रखना की जरूरी है जो कभी-कभी विरोधाभास पूर्ण भी लगती हैं। परन्तु इन सबके बावजूद सूचना उपलब्ध करना प्रत्येक लोक प्राधिकारी का दायित्व है।

भारतीय परिप्रेक्ष में सूचना के प्राप्ति के अधिकार की आवश्यकता समय-समय पर महसूस की जाती रही और अन्तत: भारत में भी विदेशी राष्ट्रों 'स्वीडन 1766, अमेरिका 1966, रूस 1978, कनाड़ा 1982, आस्ट्रेलिया 1982, डेनमार्क 1985, ब्रिटेन 2001, इटली 1990, आयरलैण्ड 1998, पाकिस्तान 2002, जापान-जर्मनी 2005 तथा चीन 2008' की तर्ज पर भारत के नागरिकों को सूचनाएं प्राप्त करने के लिये एक कानून बनाने की मंशा राजनीतिक पटल पर अब हकीकत रंग लेती जा रही थी। मार्च 2005 में Right to information Act को भारतीय सांसद में प्रस्तुत किया गया था। लोकसभा में इस अधिनियम को 11 मई 2005 को और राज्य सभा में अगले दिन 12 मई को पारित कर दिया गया। भारत के महामहिम डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम नें इस विधेयक पर अपनी अंतिम मोहर 12 जून 2005 को लगाकर इस विधेयक को स्वीकृति प्रदान कर दी।

इस अधिनियम का विस्तार 12 अक्टूबर 2005 से 'जम्मू कश्मीर को छोड़कर' जम्मू कश्मीर राज्य के निवासी को राज्य सरकार से जानकारी प्राप्त किए जाने हेतु कोई प्रभावकारी स्त्रोत एवं साधन उपलब्ध नहीं है। यद्यपि जम्मू और कश्मीर राज्य के लिएं सन् 2004 में अधिनियम पारित किया गया। जम्मू और कश्मीर राज्य के मुख्यमंत्री को यह परामर्श दिया गया कि यह जम्मू और कश्मीर राज्य सूचना का अधिकार अधिनियम 2004 को इस तरह संशोधित करें जिससे कि वह सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 से संवैधानिक एवं विधि-अनुकूलता और पारस्परिकता के अधीन लाया जा सकें।

इस प्रकार यह अधिनियम सम्पूर्ण भारत पर लागू हो गया है। 2005 अक्टूबर के अधिनियम की धारा 4 की उपधारा '1' धारा 5 की उपधाराएं '1' और '2' धाराएं 12,13,15,16,24,27 और 28 के उपबंध तुरन्त प्रभावी होंगे और इस अधिनियम के शेष उपबंध इसके अधिनियम के 120 दिन को प्रवृत होंगे।[2] सम्पूर्ण भारत में सूचना के कानून के पूर्व राज्यों में सूचना का अधिकार कानून था। जैसे मध्य प्रदेश 2003, तमिलनाडु 1997, गोवा 1997, कर्नाटक 2000, दिल्ली 2001, असम 2002 और 2005 में सम्पूर्ण भारत में यह कानून लागू किया गया।

1. सूचना का अधिकार- सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 की धारा 2 'F' के अन्तर्गत सूचना शब्द को व्यापक रूप में परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। सूचना के अन्तर्गत अभिलेख, दस्तावेज, ई मैल, राय, धारणा, प्रेस के समाचार पत्र, परिपत्र, आदेश, लॉग बुक, अनुबंध, प्रतिवेदन, कागज, नमूने प्रदर्श, कम्प्यूटर या अन्य ऐसे विद्युत चलित उपकरणों द्वारा तैयार किये गएं समस्त अंक गणितीय विवरण सम्मिलित हैं। सूचना से किसी निर्माण कार्य तथा विद्युत संरचना कार्य में कोई सामग्री प्रयुक्त की गई इनकी भी सूचना प्राप्त की जा सकती है। यदि किसी लोक प्राधिकारी के अन्तर्गत कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी द्वारा विचार और टिप्पणियां अभिलिखित हो तो वह सूचना में शामिल होती हैं। विडियोग्राफी को भी सूचना में शामिल किया गया है। संसद या राज्य विधानसभा को जिस मामले में सामान्यत: सूचना दी जाती है, वह सूचना सामान्यजन को प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार है।

अधिनियम की धारा 4 के अन्तर्गत प्रत्येक लोक अधिकारी द्वारा सभी अभिलेख सूचीबद्ध किये जाकर अच्छी तरह रखे जाये। इससे नागरिकों को सूचना के अधिकार की अपेक्षित जानकारी दी जा सके और उन सूचनाओं को कम्प्यूटरीकृत किया जा सके। ऐसा किया जाना लोकहित की दृष्टि से उचित हैं। लोक प्राधिकारी द्वारा ऐसी जानकारियों का प्रकाशन भी कराया जा सकता है।[3]

2. सूचना का अधिकार के प्रमुख प्रावधान- इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए सभी नागरिकों को सूचना पाने का अधिकार होगा। 12 अक्टूबर 2005 को जनअधिनियम अस्तित्व में आया। इस समय इस अधिनियम में Article जो 6 अध्याय में विभाजित था जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैं। प्रथम अध्याय में नाम एवं संक्षिप्तता का विस्तार तथा प्रारंभ एवं परिभाषा के साथ-साथ अधिनियम की धारा 2 में सूचना कैसे प्राप्त करें एवं अधिनियम के स्वरूप का उल्लेख किया गया है। अध्याय 2 में सूचना का अधिकार और लोक प्राधिकारी में शक्तियों व बाध्यताएं दोनों का वर्णन किया गया है। इसमें लोक प्राधिकारी तथा विभागों का उल्लेख तथा सम्बंधित प्राधिकारी का वर्णन किया गया है। धारा 4 तथा उसकी उपधारा '1' में लोक प्राधिकारी की बाध्यता को दर्शाया गया है। सामान्य लोगों के लिये किसी सूचना को प्राप्त करने के तरीके, आवेदन का प्रावधान अनुच्छेद 6 में किया गया है जो लोग गरीब है तथा गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं तो उनको शुल्क से छूट है। साथ ही निश्चित समय की समाप्ति के पश्चात् पुन: सूचना मांगी जाने पर शुल्क से भी छूट है। अध्याय 3 में केन्द्रीय सूचना आयोग के गठन की चर्चा की गई हैं। प्रेस विज्ञप्ति 01/07/2005 आई, आर, दिनांकित 13/10/2005 धारा 12 के अनुसार सूचना अधिकार अधिनियम '2005 का 22' में केन्द्रीय सरकार के द्वारा एक केन्द्रीय सूचना आयोग का गठन किया था। 4 अध्याय 4 अनुच्छेद 15 में राज्य सूचना

* 10, मौलाना आजाद मार्ग, गली नं. 1, बड़वानी (म.प्र.) भारत

आयोग के गठन तथा अध्याय 5 अनुच्छेद 18 में राज्य सूचना तथा केन्द्रीय सूचना आयोग की शक्ति का वर्णन किया गया है। अध्याय 6 में प्रकीर्ण का वर्णन किया गया है। कुल मिलाकर आसानी से इन नियमों के आधार पर निश्चित दायरे में सूचनाओं को प्राप्त किया जा सकता है।

भारतीय संदर्भ में जितने व्यवस्थित रूप से सूचना के अधिकार को कानूनी रूप दिया उतना कहीं किसी राष्ट्र' में देखने को नहीं मिलता है। भारतीय संदर्भ में इसकी आवश्यकता के कई कारण रहे- सर्वप्रथम तो यह कि 2 अप्रैल 1923 में ब्रिटिश शासन में बने शसकीय गोपनीयता कानून के प्रभाव को कम करने के लिये सूचना का अधिकार अस्तित्व में आया। प्रशासनिक अधिकारी तथा सरकारें, दोनों अपने स्तर पर शासकीय गोपनीयता के आधार पर सही तथ्यों को जनता तक नहीं पहुंचने देते थे परन्तु बाद में 1923 के इस बज में संशोधन कर अब वह सारी सूचनाएं प्रदान की जा सकेगी जो भारत की एकता व अखंडता को नुकसान न पहुंचाएं, ऐसी समस्त सूचनाएं नागरिकों को प्रदान की जाएंगी।

सूचना का अधिकार प्रयोग करने से शासकीय योजनाओं, नीतियों तथा उनके आधार पर जो कार्यान्वित हो रहे हैं उन पर कितनी लागत तथा खर्च किया गया और कुल कितना आवंटन हुआ है इन सारी बातों की सही-सही जानकारी सूचना को अधिकार से प्राप्त हो रही हैं। इससे भ्रष्टाचार का पता चल रहा हैं। भारत में इस अधिकार की मांग का मूल कारण यही था कि देश में व्यापक पैमाने पर भ्रष्टाचार हो रहा है। जिस पर लगाम लगाना जरूरी हैं।

केन्द्र शासन द्वारा जो योजनाएं बनायी गई- जैसे महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, मध्यान्ह भोजन, गांव की बेटी योजना, प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना आदि में जो भयंकर धांधलियां हुई उनको रोकने में भी सूचना का अधिकार आज काम आ रहा हैं।

सूचना के अधिकार के कारण हमारी विदेश नीति, विदेश व्यापार संधि तथा समझौते में भी पारदर्शिता आई है। अन्तराष्ट्रीय स्तर पर विदेशी समझौते में जो भ्रष्टाचार हुआ उनका भी पर्दाफाश सूचना के अधिकार के द्वारा हो पाया। राष्ट्र' में केन्द्रीय सरकार के द्वारा आये दिन किसी न किसी प्रकार के घोटाले होते रहें जिनकी भनक लोगों को लगने भी नहीं दी जाती थी परन्तु आज सूचना का अधिकार होने के कारण देश के घोटाले आम नागरिकों के सामने आये। सरकारें अपने पद तथा शक्ति के आधार पर अपने पारिवारिक लोगों को लाभ पहुंचाने का कार्य करते हैं। उनका भी पर्दाफाश सूचना का अधिकार से हुआ। हमारे देश में हर व्यक्ति में एक होड़ लग गई है कम मेहनत में और कम समय में जल्द विकास करना, इस महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए चालाक व जुगाडू लोगों के द्वारा गरीब अशिक्षित लोगों के हक को छिनना प्रारंभ किया जो पहले चोरी छीपे होता था परंतु आज कल खुलकर हो रहा है इसलिएं गरीब और अशिक्षित लोगों के अधिकारों के लिएं तथा उनके हक के लिये समाज के बुद्धिजीवी तथा सामाजिक संगठनों के द्वारा समय-समय पर सूचना के अधिकार के निर्माण की मांग के परिणामस्वरूप केन्द्र द्वारा एक सरल अधिनियम लागू करना पड़ा।

इस अधिकार के बनने से प्रत्येक विभाग के कर्मचारी तथा अधिकारियों द्वारा आकड़ों में हेर फेर कर दिये जाते थे। साथ ही वह रिकार्ड भी व्यवस्थित नहीं रख पाते थे। सूचना के अधिकार कानून के कारण आज राजनीतिक दलों का दबाव थोडा कम नजर आता है। अन्यथा शासकीय अधिकारियों व कर्मचारियों पर राजनीतिक दलों का अधिक प्रभाव देखा जाता रहा है और सम्पूर्ण प्रशासन उन्हीं के इर्द गिर्द घूमता नजर आता था परन्तु इस कानून के बनने के बाद राजनीतिक दलों का दबाव थोड़ा कम दिखाई देता है।

राजनीतिक दलों के द्वारा चुनाव के समय असीमित मात्रा में धन, बल के प्रयोग को कम करने के लिए राजनीतिक दलों को भी सूचना के अधिकार के दायरे में लाने का प्रयास किया गया। जिसके लिए राजनीतिक दलों द्वारा लोक प्राधिकारीगण के समक्ष आयकर विवरणी प्रस्तुत करने और राजनीतिक दलों को पेन नम्बर प्रदान किये गये। जो अधिनियम की धारा 8 1d,e,g,h, j के अन्तर्गत सूचना के अधिकार से अभियुक्त रखे गये है। उक्त जानकारी प्रार्थी को नहीं दी जा सकती। राजनीतिक दलों द्वारा अवैध एवं आपराधिक तरीकों से काला धन एकत्रित किया जाना समूचे लोकतंत्र के लिये घातक एवंआमजन के लिये विनाशकारी हो सकता है तथा निर्वाचन की शुद्धता को बरकरार रखने के लिये राजनीतिक दलों तथा प्रत्याशियों के समस्त व्यय विवरण लिया जाना तथा उसको सार्वजनिक करना आवश्यक माना गया। परिणाम राजनीतिक दल भी अब सूचना की अधिकार के दायरे में शामिल हो गये। [5]

इस प्रकार समस्त बातों से यही स्पष्ट है कि सूचना का अधिकार कानून बनने के कारण हमारे देश में से भ्रष्टाचारिता में कमी, काम चोरी में कमी, पद-कर्तव्य निष्ठा तथा जिम्मेदारी का बोध आदि- बातों का विकास होगा तो हम गलत सोचते हैं। सूचना का अधिकार कानून को बनने में लगभग एक दशक होने को आया और जिन उद्देश्य के लिये हमने इन कानून को बनाया था। वह आज भी पूरे नहीं हो पा रहा है। आज भ्रष्टाचार पूर्व की अपेक्षा तीव्र गति से बढ़ा है। 2005-06 में जितना भ्रष्ट हमारा देश नहीं था। उसमें कई सौ गुण भ्रष्ट देश आज हमारा हो गया। क्लर्क तथा चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के पास ही करोड़ों की सम्पत्ति मिल रही तो आला अधिकारियों तथा राजनेताओं की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती हैं। इससे तो यही पता लगता है की सूचना का अधिकार लचर बेबस है। इस तरह देखा जाये तो भारत का एक भी शासकीय विभाग ऐसा नहीं होगा जहां खुलेआम भ्रष्टाचार तथा रिश्वतखोरी न होती है। फर्जीवाड़े की संख्या भी कम नहीं है। सूचना के अधिकार के तहत कई फर्जिवाड़ों का भांडाफोड़ हो रहा हैं तब भी इसे सम्पूर्णता नहीं मानी जा सकती।

सूचना का अधिकार जहां सफल हुआ वही उसमें कुछ कमी है जिसके कारण उसका पूर्ण रूपेण पालन नहीं हो पा रहा हैं। पहली बात तो अशिक्षित लोगों यह ज्ञान नहीं है की यह सूचना का अधिकार हैं क्या ? दूसरी बात यह कि आम जनता यदि किसी सूचना की मांग लोकप्राधिकारी से करती हैं, तो उसका जवाब संतुष्टिपूर्ण नहीं होता हैं या गोलमोल जवाब दे दिया जाता है। अक्सर छोटे क्षेत्रों में इसी तरह की घटनाएं देखने को मिलती हैं। परिणाम लोगों का मन उठ जाता हैं। सही दिशा निर्देश भी आमजन को नहीं मिल पाता है। इस कारण भी सही तरीके से सूचना के अधिकार का उपयोग नहीं हो पा रहा है। सूचना के अधिकार को जन-जन तक पहुंचाने का एक ही तरीका है कि उसकी उपयोगिता की जानकारी तथा महत्व अशिक्षित तथा ग्रामीणजनों को नुक्कड़ नाटक के माध्यम से दी जायें और सभी लोगो में इस अधिकार के प्रति चेतना व जाग्रति लाई जाए और जब सब लोग इस अधिकार की महत्ता को जान जायेंगे उस दिन किसी को भी अपने अधिकार व हक को प्राप्त करने के लिये तरसना नहीं पड़ेगा तभी इस कानून की प्रासंगिकता पूर्ण होगी।

संदर्भ

1. बलवन्तसिंह डॉगी- संजय चराटे, सूचना का अधिकार मार्गदर्शिका, पृ. 480 चराटे पब्लिशिंग हाऊस सी-3 हाऊसिंग बोर्ड चिमनबाग चौराहा जेल रोड़ इन्दौर म.प्र. 2010
2. डी. के. नागले- सूचना का अधिकार 2005 'हिन्दी अनुवाद' खैत्रपाल लॉ पब्लिकेशन, 69 एम.जी. रोड़ इन्दौर, 2006.
3. बलवन्तसिंह डॉगी- संजय चराटे, सूचना का अधिकार मार्गदर्शिका, चराटे पब्लिशिंग हाऊस सी-3हाऊसिंग बोर्ड चिमनबाग चौराहा जेल रोड़ इन्दौर म.प्र. 2010
4. डी. के. नागले- सूचना का अधिकार 2005 'हिन्दी अनुवाद', पृ. 65 खैत्रपाल लॉ पब्लिकेशन, 69 एम.जी.रोड़ इन्दौर, 2006.
5. बलवन्तसिंह डॉगी- संजय चराटे, सूचना का अधिकार मार्गदर्शिका, पृ.19 चराटे पब्लिशिंग हाऊस सी-3 हाऊसिंग बोर्ड चिमनबाग चौराहा जेल रोड़ इन्दौर म.प्र. 2010

आधुनिक भोगवादी सभ्यता : जैव विविधता के विनाश की पूर्व घोषणा

आभा आनंद*

अनन्त ब्रह्मांड का जो रंचमात्र भाग मानव ने पकड़ा है, उसमें धरती के सिवा किसी और ग्रह पर जीवन नहीं है। सौर-परिवार में मात्र पृथ्वी पर ही जीवन के नाना रूप, लघु से लघुत्तर और वृहत् से वृहत्तर - दृष्टिगोचर होते हैं। इस प्रकार हम पृथ्वी को एकमात्र सजीव ग्रह भी कह सकते हैं। किसी अन्य ग्रह पर भी यह विशिष्टता हो सकती है, पर अभी तक हमें इसका पूरा ज्ञान नहीं है। वैसे आधुनिक अनुसंधान ने मंगल ग्रह पर भी जीवन के कुछ चिह्नों को रेखांकित किया है, पर अभी स्पष्ट जानकारी अपेक्षित है।पृथ्वी पर जन्तु और वनस्पति का हमेशा एक पारस्परिक सामंजस्य रहा है। सहज सामंजस्य पृथ्वी का एक स्वाभाविक गुण है। प्रकृति में जो कुछ भी विद्यमान व दृश्यमान है, उसमें मनुष्य सर्वोत्कृष्ट कृति है। मानव प्रकृति का एक अनुपम-अनमोल अंग है। इसीलिए प्रकृति के सहज संतुलन में जब किसी प्रकार का बिगाड़ होता है तो उसकी सर्वाधिक जिम्मेदारी मनुष्य समाज की होती है। उसी का दायित्व बन जाता है कि बिगाड़ से उत्पन्न विसंगतियों को समाप्त करे और फिर से उसे पटरी पर लाये। डॉ. ब्रह्मदत्त त्रिपाठी के अनुसार, ''आज से करीब पांच अरब वर्ष पहले बनी पृथ्वी का कुल क्षेत्रफल 510×10^6 वर्ग किमी. है, जिसका 149×10^6 वर्ग किमी. स्थल और 361×10^6 वर्ग किमी. भाग जल से घिरा हुआ है। पृथ्वी के ऊपर 80,000 किमी. तक वायुमण्डल की सीमा है, जिसमें वायुमण्डल का 99 प्रतिशत भाग सिर्फ 30 किमी. तक ही है और 80 प्रतिशत भाग तो सिर्फ 10-15 किमी. की ऊँचाई तक ही सीमित है। इस भाग को ट्रोपोस्फीयर कहते हैं, जो जीव-मण्डल की ऊपरी सीमा है।''[1]

जबकि बायोस्फीयर या जैव-मण्डल पृथ्वी के चारों तरफ लिपटा विभिन्न गैसों का एक ऐसा आवरण है जिसके कारण पृथ्वी पर जीवन सुरक्षित रहता है। इसमें हजारों तरह के पेड़-पौधे, पक्षी, जीव-जन्तु, मनुष्य, जल, नदियाँ, झीलें, पर्वत और वह प्रत्येक जीव आ जाती है, जिसकी मानव ने अपने ज्ञान-विज्ञान के बल पर पहचान कर ली है। इसी बायोस्पफीयर में प्रकृति के समस्त जीवित और निर्जीव, भौतिक और अभौतिक वस्तुओं और पदार्थों के बीच एक आदर्श संतुलन स्थापित रहता है। हम इसे पारिस्थितिकीय संतुलन की संज्ञा देते हैं। हमारे लिए बायोस्फीयर का संतुलन महत्व का है। धरती पर जीवनचक्र के सुचारू रूप से चलते रहने के लिए यह जरूरी है कि पर्यावरण में संतुलन बना रहे। जरा सी कमी या बढ़ोतरी हुई नहीं कि वनस्पति जगत और प्राणी जगत के लिए खतरे की घण्टी बज उठती है।''[2]

जब हम मानते हैं कि जैविक संसार में मनुष्य सबसे उत्कृष्ट, सक्षम और चेतनशील प्राणी है, तो उससे यह अपेक्षा स्वाभाविक है कि वह ऐसे कृत्य करे जो जीवन और जगत को संरक्षण और पोषण दे सके। जब जीवन और जगत को पोषण देने की बात आती है तो हमें यह देखना होगा कि इस धरती पर जो कुछ भी विद्यमान या दृश्यमान है वह पोषित हो, पुष्ट हो । इस पर होने वाले किसी भी प्रकार की आन्तरिक या बाह्य आघात का प्रतिकार मानव समाज का दायित्व बन जाता है। यह दायित्व भी चेतनशील मनुष्य का ही है कि वह यह समझे कि जो उससे कम समर्थ है उसे भी जीने का हक है और यह हक उसे प्रकृति से सहज ही प्राप्त है। अत: उसकी रक्षा हो और यह रक्षा मनुष्य अपने जागृत विवेक के माधयम से कर सकता है। पशु-पक्षी और वनस्पतियां, पेड़-पौधे मनुष्य से कम चेतनशील जीव है। उनका विनाश यदि मनुष्य अपने लिए करता है तो यह मानना होगा कि वह वास्तविक अर्थ में न चेतनशील है और न विवेकशील। इस प्रकार उसे दायित्वबोध वाला भी नहीं कहा जा सकता।

प्रकृति की विविधता से लेकर भाषा, वेश-भूषा, धर्म और सामाजिक परम्पराएँ सर्वत्र भिन्न-भिन्न रही हैं। हमारे सामाजिक जीवन का भी सही और वास्तविक पैमाना यही है कि उन सबके बीच सुव्यवस्था स्थापित हो। यह काम भी मनुष्य के हाथों में ही रहा है। सम्पूर्ण प्राणी-जगत अथवा प्रकृति में ऐसी व्यवस्था हो कि जैव विविधता को विनाश की ओर खदेड़े जाने की चाही-अनचाही अथवा जानी-अनजानी प्रवृत्ति पर नियंत्रण लग सके। यह कैसे संभव हो सकेगा - आज के समाज के लिए एक चिन्तनीय सवाल है। प्रसिद्ध जीव विज्ञानी डॉ. के.एस. विलग्रामी की स्पष्ट मान्यता है कि ''इकोलॉजी और विकास में संतुलन जरूरी है''[3] और कि ''किसी भी व्यवस्था में जितनी विविधताएँ होंगी वह उतनी ही टिकाऊ होगी।''[4]

अभी भी जब हम 'वैश्विक संकट' की बात करते हैं तो हमारी एक सीमा हो जाती है। हमारे विश्व की अवधारणा में मानव और मानव ही मुख्य हो जाता है। हम शायद भूल जाते हैं कि यह विश्व केवल मानव विश्व नहीं है, इसमें मानव के साथ मानवेत्तर प्राणी, पशु-पक्षी और वनस्पति एवं उद्भिज तथा पृथ्वी, वायु, प्रकाश और आकाश सभी का समायोजन है। दूसरे शब्दों में जड़, जीव, चेतन और आत्म चेतन के चतुर्व्यूह से विश्व का निर्माण हुआ है। इन चारों के बीच पारिस्थितिक संतुलन आवश्यक है। विश्व के संरक्षण एवं विकास में मानव, पशु-पक्षी, वनस्पति और भौतिक पदार्थों को हम अलग-अलग करके सोच भी नहीं सकते। ''माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या:''[5] ''सर्वखलु इदं ब्रह्मं'' ''ईशावास्यमिदं सर्वम्''[6] आदि श्रुति वाक्य इसी सर्वव्यापकता के मंत्र हैं। मानव स्वार्थ पर आधारित पाश्चात्य भोगवाद की संस्कृति ने इस पारिस्थितिकी संतुलन को इतना बिगाड़ दिया है कि पर्यावरण का दु:सह संकट सबसे भयंकर वैश्विक संकट के रूप में प्रस्तुत हुआ है, जिसके समक्ष परमाणु युद्ध का संकट अत्यंत क्षुद्र नजर आ रहा है। इसलिए हमने विकृत, संकीर्ण और स्वार्थयुक्त बुद्धि से जिस विश्व का निर्माण किया उसमें मानव के अस्तित्व का ही नहीं अपितु प्राणीमात्र तथा संपूर्ण जैव जगत के विनाश की चेतावनी है।

इसका दूसरा कोई विकल्प नहीं है कि यदि हम जीना चाहते हैं तो ''प्रकृति की ओर लौटें' प्रकृति हमारी माता है, उसी की गोद में हम ठीक से पल सकते हैं। माता को अपंग और विखंडित कर जीवन की कामना ही संभव नहीं है।''[7] आज यदि विज्ञान और प्रौद्योगिकी को मनुष्य की तुलना में अधिक महत्व देने की बात कही जाती है तो यह माना जाना चाहिए कि संपूर्ण जैव जगत के साथ एक तरह से पाश्विकता और अतिचार की बात को बल दिया जा रहा है और इसके मूल में पाश्चात्य आधुनिक भोगवादी सभ्यता ही है। आज ''दुनिया की कुल आबादी का 5.6 प्रतिशत दुनिया के 40 प्रतिशत प्राकृतिक संसाधनों का भोग कर रहा है।''[8] जो संपूर्ण जैव-जगत के विनाश की चेतावनी ही है।

प्रो. ई.एफ. शुमाकर ने ठीक ही कहा है- ''अपनी वैज्ञानिक व तकनीकी शक्ति के मुखरित होने के उत्साह में आधुनिक मानव ने उत्पादन की ऐसी प्रणाली का निर्माण कर लिया है जो प्रकृति के साथ अनाचार करती है और ऐसे समाज की रचना कर रही है जो मनुष्य को विकृत करती है।''[9] वस्तुत: प्रकृति मनुष्य की जननी है, उसका हित प्रकृति के साथ समरस होने में है, सहजीवन में है। उच्छृंखल विज्ञान और हिंसक प्रौद्योगिकी के जरिए भोगवादी सभ्यता में डूबे मानवों ने प्रकृति पर आधिपत्य जमाने की सोची। उसके विध्वंसक दुष्परिणाम आज सामने है; पर्यावरण में प्रदूषण का जहर घुलता जा रहा है, प्राकृतिक असंतुलन बढ़ रहा है, समुचा परिवेश दमघोंटू हो चला है और पूरा जैव-जगत विनाश के कगार पर खड़ा हो गया है।

भोगवादी व औद्योगिक मानव ने प्रकृति की सौम्यता, सदाशयता और सुन्दरता के साथ खिलवाड़ किया है। इस प्रकार धरती और प्रकृति के

* सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़-ब्यावरा (म.प्र.) भारत

दरिद्रीकरण की प्रक्रिया औद्योगीकरण के साथ-साथ चल रही है। प्रो. ई.एफ. शुमाकर ने चेतावनी भरे शब्दों में कहा है कि - ''पूँजी का बहुत बड़ा अंश तो प्रकृति का दिया हुआ है, मनुष्य-निर्मित नहीं है। आश्चर्य का विषय है कि हम इस बात के महत्व को नहीं समझते। यह प्रगति प्रदत्त पूँजी इतनी तेजी के साथ समाप्त हो रही है कि यह चिंता का विषय बन गई है।''[10] इवान इलिच के अनुसार ''जो लोग प्रकृति के सान्निाध्य में रहते हैं, जो प्रकृति के साथ समरस होकर जीते हैं, मैं समझता हूँ कि आज के युग का सबसे सभ्य व्यक्ति वह है जो प्रकृति के साथ समरस होकर प्रकृति के निकट से निकट रहकर जीवन जीता है।'' गांधी की दृष्टि में - ''यह पृथ्वी अपने प्रत्येक निवासी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए यथेष्ट साधन उपलब्ध करती है। लेकिन एक भी व्यक्ति के लोभ को पूरा करने की शक्ति पृथ्वी में नहीं है।''[11]

कोठारी (1980) ने कहा है कि, ''नाभिकीय युद्धास्त्र, मानव की वासनाएं, घृणा तथा शांति एक साथ नहीं चल सकती। विज्ञान और तकनीकी के शोध-कार्य पर आज जो खर्च हो रहा है उसका 60 प्रतिशत अथवा 400 अरब डॉलर युद्ध की तैयारी में खप रहा है। जबकि 70 करोड़ विश्व की जनता नंगी और भूखी है।''[12] स्टॉक होम स्थित अन्तर्देशीय शांति अन्वेषण संस्थान 1974 'वार्षिक-पुस्तिका' के अनुसार ''संसार के युद्धास्त्रों के भण्डार में एक करोड़ हिरोशिमा विधवंसक नमूने की अणुबमों की क्षमता आ पहुंची है, जिससे पृथ्वी पर नाभिकीय विकिरण द्धारा अनेक बार समस्त जीवों का नाश हो सकता है।''[13] इसीलिए तो गांधी को कहना पड़ा कि, ''मेरा नीतिशास्त्र मुझे न केवल इस बात का दावा करने की अनुमति देता है, अपितु आदेश देता है कि मैं बन्दर ही नहीं बल्कि घोड़े और भेंड़, शेर और तेन्दुए, सांप और बिच्छू तक को अपना बन्धु मानूं। इन प्राणियों के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वो भी मेरे प्रति ऐसा भी भाव रखें।''[14] इतना ही नहीं गांधी ने आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति पर सवालिया निशान लगाते हुए कहा है कि, ''मैं आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति के विरूद्ध नहीं हूँ। बल्कि पश्चिम की वैज्ञानिक भावना को मैं प्रशंसा की दृष्टि से देखता हूँ; इस प्रशंसा में अगर कोई हिचक है तो सिर्फ यह कि पश्चिम का वैज्ञानिक ईश्वर की निम्नतर सृष्टि की तनिक भी चिन्ता नहीं करता। मैं अपने आत्मा की पूरी शक्ति के साथ जीवच्छेदन से घृणा करता हूँ। मैं विज्ञान और तथाकथित मानवता के नाम पर की जाने वाली निर्दोष जीवों की अक्षम्य हत्या को घृणा की दृष्टि से देखता हूँ और निर्दोष रक्त से रंजित तमाम वैज्ञानिक खोजों को तनिक भी महत्वपूर्ण नहीं मानता।

यदि रक्त-परिसंचरण के सिद्धांत की खोज जीवच्छेदन के बिना संभव नहीं थी तो मानव जाति को इसे जाने बिना ही रह जाना चाहिए था। मैं स्पष्टत: वह दिन निकट आता देख रहा हूँ जब पश्चिम का ईमानदार वैज्ञानिक ज्ञानार्जन की वर्तमान विधियों की कुछ मर्यादाएँ बांध देगा।''[15]

पश्चिम यूरोप से आयातित औद्योगिक क्रांति, जिसका आधार विज्ञान प्राविधिकी, खनिज ईधन, पर्यावरण व अन्य संसाधन तथा मानव की आकांक्षाएं और वासनाएं रही हैं, जो उन्हें संघटित कर सकीं। विज्ञान का दार्शनिक पक्ष जिज्ञासा, प्राकृतिक घटनाओं तथा सृष्टि को समझना, सत्य की अनवरत खोज, नैतिक तथा सामाजिक न्याय, उपभोगवाद की संस्कृति में क्षीण पड़ गया। औद्योगिक क्रांति ने प्रकृति के ढांचे और जीव मंडल को चुनौती दी तथा कृत्रिम मानव मंडल को प्राकृतिक संरचना पर थोप दिया, जिससे प्रकृति का जीवमंडल कराह उठा। यही कारण है कि जब हम भोगवादी औद्योगिक सभ्यता के उत्कर्ष से चकाचौंध हो रहे थे तो गांधी ने आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' (1909) में लोकप्रियता की कीमत पर भी उस पर कठोर प्रहार किया। उन्हें उस समय मध्ययुगीन, दकियानूस, विज्ञान-विरोधी और प्रगति-बाधक कहा गया। लेकिन उन्होंने ''हिन्द स्वराज में इस वैश्विक संकट के लिए वैकल्पिक सभ्यता का जो घोषणा-पत्र उपस्थित किया था वह आज उस समय से कहीं अधिक प्रासंगिक है।''[16] गांधी द्धारा 'प्राकृतिक जीवन' उद्घोष किसी हारे हुए मनुष्य का पलायनवाद नहीं, बल्कि पर्यावरण संतुलन और जैव-विविधता संरक्षण के लिए एक रक्षा कवच ही था। जहाँ भोगवाद की उद्दास-धारा से प्रभावित होकर हम नृशंस होकर पृथ्वी के साथ बलात्कार, प्राकृतिक सम्पदा का अनुचित दोहन कर मानव जैव-जगत के सम्पूर्ण संहार का प्रयास कर रहा हो वहां सादगी और संयम की संस्कृति के अलावा विकल्प ही क्या है?''[17] और यही तो गांधी का संदेश है।

लोग पारिस्थितिकीविदों से पूछते हैं कि क्या स्वच्छ एवं अच्छे जीवन के लिए हम पाषाण युग में वापस चले जाएं, क्या विज्ञान-तकनीकी एवं सामाजिक विकास को हम तिलांजलि दे दें? समाधान पीछे जाने में नहीं है। हमें पर्यावरण व जैव विविधता की रक्षा करना है। स्वस्थ जैव-मंडल जैसे भी बन सके, वही विकास है। ऊर्जा-प्रवाह और पदार्थों का संचरण प्राकृतिक परितंत्रों के अनुसार सामाजिक सेवा में इस धारणा से लगाना है कि पर्यावरण से उधर ली हुई वस्तु फिर उससे वापस कर देना है। आखिरकार आधुनिक विकास का अंतिम लक्ष्य क्या है? हम कौन-सा समाज स्थापित करना चाहते हैं? मेरा स्पष्ट मानना है कि आज जो समाज है उसमें विकृति है। मानव की आकांक्षा हमेशा यही रही है; प्रकृति से संस्कृति की ओर आरोहन करने की। प्रकृति से संस्कृति की ओर आरोहन करने का जो रास्ता है वह प्रकृति को सुसंस्कार करके प्राणीमात्र के लिए स्थायी सुख-शांति तथा संतोष प्राप्त करना है।

अंतत: हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हमें एक नई सभ्यता का विकास करना है, जिसमें व्यक्ति, समाज, भौतिक तथा जैव-संसाधन उन्नात किया जा सके। गांधी ने इतिहास को कुरेद कर बताया है कि जो देश भोगवादी सभ्यता के शिकंजे में फंसा, उसका नामो-निशान मिट गया है। इसलिए उन्होंने सत्य, अहिंसा, संयम तथा अपरिग्रह पर आधारित एक नैतिकता को जन्म दिया था, जिसमें जैव विविधता व पर्यावरण का संतुलन केन्द्रित था। संसाधनों का बंटवारा न्यायपूर्ण था और प्राणीमात्र के लिए प्रेम था। चरखे ने मीलों को चुनौती दी थी। ऊर्जा-प्रवाह तथा पदार्थ संचरण उसमें नियंत्रित था। अत: समय रहते उनके चेतावनी को समझें और उनके दर्शाये मार्ग पर चलें, क्योंकि इसी में जैव विविधता और पर्यावरणीय सुरक्षा की पूर्ण परिकल्पना की अवधारणा समाहित है।

संदर्भ-सूची:

1. त्रिपाठी, डॉ. ब्रह्मदत्ता; 'विश्व-पर्यावरण में अनावश्यक परिवर्तनों से जीव-जगत को खतरा', पर्यावरण और हम, संपादक- शुकदेव प्रसाद, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली-6, 1989, पृ. 50.
2. सिंह, रणबीर; 'लुप्त होते दुर्लभ पक्षी', पर्यावरण और हम, संपादक- शुकदेव प्रसाद, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली-6, 1989, पृ. 54.
3. बिलग्रामी, डॉ. के.एस.; 'इकोलॉजी एवं विकास में संतुलन जरूरी है', गंगा को अविरल बहने दो, संपादक- डॉ. योगेन्द्र/सफदर इमाम कादरी, गंगा मुक्ति आन्दोलन, सूजागंज, भागलपुर (बिहार), 1990, पृ. 89.
4. वही, पृ. 88.
5. अथर्ववेद; 12/1/12.
6. उपनिषद्; 'ईशावास्योपनिषद्', ॥1॥.
7. सिंह, रामजी; गांधी-विचार : दर्शन, धर्म, राजनीति और अर्थ नीति, मानक पब्लिकेशन्स प्रा.लि., 1995, पृ. 36.
8. आनन्दी, कृष्ण स्वरूप; 'पर्यावरण और सभ्यता', पर्यावरण और हम, पूर्वोक्त, पृ. 43.
9. वही, पृ. 42.
10. वही, पृ. 43.
11. बंग, ठाकुर दास; गांधी की चुनौती : नये विकल्प की खोज, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1990, पृ. 32.
12. मिश्रा, प्रो. रामदेव; 'मानव पर्यावरण', पर्यावरण और हम, पूर्वोक्त, पृ. 15.
13. वही.
14. गांधी, मोहनदास करमचंद; यंग इंडिया, 08.07.1926, पृ. 244.
15. गांधी, मोहनदास कमरचंद; महात्मा गांधी के विचार, संकलन- आर.के. प्रभु/यू.आर. राव, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 1994, पृ. 411.
16. सिंह, रामजी; गांधी-विचार : दर्शन, धर्म, राजनीति और अर्थ नीति, पूर्वोक्त, पृ. 36.
17. वही.

उद्यमशीलता के प्रबंधकीय उपकरणों का मूल्यांकन

डॉ. राजेन्द्रकुमार शर्मा *

उद्यमी किसी व्यवसाय या उद्योग की रीढ़ होता है। उसका व्यक्तित्व बहुआयामी होता है। वह बहुत अधिक तेजस्वी, ओजस्वी, उमंगों से भरा हुआ, महत्वकांक्षी और आत्मविश्वासी होता है। उसमें आक्रमकता और परिणाम को परखने और अवसरों का लाभ उठाने में बहुत चतुर होता है, लोगों से कठोर परिश्रम की अपेक्षा रखता है और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए लालायित रहता है।[1]

किसी भी देश के आर्थिक विकास में उत्पादन के साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन और उद्यमी (साहसी) उत्पादन के प्रमुख साधन माने जाते हैं। इनमें भूमि, श्रम, पूँजी और संगठन उत्पादन के निष्क्रिय साधन होते हैं तथा उद्यमी उत्पादन का एक सक्रिय साधन होता है, जो उत्पादन साधनों को एकत्रित करके उत्पादन की प्रक्रिया को संचालित करता है और देश को औद्योगिकरण तथा विकास के पथ पर अग्रसर करता है।[2]

सामान्यत: 'उद्यमी' उस व्यक्ति को कहा जाता है जो नया उपक्रम प्रारंभ करता है, आवश्यक संसाधनों को जुटाता है तथा व्यवसाय की क्रियाओं का प्रबन्ध एवं नियंत्रण करता है। यह व्यवसाय की विभिन्न जोखिमों को झेलता है तथा व्यावसायिक चुनौतियों का सामना करता है। अल्फ्रेड मार्शल ने कहा है कि– ''उद्यमी वह व्यक्ति है जो जोखिम उठाने का साहस करता है। किसी कार्य के लिए आवश्यक पूँजी एवं श्रम की व्यवस्था करता है, जो इनकी सामान्य योजना बनाता है तथा जो इसकी छोटी–छोटी बातों का निरीक्षण करता है।''

किन्तु आधुनिक युग में उसे उद्यमी का एक मात्र लक्षण नहीं माना जा सकता है। बीमा कम्पनियों के विकास तथा प्रबन्ध की नवीन तकनीकों के फलस्वरुप व्यवसाय में निहित जोखिमों व अनिश्चितताओं में काफी कमी आई हैं। साथ ही, आधुनिक युग में उद्यमी के अन्य कार्य–नेतृत्व एवं नवप्रवर्तन भी महत्वपूर्ण हो गये हैं।

अत: जोखिम उठाने के साथ–साथ व्यवसाय में नई वस्तुओं, यंत्रों व विधियों को स्थान देने वाले व्यक्ति को 'उद्यमी' के रुप में देखा जाने लगा है। अमेरिका में प्राय: 'उद्यमी' उस व्यक्ति को कहा जात है जो अपना स्वयं का नया और छोटा व्यवसाय प्रारंभ करता है। जर्मनी में 'उद्यमी' उसी व्यक्ति को माना जाता है जिसके पास सत्ता तथा सम्पत्ति होती हैं अर्थात् जो किसी व्यवसाय में स्वामित्व एवं संचालन देने के लिए उत्तरदायी होता है।[3]

वर्तमान में चारों ओर वैश्विक एकरुपता का दौर चल रहा है तथा इस दौर में उद्यमी एक नवप्रवर्तक, संगठनकर्त्ता एवं समन्वयक के रुप में देखा जा रहा है।[4] व्यक्तित्व एक अत्यन्त जटिल संवृत्ति है तथा यही कारण है कि किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण तथा सही अध्ययन कर पाना कठिन होता है, परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से कभी भी अंजान नहीं होता वह स्वयं को भली–भांति जानता है। हर इंसान के अपने–अपने सपने और सोच होती हैं। जिसे प्रतिकूल परिस्थितियों के चलते भी वह पूरा करने की निरंतर कोशिश करते रहता है परन्तु जैसे ही अनुकूल परिस्थितियां आती हैं वो उस सपने को साकार करने में पुन: जुट जाता है। यह अलग बात है कि हर किसी को अपने मकसद में कामयाबी नहीं मिलती, लेकिन यह भी सच है कि कुछ अपने लक्ष्य पाने में कामयाब हो जाता हैं। बस यही उद्यम एवं उद्यमी के बीच की सच्ची कड़ी हैं। जो इसे ठीक ढंग से समझकर संयुक्त कर लेता है वो कामयाब इंसान, शेष लोग इसी कड़ी में निर्णय की ऊहापोह में फंसकर रह जाते हैं।[5]

फिर भी प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व में कुछ ऐसे गुण होते हैं जो कि अधिक प्रबल होते हैं तथा इन्हीं की प्रबलता के आधार पर संबंधित व्यक्ति के व्यक्तित्व के बारे में कुछ अनुमान लगाए जा सकते हैं। उद्यम यानी नई चुनौती, जिसे अंगीकार करने की हिम्मत कोई भी इंसान सहज रुप से नहीं कर पाता । केवल भावी उद्यमी बनने की चाह ही इंसान को सफल बनाती हैं। मूलत: उद्यमी को एक सफल उद्यमी बनने के लिए अपने समस्त गुणों, अवगुणों का भली–भाँति आंकलन कर लेना चाहिए। सफल उद्यमी में निम्नलिखित बहुआयामी गुण विद्यमान होने चाहिए जो इस प्रकार से है:–

सफल उद्यमी में स्थिरता, आत्मनियंत्रण, निर्णयात्मकता, दृढ़निश्चय, चतुराई, प्रेरणात्मकता, आत्मविश्वास, संतुलन की क्षमता, विश्वसनीयता, प्रतिबद्धता, शक्ति, उत्साह, न्यायप्रियता, लचीलापन, दूरदर्शिता, ईमानदारी, बुद्धिमत्ता, निर्णय लेने का तरीका, नेतृत्व के प्रति रवैया एवं तार्किकता आदि गुणों का होना आवश्यक है।

हममें ऐसी कई प्रवृत्तियां होती हैं जो सृजनशीलता को विकसित होने से रोकती हैं। यह स्वयं उद्यमी समझने की कोशिश करें। यदि उद्यमी की सृजनशीलता में उसकी कोई आदत रुकावट बन रही हैं तो उन रुकावटों को दूर करना होगा जो सृजनशील कल्पनाओं से उद्यमी को अलग कर देती हैं। प्रत्येक बाधा हमें अपने लक्ष्यों से दूर करती हैं। लेकिन साहस, सकारात्कता, लगन व पाने की जिजीविषा व्यक्ति को सफल बनाती हैं। उद्यमी अपने रास्ते की रुकावटों को इस प्रकार जान सकता है:–

1. सृजनशीलता की राहों में मुख्य रुकावटें क्या है?
2. उद्यमी ने उन्हें कैसे जाना?
3. कुछ जीवन की घटनाओं को याद करें। आपको जहां रुकावट महसूस हुई हो?
4. स्वयं से आप क्या कर सकते हैं?
5. दोस्त, परिचित या अन्य लोगों से क्या मदद चाहेंगें?
6. उद्यम के लिए अल्पावधि क्रियाकलापों की सूची?
7. दीर्घावधि क्रियाकलापों की सूची?
8. दूसरी बार तथ्यों की जांच करने की तिथि एवं सुधार का विवरण?

अपनी सृजनशील क्षमताओं का विकास हेतु निम्नलिखित तथ्यों पर विश्यों पर विचार करना आवश्यक है। क्या बनना चाहते हैं, इसकी कल्पना एवं मनन करें।

1. अपनी क्षमता, मूल्यों एवं जीवन लक्ष्यों की सूची बनायें।
2. अपनी वास्तविक क्षमता से अपना सम्पर्क बनाये रखें।
3. प्रत्येक दिन कुछ कठिन कार्य करें। ज्ञान एवं क्षमता को विकसित करें।
4. लोगों की प्रवृत्ति एवं उनके व्यक्तित्व को समझने की कोशिश करें।

उद्यमियों पर किये गए शोध में यह पाया गया है कि कोई भी व्यक्ति अपनी क्षमता का पूरा उपयोग नहीं कर पाता है। एक व्यक्ति के पास असीमित क्षमता

* प्राध्यापक– अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़–ब्यावरा (म.प्र.) भारत

है। जिसका उसे अनुमान भी नहीं होता है।

अत: उद्यमी को अपनी और दूसरों की क्षमता पर विश्वास करना चाहिए तथा अपनी क्षमता का कभी कम नहीं आंकना चाहिए। इस प्रकार एक सफल उद्यमी अपनी सृजनशील क्षमताओं का विकास कर अपने प्रयासों एवं योजनाओं की रुपरेखा में प्रभावी एवं उपयोगी बदलाव ला सकते हैं:-

1. उपलब्धि की चाह रखना
2. लक्ष्य निर्धारित करना एवे समयबद्ध रुप में कार्य करना
3. नपा-तुला जोखिम उठाना
4. भविष्य के प्रति आशावान होना
5. अपने प्रति सकारात्मक रवैया रखना
6. वातावरण को विश्लेषित करने की इच्छा रखना
7. अवसरों को देखना या अनुमान लगाना और उन पर कार्य करना
8. प्रयासरत रहना/दृढ़ रहना
9. सूचनाओं को एकत्रित करने की चाह
10. उच्च श्रेणी के कार्य करने की चाह
11. कार्यों को पूरा करने की जिम्मेदारी लेना या वचनबद्ध होना
12. उच्च कार्य क्षमता रखनें की चाह
13. प्रत्यायन करना या अपनी बात स्वीकार करवाना
14. प्रभावी नीतियों का उपयोग करना
15. निश्चियात्मक ढंग से रहना
16. अनुसरण करना
17. कर्मचारियों की भलाई के बारे में प्रयास करना या सोचना।

वर्तमान युग में उत्पादन सम्भावित माँग के आधार पर होता है। बाजार की परिस्थितियों, उपभोक्ताओं की रुचियों तथा प्रचलित फैशन आदि में परिवर्तन होते रहते हैं। उत्पादन की विधियाँ एवं तकनीकें भी अत्यन्त जटिल हो गई हैं। इन सब कारणों से भी वर्तमान समय में व्यावसायिक जोखिमों में वृद्धि हुई हैं। यही कारण है कि इस युग में उद्यमी की भूमिका का महत्व बढ़ता जा रहा है। आधुनिक व्यवसाय का प्रमुख आधार 'नवकरण' है जो कि उद्यमी के द्धारा ही किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. शुक्ल, प्रोफे. त्रिभुवननाथ : उद्यमिता विकास, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, प्रथम 2008, पृष्ठ सं. 214
2. अग्रवाल, डॉ. बी. के. पाठक, डॉ. अभय : उद्यमिता विकास, रामप्रसाद एण्ड संस, भोपाल, पृष्ठ सं. 11
3. सुधा, जी. एस. : व्यावसायिक प्रबन्ध के सिद्धान्त एवं उद्यमिता, रमेष बुक डिपो, जयपुर-नईदिल्ली, 2004 पृष्ठ सं. 16.1-2
4. शर्मा, प्रो. डॉ. राजीव, शर्मा, प्रो. डॉ. राजेन्द्र : उद्यमिता विकास, देवी अहिल्या प्रकाशन, इन्दौर, 2006, पृष्ठ सं. 17
5. पंडागरे, सुधाकर : उद्यमिता समाचार (मासिक), उद्यमिता विकास केन्द्र, मध्यप्रदेश (सेडमैप), भोपाल, अक्टूबर, 2013, पृष्ठ सं. 17-22 .

****

वैश्वीकरण के परिपेक्ष्य में मानवीय मूल्यों का अस्तित्व

डॉ. अमोल मांजरेकर *

वैश्वीकरण एक जटिल आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक और सामाजिक प्रक्रिया है। गिडेना ने विश्वव्यापीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत सामाजिक जीवन की व्याख्या की है। आज सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक संबंध ऐसे हैं जो राष्ट्रीय सीमाओं को लांघकर देशों के बीच की दशाओं और भाग्य को निर्धारित करते हैं। दुनियां की इस बढ़ती हुई अन्तर्निर्भरता को ही विश्वव्यापीकरण कहते हैं। वैश्वीकरण विकास के अवसर उपलब्ध कराता है। इसमें सरकारों को उदारीकण की नीति को अपनाना होता है। इस उदारीकण में बाजार का महत्व बढ़ जाता है और राज्य कमजोर हो जाता है।

वर्तमान में वैश्वीकरण की प्रक्रिया के दौरान आर्थिक परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप जो सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक परिवर्तन हुये हैं उन्होंने मानवीय जीवन के शाश्वत मूल्यों को हिला कर रख दिया है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप जो आर्थिक परिवर्तन परिलक्षित हुए या हो रहे है वे यदि सभी ओर से सकारात्मक होते तो आज इस पर इतना चिंतन मनन करने की आवश्यकता शायद प्रतीत न हुई होती।

वैश्वीकरण और उदारीकरण की इस व्यवस्था को समग्र विकास के संदर्भ में जिस आशा के साथ लागू किया गया था वह आज अपने स्वस्थ रूप में विकसित न होकर अनेक विकृतियोंसे युक्त होती हुई व्यवस्था पर एक प्रश्नचिन्ह के रूप में उपस्थित हो गई है। आर्थिक गतिविधियां चूंकि सामाजिक और पारिवारिक जीवन के सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों को प्रभावित करती है, इसलिये इन्हें इनके सुकृत और स्वस्थ रूप में लागू किया जाना चाहिये। लेकिन जब किसी प्रक्रिया की शुरूआत बड़े पैमाने पर स्वस्थ तरीकों से नहीं हो सकती तो इनसे अच्छे परिणामों की आशा भी नहीं की जा सकती।

वैश्वीकरण जहां समाज में सम्पन्नता को लाया है वहीं दूसरी ओर अपने दुष्परिणामों के साथ विपन्नता को भी लाया है। वैश्विक व्यवस्था के नाम पर या उसके दबाव में ऐसी नीतियों को अपनाया गया है, जिसके फलस्वरूप रोजगार के अवसर लगातार कम होने की आशंका बढ़ती जा रही है। पिछले पंद्रह वर्षो के दौरान आर्थिक सुधारों का आम जनता पर वैसा असर नहीं हुआ जैसी उम्मीद थी। गरीबी रेखा दरिद्रता की रेखा में बदलती गई। भूमण्डलीकरण के दौर में इलेक्ट्रानिक मीडिया के माध्यम से जिस प्रकार सांस्कृतिक विभिन्नताओं को एक ढांचे में समाहित किया गया, यह निश्चत ही अमेरिकी विश्व दृष्टि और सांस्कृतिक उपनिवेशवाद का ही रूप है।

मीडिया के इस सांस्कृतिक आक्रमण से हमारे सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों का हनन हुआ है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने विपणन की प्रभावपूर्ण शैलियों के माध्यम से उपभोक्तावाद को आवश्यकता से अधिक बढ़ावा दिया, जिससे न केवल आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ती हमारी अर्थव्यवस्था नष्ट हुई अपितु सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था भी प्रभावित हुई है।

उपभोग और उपभोक्तावाद में अन्तर है। उपभोग हमारी मूलभूत जरूरत है, जिनके अभाव में हम स्वाभाविक रूप से असुविधा महसूस करते हैं। इसके विपरीत ऐसी वस्तुएं जो वास्तव में मनुष्य की मूलभूत अनिवार्यताओं और ज्ञान की वृत्तियों की दृष्टि से उपयोगी नहीं है, लेकिन व्यावसायिक दृष्टि से अत्याकर्षक व भ्रमात्मक प्रचार के द्वारा उस वस्तु का उपयोग आवश्यक न होते हुए भी आवश्यक प्रतीत हो यह मानने की मानसिकता उपभोक्तावादी संस्कृति है। उपभोक्तावादी संस्कृति अनावश्यक वस्तुओं (सुविधाओं व विलासिताओं) को आवश्यक समझने की मानसिकता बना देती है। मनुष्य की आवश्यकताओं को सीमाहीन बना देती है। इस संस्कृति का आधार व्यावसायिकता है। औद्योगीकरण ने व्यवसायीकरण को जन्म दिया। व्यवसायीकरण से मध्यम वर्ग एवं निम्न आय वर्ग के लोग अपनी सामर्थ्य से बाहर की वस्तुओं का उपभोग करते हैं तथा उसकी सामान्य कीमत से भी ज्यादा कीमत अदा करते हैं।

समाज में सम्पन्नता में गरीबी का विरोधाभास दृष्टिगोचर हो रहा है। एक ओर उपभोक्तावादी संस्कृति के बीच उपरोक्त हाइपरचेस उपभोक्ता वर्ग निर्मित हो रहा है तो दूसरी ओर गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाला वर्ग भी तेजी से बढ़ रहा है और एक ओर अति उच्च वर्ग केवल मीडिया के आधार पर लोकप्रियता प्राप्त करते हुए सम्पन्नता के शिखर पर अग्रसर हो रहा है

ये परिस्थितियां समाज के स्थापित मानदण्डों पर एक प्रश्नचिन्ह बनकर उभर रहे हैं जो अपना स्थायी निराकरण चाहती हैं। वर्तमान परिदृश्य जो आज इस मुकाम पर पहुंचा है, ऐसे चिंतन और व्यवस्था की आवश्यकता महसूस करता है जो इन विरोधाभासों में तादात्म्य स्थापित कर सके। स्वाभाविक ही यह विचार उत्पन्न होता है कि सामाजिक व्यवस्था को पुन: अपने मानवीय मूल्यों के साथ स्थापित करने के लिये योजनाबद्ध नीति और उसके कार्यान्वयन की आवश्यकता है। यदि भारतीय सामाजिक व्यवस्था का गहराई से चिंतन किया जाए तो स्पष्ट चित्र उभरकर सामने आता है कि यहां पूर्व से स्थापित परम्पराएं और संस्कार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने वो पूर्व में थे। परम्परा अतीत की प्रेरणादायी स्थायी मूल्य श्रेणी है। परम्परा का शाब्दिक अर्थ है – उत्कृष्ट श्रेणी, ऐसी उत्कृष्ट मूल्य श्रेणी, जिसमें सामाजिक चिंतन और अनुभव अपनी सम्पूर्ण श्रेष्ठता में जीवित है। समय और समाज दोनों ही सापेक्ष एवं गतिशील हैं। सामाजिक मूल्यों में निरंतर परिवर्तन होता रहता है लेकिन इसके मध्य कुछ ऐसे सामाजिक मूल्य आविष्कृत होते रहते हैं, जो बहुत लम्बे काल तक अपनी प्रभाव क्षमता का प्रेरणादायक प्रदर्शन करते हैं। ये मूल्य ही परम्परा के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। परम्परा को ट्रेडीशन के रूप में व्याख्यायित करने वाले जॉन वेविस्टर कहते हैं – ये वे अतिरिक्त जीवन सिद्धांत है, जो अपनी अच्छाईयों में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होते हैं।

आधुनिकीकरण एक प्रक्रिया है जो परिवर्तन के नये द्वार खोलती है। वैश्वीकरण के दौर में आधुनिकीकरण हमारे यहां एक चकाचौंध की तरह प्रादुर्भूत हुआ है, जिससे हमारी दृष्टि चौंधिया गई है। परम्परा और आधुनिकीकरण का द्वन्द्व हमारे समय में अपने प्रश्नों और चुनौतियों को जाग्रत करता है। स्थापित मूल्यों और परम्पराओं के भजन में आधुनिकीकरण की धार तेज रही है किन्तु आधुनिकीकरण से ऊबे लोग परम्पराओं और स्थापित मूल्यों में ही अपनी शांति खोज रहे हैं। इस तथ्य को भलीभांति समझ लिया जाना चाहिए कि यदि वैश्वीकरण में आधुनिकीकरण को अंधाधुन्ध परम्परा विच्छिन्न किया जायेगा तो वह समाज के पूर्व अर्जित मूल्यों का सही विकल्प नहीं दे सकेगा।

* प्राध्यापक – अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.) भारत

महिला सशक्तिकरण : विभिन्न आयाम

सीमा नागर *

भारत में ''यन नार्यस्तु पूज्यन्ते रमंते तत्र देवता'' का सूत्र वाक्य पौराणिक काल से मान्य रहा है। प्राचीनकाल में महिलाओं की स्थिति सम्मानजनक थी किन्तु मध्यकाल तथा स्वतंत्रता प्राप्ति तक इनकी स्थिति संतोषजनक नहीं रही । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए संविधान में अनेक प्रावधान किये गये । बीसवीं शताब्दी में भारत में स्त्रियों की स्थिति में अभूतपूर्व परिवर्तन परिलक्षित हुआ । महिला सशक्तिकरण का सामान्य अर्थ है – महिला को शक्ति सम्पन्न बनाना किन्तु विस्तृत अर्थ में इसका अभिप्राय महिलाओं को पुरूषों के बराबर वैधानिक शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में निर्णय लेने की स्वतंत्रता से है । महिला सशक्तिकरण की पहल सर्वप्रथम 1985 में नैरोबी में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में की गई थी । इसके पश्चात् विश्व के विभिन्न देशों में इसने एक आंदोलन का रूप धारण कर लिया। भारत में महिला सशक्तिकरण के लिए 31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग गठित किया गया है । इसका उद्देश्य महिलाओं के सशक्तिकरण में योगदान करना तथा महिलाओं के हितों की रक्षा करना है । भारत में वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष घोषित किया गया ।

महिला सशक्तिकरण के विभिन्न आयाम – भारत तथा अधिकांश विकासशील देशों में आज भी महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा हेय समझा जाता है । महिलाओं एवं पुरूषों के बीच की असमानता को दूर करना आवश्यक है। आज भी अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य वर्गों की महिलाएँ समाज की उपेक्षा तथा शोषण की शिकार हैं । महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि करना आवश्यक है । आज भी महिला श्रमिकों को पुरूषों की अपेक्षा कम मजदूरी दी जाती है । भारत में निर्धन महिलाओं को ऋण सहायता, स्वास्थ्य सुविधाएँ, अनौपचारिक शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण देने के साथ-साथ कानूनी मुद्दों के विषय में भी जागरूक करने का प्रयास किया जा रहा है। इसी श्रृंखला में विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम तथा योजनाएं प्रारंभ किये गये है जिनमें से प्रमुख हैं – पंचधारा योजना, ग्रामीण महिला तथा बालोत्थान योजना, न्यू मॉडल चरखा योजना, इंदिरा महिला योजना, महिला समृद्धि योजना, किशोरी बालिका योजना,ग्रामीण महिला विकास योजना, स्वास्थ्य सखी योजना, जननी सुरक्षा योजना, महिलाओं के लिए प्रशिक्षण तथा रोजगार कार्यक्रम योजना, उज्जवला योजना, स्वाधार योजना, राष्ट्रीय महिला कोष आदि । विभिन्न शासकीय योजनाओं के साथ ही पंचवर्षीय योजनाओं में भी विकास प्रक्रिया में महिलाओं को समान भागीदार बनाने पर बल दिया गया है । विभिन्न राज्य सरकारें भी महिला सशक्तिकरण में अपना योगदान दे रही हैं । इस क्षेत्र में केरल का प्रथम स्थान है । आर्थिक क्षेत्र के साथ ही राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि के लिए 73 वें तथा 74 वें संविधान संशोधनों के द्वारा स्थानीय संस्थाओं में महिलाओं के लिए एक तिहाई आरक्षण का प्रावधान किया गया है । यह आरक्षण केवल सदस्यों के स्तर पर बल्कि सरपंच, प्रधान तथा जिला प्रमुखों के पद पर भी सुनिश्चित किया गया है । वर्तमान में करीब दस लाख महिलाएँ पंचायतीराज संस्थाओं में निर्वाचित होकर सक्रिय सहभागिता निभा रही हैं । महिला सशक्तिकरण के लिए अपनाई गई रणनीतियों ज्ञान के प्रसार हेतु तकनीकि किट, सॉफ्टवेयर का विकास, प्रेरक कार्यक्रमोंका आयोजन, जनसंचार साधनों के माध्यम से लोगों तक पहुँचने के कार्यक्रमों के आयोजन, विभिन्न प्रकार के व्यवसाय के लिए कौशल प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है । बैंकों के द्वारा स्वसहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक सहायता उपलब्ध करवाई जा रही है। आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्र के साथ ही सामाजिक क्षेत्र की दृष्टि से भी महिला सशक्तिकरण आवश्यक है क्योंकि ये तीनों एक दूसरे से जुड़े हुए क्षेत्र हैं । महिलाओं को सामाजिक पद,प्रतिष्ठा तथा न्याय दिलाना आवश्यक है । घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज उत्पीड़न, बलात्कार जैसी सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए विभिन्न संवैधानिक अधिनियम, राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन आदि प्रयास किये गये है । राष्ट्रीय महिला आयोग को बड़ी संख्या में शिकायतें प्राप्त होती हैं । त्वरित न्याय दिलाने के लिए आयोग द्वारा जाँच समितियाँ गठित की जाती हैं । आयोग द्वारा कानूनी जागरूकता कार्यक्रम, पारिवारिक महिला लोग अदालते, विचार गोष्ठी, कार्यशाला आयोजित किये जाते है ताकि कन्या भ्रूण हत्या, महिलाओं के प्रति हिंसा, बाल विवाह, दहेज प्रथा आदि पर रोक लगे तथा इन मुद्दों पर महिलाओं को जागरूक किया जा सके । आयोग पिछले 20 वर्षों से महिलाओं को जीवन के सभी क्षेत्रों में समानता के अधिकार दिलाने के लिए प्रयत्नशील रहा है । भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने सन् 2008 में राज्यपालों की एक समिति गठित की जिसने सन् 2009 में महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक सशक्तिकरण के लिए सिफारिशें प्रस्तुत कीं । 8 मार्च 2010 को राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण मिशन का शुभारंभ श्रीमती पाटिल के द्वारा किया गया । मिशन प्राधिकरण के प्रमुख प्रधानमंत्री हैं तथा 13 मंत्रालय उनके सहभागी हैं । इसका नियामक मंत्रालय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय है । इस मिशन का उद्देश्य स्वास्थ्य, शिक्षा और आजीविका की सुविधाएँ मुहैया करवाने के अतिरिक्त महिलाओं के विरूद्ध हिंसा की समाप्ति, सेवा प्रदान करने वालों तथा हकदारों के बीच सूचना की खाई को पाटना भी है । फरवरी-अप्रेल 2012 के बीच सभी राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में क्षेत्रीय सम्मेलनों की श्रृंखला आयोजित की गई । इन सम्मेलनों से यह निष्कर्ष निकला कि महिलाओं के सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए एकजुट कार्रवाई के समेकित दृष्टिकोण की आवश्कयता है। इस मिशन के तहत् जेंडर बजटिंग अर्थात महिला को समान अधिकार देने के लिए बजटीय व्यवस्था का प्रावधान किया गया है । जेंडर बजटिंग का उद्देश्य बजटीय आबंटन में स्त्री-पुरूष समानता हेतु सरकार की नीतिगत प्रतिबद्धता का क्रियान्वयन सुनिश्चित करना है । जेंडर बजटिंग की नियामक एजेंसी महिला एवं बाल कल्याण मंत्रालय है ।

सशक्तिकरण के मार्ग में समस्याएं – महिला सशक्तिकरण की सफलता के मार्ग में अनेक समस्याएँ है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक हर स्तर पर महिलाओं के साथ भेदभाव जारी है । पुरूष प्रधान समाज के कारण महिला शोषित बनकर रह गई है । आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भरता, अशिक्षा, कमजोर स्वास्थ्य, समाज में दोयम दर्जा, महिलाओं के प्रति हिंसा व अत्याचार, घर तथा बाहर असुरक्षा महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को मूर्त रूप देने के मार्ग में बाधक है ।

निष्कर्ष – महिला सशक्तिकरण के लिए योजनाएँ, कार्यक्रम, नीतियाँ बनाना ही पर्याप्त नहीं है वरन् उनका सही क्रियान्वयन होना आवश्यक है । महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक आयामों को एक साथ जोड़ना आवश्यक है । महिला सशक्तिकरण के लिए महिलाओं को घर तथा बाहर अधिकार मिलना चाहिए जो कि शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल, वित्तीय सुदृढ़ता, राजनीतिक सहभागिता, सामाजिक न्याय से संबंधित हों । इसके लिए समाज की मानसिकता में परिवर्तन करना आवश्यक है । जब तक महिला को व्यक्ति का दर्जा नहीं दिया जायेगा तब तक उसे सशक्त भी नहीं किया जा सकता ।

संदर्भ सूची – 1. योजना मासिक पत्रिका- भारत सरकार का प्रकाशन
2. नईदुनिया – दैनिक समाचार पत्र
3. भारतीय अर्थव्यवस्था – धनकड़ प्रकाशन

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र), शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

महिला सशक्तिकरण का स्वॉक विश्लेषण

डॉ. ए.के. जैन *

''स्त्रियों की अवस्था में सुधार लाये बिना विश्वकल्याण असम्भव है, जैसे कि एक पंख से उड़ान भरना।'' स्वामी विवेकानंद का यह कथन निश्चित रूप से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। महिला सशक्तिकरण जिसमें महिलाओं को पुरूषों के समान समाज में दर्जा हासिल हो। आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक स्तर पर किसी भी प्रकार का भेदभाव न हो वह स्वावलम्बी आत्मनिर्भर एवं स्वाभिमान पूर्वक सम्मान पूर्ण जीवन व्यतीत कर सके। आज अनेकानेक कारणों से महिलायें उत्पीड़न का शिकार है। यद्यपि शासन द्वारा महिलाओं के कल्याण के लिए उन्हें विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए अनेक प्रावधान किये गये है। लेकिन इन सबके बावजूद उनकी स्थिति में अपेक्षित बदलाव दृष्टिगत नहीं हो रहा है।

SWOC स्वाक अर्थात **STRENGTH** ताकत **WEAKNESS** कमजोरियाँ **OPPORTUNITIES** अवसर **CHALLENGE** चुनौतियां। इन तत्वों के आधार पर महिलाओं की ताकत, कमजोरी, अवसर एवं चुनौतियां इनके द्वारा महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में आगे बढ़कर हम उनकी दशा बदल सकते है।

ताकत (STRENGTH) – प्राचीन समय में भी महिलाओं का गौरवमयी इतिहास रहा है। कैकई, द्रोपदी मैत्रैयी, सीता शकुन्तला, अनुसुईयां, दमयन्ती, सावित्री, रानीलक्ष्मीबाई, रानी दुर्गावती, रानी अवन्तीबाई, अहिल्यादेवी, मदर टैरेसा और वर्तमान युग में अनेक महत्वपूर्ण पदों पर आसीन होकर उन्होंने आर्थिक राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में सफलता के कीर्तिमान स्थापित किये है। महिलाएँ राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, राज्यपाल, राजदूत, मुख्यमंत्री, मंत्री, सांसद, विधायक, वैज्ञानिक, न्यायाधीश, पत्रकार, पायलेट, ट्रेन ड्राइवर, उद्योगपति, कुलपति, डॉक्टर, इंजीनियर, आदि अनेक महत्वपूर्ण पदों पर आसीन है। यदि हम उनकी शक्ति का विश्लेषण करे तो उनमें शारीरिक क्षमता भले ही पुरूषों से कम आंकी जाती है। लेकिन उनमें आत्म विश्वास, दृढ़ता, कर्मठता, जुझारूपन वस्तु स्थिति का विविध दृष्टिकोण से आकलन एवं प्रबंधन क्षमता का अद्भुत गुण विद्यमान है। महिलाओं में शिक्षा, प्रतिभा, कौशल एवं उनकी रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने एवं उनके अन्दर जो ताकत विद्यमान है उसे सही दिशा देकर प्रकट होने देने की परिस्थितियां वातावरण निर्मित करने की आवश्यकता है। जिससे वह अपनी शक्ति प्रकट कर आत्म विश्वास उत्पन्न कर सके।

कमजोरियां (WEAKNESS) – भावुक होना, किसी की बातों में जल्दी आ जाना, अंधविश्वास, रूढियां, परम्पराएं सामाजिक बंधन इत्यादि उनके व्यक्तित्व की सामान्य कमजोरियां है। यदि उन्हें सशक्त बनाना है तो उनको इन कमजोरियो से निजात दिलाने की आवश्यकता है। सही सोच, व्यापक दृष्टिकोण, उच्च शिक्षा, समझ का विकास इत्यादि तत्वों द्वारा उनकी परम्परागत कमजोरियों को दूर किया जा सकता है। जिससे उनका आत्म विश्वास बढेगा और वह अधिक सशक्त होगी। व्यक्ति उनकी कमजोरी का फायदा उठाकर उन्हें चिकनी चुपड़ी बातों अथवा झूठे सब्जबाग दिखाकर धोखा दे जाते है जिसका खामियाजा उन्हें ताजिन्दगी भुगतना पड़ता है। आज के सोशल साइटस इत्यादि तमाम तरह के आधुनिक उपकरणों द्वारा महिलाओं से कपट पूर्ण व्यवहार किया जाता है। यदि महिलायें अपनी भावनात्मक एवं अन्य कमजोरियों पर विजय प्राप्त कर ले तो वह अपने विकास का मार्ग प्रसस्त कर सकती है

अवसर (OPPORTUNITIES) – महिला सशक्तिकरण की दिशा में अवसरों की खोज और उनका समय रहते उपयोग एक महत्वपूर्ण कदम है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में विकास के लिए कभी न कभी अवसर अवश्य उपस्थित होता है। यदि उसने पहचान लिया और लाभ उठा लिया तो जीवन अधिक सुविधापूर्ण रहता है आर्थिक क्षेत्र में विभिन्न रोजगार व स्वरोजगार के अवसर पहले से कही अधिक विद्यमान है, शासकीय सुविधाएं, ऋण, अनुदान उपलब्ध है, बशर्ते जानकारी एवं उसे प्राप्त करने की कुशलता एवं योग्यता हो। इसी प्रकार बालिकाओं की शिक्षा के लिए अनेक छात्रवृत्तियां, गणवेश, साईकिल, पुस्तकें एवं अन्य सुविधाएं उपलब्ध है। यदि छात्राएं उसका लाभ उठाये तो वह उच्च शिक्षित होकर रोजगार प्राप्त कर सकती है। जो उनकी आत्म निर्भरता के लिए बहुत प्रभावी कदम होगा।

चुनौतियां (CHALLENGE) – वर्तमान युग में जीवन जितना सरल, सहज, अनुभव हो रहा है उतना ही अधिक चुनौतीपूर्ण भी है। महिलाओं के जीवन में भी अनेक चुनौतियां ही उन्हें उसका विश्लेषण करना होगा। साथ ही इन चुनौतियों से कैसे निपटा जा सके ऐसे प्रयास करना होंगे। सब से अधिक चुनौती उनकी सुरक्षा एवं सम्मान की है। समाचारों में नाबालिग एवं बालिग दोनों के साथ शारीरिक जोर जबर्दस्ती, यातनाएं, उत्पीड़न की घटनाएं बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति में उन्हें पहले स्वयं समर्थ बनना होगा। इसी प्रकार परिवार के पालन पोषण परिवार की जिम्मेवारी सामाजिक दायित्व, सेवाक्षेत्र के दायित्व यह सभी उनके लिए चुनौतियां है। यद्यपि शासन, समाज, परिवार उनके लिए इन चुनौतियों से निपटने के लिए विभिन्न प्रकार सहायता देता है इसके बाबजूद उन्हें स्वयं चुनौतीयों से निपटने की क्षमता अर्जित करनी होगी।

बदलते परिदृश्य में जहॉ मानव मूल्यों का क्षरण तेजी से हो रहा है। लिंगानुपात घटता जा रहा है। महिलाओं का सम्मान, उनकी अस्मिता का संकट गहराता जा रहा है ऐसी स्थिति में ऐसे कानून जो इन पर प्रभावी नियंत्रण कर सके, ऐसी सामाजिक सोच जो इनके प्रति नजरिये को बदल सके, ऐसी नीतियां जो इनको आगे बढ़ने में सहायक हो, ऐसी सामाजिक व्यवस्था जो उन्हें उनके मन के विरूद्ध कार्य करने के लिए बाध्य न करता हो एवं ऐसे वातावरण के सृजन की आवश्यकता है जो महिला सशक्तिकरण की दिशा में सहायक हो तभी हम अपनी संमृद्ध संस्कृति की छांवतले महिलाओं के विकास का सपना साकार करने में सक्षम हो सकेंगे।

संन्दर्भ –

- शर्मा – प्रज्ञा – महिला विकास और सशक्तिकरण
- पांडे रामशकल – भारतीय शिक्षा की सम सामिक समस्या
- शाश्वत स्वप्निल – महिला विकास एवं परिदृश्य
- कश्त वाह रेखा – स्त्री चिंतन की चुनौतियां
- भट्टाचार्य सुनील – भारत की सामाजिक समस्या
- शर्मा क्षमा – स्त्री का समय
- त्रिपाठी अर्पणा एवं डॉ. रेणु – कामकाजी महिलाएं
- अंसारी एम.ए.– महिला और मानवाधिकार
- कुमार भास्कर – भूमण्डलीकरण और स्त्री
- रचना – दि मासिक अंक 74–75 सितम्बर से दिसम्बर 2008

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

सब्सिडी, कैश सब्सिडी और बैंकिंग विकास

डॉ. जयप्रकाश मिश्र *

सब्सिडी का अर्थ आर्थिक सहायता या छूट होता है सरकार देश के रहवासियों की भुगतान क्षमता को देखते हुए विभिन्न उपभोग एवं उत्पादन सामग्रियों पर यह आर्थिक सहायता या छूट जो अभी तक उपभोग वस्तुओं पर कराती थी। कृषि पर सब्सिडी की बात कही जाती है तब इसका अभिप्राय होता है कि कृषि किसानी के अंतर्गत किए जाने वाले कार्यो के लिए सरकार द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता या आर्थिक छूट।

जैसा कि आप जानते है कि भारत एक कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है। 2001 की जनगणना के अनुसार 64.9 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अपने जीविकोपार्जन के लिए कृषि पर ही निर्भर है अर्थात जनसंख्या का दो तिहाई भाग कृषि पर अपनी रोजी-रोटी के लिए आश्रित है। ऐसी स्थिति में सरकार का दायित्व और भी बढ़ जाता है कि वह कृषि पर सब्सिडी उपलब्ध कराकर लघु एवं सीमांत कृषकों के साथ भूमिहीन मजदूरों की मदद कर उन्हें कृषि के व्यवसाय के जोड़े रहने के लिए प्रोत्साहित करती रहे किसी भी देश में अर्थव्यवस्था के मुख्यत: तीन महत्वपूर्ण क्षैत्र है कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षैत्र। भारत विकासशील देश के साथ-साथ कृषि प्रधान देश है, कृषि प्रधान देशों को अपनी अर्थव्यवस्था सुदृढ़ रखने के लिए आवश्यक है कि कृषि और किसानों एवं भूमिहिन श्रमिकों के लिए सब्सिडी या आर्थिक सहायता के कार्यक्रम चलाते रहे, प्रतिवर्ष बजटीय प्रावधान किसानों, भूमिहीनों के लिए किए जाए, जो सरकार कर रही है।

आपको कृषि पर सब्सिडी आर्थिक सहायता का औचित्य इस तथ्य से समझ में आ जाएगा कि अमेरिका जैसे विकसित और विश्व की आर्थिक नीतियां तय करने वाले देश ने भी अपने फूड बिल 2008 में पांच साल के लिए 307 अरब डॉलर यानि की लगभग 16 लाख करोड़ रूपये की सब्सिडी अपने देश के किसानों को मुहैया कराई है जबकि अमेरिका में कुल जनसंख्या की 1.2 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्यो में संलग्न है। जब दुनिया का यह उद्योग प्रधान और सेवा प्रधान देश अमेरिका कृषि और किसानों के लिए इतनी अधिक सब्सिडी दे रहा है तब भारत देश तो कृषि एवं किसान प्रधान देश है। कृषि प्रधान देश में तो सब्सिडी या आर्थिक छूट का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है।

वैश्विक भूख सूचकांक 2012 में 7.9 देशो की सूची में भारत का स्थान 65वां है। ऐसी स्थिति में तो कृषि पर सब्सिडी देकर उत्पादन बढ़ाना और इस उत्पादन का भूखों को विरतण करना और अधिक समीचीन है। हालांकि ऐसा नहीं है कि सरकार इस ओर ध्यान नहीं दे रही है। इस सम्बंध में संयुक्त राष्ट्र के खाद्यान्न एवं कृषि संगठन की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत में जून 2011 से जुलाई 2012 के एक वर्ष में गेंहू के दामों में सूडान के बाद सबसे अधिक कीमतें किसानों को उनकी उपज के बदले मिली है। यह भारत के न्यूनतम समर्थन मूल्य का ही प्रतिफल है कि किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य मिला ताकि किसान कृषिगत कार्यो में संलग्न रहने के लिए प्रोत्साहित हो सकें।

भारतीय कृषि को पूर्व से ही मानसून का जुआ कहा जाता रहा है। आज भी भारतीय कृषि जुआ या सट्टा के सहारे है। बाढ़, भूकम्प, अकाल, सूखा जैसी प्राकृतिक आपदायें भारतीय किसानों को आज भी झेलनी पड़ती है। इन प्राकृतिक आपदाओं से निपटने के लिए तथा किसानों को उनकी उपज की नुकसान भरपाई के लिए केंद्र और राज्य सरकारे सब्सिडी या आर्थिक सहायता का प्रावधान करती है ये सहायता विपत्तीकाल में किसानों को बहुत बड़ी राहत पहुंचाती है।

भारत में 1966-67 में कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए ''हरित क्रांति''के नाम से खाद्य उत्पादन हेतु कार्यक्रम चलाया गया था। इस हरित क्रांति कार्यक्रम के माध्यम से कृषि में लगने वाले उपकरणों, बीजों, उर्वरकों, सिंचाई के साधन, बिजली, डीजल, कीटनाशक एंव अन्य कृषि में संलग्न सामग्री को क्रय करने के लिए सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से आर्थिक सहायता या अनुदान का प्रावधान किया है। ताकि किसानों को सस्ती कीमतों पर कृषि से सम्बंधित उपकरण, बीज, उर्वरक, बिजली आदि उपलब्ध कराई जा सकें। यहां यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि वर्तमान में कृषि क्षैत्र को प्रदान की जाने वाली सब्सिडी या छूट का भार सरकार पर काफी बढ़ गया है।

सिंचाई साधनों को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने कुएं एवं तालाब खोदने के लिए भी सब्सिडी प्रदान की है। बिहार, उड़ीसा, झारखंड एवं बंगाल में 2012 के दौरान कम वर्षा होने के कारण सूखे की स्थिति निर्मित हो गई थी। सूखे से निपटने के लिए तथा खेती में खड़ी फसल बचाने के लिए 14 जुलाई 2010 से 30 सितम्बर 2010 के दौरान सरकार ने इन राज्यों के किसानों के लिए डीजल पर सब्सिडी देने का निर्णय लिया। 22 दिसम्बर 2010 की स्थिति में विकेन्द्रित अधि प्राप्ति योजना के तहत 2010-11 में विभिन्न राज्यों के किसानों के लिए 9376 करोड़ रूपये की खाद्य सब्सिडी सरकार द्वारा जारी की गई।

गरीबों और छोटे लघु कृषकों को न्यूनतम पोषण आहार सहायता का प्रावधान भी सब्सिडी के माध्यम से किया जाता है। गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले एपीएल और बीपीएल कार्ड धाटक किसानों को सब्सिडी की राशि उपलब्ध कराई जाती है। वर्ष 1999-2000 में खाद्य सब्सिडी राशि जहां 9200 करोड़ थी वह वर्ष 2009-10 में बढ़कर 58242 करोड़ रूपये हो गई। अर्थात इन दस ग्यारह वर्षो में साढ़े छ: गुना के लगभग सब्सिडी में इजाफा हुआ।

सरकार द्वारा समय-समय पर गन्ना उत्पादक किसानों को पैकेज देती है यह एक तरह की आर्थिक सहायता है। सरकार द्वारा किसानों के लिए प्रदाय किया गया किसान क्रेडिट कार्ड फसल बीमा योजना, न्यूनतम समर्थन मूल्य पर किसानों के उत्पादन को क्रय करना एक तरह की सब्सिडी या आर्थिक सहायता ही है जो किसानों को कृषि में संलग्न रहने के लिए प्रोत्साहित करती है।

कृषि में संलग्न सामग्री को क्रय करने के लिए सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से आर्थिक सहायता या अनुदान का प्रावधान किया है, ताकि किसानों को सस्ती कीमतों पर कृषि से सम्बंधित उपकरण, बीज, उर्वरक, बिजली आदि उपलब्ध कराई जा सके। यहां यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि वर्तमान में कृषि क्षैत्र को प्रदान की जाने वाली सब्सिडी या छूट का भार सरकार के ऊपर काफी बढ़ गया है।

आर्थिक समीक्षा 2010-11 के अनुसार यूरिया, फास्फोरस, पोटाश

* विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र, शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

सम्बंधी उर्वरकों के 15 ग्रेड किसानों को वास्तविक लागत से 60 से 75 प्रतिशत कम लागतों पर प्राप्त हो रहे है अर्थात किसानों को 25 से 40 प्रतिशत कीमत पर यह उर्वरक उपलब्ध हो जाते है। शेष भुगतान सरकार सब्सिडी के रूप में करती है। भारत सरकार ने 1 अप्रैल 2010 से पोषण आधारित सब्सिडी योजना का प्रारंभ किया। पोषण आधारित सब्सिडी के अंतर्गत सरकार ने नाइट्रोजन, पोटाश फास्फोरस, सल्फर आदि युक्त उर्वरकों के बैग पर न्यूनतम विक्रय मूल्य अंकित करने की अनिवार्य शर्त रखी। इसी तरह सामान भाड़ा नीति की भी घोषणा की ताकि किसानों को उर्वरक एवं बीज सस्ते दामों पर प्राप्त हो सकें।

सरकारी आंकड़े बताते है कि भारत में कुल कृषि क्षैत्रफल का 60 प्रतिशत हिस्सा अभी भी सिंचाई के मानसून पर निर्भर है। किसान अभी भी प्रशंसकित बीजों का उपयोग नहीं कर पा रहे है। किसान अशिक्षित होने के कारण परम्परागत खेती में संलग्न है। कृषि में किसान नई विधियों, नए-नए उपकरणों का प्रयोग करें इसके लिए ही यह सब्सिडी या आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जाती है। परंतु सब्सिडी के सार्थक परिणाम इतने नहीं दिखाई दे रहे है जितनी की आशा थी।

भारत सरकार ने अभी हाल में गरीबों, किसानों, भूमिहीनों को एक जानकारी 2013 से नगद या कैश सब्सिडी देने की घोषणा करने का भी प्रावधान किया था। यह कैश सब्सिडी की राशि सीधे छात्रों, किसानों के खाते में जाएगी। प्रारंभ में इस कैश सब्सिडी के लिए देश के 51 जिलों को चुना जा रहा है। एक अप्रैल 2013 तक देश के 18 राज्यों को इस योजना में शामिल करने तथा एक अप्रैल 2014 तक देश के सभी राज्यों को 'केश सब्सिडी' योजना के तहत लाने का केन्द्र सरकार द्वारा रोकड़ केश या प्रारूप तैयार किया जा रहा है।

बीपीएल कार्डधारी किसानों को जो अनाज, खाद और तेल पर सब्सिडी दी जाती थी अब यह सब्सिडी नगद कैश के रूप में 34 से 4 हजार रूपये माह किसानों, मजदूरों, गरीबों के बैंक खाते में जमा की जाएगी। इस योजना को लागू करने का अर्थ यह भी है कि सब्सिडी का सीधा लाभ बीपीएल कार्डधारी, किसानों एवं छात्रों को नगद रूप में मिल सके। भारत में आज भी कहा जाता है कि लघु और सीमान्त कृषकों अर्थात् 'अन्नदाता' को आज भी दो वक्त की रोटी नसीब नहीं होती, ऐसी स्थिति में यह सब्सिडी द्वारा मदद अधिक उपयोगी साबित होगी।

प्रारंभ में जिन छात्रों के आधार कार्ड व बीपीएल कार्ड है उन्हें कैश सब्सिडी का लाभ तत्काल प्राप्त होगा। तथ्य बताते है कि मध्यप्रेदश में छः करोड़ आधार कार्ड बनाए जाने थे, जिनमें अभी मात्र एक करोड़ पचास लाख कार्ड ही बन पाए है। इस कार्ड के बगैर हितग्राहियों को सब्सिडी प्राप्त नहीं होगी।

यह कैश सब्सिडी की योजना पढ़े-लिखे जागरूक गरीबों और किसानों के लिए ठीक है। परन्तु अशिक्षित एवं अंगूठा लगाने वाले किसानों मजदूरों के लिए अभी उतनी कारगर साबित नहीं होगी। गरीब और लघु एवं सीमान्त कृषक एक तो बैंक में खाता अपने आप से नहीं खुलवा पाते उसके लिए भी उन्हें एक पढ़े-लिखे व्यक्ति की आवश्यकता होगी। क्योंकि वह बेचारे बैंक से आहरण के लिए वह पर्ची ही नहीं भरपाते जिसे हम आप जैसे लोग विड्रोल फार्म कहते है।

आपको यह जानकार हैरत होगी की कि अभी मैं यूजीसी प्रोजेक्ट के माध्यम से म.प्र. के छतरपुर जिले में कुछ काम कर रहा था उस कार्य के दौरान पाया कि मनरेगा योजना के शुरूआती वर्षों में तो जॉब कार्ड बनवाकरर गरीब और भूमिहीन श्रमिकों ने रोजगार पा कर काम किया। परन्तु जैसे ही भुगतान बैंक के माध्यम से प्रारंभ किया और किसान, मजदूरों को बैंक जाने के लिए अपना काम छोड़ना पड़ा। साथ ही बैंक ने भी कहा कि आपका चैक अभी कलेक्शन होकर नहीं लोटा। तब इन मजदूरों को अपने गाँव वापस लौटना पड़ा और इस प्रक्रिया में गरीब मजदूरों के तीन-चार दिन का नुकसान हुआ। परिणामस्वरूप मजदूरों ने जॉब कार्ड बनवाना बंद कर दिये या फिर जॉब कार्ड बनजाने के पश्चात् उन्होंने 100 दिन का रोजगार हासिल करने में कोई रूचि नहीं दिखाई। यही कारण है कि बुन्देलखण्ड के इस क्षेत्र में रोजगार के लिए पलायन जारी रहा।

कहने का अभिप्राय यह है कि जब तक बैंक की शाखाएं प्रत्येक गांव स्तर पर नहीं खोली जाती, तब तक समस्या का सही समाधान आसान नहीं है। बैंक की शाखाएं प्रत्येक गांव में खोली जाएं साथ ही उसमें एक फैशीलिटेटर नियुक्त किया जाए, जो कि केवल गरीब अशिक्षित मजदूरों किसानों के विड्राल फार्म भरकर उनको बैंक से कैश सब्सिडी का पैसा दिलाए और उनके खाते खुलवाएं। क्योंकि मनरेगा के दौरान देखने में यह भी आया है कि गांव के सरपंच, सचिव या अन्य पढ़े-लिखे दलाल किस्म के लोग इन गरीबों की बैंक पासबुक अपने पास रखे रहते है। उन बेचारों के नाम पर मजदूरी करते रहते है। जब इन दलाल किस्म के लोगों को पैसे की आवश्यकता होती है तब इस मजदूर गरीब किसानों को 10-20 प्रतिशत देकर शेष स्वयं हड़प जाते है। बैंक से निकलने के पश्चात् बैंक पासबुक पुन: ये दलाल किस्म के लोग अपने पास रख लेते है।

इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए तथा सही हितग्राही को कृषि एवं कैश सब्सिडी का लाभ दिलाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि गांव में ही बैंक खोला जाए। बैंक में एक फेशिलिटेटर नियुक्त किया जाए। साथ ही बैंक खुलने का समय सुबह या सायंकालीन हो ताकि मजदूर या कृषक दिन में जो काम करते है उनके काम का हर्जाना न हो। तभी इस कैश सब्सिडी योजना का सही लाभ ''बीमारू प्रदेशों'' के छात्रों, भूमिहीन कृषकों तथा गरीबों, किसानों को मिल पाएगा।

****

भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण का योगदान

डॉ. भावना यादव*

किसी भी राष्ट्र के विकास को उस देश की जनता के विकास से आंका जा सकता है। भारत ने क्रमश: दासता, स्वतंत्रता, विकासशील और अब लगभग विकसित होने का दर्जा पा लिया है। परन्तु आज भी जब हम अपनी जनता के विकास को देखते हैं तो स्वत: ही उसके दो भाग हो जाते है : स्त्री–पुरूष। ये हमें चौंकाते हैं।

इस वैश्विक एवं आधुनिक भारत की आधी आबादी में आज भी दासता, मुक्ति की छटपटाहट, गरीबी, अशिक्षा, पिछड़ापन, जागरूकता का आभाव और निर्णयों तथा विकास में आंशिक भागीदारी हमें प्राय: हर क्षेत्र में दिखाई देती है। यह और भी चिन्ताजनक है कि स्त्री न केवल परिवार की धुरी होती है वरन् ग्रामीण अंचलों में कार्य का पर्याय स्त्री ही है। फिर भी सर्वाधिक पिछड़ापन परिवार के स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में ही दिखाई देता है।

यह वास्तविकता है कि ''प्रत्येक देश और समाज का विकास इस बात पर निर्भर करता है कि उस देश की आधी आबादी अर्थात् महिलाओं को सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में क्या स्थान है।''[1] नेहरू जी ने कहा था ''यदि आप को विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा।'' महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वत: ही हो जायेगा।[2] सन् 1958 में तारा अली बेग की पुस्तक वूमेन ऑफ इंडिया की भूमिका लिखते हुये उन्होंने कहा कि ''एक फ्रांसिस ने लिखा था कि किसी देश की स्थिति जानने के लिये सबसे अच्छा उपाय यह पता लगाना है कि वहां महिलाओं की स्थिति कैसी है।''[3] अर्थात् महिलाओं की अच्छी स्थिति से देश की अच्छी स्थिति का मूल्यांकन होगा। आज भारत की आधी आबादी सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा राजनैतिक स्तर पर संघर्षरत है जो भारत के संपूर्ण विकास की सबसे बड़ी रूकावट है। इस शोध पत्र का उद्देश्य भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण के योगदान को बताना है।

स्वतन्त्रोत्तर भारत में महिलाओं की स्थिति को सुधारने व उनका विकास करने संबंधी अनेक योजनाओं एवं कार्यक्रमों को बनाया गया और उनका क्रियान्वयन भी किया गया। जिसके परिणामस्वरूप हमारे समक्ष महिला विकास से जुड़ी अनेक शब्दावलियाँ आईं उदाहरणार्थ –

(1) महिला कल्याण (2) महिला विकास (3) महिला सशक्तिकरण इत्यादि।

सशक्तिकरण के संबंध में महत्वपूर्ण बात यह है कि न तो कोई व्यक्ति किसी को सशक्त कर सकता है और न ही सशक्तिकरण ऐसी वस्तु है जो किसी को उठाकर दे दी जाये। सशक्तिकरण व्यक्तिगत भी होता है और सामूहिक भी। परंतु दोनों प्रक्रिया सहभागिता पर आधारित होती हैं।

''महिलाओं में राजनैतिक सशक्तिकरण की दिशा में 73वां व 74वां संविधान संशोधन एक महत्वपूर्ण कदम है।''[4] जहां राजनैतिक सशक्तिकरण का अर्थ औपचारिक एवं राजनैतिक संस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी है क्योंकि सामान्यत: महिलाओं की पहुंच सत्ता और राजनैतिक निर्णय तन्त्रों से काफी दूर है। इस प्रकार आधी आबादी का प्रतिनिधित्व उसी वर्ग से हो और उनसे संबंधित नीतियों को उन्हीं के द्वारा राजनैतिक माध्यम से लाया जाये। इसके लिये 73वां संविधान संधोशन 1993 को लागू हुआ। इस दिन प्रत्येक वर्ष सामाजिक विज्ञान संस्थान नई दिल्ली महिला राजनैतिक सशक्तिकरण दिवस के रूप में मनाता आ रहा है।[5] ''त्रिस्तरीय पंचायती राज में 33 प्रतिशत पद महिला प्रत्याशियों हेतु आरक्षित किये गये।''[6] परिणामस्वरूप पंचायतों में चुनी गयी महिलाओं का बड़ा समूह निर्णय लेने की प्रक्रिया से जुड़ गया। किन्तु फिर भी महिलाओं की स्थिति पुरूषों के समकक्ष नहीं आ पायी है। अत: महिलाओं को पुरूषों के समकक्ष अधिकार दिलाने हेतु राष्ट्र, राज्य व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लगातार प्रयास किये जा रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा चलाया जा रहा यू.एन. वूमेन महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम इसी की एक कड़ी है जो भारत के पांच राज्यों के चुने हुये जिलों की जनपद पंचायतों में संचालित किया जा रहा है।[7]

विकास की अवधारणा का यह नया पहलू हो सकता है परंतु डॉ. गार्नर ने वर्षो पूर्व लिखा था ''यदि स्त्रियाँ इस योग्य हैं कि वे चतुराई के साथ अपने व्यवसाय तथा उद्योगों में पुरूषों का मुकाबला कर सके और उन्हें स्कूलों में शिक्षा दे सकें तो वे राजनीतिक अधिकारों तथा विशेषाधिकारों के प्रयोग में भी पुरूषों के साथ भाग लेने योग्य हैं।'' प्लेटो वह पहला विचारक था जिसने राजनैतिक प्रक्रिया में महिलाओं की सहभागिता का समर्थन किया था। जिसका आधुनिकीकरण सशक्तिकरण के रूप में हमारे समक्ष है।

भारत सरकार ने ''वर्ष 2001 को 'महिला सशक्तिकरण वर्ष' के रूप में मनाने का निर्णय लिया और केन्द्र सरकार द्वारा देश में पहली बार 'राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति' बनायी गयी'',[8] ताकि देश में महिलाओं के लिये विभिन्न क्षेत्रों में उत्थान और समुचित विकास की आधारभूत व्यवस्थाएं निर्धारित किया जाना संभव हो सके। इसके साथ ही सरकार ने महिला सशक्तिकरण की दिशा में निम्नांकित प्रयास किये –

- महिला स्वयंसिद्धा योजना
- महिला स्वाधार योजना
- महिला उद्यमियों हेतु ऋण योजना
- स्वशक्ति योजना
- किशोरी शक्ति योजना
- बालिका समृद्धि योजना
- भारतीय तलाक (संशोधन) अधिनियम 2001
- परित्यक्ताओं के लिये गुजारा भत्ता संशोधन अधिनियम बिल 2001
- बालिका अनिवार्य शिक्षा एवं कल्याण विधेयक, 2001
- महिला शक्ति पुरस्कारों की घोषणा
- भ्रूण हत्या रोकने हेतु प्रयास

अन्य कार्य जो महिला सशक्तिकरण की दिशा में किये जाना निर्धारित हुये

- महिलाओं के प्रति हिंसा रोकने के लिये जिला स्तरीय समितियों का गठन तथा इन समितियों के भली भांति कार्य निष्पादन हेतु मार्ग निर्देशों का जारी किया जाना।
- गरीब तबकों की महिलाओं को कृषि पशुपालन डेयरी, हस्तशिल्प, हैण्डलूम आदि आर्थिक क्षेत्रों की गतिविधियों को प्रारंभ करने हेतु प्रशिक्षण और आर्थिक सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से 12 नई परियोजनाएँ 'स्टैप कार्यक्रम' के अंतर्गत वर्ष 2001 में स्वीकृत की गयी।

* सहायक प्राध्यापक–राजनीतिशास्त्र, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

- सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुपालन में महिलाओं के लिये उनके कार्य स्थान पर यौन उत्पीड़न रोकने हेतु राष्ट्रीय स्तर पर समिति का गठन।
- इसी वर्ष पहली बार ''वार्षिक आर्थिक सर्वेक्षण'' में लैंगिक असमानता संबंधी एक अध्याय जोड़ा गया और वर्ष 2001-02 के बजट का लैंगिक विश्लेषण भी किया गया।
- महिलाओं के आर्थिक स्वावलम्बन हेतु ''महिला आर्थिक कार्यक्रम'' (नौराड) द्वारा विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों के संचालन के लिये कई ''नई परियोजनाओं'' की स्वीकृति दी गई।
- इसी वर्ष पहली बार विभिन्न राज्यों तथा जिलों के ''जेंडर डेवलपमेन्ट इन्डेक्स'' तैयार करने हेतु कदम उठाये गये। इससे महिलाओं के लिये क्षेत्र आधारित जरूरी विकास योजनाओं को तैयार कराने हेतु मार्ग प्रशस्त हो सकेगा।
- महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं के सदस्यों को प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु डी.डब्ल्यू. सी.डी., इग्नू तथा आई.एस.आर.औ. के सहयोग से वर्ष 2001 में डिसटेन्स एजूकेशन परियोजना प्रारंभ की गयी।
- महिलाओं के लिये देश में उपलब्ध कानूनी प्रावधानों की व्यापक समीक्षा हेतु ''टास्क फोर्स'' का गठन किया गया ताकि उनको अधिक व्यावहारिक और उपयोगी बनाने हेतु आवश्यक कदम उठाये जा सके।
- इसी वर्ष देश के विभिन्न भागों में कार्यरत महिलाओं के लिये 29 महिला छात्रावासों के निर्माण की स्वीकृति प्रदान की गयी। इन छात्रावासों में ''डे केयर'' सुविधाएं भी उपलब्ध कराने का प्रावधान किया गया।

इसके अतिरिक्त 31 जनवरी 1992 को राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन तथा 1993 में राष्ट्रीय महिला कोष का गठन किया गया।

इन प्रयासों के परिणामस्वरूप महिलाएं अपनी स्थिति व अधिकारों के प्रति सचेत भी होने लगी। ए.आर. देसाई ने कहा- ''भारतीय महिलाओं में नई संवेदना व चेतना का विकास हो रहा है जिससे अब उसे अधिक समय तक उन पारिवारिक, संस्थागत, राजनैतिक और सांस्कृतिक मानदण्डों की घुटन में नहीं रहना पड़ेगा जिनके कारण उसकी स्थिति सदैव अपमानजनक रही है।''[9] सरकारी प्रयासों से विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की सक्रियता बढ़ी है। परन्तु परंपरागत भारतीय मानसिकता ने स्त्रियों की इस बदलती स्थिति को पूर्णत: स्वीकार नहीं किया है।

कानून द्वारा जो प्रावधान किये गये उनको उतनी सामाजिक स्वीकृति नहीं मिली जितनी मिलनी चाहिए थी। जिसके कारण विभिन्न मोर्चों पर स्त्रियों की मौजूदगी के बाद भी लगातार उनकी कम होती संख्या, कन्या भ्रूण हत्या, घर और बाहर बढ़ती हिंसा, बलात्कार सेवा क्षेत्रों में दोयम दर्जे की स्थिति हमारे समाज की महिलाओं के प्रति विमुखता का दर्पण है। ''वास्तव में भारतीय संविधान द्वारा नर-नारी समानता की घोषणा और प्रावधान एक महान उपलब्धि है जो यहाँ महिलाओं को बिना किसी उल्लेखनीय संघर्ष के मिल गए परंतु इस समानता को वास्तविकता में परिवर्तित करने के लिये संघर्ष की आवश्यकता है।''[10]

इस प्रकार महिला सशक्तिकरण वर्ष व उसके पूर्व में महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु सरकार ने कई प्रयास किये हैं। जिनके परिणाम आगे आने वाले वर्षों में अधिक सकारात्मक होने चाहिये थे। परन्तु महिलाओं के उत्थान हेतु बनायी गई योजनाओं का लाभ उनके द्वारा कागजी कार्यवाहियों में हस्ताक्षर करने तक ही सीमित हो गया अर्थात् आरक्षित सीट पर महिला चुनी जाती है पर व्यावहारिक रूप से प्राय: आज भी पति, पिता, पुत्र ही पद के दायित्वों का निर्वाहन करते दिखते हैं। बैंक ऋण या आर्थिक योजना पर हस्ताक्षर महिला के और लाभ घर के पुरूषों को होता है। इसके लिये महिलाओं को सरकार द्वारा उनके सशक्तिकरण हेतु किये जा रहे प्रयासों के प्रति सतत् जागरूक करना होगा।

वास्तव में ''महिला को जागरूक करने के लिये उत्तरोत्तर जागरूकता की जरूरत है। उनकी स्वतंत्रता की रक्षा हेतु उन्हें स्वयं की क्रियाशील, सृजनशील, प्रजातांत्रिक शक्तिशाली स्वनिर्भर, खुश तथा सत्यम शिवम सुन्दम् के गुणों से युक्त बनना होगा। महिला सशक्तिकरण हेतु महिला को सशक्त बनाकर ही सशक्त रखा जा सकता है। सशक्त होने पर महिला समग्र विकास की भावना से स्वयं जुड़ जायेगी।''[11]

वास्तव में सशक्तिकरण का अर्थ ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें महिलाओं की अपने आप को संगठित करने की क्षमता बढ़ती तथा सुदृढ़ होती है। वे सामाजिक-आर्थिक स्थिति, लिंग और परिवार तथा समाज में भूमिका के आधार पर निर्धारित संबंधों को दर किनार करते हुए आत्म निर्भरता विकसित करती हैं। इस प्रक्रिया में विकल्पों के चयन और संसाधनों के नियंत्रण की उनकी क्षमता के साथ-साथ परिवार और समुदाय के साथ सहभागितापूर्ण संबंधों का लाभ उठाने की उनकी क्षमता भी शामिल है।

इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये महिला सशक्तिकरण का अर्थ यह भी है कि महिलाऐं सामाजिक आंदोलनों में भाग ले सके और उनका नेतृत्व कर सकें साथ ही लक्ष्य प्राप्त करने के लिये प्रगति के मार्ग में आने वाली तमाम बाधाओं को समाप्त भी कर सकें।

संदर्भ

1. खन्ना, संतोष : महिला सशक्तिकरण और कानून, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 33.
2. मोदी, अनीता : प्रकाशित आलेख-कुरूक्षेत्र, नईदिल्ली, अगस्त 2013, पृष्ठ 28
3. शर्मा, रोमी : भारतीय महिलाएं, नई दिशाएं, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ 17.
4. सिंह, यतीन्द्र एवं भट्ट, आशीष : म.प्र. में पंचायत राज व्यवस्था, विविध आयाम, भोपाल, पृष्ठ 113.
5. कुमारी मंजु : विकास परिचर्चा, लखनऊ, पृष्ठ 40.
6. सिंह, यतीन्द्र सिंह एवं भट्ट, आशीष : म.प्र. में पंचायत राज व्यवस्था, भोपाल, पृष्ठ 113.
7. म.प्र. पंचायिका 2012 पृष्ठ 12.
8. योजना, अप्रैल 2002, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, पृष्ठ 38.
9. वीमेन्स मूव्मेन्ट इन इण्डिया : एन असेसटमेंट इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली वॉल्यूम ×× नं. 23 जून 1985.
10. वीमेन्स इंटरनेशनल डेमोक्रेटिक फेडरेशन, चौथी कांग्रेस
11. शेण्डे, रामजी, हरिदास : नारी सशक्तिकरण, ग्रन्थ विकास, जयपुर, 2006, पृष्ठ 50.

****

वैश्विक आतंकवाद के दौर में लोकतंत्र

डॉ. सुनीता त्रिपाठी*

19वीं सदी में जहाँ विश्व साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद के दौर से गुजर रहा था वहीं कुछ राजनैतिक धारायें अपने कार्य मे व्यस्त थे जिसके परिणामस्वरूप 20वीं सदी में शीत युद्ध प्रारम्भ हुआ। यही स्थिति 21वीं सदी में आतंकवाद के रूप में जानी जायेगी।(1) क्योंकि विकसित संसार में विज्ञान के नये-नये आयामों में आतंकवाद को भी काफी ज्ञानवान एवं समृद्ध बना दिया है। बची खुची कमी (जैसे संरक्षण एवं संवर्द्धन) कुछ राष्ट्रों ने पूरा कर दिया। परिणामस्वरूप ऐसे राज्यों (राष्ट्रों) का मानो आतंकवाद के लालन-पालन के लिये ही जन्म हुआ हो। हालांकि अतीत में वैसा नहीं था जितना आज है। विश्व की अनगिनत आतंकी कहानी ने इतिहास रचा। लेकिन इस इतिहास को पढ़ने का मौका शायद नहीं, क्योंकि आतंकी रचनाकार पूर्व की शक्ति जो ठहरे। ''वर्तमान में विश्व के अपराजय समझे जाने वाले अमेरिका को जब इन पोषित आतंकवादी पहलवान ने उन्हीं के घर में ऐसी भीषण तबाही मचाई कि मानो पूरे विश्व में भूकम्प आ गया हो, तब विश्व के सामने इस्लामी आतंकवाद की पूर्ण तस्वीर दिखाई दी। इन विश्वव्यापी इस्लामिक आतंकवाद ने इतना संदेश अवश्य दिया कि ''मैं ही अल्लाह हूँ, मेरा स्थान क्या है'' क्योंकि वर्तमान सदी का यह संस्कार दारूल इस्लाम से मिला।(2) शायद ये क्रूर हैवान लोग मजहब को बदनाम कर शौर्य-विजय की तृष्णा को हासिल करने में लगे हैं। इस्लाम का संदेश, शांति, समृद्धि, सौहार्द तथा अमन चैन है। शायद वे लोग भूल गये, स्मरणविहीन हो गये जिसने अपने धर्म को 'जेहाद' के लिये बरगलाय, इस शब्दावली को जोड़ा। प्रचलित भयावह स्थिति सचमुच क्लेस ऑफ सिविलाइजेसन की ओर जा रहा है ऐसे में ईण्ड ऑफ आइडियोलॉजी संभव सा लगता है। भारत में जो कुछ आतंकी वारदात पिछले कई दशकों से हो रहा है, इसी नारे का एक भाग सा नजर आ रहा है। इस नारे के प्रवर्तक में पड़ोसी राष्ट्र पाकिस्तान है। इसने अपने जन्मकाल से ही आतंकवाद को अपनी सुन्दर गोद में बैठाया। ''यही आई.एस.आई. रूपी माँ जिनकी अनेक खूबसूरत शोहरत भी है आठ रूपों में कर्तव्य निभा रही है। जैसे ज्वाइंट इंटैलीजेंस ब्यूरो, ज्वाइंट काउंटर इंटैलीजेंस ब्यूरो, ज्वाइंट काउंटर इंटैलीजैंस नार्थ, ज्वाइंट इंटैलीजेंस मिसलेनियम, ज्वाइंट सिग्नल इंटैलीजेंस ब्यूरो एवं ज्वाइंट इटैलीजेंस टैक्नीकल नामक शाखा तमाम तरह के विध्वंसक गतिविधियां इनकी देख-रेख में जारी हैं। धन से लेकर संरक्षण एवं संवर्धन इन आतंकी गुटों को मिलता है। पाक में ऐसे 70 से अधिक आतंकवादी शिविर या ठिकाने स्थापित हैं जहाँ घातक हथियारों से विस्फोटक एवं तकनीक स्तर के प्रशिक्षण दिये जाते हैं। जिसमें प्रत्येक दिन 15-20 हजार नवयुवकों को आतंकी ट्रेनिंग दी जाती है। जिस पर प्रतिमाह 2.55 करोड़ रूपया से अधिक खर्च होता है।(3) अनुमान है कि यह खर्च 15 से 17 गुणा प्रति वर्ष बढ़ता जा रहा है। 'आपरेशन टोपाज' जिसकी निश्चित कार्य योजना है और वह 1989 से कार्यरत है। जिसमें बहुत सारे आतंकी गुट हैं खासकर जैस-ए-मुहम्मद, लक्सर-ए-तोयबा, जम्मूकश्मीर लिबरेशन फ्रंट, हरकत उल अंसार, अल उमर, अल वर्क मुस्लिम जांवाज आदि है। इनको भारी धन एंव घातक हथियार मुहैया कराया जाता है। इन सारे तथ्यों को देखने मात्र से इनके मंसूबों एवं रूपों का खतरनाक वर्णन करना असंभव है।(4) आखिर भारत कब तक इन देवासूर संग्राम से लड़ता रहेगा ? 27 सितम्बर 2008 को आतंकवादी हमला (मुम्बई की पाँच सितारा ताज होटल) ने इस बात को और पुख्ता बना दिया कि आतंकवादियों की शक्ति कितनी है, ये कहीं भी जा सकते हैं, कुछ भी कर सकते हैं। यहाँ पर लोकतंत्र को शर्मशार करने वाले आतंकी वृति ने चिन्ता एवं चिन्तन के लिये विश्व को झकझोर दिया।मानव समानता का सिद्धांत जो कि लोकतंत्र के सामाजिक दर्शन का आधारभूत सिद्धांत है। जन्म-जाति, वर्ग-चरित्र तथा योग्यता इत्यादि के भेदों से परे प्रत्येक मनुष्य के समान नैतिक गुण और आत्मिक गौरव पर बल देता है। ''बर्न्स जैसे विद्धानों ने कहा था कि मानसिक दुर्बल्य, दरिद्रता तथा निरक्षरता के बावजूद एक मनुष्य-मनुष्य ही है, तो उसने मानव की आध्यात्मिक समानता रूपी इस महान सत्य की ही उद्घोषणा की थी।''[5] लेकिन बर्न्स की कहीं ये बाते शायद वर्तमान परिवेश से भिन्न नज़र आता है क्योंकि की जो खोज की उससे वह इस परिणाम पर पहुँचा कि अधिकतर विद्धान लोकतंत्र को उचित और आदर्श राजनीतिक और सामाजिक संगठन समझते पूर्ववर्ती की अपेक्षा अधिक सुदृढ़ आधार पर खड़ा है, किन्तु वह उतना आशावादी नहीं हैं जितना कि 19वीं शताब्दी का लोकतंत्रवादी था।''[6] लोकतंत्र के मार्ग में कठिनाइयों को आज हम उससे कहीं अधिक जानते है जितना कि इस शताब्दी के आरम्भ में लोग जानते थे और हमें ऐसा लगता है कि लोकतंत्र कदाचित् यह सब कुछ नहीं कर सका जिसकी उससे आशा की जाती थी। शायद लोकतंत्र की आधारभूत मान्याताओं में हमारा विश्वास कुछ क्षीण हो गया है। शायद परिस्थिति कुछ ऐसी रही। आज हम व्यक्तिगत स्वतंत्रता, जिसका लोकतंत्र आश्वासन देता है अपेक्षा सुरक्षा और भौतिक सुख-सुविधा की अधिक चिन्ता करते है, जो कि अधिनायक तंत्र हमें देने का दावा करता है। कारण चाहे कुछ भी क्यों न हो, किन्तु सत्य यह है लोकतंत्र की खोई हुई प्रतिष्ठा के फिर से प्रतिष्ठित हो जाने के बावजूद इसकी स्थिति आज उतनी सुरक्षित तथा दृढ़ नहीं है।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात्, मिश्र, मध्य पूर्व तथा दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों मं जिस प्रकार लोकतंत्र विरोधी प्रवृत्तियों का तेजी से विकास हुआ है तथा इन देशों के निवासियों ने अधिनायकवाद का उत्साहपूर्वक स्वागत किया तथा इन देशों के में अधिनायकवादी प्रवृत्तियां उभरी, उससे यह कहना कठिन है कि राजनीति विकास की प्रवृत्ति लोकतंत्र की ओर है।' एक अहम सवाल लोकतंत्र बनाम आतंकवाद साम्यवादियों की धारणा रही है कि लोकतंत्र संकट में है। आर्थिक विकासोन्मुखी प्रतिवादी ने जो आर्थिक और सामाजिक स्थिति उत्पन्न कर दी है इसमें लोकतंत्र का चलना यदि असंभव नहीं तो अत्यंत कठिन अवश्य हो गया है। इन सब के बावजूद आज लोकतंत्र का वर्तमान दौर संकट पूर्ण स्थिति में प्रवेश कर चुका है और यह संकट की स्थिति 'आतंकवाद' है। आतंकवाद आज हैवानियत की ऐसी नीति एवं नियति बन चुकी है कि जिनको सम्बन्धित मानव समाज के लिये न तो कोई दर्द, रहता है, न ही कोई आदर्श तंत्र की बुनियाद। ''सत्ता, संपत्ति, मान और यश की चाह मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्तियां हैं। (लोकतंत्र इन्हीं मर्यादित बातों की इजाजत देती हैं) और यदि ये मर्यादित रहे तो दैवीभाव का प्रगतीकरण होता है और यदि वो अमर्यादित हो गयी तो वे ही आसुरी, भाव में बदलकर मानव सभ्यता के लिए अभिशाप बन जाती है। सुर का अर्थ ही होता है नियंत्रण में रहने वाला। लोकतंत्र सुर में विश्वास रखता है और असुर का अर्थ होता है नियंत्रणविहीन (आतंकवाद असुर प्रवृत्ति) करने वाला तत्व है। धर्म का अर्थ है - व्यक्ति, समाज, जीव और परमात्मा के बीच विद्यमान नैसर्गिक सन्तुलन को ध्यान में रखकर बनाने वाले समाज।''[8] इसी समाज की अवधारणा ने

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या स्नात्कोत्तर, उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

संरक्षण एवं संवर्धन को लोकतंत्र के रूप मे परिभाषित किया, लेकिन इसको (लोकतंत्र) नेस्तनाबूद करने का बेड़ा उठाया इस वैश्विक आसुरी प्रवृत्तियों वाले आतंकवाद ने। विश्व ने, विश्व के समाज ने एवं विश्व के सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियों ने आर्दश मूलक समाज तंत्र के रूप में लोकतंत्र को विकसित किया। धीरे-धीरे विश्व व्यवस्था ने इसे मान्यता दी। इसका साकार स्वरूप 19 वीं शताब्दी से वर्तमान शताब्दी में प्रचालित व्यवस्था का अनिवार्य अंग बन गया। यह 17 वीं और 18 वीं शताब्दी में एक अवधारणा रही थी, इसकी नींव पर आज की मुख्य प्रवृत्ति बन गयी। 19 वीं एवं 20 बीं शताब्दी में यही अवधारण आतंकवाद के रूप में रहा था- कारण विश्व की महान दो शक्ति अमेरिका एवं सोवियत रूस। परिणामस्वरूप 20 वीं एवं 21 वीं शताब्दी का यह क्रूर नासूर आतंकवाद के एक प्रवृत्ति के रूप में सामने है। इस आतंकवाद को पोषित किसने किया ? प्रश्न का जवाब होगा बढ़ती हुई साम्यवादी व्यवस्था के भय ने। इसको संवर्द्धन किसने किया? प्रश्न का जवाब होगा पूंजीवाद के बढ़ते प्रभाव ने।

''यह सर्वविदित है कि समाजवाद की अवधारणा लोकतंत्र को परिभाषित करता है। जिसका प्रयोग राजनैतिक, दार्शनिक से लेकर श्रमिक आन्दोलन कर्ता एवं सामाजिक कार्यकर्ता तक, जो समाज का या समाज के सब लोगों का हित चाहते है जो एक सच्चे लोकतंत्र के लिये अनिवार्य भी है।''

आतंकवादियों की मानसिकता ही होती है स्थापित सरकार को तबाह करना, लोगों में भय पैदा करना ताकि आतंकी अपनी क्रूर मनमानी सत्ता को स्थापित कर सके। विश्व के तमाम संकट लोकतंत्र को प्रभावित करता है। लेकिन सबसे बड़ा एवं प्रभावित कारण आतंकवाद है। जम्मू कश्मीर में आतंकवाद का चलता क्रूर कहर इन्हीं की एक गाथा है। लेकिन जम्मू कश्मीर में स्थापित लोकतांत्रिक व्यवस्था के अनुसार लोगों ने मताधिकार का प्रयोग किया।

सोवियत संघ का विघटन, आतंकवादियों द्वारा पृथकतावादी गुटों के सहारे अपरोध रूप से अपनी नीति स्थापित की और सोवियत संघ का विघटन हुआ। नेपाल में माओवादी पृथकतावादी आतंकी वर्षों तक नरसंहार कर अन्ततः सत्ता में प्रवेश किया। यह वर्तमान विश्व व्यवस्था खासकर लोकतांत्रिक मूल्यों के लिये खतरनाक संदेश है। ऐसे कितने उदाहरण है। लोकतंत्र की अपनी कुशल गौरव एवं गरिमा होती है। सामाजिक समरसता, समानता एवं अधिकार से पोषित है। क्या ऐसे में सत्ता की भागीदारी लोकतांत्रिक देश में ऐसे आतंकी गुटों का हो तो क्या कह सकते है। अफगानिस्तान में तालिबान की स्थिति का नतीजा सारे संसार ने देखा। श्रीलंका की कहानी दिनों-दिन गंभीर होती जा रही है, क्या होगा इस विश्व व्यवस्था का, क्या होगा लोकतंत्र का। हालांकि श्रीलंका की सरकार कई वर्षो से पृथकतावादी आतंकी संगठन का मुकाबला कर रहे है। ''सारे के सारे तमिल विद्रोही मारे जा चुके। लिट्टे का प्रमुख प्रभाकरण भी मारा गया। अब ऐसा लगता है कि श्रीलंका लोकतंत्र को सुरक्षित करने में सफल होते नजर आ रहे है।'' ताजा घटना क्रम देखा जाय तो पाकिस्तान सबसे अच्छा उदाहरण है। पाकिस्तान के जन्म काल से लोकतंत्र नाम की कोई चीज नहीं है। यहां तो सैनिक शासन के जूतों तले आवाम का आस्तित्व है। लेकिन फिर भी कभी-कभी लोकतंत्र की बहाली होती रही है। लेकिन इसका कोई अर्थ नहीं। कहने को लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देश। पाकिस्तान की स्थिति भयावह है। अपरोध रूप से शासन की शक्ति का प्रयोग इस आतंकवादियों द्वारा किया जाता रहा है। स्थिति ऐसी बन गयी है कि विश्व के सामने यह चुनौती है।

''17 मई 2009 को संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव ने विश्व से आग्रह किया कि बर्मा में लोकतंत्र की बहाली के लिये विश्व के देशों को आंग सांस सूकी लोग की रिहाई का प्रयास किया जाना चाहिए। यही स्थिति कमोवेश कुछ राष्ट्रों की है। जहां पर कि लोकतंत्र की हत्या हो रही है। वैसे कुछ मानवाधिकार संगठन इस तरह की बातों के लिये सामने आते हैं लेकिन परिणाम कुछ नहीं निकलता। कुछ हद तक स्थापित विशेष एवं संस्थागत प्रभावों ने भी लोकतंत्र को आहत किया है। जिसका फायदा उन तमाम पृथकतावादी गुटों एवं आतंकवादी को मिला है। इन तमाम बातों का जिक्र करने से यह स्पष्ट होता है कि आतंकवाद बनाम लोकतंत्र एक चुनौती है। चुनौती इस रूप में की लोकतंत्र की सुसंगठित व्यवस्था को कैसे सुरक्षित रखा जाय, और आतंकवाद को समूल नष्ट किया जाय।

भारतीय परिवेश में आतंकी परिछाया ने बहुत हद तक लोकतांत्रिक व्यवस्था में चुनाव की प्रक्रिया को आघात किया है। लोकतंत्र की मूल धारणा स्वच्छ एवं स्वतंत्र निष्पक्ष चुनाव प्रणाली को जिस हद तक आतंकी गुटों ने देश को अस्थिर करने का बार-बार असफल प्रयास किया है यह निःसंदेह चिंता एवं चिन्तन का विषय है। यदि देश की सुरक्षा व्यवस्था काफी चुस्त न हो तो हमें नहीं लगता चुनावी प्रक्रिया सही तरीकों से हो पायेगी।[13] एक आम नागरिक के जेहन में यह सवाल उठता है। क्या पुलिस व्यवस्था के अभाव में चुनाव संभव है ? जबाव 'नहीं' होगा। दिन व दिन इन आतंकी की दिशा एवं दशा में परिवर्तन हाते रहता है और यह विकराल रूप लेते जा रहा हैं इतना पुख्ता सुरक्षा व्यवस्था के बीच आतंकवादी अपने मंसूबों में सफल हो जाते हैं। ''दुर्भाग्य की बात है कि धर्म-निरपेक्षता तथा नास्तिकवाद पर जोर देने वाली वर्तमान औद्योगिक सभ्यता ने ईश्वर पर विश्वास के ऊपर आधारित जीवन के पुराने मूल्यों को नष्ट कर दिया है। एक राष्ट्र-राज्य के घटकों में एकता तथा बन्धुत्व की भावना और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राष्ट्रों के सहयोग की भावना उत्पन्न करने में लोकतंत्र की विफलता एवं आतंकी परिछाया का मुख्य कारण यही रहा है। परस्पर सद्भावना का प्रायः अभाव है। आज के जीवन का नियम स्वार्थ है परमार्थ नहीं। इन्हीं की परिणति कि हम पृथकतावादी गुटों एवं आतंकवाद से परेशान हैं। यदि संघर्ष के स्थान पर सहयोग और अहम भाव के स्थान पर परमार्थ भाव की प्रतिष्ठित करना चाहते हैं तो पुराने नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करना होगा। वरना लोकतंत्र को कलंकित करने वाले ये नासूर आतंकी बार-बार ठेस मारने से बाज नहीं आयेगें। लोकतंत्र का वर्तमान दौर प्रभावित हैं, असफल है। लोकतंत्र की सफलता के लिये आध्यात्मिक आधार होना आवश्यक है। लेकिन जिस प्रकार समाप्त करने की। मानव जाति का कल्याण सामाजिक आर्थिक जीवन पर किया जाना है। ऐसे में जन-मानस को अपने को एक जुटता एवं सौहार्द का परिचय देना होगा। मौकापरस्त लोगों एवं तत्वों से मुकाबला करना होना वरना लोकतंत्र की अर्थहीनता सामने आयेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

✻ 1. ज्योति प्रसाद सूद; आधुनिक विचारों का इतिहास, प्रकाशक क्रान्ति नाथ गुप्ता, के नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ ✻ 2. वही, पृ. 333 ✻ 3. वही. पृ. 335 ✻ 4. के.सी. सुदर्शन (सरसंचालक रा. स्व. सं. संघ); आतंकवाद का मूलाधार, विश्व संवाद केन्द्र, पत्रिका (त्रैमासिक) लखनऊ, वर्ष - 2003, अंक-4, पृ. 07 ✻ 5. मिश्र, हृदयनरायण; सामाजिक राजनीतिक दर्शन के नये आयाम, प्रकाशक द्वारका प्र. अग्रवाल, इलाहाबाद, नवीन संस्करण, जून 2006, पृ. 149. ✻ 6. जे आर पागर्वी; मार्क्सवादी आतंकवादी, विश्व संवाद केन्द्र पत्रिका (त्रैमासिक) लखनऊ, वर्ष-2003, अंक 4 पृ. 40 ✻ 7. फाड़िया, बी.एल.; अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, साहित्य भवन आगरा, प्रथम संस्करण, पृ. 36-37 ✻ 8. जेकी गोल्ड वर्ग; आतंकवादी मदरसे, एक अमेरिकी पत्रकार के निजी अनुभव, आतंकवाद का मूलाधार, विश्व संवाद पत्रिका (त्रैमासिक) लखनऊ वर्ष 2003 अंक 4 पृ. 114 ✻ 9. एकेश की विवेचना, आतंकवादी तथा हिंसक साजिशों का तिलिस्म, विश्व संवाद पत्रिका (त्रैमासिक) लखनऊ वर्ष 2003 अंक 4 पृ. 81 ✻ 10. वही, पृ. 82 ✻ 11. दैनिक जागरण, भागलपुर संस्करण, पृ. प्रथम 17.05.2009 ✻ 12. हिन्दुस्तान, भागलपुर संस्करण 17.05.2009 ✻ 13. हिन्दुस्तान एवं दैनिक जागरण, भागलपुर संस्करण, पृ. 1, 17.05.2009 ✻ 14. सूद ज्योति प्रसाद, आधुनिक विचारों का इतिहास, भाग-3, 4, प्रकाशक कांति नाथ गुप्ता, मेरठ, पृ. 355-56 ✻ 15. हिन्दुस्तान, भागलपुर संस्करण, गुरूवार, 28 मई 2009 पृ. 17

भारतीय महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण

नियाज अहमद अन्सारी * रामजी गर्ग **

प्रस्तावना :-

विश्व में सन् 1975 से प्रतिवर्ष 8 मार्च को 'अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस' के रूप में मनाया जा रहा है।[1] इस अवसर पर लगभग सभी देशों में नारी को सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक व राजनीतिक समानता-स्वतंत्रता देने की जोर-शोर से घोषणाएँ की जाती रही है, किन्तु अभी भी नारियाँ आर्थिक स्वावलंबन की दृष्टि से पुरूषाधीन बनी हुई हैं। आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त करने के लिए ही 8 मार्च, 1857 को न्यूयार्क के सिलाई एवं वस्त्र उद्योग में कार्यरत महिलाओं ने पुरूषों के समान वेतन तथा 10 घंटे के कार्यदिवस के निर्धारणार्थ हड़ताल की थी।[2]

इससे अमेरिका और यूरोप में तो नारी आंदोलन शुरू होने से नारियों को आत्मनिर्भरता तीव्रगति से प्राप्त होती रही है, लेकिन एशिया, विशेषकर भारत में आज भी नारीवर्ग आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त करने हेतु प्रयासरत हैं, क्योंकि आम परिवारों में नारी को घरेलू कार्यों तक सीमित रखा गया है। उन्हें पसंदीदा वस्तुएँ खरीदने, पढ़ने एवं व्यवसाय करने हेतु दादा, पिता, भाई पति या ससुराल अर्थात पुरूषवर्ग द्वारा सदा ही हतोत्साहित किया गया जिसके परिणामस्वरूप भारतीय नारी में निहित क्षमताओं का सदुपयोग न होने के कारण भारत विकसित राष्ट्र नहीं बन पाया।

1919 में मुंबई में हुए महिला सम्मेलन में महात्मा गाँधी ने कहा था, ''जब तक भारतीय महिलाएँ व आर्थिक मामलों में पुरूषों के साथ बराबरी की हिस्सेदारी नहीं निभाती, तब तक भारत का सितारा बुलंद नहीं होगा।[3] अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 1951 में महिलाओं को पुरूषों के समान वेतन व श्रम हेतु नियम बनाया। इसी परिप्रेक्ष्य में भारत में महिला कर्मकारों को अपने बच्चों को स्तनपान कराने हेतु आवश्यक रूप से अवकाश, 1961 में 80 कार्यदिवस पूरे होने पर प्रसव/गर्भपात हेतु अवकाश व नि:शुल्क चिकित्सा एवं 1976 में समान कार्य हेतु समान पारिश्रमिक देने हेतु एक्ट बनाये गये जिससे कामकाजी महिलाओं को लाभ मिला।[4]

आर्थिक सशक्तिकरण :-

कालान्तर में नारियों के आर्थिक स्वावलंबन सहित सर्वांगीण विकासार्थ 1985 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत अलग से महिला एवं बाल विकास विभाग एवं 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया गया। महिला-बाल विकास विभाग नोडल संगठन के रूप में योजनाएं, नीति एवं कार्यक्रम बनाता है जिससे नारीवर्ग को सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सशक्त किया जा सके।[5]

यह विभाग अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वाह करते हुए ही भारत में वर्ष 2001 को 'महिला सबलीकरण वर्ष' के रूप में मना सका। इस वर्ष केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा कई महिला विकास कार्यक्रम प्रारंभ किये गये। वास्तव में भारत को 70% लोग आजीविका हेतु कृषि, वानिकी, पशुपालन, मुर्गीपालन, खाद्य प्रसंस्करण आदि कार्यों में लगे हुए हैं जिसमें महिलाओं का योगदान 50% है। लेकिन इतनी महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद उनकी पहचान अदृश्य कामगार की भांति बनी हुई है। 2001 में शुरू हुई स्वंसिद्धा एवं स्वाधार योजनाओं से भविष्य में निश्चित ही उनका परिदृश्य बदल रहा है। महिलाओं को आर्थिक रूप से सबल करने के उद्देश्य से मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने राष्ट्रीय महिला कोष में आगामी 5 वर्षों में 250 करोड़ रूपये का योगदान करने की घोषणा की है।[6]

राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति :-

2001 में ही भारत में पहली बार 'राष्ट्रीय महिला उत्थान नीति बनाई गई। आशा है कि इसके सफल क्रियान्वयन से महिलाओं को आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक विकास में समान भागीदारी के अवसर मिलेंगे। इस नीति के प्रमुख उद्देश्य हैं-

- देश में महिलाओं को शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा में सहभागिता सुनिश्चित करना।
- इनके लिए ऐसा वातावरण तैयार करना कि नारीवर्ग अनुभव करें कि वे स्वयं सामाजिक व आर्थिक नीतियां बना सकती हैं।

इस नीति को देश में पूर्णत: लागू करने हेतु 10 साल की समय सीमा रखी गई है। यद्यपि पिछले वर्ष से ही इस पर क्रियान्वयन शुरू हो गया था, तदापि कार्यान्वयन वर्ष 2002 के तहत यह नीति 'द्रुतगति से चलती हुई अपनी मंजिल की ओर अग्रसर है।[7] कामकाजी महिलाओं हेतु देश के 70 शहरों में होस्टल बनाये गये हैं जिनमें किफायती व सुरक्षित आवास उपलब्ध है। इनमें इनके बच्चों की देखभाल की भी व्यवस्था होती है।[8]

बेशक, भारत में कुछ महिलाओं को आर्थिक स्वावलंबन प्राप्त करने में पूर्वोल्लिखित योजना, नीति व कार्यक्रमों से लाभ मिलने लगा है और भविष्य में भी इनका उनके आर्थिक जीवन पर सार्थक प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। लेकिन सदियों से शोषित, प्रताड़ित एवं उपेक्षित भारतीय नारी की आर्थिक निर्भरता की बेड़ी में कड़ियों रूपी कई समस्याएँ आज भी एक दूसरे से जुड़ी है जिनको काटे बिना सरकारी एवं गैर सरकारी प्रयासों की पूर्ण सफलता संदिग्ध ही बनी रहेगी।

आर्थिक स्वावलंबन में समस्याएँ :-

नारियों के आर्थिक स्वावलंबन के मार्ग में ये समस्याएँ गति अवरोधक के रूप में विद्यमान हैं-

- महिला विकास कार्यक्रमों का लाभ उठाने की प्रक्रिया महिलाओं की वर्तमान सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक दशा के प्रतिकूल है, क्योंकि आय, जाति व निवास प्रमाण-पत्र आदि बनवाने में महिलाओं को पुरूषों की तुलना में ज्यादा कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। आय प्रमाण-पत्र की वैद्यता केवल तीन माह होने के कारण भी इन्हें बार-बार कोर्ट-कचहरी व पार्षद या सरपंच के चक्कर लगाने पड़ते हैं, जिसे परिवार के पुरूष पसंद नहीं करते और उन्हें घर की चारदीवारी में रहने हेतु जोर देते हैं। इस प्रकार वे चाहते हुए भी आर्थिक रूप से सशक्त नहीं हो पाती हैं।

* सहायक प्राध्यापक : राजनीति शास्त्र, शासकीय महाविद्यालय, सिहावल, जिला-सीधी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी वाणिज्य अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय रीवा (म.प्र.) भारत

- भाई-भतीजावाद, रिश्वतखोरी आदि के कारण भी महिला कार्यक्रमों का लाभ पात्र हितग्राहियों को न मिलकर छोटे-बड़े नेताओं, जनप्रतिनिधियों एवं कर्मचारियों-आधिकारियों के परिवारों और समर्थकों को ही मिलता है। आम महिला का शासन् से विश्वास उठने से वह आर्थिक रूप से नि:शक्त ही बनी रहती है।
- महिलाओं को आर्थिक स्वावलंबन की दृष्टि से तैयार की गई अधिकतर योजनाओं व कार्यक्रमों को SC/ST की महिलाओं तक सीमित रखा गया है, जबकि सामान्य एवं अल्पसंख्यक वर्ग की महिलाओं हेतु इस प्रकार की योजनाओं को घोर अभाव बना हुआ है। मुस्लिम महिलाओं की पर्दाप्रथा, बहुविवाह एवं मौखिक तलाक के प्रचलन में बने रहने से उनकी आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय बनी हुई है।
- अभी भी 54.15: महिलाएँ साक्षर हुई हैं, ना कि शिक्षित। निरक्षरता के कारण भी महिलाएँ भेदभाव, शोषण और उपेक्षा सहते गरीब एवं आर्थिक रूप से पुरूषाधीन है, क्योंकि ससंद में 8% केन्द्रीय मंत्रिमंडल में 10%, प्रशासनिक सेवा में 6.8%, ट्रेड यूनियनों के उच्च पदों पर 5.6% और पुलिस बल में 2.2% महिलाएँ ही कार्यरत हैं।[9] हाल ही में श्रम मंत्रालय के रोजगार व प्रशिक्षण महानिदेशालय द्वारा जारी रोजगार संबंधी रिपोर्ट बताती है कि मात्र 16.3% महिलाएँ ही संगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं।[10]

निष्कर्ष :-

ऐसा नहीं कि महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वावलंबन प्राप्त करने में सक्षम नहीं हैं, वे ही गृह प्रबंधन से परिवार का समुचित विकास करती रही हैं। अक्टूबर 2002 में जारी फारचून पत्रिका की अंतर्राष्ट्रीय व्यापार जगत की 50 सर्वाधिक प्रभावशाली महिलाओं की सूची जारी की हैं जिसमें 2 भारतीय महिला उद्यमियों- विद्या छाबरिया (जम्बो ग्रुप ऑफ इण्डिया) और भारतीय शेयर बाजार की कार्यकारी उपाध्यक्ष नैनालाल किदवाई शामिल हैं। कहने का तात्पर्य है कि नारियों को आर्थिक क्षेत्र में जाने हेतु स्वतंत्रता एवं प्रोत्साहन देकर उनकी कई समस्याओं को उन्हीं के द्वारा हल किया जा सकता है।

31 मार्च, 2002 को प्रस्तुत 'संविधान समीक्षा आयोग की रिपोर्ट में अनुच्छेद 21 (स) के अंतर्गत ग्रामीण बेरोजागार मजदूरों को वर्ष में न्युनतम 100 दिनों तक रोजगार सुनिश्चित करने हेतु राज्य को बाध्यकारी रूप से कानून बनाने का सुझाव दिया है, जिस पर ईमानदारी से क्रियान्वयन करके महिलाओं को भी आर्थिक रूप से सक्षम बनाने में सहायता मिली है जिसे हम राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना के रूप में देख रहे हैं।[11]

इसी संदर्भ में नोबल पुरस्कार विजेता व कल्याण अर्थशास्त्र के प्रोफेसर अमर्त्य सेन ने अपनी पुस्तक 'India-Economic Development & Social Opportunity' में लिखा है, ''महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण से न केवल महिलाओं के जीवन में निश्चित रूप से सकारात्मक असर पड़ेगा, बल्कि पुरूषों और बच्चों को भी इससे लाभ होगा।''

5 अक्टूबर 2002 को योजना आयोग से मंजूरी प्राप्त 10वीं पंचवर्षीय योजना के मसौदे में 5 करोड़ लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लक्ष्य के वास्तविक क्रियान्वयन से नि:संदेह आम परिवारों के साथ औरतों की भी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो सकेगी।

संदर्भ ग्रंथसूची :-

1. क्रॉनिकल इयर बुक 2002, क्रॉनिकल पब्लिकेशंस (प्रा.लि.) नई दिल्ली-110016, पेज-622
2. नाटाणी, प्रकाश नारायण, 2002, महिला जागृति और कानून, आविष्कार पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, पेज-50
3. सिंह, सविता, 2002, गांधी और महिला सशक्तिकरण, रोजगार समाचार, 28 सितम्बर-4 अक्टूबर 2002, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली पेज2
4. अन्सारी, नियाज, जून 2002, महिला सशक्तिकरण की नीति, कार्यक्रम एवं क्रियान्वयन : एक समीक्षात्मक अध्ययन (अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध) शोध केन्द्र डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर राष्ट्रीय संस्थान महू (म.प्र.)
5. गुप्ता, वी.एस. 2001 राष्ट्र निमार्ण और महिला सशक्तिकरण, रोजगार समाचार, 11-17 अगस्त 2001, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली पेज8
6. क्रॉनिकल इयर बुक 2002, क्रॉनिकल पब्लिकेशंस (प्रा.लि.) नई दिल्ली-110016, पेज-71
7. अन्सारी, नियाज, 2002, महिला सशक्तिकरण : वायदे और क्रियान्वयन, योजना-अप्रैल 2002, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली पेज-38-40
8. आम नागरिक : अधिकार और सुविधाएँ, 2001 प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली पेज-223
9. क्रॉनिकल इयर बुक 2002, क्रॉनिकल पब्लिकेशंस (प्रा.लि.) नई दिल्ली-110016, पेज-71
10. राष्ट्र महिला, दिसंबर 2001, राष्ट्र महिला आयोग, 4, दीनदयाल उपाध्याय नई दिल्ली पेज-3-12
11. सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल इयर बुक 2002, क्रॉनिकल पब्लिकेशंस (प्रा.लि.) नई दिल्ली-110016, पेज-57

****

भ्रष्टाचार निवारण की संस्था के उपकरण के रूप में लोकायुक्त का पद (मध्यप्रदेश के विशेष संदर्भ में)

डॉ. पूर्णिमा गौड़ * डॉ. कामिनी पंवार **

राज्य की विकास यात्रा देवी सिद्धांत पर आधारित निरंकुश राजतंत्रों से आज लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित लोकल्याण राज्य के लोकप्रिय सिद्धांत तक पहुंच गयी है। निश्चय ही यह पड़ाव सर्वमान्य और सुदीर्घ सिद्ध हुआ है। निरंकुश राजतंत्रों के युग में जो राजकीय और प्रशासकीय आम आदमी की पहुंच के बाहर थी। अब भीड़ भरे चौराहे पर आने वाली आम चर्चा का विषय बन गये है। लोकविमुख एवं अनुत्तरदायी राज्य का सिद्धांत अब वैचारिक इतिहास के कूड़ेदान की वस्तु बन गया है। लोकोन्मुख एवं आदर्श छवि को विकसित किया है। लोककल्याणकारी सिद्धांत ने राज्य एवं नागरिको के सम्बन्ध को अधिक घनिष्ठ तथा मित्रवत बनाया है। आधुनिक राज्य पालने से लेकर मरघट तक एक छाया के सादृश्य व्यक्ति के साथ रहता है। स्वाभाविक रूप से इस विचार ने राज्य के कार्य और दायित्वों में अभूतपूर्व वृद्धि की है।

हेवर्ट का विचार है कि – युद्धोत्तर काल में लोक कल्याणकारी राज्य की सार्वभौम स्वीकृति के बाद समाज कल्याण एवं अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में सरकारी दायित्वों में व्यापक वृद्धि हुई है,और इसने जन–जीवन एवं सम्पत्ति के क्षेत्र में अभूतपूर्व रूप से प्रभावित किया है।एक अन्य विचार के अनुसार लोककल्याणकारी राज्य के विचार ने जहां वैयक्तिक जीवन की आवश्यकताओं को अतिशय प्रभावित किया है। वहीं साथ ही साथ जनसमस्याओं के विस्तार सम्भावनाओं के अवसर भी बढ़े है। वस्तुत: राज्य के कार्यों और दायित्वों की वृद्धि राज्य की शक्तियों का व्यापक विस्तार कर दिया है और व्यक्तियों का प्रयोग एक शाश्वत वैर है।

सत्ता भ्रष्टाचार की जननी है। अत: सत्ता के प्रयोग में जनाधिकारों की अवहेलना का भय छिपा रहता है। इस भय के बाद भी राज्य की शक्ति के प्रयोग को कम नहीं किया जा सकता। इसलिए आवश्यकता इस बात की हैं कि सत्ता के प्रयोग पर समुचित नियंत्रण के तरीकों की खोज की जाये जिससे इसके दुरूपयोग से होने वाले भ्रष्टाचार एवं कुप्रशासन के अवसर संशोधित रूप से कम किये जा सके। लोकप्रशासन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या प्रशासनिक अधिकारियों एवं राजनैतिक कार्यपालिका पर नियंत्रण की किसी भी प्रशासनिक संगठन पर नियंत्रण हेतु दो महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा।

1. प्रशासनिक भ्रष्टाचार पर नियंत्रण एवं कुप्रशासन पर नियंत्रण।
2. जनसमस्याओं के प्रति प्रशासन की संवेदनशीलता और सहिष्णुता का विकास यह समस्या निराकरण का रचनात्मक पहलू है।

ये दोनों ही पक्ष समस्या के समाधान के आवश्यक तत्व है।

इस समस्या के निराकरण हेतू अनेक संगठनों और संस्थाओं का निर्माण किया जा चुका है प्रशासनिक सुधार की आर्गेनाइजेशन तथा मेथेड की पद्धति संसद की आंकलन समितिया,विधिन्यायालय,प्रशासकीय प्रकोष्ठ,सतर्कता आयोग इस संदर्भ में ये संस्थाएं त्रुटिपूर्ण हैं और उद्देश्य की पूर्णता में असफल सिद्ध हुई है।

अम्बेड्समेन का पद स्वीडन की प्रशासनिक व्यवस्था की देन है,जिसे बाद में यूरोप के अनेक लोकतांत्रिक सरकारों ने मान्यता दी। अम्बेडसमेन एक संसदीय अधिकारी होता है वह नागरिकों की उन शिकायतों की छानबीन करता है। जिनमें लोकसेवकों ने अपनी शक्ति का उपयोग करते हुए ,उनके प्रति अनुचित व्यवहार किया है। यदि उसे यह विश्वास हो जाए की शिकायत उचित है तो यह संस्था उपचार की दिशा में प्रयत्नशील हो जाती है,किन्तु लोकायुक्त की मशीनरी तभी सक्रिय होगी, जब अन्याय के प्रतिकार के सभी संवैधानिक द्वार बंद हो चुके हों। 1963 में भारतीय नेताओं, विधिवेत्ताओं, संसद सदस्यों एवं बुद्धिजीवियों ने भारत में ओम्बुड्समे सदृश संस्था की स्थापना की मांग की सन्थानम् कमेटी राजस्थान प्रशासनिक सुधार आयोग 1963 एवं केन्द्रीय प्रशासनिक सुधार आयोग 1966 में भी इस संस्था की स्थापना की अनुशंसा की गई थी। 1968 में संसद में केन्द्रिय लोकपाल तथा लोकायुक्त विधेयक पर व्यापक चर्चा हुई किन्तु सरकार की उदासीनता के कारण इसे ठण्डे बस्ते में दफन कर दिया गया।

म.प्र. में लोकायुक्त संस्था की स्थापना 20 जून 1969 को श्री नरसिंह राव दीक्षित की अध्यक्षता में गठित म.प्र. प्रशासनिक सुधार आयोग ने प्रशासनिक सुधार और प्रशासनिक प्रहरी मण्डल की स्थापना का सुझाव दिया जिसका कार्य प्रशासन में सत्य निष्ठा एवं सामर्थ्य स्थापित करने में शासन को परामर्श देना था। इसके पश्चात केन्द्रिय शासन के अनुदेश पर म.प्र. लोकायुक्त अधिनियम 1975 पारित किया गया किन्तु लागू न होने के कारण पुन: म.प्र. लोकायुक्त एवं उपलोकायुक्त अधिनियम 1981 पारित किया गया। जिसे 16 सितम्बर 1981 को राष्ट्रपति की अभिस्वीकृति प्राप्त होने के पश्चात् 15 अक्टूबर 1981 को असाधारण राजपत्र में प्रकाशित कर दिया गया।

इस अधिनियम के अनुसार जांच की कार्यवाही के संचालन के उद्देश्य से राज्यपाल अपने हस्ताक्षर एवं पद मुद्रा से किसी व्यक्ति को लोकायुक्त एवं एक अथवा एक से अधिक व्यक्तियों को उपलोकायुक्त नियुक्त करेगा किन्तु प्रतिबंध यह है कि इस हेतु राज्यपाल विधानसभा में प्रतिपक्ष के नेता से परामर्श करेगा और ऐसा नेता न होने पर अध्यक्ष द्वारा निर्देशित पद्धति से विपक्ष के सदस्य इस उद्देश्य के किसी व्यक्ति का चयन करेंगे। लोकायुक्त की नियुक्ति सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश अथवा किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश करेगा। लोकायुक्त एवं उपलोकायुक्त किसी संसद एवं विधानसभा के सदस्य नहीं होंगे अथवा किसी लाभ के पद सहकारी समिति के पदाधिकारी राजनैतिक दल से संबंध अथवा किसी व्यवसाय या व्यापार में रत नहीं होगें।

लोकपाल व लोकायुक्त का कार्यकाल 5 वर्ष है किन्तु पुनर्नियुक्ति नहीं की जा सकती है। इसका कार्यकाल तभी कम हो सकता है जब वे राज्यपाल को अपना त्याग पत्र दे अथवा धारा 6 में निर्धारित प्रावधान द्वारा उन्हें पदयुक्त कर दिया जाए। धारा 6 के प्रावधानों के अनुसार लोकायुक्त को अपने पद पर उस समय तक नहीं हटाया जा सकता जब तक कि म.प्र. विधान सभा द्वारा अपने सदस्यों की कुल संख्या के दो तिहाई बहुमत द्वारा उसी सत्र में पारित प्रस्ताव जिसमें वह दुर्व्यवहार अथवा अक्षमता का दोषी सिद्ध पाया जाए, के पश्चात राज्यपाल ऐसा आदेश पारित न कर दे। ऐसे प्रस्ताव के

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) नेहरू शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.) भारत
* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय मक्सी, जिला– शाजापुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तुतीकरण जांच एवं दोष सिद्ध करने के लिए वे प्रक्रियाएं अपनायी जाएगी,जो न्यायाधीश जांच अधिनियम 1968 की व्यवस्था द्वारा एवं न्यायाधीश को हटाने के लिए अपनायी जाती है। इन नियमों के प्रावधानों के अधीन लोकायुक्त किसी लोकसेवक के विरूद्ध प्राप्त शिकायत अथवा सूचना के आधार पर जांच आरंभ कर सकता है। उपलोकायुक्त,लोकायुक्त के सामान्य निर्देशन एवं नियंत्रण में अधिकारियों के विरूद्ध शिकायत अथवा सूचना की जांच कर सकता है। इस संबंध में अवशिष्ट अधिकार लोकायुक्त के रहेंगें । विधेयक में लोक सेवक एवं अधिकारी शब्द परिभाषित किए गए हैं। लोक सेवक के अधीन किन्तु विधानसभा अध्यक्ष ,उपाध्यक्ष एवं प्रतिपक्ष के नेता इसमें सम्मिलित नहीं है।1962 के संशोधन के बाद से मुख्यमंत्री के विचाराधिकार से परे थे। विधेयक में यह भी स्पष्ट व्यवस्था की गई है कि लोकायुक्त अथवा उपलोकायुक्त निम्न विषयों की जांच नहीं करेंगे।

1. यदि किसी विषय जांच आयोग अधिनियम 1950 के अधीन औपचारिक जांच एवं सार्वजनिक जांच चल रही हो।
2. जो विषय जांच आयोग अधिनियम 1952 के अधीन जांच के लिए संदर्भित किया गया हो।
3. किसी लोकसेवक द्वारा किए गए आचरण जिसकी शिकायत की जा रही है को 5 वर्ष की अवधि से अधिक समय व्यतीत हो चुका हो ।

लोकायुक्त के समक्ष किसी लोक सेवक अथवा अधिकारी के विरूद्ध आरोपों की शिकायत निर्धारित प्रारूप में आवेदन के साथ शुल्क जमाकर की जा सकती है। यह भी आवश्यक है कि शिकायतकर्ता लोकायुक्त अथवा उसके द्वारा अधिकृत अधिकारी के समक्ष निर्धारित प्रारूप में शपथ पत्र प्रस्तुत करें। इस प्रकार म.प्र.लोकायुक्त एवं उपलोकायुक्त विधेयक 1981 द्वारा म.प्र. में एक निष्पक्ष स्वाधीन सशक्त एवं सक्षम नियंत्रण संस्थान के रूप में लोकायुक्त की संस्था की स्थापना के प्रयत्न किए गए है।यह इस बात का प्रमाण कि प्रशासन एक स्वच्छ तथा उत्तरदायी प्रशासन की स्थापना हेतु प्रतिबद्ध है किन्तु अधिनियम के प्रावधानों की त्रुटियां अथवा अभाव इतने महत्वपूर्ण है कि वे किसी भी ईमानदार प्रयत्नों पर पानी फेर सकते हैं।

यदि अधिनियम के प्रावधानों को देखा जाये तो संशोधन के बाद भी लोकायुक्त की जांच का दायरा सीमित ही दिखाई देता है। विधायकों को लोकायुक्त के विचाराधिकार से परे रखना कुछ तर्क सम्मत नहीं लगता । इस संदर्भ में यह तर्क दिया जा सकता हैकि संसदीय उत्तरदायित्व एवं व्यवस्थापिका की मर्यादा के प्रश्न अहम है और विधायकों पर ऐसा कोई प्रतिबंध अलोकतांत्रिक होगा।

म.प्र. के संदर्भ में इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि प्रशासन के रोजमर्रा के कार्यों में हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति विधायकों में बढ़ी है। यह भी खुला भेद है कि प्रशासनिक अधिकारी बहुत से कार्य स्थानीय राजनीतिक दबावों में आकर करते हैं या उन्हें करने पड़ते हैं। ऐसी स्थिति में केवल प्रशासनिक अधिकारी ही लोकायुक्त की जांच का विषय है और विधायकों द्वारा अपने अपने निर्वाचित क्षेत्रों में 1 करोड़ रूपये के कार्य करवाने के अधिकारों की मांग अंतुलेवद का अन्तर्राज्यीय विस्तार ही कहा जायेगा ।

विधान सभा अध्यक्ष,उपाध्यक्ष एवं उच्च न्यायपालिका के प्रशासनिक नियंत्रण में रहने वाले न्यायिक सेवा के सदस्य तथा म.प्र. लोकसेवा आयोग के सदस्य एवं अध्यक्ष भी लोकायुक्त की विचाराधिकार के बाहर रखे गये हैं। इसमें दो पद जन प्रतिनिधि संस्था की मर्यादा के प्रतीक हैं और न्यायिक सेवा के सदस्य न्यायपालिका की स्वतंत्रता के सिद्धांत के अनुकूल होने के कारण निश्चय ही इस संस्था की परिधि से परे है,किन्तु लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं जनप्रतिनिधि सदस्य सरकार के राजनैतिक सेवाओं के बदले पुरस्कृत व्यक्ति होते हैं । लोकायुक्त की जांच से परे रखना सिद्धांत कितना तर्क संगत क्यों न हो वर्तमान संदर्भों में संतोष प्रद नहीं माना जा सकता ।

एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि प्रशासनिक भ्रष्टाचार एवं लोकसेवकों के आचरण को नियंत्रित करने वाली अन्य एजेन्सियों में कार्यरत रहते हुए लोकायुक्त का विशिष्ट महत्व क्या है वस्तुत: ऐसी दो प्रमुख एजेन्सी हैं। एक तो न्यायालय और दूसरे केन्द्रीय सतर्कता आयोग न्यायालय का कार्य कानून की चारदीवारी तक सीमित है उसमें अनेकों तकनीकी और प्रक्रियात्मक कठिनाईयां होती हैं जो ऐसे कई प्रकरणों के लिए जिनमें त्वरित निर्णय अनिवार्य होता है अनुपयोगी सिद्ध होते हैं। दूसरी और ऐसे भी अवसर उत्पन्न होते जहां अन्याय हुआ लगता हैं लेकिन कानून न्यायालय की विवशता बन जाती है।

म.प्र. में दिग्विजयसिंह सरकार में माड़ाताल जमीन घोटाला,चुरहुट लॉटरी कांड जैसे प्रकरणों में मंत्रियों एवं अधिकारियों को दोषी पाया गया लेकिन सरकार ने ऐसे प्रकरणों पर मुकदमा चलाने की अनुमति नहीं दी। इस प्रकार लोकायुक्त को जांच का अधिकार तो है लेकिन अभियोजन की शक्ति प्राप्त नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय दिसम्बर 2006 के पहले सप्ताह में प्रकाशसिंह बादल व उनके पुत्र की याचिका पर अपना निर्णय देते हुए इसबात को रेखांकित किया है कि यदि लोकसेवकों एवं मंत्रियों के द्वारा प्रकरणों पर भ्रष्टाचार मामला बनता है तो ऐसे प्रकरणों के लिए सरकार की पुर्वानुमति की आवश्यकता नहीं है।

यद्यपि संसदीय बहस ने इस निर्णय पर अति न्यायिक सक्रियता का आरोप लगा करके इसे विधायिका के क्षेत्र में हस्तक्षेप बताया जा रहा है,लेकिन यह प्रवृत्ति राजनीतिज्ञों द्वारा किये जाने वाले भ्रष्टाचार को संरक्षण देने का ही संकेत करती है। लेकायुक्त की संस्था स्वतंत्र व निष्पक्ष जांच ऐजेन्सी हैं। लेकिन अभियोजन की शक्ति उसके पास नहीं है। इसलिए यह संस्था प्रभावहीन बनकर रह जाती है। लोकायुक्त की संस्था भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से बनाई गई। ये एक स्वतंत्र और निष्पक्ष जांच ऐजेन्सी है लेकिन अपनी जांच के लिए इसके पास कोई स्वतंत्र व निष्पक्ष जांच एजेन्सी है लेकिन अपनी जांच के लिए इसके पास कोई स्वतंत्र व निष्पक्ष जांच संगठन नहीं हैं और इसके लिए उसे सरकारी जांच एजेन्सियों के उन्हीं कर्मचारियों और अधिकारियों पर निर्भर रहना पड़ता है जिनकी निष्पक्षता व ईमानदारी संदेह से परे नहीं मानी जा सकती क्योंकि जिस व्यवस्था के विरूद्ध उन्हें जांच करना होती है वे स्वंयं उस व्यवस्था के अंग होते हैं।

यदि उन्हें समूचित अपनी प्रशासनिक व्यवस्था से भ्रष्टाचार को नियंत्रित करना है तो लोकायुक्त जैसी संस्था की जांच के लिए एक स्वतंत्र अमला उपलब्ध कराना होता और अभियोजन के अधिकार भी उसे देने होंगे ताकि वह भ्रष्टाचार के विरूद्ध जन शिकायतों का निवारण करने के लिए पूरी तरह सक्षम हो।

सन्दर्भ सूची

1. लार्ड हेवर्ट द न्यू डिस्पाजिस्ट (1928)
2. अमरेश अवस्था प्रशासन प्रहरी मण्डल (म.प्र. में अम्बुड्स मेन के रूप में लोकप्रशासन)
3. एच.आर.मरवीजा (नागरिकों की शिकायतें अनुदर्शन एवं परिदर्शन प्रशासन राष्ट्रीय अकादमी का जर्नल 1972
4. आर.बी.जैन,लोकप्रशासन महाप्रशासक एक अपती पुरूष लोक प्रशासन का भारतीय पुरूष जर्नल सित् मध्यप्रदेश लोकायुक्त एवं उपलोकायुक्त अधिनियम 1981 धारा 3 (1) एवं (अ)(ब) पॉलिटिकल एण्ड लॉ टाइम्स
5. धारा 3(2)(अ)(ब)
6. धारा 4
7. धारा 5
8. धारा 6 (1) (2)
9. धारा 8 (अ)(ब)(स) 10. धारा 9 11. धारा 10 12. धारा 18

विश्व राजनीति पर आतंकवाद का प्रभाव

डॉ. रजनी दुबे *

वर्तमान विश्व परिप्रेक्ष्य में अनेक देशों पर आतंकवाद का खतरा मंडरा रहा है। चाहे वह न्यूयार्क के विश्व व्यापार केन्द्र को धराशाही करने की घटना हो या भारतीय संसद को उखाड़ने की साजिश हो यह और इसके समान समस्त घटनायें राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर के आतंकवादी कार्य हैं। वर्तमान समय में आतंकवाद गुणात्मक रूप से पूर्व में पाये जाने वाले आतंकवाद से भिन्न हैं। इस नव आतंकवाद में एक नया हिंसात्मक रूप देखने को मिला है जो पूर्णत: अनैतिक है। आतंकवाद के पनपने के कारण अथवा उनके पीछे की वास्तविक सच्चाई चाहे जो हो जैसे – सामाजिक, आर्थिक पिछड़ापन, जातीय राजनीतिक अपेक्षायें, विचारधाराओं का प्रभाव अथवा कमजोर वर्गों अथवा समुदायों का दमन एवं उत्पीड़न आदि किन्तु यह तथ्य निर्विवाद है कि आज आतंकवाद राष्ट्र की सीमाओं का अतिक्रमण कर राष्ट्रातीत बन चुका है एवं इसमें विश्व व्यापी रूप धारण करने की समस्त क्षमतायें मौजूद हैं अत: यह विशेषज्ञ मत है कि ''आतंकवाद भौगोलिक दृष्टि से बहुत विस्तृत तथा वैचारिक दृष्टि से विभिन्नता लिये है।'' सही मायनों में आतंकवाद ने वर्तमान काल में विश्व व्यापी रूप धारण कर लिया है एवं विभिन्न आतंकवादी गुटों एवं संगठनों के निरंतर बढ़ते एवं आसानी से पहचाने जाने योग्य संबन्ध नजर आते हैं। वह एक दूसरे के क्षेत्रों का प्रयोग नई भर्ती एवं उनके प्रशिक्षण हेतु करते हैं, अवैध हथियारों के लेन देन में संलग्न हैं तथा एक दूसरे को प्रशासकीय एवं सामरिक सहयोग भी प्रदान करते हैं।

विभिन्न देशों के आतंकवादी गुटों के बीच अर्न्तराष्ट्रीय संबन्धों की सीमा इजराइल के लार्ड हवाई अड्डे के सामूहिक नरसंहार में देखी जा सकती है। उक्त कृत्य में संलग्न आतंकवादी जापान के थे, उनका प्रशिक्षण कोरिया में हुआ था, हथियारों की खरीद इटली में की गई थी तथा आर्थिक सहायता समर्थन एवं सहानुभूति अरब देशों की थी। आतंकवादी गुट अपने आतंकवादी कृत्यों के नियोजन एवं अंजाम देने में जिन वैज्ञानिक तकनीकों का सहारा लेते हैं वह सरकारी मशीनरी से एक कदम उन्नत ही होती हैं। आतंकवाद के वैश्वीकरण के लिये सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायी कारण मादक पदार्थो का अवैध व्यापार है। आतंकवाद एवं मादक द्रव्यों के अवैध व्यापार के बीच यह अपकारी विवाह विश्वव्यापी अराजकता हेतु एक नहीं बल्कि अनेक कारणों से उत्तरदायी है। वर्तमान समाज, लाकर के मतानुसार, एक नये किस्म के आतंकवाद का शिकार हो सकता है। वर्तमान काल की विकसित समाज सूचनाओं के संग्रहण, पुन: प्राप्ति, विश्लेषण एवं प्रसारण हेतु 'इलेक्ट्रानिक' तंत्र पर पूर्णत: आश्रित है। रक्षा, पुलिस बल, व्यापार, परिवहन, वैज्ञानिक शोध जैसे क्षेत्रों के कार्य तथा बड़ी संख्या में सरकारी तथा प्राइवेट सेक्टर का कार्य सम्पादन ऑन लाइन होता है। पूर्ण सूचना युद्ध आतंकवाद का सबसे भयानक स्वरूप होगा जिसका सामना वर्तमान सभ्य समाज को करना है। आतंकवाद के वैश्वीकरण का यही सही मॉडल होगा एवं धरती अथवा आकाश की किसी भी राष्ट्रीय अथवा अर्न्तराष्ट्रीय सीमाओं का सम्मान नहीं करेगा। 21वीं सदी का मानव जाति को आक्रांत करने वाली आतंकवादियों के दिनोंदिन बढ़ते कौशल एवं अभिप्राय को खोजने एवं समझने हेतु हमें नवीन एवं बुद्धिमान विधियों एवं तरीकों की आवश्यकता है। इस संदर्भ में उन्नीसवी सदी के रूसी विचारक बेलिसंकी का यह कथन सारगर्भित है कि ''मानव समाज की मुक्ति सिर्फ (वास्तविक) सभ्यता, शिक्षा एवं मानवीयता में ही निहित है इस हेतु न तो प्रार्थना की जरूरत है और न ही उपदेशों की , लोगों के भावों में मानव गरिमा की जागृति ही इसका एकमात्र उपाय है।''

वैचारिक दृष्टि से आज विश्व व्यवस्था में शांति सहयोग और विकास की स्थिति निर्मित करने के लिये जिस चीज की सबसे अधिक आवश्यकता है वह है अर्न्तराष्ट्रीय संबन्धों के संचालन में लोकतांत्रिक मूल्यों में आस्था की है। लोकतंत्र के मूल्यों को स्थापित करना और उनके अनुसार राज्य व्यवस्थाओं का आचरण होना तभी संभव होगा जब राज्यों के मध्य बंधुत्व की भावना का विकास होगा। आज जब विश्व में वैचारिक रूप से लोकतंत्र पर आधारित शासनों के प्रति आस्था सुनिश्चित हो चुकी है। राज्यों के मध्य गैर बराबरी के राजनीतिक, आर्थिक संबन्धों का कोई स्थान नहीं हो सकता है। यदि ग्लोबल आतंकवाद है तो उसका साथी ग्लोबल हथियारों का व्यापार, ग्लोबल मादक पदार्थों की तस्करी ग्लोबल अमानवीय कृत्य अर्थात छोटे बच्चों की तस्करी और वैश्यावृत्ति जैसी प्रवृत्तियों का परस्पर गठजोड़ हुआ है इन सब अमानवीय कार्यों पर प्रतिधान आवश्यक है।

आतंकवाद के विषय में भारत की नीति स्पष्ट है जिसके अनुसार विश्व को आतंकवाद का सामना मिलकर करना होगा। अर्न्तराष्ट्रीय समुदाय में शांति, भ्रातृत्व और नागरिक स्वतंत्रताओं की रक्षा के लिये सभी को मिलकर कार्य करना होगा। राज्यों को आतंकवाद के प्रत्येक रूप का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष समर्थन बंद कर उनके विरूद्ध कार्यवाही की नीति स्वीकार करना होगी। विश्व से आतंकवाद समाप्त करने के लिये एक समान अर्न्तराष्ट्रीय कानून बनाये बिना इस पर नियंत्रण स्थापित करना कठिन है।

आतंकवाद की समाप्ति हेतु महत्वपूर्ण सुझाव

1. आतंकवाद से निपटने हेतु 'इण्टरपोल' के समान एक पूर्ण अधिकार संपन्न आतंकवाद विरोधी पुलिस संगठन का गठन किया जाना चाहिये जिसे विश्व के किसी भी हिस्से में आतंकवादियों के विरूद्ध कार्यवाही करने का अधिकार हो तथा इसके संचालन का जिम्मा संयुक्त राष्ट्र को सौंपा जाना चाहिये।

2. आतंकवाद से निपटने हेतु भारत में कोई विशेष संगठन नहीं है। अत: अमेरिका के डेल्टा फोर्स एवं ग्रेट ब्रिटेन के एस.ए.एस. के समान एक आतंकवाद विरोधी इकाई का गठन किया जाना चाहिये।

3. भारत के राजनीतिक दलों को आतंकवाद जैसे मुद्दों पर तुष्टीकरण की नीति का त्याग कर राष्ट्रीय हित में निर्णय लेना चाहिये।

4. संयुक्त राष्ट्र एवं उसके द्वारा बनाये गये आतंकवाद विरोधी कानूनों को प्रत्येक राष्ट्र के लिये बाध्यकारी बनाया जाना चाहिये।

5. केन्द्र एवं राज्य सरकारों को भी संकीर्ण राजनीतिक स्वार्थों से ऊपर उठकर राष्ट्रवादी दृष्टिकोण से आतंकवाद के विरूद्ध कठोर कदम उठाना चाहिये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. एन. एस. सक्सेना, टेरेरिज्म : हिस्ट्री एण्ड फेक्टस (दिल्ली : अभिनव प्रकाशन 1985)
2. ए. के. घोष, आई. एस. आई. नेटवर्क ऑफ टेरर इन इण्डिया, (नई दिल्ली : दीप एण्ड दीप प्रकाशन 2000)
3. डॉ. राघव अरूण कुमार, विश्वव्यापी आतंकवाद : मानवता के लिये चुनौती उपकार प्रकाशन आगरा नवम्बर 2001 पृष्ठ 667.8
4. ए जर्नल ऑफ ऐशिया फॅार डेमोक्रेसी एण्ड डवलपमेंट 2006 पृष्ठ 267

* सहायक प्राध्यापक, राजनीति विभाग, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

भारत में भ्रष्टाचार एवं नागरिकों की भूमिका

डॉ. अलका भार्गव *

यूँ कहा जाता है कि विकासशील देशों में भ्रष्टाचार एक अनिवार्य स्थिति है, शासन एवं प्रशासन में। भारत भी उससे अछूता नहीं है। आजादी की लड़ाई लड़ने वाले कौमी भावना से ओत-प्रोत नागरिकों की पीढ़ी लगभग खत्म हो चली है। ऐसे में जो नयी पीढ़ी आई है उसमें देश प्रेम तो है, किन्तु आजाद भारत के नागरिक होने का भाव स्वतंत्रता के दुरूपयोग के भाव पर टिका है। इसके कई कारण है-

1. शासन स्तर पर पनप रहा अतिवादी भ्रष्टाचार-इसका एक प्रमुख कारण है कि भारत का आम नागरिक अशिक्षित, बेरोजगार और आर्थिक स्थिति से आत्म निर्भर नहीं है। अशिक्षा का परिणाम है कि नागरिक पिछड़ा, पारम्परिक, भीरू और सशक्त नागरिक अभिव्यक्ति में अक्षम है। उसके सामने भारत की संसद में चुनकर आने वाले प्रतिनिधि आदर्श है और उनके द्वारा विभिन्न स्तरों पर जो भ्रष्टाचार के संबंध में; जो विभिन्न समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में मंनतव्य छपते हैं; तथा दिखाई देते हैं, उससे आम नागरिक दिग्भ्रमित और अवाक है कि देश सेवा का यह स्वरूप है और ईमानदारी का यह स्तर है तो फिर हमें क्या करना चाहिये।

2. दूसरी तरफ बेरोजगारी का जो विकराल रूप सामने आया है वह भी कम प्रभावित नहीं करता नागरिक भूमिका को। यह बेरोजगारी जितनी बढ़ेगी उतना ही देश कमजोर होगा। युवा पीढ़ी यदि कार्य शून्य है एवं आत्मनिर्भर नहीं है, तो अपराध बढ़ना स्वाभाविक है जो आये दिन टी.वी. और समाचार पत्रों में देखने, सुनने और पढ़ने को मिलता है। अपराध वृद्धि ने आज नागरिक को न केवल भीरू बनाया है वरन् समाज का शासन और प्रशासन से विश्वास उठता जा रहा है। दोनों ने ही अपराधों में स्वयं भी वृद्धि की है।

3. तीसरी तरफ आम नागरिक को शिक्षित करने के लिये केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा अरबों रूपये की योजनायें बन रही हैं; और उनका क्रियान्वयन भी हो रहा है। पर आजादी के पैंसठ वर्ष बाद भी उपलब्धियों के क्षेत्र में हम बहुत पीछे हैं; इस क्षेत्र में शासन स्तर पर विचार के पश्चात् जब उसके अभिन्न अंग प्रशासन में भ्रष्टाचार देखते हैं तो वहाँ भी भ्रष्टाचार के अनेक रूप देखने सुनने एवं पढ़ने को मिलते हैं। कारण स्पष्ट है, शासन से जुड़ कर प्रशासन उक्त अपराध से चाहकर भी अलग नहीं रह सकता। प्रशासन स्तर के भ्रष्टाचार का प्रभाव यह हुआ है कि; आम नागरिक चाह कर भी भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं रह सकता। यदि कोई नागरिक भ्रष्टाचार से अपने को अलग रखना चाहता है, तो उसे महात्मा गाँधी जैसा धैर्य, सहनशीलता, त्याग, क्षमा अपने आचरण में लाना होगा। जो बिरले व्यक्ति ही कर पाते हैं।

ऐसी स्थिति में जहाँ शासन और प्रशासन दोनों ही, किसी न किसी रूप में भ्रष्टाचार से पीड़ित हों; नागरिकों के लिये उससे लड़ना एक चुनौती से कम नहीं है। ऐसी स्थिति में नौकरशाही के इस बिगड़े रूप को संतुलित करने के लिये मार्टिन एल्बरों नियन्त्रण की क्रियाविधियों को बताते हैं-

(1) निर्णय करने की प्रक्रिया में एक से अधिक व्यक्ति को शामिल किया जाना चाहिये।

(2) एक ही कार्य के लिये दो या अधिक संस्थाओं में जिम्मेदारी बांट देना। यह व्यवस्था स्वाभाविक तौर पर स्थिर नहीं होती। किन्तु भारत जैसे देश में अत्यधिक ताकतवर नौकरशाही का उभरना जीवन का एक तथ्य है। ऐसे देशों के लिये रिग्स का सुझाव था कि लोकतांत्रिक विकास के पक्ष में नौकरशाही शक्ति को मिश्रित करने के लिये मध्यमवर्ग का विकास आवश्यक है। (जोसफ ला पालोम्बरा - पॉलीटिकल डेवलपमेन्ट इन ब्यूरोक्रैसी, प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू जर्सी पृ024)

इसके बावजूद नौकरशाही में भ्रष्टाचार नहीं रूकता है तो उसके कई कारण है-

A. नीति निर्माण अब केवल राजनैतिक कार्यकारिणी तक सीमित न होकर वरन सरकार के समूचे ताने-बाने में फैल गई है।

B. सारे राजनैतिक नेतृत्व में नौकरशाही की भूमिका व महत्व अब सर्व विदित है।

C. राज्य बड़े पैमाने पर लोक कल्याणकारी कार्य अपने हाथ में लेना है अत: निष्पक्षता संभव नहीं है।

D. नीति क्रियान्वयन में परामर्श के साथ उपनीति निर्माण आवश्यक होता है।

E. नौकरशाहों का मूल्यांकन राजनीतिक अध्यक्षों या नेतृत्व से होता है।

F. जहाँ नेतृत्व में भारी मतभेद व विभाजन होता है। यानि शासकों में वहाँ लोकसेवकों को नीति को अपने ढंग से लागू करने का अवसर होता है। (क्लिव पोन्टिंग, वाईट होता ट्रडोडी एण्ड फेरू, हिमेश हिमल्टन, लंदन, इन रिव्यू इन द टाइम्स ऑफ इण्डिया, न्यू देहली संडे रिव्यू P. VI

भारत के संबंध में देखे तो भारत में निष्पक्ष और राजनैतिक नौकरशाही की धारणा ब्रिटीश शासन से विरासन में मिली है। इसके आजादी के बाद से अब तक के सफर में निम्न निचोड़ सामने आया है-

भारत में संगठित समूह अपनी राजनैतिक क्रिया में लगे रहते है और अत्यधिक राजनैतिक हस्तक्षेप ने नौकरशाही को विवश किया है कि वह निष्पक्षता छोड़कर राजनीतिक स्वामियों के आदेश का पालन करने लगी है। भारत में लम्बे समय तक कांग्रेस का शासन रहा है, कांग्रेस के शासन काल में यह मान्यत रही कि वह जो भी निर्णय ले रहे हैं वह देश निर्माण का है और नौकरशाही को शब्दत: पालन करना है। इसके अलावा मंत्रियों का उच्च सामाजिक आर्थिक स्तर लोक सेवकों को अनुगत बनाता चला गया है।

इसका परिणाम है कि लोकसेवकों में सैद्धान्तिक उदासीनता दृष्टिगोचर होने लगी है, अर्थात् सत्तारूढ़ दल की हां में हां मिलाना उनका प्राथमिक दायित्व हो गया है फलस्वरूप प्रतियोगी परीक्षा से चयनित ये लोकसेवक अपने आप को राजनैतिक सत्ता और सामाजिक विघटन और राष्ट्रीय टूट की प्रवृतियों में अपने को घिरा पाते हैं। ये बुद्धिवादी स्थायी सेवक चाहकर भी अपने व देश के आदर्शो, को उभारने में सक्षम नहीं हो पाते। इसका कारण है- मंत्रियों में उतरदायित्व न्यून व गलतियों के लिये लोकसेवक की जिम्मेदारी बढ़ गयी है। इस बात को फाइनर ने कुछ यों कहा है- संसदीय शासन के संदर्भ में।

(1) विभाग में जो कुछ हो रहा है इसका बहुत कम ज्ञान मंत्रियों को होता है।

(2) उनके निरीक्षण में कार्य कर रहे निगमों के बारे में उसकी जानकारी और कम होती है।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

(3) इस कारण असफलता या दुर्घटना के लिये इन्हें दण्ड नहीं दिया जाता। द सुब्रमन्यम लोक उत्तरदायित्व इण्डियन जनरल ऑफ पब्लिक एडमिनिसट्रेशन Vol. XXIX No.3 जुलाई-सितम्बर 1993।

(4) इसके अतिरिक्त; विभागों के बढ़ते हुये आकार के साथ-साथ; उनके कार्य की बढ़ती हुई जटिलता और लोकतंत्र में मंत्री के बढ़ते हुये राजनैतिक कार्य के कारण मंत्री एवं प्रशासकों पर नियन्त्रण लगभग असंभव सा प्रतीत होता है।

(5) लोक निगम; जिनको प्रारम्भ में मंत्रियों के नियन्त्रण से बाहर रखा गया था; उनमें से अधिकतर संसदीय शासन व्यवस्था के चलते मंत्रियों के सर्वोपरि निरीक्षण के अधीन लाये गये है। (पृ. 452 एवं 453) उपरोक्त संदर्भ में यदि संसदीय व्यवस्था का वैधानिक शुद्ध रूप यदि देखा जाये तो देश के किसी कोने में बसे छोटे अधिकारी की अनभिज्ञता हो यदि गलती होती है तो मंत्री को त्याग पत्र देना चाहिये।

पर प्रश्न यह है कि क्या वास्तव में मंत्री ऐसा करते हैं तो हम पाते है कि मंत्रियों में केन्द्रीय स्तर एवं राज्य स्तर पर स्वयं विशुद्ध आचरण नहीं रखा जा रहा वह अपनी जिम्मेदारी से विमुख होने जा रहे हैं; हाल ही में घटित घोटालों में यह बात और स्पष्ट रूप से सामने आयी है। तब आप नौकरशाहों पर कैसे नियंत्रण रख पायेंगे।

बड़े स्तर के घोटालों में मंत्री, उच्च प्रशासक और जुड़े कर्मचारी सभी दायरे में आ गये हैं। तब नागरिक इसके विरूद्ध न जाकर भागती हुई तेज रफ्तार जिन्दगी इसमें लिप्त प्राय: मजबूरी में होता जा रहा है। परिणाम आने वाली नयी पीढ़ी इस स्थिति में हताश सी दिखाई देती है कारण; मंत्री; प्रशासक और नयी पीढ़ी के नागरिक सभी कहीं न कहीं इस व्यवस्था का शिकार है।

अब उपरोक्त स्थिति में नागरिक भूमिका देखें तो वह अपने को असहाय पाते हैं। जब देश की लोग सेवा में लगा बुद्धिजीवी राजनैतिक भ्रष्टचार से निपटने में असहाय है; तो वह क्या करें। (नागरिक क्या करें)

हम कह सकते है ''मतदान की शक्ति'' का उपयोग करें; पर प्रत्येक राजनैतिक दल इस भ्रष्टाचार का समर्थन किसी न किसी रूप में करता हो तो वह किसे चुने। आज भारत में क्षेत्रीय पार्टियों राज्यों व केन्द्र सरकार में सक्रिय है। क्षेत्रीय स्तर का भ्रष्टाचार इन क्षेत्रीय दलों के स्तर को नहीं उठा पा रहा है। दूसरी तरफ राष्ट्रीय पार्टियाँ लगभग कामोबेस भ्रष्टाचार कर रही हैं; तो विकल्प का अभाव आज आम जनता के समक्ष है। दूसरा देश के लोक सेवकों से अतिरिक्त बुद्धिजीवी इससे तटस्थ व मूक दर्शक बना हुआ है।

तीसरी अभिजात्य वर्ग, उद्योगपति तथा व्यापारी इससे सबसे ज्यादा खुश है। रह गया मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग उसकी अवाज तो बुलन्द है पर शक्ति रहित है; और उसे उलझा दिया जाता है, जाति, क्षेत्र, धर्म सम्प्रदायमें। अरविन्द केजरीवाल को भारी समर्थन मिलने के बाद भी सफलता अभी संदिग्ध है। इसका उपाय मेरी समझ में जैसाकि अरस्तु का क्रांति सिद्धान्त कहता है कि- देश में रक्तहीन क्रांति होनी चाहिये जो सत्ता का स्वरूप बदले। प्रश्न यह है कि यह क्रांति कौन करेगा। मध्यम वर्ग महंगाई की मार से पीड़ित है और हाथ के कार्य के हुनर से बढ़ते मशीनीकरण के कारण दूर है। निम्न वर्ग को आर्थिक फायदे पहुंचा कर सत्ता पक्ष एवं राजनैतिक दल उसे पंगु सोच का बना रहा है।

जैसाकि जॉन स्टुअर्ट मिलने कहा था कि जिस देश में नागरिक सुविधा भोगी सरकारों द्वारा बनाये जाते है; वहाँ नागरिक बौना और सरकारें तानाशाह होती हैं। यह बात भारत में पूरी तरह चरितार्थ है। आरक्षण, अल्पसंख्यकों सुविधा बी.पी.एल. वर्ग, बेरोजगारी भत्ता ये सब वो साधन है जिससे नागरिक की सोच व कार्य करने की क्षमता बौनी हो रही है।

और इस तरह के भ्रष्टाचार से लड़ने की क्षमता कम होते-होते खत्म सी हो चली है, मिलती सुविधा के आड़ से नागरिक भूमिका समाप्त सी दिख रही है।

****

The Jats And The Importance Of Their History

Prof. Akash Tahir *

The Jats are a tribe so wide-spread and numerous as to be almost a nation in itself, counting 7,086,100 souls having community of blood, community of language, common tradition, and also a common religion for not less than 1500 years. At the Census of 2011 one third of the population bearing this name are Muslims, one-fifth Sikhs, and about one-half Brahmanical Hindus.[1]

They are found in large numbers in the Punjab, Sindh, Rajputana and in some parts of the Gangetic Doab. There is also a sprinkling of Jat population in Peshawar, Baluchistan and to the west of the Sulaiman range. Tall, fair, large-limbed, with regular features, prominent nose, and expanding eyes, the Jat belongs to the same ethnic group as the Rajput and the Turk. In character he resembles the old Anglo-Saxon, and has indeed more of the Teuton than of he Celt in him. He is tough, slow, unimaginative, lacking brilliance but possessed of great solidity, dogged perseverance, with an eminently practical turn of mind. He is hardly convinced by words without concrete facts. Self-interest is his only criterion of judgment. If he listens to the Arya-Samaj more fovourably, it is not for its purer doctrines or higher philosophy,but for its promise of exptensive from sradh ceremony, and other expinsive Brahmanical rites. Old countryside proverb (in Karnal district) goes that book-learning is unpropitious to the that a "Jat loses half his worth by trying to become learned" Sturdy independence, and vigorous labour are his strong characteristics as Ibbetson says. To this is added quarrel with: "a Jat is good only when he is bound." Another trait of Jat character which has been marked by eminent authoreties is his strong individualism. "the Jat is of all the Punjab races the most impatient of tribal or communal control, and the one which asserts the individual most strongly"[2]

Irvine remarks "In the Government of their villages, they appear much more democratic than the Rajput; they have less reverence for hereditary right and a preference for elected head-man"[3]

The Jats may quarrel among themselves, but when it is a question of tribal honour, or a dispute with other castes, they readily combine. Clannish feeling like that of the men of the age of Mahabharat is still very strong. With his democratic ideas of government, strong tribal ties, and preserving in unbroken tradition the practice of marrying elder brother's widow, and of Neyoga i.e. raising issue by another man after husband's death,the Jat, though considered as a Sudra by the orthodox, seems to be the truer representative of the Vedic Arya than any Hindu of the higher castes.

The origin of this interesting people, is enveloped in the mist of obscurity which the light of scientific research has yet to dispel. Dr. Trumpp and Beams very strongly claim a pure Indo-Aryan descent for nsideration of them on the condideration of physical type and language which is a pure dialect of Hindi without slightest trace of the Scythian origin.[4]

But both these authorities were out and out philological who are not to be trusted implicitly in ethnological questions. Language is no test of race as has been pointed out by A.M.I. Jackson,[5] and also by V.Smith(Ancient India, page 12). We find no mention of the Jats in ancient Sanskrit Literature unless we are prepared to accept the identification of the Jaratrikas-mentioned in the Mahabharat along with the Madrakas(Canto VIII, Slokas 2032,2034) with the Jats as suggested by no less eminent an authority than Grierson,[6] and also by James Campbell.[7] Grierson also expresses a doubt whether the Jatasusas -not a demon as in popular myth but name of a western tribe mentioned by the fomous astronomer BrahaMihira- were not the Jats.[8] Bishnu Puran mentions Dahas as a western tribe,whom both Elliot and Ibbetson are inclined to identify with the Dahae of Alexander and the modern Dahiya Jats inhabiting Sonepet Tehesil of Rohatak.

However, competent authorities agree on the point that the Jats are of Indo-Scythian stock. But they differ in their opinion as to what particular horde they belong. V.Smith says,"When the numerous Bala, Indo-Scythian, Gujar and Huna tribes of 6th century horde settled, the leading military and princely houses were accepted as Rajput, while those who frankly took to agriculture became Jat.[9] This cannot be true without modification. There is unassailable evidence of the existence of a Jat or Jit ruling dynasty as old as 400 A.D.[10] Moreover the traditional enmity between the Rajput and the Jat makes it extremely probable that they belonged to different hordes, entering India at different times. We everywhere find the earlier Jat occupant of the soil ousted by the new Rajput emigrants. The Yadu Bhattis conquered Jaisalmer from the Jat and the Rathor wrested Bikanir from him. The Pramar desp;aced him in Malwa and Tunwar snatched away Delhi. In this connection we may suggest a different origin of the name of this city of

*** H.O.D. History Deptt. Govt. P.G .College Dhar (M.P.) INDIA**

Delhi than that assigned by popular tradition,viz., that the Brahmins of Anagnapal once fixed a pillar, which they declared to have stood on the hood of Shesh Naga, and that he, out of curiosity, ordered it to be dug out but when the tried to fix it again, it remained dhilla or loose. This is groteswue enough to capture uncultured imagination. Apart from this. We see the Delhi district still largely inhabited by a Jat trive called Dhilln or Dhillhon.Folk etymology connects the name wigh dhilla or lazy.[11] Anangapal Tunwar might have conwuered this territory from the Dhillons, and founded the city.Building of the city cannot be credited to the Jats because they have always been an esseneiolly rural folk. This city takes its name from the tract of country around, i.e., Dhilhi or the abode of lazy people.

As regards the origin of the Jats, earlier authorities namely Elliot[12'13] who identify them wigh Kushan or Yuechi horde, whose greatest representative was Kanishka, seem to be right beyond dispute. The Rajputs represent perhaps the White Huns of Sixth century A.D. or later Turkish horde who developed into a nable race by entering the fold of Hinduism,as in Europe Christianity and French civilization transformed the descendants of fierce Danes and Norsemen into the great Narman race,the finest product of Medieval Europe.

In History the Jat is quite familiar as an industrious husbandman, a notorious cattle-lifter and a stout fighter. Where circumstances permitted, he equally distinguished himself as a bold pirate too. The Jat pirates of Dwarka and Porbander in the 7th century made their name a terror to the merchants of the Arabian Sea.[14]

The rise of the Jats as a political power begins with the revolt of the Hindu Jats of Mathura (1669A.D.) in the reign of Aurangzib. This was not an isolated phenomenon but only one flare of the general conflagration kindled by religious persecution from the Punjab to Maharashtra. Iswar Das nagor describes the serious nature of sacrilege by sacking Akbar's tomb at Sikandra. He remained unsubdued till his death.[15] Ingh of Sensani, the founder of the present ruling house of Bharatpur next assumed the leadership of the Jats.[16]

He was succeeded by his son Churaman, whose career was a long and eventful one. He was granted the rank of 1500 Zat, 500 horse, by Bahadur Shah. Farruksiyar thought of subduing him and appointed Raja Sawai Jai Singh to the Empiror had to be satisfied with a fine and lip-allegiance on the part of the rebel. Churaman made the Jat power a political factor to be reckoned with. We do not hear much about his younger brother and successor Budan Singh. Waqia-i-Shah-Alam Sani(Professor Sarkar's Ms.) fives Ramzan 9,1169 A.H.,as the date of his death. Suraj Mal seems to have assumed the direction of affairs during the life-time of his father. He was one of the greatest figures of his times great both in war and diplomacy-whode memory deserves to be rescued from oblivion. Under him the Jats spread beyond the Jamuna, and fought as mercenaries of Saigdar Jang, who granted the whole of Mewat to him as reward of his services. We light upon unexpected wealth of information about Suraj Mal and his successors in the Waqia-i-Shah-Alam Sani, Ibratnama of Khairuddin Allahabad and Shah Alamnama (ed.A.S.B.).The story of Ahmad Shah Abdali's bloody campaign against the Jats is told in great detail and wigh accuracy in a fragmentary Ms. translated by Irvine.[17]

Suraj Mal as an ally of Imad-ul-Mulk. Mr. Burway's lige of first Malhar Rao which was reported to be in preparation by Indore representative in Lahore session of this commission may throw new light on theJat history of this period. Suraj Mal was killednear Shah-Dara on 21st tamada,1177 A.H., in a surprise attack made by Muhamad Khan Baloch, an officer of Najib-ud-daula[18]

He left four sons, Jawahir Singh, rattan Singh, Newal Singh by one wife , and Ranjit Singh by another. Jawahir amply avenged his father's death by plundering Delhi and ravaging the imperial dominions. He captured Aligarh and re-named it Ramgarh(Ibratnama).From the accession of Jawahir Singh the history acquires a new interest as showing the last expiring efforts of the French to expel the English from India by building up a confederacy of the Jats, Sikhs, and Ahmed Khan Bangash. M.Medoc took up service with the Raja of Bharatpur with the same motive which brought half a century after Allan and Ventura to the Court of Ranjit Singh. Memoirs of M.Law and Rene Medoc and the Calendar of Persian letters edited by Sir Denison Ross yield important information about this period.M. Medoc's dream was not realized as Jawahir Singh was too much of a fanatic and knight errant to act consistently with statesman like moderation. He marched defiantly beating his war-drum, through Jaipur territory to bathe in the Pushkar Lake. The Kacchwas pooodes his return and a disastrous battle was fought whivh forms the subject matter of a stirring ballad, the secca of Jawahir Singh, still sung by the bards. He was assassinated in the Agra fort at the instigation of the Raja of Jaipur. Ratan Singh, younger brother of Jawahir, was a worthless man. He was murdered at Brindaban by a Gossain, Sri Rupanand, on account of some love intrigue. Newal Singh who succeeded him was a strenuous fighter; but he played a losing game against the genius of Mirza Najaf Khan, the last of the great foreigners who graced the Court of the Timurides. Khairuddin describes the campaigns of NjagKhan against the Jats at pretty length.[19] Ranjit Singh

succeeded Newal Singh and carried oon the struggle for some time. Seige fell after a siege of twelve months Ranjit Singh fled to Kumbhir and thence to Bharatpur. Rani Kishori, wife of Suraj Mal, went to the camp of Najaf Khan to intercede on behalf of her son. The chivalrous victor granted mother's prayer and peace was concluded. [20]

In the latter part of his rule Ranjit Singh provoked hostilities with the English by allying himself with Yasowant Rao Holkar. Major W.Thorn in his Memoirs if the wars in India conducted by Lord Lake, gives us first rate information. "A chronicle of Joswant Rao Holkar's times written by Bakshi Bhawani Sankar, a constant attendant on Holkar camp and the account of various note by the Indore representatives in the Lahore Session of this Commission- are likely to be of great value. Lord Lake appeared before Deeg on December 13th, 1804, and the X'mas morning of that year saw the British flag floating on the battlement of that strong fort which defied Najag Khan for 12 months. Next he vesieged Bharatpur with result not very creditable to british arms. Fpur successive assaults were delivered in course of two months in which they lost 3,100 men, and 103 officers . But he Maratha and Pindari allies of the Raja of Bharatpur fell away and he saw the futility of holding out in a fort against the whole resources of India and the superior military science of the west. He sued for terms which were granted on terms of subsidiary alliance. Here ends the history of the Jats who ceased to be an independent power under that treaty.

The importance of the history of the Jats to the student of Medieval India lies in iting light in the darkest and most complicated period of Indian History.It will also considerably clear the path of the Gibbon of the future in finishing the story of the Decline and Fall of the Mughal Empire left half-told by the great historian William Irvine. The Jat deserves attention as he, without caste distinction, female seclusion and with his democratic tendencies, erect maral stature and unprejudiced mind, is more in sympathy with modern age than the aristocratic Rajput who has not yet discarded his medieval trits of character, still cherishing the notion of class privilege, and contempt for productive labour. If the Jat is sufficiently englightened, he may carry back the Hindu society with him to its Vedic purity, infusing new vigour into it, and preparing it for a more glorious destiny.

Reference

1. Encyclopidea of Indo-Aryan Research, Volume II, Part 5,page 43.
2. Ibbetson, quoted in Rose's Punjab Glossary, Volume II, page 366.
3. Later Mughals, Volume I, page 83.
4. Elliot's Memoirs of the Races, Volume I, pages 135-137.
5. Indian Antiquities, 1910, Volume 39.
6. Canto VIII, Slokas 2032, 2034.
7. Ind. Ant., 1914, Volume 43, page 146.
8. Ind. Ant. Volume 43, page 462.
9. Journal, Royal Asiatic Society, 1899,page534.
10. Tod's Rajasthan, App. I, page 747-749.
11. Rose's Glossary, Volume II, pages 237-238.
12. Memoirs of the Races, Volume I, Page 135.
13. Bombay Gazetteer, Volume IX, P, part I, page 461.
14. Bombay Gazetter, Volume IX, Appendix B, page 527.
15. Ishwar Das, Professor Sarkar's Ms. Page 53 and 131 b.
16. Irvine's Later Mughals, Volume I, page 322.
17. Ind. Ant. 1907, Volume 36 page 46.
18. Waqia, page 199.
19. Waqia, page 219
20. Ibratnama, pages 212-270.
21. Ibratnama, pages 346-347.

****

वैष्णव धर्म का उद्भव और विकास

प्रो. जगमोहन सिंह पूषाम *

भगवान् विष्णु को अपना प्रधान इष्ट देव और परमात्मा के रूप में मानने वाले भक्त वैष्णव कहे गये तथा तत्सम्बन्धी धर्म–दर्शन और सिद्धांत वैष्णव धर्म [1]। विष्णु वैदिक देवता हैं जिनका प्रभाव धीरे –धीरे बढ़ता गया । वैष्णव धर्म में विष्णु सम्बन्धी अवैदिक सूक्त और आख्यान निहित हैं । ऋग्वेद में देवताओं के ऐश्वर्य,पराक्रम विस्तार आदि के अतिरिक्त उपनिषदों के ज्ञान,दर्शन और सिद्धांत आदि का भी समावेश इस धर्म में हुआ है । याज्ञिक कर्मकाण्ड के स्थान पर भक्ति और उपासना का सन्निवेश है। वैष्णव साधक की दृष्टि में यह विशाल विश्व उस ऐश्वर्यशाली विष्णु की ही शक्तियों की अनेकानेक अभिव्यक्ति है । समस्त जगत् उन्हीं की विलक्षण कृति है । उसमें (विष्णु अथवा हरि) और जगत् में कोई भी भेद नहीं है । उनके अवतारों की इयत्ता नहीं ।

जिस प्रकार न सूखने वाले सरोवर से सहस्त्रों कुल्याएँ (छोटी धाराएँ) नि:सृत होती हैं उसी प्रकार उस तत्व –निधि से असंख्य अवतारों का उदगमन होता हैं [2]। यद्यपि अधिकतम अवतारों की संख्या 24 है और न्यूनतम 10, तथापि हिन्दू धर्म में विष्णु के 10 अवतार अधिक प्रख्यात हुए । ये दस अवतारहैं–मत्स्य,कच्छप,वराह,नृसिंह , वामन,परशुराम,राम,बलराम, बुद्ध और कल्कि । इन अवतारों में कृष्ण का नाम नहीं है , क्योंकि कृष्ण स्वयं भगवान् के साक्षात् स्वरूप हैं [3] विष्णु के अवतारों के विवरण में बलराम को गृहीत कर दस संख्या की पूर्ति की गई है। श्रीकृष्ण विष्णु के ही रूप हैं ।

वैष्णव धर्म का उत्कर्ष :–गुप्त–काल में वैष्णव धर्म अथवा भागवत धर्म अपनी पराकाष्ठा पर था ।

कालिदास के ही अनुसार भगवान् विष्णु सागर – तल पर सहस्त्र कणों वाले शेषनाग की शैय्या पर विश्राम करते हैं और उनके फैले हुए चरण उनके पाद –प्रदेश में बैठी हुई लक्ष्मी की गोद में शोभायमान हैं । उनकी चार भुजाएँ हैं ,जिनमें क्रमश: शंख,चक्र,गदा और पद्य शोभित् हैं । उनके वक्ष पर कौस्तुभ नामक मणि शोभायमान है तथा निकट ही उनका वाहन गरूड़ सेवा के लिए खड़ा है ।[4] कालांतर में इसी वर्णन के अनुरूप शेषशायी विष्णु की अनेक मूर्तियाँ गढ़ी गई । स्पष्ट है,उनकी महिमा वाणी और मन दोनों से परे है । आराधन और स्तुति में ब्रह्म,विष्णु और शिव तीनों के कार्य उनमें समाविष्ट हो जाते हैं और इस प्रकार आरम्भ में वे ब्रहाण्ड का सर्जन करते हैं,मध्य में उसे धारण करते है तथा अन्त में उनका विनाश कर देते हैं।

गुप्त सम्राटों की मुद्राओं पर उनकी उपाधि 'परम भागवत' उत्कीर्ण है, जो वासुदेव उपासक और वैष्णव धर्मावलम्बी होने का प्रबल प्रमाण है । चन्द्रगुप्त द्वितीय,कुमारगुप्त,स्कन्दगुप्त, जैसे शासक भागवत धर्म के अनुयायी थे । उनकी मुद्राओं और तत्कालीन अभिलेखों से वैष्णव धर्म सम्बन्धी अनेक संकेत प्राप्त होते हैं । गंगधर – अभिलेख में विष्णु को 'मधुसुदन ' के नाम से अभिहित किया गया है। उड़ीसा –स्थित उदयगिरि में चतुर्भुज विष्णु की एक प्रतिमा है,जो 400 ई.की है । [5]

उत्तरप्रदेश के गाजीपुर जिला के अन्तर्गत भितरी में स्कन्दगुप्त का एक स्तम्भ लेख शार्ङिन् (वासुदेव –कृष्ण) की मूर्ति का उल्लेख करता है जिसके पूजन आदि के लिए ग्राम–दान किया गया था। [6] कुमारगुप्त के गढ़वा अभिलेख में विष्णु '' भगवत्'' कहा गया है । हूण शासक तोरमाण के एरण से प्राप्त वराहमूर्ति और उसके अभिलेख ' वराह –रूप नारायण ' के मन्दिर – निर्माण का संदर्भ मिलता है। [7]

कदम्ब राजकुल के तगारे के अभिलेख में वराहावतार का उल्लेख है । पूर्वी चालुक्यों का राज चिन्ह ही '' गुरूड '' था जो उनके वैष्णव होने का प्रबल प्रमाण था। उनके अधिकांश अभिलेखों का प्रारम्भ वराह की वन्दना से होता है।[8] वराहावतार की सबसे महत्वपूर्ण मूर्ति उदयगिरि गुहा की दीवार पर विशालकाय रूप में उभारी गई है,जिसमें पृथ्वी की रक्षा करते हुए वराह–रूपी भगवान को चित्रित किया गया है,जिसके दाँत से अति लघुकाय नारी – मूर्ति (पृथ्वी) लटकी हुई है ।

ऐसे वराह –रूप –धारी भगवान् का उल्लेख कालिदास ने भी किया है।[9] उनके ग्रन्थों में मोरपंखधारी कृष्ण का भी उल्लेख है [10] तथा उनके भाई बलराम (हलधर) [11] और उनकी पत्नी रूक्मिणी का भी संकेत है। [12] गुप्तकालीन अनेकानेक पुराणों में विष्णु के समस्त अवतारों का विशद विवरण मिलता है । मत्स्य,कच्छप,वराह, नृसिंह,वामन,राम, परशुराम, कृष्ण,बुद्ध और कल्कि नामक दस अवतारों का उल्लेख मिलता है जिनकी चर्चा पहले की जा चुकी है । दक्षिण के चालुक्य वंशी शासक मंगलेश के आदेश से पर्वत पर कटे गुफा – मन्दिर में विष्णु और नारायण तथा वराह और नरसिंह की प्रतिमाएँ गढ़ी गई है ।[13] विष्णु शेषनाग पर लेटे हुए है तथा लक्ष्मी उनके चरण दबा रही हैं ।

हर्ष के युग में भी वैष्णव धर्म की गति निरन्तर प्रवहमान थी । वाण ने 'हर्षचरित ' में पांचरात्रिक और भागवत सम्प्रदायों का उल्लेख किया है ,जिनके अनुयायी दिवाकर मित्र के आश्रम में रहते थे। [14] भागवत लोग वासुदेव विष्णु की उपासना करते तथा अवतारवाद के सिद्धांत को मानते थे । स्मार्त वैष्णव ब्रज के अधिपति, गायों को चराने वाले तथा गोपियों के प्रिय श्रीकृष्ण की आराधना करते थे । 'कादम्बरी ' में अनेक स्थलों पर श्रीकृष्ण के आख्यानों का उल्लेख है ।हर्ष के समकालीन प्राग्ज्योतिपपुर (आसाम) के शासक भास्कर वर्मा के कुटुम्ब के लोग वैष्णव धर्म के अनुयायी थे। [15]

वैष्णव धर्म का प्रसार राजपूत –युग में भी तद्वत् था। अनेकानेक अभिलेख,मन्दिर और मूर्तियाँ इस कथन के प्रमाण हैं । खलीमपुर –दानपत्र से विदित होता है कि विष्णु का पूजन 'ओम् नमो नारायण ' के नाम किया जाता था। [16] कभी –कभी 'ओम् नमो भगवते वासुदेवाय' भी कहा जाता था । [17] पहाड़पुर की कलाकृतियों में गोवर्धनधारी कृष्ण की भी आकृति है । जयदेव ने राधा कृष्ण सम्प्रदाय का उल्लेख किया है । प्रतिहार शासक भोज के अभिलेख में विष्णु को निर्गुण और सगुण का प्रतीक मानते हुए 'हषिकेश' के रूप में वर्णित किया गया है। [18] पूर्वमध्य युग में भी विष्णु अपने सह,नामों से समाज में पूजित और आहत थे जिनमें वासुदेव नारायण, कृष्ण, मुरारी, आदिकोशव, हरि,माधव आदि नाम अधिक प्रचलित थे । उपासकों द्वारा अत्यन्त मनोनिवेशपूर्वक उनकी स्तुति की जाती थी ।[19]

इस युग में अनेक विष्णु मन्दिरों और मूर्तियों के भी निर्माण हुए जिसका उल्लेख तत्कालीन अभिलेखों में हुआ है । ऐसे अनेक अभिलेख मिलते हैं

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

जिनमें मन्दिरों के लिए दिए गए विभिन्न प्रकार के दानों के संकेत है । सेन-वंशी शासक अपने को परम वैष्णव कहते थे । चन्देल -शासक परमर्दि के बटेश्वर -अभिलेख में विष्णु -मन्दिर का उल्लेख मिलता है ।[20] खजुराहों में चन्देल शासक के संरक्षण में अनेक देव- मन्दिरों के निर्माण कार्य हुए,जिनमें विष्णु के भी अनेक मन्दिर थे । विष्णु के कुछ मन्दिर वहां आज भी हैं , जो समकालीन वैष्णव -धर्म -भावना की अभिव्यंजना करते हैं।

खजुराहों - अभिलेखों से भी विष्णु मन्दिर की स्थिति का प्रमाण मिलता है ।[21] चेदि -शासक लक्ष्मणराज के मंत्री सोमेश्वर ने एक विष्णु मंदिर बनाया था ।[22] परमार शासक भोजदेव के वेतम -दानपत्र में गुरूड़ध्वज के फहराने का उल्लेख है जो निश्चय ही विष्णु -मन्दिर पर रहा होगा।[23]

बंगाल के पाल शासक धर्मपाल के काल में नारायण का मन्दिर निर्मित हुआ था ।[24] नारायण पाल के समय के एक अभिलेख से गरूड़ध्वज का संकेत मिलता है।[25] उड़ीसा में अनेक विष्णु -मन्दिरों का निर्माण हुआ था । ऐसे मन्दिरों का केन्द्र भुवनेश्वर था जहाँ 12वीं सदी में अनन्त वासुदेव का भी मन्दिर बना था ।

विष्णु के मन्दिरों के अतिरिक्त इस काल में विष्णु की अनेक मूर्तियाँ भी गढ़ी गई । शंख,चक्र, गदा और पद्म को अपने करों में धारण किये हुए भगवान विष्णु की मूर्तियाँ पारम्परिक आधार पर निर्मित हुआ करत थीं । इस प्रकार की मूर्तियाँ पंजाब,हरियाणा,उत्तर प्रदेश,बिहार और बंगाल से प्राप्त हुई हैं । इस युग में हरिहर (विष्णु और शिव) का भी उल्लेख मिलता है ,अर्थात वैष्णव और शैव नामक दो विरोधी सम्प्रदायों को एक साथ सहिष्णु भाव से दर्शित किया गया है।

भगवान कृष्ण की भी अनेक मूर्तियाँ इस काल में निर्मित की गयीं । विष्णु की मूर्ति के साथ लक्ष्मी और गरूड़ की भी मूर्तियाँ इस काल में निर्मित की गयीं । विष्णु की मूर्ति के साथ लक्ष्मी और गरूड़ की भी मूर्तियाँ बनाई गई थीं । परमर्दि के अभिलेख में महालक्ष्मी उत्कीर्ण है जिस पर जल चढ़ाते हुए हाथी चित्रित किया गया है । गुप्त शासकों की मुद्राओं की तरह चेदि-शासक गांगेयदेव,चन्देल-शासक, कीर्तिवर्मा और काश्मीर शासिका दिढ़दा की मुद्राओं पर भी लक्ष्मी के चित्र अंकित है।

विष्णु के विभिन्न अवतारों का सन्दर्भ पुरातात्विक साक्ष्यों से मिलता है । वैसे,इस युग के कुछ साहित्यिक ग्रंथ भी विष्णु के दस अवतारों का उल्लेख करते हैं । क्षेमेन्द्रकृत (ग्यारहवीं सदी) 'दशावतारचरित' ,जयदेव (बारहवीं सदी) लिखित 'गीत गोविन्द' आदि प्रतिनिधि ग्रन्थों में विष्णु के दशावतार का वर्णन है । युवाराज देव (दशवीं शदी) के बन्धोगढ़ (मध्यप्रदेश,रीवा के निकट) अभिलेख में विष्णु के कई अवतारों का उल्लेख है।[26] नागपुर से प्राप्त परमार शासक के अभिलेख में विष्णु को मत्स्य जैसे अनेक रूपों में दर्शित किया गया है।[27] विष्णु का वराह- अवतार समाज में अधिक प्रचलित हुआ था ,जिसकी गुप्तकाल से अनेकानेक मूर्तियाँ भी निर्मित होने लगी थीं ।

दसवीं सदी के मेवाड़ (राजस्थान)के एक अभिलेख में वराह-अवतार का उल्लेख है।[28] यही नहीं ,नरसिंह -अवतार के भी अनेक अभिलेख मिलते है ।[29] राजपूताना से प्राप्त एक अभिलेख में नरसिंह - अवतार का सुन्दर चित्रण किया गया है।[30] बंगाल से प्राप्त चार हाथों वाली नरसिंह की मूर्ति प्राप्त हुई है।[31] विष्णु के वामन-अवतार की मूर्तियाँ उत्तर भारत से प्राय: नहीं मिलती । बंगाल से प्राप्त अभिलेखों में वामन अवतार के उदाहरण मिलते हैं।[32] यही नहीं , परशुराम की भी कुछ प्रतिमाएँ बंगाल से प्राप्त हुई है।[33]

महाकवि जयदेव ने परशुराम को जगत्पति और भृगृपति के रूप में उल्लिखित किया है ।[34] भोज के ग्वालियर - अभिलेख में राम को विष्णु के अवतार के रूप में विवृत्त किया गया है ।[35] राम की कतिपय लीलाओं का चित्रण पहाड़पुर की कला-कृतिओं में भी हुआ है । ग्यारहवीं सदी के अरब यात्री अलबरूनी ने स्थानेश्वर (हरियाणा) कि चक्रस्वामी (विष्णु) का उल्लेख किया है। वह लिखता हैं, '' तानेसर नगर हिन्दुओं द्धारा अत्यधिक आदत है। उस स्थान की मूर्ति 'चक्रस्वामिन' कहलाती है ,अर्थात् चक्र का स्वामी।[36]'' गुजरात में चौलुक्य शासक जयसिंह सिद्धराज ने दशावतार का मन्दिर निर्मित कराया था जो सहस्त्रलिंग झील के किनारे स्थित था।[37] उसके एक मन्त्री ने दधिपुर में गंगनारायण के मंदिर का निर्माण कराया था।[38]

भीम द्धितीय के एक शासकीय अधिकारी ने केशव का मन्दिर बनवाया था ।[39] पेहोआ (हरियाणा) अभिलेख में ' विष्णु 'गरूड़ासन के साथ उत्कीर्ण है।[40] गहड़वाल ताम्रलेखों से विदित होता है कि काशी के वरूणा और गंगा के तट पर 'आदिकेशव ' का मन्दिर बना था।[41] यह मन्दिर आज भी वर्तमान हैं जहाँ दर्शनार्थी जाया करते हैं। समाज में वैष्णव धर्म सम्बन्धी अनेकानेक समारोह और त्यौहार भी प्रचलित हो गये थे जिनका उल्लेख पुराण आदि विभिन्न कृतियों में हुआ है ।

इस सम्बन्ध में गुप्तकालीन अभिलेखीय प्रमाण भी मिलते हैं। चन्द्रगुप्त द्धितीय विक्रमादित्य के उदयगिरि-अभिलेख में 'शासन-एकादशी ' का उल्लेख है जो आशाढ़ मास के शुक्ल पक्ष के ग्यारहवें दिन मनायी जाती थी।[42] इस दिन हरि (विष्णु) सो जाते थे और कार्तिक के शुक्ल पक्ष की एकादशी के दिन जगते थे । जिस दिन वे जगते थे उसे 'देवोत्थान एकादशी 'या 'प्रबोधनी एकादशी 'कहते है।[43] गंगधर - अभिलेख में कहा गया है कि यह दिन सभी के लिए प्रफुल्लता और उल्लास लाता है ।[44] कृष्ण-जन्माष्टमी भाद्रपद के कृष्णपक्ष के आठवें दिन मनायी जाती थी।[45] अलबीरूनी ने भी अनेकानेक वैष्णव त्योहारों का उल्लेख किया है ,जिनमें देवशयनी एकादशी ,कृष्णजन्माष्टमी,देवोत्थान एकादशी,राम नवमी आदि विशेष प्रसिद्ध हैं ,जिनका समकालीन भारतीय साहित्य से भी समर्थन होता है।[46]

दक्षिण भारत में वैष्णव धर्म

उत्तर भारत की तरह दक्षिण भारत में भी वैष्णव धर्म का प्रसार तीव्र गति से हुआ। दक्षिण में भागवत धर्म के उपासक संत आलवार कहे जाते हैं जिसका समय वही रहा होगा जो उत्तर भारत मे हिन्दु धर्म के पुनरूत्थान का था। उस समय वैष्णव धर्म के संतों के दो वर्ग थे, एक आलवार और दूसरा आचार्य। आलवार अनुयायियों की विष्णु अथवा नारायण के प्रति अपूर्व निठा,भक्ति और आस्था थी ,जो भजनों की रचना करके अपने इष्ट देव का गुणगान करते थे। इनमें रामानुज का प्रमुख स्थान है। उनका जन्म श्री पेरूम्बदूर नामक स्थान पर 1106 ई. में एक द्रविड़ ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम केशव और माता का नाम कान्तिमती था। कांची के यादवप्रकाश के वे शिष्य थे जो शंकर मत के अनुयायी थे किन्तु बाद में रामानुज उनसे अलग होकर स्वतंत्र चिंतन करने लगे ।

प्राचीन काल से ही परम ब्रह्म ,जीव और जगत् की सत्ता को भारतीय दार्शनिकों ने स्वीकृत तथा सूक्ष्म और स्थूल तत्वों का विश्लेषण किया था। उपनिषदों के ज्ञान-तत्व में रामानुज का विश्वास था। उनके अनुसार ब्रह्म में चित् ,अचित् दोनों तत्व हैं। चित् आत्मा के रूप में है तथा अचित् से भौतिक जगत पल्लवित होता है ।

उन्होंने ब्रह्म को निर्गुण न मानकर सगुण माना है- अनन्त गुणों का भण्डार,जिसमें न राग है ,न द्धेश । वह ईश्वर है । ईश्वर और जीव का सम्बन्ध भिन्न है। उनके अनुसार ,कर्म,ज्ञान और भक्ति तीनों का महत्व है तथा समीपता से अज्ञान नष्ट हो जाता है और जीव अपने चिद्रूप को जान जाता

है,जो ब्रह्म का एक अंश है ।

बाद में माधवाचार्य (ग्यारहवीं सदी) ने शंकर के अद्वैत और रामानुज के विशिष्टाद्वैत के प्रतिकूल पॉच नित्य भेदों का वर्णन किया - (1) ईश्वर और जीवात्मा , (2) ईश्वर और जड़ जगत् (3) जीवात्मा और जगत् (4) एक जीवात्मा और दूसरी जीवात्मा तथा (5) एक जड़ पदार्थ और दूसरा जड़ पदार्थ । मध्य के अनुयायियों ने वैश्विक पद्धति का अनुसरण किया जिसके अनुसार परमात्मा में अनन्त गुण थे तथा जिनके कार्य आठ प्रकार के थे ।(1) सर्जन ,(2) पालन, (3) विनाश,(4) समस्त भूतों का नियंत्रण,(5) ज्ञान प्रदान करना,(6) स्वयं को आलोकित करना , (7) भूतों को सांसारिक बंधन से आबद्ध करना तथा (8) उनका उद्धार करना। जीवों की संख्या अनन्त मानी गई थी,जिनके तीन प्रकार थे-

(1) ब्रह्मत्व प्राप्त करने योग्य, (2) सर्वदा जीवन-चक्र में लगे रहने वाले और (3) अन्धकार में रहने वाले । पहले प्रकार के देव,पित् और ऋषि थे, मनुष्य दूसरे प्रकार में तथा दैत्य,प्रेत और क्रूर लोग तीसरे प्रकार में। जगतस्त्रष्टा परमात्मा समस्त ज्ञान का स्त्रोत एवं सर्वोत्कृष्ट है,जो विष्णु है। वह सतपुरूषों को मोक्ष प्रदान करता है ।

वैष्णव धर्म के अन्तर्गत निम्बार्क सम्प्रदाय का भी विकास हुआ । निम्बार्क तैलंग ब्राह्मण थे जो बेल्लारी जिले के निम्ब नामक ग्राम के रहने वाले थे । उन्होंने अपने मत के प्रचार के लिए संस्कृत भाषा अपनायी। उनका सिद्धांत वेदांत मत का भेदा-भेद अथवा द्वैता-द्वैतवादी है। रामानुज के सिद्धान्तों को उन्होंने खंडित किया तथा यह माना कि जड़ जगत् और जीवात्मा अपनी सत्त और क्रिया के लिए ईश्वर पर भी निर्भर है। अत: इस युग का आत्मा,परमात्मा और जगत् संबंधी संपूर्ण दर्शन -तत्व उपनिषदों में विवृत ज्ञान -तत्व से प्रभावित है ।

निष्कर्ष :-

हिन्दू धर्म विश्व के प्राचीनतम धर्मो में से एक है । अपनी मान्यताओं ,परम्पराओं, आस्थाओं ,विश्वास के कारण इसकी महत्ता प्राचीनकाल से आज तक बराबर अक्षुण्य बना रहा हैं। हिन्दू धर्म के नियमों के पालन से समाज ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में बन्धुत्व और उत्कृष्टता की स्थापना की जा सकती है।

भारत की धार्मिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी अत्यन्त प्राचीन है। भारत विश्व की प्राचीनतम सभ्यता, संस्कृति एवं धार्मिक केन्द्र रहा है । भारतीय धर्मो का मुख्य उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति ही है । पौराणिक धर्म में अवतारवाद का उल्लेख है। पुराणों में अनेकानेक देवी -देवता जो वैदिक हैं, उनके अतिरिक्त भी उद्भूत हुए । पंचदेवों में विष्णु ,शिव ,शक्ति ,गणेश और सूर्य वैदिक देवता हैं जो पुराणों में प्रधान हो गए ।

बाद में पुराणों में त्रिदेव शक्तिशाली हो गए । ब्रह्मा,विष्णु और महेश मुख्य भगवान के रूप में स्थापित हो गए । इस शोध आलेख में विष्णु (वैष्णव धर्म) के उद्भव और विकास के साथ उनकी मान्यताओं, परम्पराओं, आस्थाओं और विश्वास के विभिन्न आयामों का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार वैष्णव धर्म का उद्भव और विकास हुआ है।

संदर्भ सूची

1 - द्रष्टव्य,भंडारकर : वैष्णविज्म,शैविज्म ऐण्ड माइनर रिलिजस सेक्ट्स ,सुवीरा जायसवाल, ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट अब वैष्णविज्म ।
2 - भागवत् पुराण 1.3.26
3 - वही , 1.3.6 25.2.7.1.45.28 1.3.28
4 - रघुवंश , 107.8.6.49.10.10.10.13
5 - कार्पस इन्सिक्रप्शनम इंडिकेरम् 3,पृ.51
6 - वही,पृ.52,
7 - वही,3पृ.159
8 - द क्लासिकल एज,पृ.422-23
9 - कुमारसम्भव 6.8,भुवा,महावराहदंष्ट्रायां विश्रानता: ।
10 - मेघदूत ,पृ. 15 वर्हेणेव ।
11 - वही,पृ.49
12 - मालविकाग्निमित्र,5.2 विष्णों : च रूक्मिणीयम् ।
13 - फर्ग्युसन और वर्गेस,केव टेम्पुल्स,पृ.407
14 - हर्षचरित,सर्ग ,8पृ.236
15 - वही ,सर्ग,7,पृ.64
16 - इपि.ई.,16,पृ.5
17 - वही,पृ.359
18 - वही,18,पृ.95
19 - वही ,पृ. 107
20 - वही,पृ.211
21 - वही,पृ.129
22 - वही,2पृ.174 -177
23 - वही,18,पृ.95,100,19पृ.172
24- वही,4 खलीमपुर -दानपत्र ।
25 - वही,2पृ.160
26 - कार्पस इन्स्क्रप्शनम इंडिकेरम, 4,पृ.184,186,191, श्रीयुवराजदेवामात्यस्य मत्स्य कच्छ वराह परशुराम आदि।
27 - इपि.इं.2पृ.182
28 - इंडि.ऐं.58 पृ.161
29 - इपि.इं. 19 पृ. 244,11,पृ.190,1,पृ.124
30- वहीं, 11,पृ.190
31- ईस्टर्न इंडियन स्कूल अव मेडीव.ल स्कल्पचर्स,प्लेट ,45,46
32 - वही,प्लेट 46
33 - झककोनाग्राफी इन ढाक म्यूजिय,प्लेट 39
34 - गीतगोविन्द,केशवधृत भृगुपति रूप जय जगदीश हरे ।
35 - इपि.इं.,18 पृ.107
36 - यारहवीं सदी का भारत पृ.185
37 - द्धयाश्रय महाकाव्य , 15.119 ,सरस्वती पुराण,15.5.162
38 - इंडि.ऐं.10,158,दोहद -अभिलेख ।
39 - इपि. इं.2,439
40 - वही, 1 184-90,
41 - त्रिपाठी,हिस्ट्री अव कन्नौज ,पृ.353 ,
42 - कार्पस इन्स्क्रप्शनम् इंडिकेरम ,3,51.
43 - इंडि. ऐ.43,पृ.193
44 - एंशिएंट इण्डियन इन्स्क्रप्शनम् पृ.98
45 - सेलेक्ट इन्स्क्रप्शनम् पृ.382
46 - ग्यारहवीं सदी का भारत पृ.96 -217

****

गुरुवाणी में वर्णित व्यक्तिपरक मूल्य व स्त्री-पुरुष सम्बन्ध : एक विश्लेषण

डॉ. रविन्द्र सिंह*

सामाजिक घटकों के वे मूल्य ''व्यक्तिपरक मूल्य'' कहे जाते हैं जिन्हें वे अपनी सीमाओं में व्यवहार में लाते हैं। व्यक्ति के आचरण-परक मूल्य व्यक्तिपरक मूल्यों की कोटि में आते हैं। यद्यपि ये मूल्य प्रत्यक्षत: समाज को प्रभावित नहीं करते तथापि परोक्ष रुप में इनका समाज पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इन मूल्यों के विकृत हो जाने से ही समाज में अनैतिकता, अमानवता और भ्रष्टाचार आ जाते हैं। यौनाभिभूत तथा आचरण के मूल्य व्यक्ति के व्यक्तिपरक मूल्य माने जाते हैं परन्तु इन्हें मान्यता हमारा समाज ही देता है। मध्यकालीन गुरुकाल में समाज के व्यक्तिपरक मूल्यों में नाना प्रकार की गिरावट आ गयी थी, गुरुओं की चेतना ने इसका अनुभव किया और श्री गुरु ग्रंथ साहिब, जो कि आदि ग्रंथ के नाम से जाना जाता है, में सिख धर्म के दस गुरु साहिबान में से 6 गुरुओं व 30 समकालीन सन्तों-भक्तों की वाणी में सामाजिक चेतना के ये स्वर मुखर कर सामने आये हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में गुरुवाणी में वर्णित व्यक्ति परक मूल्य व समाजिक मूल्यों के सन्दर्भ में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का दिग्दर्शन एवं विश्लेषण करना मुख्य लक्ष्य है।

स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध

स्त्री और पुरुष गृहस्थ रुपी गाड़ी के दो समान चक्र हैं। दोनों की स्थिति एक जैसी है। यदि पुरुष गृहस्थी का राजा है, तो स्त्री की भूमिका भी रानी व मंत्री की है। एक दूसरे के बिना गृहस्थी का सुचारु रुप से चलना असम्भव है। ''वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति किसी भी अंश में पुरुषों से कम न थी। वे पुरुषों के बराबर समझी जाती थीं, स्त्री, पुरुष का आधा अंग मानी जाती थी। प्राचीन काल में तो राजा के अभिषेक के समय रानी का भी अभिषेक किया जाता था।''[1] मध्यकाल तक पहुँचते पहुँचते ऐसी स्थिति न रही। स्त्री, पुरुष के लिए भोग्य वस्तु और विनोद की सामग्री बन कर रह गई थी। ''मुगल शासन काल में भारतीय नारियों के ऊपर अत्याचार तो अपनी चरम-सीमा तक पहुँच गया। यह परम शोचनीय बात थी कि उनका सम्मान उनके परिवार में ही समाप्त हो गया। अमरत्व प्राप्ति की साधना के सारे अधिकारों से वे वंचित कर दी गईं थीं। उनका कोई निजी कर्म ही न रह गया। वे आध्यात्मिक उत्तरदायित्व से हीन थी। वेदों-शास्त्रों का अध्ययन उनके लिए वर्जित था। गृह परिचर्चा ही उनकी साधना थी और उसी में सन्तोष करना पड़ता था।''[2]

साधना में नारी पतन का कारण समझी जाने लगी। संतों की दृष्टि में नारी के रुप सौन्दर्य का पान करने से मनुष्य के बल, बुद्धि और विवेक का नाश हो जाता है, अत: उससे दूर ही रहना चाहिए। गोरखनाथ का कहना है कि नारी में आसक्त रहने वाले व्यक्ति की स्थिति ऐसी होती है जैसे नदी के किनारे पर लगे हुए वृक्ष की। यथा-''नदी तीरे विरशा, नारी संगे पुरुषाअन्न[3] कबीर जी नारी को सिद्धि के मार्ग में व्यवधान मानते हुए कहते है कि ''वह जिस किसी के भी साथ होगी, उसकी भक्ति, मुक्ति और ध्यान हर लेगी।'' यथा-''नारी नसावै तीनि सुख जा नर पासे होइ, भक्ति, मुक्ति निज ग्यान में पेनि सकई कोई।''[4]

इतना ही नहीं, नारी को ''नरक का मूल'' समझा जाने लगा। सामाजिक दृष्टि उनका तिरस्कार करने लगी। लोग उनकी निन्दा करने से भी नहीं चूकते थे। ऐसे समय में, सिख गुरुओं ने उपेक्षित नारी-समाज को गौरव-पूर्ण पद प्रदान करने की चेष्टा की। गुरु नानक देव जी ने तर्कपूर्ण शैली में समझाते हुए कहा है कि ''स्त्री से ही पुरुष का जन्म होता है। स्त्री के ही उदर में उसका शरीर बनता है। स्त्री से ही सगाई और विवाह होता है। स्त्री के ही द्वारा पुरुष के अन्य लोगों से सम्बन्ध बनते हैं और उसी से सृष्टि का क्रम चलता है। एक स्त्री के मर जाने के पश्चात् पुरुष दूसरी स्त्री की खोज करता है। ऐसी परिस्थितियों में फिर उसे बुरा क्यों कहा जाए जिसने कि बड़े-बड़े राजाओं को जन्म दिया।[5]

भारतीय समाज में कई प्रकार के स्त्री-पुरुष सम्बन्ध पाये जाते हैं। जैसे पति-पत्नी का, भाई-बहिन का, पिता-पुत्री का, चाचा-भतीजी का और इसी प्रकार प्रेमी-प्रेमिका और पर-स्त्री या पर-पुरुष सम्बन्ध। इन सभी सम्बन्धों को हम दो भागों में बांट सकते हैं-प्रथम कोटि में ऐसे सम्बन्ध आते हैं, जिन्हें हमारा समाज मान्यता देता है, इन्हें हम सामाजिक मान्यता प्राप्त सम्बन्ध कह सकते हैं।

इन संबंधों को हमारे गुरुजनों ने भी स्वीकृति दी है। द्वितीय कोटि में स्त्री-पुरुष के वे सम्बन्ध आते हैं, जिनको हमारा समाज स्वीकृति नहीं देता, इन्हें हम सामाजिक अमान्यता प्राप्त सम्बन्ध कह सकते हैं। स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के इन दोनों स्वरुपों का संक्षिप्त विवेचन निम्नानुसार है :-

प्रथम कोटि - सामाजिक मान्यता प्राप्त सम्बन्ध

पुरुष ही स्त्री को जननी के गौरव योग्य बनाता है, इस स्थिति में उन दोनों का सम्बन्ध पति-पत्नी का कहलाता है। इस सम्बन्ध को हमारा समाज विवाह द्वारा मान्यता प्रदान करता है। गुरुवाणी में तो विवाह के पश्चात् पति-पत्नी की स्थिति '' दो शरीर एक प्राण'' स्वीकार की गई है। यथा-''धन पिरु इह ना आखियन, बहनि इकट्ठे होइ। एक जोति दुइ मूरती धन पिरु कहीऐ सोइअप[6]

गुरुओं की वाणी में कतिपय स्थलों पर पति-पत्नी के एक दूसरे के प्रति कर्त्तव्यों के संकेत भी उपलब्ध होते हैं। उन्होंने सच्ची सुहागिन के लिए अपने स्वामी को हृदय में धारण करना, मृदु-भाषी होना, नम्रता-पूर्वक व्यवहार करना और फिर अपने पति की सेज पर सुशोभित होना अपेक्षित माना है।यथा-''गुरुमुखि सदा सुहागणी पिरु उरधारि। मिठा बोलहि निवि चालही सैजै खै भतारु[7] ''वह (पत्नी) अपने पति को पहचान कर तन-मन समर्पित कर दे।''[8] ''पति उसके सब अवगुणों को दूर करता हुआ उसे गले लगाकर संवारे।''[9] चूंकि सिख गुरुओं का धर्म गृहस्थियों का धर्म कहा जाता है। अत: उनकी वाणी में पति-पत्नी के आदर्श सम्बन्धों की पर्याप्त चर्चा हुई है।

इसके अतिरिक्त गुरुवाणी में भाई-बहिन, देवर-भाभी, चाचा-भतीजी, इत्यादि सम्बन्धों को भी स्वीकृति दी गयी है परन्तु समूचा काव्य आध्यात्मिकता की प्रमुखता के कारण सर्वोपरि नाता भक्त और भगवान् का ही माना गया है।[10]

द्वितीय कोटि - सामाजिक अमान्यता प्राप्त सम्बन्ध

सामाजिक अमान्यता प्राप्त सम्बन्धों के अन्तर्गत आने वाले सम्बन्ध दूसरे प्रकार के हैं। इनमें प्रेमी-प्रेमिका, पुरुष का वैश्या या पर स्त्री से सम्बन्ध और बलात्कार आदि से बनने वाले संबंध आते हैं। ये सभी सम्बन्ध यौनाकर्षण मात्र के ही परिणाम होते हैं। गुरुओं ने ऐसी कामपरकता का विरोध ही किया है। उन्होंने पर-स्त्री के संग को विषधर के संग के समान और त्याज्य बतलाया

* विभागाध्यक्ष-इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

है।[11] गुरुवाणी में पर-नारी को छिप-छिप कर देखने वाले के लिए कोल्हू में तिलों की भांति पिस जाने का विधान है। यथा-''तकहि नारि पराईआ लुक अन्दर ठाणी। ...अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी।''[12]

कर्म-सिद्धांत के अनुसार गुरुवाणी में यह समस्या भी उठाई गई है कि ''मनुष्य अनेक पदों, बन्द किवाडों के पीछे पराई स्त्री के साथ भोग करता हुआ अपने आप को भले ही सुरक्षित समझे, परन्तु वह अपना यह कुकृत्य सर्वव्यापक प्रभु से कैसे छिपायेगा ? चित्रगुप्त के हिसाब-किताब मांगने पर वह क्या बतायेगा ।[13] इसी प्रकार अपने पति की उपेक्षा करने वाली कुलटा-नारी की भी गुरु-काव्य में भर्त्सना की गई है।

यथा- ''मनमुख मैली कामणी कुलखणी कुनारि। पिर छोड़िआ घरि आपणा पर पुरखै नाल पिआरु।''[14] कुलटा नारी के श्रंगार को वैश्या-पुत्र के समान कोन अपना सकता है, उसका कोई स्वामी नहीं होता।'' यथा-''पिर बिनु किआ तिस धन सीगारा। पर पिर राती खसमु विसारा। जेउ बेसुआ पूत बापु को कहिऐ तिउ फोकट कार विहारा है।''[15] पति का त्याग करने वाली स्त्री को गुरुओं ने ''कमजात'' भी कहा है। यथा-''खसमु विसारहि ते कमजात।''[16]

गुरुवाणी में प्रेमी-प्रेमिका संबंध और बलात्कार को भी अनैतिक ही माना गया है। इन अमान्य सम्बन्धों के प्रचलित होने के कारण ही मध्यकालीन समाज अपने नैतिकपरक मूल्यों से गिर चुका था और सामाजिक पतन की ओर अग्रसर था। राजाओं-महाराजाओं के लिए तो अपने हरमों में हजारों की संख्या में स्त्रियां रखना और उनसे भोग विलास तो उनके लिए सहज स्वाभविक था। इन्हीं सामाजिक बुराइयों और अनैतिकता से गुरुओं की आत्मा व्याकुल हो उठी और परिणामरूवरुप उन्होंने नारी के कामिनी रुप का विरोध किया[17]और आदर्श मानव बनने का उपदेश दिया।

गृहस्थ जीवन को पवित्र एवं सर्वश्रेष्ठ धर्म माना है। गुरुवाणी में सामाजिक समरसता व संबंधों की पवित्रता बनाये रखने पर बल दिया गया है। मध्यकालीन पतनोन्मुखी समाज की बुराइयों का निराकरण करके एक नूतन सामाजिक विधान प्रस्तुत करना सिख गुरुओं का महान् प्रयास कहा जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ :

1 प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : भारत की जातियां तथा संस्थाएँ, विजय कृष्ण लखनपाल एण्ड कम्पनी, देहरादून, 1960, पृ. 612
2 तेजा सिंह : ऐसेज इन सिखिज्म़, सिख यूनिवर्सिटी प्रेस, लाहौर, 1941, पृ. 12-13
3 डॉ. पीताम्बर लाल बड़थवाल: गौरख-वाणी संग्रह, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वितीय संस्करण, 1968, पृ. 164
4 डॉ. श्यामसुन्दर दास, सं0 : कबीर ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, काषी, 1967, पृ. 39
5 गुरु अर्जुन देव, संपादक : आदि ग्रंथ, महला 1, वार आसा, श्लोक 2, पृ. 473
''भंडि जंमीऐ भंडि निमीऐ, भंडि मंगणु विआह। भंडह होवै दोसती भंडह चलै राहु।।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु। सो कियु मंदा आखीऐ, जितु जंमहि राजान।।''
6 आदि ग्रंथ, महला 3, वार सूही, श्लोक 3, पृ. 488
7 आदि ग्रंथ, महला 3, सिरी राग, श्लोक 2:13:13, पृ. 31
8 आदि ग्रंथ, महला 3, सिरी राग, श्लोक 4:28:61, पृ. 38
''खसमु पछाणहि आपणा,तनु मनु आगै देह।''
9 आदि ग्रंथ, महला 5, वार रामकली, श्लोक 1, पृ. 959
''पिरी अउगण तिस के सभि गवाए गल सैती लाइ सवारी।''
10 आदि ग्रंथ, महला 5, सिरी राग, श्लोक 1:2:29, पृ. 73
''भैण भ्राई सभि सजणा तुधु जेहा नाही कोउ जीउ।''
11 वही, आ. ग्रं., महला 5, आसा, श्लोक 2:5:127, पृ. 403
''जैसा संगु बिसीअर सिऊ है रे, तैसो ही ऐहु पर गृहु।''
12 आदि ग्रंथ, महला 5, गउड़ी की वार, पउड़ी 27, पृ. 315
13 आदि ग्रंथ, महला 5, सौरठ, 3:15:26, पृ. 616
14 आदि ग्रंथ, श्लोक महला 3, वार सिरी,, पृ. 89
15 आदि ग्रंथ, महला 5, सौरठ, 3:16:26, पृ. 616 तथा म. 1, मारु सोलहे, 5:3:9, पृ. 1029
16 आदि ग्रंथ, महला 1, आसा, 4:3, पृ0 10
17 डॉ. उषा वोहरा: गुरुवाणी में सामाजिक चेतना, भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला, 1989, पृ. 204

****

छत्तीसगढ़ में राजनीतिक संचेतना की उत्पत्ति

डॉ. नवीन गिडियन*

भारत एक विशाल राष्ट्र है और ऐसे विशाल राष्ट्र का मानचित्र जिनके हृदय में अंकित हो चुका हो और सदियों से विदेशी उसकी मातृभूमि को अपने पैरों से रौंद रहे हों, उस राष्ट्र को स्वाधीन करने की उत्कृष्ट अभिलाषा जिनके मनों में बलवती हो चुकी थी, ऐसे राष्ट्राभिमानी त्यागी और बलिदानी नौजवानों ने 1857 ई. में देशव्यापी एक ऐसा स्वतन्त्रता आन्दोलन चलाया कि विदेशी हताश होने लगे और जब यह आन्दोलन सफलता की ओर अग्रसर हो रहा था, तभी अंग्रेजों की कूटनीति और देशी राजाओं की आपसी कलह तथा राजलिप्सा ने स्वाधीनता की उस प्रज्वलित अग्नि को दबा दिया। आंदोलन ठण्डा पड़ गया और जो दमन देश भक्तों का किया गया, इतिहास के पन्ने उससे भरे पड़े है।[1]

1857 की क्रांति–

मई माह में सन् 1857 की क्रांति प्रारंभ हुई। जिसकी चिंगारी मेरठ की सैनिक छावनी से होते हुए संपूर्ण भारत में फैल गयी। जिससे छत्तीसगढ़ क्षेत्र भी अछूता न रह सका और इस क्षेत्र में भी विद्रोह के शोले धधकने लगे।

1857 की क्रांति के पूर्व छत्तीसगढ़ अंचल में सोनाखान के बीहड़ जंगलों में चिंगारी लगी। यह चिंगारी दावानल की स्थिति भी प्राप्त कर लेता, पर दुर्भाग्य है कि प्रांत के लोगों ने अंग्रेजों के बहकावे में आकर उसे बुझा दिया, किन्तु यह बलिदान की स्वर्णिम स्मृति हमारे इतिहास का एक गौरव युक्त अध्याय है।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरूद्ध 1857 में जब विप्लव प्रारंभ हुआ, तब रायपुर की जनता एवं सैनिकों ने सोनाखान के जमींदार वीर नारायण सिंह को अपना नेता चुना। उस समय वे रायपुर के बंदीगृह में लगभग दस माह की सजा काट रहे थे। हृदय में उत्साह तथा अंग्रेजों के प्रति क्रोध की भावना लिए वे छत्तीसगढ़ की जनता की सेवा के लिए तत्पर थे। अगस्त 1857 में संभवत: अनियमित पैदल सेना (नेटिव इन्फेंटरी) की सहायता से नारायण सिंह तथा अन्य बंदी बंदीगृह से निकले।[2] अंग्रेजों ने नारायण सिंह को उसके अंग्रेजी शासक के प्रति विद्रोह करने के कारण जेल में डाल दिया गया था। वीरनारायण सिंह सोनाखान के जमींदार थे।

जेल से भागकर सोनाखान पहुंचे एवं वहां उन्होंने अंग्रेजों के विरूद्ध सेना तथा देशी हथियार एकत्र किये।[3] विद्रोह को दबाने के लिए 7 सितम्बर 1857 को रायपुर के डिप्टी कमिश्नर ने नागपुर के कमिश्नर को सहयोग के लिए पत्र लिखा।[4] उस पत्र में उल्लेख करते हुए उन्होंने यह स्वीकार किया कि विप्लव की लहर गांव–गांव में फैल गई थी।[5]

सन् 1857 तृतीय पैदल सेना (थर्ड नेटिव इन्फेंटरी) का मुख्यालय रायपुर था।[6] स्मिथ के नेतृत्व में अंग्रेजी की एक सेना की टुकड़ी सोनाखान पहुँची। स्मिथ ने सोनाखान की बस्ती में आग लगा दी और विद्रोहियों का सोनाखान के जंगलों में घेर लिया। नारायणसिंह को गिरफ्तार कर लिया गया। पुन: वे रायपुर जेल में डाल दिये गये।

नारायणसिंह पर एट्रोशियस एक्ट के अंतर्गत मुकदमा चलाया गया। 10 दिसम्बर 1857 को सैनिक टुकड़ी एवं रायपुर की जनता के समक्ष वीर नारायणसिंह को फाँसी दे दी गई। यह वही स्थान है, जो आजकल जय स्तम्भ चौक कहलाया है।[7] वीर नारायणसिंह की मृत्यु से छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय चेतना का उदगम कहा जा सकता है। क्योंकि इसने सिपाहियों और नागरिकों को क्रांति के लिए प्रेरणा दी।

इस पृष्ठभूमि में हमें उन घटनाओं को देखना है जो एक मास पश्चात् रायपुर में हुई। अधिकारियों ने एक ऐसे प्रभावशाली नेता को अपराधी के रूप में फाँसी दें दी थी। जिसका एकमात्र अपराध यह था कि उसने एक व्यापारी द्धारा संग्रह किए गए अनाज को बँटवाकर किसानों में फैली हुई दुर्भिक्ष की कठिनाईयों को मिटा दिया था और स्वयं ही स्पष्ट रूप से अपने कार्य की सूचना कमिश्नर को दे दी थी।

यह तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि उसने लोकहित का कार्य किया था और यदि समझा जाता तो व्यापारी की क्षतिपूर्ति कराई जा सकती थी। वास्तव में उसने संक्षिप्त रूप में वही कार्यवाही की थी जो कोई भी अच्छा शासन दुष्काल के समय करता अर्थात् जहाँ कहीं भी अनाज रोककर रखा जाता, वहाँ से उसे प्राप्त करके उनको, जिन्हें उसकी आवश्यकता थी, बांट दिया जाता। सार्वजनिक स्थान पर नारायणसिंह को राजद्रोही के रूप में फाँसी दे दी गई।

रायपुर में 18 जनवरी 1858 को रात्रि में 8 बजे पैदल सेना रेजिमेंट के सार्जेंट मेजर सिडवेल अपने कक्ष में बैठे थे। कुछ ही देर पहले उन्होंने अपने सेवक को छुट्टी दी थी। उसी समय मेगजीन लश्कर हनुमानसिंह दो गोलंदाजों के साथ शस्त्रों से सुसज्जित होकर एकाएक कमरे में घुस गया। दोनों गोलंदाजों दरवाजे पर चौकसी करते रहे और हनुमानसिंह ने तलवार से सिडवेल पर वार किया। कुछ ही क्षण में उसकी मृत्यु हो गई।[8] वे तीनों आदमी फिर सेना शिविर की ओर झपटे और ऊँचे स्वर में सिपाहियों को विद्रोह में सम्मिलित होने के लिए आव्हान करने लगे।

तोपखाने का हवलदार भी साथ हो गया था। पर संगठन के अभाव में यह क्रांति अल्पकालीन सिद्ध हुई। लगभग छ: घंटे के अंदर लेफ्टीनेंट रायबॉट एवं लेफ्टीनेंट स्मिथ ने अपने सैनिकों के साथ आकर तोपखान के हवलदार एवं सैनिकों को गिरफ्तार किया। हनुमान सिंह उनकी गिरफ्त से बाहर रहे एवं उन्हें पकड़ने के लिए पुरस्कार की घोषणा की गई।[9] परन्तु हनुमानसिंह को अंग्रेजों ने कभी गिरफ्तार नहीं कर सके।[10] यह वीर नारायणसिंह की हत्या का प्रतिकार था।

छावनी में भारतीय अधिकारियों की उपस्थिति में दो दिनों तक विद्रोहियों पर मुकदमा चलता रहा। सबको मृत्युदंड दिया गया।[11] जबलपुर से 33वीं मद्रासी पैदल सेना (नेटिव इन्फेन्टरी) मंगवा कर विद्रोह को दबा दिया गया। 12 फरवरी 1858 को प्रात: सैनिकों एवं रायपुर की जनता के समक्ष 17 क्रांतिकारियों को फाँसी की सजा दी गई।

छत्तीसगढ़ की धरती पर शहीद होने वाले महान सपूत थे – गाजी खां, अब्दुल हज, मुल्लू, शिवनारायण, पन्नालाल, मातादीन, ठाकुर, अकबर हुसैन, बाली दुबे, लालसिंह, बुद्धपरमानन्द, शोभाराम, दुर्गाप्रसाद, नजर मोहम्मद, शिवगोविन्द, देवीदीन।[12]

फाँसी देने के साथ–साथ इनकी सारी सम्पत्ति को भी जप्त कर ली

* प्राध्यापक–इतिहास, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

गयी।[13] इस विद्रोह में सभी जाति धर्म जाति और धर्म के लोग शामिल थे, जो इस बात को प्रमाणित करती है कि अंचल में राष्ट्रीय हित की भावना सर्वोपरि थी।

यह सत्य है कि उत्तर भारत के अन्य स्थानों की तुलना में छत्तीसगढ़ का विद्रोह असंगठित था। इसके बावजूद भी नारायणसिंह ने जिस राजनीतिक एवं राष्ट्रीय चेतना का परिचय दिया तथा सैनिकों को विद्रोह के लिए जिस प्रकार मृत्यु ने प्रेरित किया, यह घटना स्वयं में काफी महत्वपूर्ण थी। भले ही इसके पश्चात् छत्तीसगढ़ की जनता में अनेक वर्षो तक राजनीतिक शून्यता रही, नारायणसिंह द्वारा इस अंचल में राष्ट्र के प्रति समर्पित राष्ट्रीय चेतना का बीजारोपण 1857 में ही कर दिया था।

इतिहास के घटनाक्रम में सन् 1857 का महाविप्लव सामंतवादी वर्ग द्वारा विदेशी शासन का उखाड़ फेंकने और देश को स्वतंत्र करने के लिए अंतिम प्रयास की सीमा रेखा है। भू-स्वामियों और राजस्व वर्ग की ओर से राष्ट्र के सम्मान तथा गौरव को स्थापित करने का यह एक महत्वपूर्ण प्रयास था।[14]

यद्यपि अंग्रेजों ने स्वाधीनता के 1857 के आंदोलन का दमन कर दिया था, परन्तु छत्तीसगढ़ में 1857 के बाद राष्ट्रीयता का विकास दृष्टिगोचर प्रतीत होता है। क्योंकि भारतीय मानव ब्रिटिश दासता से मुक्त होने को प्रयत्नशील था। भारत में हो रहे सामाजिक एवं धार्मिक आंदोलन के माध्यम से राष्ट्रीयता का विकास में सहायक हुआ।

राष्ट्रीय स्तर पर सुधार आंदोलनों में ब्रह्म-समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन जैसे आंदोलनों का अभ्युदय हुआ। देश के अनेक विद्धानों और धार्मिक सुधारकों जैसे राजा राममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, ईश्वरचन्द्र सागर, स्वामी विवेकानन्द आदि ने भारतीयों को देश की महानता से अवगत कराया एवं उन्होंने प्रसाद से माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के विकास का शंखनाद किया।

संदर्भ-

1. जैन, रतनचंद : मध्यप्रदेश स्वतंत्रता संग्राम सैनिक संघ के ''चौंतीस साल'', 1990, पृ. 2.
2. पार्लियामेन्ट्री पेपर्स रिकार्डिंग म्यूटीनी फरदर पेपर्स, पृ. 287.
3. रायपुर नगर निगम रिपोर्ट, 1971-72, पृ. 1.
4. पार्लियामेन्ट्री पेपर्स रिकार्डिंग म्यूटीनी-फरदर पेपर्स, पृ. 268.69.
5. मध्यप्रदेश संदेश, 19 अगस्त 1972, पृ. 50
6. काये एंड मालेशन : हिस्ट्री ऑफ द इंडियन म्यूटिनी, 1904, पृ. 77.
7. रायपुर जिला गजेटियर, 1973, पृ. 85.
8. छत्तीसगढ़ डिवीजनल रिकार्ड, 1857, खंड 16.
9. रायपुर जिला गजेटियर, 1973, पृ. 75-76.
10. देशबन्धु संदर्भ छत्तीसगढ़, 1993, पृ. 25.
11. शुक्ल अभिनन्दन ग्रंथ, इतिहास खंड, 1955, पृ. 136.
12. छत्तीसगढ़ डिवीजनल रिकार्ड, 1857, खंड 19, पृ. 36.
13. वर्मा भगवानसिंह : छत्तीसगढ़ का इतिहास, 1991, पृ. 149.
14. म. प्र. संदेश : 15 अगस्त 1987, पृ. 7.

****

आर्यों का उद्गम स्थल आर्यावर्त्त, अन्य अक्षरों में भारतवर्ष

डॉ. नितिन सहारिया * डॉ. सुरेश कुमार विमल **

हम आर्य संतान है। हमारे पूर्वज आर्य थे वे ही सबसे प्राचीन भारतीय थे। यथार्थ यही है संस्कृत वाग्ड़मय में आर्य शब्द का प्रयोग सम्मानीय, सभ्य, श्रेष्ठ, ज्येष्ठ व्यक्ति के लिए होता रहा है ऋग्वेद में आर्य शब्द 36 बार आया है। परन्तु ऐतिहासिक एवं पुरातत्वीय मतों में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। कुछ मानते है कि ये आर्य बाहर से भारत में और कुछ कहते हैं कि आर्यो का आदिनिवास हिमालय का आँचल है, जहाँ ज्ञान के स्रोत वेदों का अविर्भाव हुआ। मान्यता यह भी है कि आर्य उस समय में भी अति उन्नत थे, जब अन्य सम्यताओं में विकास यात्रा अपने प्रारंभिक दौर में थी। परन्तु इतना तो सच है कि आर्य उन्नत एवं श्रेष्ठ अवश्य थे।

निर्विवाद रूप से उस तथ्य को सभी एकमत से स्वीकारते हैं। आर्यो के आदि देश भारतवर्ष की वर्तमान आबादी सवा सौ करोड़ से भी अधिक है इसमें 4693 समुदाय, 4500 सजातीय समूह, 325 प्रचलित बोलियां और 25 लिपियां हैं। इनके अलावा इस देश की विशेषताओं में चार प्रमुख जातियां और सैकड़ों उप जातियां भी सम्मिलित हैं।

इस विशाल भारत का आदि स्रोत क्या है ? इसके मूल में वह कौन सा जीन है, जो विकास के बाद इतना विराट रूप धारण कर चुका है। इतनी सारी विभिन्नताओं के मूल में कुछ तो अवश्य होगा ? क्या है वह मूल–आज वैज्ञानिक इसी अनुसंधान में जुटे हैं।

वे जानना चाहते हैं कि भारतीय वास्तव में कैसे भारतीय बने। आनुवांशिक विशेषज्ञों के अनुसार इस सृष्टि का प्रथम मानव कौन सा है ? वह कहाँ उत्पन हुआ और फिर उसके वंशजो की विकास यात्रा प्रारम्भ हुई। उसी प्रथम मानव का जीन ही प्रकारान्तर से आनुवांशिक गुणों का वाहक बना और अब तक लम्बी यात्रा को पार कर वर्तमान विराट विभिन्नता तक पहुँचा।

इस संदर्भ में पौराणिक आख्यान है कि–मध्य हिमालय मानव जाति का उत्पत्ति स्थल है और आर्य संस्कृति का आदि स्रोत है। यही आर्यो का आदिदेश है। सृष्टि के प्रथम मानव को मनु माना जाता है। मनु की उत्पत्ति संबंधी विषय भी पुराणों में प्रतीकात्मक, परन्तु जैनेटिक विज्ञान के लिये चुनौती पूर्ण है। इनके प्रतीक बहुत कुछ कहते हैं, जैसे जीन में बहुत कुछ विलक्षणताएं समायी होती हैं।

पौराणिक मतानुसार मनु एवं शतरूपा की उत्पत्ति सृष्टिकर्ता ब्रम्हा के दाहिने भाग से तथा बायें भाग से हुई। शक्ति–साधना के पश्चात् स्वयंभुव मनु पृथ्वी पर रहकर सृष्टि कर्म करने लगे। पहले उनके प्रियव्रत, उत्तानपाद नामक दो तेजस्वी पुत्र एवं आकृति, देवहूति व प्रसूति नामक तीन कन्यायें हुई। उत्तानपाद से ध्रुव जैसे भगवत् भक्त प्रकट हुये।

देवहूति से स्वयं भगवान ने कपिल रूप में अवतार ग्रहण किया। इस संसार में मानव वंश का प्रारम्भ हुआ। चूँकि इसका प्रारम्भ मनु से हुआ, इसलिए इसकी संतान को मानव कहा जाता है। मनु का कार्यक्षेत्र हिमालय को माना जाता है। इस संदर्भ में फ्रान्सीसी विद्धान क्रूजर का कथन है कि– ''यदि संसार में कोई देश मानव जाति का जन्म स्थान या मानव की आदि सभ्यता का क्रीड़ा स्थल होने का सम्मान प्राप्त कर सकता है और जिसके द्धारा विद्या का वरदान संसार के समस्त धर्मो तक पहुँचाया गया है तो वह देश भारत वर्ष ही है।'' इस प्रकार विभिन्न मतान्तरों के बावजूद यह स्पष्ट होता है कि मानव की उत्पत्ति हिमालय के प्रांगण में हुई। इतिहासविद् नारायण रामचन्द्र भावे अपने ग्रन्थ 'मैं हिन्दू क्यों हूँ' में लिखते हैं कि–'' मनुष्य सर्व प्रथम वैवस्वत मन्वन्तर में हिमालय के मानसरोवर एवं कैलाश पर्वत के बीच में 12,05,33114 वर्ष पूर्व अस्तित्व में आया।''

'इंडिया टुडे'–पत्रिका (23 सितम्बर 2009, पृष्ट 13) में अनेक आँकड़ों व निष्कर्षो का हवाला देते हुये लिखती है कि– '' विश्वभर में जितने विविध प्रकार के मनुष्य हैं, जिनमें सभी संभावित अनुवांशिक संरचना विद्यमान है, उन सबका मूल है उनका भारतीय होना एवं अनुवांशिक विविधता का उद्गम इसी उपमहाद्धीप में मूल रूप से हुआ, न कि यह तथा कथित आर्यो कि घुसपैठ का परिणाम था; जैसा कि अब तक कुछ इतिहासकारों ने भ्रम फैलाया था।'' इस तथ्य की पुष्टि आज से हजारों वर्ष पूर्व शतपथ ब्राम्हण में मिलती है। स्वामी विद्यानन्द सरस्वती ' आर्यो का आदिदेश और उनकी सभ्यता' में कहते हैं कि– मानव जाति का प्रादुर्भाव हिमालय–क्षेत्र में ही हुआ है।

हिमालय को आदि मानव का मूल स्थान बनाने के लिये सात कसौटियाँ स्पष्ट की गई हैं–

1. वह स्थान संसार भर में सबसे ऊँचा और पुराना हो।
2. उस स्थान में सर्दी और गर्मी जुड़ती हो।
3. उस स्थान में मनुष्य की प्रारम्भिक खुराक फल एवं अन्य उपलब्ध हो।
4. उस जगह पर अब भी मूल पुरूषों के रंग–रूप के मनुष्य बसते हों।
5. उस स्थान के आस–पास ही सब रूप–रंगों के विकास और विस्तार की परिस्थितियाँ हों ।
6. उस स्थान का नाम सभी मनुष्य जातियों को स्मरण हों।
7. वह स्थान उच्चकोटि के देशी और विदेशी विद्धानों के अनुमान के बहुत विरूद्ध न हो ।

उपयुक्त सात कसौटियों में से पाँच वैज्ञानिक तथ्य हैं, जो उस स्थान के लक्षण हैं और दो ऐतिहासिक तथ्य हैं; जो उक्त पाँचों को पुष्ट करते हैं। इतिहासकारों के अनुसार ये समस्त लक्षण एवं प्रमाण हिमालय पर ही घटते हैं। अत: हिमालय ही मानव का मूल स्थान है। वैज्ञानिक मानने लगे हैं कि यह वही स्थान हो सकता है, जहां पर मानव जीन का सम्पूर्ण विकास हुआ हो; क्योंकि जेनेटिक अनुसंधान के लिये जिन परिस्थितियों की आवश्यकता पड़ती है, वे सारे तत्व हिमालय के भू–भाग में विद्यमान मिलते हैं। अत: हिमालय को आदिमानव का आँचल माना जाता है।

हिमालय रूपी उस आदिस्थल पर जो आर्य हुये, उनमें सभी रंग–रूपों का मिश्रण पाया जाता है। विश्व में चार मुख्य जातियां पायी जाती हैं –

1. श्वेत– इन्हें काकेशस कहतें हैं। ये लम्बे होते हैं ।
2. पीले– मंगोलियन। ये लम्बे एवं चपटी नाक वाले होते हैं ।
3. काले– काला रंग, मोटी आकृति–नीग्रो ।
4. लाल– ये रेड इण्डियन हैं और अमेरिका में पाये जातें हैं ।

इन चारों के अलावा एक पाँचवी जाति है, जो भारतीयों की है। इस जाति में उपयुक्त चारों जातियों का मिश्रण है। ये सभी विशेषतायें भारतीयों में स्पष्ट

* अतिथि विद्धान, शा. महाविद्यालय कोतमा, अनूपपुर (म.प्र.) भारत ** अतिथि विद्धान, शा. महाविद्यालय भैंसादेही, बैतूल (म.प्र.) भारत

रूप से विद्यमान हैं। एशियावाद के समर्थक जान वैषम भी 'इण्डिया ह्वाट इट कैन टीच अस' में कहतें हैं कि– ''आर्यावर्त (हिमालय) ही मानव की मूल जाति का उत्पत्ति स्थान है और आर्य ही आदिमानव हैं।''

इसका सर्मथन मैकडोनाल्ड, नृतत्व विज्ञानी नैसफील्ड आदि ने भी किया है। अपने जीवन के अंतिम दिनों में मैक्समूलर ने यह स्वीकार किया था कि– '' आर्यो का मूल निवास स्थल एशिया में सम्भवत: भारत में हो सकता है।'' हेनरी मार्टीन ने आर्य शब्द को देश के रूप में प्रयुक्त किया। उसने इसका उल्लेख 'मनुस्मृति' में पाया जहां इसका प्रयोग हिमालय से विन्ध्य के बीच के प्रदेश के लिये किया गया था।

'आर्केलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया' के सेवा निवृत्त निर्देशक बी.के. थापर का मत है कि– ''पुरातत्व शास्त्र के आधार पर आर्य बाहर से भारत में आये यह कहा नहीं जा सकता।'' यूनेस्को ने 1997 में तजाकिस्तान की राजधानी दुशांबे में '' ईसा पूर्व एक सहस्त्र वर्ष में जातियों का संचार'' विषय पर एक अंर्तराष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई जिसमें विभिन्न देशों के 90 विद्धानों ने भाग लिया। भारत सरकार ने बी.बी. लाल के नेतृत्व में सात सदस्यों वाली एक टीम भेजी थी। वहां इन विद्धानों ने आर्यो के बाहर से आने संबंधी सिद्धान्त का खण्डन किया।

पौराणिक एवं पुरातातविक साक्ष्यों के आधार पर तो यह पता चलता है कि हिमालय आदिमानव का उद्भव स्थल है। 'अमरकोष' में आर्य शब्द का अर्थ– उच्च परिवार का, योग्य व्यक्ति, सद्गुण युक्त, सदाशयता से युक्त के रूप में मिलता है। 'योगवशिष्ट' के निर्वाण में आर्य अर्थात– जो अपना कर्तव्य समुचित ढ़ंग से करता है, अकर्त्तव्य कार्य नहीं करता, जो पापों से दूर रहे वही आर्य है। 'महाभारत' के उद्योग पर्व में– बैररहित, अहंकार शून्य, सम, दानी, पवित्र मनुष्य को 'आर्य कहता है।

महर्षि बाल्मीकी– 'रामायण' के बालकान्ड में श्रीराम को आर्य अभिहित कहते हैं एवं आर्य वह है जो सबको समदृष्टि से देखता है तथा चन्द्र के समान सबको प्रिय हो। जब कैकयी ने राम को वन भेजने का आग्रह किया तब महाराज दशरथ एवं महर्षि बाल्मीकी ने उसे अनार्य कहा। 'महात्मा बुद्ध'– ने 'धम्मपाद' में आर्य शब्द का प्रयोग सज्जन व्यक्ति के लिये किया है।

विश्व प्रसिद्ध इतिहासविद् डॉ. वि.श्री. वाकणकर– 'आर्य समस्या का समाधान' में लिखते हैं कि– ''वैदिक साहित्य में भारत के बाहर के भूगोल का वर्णन नहीं है तथा न ही आर्यो का ग्रह स्थान भारत के बाहर मध्य एशिया था, ऐसा कहीं उल्लेख है।'' 'मनुस्मृति' के द्वितीय अध्याय के 21 व 22 वें श्लोक में वर्णन आता है कि– ''हिमालय व विन्ध्याचल के बीच, विनशन (कुरूक्षेत्र) के पूर्व और प्रयाग के पश्चिम का देश 'मध्यदेश' कहा गया है। पूर्व समुद्र तथा पश्चिम समुद्र और इन्हीं दोनों पर्वतों (अर्थात् हिमालय व विन्ध्याचल) के स्थित देश को पण्डित लोग 'आर्यावर्त' देश कहते हैं।''

आधुनिक काल के वैज्ञानिक मान रहें हैं कि विश्व के सभी प्रकार के मनुष्यों कि विभिन्न आनुवांशिक संरचना को मूल रूप भारतीयों के जीन में पाया जाता है। वैज्ञानिक उत्साहित हैं कि यह भूमि आनुवांशिक विविधता का उद्गम स्थल है।

नृतत्व वैज्ञानिकों के अनुसार मानव आनुवांशिक कोड या जीनोम सभी लोगों में 99.9 प्रतिशत एक समान होता है इससे स्पष्ट होता है कि हम सभी मनु एवं शतरूपा के वंशज हैं। एवं भारतवर्ष ही आर्यवर्त है। हमारी रगों में हमारे पूर्वज आर्यो का लहू बह रहा है, हमारी नस–नाड़ियों में उन्हीं के विचार एवं संवेग प्रभावित हो रहें हैं। दीर्घावधि के बावजूद हमारे गुणसूत्र में मौजूद जीन की प्रकृति वही है। रामायण में सीता श्री राम को ''आर्यपुत्र'' के नाम से संबोधित करती हैं, और रावण पत्नी मन्दोदरी भी अपने पति को ''आर्यपुत्र'' ही कहती हैं। महाभारत में भी गंधारी धृतराष्ट्र को आर्यपुत्र से संबोधित करती है। क्योंकि यह शब्द गुण बोधक, श्रेष्ठता बोधक है। रामायण के लंका काण्ड में युद्ध के प्रथम दिवस श्रीराम रावण को परास्त करने के पश्चात् कहते हैं कि– ''लंकेश जाओ, कल पुन: तैयारी करके आना; हमारे यहां युद्ध का भी धर्म होता है। थके हुये, भागते हुये, शस्त्र विहीन शत्रु पर हम वार नही करते हैं।'' विश्व ने इसी उदात्ता (श्रेष्ठ) भाव के कारण भारतवर्ष (आर्यावर्त) को जगत गुरू के नाम से पुकारा। हम आर्य संतानों को अपने पूर्वज आर्यो की गरिमा के अनुरूप चिन्तन चरित्र एवं व्यवहार बनाये रखना चाहिये।

संदर्भ

- श्रीराम साठे–'आर्य कौन थे' पृष्ट 26–69, अ.भा.इ.सं.योजना, नई दिल्ली 2010।
- स्वामी विद्यानन्द सरस्वती–'आर्यो का आदिदेश और उनकी सभ्यता' पृष्ट– 192,193, दयानन्द मठ, पंजाब।
- नारायण रामचन्द्र भावे–'मैं हिन्दू क्यों हूँ' पृष्ट 11, प्रकाशक–विश्व संवाद केन्द्र महाकौशल, जबलपुर, 2006।
- प्रो. सतीशचन्द्र मित्तल–'भारत एक पुरातन सांस्कृतिक राष्ट्र' (व्याख्यान)–पृष्ट– 11,12 प्रकाशन– अ.भा.इ.सं. योजना, ग्वालियर, 2012।
- महाभारत–'उद्योगपर्व'–33/117/8।
- महर्षि बाल्मीक–'रामायण'–बालकान्ड 1/16।
- वही आयोध्या काण्ड– 13–15–19।
- योगवाशिष्ट–निर्वाण– 54,126।
- अमरकोष–2,7,3।
- शतपथ ब्राम्हण– 12/6/317।
- अखण्ड ज्योति–पत्रिका, जनवरी 2010, पृ. 11–13, संपादक–डॉ. प्रणब पंडया, मथुरा उ.प्र.।
- इंडिण्या टुडे–पत्रिका, 23 सितम्बर 2009, पृ. 13, प्रकाशन के.9, कनॉट सर्कस, नई दिल्ली।

****

ग्वालियर का तोमर राजवंश

डॉ. शुक्ला ओझा *

किसी भी राष्ट्र का इतिहास उसकी विविध छोटी – छोटी इकाईयों के इतिहास का सम्मिलन होता है। यही कारण है कि इतिहास लेखन में क्षेत्रीय इतिहास के अध्ययन का महत्व निरंतर बढ़ता ही जा रहा है। यही नहीं, क्षेत्रीय इतिहास के साथ ही किन्हीं विशेष कालों में उस क्षेत्र के जनजीवन अथवा इतिहास को अत्यधिक प्रभावित करने वाले व्यक्तियों और कुलों के भी विवरणों का शोध एवं अध्ययन अत्यावश्यक हो गया है। इसी दृष्टिकोण से ग्वालियर के तोमर राजवंश का विश्लेषण विशेषोपयोगी मान्य है। भारत वर्ष के मध्य क्षेत्र में अवस्थित होने के कारण ग्वालियर का भारतीय इतिहास में सदैव महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पुरालेखों में इसका उल्लेख गोप पर्वत, गोपाचल दुर्ग, गोपगिरि अथवा गोपाद्रि के नाम से हुआ है। उत्तर भारत से दक्षिण भारत जाने वाले मार्ग पर स्थित ग्वालियर क्षेत्र के राजनैतिक और सांस्कृतिक गौरव को स्थापित करने में ग्वालियर के तोमर राजवंश की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। प्रत्येक राष्ट्र के इतिहास में योद्धा जातियों की अत्यंत विशिष्ट भूमिका रहती है। भारतीय इतिहास में योद्धा जातियों की जगमगाती परम्परा है और इनमें से प्रत्येक जाति की अपनी अलग गौरवशाली परम्परा है। राजपूत, मराठा, डोगरा, सिख, गूजर और गोरखा भारत भूमि और भारतीय इतिहास की प्रमुख योद्धा जातियाँ है। इन्हीं राजपूतों की एक शाखा तोमर राजवंश ने ग्वालियर राज्य पर गौरवशाली शासन की स्थापना की। कृष्णन वसु के अनुसार सन् 1398 ई. में तैमूर के आक्रमण के उपरान्त ग्वालियर का किला तोमर राजपूतों के हाथ में आ गया था। जिस पर 1518 ई. तक उनका अधिकार स्थापित रहा। इस विशाल तोमर राज्य की सीमा में वर्तमान गिर्द, मुरैना, श्योपुर, नरवर जिलों के भाग थे। भारतीय इतिहास में तोमर वंशीय क्षत्रियों का सुनिश्चित उत्थान ईसा की दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुआ था। तोमर वंशीय क्षत्रिय दिल्ली को ही अपना मूल स्थान मानते है। ग्वालियर का तोमर राजवंश ग्वालियर पर अधिकार करने के पूर्व ऐसाह पर शासन कर रहा था। तोमरों के दिल्ली राज्य का अन्त होने के लगभग दो शताब्दी पश्चात तोमरों ने ग्वालियर में स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। ग्वालियर में तोमर राजवंश के स्वाधीन राज्य की स्थापना करने का श्रेय वीर सिंह देव तोमर को प्राप्त है। मार्च 1394 ई. में वीर सिंह देव तोमर ने गोपाचल गढ़ पर आधिपत्य कर ग्वालियर के तोमर राजवंश की नींव डाली और जून 1394 ई. में दिल्ली के सुल्तान नासिरूद्दीन मुहम्मद को पराजित करने के पश्चात वे गोपाचल गढ़ के प्रथम स्वतंत्र तोमर राजा बने। रइधू ग्रन्थावली में ग्वालियर के तोमर शासकों की वंशावली एवं शासकों के राज्यकाल का स्पष्ट विवरण प्राप्त होता है। इसके अनुसार इस क्षेत्र के प्रथम तोमर शासक वीर सिंह देव तोमर का राज्यकाल विक्रम संवत 1432 – 57 (सन् 1375 से 1400 ई.) तक है तथा अंतिम शासक विक्रमादित्य का राज्यकाल विक्रम संवत 1573 (सन् 1516 ई.) में समाप्त हो गया था। ग्वालियर के तोमर राजवंश की वंशावली में वीर सिंह देव, उद्धरणदेव, विक्रम देव, गणपति देव, डूंगरेद्र सिंह, कीर्ति सिंह, कल्याणमल्ल, मानसिंह एवं विक्रमादित्य इत्यादि के नाम सम्मिलित है। तोमर शासन के अन्नतर ग्वालियर के तोमर शासकों ने अपनी सैनिक प्रतिभा एवं राजनैतिक चातुर्य के बल पर अनेक सैनिक एवं राजनैतिक सफलताएं अर्जित कर ग्वालियर राज्य के महत्व को प्रतिस्थापित किया। इसके साथ – साथ ग्वालियर क्षेत्र के सांस्कृतिक विकास में भी तोमर राजवंश की सराहनीय भूमिका रही। इस राजवंश के प्रथम शासक वीर सिंह देव तोमर ने जहां ग्वालियर गढ़ पर स्वतंत्र तोमर सत्ता की स्थापना की वहीं दूसरी ओर '' दुर्गाभक्ति तरंगिणी '' जैसे ग्रन्थ की भी रचना की। अगले शासक उद्धरणदेव द्वारा तुर्को को परास्त करने के कारण ही विक्रम संवत 1458 (सन् 1401) के शिलालेख में उसे '' उद्धरणो महीम '' कहा गया है। उद्धरणदेव का उत्तराधिकारी वीरमदेव इस वंश का प्रतापी शासक था। दिल्ली सुल्तान नासिरूद्दीन महमूद शाह तुगलक एवं खिज़खां के काल में ग्वालियर के वीरमदेव ने उनके विरूद्ध दीर्धकालीन संघर्ष किया एवं ग्वालियर दुर्ग पर दिल्ली का आधिपत्य नहीं होने दिया। गणपति देव के काल में शान्ति बनी रही। तोमर राजवंश का अगला प्रतापी शासक डूंगरेन्द्र सिंह तोमर हुआ, जिसने मेवाड़ के राणा कुम्भा का सहयोग कर तुर्कों के विरूद्ध राजपूत संगठन की चुनौती को प्रस्तुत किया। उसने दिल्ली सुल्तान मुबारक शाह द्वारा भेजे गये मलिक कमालुलमुल्क के 1432 के आक्रमण को प्रभावहीन कर दिया। इसीप्रकार इस काल में भाण्डेर, नरवर युद्धो की सफलता ने इस वंश की प्रतिष्ठा को और भी बढ़ा दिया तथा मालवा शासक महमूद खिलजी को परास्त किया। ग्वालियर के तोमरों के पास कोहिनूर हीरा था जो उन्होंने मालवा के खिलजियों से छीना था। डूंगरेन्द्र सिंह ने कश्मीर के महान शासक जैनुल आबेदीन के साथ भी मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करते हुए उसे संगीत के ग्रंथ '' संगीत चूणामणि '' , '' संगीत शिरोमणी '' एवं प्रगेय गीतों का एक संग्रह भेंट के रूप में दिया। ये ग्रंथ उस काल के संगीत के विकास की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं। डूंगरेन्द्र सिंह का पुत्र कीर्ति सिंह तोमर भी योग्य शासक था। दिल्ली, जौनपुर शासकों के प्रति अपनी नीति में समयानुसार परिवर्तन कर कभी मित्रता एवं कभी शत्रुता की नीति अपना कर ग्वालियर राज्य की रक्षा करने में समर्थ रहा। उसने दिल्ली सुल्तान बहलोल लोदी के विरूद्ध जौनपुर के हुसैन शाह शर्की की सहायता करने का भी दुस्साहस किया। अगले तोमर शासक कल्याणवल के काल में कोई विशिष्ट परिवर्तन कारी धटना का विवरण प्राप्त नहीं होता है। यह काल शांति व सुव्यवस्था का काल था। कल्याणमल्ल के उत्तराधिकारी मानसिंह तोमर ने सन् 1486 से 1516 तक शासन किया एवं ग्वालियर के तोमर राजवंश की शांति व गौरव को चर्मोत्कर्ष तक पहुंचाया। मानसिंह तोमर का शासनकाल तोमर शासन का स्वर्णयुग था। मानसिंह का दिल्ली के लोदी सुल्तानों से संघर्ष चलता रहा। मानसिंह ने सन् 1491 में सुल्तान बहलोल लोदी से मित्रता कर उसके आक्रमण से ग्वालियर को बचाये रखा किन्तु सिकन्दर लोदी के विद्रोही को शरण देने के कारण दोनों पक्षों के मध्य तनाव प्रारंभ हो गया, किन्तु मानसिंह के संधि प्रस्ताव से पुन: युद्ध टल गया। 1505 में सुल्तान के अभियान को भी विफल कर दिया तथा सिकन्दर लोदी ग्वालियर विजय नहीं कर सका। इब्राहीम लोदी ने सन् 1516 में ग्वालियर पर आक्रमण किया किन्तु उसी समय मानसिंह की मृत्यु हो जाने से युद्ध का संचालन उसके पुत्र विक्रमादित्य ने किया किन्तु उसे लम्बे संघर्ष के बाद आत्म समर्पण कर दिल्ली की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी एवं उसे ग्वालियर के बदले शम्साबाद की जागीर देकर राजा बना दिया गया। मानसिंह तोमर जहां ग्वालियर की रक्षा करने में सफल रहा वहीं ग्वालियर के सांस्कृतिक वैभव की दृष्टिकोण से उसका काल अत्यंत महत्व का काल है। इसी समय में मान कुतुहल '' की रचना की गयी, स्चयं मानसिंह द्वारा संगीत की ध्रुपद शैली का आविष्कार किया गया। ग्वालियर दुर्ग पर मान मन्दिर, गूजरी महल जैसे उत्कृष्ट स्थापत्य नमूनों का निर्माण करवाया गया। सम्पूर्ण तोमर काल में ग्वालियर में सांस्कृतिक व साहित्यिक विकास की भी धारा निरन्तर प्रवाहित होती रही। इसप्रकार सैनिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विकास का अद्भुत संगम ग्वालियर के तोमर राजवंश के शासन काल में दर्शनीय है।

सन्दर्भ सूची

01. डॉ. रघुवीर सिंह – प्राक्कथन – ग्वालियर के तोमर – 03
02. लुआर्ड सी.ई. – ग्वालियर गजेटियर – भाग एक – पृष्ठ 01
03. अग्निहोत्री अजय – जाटों का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पृष्ठ 9
04. कृष्णन वसु. – मध्यप्रदेश गजेटियर जिला ग्वालियर पृष्ठ क्र 26
05. द्विवेदी, हरिहर निवास – ग्वालियर राज्य के अभिलेख पृष्ठ क्र 44
06. द्विवेदी हरिहर निवास – ग्वालियर के तोमर – 30
07. जैन, राजाराम (सम्पादक) रइधू ग्रंथावली पृष्ठ क्र 79
08. शर्मा, राजकुमार – मध्यप्रदेश के पुरातत्व का सन्दर्भ ग्रन्थ पृष्ठ क्र 716
09. डॉ. रिजवी – बाबर – 161
10. जैन, परमानंद – जैन ग्रन्थ प्रशस्ति संग्रह – 101
11. कर्निधम, मेजर जनरल – ए. आर्कोलोजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट (भाग 2) पृष्ठ क्र – 382।

* प्राध्यापक इतिहास, डॉ भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

राष्ट्र निर्माण में अम्बेडकरवाद की भूमिका

डॉ. हेमलता आचार्य *

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का दर्शन महात्मा गौतम बुद्ध, संत कबीर एवं युगद्दष्ट्रा महात्मा जोतिबा फूले तथा कार्ल मार्क्स से अनुप्राणित है। 1950 से पहले समाज में जिन कानूनों का पालन होता था वे मनुस्मृति द्वारा भारतीय समाज में लागू किये गए थे। इसमें दो राय नहीं कि मनु ने भारतीय समाज के विकास का मार्ग अवरूद्ध किया। वर्ण व्यवस्था की जटीलता, छुआछूत, स्त्रियों के अधिकारों का हनन, संक्षेप में ये कुछ ऐसे बिन्दू हैं जिससे कोई भी बुद्धिजीवी असहमत नहीं हो सकता।

अन्याय और शोषण पर आधारित सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था इस देश में व्याप्त थी। डॉ. अम्बेडकर ने उस सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था में संवैधानिक परिवर्तन किये। समाज में सड़ी गली व्यवस्थाओं को उखाड़ फेंकना आसान काम नहीं होता। उस समय भारतवर्ष में **Previleged & Non Previleged Class** की ही स्थिति दृष्टिगोचर होती है। नि:सन्देह तात्कालिक परिस्थितियों में डॉ. भीमराव अम्बेडकर अपने समय के प्रतिष्ठित लोगों में सर्वाधिक सुशिक्षित, योग्यतम व सुलझे हुए व्यक्ति थे।[1] अस्पृष्यता का विष वृक्ष जिसने मानवता को शैतानी आवरण में लपेट रखा था, डॉ. अम्बेडकर ने उसे जड़ से उखाड़ने का संकल्प लिया और आगे चलकर सम्पूर्ण मानव जाति को एकाकार करने का विधिक एवं सफलतम प्रयास किया।[2] उन्होंने भारतीय समाज की कुरीतियों व अन्याय को खत्म करने हेतु अनेक दलित आन्दोलन किये। किन्तु समाज की मानसिकता व व्यवस्था में आंशिक परिवर्तन भी न आया तब उन्होंने दलितों का एक अलग संगठन बनाया और दलितों के लिए मानवाधिकारों की प्राप्ति हेतु पुरजोर प्रयास किये।[3] जिससे एक नवीन सामाजिक व्यवस्था स्थापित की जा सके।

'बहिष्कृत हितकारिणी' नामक संस्था को 20 जुलाई 1924 को उन्होंने जन्म दिया और इसके उद्देश्य निर्धारित किये थे–

1. दलित वर्गों में शिक्षा का प्रचार प्रसार कर छात्रावासों की स्थापना करना।
2. दलित वर्गों में वाचनालय, समाज केन्द्र और विद्या केन्द्र स्थापित करना।
3. औद्योगिक तथा कृषि विद्यालयों की स्थापना कर दलित वर्ग की आर्थिक स्थिति को सुधारना।
4. दलित वर्गों की विभिन्न कठिनाइयों को प्रतिनिधित्व देना एवं उनका निवारण करना। उन्होंने ''बहिष्कृत भारत'' नामक मराठी पाक्षिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया।
5. जात-पात तोड़क मण्डल वाला दर्शन राष्ट्र निर्माण की दिशा में मील का पत्थर हैं 1935 में लाहौर के अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने ''एनहि लेशन ऑफ कास्ट'' को जनता के समक्ष रखा, जिसका अनुवाद उन्होंने जातिवाद उच्छेदन के रूप में किया।

डॉ. अम्बेडकर का दर्शन इस प्रकार था कि चतु:वर्ण व्यवस्था में शूद्र, समाज से बहिष्कृत हैं और उन्हें मान सम्मान प्राप्त नहीं है। उनके साथ पशुवत व्यवहार किया जाता है। हम जानते हैं कि मध्यकाल में बड़ी संख्या में निम्न जातियों द्वारा मुस्लिम धर्म इसी कारण स्वीकार किया गया। एक यह बिन्दु विचारणीय है और दूसरा बिन्दु अम्बेडकर के दर्शन के अनुसार कि ''शूद्र या अस्पृष्य, समाज से बाहर समझे जाते हैं।''

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था–''किसी प्रजातंत्रात्मक या समाजवादी दृष्टिकोण से जातिवाद अभिशाप तथा आपत्तिजनक है। मानवीय दृष्टिकोण से भी यह पूर्ण रूप से अवांच्छनीय है।''

6. डॉ. कैलाशनाथ शर्मा के अनुसार ''जातिवाद या जाति भक्ति एक जाति के व्यक्तियों की वह भावना है जो देश या समाज के सामान्य हितों का ख्याल न रखते हुए केवल अपनी जाति के सदस्यों के उत्थान, जातीय एकता और जाति की सामाजिक प्रस्थिति को सुदृढ़ करने के लिए प्रेरित करती हो।''
7. दो विभिन्न महापुरूषों के उक्त कथन से सुस्पष्ट है कि जातिवादी व्यवस्था भारत के विकास का मार्ग अवरूद्ध करती है इसके दुष्परिणामों से हम बहुत अच्छी तरह परिचित हैं।

डॉ. रामधारी सिंह दिनकर ने इसकी व्याख्या संस्कृति के चार अध्याय में बहुत ही सुन्दर ढंग से की है और उन्होंने बताया कि मध्यकाल में हमारा देश मात्र कोई डेढ़ दो सौ वर्षों में ही पराजित हो गया और सारे देश पर मुस्लिम सत्ता कायम हो गई।[7] उसका एकमात्र कारण समाज की चतु:वर्ण व्यवस्था और उसमें भी शूद्रों की अवहेलना वाली परिपाटी जिसका खामियाजा हमें बहुत अधिक भरना पड़ा।

कट्टरता किसी भी स्तर पर उचित नहीं है। कुछ मुट्ठीभर लोग धनवान होकर विचारें कि देश धनवान हो गया है तो इसका मापदण्ड विदेशों में भी है और जब दूसरे देश हमारे देश की नीचली बस्तियों, उनके जीवन स्तर को दिखाएं तो सच्चाई स्वीकार करना पड़ेगा। उससे मुँह फेरने के बजाए उस जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का भरसक प्रयास करना पड़ेगा। हमें इस सन्दर्भ में जातिवाद के विरूद्ध धर्मान्तरण दृष्टिगोचर होता है।

आज भी इसाई मिशनरीज की भूमिका यदा कदा उभर कर आती है, जो एक विचारणीय प्रश्न है। डॉ. अम्बेडकर ने एक प्रकार से हमें राष्ट्रवासियों को सावधान किया है। अत: समय रहते इस सामाजिक समस्या का समाधान राष्ट्र निर्माण में अति अनिवार्य है।

बहुसंख्यक वर्ग का राष्ट्र निर्माण में प्रत्येक स्तर पर सहयोग लेना अनिवार्य है जिसका उत्तरदायित्व हम सभी का है अन्यथा विश्वशक्ति जैसा दिवास्वप्न केवल अकेले स्वयं ही देखकर खुश होते रहेंगे।

डॉ. अम्बेडकर के दर्शन के अनुसार–

''पूँजीवादी संसदीय प्रजातंत्रीय व्यवस्था में दो ही बातें होती हैं जो काम करते हैं उन्हें गरीबी व अभावों में रहना पड़ता है और जो काम नहीं करते उनके पास अकूत पूँजी जमा हो जाती है . . . . . जब तक मजदूरों को रोटी, कपड़ा, मकान, निरोग जीवन नहीं मिलता . . . . . स्वाधीनता कोई मायने नहीं रखती।''[8] वर्तमान में भूमण्डलीकरण एवं निजीकरण के अन्तर्गत कमजोर वर्ग निम्न व्यवसाय या निम्न नौकरियों की तरफ ही जा रहा है जो राष्ट्र के लिए अच्छा संकेत नहीं।

कार्ल मार्क्स ने भौतिक सिद्धान्त की जो ऐतिहासिक व्याख्या की वही

* विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

दर्शन हमें डॉ. अम्बेडकर का भी दृष्टिगोचर होता है। मार्क्स ने पूँजीवाद के विरूद्ध समाजवाद की स्थापना पर जोर दिया। अंग्रेजों ने उस काल में अपने साम्राज्य में पूँजीवाद के कारण ही पुरजोर प्रयास किया कि मार्क्स की विचारधारा भारत में प्रवेश न कर पाए अन्यथा उनके साम्राज्य का विनाश हो जाएगा। अंग्रेजी दासता से आजादी तो हमें मिल ही गई किन्तु 1991 में उदारीकरण की नीति को अपनाकर हमने स्वयं ही दूसरी बार साम्राज्यवाद को आमंत्रण दे दिया है। जिसके मायाजाल में हम फँसते ही जा रहे हैं।

संभ्रांत लेखकों का एक पक्षीय दृष्टिकोण राष्ट्र निर्माण की दिशा में बाधक तत्व है। लेखिका डॉ. उर्मिला चतुर्वेदी की पुस्तक भारतीय चिंतन की दिशाएं का शीर्षक पढ़कर एक उत्सुकता जागती है।

जब भारतीय चिंतन की बात करते है या राष्ट्र निर्माण की तब हमारे आधुनिक कालीन महापुरूषों में डॉ. भीमराव अम्बेडकर का नाम संवैधानिक विकास के संदर्भ में सर्वप्रथम आता है किन्तु लेखिका ने उच्च वर्ग से संबद्ध सारे ही महापुरूषों का सिलसिलेवार चिंतन प्रस्तुत किया है किन्तु डॉ. अम्बेडकर का नाम कहीं नहीं है।[9] इसी प्रकार लेखक विश्व प्रकाश गुप्त व मोहिनी गुप्ता ने अपवनी पुस्तक 'भारत में सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन' में बहुत ही अच्छी जानकारियां प्रस्तुत की है किन्तु पुस्तक में डॉ. भीमराव अम्बेडकर का कहीं भी जिक्र तक नहीं।[10] भारत में ऐसी सैकड़ों पुस्तकें मिल जाएंगी कोई नई बात नहीं। नित नई पुस्तकें प्रकाशित हो रही है और आज हम यहाँ बैठकर अम्बेडकरवाद की उपयोगिता पर चर्चारत हैं।

प्रश्न है कि क्या आज भारत जातिविहिन है? या भारतीय संभ्रांत वर्ग आज इस बात के लिए तैयार है कि वे अपनी ही मिट्टी में जन्मे अपने कमजोर, अभावग्रस्त, दबे कुचले भाईयों को अपनाकर प्रगति और मानवता का मार्ग प्रशस्त करें। हमारा राष्ट्र पूरी तरह राष्ट्र की परिभाषा में आने पर ही राष्ट्र निर्माण का मार्ग प्रशस्त होगा क्योंकि राष्ट्र के लिए एक बहुत बड़ा तत्व अनिवार्य है और वह है एक ही भूखण्ड पर जन्मे मानव समुदाय के बीच रक्त संबंध के साथ-साथ अपनापन या बंधुत्व।

हमारा संविधान हमारे सम्पूर्ण भारतीय दर्शन की आत्मा है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर जैसे द्रष्ट्रा के दर्शन और उनके नाम का अपनी पुस्तकों में जिक्र तक न करना संकीर्ण मनावृत्ति को तो दर्शाता ही है, साथ ही मानवता से विमुख और दिशाविहिन होकर दौड़ लगाने जैसा साबित होता है। सर्वप्रथम हम बुद्धिजीवियों का कर्तव्य है कि हम अपनी ही मानसिकता का परिमार्जन कर लें तो राष्ट्र निर्माण का 80% तक कार्य पूर्ण कर लेंगे।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के दर्शन का आधार, भारत के संत एवं महापुरूष एवं उनका दर्शन

अम्बेडकरवाद के प्रभाव – कमजोर वर्ग के प्रयासरत मानव समुदाय का उत्थान हुआ है किन्तु अभी भी समाज का एक बड़ा भाग आर्थिक सामाजिक समस्याओं से जूझ रहा है। राष्ट्र में सचेत प्रयत्न सामुहिक उन्नति का दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है। वर्तमान आध्यात्मिक व भौतिकवादी विचारधारा उच्च वर्ग या संभ्रांत वर्ग का वर्चस्व विभिन्न योजनाओं द्वारा आर्थिक विकास किन्तु उदारीकरण व निजीकरण से राष्ट्रपुन: साम्राज्यवाद या पूंजीवाद के शिकंजे में जा रहा है।

पुन: ईश्वरोपासना के स्थान पर व्यक्तिपूजा व शास्त्र पूजा लिंग, जाति, भाषा, सम्प्रदाय के आधार पर भेद असंवैधानिक लोकतंत्र जनता का जनता के लिए जनता द्वारा कट्टरता जटीलता से सहजता स्वाभाविकता की ओर मार्ग प्रशस्त डॉ. अम्बेडकर द्वारा किया गया परिवर्तन समतावादी सामाजिक व्यवस्था समता, सौहार्द समन्वयवादी समाज सहज, सामान्य स्वाभाविक धर्म एवं समता महात्मा गौतम बुद्ध सन्त कबीर महात्मा जोतिबा फूले शोध पत्र की विशेषताएँ –

1. डॉ. भीमराव अम्बेडकर के दर्शन का आधार
2. गौतम बुद्ध, कबीर, जोतिबा फूले को उन्होंने अपना गुरु माना और कहा मैं कार्ल मार्क्स को छोड़ सकता हूँ पर मेरे तीनों गुरु को नहीं।
3. भारतीय संविधान में भारतीय संस्कृति को विशेष महत्व प्रदान किया गया है।
4. समय के अन्तराल से जो अच्छाईयाँ भारतीय मानस पटल से हट गई थी डॉ. अम्बेडकर ने उसे पुन: स्थापित किया। जैसे महाजनपद काल की जनतंत्रीय व्यवस्था। देश में प्रजातंत्रीय व्यवस्था का विधान किया।
5. कमजोर वर्ग की तरफ ध्यान न दिया गया तो उसे अशिक्षा व आर्थिक अभाव के कारण दिग्भ्रमित हो जायेगा। अत: सचेत प्रयास करना उत्तम होगा।
6. भूमण्डलीकरण में अत्यधिक सावधानी से आगे बढ़ना होगा।
7. संकीर्ण मनोवृत्ति से साहित्य की रचना पर प्रतिबंध होना चाहिए क्योंकि साहित्य समाज का दर्पण है। उससे सकारात्मक प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाया जा सकता है।
8. राष्ट्र तब ही बन पायेगा जब आपसी समन्वय व सौहार्द स्थापित हो जायेगा। सामूहिक प्रगति सबके लिए अनिवार्य है। हमें जातिपाति, ऊँच नीच या मनुवाद से ऊपर उठकर विचार करना पड़ेगा और देखना वांच्छनीय होगा कि गलती कहाँ, कितनी हुई और उसे कैसे कम से कम समय में सुधारा जाए। हम अम्बेडकर दर्शन को सदैव याद रखें अन्यथा शोषक व शोषित दो वर्गों के बीच अनवरत संघर्ष सामाजिक, राष्ट्रीय और विश्वस्तर पर यथावत रहेगा। शोषक वर्ग खुश हो सकता है किन्तु यह खुशी केवल भ्रम है, मानसिक सुख नहीं क्योंकि मन, वचन या कर्म से चोट पहुँचाना हिंसा है और हम अहिंसा में विश्वास करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ:–

1. डॉ. हेमलता आचार्य-दलित समाज के प्रथम उद्धारक महात्मा जोतिबा गोविन्दराव फूले: एक ऐतिहासिक विश्लेषण। पृष्ठ 308-309
2. वही
3. वही पृष्ठ क्रमांक 309
4. वही
5. जी.आर. मदन- 'विकास का समाजशास्त्र'-विवेक प्रकाशन, दिल्ली -पृष्ठ 378
6. राम आहुजा-सामाजिक समस्याएं-रावत पब्लिकेशन दिल्ली-पृष्ठ 151
7. रामधारीसिंह दिनकर-संस्कृति के चार अध्याय-इलाहाबाद प्रकाशन-पृष्ठ-275
8. डॉ. अम्बेडकर: समाज वैज्ञानिक-रामगोपाल सिंह-म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल-पृष्ठ 80-81
9. डॉ. उर्मिला चतुर्वेदी-भारतीय चिंतन की दिशाएं- कला प्रकाशन वाराणसी प्रकाशक महावीर प्रेस-
10. विश्व प्रकाश गुप्त-मोहिनी गुप्ता-भारत में सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन-राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली

****

उन्नीसवी सदी का भारत और मानवाधिकार

डॉ. हेमलता आचार्य *

उन्नीसवी सदी ही नहीं वरन आज भी यह धारणा बनी हुई है कि ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, उदर से वैश्य और पैर के अंगूठे से शूद्र का जन्म हुआ है जबकि वैज्ञानिक आधार पर यह असत्य है। इसी कारण शूद्र या दलित वर्ग की भारतीय समाज में निम्नतर स्थिति आज भी बनी हुई है। उन्नीसवी सदी में तीनों वर्गों की सेवा के बाद भी उसे नगर या गाँव के बाहर ही निवास करना अनिवार्य था।

नगर में शूद्र केवल रात्रि के समय ही प्रवेश कर सकता था।[1] संकट काल में प्रवेश करने पर उसे अपने गले में मटकी तथा कमर में झाडू बाँधकर ही आना पड़ता था।[2] क्योंकि उसके थूँकने और चलने से नगर की धरती अपवित्र हो जाती थी।[3] शूद्रों की सम्पत्ति पर ब्राह्मणों का पूरा अधिकार था। लगान न भर पाने पर उसे व उसके परिवार को शारीरिक प्रताड़ना दी जाती थी। यहाँ तक कि उसके नाजूक अंगों को काट दिया जाता था।[4] देश के विभिन्न भागों के साथ ही दक्षिण भारत में भी यही दशा दृष्टिगोचर होती है–

"If a Sudra cohibit with a Brahmine adultress his life is to be taken but if a Brahmin goes even unto the Lawful wife of Sudra he is exempted from all carporal punishment" [5]

अलबरूनी ने लिखा है दूसरे गलती से भी शूद्र के कान में मंत्रोच्चार के शब्द पड़ जाए तो उसके कान में सीसा पिघलाकर डाल दिया जाता था। शिक्षा का अधिकार न होना एक बिन्दु है तो दूसरा मंत्रोच्चार पर शूद्र की जीवन लीला ही समाप्त होना दर्शाता है।

उन्नीसवीं सदी तक निम्नवर्ण को शिक्षा का अधिकार प्राप्त ही नहीं था। स्पष्ट है कि शिक्षा जैसा मूल अधिकार ही प्राप्त नहीं था तो वे अपने अधिकारों से परिचित ही कैसे हो सकते थे? भारत में उन्हें केवल कर्तव्य करना था अधिकार न के बराबर प्राप्त थे। जब कभी इस वर्ग ने अपने अधिकार की ओर अन्य वर्गों का ध्यान आकर्षित किया तब ही समाज के संभ्रांत लोगों ने कभी उसे स्वर्ग का दीवास्वप्न दिखा कर तो कभी ''कर्मण्येधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'' एवं ''होहिंहे वही जो राम रचि राखा'' का उपदेश देकर उसके व्यक्तिगत मूल्य को खत्म करने का प्रयास किया।

पूँजी, सत्ता, शिक्षा, धर्म, समाज में शूद्रों को अधिकार प्राप्त न था वे महत्वहीन पशुवत व्यवहार सहने को बाध्य थे।[7]

British Rule in India helped Brahminism to become more a dominant in economic, political and social life of India again suffering from hunger and suppression. The lower classes of society in South were economically handicapped it was virtually slavery that existed and this was continued"[8]

भारत में महिला किसी भी वर्ण की रही हो उसे भी अधिकार विहिन जीवन ही जीना पड़ता था। इस प्रकार भारतीय महिला भी दलित की ही श्रेणी में आ जाती है।[1] हम इतिहास पर दृष्टिपात करें तो पाते है कि सर्वप्रथम महात्मा बुद्ध एवं महावीर स्वामी द्वारा समानता सदाचार, नैतिकता, भाईचारे के द्वारा मानवाधिकारों को स्थापित किया गया।[2] उसके बाद सम्राट अशोक द्वारा मानवतावादी धर्म के द्वारा समाज के सभी सदस्यों का ध्यान रखने की दरकार रही।[3] हर्षवर्द्धन ने भी चाहे अपनी बहिन के लिए ही सही किन्तु, उसने एक स्त्री की विडम्बना को न केवल महसूस किया बल्कि उसे अधिकार भी दिलवाया।[4] सम्राट अकबर ने भी सहिष्णुता नीति या मानव धर्म के सहयोग से मानवाधिकार की स्थापना का सटिक प्रयास किया।[5]

आधुनिक युग में सर्वप्रथम हमारे देश में सभी वर्गों को शिक्षा प्राप्त हो इस दिशा में इसाई मशीनरीज की भूमिका सराहनीय है। भले ही धर्म प्रचार उनका उद्देश्य था किन्तु सम्पूर्ण भारतीय समाज लाभान्वित तो हुआ ही।[6] अंग्रेज गवर्नर जनरल विलियम बैंटिक ने सर्वप्रथम कानूनन भारत में मानवाधिकार को स्थापित किया। 1828–29 में सती प्रथा, बालवध, मानव बलि, आदि को समाप्त किया। डलहौजी के समय 1854 में शिक्षा के द्वार राष्ट्रीय स्तर पर सभी के लिए खोल दिये गए।[7] 1950 में भारतीय संविधान द्वारा मानवाधिकार स्थापित किया गया।

निष्कर्ष रूप में यही कहना चाहती हूँ कि समय–समय पर भारत में प्रयास किये गए एवं भारतीय संविधान के लागू होने के बावजूद हमारे समाज में आज भी अमानवीय जाति व्यवस्था, छुआछूत, पवित्रता–अपवित्रता के नाम पर शारीरिक मानसिक प्रताड़ना विद्यमान है। भारतीय संविधान के होते हुए मनु स्मृति के नियमों को अधिक महत्व दिया जाता है जबकि मनु में मानवाधिकारों का हनन ही किया है।

आज जब हमारा देश विश्व में चहूँ ओर प्रगति कर रहा है तो समाज के इस बहुसंख्यक वर्ग का सदुपयोग किया जाना अनिवार्य है। उक्त वर्ग की निर्धारित प्रतिभागिता को प्रोत्साहित एवं मान्य करना मानवाधिकार की वांछनीय आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ:–

1. महात्मा फुले साहित्य और विचार–संपादक नरके हरि–महात्मा फुले चरित्र साधने प्रकाशन समिति, मंत्रालय मुंबई पृ. 126
2. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के तीन गुरु–महात्मा बुद्ध महात्मा कबीर एवं महात्मा जोतिबा फुले – अनिल नलिनी, शहारे म.लात्र पृ.30
3. दलित समाज के प्रथम उद्धारक महात्मा जोतिराव गोविन्दराव फुले एक ऐतिहासिक विश्लेषण– शोध प्रबंध– डॉ. हेमलता आचार्य
4. महात्मा जोतिबा फुले यांचे सार्वजनिक सत्य धर्म पुस्तक – रमेश रघुवंशी पुणे पृ.44
5. **Slavery- Collected works of Mahatma Jotirao Phule Vol-1-Govindraw oti Raw Phule-Translated Prof. P.G. Patil** 1991
6. दलित समाज के प्रथम उद्धारक जोतिराव गोविन्दराव फुले एक ऐतिहासिक विश्लेषण– शोध प्रबंध– डॉ. हेमलता आचार्य
7. वही
8. **Non Brahmin Movement in Southern India 1973-1949-Kevlekar Kashinath-Shivaji Publication 1979 Page**

* विभागाध्यक्ष (इतिहास विभाग) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर, कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

मण्डलेश्वर नगर स्थित ''ब्रिटिशकालीन अवशेष''

डॉ. मंगला ठाकुर *

मण्डलेश्वर की मानचित्र मे भौगोलिक स्थिति 22°11'' उत्तर तथा 75°40'' पूर्व हैं।[1] मध्यप्रदेश की जीवन दायिनी एवं भारतवर्ष की पूज्य सप्त पवित्र नदियों में से एक पतित पावनी शिवजी की मानसपुत्री, कलयुग की गंगा कही जाने वाली जिसके दर्शन मात्र से पूण्योदय होता हैं, ऐसी मॉ नर्मदा के उत्तर तट पर स्थित यह नगर मण्डलेश्वर, बड़वाह से धामनोद मार्ग पर बड़वाह से 40 किमी की दूरी पर हैं, जो खरगोन जिले की महेश्वर तहसील का एक समृद्धशाली कस्बा हैं। जो अपने अतीत मे आदि शंकराचार्य एवं मण्डनमिश्र के शास्त्रार्थ[2]. का साक्षी एवं मण्डन मिश्र की कर्मस्थली होने से यह कस्बा मण्डलेश्वर नाम से जाना जाता हैं।

इतिहास में यह नगर प्रशासनिक ईकाई का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा हैं। होल्कर शासिका मातोश्री देवी अहिल्या मॉ साहेब की राजधानी महेश्वर होने के बाद भी, मण्डलेश्वर में पर्याप्त सेना एवं अस्त्र-शस्त्र रखा जाता था।[3] 1819 की महिदपुर सन्धि के द्वारा मण्डलेश्वर पर ब्रिटिश आधिपत्य स्थापित हो गया, और इसी केन्द्र को अंग्रेजो ने सम्पूर्ण निमाड़ पर अपना प्रभुत्व और अधिकार बनाने के उद्देश्य से ही अंग्रेजो ने नर्मदा घाटी के सामरिक स्थल पर अपना नियंत्रण कायम किया। इसी श्रृंखला में अकबरपुर में तार-घर की स्थापना खलघाट में नर्मदा नदी पर पुल बनाना इत्यादि शामिल था, जिसमें महू-इन्दौर से सीधे मुम्बई और मुम्बई से सीधे निमाड़-मालवा के विस्तृत क्षेत्रों के सतत सम्पर्क में रह सकें। मण्डलेश्वर नगर में ब्रिटिश मुख्यालय स्थापित होने के साथ ही ब्रिटिश अधिकारियों एवं फौज का यहॉ जमावड़ा हो गया था, निमाड़ पोलिटिकल एजेंट एवं डिप्टी कलेक्टर के पद यहॉ ब्रिटिश अधिकारियों के थे। ईसाई धर्म की प्रार्थना हेतू विशाल चर्च, मिशन अस्पताल, ईसाई बस्ती को बसाया गया था। कई आलीशान बड़े-बड़े बंगले बनवाये गये थे, ताकि अंग्रेजों को यहॉ किसी भी प्रकार की असुविधाएँ न हों। ब्रिटिशकालीन कचहरी एवं प्रवेश द्वार भी शामिल है। इस कचहरी के कुएँ से मण्डलेश्वर नगर की आधी आबादी इस पानी का उपयोग करती थी।

इन आम अवशेषों के अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण स्मारक निम्न हैं-

मण्डलेश्वर दुर्ग - परमार शासको द्वारा निर्मित यह दुर्ग मैदानी किला हैं।[4] जो नगर के पूर्व-दक्षिण दिशा में नर्मदा नदी के तट पर स्थित हैं। अंग्रेजों के पूर्व भी इस दुर्ग का उपयोग विभिन्न वंश के शासकों द्वारा सैनिक छावनी के रूप में किया जाता रहा होगा, क्योंकि एक विशाल अस्तबल के खण्डहर दुर्ग में मौजूद हैं। ब्रिटिश कालीन मण्डलेश्वर में यह दुर्ग अंग्रेजों की सत्ता का प्रमुख केन्द्र बिन्दु रहा था। यही पर निमाड़ का खजाना, दल-बल सैन्य अस्त्र-शस्त्र इत्यादि का भण्डारण था। निमाड़ के क्रांतिकारियों को भी इसी दुर्ग में बन्दी बनाकर रखा जाता था। यह किला निमाड़ में क्रान्ति का अगुआ रहा है। 3 जुलाई 1857, 22 अगस्त 1859, एवं अक्टूबर 1942 इन तीनों अवसरों पर निमाड़ में क्रान्ति का शंखनाद यही से हुआ था। यहॉ ख़जाना लूटा गया, अस्त्र-शस्त्र लूटे गये और उन्हीं के प्रयोग से ब्रिटिश अधिकारियों एवं सैन्य दलों पर प्रहार किया गया। दुर्ग के पीछे पूर्व की ओर बना प्राचीर से लगी हुई खाई में कई बेनाम क्रांतिकारियों एवं निर्दोष लोगों को यातना दे-देकर गिरा दिया जाता था। इस तरह यह दुर्ग ब्रिटिश कालीन हुकूमत की निरंकुशता एवं बर्बरता का सजीव प्रतीक रहा हैं।

फॉसी बयड़ी - मण्डलेश्वर दुर्ग से लगभग 400 मी. पूर्व की ओर नर्मदा किनारे एक टीला हैं, जिसे स्थानीय निमाड़ी भाषा में 'बयड़ी' कहा जाता हैं। यह स्थान क्रांतिकारियों को राजद्रोही करार करते हुए सार्वजनिक रूप से फॉसी देने के काम आता था खुले आम फॉसी देने का उद्देश्य ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ बगावत न करें और अन्य लोगों में इनका भय बना रहें। इसलिए इस स्थान का नाम फॉसी बयड़ी हो गया। यहॉ एक छोटा सा छतरीनुमा स्मारक बना दिया गया।

बेंजामीन होम्स की कब्र - मण्डलेश्वर किले में 22 अगस्त 1869 को पुन: क्रांति की लौ प्रज्वलित हुई क्रांतिकारियों के साथ मुठभेड़ में बंगाल इनफेंटरी बटालियन के केप्टन बेंजामीन होम्स मारे गये। उन्हें क्रांतिकारियों ने गोलियों से भून दिया।[5] बेंजामीन होम्स की कब्र मण्डलेश्वर के उत्तर में मिशन हॉस्पीटल के पीछे चोली रोड़ के समीप आज भी जीर्ण-शीर्ण अवस्था में मौजूद हैं। इस क़ब्र पर उत्कीर्ण शीलालेख हैं- ''केप्टन बेंजामीन होम्स बेंगाल आर्मी डायरेक्टिंग एण्ड एटेकिंग ऑन मिलिटियंस कोर्ट 1819-22.08.1969'' इस कब्र को जनसामान्य में कुत्ता कब्र[6] के नाम से भी जाना जाता हैं। संभवत: घृणा और तिरस्कार के रूप में ऐसा कहा जाता होगा, जो आज तक प्रचलित हैं।

गंगा झीरा स्थित कब्र - नगर के पश्चिमी छोड़ पर नर्मदा तट पर एक पौराणिक स्थल हैं। यहॉ एक कुण्ड, शिव मंदिर तथा वृक्षों के झुरमुट हैं। यही एक ऊँचे टीले पर चार दीवारी से युक्त ''थामस कोलीन - डिप्टी कलेक्टर ऑफ निमाड़'' की कब्र है, जिसमें मृत्यु का वर्ष अस्पष्ट हैं। यही चार दीवारी के बाहर तीन कब्र और हैं जिसमें एक रिचर्ड कीटिंग (पोलीटिकल एजेंट ऑफ निमाड़) की हैं, जिसकी मृत्यु तिथि 15 मार्च 1852 अंकित हैं, शेष दो कब्र बहुत ही क्षतिग्रस्त हैं। कीटिंग बैंगलों - नगर के पश्चिम की ओर नर्मद तट के पास पी.डब्ल्यू.डी. कार्यालय एवं रहवासी कॉलोनी का विशाल प्रांगण है, जहॉ रिचर्ड कीटिंग का बंगला आज भी विद्यमान हैं।

कीटन बाजार - 8 नगर के पूर्व में छप्पन देवमार्ग को आज से तीन-चार दशक पूर्व तक कीटन बाजार के नाम से जाना जाता था। जो कीटिंग का ही अपभ्रंश हैं। अंग्रेज अधिकारी के नाम से बाजार होना ब्रिटिशकाल में प्रचलित था, जो बाद में भी जारी रहा। इस प्रकार ब्रिटिशकालीन अवशेष मण्डलेश्वर नगर में यत्र-तत्र बिखरे पड़े है।, जिसमें से कई महत्वपूर्ण स्मारक नष्ट हो चुके हैं और कुछ नष्ट होने की कगार पर हैं।

सन्दर्भ सूची -

1. पश्चिम निमाड़ स्टेट गजेटियर - पृ. 452।
2. पश्चिम निमाड़ स्टेट गजेटियर - पृ. 451।
3. श्रीवास्तव शोभा- महेश्वर,मण्डलेश्वर का ऐति. एवं सांस्कृतिक अध्ययन - पृ. 104।
4. मिश्रा मोहीनी -नर्मदा घाटी का पुरा. एवं सांस्कृतिक अध्ययन - पृ. 213।
5. पत्र क्रमांक- 16 के अनुसार - 8 अक्टोंबर 1987।
6. जनश्रुति।
7. लोनिवि भवन रिकार्ड पुस्तिका पृ. 04।
8. जनश्रुति।

* प्राध्यापक-इतिहास, शासकीय महाविद्यालय,बड़वाह (म.प्र.) भारत

परिवर्तनशील भूमि उपयोग एवं पर्यावरणीय प्रभाव (सागर जिले के संदर्भ में)

डॉ. अर्चना भार्गव * भावना पटेल **

मानव जीवन की गुणवत्ता पर्यावरण से प्राप्त संसाधनों पर निर्भर है, ये समस्त संसाधन पर्यावरण के अंग हैं। पर्यावरणीय संसाधनों का अधिक दोहन पर्यावरणीय संसाधनों के शोषण की ओर ले जाता है। अधिक गुणवत्ता पूर्ण जीवन ने भूमि, जलवायु पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है, जिसके कारण भूमि क्षरण, उपजाऊपन का अवनयन, वनों का कटाव और तद्जनित जलवायु पर पड़ने वाले प्रभाव ने संभवत: पृथ्वी की समूची वर्षो से स्थापित जलवायु व्यवस्था को असंतुलित किया है, परिणामस्वरूप भू-तापन, ऋतु परिवर्तन, असामयिक वर्षा तथा वैश्विक स्तर पर समुद्रों के जलस्तर बढ़ने जैसी समस्याएँ प्रकाश में आई हैं तथा इन समस्याओं के कारण पर्यावरणीय मुद्दे भी चिन्ता के कारण बने हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण भारत जैसे कृषि प्रधान देश में भूमि उपयोग प्रतिरूप परिवर्तन, फसल प्रतिरूप परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्रस्तुत शोध पत्र में सागर जिले के भूमि उपयोग में विगत 33 वर्षो के परिवर्तन को दिखाया है और इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप भौतिक एवं सामाजिक-आर्थिक पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ा है, दर्शाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र के लिए सागर जिले का चयन किया गया है। सागर जिला मध्यप्रदेश के 50 जिलों में से एक है। सागर जिला $23^0$10' उत्तरी अक्षांश से $24^0$27' उत्तरी अक्षांश तथा $78^0$04' पूर्वी देशान्तर से $79^0$21' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 1022.7 हजार हेक्टेयर है। सागर जिला 9 तहसीलों व 11 विकासखण्डों में विभक्त है।

क्षेत्रीय अध्ययन की आवश्यकता– पृथ्वी तल पर स्थित प्रत्येक क्षेत्र अपने स्वयं के पर्यावरणीय तत्वों से प्रभावित रहता है। पर्यावरण के सभी तत्वों का प्रभाव उस क्षेत्र पर पड़ता है, जिससे क्षेत्र का स्थानिक प्रतिरूप निर्धारित होता है। इसके साथ ही मानव जीवन के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक पक्ष भी पर्यावरण से प्रभावित रहते है। इसी प्रकार क्षेत्र की स्थानिक भिन्नताएँ भी पर्यावरण को प्रभावित करती हैं। मानव के विभिन्न क्रियाकलापों द्वारा आज पर्यावरण में कई प्रकार के परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से एक छोटे क्षेत्र में हो रहे भूमि उपयोग परिवर्तन को दिखाया जा रहा है, जो विश्व स्तर पर हो रहे परिवर्तन को जानने की दिशा में क्षेत्रीय स्तर पर एक छोटा सा प्रयत्न है।

विधि तंत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में सागर जिले में भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन दिखाने हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों का संकलन करने के लिए क्षेत्रीय सर्वेक्षण हेतु प्रश्नावली तैयार की गई एवं इसके माध्यम से किये गये व्यक्तिगत साक्षात्कारों, व्यक्तिगत क्षेत्रीय अवलोकन एवं व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर विभिन्न आंकड़ों एवं जानकारियों को एकत्रित किया गया है। सर्वेक्षण के लिए जिले के 150 कृषकों के प्रादर्श सर्वेक्षण के माध्यम से जानकारी प्राप्त की गई है। द्वितीयक आंकड़ों का संकलन मुख्य रूप से भू-अभिलेख विभाग सागर तथा जिला सांख्यिकीय कार्यालय, सागर द्वारा किया गया है।

सागर जिले में 1976-77 से 2009-10 तक के भूमि उपयोग तथा उसमें हुए परिवर्तन को तालिका क्रमांक 1 द्वारा दर्शाया गया है-

वन क्षेत्र – सागर जिले में 1976-77 में 293.0 हजार हेक्टेयर भू-भाग पर वन थे। वर्तमान (2009-10) में जिले का 274.6 हजार हेक्टेयर भाग वनों से आच्छादित हैं, जो कि कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 26.84 प्रतिशत है। 1976-77 से 2009-10 तक वनों के क्षेत्रफल में 6.27 प्रतिशत की कमी आई है। वन क्षेत्र में आई इस कमी का मुख्य कारण कृषि भूमि विस्तार तथा आवास बनाने हेतु वनों का कटना है।

कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि जो कि 1976-77 में 59.0 हजार हेक्टेयर थी, वह बढ़कर 2009-10 में 65.6 हजार हेक्टेयर हो गयी है, इस तरह कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि में 11.36 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। कृषि योग्य भूमि तथा कृषि क्षेत्रों में आवासीय क्षेत्रों का विस्तार होना इस वृद्धि का मुख्य कारण है। अन्य अकृष्य भूमि का क्षेत्र 1976-77 में 105.0 हजार हेक्टेयर था, जो कि 2009-10 में 109.4 हजार हेक्टेयर हो गया है, इस प्रकार अकृष्य भूमि में 4.38 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

कृषि योग्य भूमि – सागर जिले में 1976-77 में 38.0 हजार हेक्टेयर क्षेत्र कृषि योग्य भूमि के अन्तर्गत था जो कि 2009-10 में घटकर 9.1 हजार हेक्टेयर रह गया है। इस प्रकार कृषि योग्य भूमि के क्षेत्र में 76.05 प्रतिशत की कमी आई है। कृषि योग्य भूमि में कमी का मुख्य कारण कृषकों द्वारा अपनी भूमि को बेच देना है। जब कभी कृषक को कृषि उत्पाद से प्राप्त मूल्य की तुलना में कृषि भूमि का मूल्य अधिक प्राप्त होता है या कृषक की आर्थिक परिस्थितियाँ उसे विवश कर देती हैं, तब कृषक अपनी भूमि को बेच देते हैं, जिससे कृषि योग्य भूमि निरंतर कम होती जा रही है, 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा अपनी भूमि का विक्रय किया गया है।

पड़ती भूमि – 1976-77 में जिले में 27.0 हजार हेक्टेयर क्षेत्र पड़ती भूमि के अंतर्गत था, जो 2009-10 में घटकर 23.4 हजार हेक्टेयर हो गयी है, इस प्रकार पड़ती भूमि में 13.34 प्रतिशत की कमी आई है। पड़ती भूमि में कमी का कारण सिंचाई साधनों का विकास एवं आधुनिक कृषि विधियों का प्रयोग है।

निरा बोया क्षेत्र – सागर जिले में 1976-77 में 501.0 हजार हेक्टेयर भू-भाग निरा बोया क्षेत्र के अंतर्गत था, जो कि 2009-10 में बढ़कर 540.6 हजार हेक्टेयर हो गया, इस तरह निरा बोया क्षेत्र में 7.90 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। निरा बोया क्षेत्र में वृद्धि का कारण पड़ती भूमि में कमी होना तथा सिंचाई सुविधाओं आदि के विस्तार से अनुपजाऊ भूमि में कमी आना है। 27.92 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने पड़ती भूमि में सिंचाई बढ़ाकर निरा बाये गये क्षेत्र में वृद्धि की है।

द्विफसलीय एवं कुल फसल क्षेत्र – सागर जिले में 1976-77 से 2009-10 तक द्विफसलीय क्षेत्र में 54.78 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सिंचाई सुविधाओं के विस्तार एवं कृषि में आधुनिक विधियों के प्रयोग से होने के कारण, जिन क्षेत्रों में पहले वर्ष में केवल एक ही फसल ली जाती है, अब वहाँ दो या अधिक फसलें उत्पादित होने लगी हैं। इस प्रकार द्विफसलीय क्षेत्र में विस्तार होने के कारण कुल फसल क्षेत्र में भी इस अवधि में 54.78 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, कि विगत 33 वर्षो से वन क्षेत्र में

* विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, ** अतिथि विद्वान, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र) भारत

6.27 प्रतिशत की कमी आई है। कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि तथा अन्य अकृष्य भूमि के भाग में वृद्धि हुई है, जिसका कारण बढ़ती हुई जनसंख्या की आवास संबंधी आवश्यकता को पूर्ण करना रहा है।

इसी प्रकार कृषि योग्य भूमि में निरन्तर कमी आती जा रही है, जिसका प्रमुख कारण आवास बनाने हेतु कृषि योग्य भूमि का उपयोग करना तथा कृषि योग्य भूमि को बेचना है। प्रादर्श सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी के आधार लगभग 40 प्रतिशत कृषकों द्वारा अपनी भूमि बेची गई है, इन कृषकों में अधिकांश छोटे कृषक ही आते है। निरा बोया क्षेत्र में 7.90 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई, जिसका मुख्य कारण पड़ती भूमि में कमी होना है। सर्वेक्षित क्षेत्रों में लगभग 60 प्रतिशत कृषकों का मानना है कि पड़ती भूमि में कमी आई है। इसी तरह द्विफसलीय क्षेत्र तथा कुल फसल क्षेत्र में वृद्धि हुई है, जिसका कारण सिंचाई सुविधाओं का विस्तार होना तथा कृषि में आधुनिक विधियों का उपयोग होना है। विगत 33 वर्षो में अनाज क्षेत्रों की तुलना में दलहनों एवं तिलहनों का क्षेत्र बढ़ा है। सर्वेक्षित क्षेत्रों में दलहन (चना) व तिलहन (सोयाबीन) का क्षेत्रों में वृद्धि हुई है। इनकी वृद्धि का मुख्य कारण दलहन व तिलहन फसलों का मूल्य अधिक होना है।

इस प्रकार विगत 33 वर्षो में सागर जिले के भूमि उपयोग काफी परिवर्तन आया है तथा इस परिवर्तन का प्रभाव भौतिक पर्यावरण तथा सामाजिक-आर्थिक पर्यावरण पर भी पड़ता है। भौतिक पर्यावरण में जहाँ वन क्षेत्र के कम होने, वर्षा का प्रभावित होना तथा तापमान जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। वहीं दूसरी ओर अधिक कृषिगत उत्पादन प्राप्त करने के लिए कृषि में रासायनिक खादों, उर्वरकों तथा कीटनाशकों का अधिक उपयोग होने से मृदा की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है। रासायनिक कीटनाशकों के बढ़ते उपयोग के कारण मृदा में उपस्थित भिन्न कीट भी नष्ट हो जाते हैं, जिसका सीधा परिणाम मृदा गुणवत्ता ह्रास के रूप में सामने आता है। साथ ही इनके छिड़काव के समय इसका कुछ भाग वायुमण्डल में भी चला जाता है, जो वायुमण्डल को प्रदूषित करता है। सर्वेक्षित क्षेत्रों में 35 प्रतिशत कृषकों ने जिन्होंने मृदा परीक्षण कराया बताया कि मृदा की गुणवत्ता में कमी आई है।

सामाजिक-आर्थिक पर्यावरण में मानव के आर्थिक पर्यावरण में मानव के आर्थिक क्रियाकलापों तथा नए आवासीय भू-स्वरूपों के अविर्भाव तथा बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप कई समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। जैसे - नव निर्माण से वर्षा जल का संग्रहण में कमी आने से भू-जलस्तर में कमी आई है इसके साथ ही अन्य समस्याएँ जैसे उचित जल निकास व्यवस्था ना होता, कूड़ा-कचरा का सही व्यवस्थापन ना होना आदि जैसी समस्याओं से पर्यावरण प्रभावित होता है। इस प्रकार बदलते भूमि उपयोग का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पर्यावरण पर पड़ रहा है।

संदर्भ -

- Bhargawa Archana : Resources & Planning for Economic Development of Sagar Division.
- Jain, C.K. : Modernization of Agriculture and its Environment Determinants - A Geographical Study, Journal of Human Welfare and Ecology.
- Jain, C.K. : Increasing Pressure of Population and Change in Landuse in Madhya Pradesh, Geographical Review of India.
- Mohammad, N. : Agricultural Landuse in India.
- गजेटियर : भारतीय गजेटियर, सागर मध्यप्रदेश।
- तेली, बी.एल. एवं प्रकाश, नारायण नाटाणी : पर्यावरण अध्ययन।
- शर्मा, दामोदर एवं हरिश्चन्द्र, व्यास : हमारा पर्यावरण।

सागर जिला : भूमि उपयोग में परिवर्तन 1976-77 से 2009-10 (क्षेत्र हेक्टेयर में)

क्र.	भूमि उपयोग	1976–77		1980–81		1990–91		2000–01		2009–10		परिवर्तन
		क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	प्रतिशत
1	वन क्षेत्र	293.0	28.65	293.7	28.71	291.6	28.51	295.6	28.89	274.6	26.84	–6.27
2	कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि	59.0	5.77	59.7	5.84	63.7	6.23	64.5	6.30	65.6	6.42	11.36
3	अन्य अकृष्य भूमि	105.0	10.26	102.4	10.01	107.5	10.51	94.2	9.21	109.6	10.72	4.38
4	कृषि योग्य भूमि	38.0	3.71	35.6	3.48	16.8	1.64	15.7	1.53	9.1	0.88	–76.05
5	पड़ती भूमि	27.0	2.64	28.0	2.73	24.8	2.42	30.8	3.02	23.4	2.29	–13.34
6	निरा बोया क्षेत्र	501.0	48.97	503.6	49.23	518.6	50.69	522.2	51.05	540.6	52.85	7.90
7	द्विफसलीय क्षेत्र	17.0	3.28	20.7	2.02	42.9	4.19	128.5	12.56	261.1	25.52	1435.8
8	कुल फसल क्षेत्र	518.0	50.63	524.4	51.26	561.3	54.88	650.7	63.61	801.8	78.37	54.78
9	कुल भौगोलिक क्षेत्र	1023.0	100.00	1023.0	100.00	1023.0	100.00	1023.0	100.00	1023.0	100.00	

स्त्रोतः जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, सागर

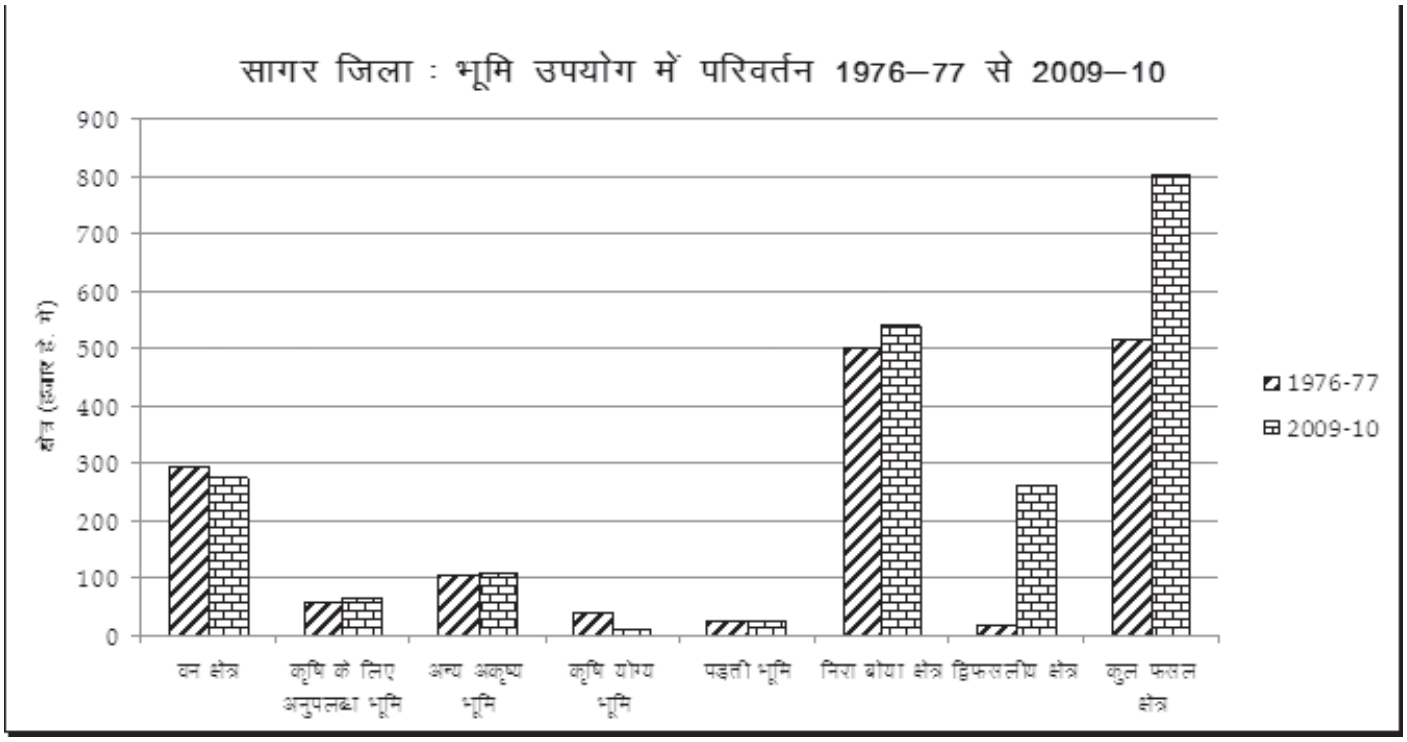
सागर जिला : भूमि उपयोग में परिवर्तन 1976–77 से 2009–10
900
800
700
600
500
400
300
200
100
0
क्षेत्र (हजार हे. में)
वन क्षेत्र
कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि
अन्य अकृष्य भूमि
कृषि योग्य भूमि
पड़ती भूमि
निरा बोया क्षेत्र
द्विफसलीय क्षेत्र
कुल फसल क्षेत्र
1976-77
2009-10

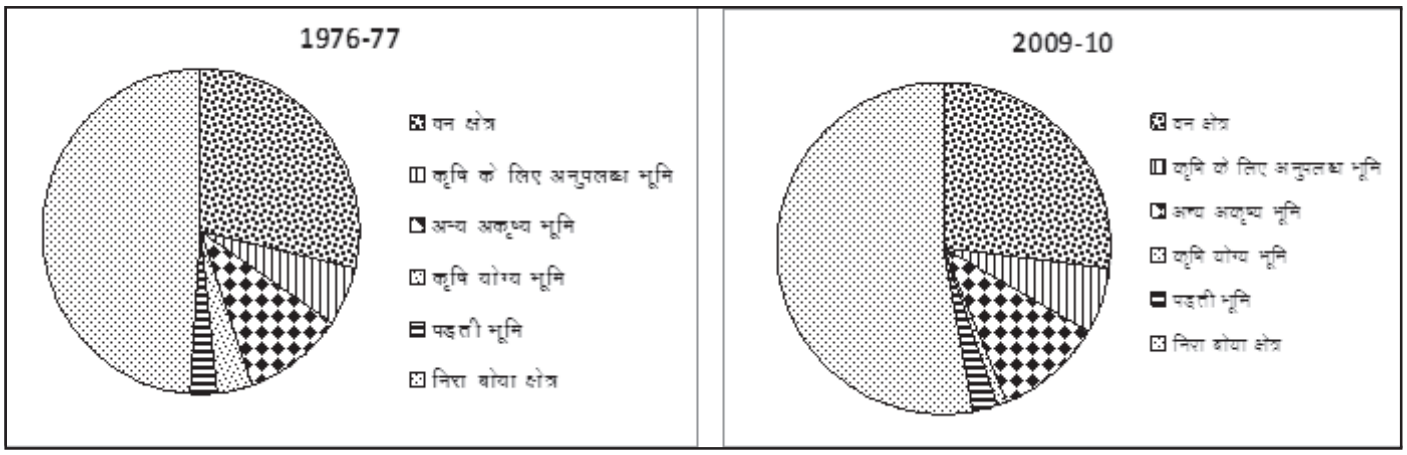
1976-77
वन क्षेत्र
कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि
अन्य अकृष्य भूमि
कृषि योग्य भूमि
पड़ती भूमि
निरा बोया क्षेत्र
2009-10
वन क्षेत्र
कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि
अन्य अकृष्य भूमि
कृषि योग्य भूमि
पड़ती भूमि
निरा बोया क्षेत्र

जल संसाधन का संरक्षण एवं प्रबंधन खरगौन जिले के विशेष संदर्भ में

राजाराम आर्य *

प्रस्तावना– वर्तमान इस भौतिक वादी युग एवं विकास के चरमोत्कर्ष की लालसा ने प्रकृति में उपलब्ध जल, जंगल तथा ऊर्जा संसाधनों का इतना अधिक अविवेकपूर्ण ढंग से उपयोग किया गया की अक्षय एवं असमाप्य कहें जाने वाले संसाधन आज या तो समाप्ती की कगार पर है या उपभोग के योग्य नही रह गये है।आज इनके भण्डारण, संरक्षण एवं प्रबंन्धन हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर चिन्तन, मनन एवं संगोष्ठियॉ आयोजित की जा रही है।

संसाधनों का घटता भण्डार आज चिन्ता का विषय बनता जा रहा है, उसमें और जल संकट एक विश्व व्यापी गंभीर मुद्दा है। विगत सौ सालों में इनके दुरूपयोग के कारण जहाँ एक और पर्यावरणीय संकट बढ़ा है वही अगली पीढ़ी के लिए इनके अभाव की समस्या उत्पन्न हो गई। अत: इनके संरक्षण और परिरक्षण को अधिक महत्व देना अतिआवश्यक है।

उद्देश्य:–

1. अध्ययन क्षेत्र में जल संसाधन के प्रमुख स्त्रोतो तथा जल स्तर की स्थिति का अवलोकन करना ।
2. जल संरक्षण एवं प्रबंधन के लिए कार्य योजना एवं जनजाग्रति पैदा करना, सम्पोषित विकास हेतु अभिप्रेरित करना।

अध्ययन विधि:–

1. समूह चर्चा
2. पूर्व साहित्य का अध्ययन।
3. निजी एवं सामाजिक संस्थानों का जल संरक्षण में सहयोग।
4. सांख्यिकी पुस्तिका के माध्यम से द्वितीयक ऑकड़ों का विश्लेषण।
5. जनसम्पर्क आदि।

सम्बन्धित साहित्य अवलोकन:–

जल विशेषज्ञ और स्टॉकहोम वॉटर प्राइज विजेता प्रो. असित बिस्कास के मुताबिक ''गुजरे 200 वर्षो के मुकाबले आने वाले 20 सालों में जल प्रबंधन के काम और प्रक्रियाऍ ज्यादा बड़े परिवर्तनों के दौर से गुजरेंगे।[1] दुनिया में ऐसे 23 नदी बेसिनो की पहचान की गई है, जहॉ शुष्क यानी गर्मी के मौसम में नदियॉ पोखरों में तब्दील हो जाती है। इन नदी बेसिनों में सबसे गर्म चार महिनो में नदी के वार्षिक जल प्रवाह का 2 प्रतिशत से भी कम बचा रह पाता है। इन संकटग्रस्त 23 नदी बेसिनों में भारत की नौ नदियॉ है, जिनमें नर्मदा और ताप्ती के नाम भी है।[2] बढ़ती जनसंख्या और जल स्त्रोतों की कुव्यवस्था के कारण आने वाले दिनों में भारत के सामने जल संकट का खतरा उपस्थित हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अध्ययन के अनुसार भारत में लगभग 2,08,561 करोड़ घन मीटर शुद्ध जल उपलब्ध है जो 1990 की जनसंख्या के आधार पर प्रति व्यक्ति 2,462 घन मीटर है और 2050 तक यह घटकर 1496 घन मीटर हो जाने की संभावना है, स्पष्ट है कि यदि जल संरक्षण एवं प्रबंधन का उचित मार्ग नही अपनाया गया तो भारत में पेयजल का संकट भयावह रूप ले सकता है।[3] जल संसाधन का संरक्षण एक अन्य आकलन के अनुसार वर्ष 2050 में भारत को वर्तमान जल उपलब्धता से तीन गुना पानी की आवश्यकता होगी। फिलहाल पानी की उपलब्धता लगभग 500 क्यूबिक प्रति किलोमिटर प्रतिवर्ष है। भारत आज की स्थिति में जल तनावग्रस्त वालें क्षेत्रों में गिना जाता है। वर्ष 2050 में जबकि देश की आबादी 175 करोड़ के आसपास होगी, यह जल की कमी वाले क्षेत्रों में आ जाएगा। उस समय देश की 60 प्रतिशत आबादी शहरी होगी, तब शहरों में 135 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन पानी की प्रतिपूर्ति करना होगी। उस समय ग्रामीण जरूरत 40 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन होगी, याने समाज में पानी के लिए संघर्ष बढ़ेगा। सामाजिक स्थितियॉ तनावग्रस्त होगी और व्यवस्था पर कानून व्यवस्था का दबाव होगा।[4]

अध्ययन क्षेत्र–शोध अध्ययन के लिए म.प्र. के दक्षिण पश्चिम में स्थित खरगोन जिले का चयन किया गया है जो धरातलीय विषमता लिए हुए तथा जहाँ जल का असमान वितरण पाया जाता है। यहाँ नर्मदा नदी के अतिरिक्त बोराड़, चोरल, मालन, महेश्वरी, कुंदा एवं वेदा इसकी सहायक नदियाँ प्रवाहित होती है। यहाँ देजला–देवाड़ा जलाशय तथा वेदा कठोरा उद्धहन, परियोजना मुख्य है जो सिंचाई एवं पेयजल की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त यहाँ कुएँ, 44591, तालब 119 एवं नलकुप 802 है। परन्तु उचित रख–रखाव, संरक्षण, एवं प्रबन्धन तथा गिरते जल स्तर के कारण जिला गंभीर जल संकट के दौर से गुजर रहा है। अत: जल प्रबंधन हेतु कार्ययोजना बनाना महत्ती आवश्यकता है।

जिला खरगोन–जल स्तर 2012

क्रमांक	तहसील	जल स्तर मीटर में
1	खरगोन	46.90
2	भगवानपुरा	35.80
3	सेगाँव	34.00
4	गौगाँव	40.00
5	कसरावद	36.20
6	भीकनगाँव	37.50
7	महेश्वर	35.40
8	बड़वाह	33.90
9	झिरन्या	41.20
औसत		37.93

स्त्रोत– लोक स्वस्थ्य यांत्रिकी विभाग, खरगोन

उपर्युक्त तालिका का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि जिले में जल स्तर का वितरण असमान रूप से दिखाई देता है। जिले में सन 2012 का औसत जल स्तर 37.94 मीटर पाया जाता है। यहाँ अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से जल स्तर की तीन श्रेणियाँ बनाई गई है। प्रथम श्रेणी में उन तहसीलों को शामिल किया गया है जहाँ औसत से भी कम जल स्तर पाया जाता है जिनमें भगवानपुरा, सेंगाँव, कसरावद, महेश्वर तथा बड़वाह है। यहॉ जल स्तर अन्य तहसीलों की अपेक्षा संतोषजनक होने का प्रमुख कारण देजला देवाड़ा बाँध है भगवानपुरा तथा सेगाँव इन दोनों तहसीलों में नहरों का जाल बिछा हुआ है। दूसरी और कसरावद, महेश्वर तथा बड़वाह में नर्मदा नदी के कारण जल स्तर संतोषजनक कहा जा सकता है। यद्यपि दूर दराज क्षेत्रों में जल स्तर यहाँ भी अधिक है।

* सहायक प्राध्यापक,भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.) भारत

दूसरी श्रेणी में वे तहसीले आती है जो जिले के पठारी भाग पर स्थित है जिनमें गोगांवा एवं भीकनगांव मुख्य है, यह क्षेत्र की उच्च भूमि है। पथरीली जमीन है इस कारण भूमिगत जलस्तर काफी नीचे पाया जाता है इसके अलावा वन एवं झाड़ियों का अभाव है फलस्वरूप स्वतंत्र जल प्रवाह के कारण भी जल रिसाव नही हो पाता है।

तीसरी श्रेणी में जिले की दो मुख्य तहसीले है- खरगोन तथा झिरन्या है जहाँ जल स्तर क्रमश: 46.90 एवं 41.20 मीटर पाया जाता है। खरगोन तहसील में अधिक गहराई पर जल होने का प्रमुख कारण यह भी मध्यवर्ती उच्च भूमि पर स्थित है तथा नगर में सीमेंटीकरण एवं नगरीकरण के कारण भूमिगत जल अधिक गहराई पर है। जबकि झिरन्या तहसील की भूमि ढालू होने से तथा नदी-नालों से अधिक सिंचाई करने के कारण निम्न जल स्तर पाया जाता है। वनों की कटाई भी एक मुख्य कारण है।

जिला - खरगोन
जल स्त्रोंतों की स्थिति, 2011-12

जल स्त्रोत	कुल	सूख चुके	प्रतिशत
कुएँ	44551	13452	30.16
हैण्डपम्प	10402	1883	18.10
बड़ी नलजल योजनाएँ	147	14	9.52
छोटी नलजल योजनाएँ	401	53	13.21
नलकूप	802	219	27.30
तालाब	119	32	26.89

स्त्रोत- लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग, खरगोन

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि जिले के विभिन्न जल स्त्रोत गिरते जल स्तर के कारण सुखते जा रहे है, इनमें सबसे अधिक 30.16 प्रतिशत कुएँ है। जो अतिप्रचीन होने से सुख चुके है, खुदाई के समय इन कुओं में पर्याप्त जल था, इसी प्रकार दूसरे क्रम पर 27.30 प्रतिशत नलकूप बढ़ती जनसंख्या की जलपूर्ति करने में अक्षम है। ऐसी ही स्थिति तालाबों की दिखाई देती है तालाबों का निर्माण जल स्तर के संतुलन के लिए किया गया था। परन्तु वर्षा की कमी के कारण वे पर्याप्त भरते नही अत: कई तालाब सुखने लगे है। नलजल योजनाएँ भी प्रशासनिक लापरवाही एवं लोगों की उदासीनता के कारण दम तोड़ते जा रही है।

जल संसाधन का संरक्षण एवं प्रबंधन

एक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि खरगोन नगर में नगरपालिका द्वारा प्रतिदिन औसतन 80 लाख लीटर पेयजल की आपूर्ति की जाती है। नगर पालिका के अनुमान के मुताबिक प्रतिवर्ष शहर की करीब 25 प्रतिशत आबादी रंगारंग रंग पंचमी मनाती है। इसमें रंगों की बौछार करने, नहाने एवं केमिकलयुक्त रंगो को छुड़ाने तथा कपड़े धोने में उनके द्वारा करीब 25 लाख लीटर (प्रति व्यक्ति औसत 100 लीटर) पानी का उपयोग किया जाता है। ऐसे में रंगपंचमी केवल तिलक लगाकर मनाई जाय तो हम उक्त पानी बचा सकते है। जो आगामी जलसंकट के दौरान उपयोगी साबित हो सकता है।

लोक स्वास्थ यांत्रिकी विभाग द्वारा गाँवों से जुटाए आँकड़ों के अनुसार जिले में (2012) माह फरवरी तक औसत जल स्तर 37,94 मीटर पाया गया। इस दौरान जिले के 1150 ग्रामों में स्थित कुल 10,402 हैंडपम्प में से 1883 ने पानी के आभाव में दम तोड़ दिया है। गाँवों में संचालित 147 बड़ी नलजल योजनाओं में से 14 बंद हो गई है। इसी तरह 401 छोटी नल जल योजनाओं में से 53 बंद हो चुकी है। अत: इन तथ्यों से आसानी से अंदाज लगाया जा सकता है। कि भविष्य में जल संकट विकराल रूप धारण कर लेगा तथा पानी के लिए संघर्ष होगा।

धरातलीय जल संसाधन का प्रबंधन-जल प्रबंध के अन्तर्गत तात्कालिक और दीर्घ कालिक दो प्रकार के उपाय अपनाये जा सकते है तात्कालिक उपाय के अन्तर्गत निम्न उपाय किये जा सकते है।

1. प्रदूषित जल को कृषि तथा औद्योगिक उपयोग के लिए स्वच्छ करना।
2. मानव उपयोग के लिए जल का गुणात्मक विकास करना।
3. जल जमाव, खारा पानी, भूमिगत जल स्तर के उत्थान, जल प्रदूषण की समस्या के लिए उचित समाधान ढुँढना।
4. भूमिगत जल के अंधाधुंध दोहन पर नियंत्रण रखना इस हेतु सख्त कानून हो तथा छत से वर्षा जल संग्रहण की शर्त पर ट्यूबवेल की अनुमति देना।
5. जल के अपव्यय पर रोक।
6. पेयजल के स्त्रोंतो को प्रदूषण फैलाने वाले साधनों से बचाव।
7. पशुओं को जल स्त्रोंतों से दूर रखना।
8. घरेलू गन्दे जल की निकासी को सुव्यवस्थित करना।
9. खेत की मेड़ बनाना एवं चारों ओर नाली निर्माण करना।
10. ड्रिप या टपक पद्धति से सिंचाई के लिए प्रेरित करना जिससे 50 प्रतिशत पानी बचाया जा सकता है।
11. कम वर्धन काल की फसलों एवं वर्षा या सिंचाई वाली फसलों को लगाने के लिए अभिप्रेरित करना।
12. छोटे नदी नालों में बोरी बंधान का निर्माण।
13. शहरी क्षेत्रों में सीमेन्टीकरण की अपेक्षा इंटरलाकिंग टाइल्स लगवाना जिससे पानी आसानी से धरती में रिसेगा तथा जल स्तर बना रहेगा।
14. परम्परागत कुओं और तालाबों पर ध्यान देना पहली प्राथतिकता होना चाहिए। कुओं और तालाबों के आंतरिक जल संरक्षण के अन्य उपाय जैसे- बिहार की अहर-पर्हन व्यवस्था, नर्मदा घाटी की हवेली, महाराष्ट्र की बंधारा तथा तमिलनाडू की ऐसी योजनाओं द्वारा जल संरक्षण किया जाना चाहिए।
15. नगरों में पेयजल व्यवस्था का समुचित प्रबंधन करना चाहिए तथा नागरिकों को प्रबन्धन में सहयोग देना चाहिए।
16. नगरों के गंदे नालों का पानी निकालने के लिए नालियों को नगरों के बाहर कुऐं खोद कर गंदा पानी एकत्रित कर उस जल को सिंचाई के लिए उपयोग करना चाहिए। सेंधवा तहसील के ग्राम सेमल्या के कृषक बिहारी गंदास द्वारा पिछले दस वर्षो से सेंधवा नगर के गंदे नाले का पानी सिंचाई हेतु किया जा रहा है। इससे वह कपास, सोयाबीन तथा गेंहू की फसल प्राप्त कर रहा है।
17. जल संरक्षण एवं प्रबंधन हेतु नगरों एवं महानगरों में नागरिक समितियों का गठन किया जाना चाहिए।
18. शहरी क्षेत्रों में भवन निर्माण के लिए पौधे लगाना अनिवार्य करना (कम से कम एक पौधा अनिवार्य)
19. छत के पानी को रिसन गड्ढे बनाकर भू-जल स्तर को बढ़ाया जा सकता है। इसी प्रकार नलकूप एवं कुओं के समीप रिसन गड्ढे बनाकर भू-जल संवर्धन का कार्य किया जा सकता है।
20. घरों में व्यर्थ खराब पानी का उपयोग दोबारा किया जाना चाहिए। (बागान, ऑगन, नहाने का पानी)
21. घर आँगन में छोटे-छोटे पक्के टेंक तैयार कर सतही जल को एकत्रित कर लम्बे समय तक उपयोग किया जा सकता है।

22. आधुनिक जीवन पद्धति में कुछ तब्दीली लानी होंगी जैसे–वाशिंग मशीन, कुलर, फ्लेश लेटरिंग में पानी का काफी अपव्यय होता है।
23. मोटर वाहन की धुलाई में काफी पानी खर्च होता है। भू–जलविद विशाल कानूनगों के अनुसार बाईक 40 लीटर, कार– 100 लीटर तथा बस के लिए 200 लीटर पानी खर्च होता अत: गाड़ियों को पोछकर पानी की बर्बादी को रोका जा सकता है।

दीर्घकालिक जल प्रबंधन के अन्तर्गत अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों की नदियों का जल कम वर्षा वाले क्षेत्रों में पहुँचाना एक महत्वपूर्ण पहल है। इसी उद्देश्य से गंगा–कावेरी नहर योजना बनाई जा रही है। छोटी–छोटी योजनाओं के द्वारा भी एक नदी को दूसरी से जोड़ा जा सकता है जिससे कम खर्च आयेगा और लाभ जल्द प्राप्त होगा। इस कार्य योजना के अन्तर्गत सिसलिया जलाशय बड़वाह जिला खरगोन से नर्मदा नदी को उज्जैनी ग्राम के पास क्षिप्रा नदी के उद्गम स्थल जिजलावंती में डाला जायेगा यहाँ से नर्मदा का जल क्षिप्रा में प्रवाहित हो कर उज्जैन तक पहुँचेगा। भूमिगत जल के सम्भरण के लिए छोटे–बड़े जलाशयों का विकास भी आवश्यक है ताकि वर्ष भर जल का रिसाव हो सके। इसके लिए नहरों, नदियों एवं झीलों में भूमिगत पाइप लगाकर जल रिसाव को समृद्ध किया जा सकता है।

वर्षा जल का संग्रहण– 1. वर्षा जल का सीधे उपयोग के लिए संग्रहण 2. पुनर्भरण गड्ढा 3.पुनर्भरण नाली ;ज्तमदबीद्ध 4. छत से वर्षा, जल संग्रहण 5.नलकूप केसिंग को छिद्रित कर नलकूप रिचार्जिंग 6. कुएँ में रिचार्ज बोरवेल का निर्माण 7. रिसन गड्ढे (परलोकेशन पिट) द्वारा भू–जल पुनर्भरण

सारांश– उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि इन छोटे–छोटे उपायों से ही जल की बूंदो को सहेजा जा सकता है। इस हेतु जन जाग्रति एवं जन सहयोग अति आवश्यक है क्योंकि जल तेरा या मेरा नहीं बल्कि हमारा है। परन्तु अफसोस की बात है कि हम आज भी जल संरक्षण वं प्रबन्धन के प्रति गंभीर नही है।

आज हम हर बात के लिए सरकार की ओर देखते है और कोसते है। लेकिन यह बात तय है कि जब तक समाज अपने जल, जंगल और जमीन के साथ अपने सम्बन्धों को नही जोड़ लेता, तब तक प्राकृतिक सम्पदा का विनाश नही रूक सकता। समाज अपनी जिम्मेदारी संभालेगा तभी रविन्द्रनाथ टैगोर की यह इच्छा पूरी होगी– *देश की माटी, देश का जल, हवा देश की, देश के फल, सरस बने प्रभु सरस बने।*

दुनिया की सबसे बड़ी सिंचाई कृषि आधारित अर्थव्यवस्था होने के कारण 21 वी सदी की जरूरतों को पूरा करने के लिए हमें बहुत तेजी से पुरानी व्यवस्था को बदलना चाहिए और नई व्यवस्था अपनानी चाहिए। नई पीढ़ी को पानी के मामले में ज्यादा मुश्किल भविष्य का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। भौतिकवादी युग में आधुनिक जीवनशैली के कारण जल का अपव्यय बढ़ा है अत: विवेकपूर्ण ढंग से जल के उपयोग की आवश्यकता है। हमारी आवश्यकताओं पर अंकुश लगाना होंगा जिससे हम और अधिक समय तक जल का उपयोग कर सके। अत: हम प्रकृति के मित्र एवं सहयोगी बने।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. उमेश त्रिवेदी– नदियों को नकारने के गंभीर खतरे, संपादकीय नई दुनिया, 4.2.2008
2. श्याम बोहरे – ''जंगल रहेगा तो पानी मिलेगा''
3. एस. ए. कुलकर्णी– जल और भारत का भविष्य, नई दुनिया 1.4.2009
4. कमलेश कुमार दिवान– बड़े बाधों का प्रभाव महासागरों पर भी होंगा, नई दुनिया। 26.4.2008
5. डॉ. शिवानन्द गौतम–''पर्यावरणीय प्रबंधन एवं संरक्षण'' भारत का भूगोल
6. डॉ. सविन्द्रसिंह– ''जल संसाधन एवं उपयोग प्रतिरूप'' भारत का वृहद भूगोल
7. लोक स्वस्थ्य यांत्रिकी विभाग, खरगोन
8. नई दुनिया– खरगोन–बड़वानी अंक दिनांक 4 नवम्बर 2013
9. विशाल कानूनगो– शोध पत्र ''खरगोन जिले में जल स्तर का विश्लेषण''
10. डॉ. भरत चौहान– ग्रामीण एवं नगरी क्षैत्रों में जल संकट– नियोजन एवं प्रबंधन शोध पत्र– ''गिरता भू–जल स्तर एवं सिचांई क्षेत्र–उज्जैन जिले के संदर्भ में'' पृष्ठ क्रमांक9

❊ सेंधवा क्षेत्र में सिंचाई में उपयोग ले रहे है नाले का गंदा पानी
❊ नाले के पानी से लहलहा रही है फसल

नर्मदा नदी का चित्र: मई 2011 नई दुनिया

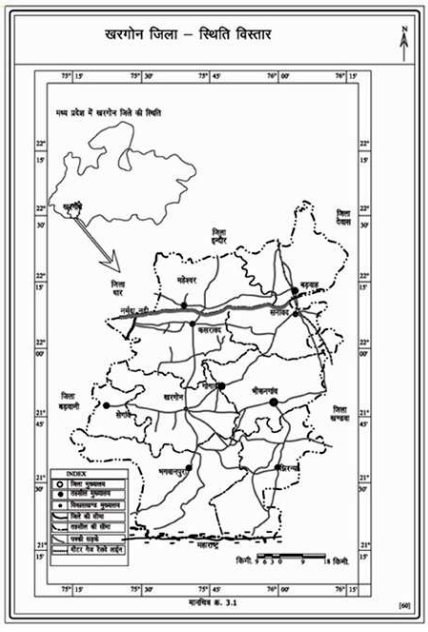

कार्बन व्यापार एवं भारत की स्थिति

डॉ. अर्चना भार्गव *

एक बार फिर ''कान्फ्रेंस ऑफ पार्टीज'' पोलेण्ड की राजधानी वारसा (नवम्बर 2013) में किसी भी मुद्दे पर सहमति के बिना सम्पन्न।

विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण हमारी पृथ्वी का स्वरूप बदलता जा रहा है। तीव्र औद्योगिक विकास, नगरीकरण, जीवाश्म ईधन के द्धारा ऊर्जा उत्पादन, भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप, वन भूमि का कृषि भूमि में स्थानांतरण होने के कारण विश्वव्यापी कार्बन चक्र प्रभावित हो रहा है। कार्बन का सर्वाधिक शोषण प्राकृतिक वनस्पति करती है परन्तु निर्वनीकरण के परिणास्वरूप वायुमण्डल में कार्बन डाई आक्साइड का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है। यदि कोयला और पेट्रोल जलाने की वर्तमान दर बनी रही तो 2100 ई तक वायुमण्डल में कार्बन का संघनन 290 से बढ़कर 700 ppmv हो जाने की आशंका है।(सिंह जगदीश, पर्यावरण एवं संविकास) मानव कल्याण की दृष्टि से इसके कई दुष्परिणाम हो सकते हैं।

पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों में धरती के तापमान में परिर्वतन अर्थात ग्रीष्मकाल में अत्यधिक गर्मी तो शीतकाल में अत्यधिक सर्दी, मानसून में बदलाव, समुद्र के जलस्तर में वृद्धि, हिमनदी के पिघलने जैसे तत्व शामिल हैं। मानव जीवन पर पड़ने वाले कुप्रभावों में कुपोषण में वृद्धि, बच्चों के शारीरिक विकास पर असर, लू, बाढ़, सूखा, आग, तूफान, के कारण मृत्यु में वृद्धि शामिल हैं।

कार्बन व्यापार –

कार्बन व्यापार का मामला ग्रीन हाऊस गैसों (कार्बन डाई आक्साइड, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन्स 33) की कटौती से जुड़ा है। कार्बन व्यापार का अर्थ उस प्रौद्योगिकी के व्यापार से है जिसके अंतर्गत कार्बन उत्सर्जन में निश्चित समयांतराल में कमी लायी जा सके। इस व्यापार में सम्मिलित देश/कम्पनियां उस प्रौद्योगिकी का एक दूसरे को हस्तांतरण करेगी जिसके अंतर्गत दूसरे देशों को प्रदूषण सम्बंधी कटौतियों से बचाने के बदले खुद कठोर पर्यावरणीय नीति लागू करने के बदले में डालर अथवा प्रदूषण बचत सार्टिफिकेट हासिल किये जा सकते हैं। यह बाजार मूल्य आधारित है क्योंकि जो देश अपने द्धारा निर्धारित उत्सर्जन मानक आसानी से प्राप्त कर लेता है वह सरप्लस प्रदूषण मानक सर्टिफिकेट पैदा कर सकता है। यह देश दूसरे देश को जो कार्बन उत्सर्जन मानक को प्राप्त नहीं कर पाया है, अपना प्रदूषण मानक सर्टिफिकेट बेच सकता है।

क्योटो प्रोटोकाल (1997) में कार्बन उत्सर्जन कम करने के दो तरीके सुझाये गये थे–

- विकसित देश/कम्पनियां स्वच्छ विकास तंत्र विकसित करें। इसके तहत वृक्षारोपण, कचरे से ऊर्जा उत्पादन, सौर ऊर्जा उत्पादन, ठोस कचरा प्रबंधन, जल प्रबंधन और नवीनीकरण परियोजनायें सम्मिलित हैं।
- विकसित देश यदि ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में कमी न ला सके तो वे विकासशील देशों से कार्बन क्रेडिट खरीद लें।

क्योटो प्रोटोकाल में विकासशील देशों के लिए कटौती के लक्ष्य निर्धारित नहीं किए गये थे। हालांकि स्वेच्छा से कार्बन उत्सर्जन कम करने के प्रयास करने पर वित्तीय व अन्य प्रोत्साहनों की व्यवस्था की गयी थी। संभवत: इस बात को दृष्टिगत रखते हुए चीन और भारत ने कार्बन उत्सर्जन की स्वेच्छिक घोषणा की थी। दोनों ही देशों में कार्बन उत्सर्जन की अधिकता के कारण कटौती आवश्यक है।

सारणी– कार्बन उत्सर्जन के कारक

उत्सर्जन कारण	प्रतिशत
बिजली और हिटिंग	24.6
भू उपयोग में परिवर्तन	18.2
कृषि	13.5
परिवहन	13.5
उद्योग	10.4

क्या है विवाद?

क्योटो प्रोटोकाल के तहत 40 औद्योगिक देशों को अलग सूची 'एनेक्स 1' में रखा गया है। इनसे उम्मीद की जा रही थी कि ये 2008 से 2012 तक अपने उत्सर्जन में 5.2 प्रतिशत की कटौती करेंगे परन्तु इनमें से अधिकतर देश 2012 तक के निर्धारित लक्ष्य से अभी कोसों दूर हैं। उनसे अपेक्षा की जाती है कि संकल्पित अवधि के द्धितीय चरण में (जनवरी 2013 से 2020) अपने कार्बन उत्सर्जन में 1990 के स्तर की तुलना में 40 प्रतिशत की कमी लायेंगे। परन्तु कोई भी देश इतनी भारी कटौती करने का इच्छुक नहीं है। अमेरिका ने क्योटो प्रोटोकाल पर हस्ताक्षर तो किये हैं परन्तु उसकी पुष्टि अभी तक नहीं की।

यूरोपीय संघ ने अवश्य 2020 तक 20 प्रतिशत तक कटौती करने की पेशकश की है और यदि अन्य देश भी इसी प्रकार प्रतिबध्दता दिखाते हैं तो वह 30 प्रतिशत तक कटौती का प्रस्ताव रखता है। भारत और चीन 'एनेक्स 1' में नहीं आते परन्तु उनकी बढ़ती हुई विकास दर को देखते हुए विकसित देश उन पर भी बाध्यकारी शर्तें थोपने के हिमायती हैं।

18 दिसम्बर 2009 को कोपेनहेगन सम्मेलन में अमेरिका और बेसिक देश (ब्राजील, दक्षिण अफ्रिका, चीन और भारत) की पहल पर एक गैर बाध्यकारी समझौता हुआ। उभरती अर्थव्यवस्था वाले देश कार्बन उत्सर्जन कटौती के प्रयासों पर स्वयं नजर रखेंगे। वे प्रत्येक दो वर्ष पर इसकी सूचना सयुंक्त राष्ट्र को देंगे। कुछ अंतर्राष्ट्रीय समूह इसकी जांच भी कर सकते हैं। विकसित देश विकासशील देशों को प्रतिवर्ष 100 अरब डालर की राशि मुहैया कराते रहेंगे।

भारत की स्थिति–

भारत में ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन 1.8 अरब टन है। इनमें से केवल कार्बन उत्सर्जन 1.49 अरब टन है। चीन 6.5 अरब टन, अमेरिका 5.8 अरब टन, रूस 1ण्7 अरब टन उत्सर्जन कर भारत से ऊपर हैं। भारत में प्रति व्यक्ति कार्बन का उत्सर्जन 1.31 टन है जबकि अमेरिका में 19.18 टन रूस 12.29 टन 'एनेक्स–1' देशों का औसत 12.00 टन एवं सम्पूर्ण विश्व का औसत 4.5 टन प्रति व्यक्ति है।

* प्राध्यापक भूगोल विभाग, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

सारणी– विश्व में कार्बन उत्सर्जन करने वाले दस प्रमुख देश

देश	कुल उत्सर्जन मिलियन मिट्रिक टन	प्रति व्यक्ति उत्सर्जन टन	संपूर्ण विश्व में योगदान (प्रतिशत में)
चीन	6534	4.91	24.3
सं.रा. अमेरिका	5833	19.81	23.9
रूस	1729	12.29	7.8
भारत	1495	1.31	5.9
जापान	1214	9.54	5.6
जर्मनी	829	10.06	4.3
कनाड़ा	574	17.27	3.9
यूनाईटेड किंगडम	572	9.38	3.4
दक्षिण कोरिया	542	11.21	2.9
ईरान	511	7.76	2.7

स्त्रोत – INCCA मई 2010 ; भारतीय जलवायु परिवर्तन मूल्यांकन नेटवर्क

भारत का दृष्टिकोण दो सिध्दांतो पर आधारित है– पहला भारत का मानना है कि वायुमण्डल में ग्रीन हाऊस गैसों का जो भण्डार है वह पिछले 150–200 वर्षों में जमा हुए हैं और इसके लिए 'एनेक्स– 1' देश ही उत्तरदायी हैं। दूसरा संयुक्त राष्ट्र कान्फ्रेंस ऑफ पार्टीज UNFCCC ने समानता के सिध्दांत पर जोर दिया है। जिसके अनुसार विश्व के सभी नागरिको की कार्बन उत्सर्जन में समान भागीदारी है। भारत का मानना है कि वह विकसित देशों के उत्सर्जन से मुकाबला नहीं करना चाहता परन्तु कभी भी उनके उत्सर्जन से अधिक प्रति व्यक्ति उत्सर्जन नहीं करेगा।

भारत द्वारा किये गये प्रयास

- वारसा सम्मेलन में स्वैच्छिक रूप से लक्ष्य तय करने के सिध्दांत को स्वीकार किया है। भारत ने इस बात पर जोर दिया है कि विभिन्न देशों द्वारा अपने लक्ष्यों की घोषणाओं के बाद उत्सर्जन कटौती के विश्वव्यापी लक्ष्य में जो भी कमी रह जायेगी, उसकी पूर्ति विकसित देश अपने यहाँ कटौती करके करें।
- भारत में राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्य योजना शुरू की गई है। जिसके अंतर्गत राष्ट्रीय सौर मिशन और राष्ट्रीय वर्ध्दित ऊर्जा कार्यकुशलता मिशन शामिल हैं। इसका लक्ष्य पीडीपी के उत्सर्जन घनत्व को कम करना है।
- केन्द्र सरकार विभिन्न क्षेत्रों में ऊर्जा संरक्षण और ऊर्जा कार्य कुशलता में वृध्दि, नवीकरण ऊर्जा के इस्तेमाल को प्रोत्साहन, बिजली क्षेत्र में सुधार, परिवहन में स्वच्छ और कम कार्बन वाले ईधनों के इस्तेमाल, वनरोपण, वन संरक्षण, स्वच्छ कोयला प्रोद्योगिकी को प्रोत्साहन और मास रेपिड ट्रांसपोर्ट सिस्टम पर केद्रित कार्यक्रम चला रही है।
- योजना आयोग ने 7 जनवरी 2010 को एक विशेषज्ञ दल गठित किया जिसने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिये कम कार्बन वाले विभिन्न विकल्पों की समीक्षा की। दल ने मई 2011 में एक अंतरिम रिपोर्ट दी। इस रिपोर्ट में विद्युत, परिवहन, उद्योग, भवन और वन क्षेत्रों की समीक्षा की गई है। रिपोर्ट में कहा गया है कि हम दृढ़ संकल्प के साथ कार्बन उत्सर्जन के घनत्व को 23 प्रतिशत से 37 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं।
- कार्बन स्क्रेपर तकनीक के अंतर्गत बड़े–बडे शहरों में बहुमंजिला इमारतों में कंक्रीट से बने कार्बन डाई आक्साइड स्क्रेपर में बड़े आकार के पेड़ लगाकर इन्हें कार्बन शोषक के रूप में स्थापित करने का प्रावधान है। भारत में यह तकनीक विचाराधीन है।

विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार विश्व कार्बन व्यापार में भारत की हिस्सेदारी 10 प्रतिशत तक संभावित है जिससे 100 मिलियन अरब डालर प्राप्त होंगे। संयुक्त राष्ट्र के एक कार्यक्रम के अंतर्गत भारत के 12 कर्मों को कार्बन व्यापार की अनुमति दी गई है। यह निर्णय UNFCCC के आधार पर लिया गया है। यदि विकसित देश विकासशील देशों को स्वच्छ पर्यावरण अनुकूल प्रोजेक्ट लगाने के लिये बाध्य करते हैं तो ऐसी स्थिति में विकाशील देशों को क्रेडिट प्रदान करना इस निर्णय का प्रमुख उद्देश्य है।

अंतत: कार्बन उत्सर्जन को सामूहिक कोशिशों से कम किया जा सकता है, बशर्ते धनी देश अपनी जीवन शैली पर थोड़ा सा समझौता करने को तैयार हों।

संदर्भ

- दैनिक भास्कर, छिंदवाड़ा ;09 नवम्बर 2013, सम्पादकीय।
- गुप्ता, संजीव,;2012 ''पारिथितिकी एवं पर्यावरण'', लुसेंट पब्लिकेशन्स, पटना।
- सिंह, जगदीश, ,;2001 ''पर्यावरण एवं संविकास'', राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- सिंह, सविन्द्र, ,;2007 ''पर्यावरण भूगोल'', वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर।

****

मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल उपलब्धता

डॉ. प्रभाकर मिश्र *

जल प्राणियों एवं वनस्पतियों के जीवन का आधार है। इसकी प्रयोजनीयता ने इसके महत्व और मांग को तीव्र गति से बढ़ाया है। मनुष्य के विकास की गति के साथ जल संसाधनों के दोहन और उपभोग में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। अत: बढ़ी हुई आवश्यकता और उपलब्धता के बीच अंतर बढ़ने से जल संसाधनों की क्षेत्रीय उपलब्धता में असंतुलन की स्थिति निर्मित हो गयी है। क्षेत्रीय जलवायु और स्थलाकृतिक संरचना के साथ उसका प्रबंधन भी जल संसाधन की उपलब्धता को प्रभावित करता है।

प्रस्तुत अध्ययन में मध्यप्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में स्थित बस्तियों में पेयजल की उपलब्धता, वितरण तथा तत्संबंधित समस्याओं का आंकलन करने का प्रयास किया गया है। तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या, औद्योगिक विकास, नगरीकरण, घटते भूजल स्तर, जल प्रदूषण और जल प्रबंधन की समस्या ने देश और प्रदेश में पेयजल की समस्या को और गंभीर बना दिया है।

अध्ययन क्षेत्र : मध्यप्रदेश भारत के मध्य में 210 6* उत्तरी अक्षांश से 260 5* उत्तरी अक्षांश तथा 740 पूर्वी देशान्तर से 820 4* देशान्तर तक स्थित देश का हृदय प्रदेश है। इसका क्षेत्रफल 308252 वर्ग किमी है जो देश के कुल क्षेत्र का 09.38 प्रतिशत है। 2011 की जनगणना के अनुसार प्रदेश की कुल जनसंख्या (7,25,97,565) में से ग्रामीण जनसंख्या (5,25,37,899) का प्रतिशत 72.4 है जो 127197 ग्रामीण बस्तियों में निवासरत है। अध्ययन क्षेत्र का अधिकांश भाग देश के प्रायद्वीपीय पठारी भाग का ही अंश है। भौतिक संरचना की दृष्टि से पर्याप्त भूगर्भिक संरचनात्मक विविधतायुक्त मध्यवर्ती उच्च प्रदेश, सतपुड़ा श्रेणी तथा पूर्वी पठारी भाग इसके मुख्य प्राकृतिक विभाग हैं जिनमें गंगा, नर्मदा, गोदावरी तथा तापी आदि नदियों के छ: अपवाह तंत्र विकसित हैं।

प्रदेश की अधिकांश वर्षा जून से सितम्बर के मध्य मानसून से प्राप्त होती है जो पूरब से पश्चिम की ओर तथा दक्षिण से उत्तर की ओर क्रमश: कम होती जाती है। मध्यवर्ती 75 सेमी की समवर्षा रेखा प्रदेश को दो भागों में विभाजित कर देती है जिसके पश्चिम में स्थित जिलों में वर्षा का वार्षिक औसत 75 सेमी से कम तथा पूर्व एवं दक्षिण पूर्व में 75 सेमी से अधिक रहता है। प्रदेश में वर्षा की विषमता जो 60 से 120 सेमी तक है पेयजल की उपलब्धता को प्रभावित करती है। वर्षा की इस विषमता के कारण यहां कुछ जिले सूखा से प्रभावित रहते हैं। वर्षा की यह प्रादेशिक विषमता सबसे गंभीर प्राकृतिक समस्या है। प्रदेश में इन्दौर, धार, झाबुआ, रतलाम, नीमच, उज्जैन, मंदसौर, बड़वानी, खण्डवा, बुरहानपुर, शाजापुर मुरैना, शिवपुरी, ग्वालियर, भिण्ड, दतिया में 100 सेमी से भी कम वर्षा प्राप्त होती है।

विधितंत्र : प्रदेश की ग्रामीण बस्तियों में पेयजल के स्रोत, उपलब्धता, वितरण तथा इससे सम्बन्धित समस्याओं के अध्ययन के लिए द्वितीयक आंकड़ों को आधार बनाया गया है। तथ्यों के लिए सामग्री को इण्टरनेट पर उपलब्ध विभागीय वेब साइट्स के माध्यम से प्राप्त किया गया है। पेयजल की स्थिति के विभिन्न पक्षों को प्रदर्शित करने के लिए ग्रामीण बस्तियों के प्रतिशत को आधार बनाकर विषय से सम्बन्धित विभिन्न क्षेत्रीय तथ्यों के वितरण को प्रतिशत, ग्राफ, मानचित्र तथा तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

जल स्रोतों की स्थिति: प्रदेश में वर्षा, नदियां तथा भूमिगत जल ही पेयजल के प्रमुख स्रोत हैं। मध्यप्रदेश से बहकर निकलने वाली छ: प्रमुख नदी बेसिनों की नदियों की कुल लम्बाई 6090 किमी है जिनकी कुल जल उपलब्धता 81719 वर्ग हेक्टेयर मीटर में से 57051 वर्ग हेक्टेयर मीटर अंश मध्यप्रदेश का है। मध्यप्रदेश को प्राप्त कुल धरातलीय जल 81.5 घन किमी में से 56.8 घन किमी तथा 345 घन किमी भूमिगत स्रोतों से प्रयोजनीय जल प्राप्त होता है।

बेसिन का नाम	कुल जल उपलब्धता (हेक्टे. मी.)	म.प्र. के लिए जल उपलब्धता (हेक्टे. मी.)	म.प्र. के लिये जल उपलब्धता का प्रतिशत
गंगा बेसिन			
यमुना बेसिन	27267	23642	86.7
सोन बेसिन	7870	3970	50.4
टोंस बेसिन	2244	2240	99.8
नर्मदा बेसिन	34542	22511	65.16
गोदावरी बेसिन	5083	2700	53.11
तापी बेसिन	2401	1646	68.55
माही बेसिन	1952	338	17.40
महानदी बेसिन	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
कुल	81719	57051	69.81

ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल स्रोत पर निर्भरता की स्थिति :

अध्ययन क्षेत्र में स्थित ग्रामीण बस्तियों में टेप, हैण्डपंप, ट्यूबवैल, कुंआ, तालाब, नदी, नहर तथा अन्य माध्यमों से पेयजल की प्राप्ति होती है। विभिन्न जनगणना वर्षों में ग्रामीण बस्तियों के प्रतिशत को पेयजल प्राप्ति के विविध माध्यमों पर निर्भरता का विवरण निम्नांकित तालिका में प्रस्तुत है .

पेयजल प्राप्ति का माध्यम/वर्ष	1991	2001	2011
टेप	11.4	10.7	09.9
हैण्डपम्प/ट्यूबवेल	34.2	50.9	63.2
कुआं	47.3	35.6	25.0
तालाब	0.7	0.3	0.3
नदी/नहर	04.2	01.7	0.9
अन्य	02.2	0.9	0.7

तालिका में प्रस्तुत तथ्यों से स्पष्ट है कि ग्रामीण बस्तियों में पेयजल प्राप्त करने के लिए निर्भरता हैण्डपंप तथा ट्यूबवैल पर आश्चर्यजनक रूप से बढ़ रही है जो जनगणना वर्ष 1991 की तुलना में 2011 तक लगभग दो गुनी हो गयी है वहीं अन्य परामपरागत स्रोतों पर निर्भरता में कमी आयी है। ग्रामीण पेयजल के परम्परागत स्रोत कुंआ पर बस्तियों की निर्भरता 1991 की 473 प्रतिशत की तुलना में लगभग आधी मात्र 25 प्रतिशत ही रह गयी है। पेयजल स्रोत की निर्भरता में तीव्र परिवर्तन विचारणीय तथ्य है। इस विवरण से यह तथ्य भी स्पष्ट है कि ग्रामीण मध्य प्रदेश में भूमिगत जल स्रोत पेयजल की उपलब्धता का प्रमुख साधन हैं। ग्रामीण बस्तियों की इस निर्भरता के कारण भूमिगत जल का तीव्र गति से दोहन किया जाना स्वाभाविक है।

ग्रामीण बस्तियों में पेयजल उपलब्धता :

ग्रामीण क्षेत्रों के लिए पेयजल की उपलब्धता, मांग, वित्त व्यवस्था, वहनीयता आदि के आधार पर राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन तथा तीव्रगामी ग्रामीण जल वितरण कार्यक्रम (ए.आर.ड़ब्ल्यू.एस.पी) द्वारा पेयजल

* सहायक प्राध्यापक – भूगोल, शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.) भारत

की न्यूनतम मात्रा को 40 लीटर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन के अनुसार प्रदाय करना सुनिश्चित किया गया है। इस पेयजल के उपयोग का विवरण निम्नानुसार है

क्रमांक	उपयोग का उद्देश्य	पेयजल की मात्रा (लीटर में)
1.	पीने हेतु	03
2.	खाना बनाने में	05
3.	स्नान	15
4	बर्तनो की सफाई	07
5	गृह स्वच्छता	10
	कुल योग	40

उपर्युक्त पेयजल उपलब्धता को राज्य शासन अपने संसाधनों के आधार पर नवीन मानक निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र है। यह जल उपलब्धता 500 मीटर की दूरी या 30 मिनिट की समय सीमा में उपलब्ध हो जाना चाहिए। जिन क्षेत्रों में पेयजल गुणवत्ता की समस्या है उनमें पीने हेतु जल उपलब्धता को 10 लीटर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन तथा शेष जल अन्य गुणवत्तायुक्त प्रदान किया जाना सुनिश्चित किया गया है। इस आधार पर प्रदेश में पेयजल के वितरण को सुनिश्चित करने तथा उसकी माप के लिए जो मापदण्ड निर्धारित किये गये है उन्हें 3 वर्गों में विभक्त किया गया है। 1.पूर्णत: पेयजल सुविधायुक्त, 2.आंशिक सुविधायुक्त 3.पेयजल सुविधा विहीन। इस आधार पर क्षेत्र का वर्ष 2005 तथा वर्ष 2011 का तुलनात्मक विवरण इस प्रकार है

क्रं.	पेयजल उपलब्धता की स्थिति	बसाहटों की संख्या (2005)	बसाहटों का प्रतिशत	बसाहटों की संख्या (2011)	बसाहटों का प्रतिशत
1	पूर्णत: सुविधायुक्त	83888	66.50	83899	65.96
2	आंशिक सुविधायुक्त	28249	22.40	40703	32.00
3	पेयजल सुविधा विहिन	14053	11.12	2595	02.04

उपरोक्त सारिणी से व्यक्त होता है कि पूर्णत: सुविधायुक्त बसाहटों में वर्ष 2005 की तुलना में वर्ष 2011 में ह्रास हुआ है। वहीं आंशिक सुविधायुक्त बसाहटों में इसी अवधि में लगभग 10% की वृद्धि हुई है, जबकि बसाहटों में केवल 1% की वृद्धि हुई। वर्ष 2011 में प्रदेश के 22 जिलों में पेयजल सुविधा विहीन बसाहटों का प्रतिशत शून्य हो गया है। जिसके कारण इस वर्ग में 2005 के 11.12% की तुलना में प्रतिशत घटकर 02.04 रह गया है। ग्रामीण क्षेत्र में गुणवत्तापूर्ण पेयजल की उपलब्धता की समस्या भी है। जिसमें प्रदेश के कुछ जिले उच्च लवणता, फ्लोराइड, लौह सान्द्रण तथा नाइट्रेट सांद्रण की समस्या से ग्रसित है। जिससे पेयजल की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है।

विचारणीय तथ्य इस प्रकार है–

1. **ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल के लिए भूमिगत जल पर निर्भरता में वृद्धि –** 2001 में धरातलीय जल पेयजल माध्यमों पर निर्भरता केवल 3 प्रतिशत बस्तियों में थी जो 2011 में घटकर 19 प्रतिशत बस्तियों में रह गई है। नल जल योजनाओं के माध्यमों पर भी निर्भरता का प्रतिशत घटा है। अत: धरातलीय पेयजल माध्यमों पर घटती निर्भरता भूमिगत जल संसाधन के संरक्षण के लिए चिन्तनीय विषय है।
2. **पेयजल उपलब्धता में कमी –** वर्ष 2011 में उपलब्धता समंको की तुलना वर्ष 2005 से करने पर प्रतीत होता है कि इसमें 0.6 प्रतिशत की गिरावट अंकित की गयी है। यह आंशिक गिरावट विचारणीय है।
3. **पेयजल उपलब्धि की प्रगति में ह्रास –** वर्ष 2005 में प्रदेश के 6 जिले बैतूल, बड़वानी, पन्ना, मण्डला, डिंडोरी तथा सिवनी जो 50 प्रतिशत से अधिक पूर्णत: पेयजल सुविधायुक्त बस्तियों युक्त थे। जो वर्ष 2011 में इन जिलों में पूर्णत: पेयजल सुविधायुक्त बस्तियों का प्रतिशत 50 से कम हो गया है।
4. **गुणवत्ता की समस्या –** पेयजल की उपलब्धता के साथ-साथ गुणवत्ता की समस्या भी प्रदेश में देखी जा रही है। जिसमें विभिन्न जिलों में उच्च लवणता, फ्लोराइड, लौह सान्द्रण तथा नाइट्रेट सान्द्रण की गंभीर समस्या है।
5. **भूमिगत जल स्तर का ह्रास –** प्रदेश की अधिकांश वर्षा लगभग 90 प्रतिशत जून से सितम्बर तक प्राप्त होती ह। शेष आठ माह मौसम लगभग शुष्क रहता है। स्पष्ट है कि वर्षा की मात्रा एवं अवधि सीमित होने के कारण वर्षा जल की उपलब्धि वर्ष भर नहीं रहती है। सदानीरा नदियों यथा- नर्मदा, बेतवा, चम्बल सोन आदि में भी जल स्तर गिर जाता है। वहीं इनकी सहायक नदियाँ ग्रीष्मकाल आने तक प्रवाह विहीन होकर सूख जाती हैं। परिणामस्वरूप अन्य उपयोगों के अतिरिक्त पेयजल के लिए भी भूमिगत जल पर निर्भरता बढ़ जाती है। भूमिगत जल के अधिक विदोहन तथा जलवायविक शुष्कता के कारण पुनर्भरण न होने से भूमिगत जल स्तर में केन्द्रीय भूमिगत जल आयोग द्वारा सर्वेक्षित कुओं से प्राप्त सर्वेक्षण के आधार पर जनवरी 2000 से जनवरी 2009 की स्थिति में जनवरी 2010 में प्रकाशित समंको के आधार पर 0.1 मीटर से 40 मीटर तक गिरावट प्रदर्शित की गई है और इसके अतिरिक्त अति विदोहन का प्रभाव भी प्रदेश के 313 विकास खण्डों में भी दिखाई देता है। इनमें से 61 विकास खण्ड अर्द्ध समस्याग्रस्त 4 समस्याग्रस्त तथा 3 जिलों- उज्जैन, रतलाम तथा मन्दसौर के 24 विकास खण्ड अति दोहित की श्रेणी में आते हैं।

सुझाव – 1.धरातलीय जल का उपयोग बढ़ाकर भूमिगत जल पर पेयजल के लिए निर्भरता कम की जाए।

2. धरातलीय जल का उचित संग्रहण एवं संधारण किया जाए।
3. शुष्क एवं समस्याग्रस्त क्षेत्रों में उचित स्थान का चयन करके जल ग्रहण क्षेत्रों का विकास किया जाए।
4. परम्परागत जल स्रोतों को पुनर्जीवित करके उनको उपयोगी बनाया जाए।
5. खाली भूमि पर वृक्षारोपण तथा जल संरचनाओं का निर्माण किया जाए।
6. वित्तीय संसाधनों का यथा समय पूर्ण उपयोग सुनिश्चित किया जाय।

प्रदेश में क्षेत्रीय विस्तार अधिक होने तथा धरातलीय संरचनात्मक जटिलता तथा औसत वार्षिक वर्षा की कमी के कारण प्रदेश में पेयजल की समस्या जटिल है। ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल के लिए भूमिगत जल संसाधन पर निर्भरता का बढ़ना धरातलीय जल संसाधन की एक प्रकार से उपेक्षा ही है। धरातलीय जल संसाधन का संग्रहण, संवर्धन तथा संरक्षण करने के साथ आवश्यक क्षेत्रों में जल ग्रहण क्षेत्रों का विकास तथा ग्रामीण पेयजल योजनाओं का युक्तियुक्त क्रियान्वयन करके समस्या का निदान किया जाना सम्भव होगा।

संदर्भ :1. वाटर एण्ड सेनीटेशन इन मप्र.- वाटर एड इण्डिया 2005
2. मिनिस्ट्री ऑफ ड्रिंकिंग वाटर एण्ड सेनीटेशन नेशनल रूरल ड्रिंकिंग वाटर प्रोग्राम स्टेट स्टेटिस्टस2012-13
3. सेण्ट्रल ग्राउण्ड वाटर बोर्ड नॉर्थ सेन्ट्रल रीजन, भोपाल,
4. भारत की जनगणनाएं 2011
5. हाउसिंग एण्ड इन्वायर्मेन्ट डिपार्टमेन्ट, गवर्नमेन्ट ऑफ मध्यप्रदेश, भोपाल।
6. एग्रीकल्चर डिपार्टमेन्ट, गवर्नमेन्ट ऑफ मध्यप्रदेश, भोपाल।
7. जल संसाधन विभाग मध्यप्रदेश, शासन भोपाल।
8. लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग, मध्यप्रदेश, शासन भोपाल।
9. आर्थिक सर्वेक्षण, आर्थिक एवं साख्यिकीय, संचालनालय, भोपाल।
10. केशव दास, ड्रिंकिंग वाटर एण्ड सेनीटेशन इन रूरल मध्यप्रदेश : इश्यू एण्ड चेलेन्ज फॉर पॉलिसी, जर्नल ऑफ रूरल डवलपमेन्ट वाल्यूम 31 सं.(3) पृष्ठ 287-304।

जनजातीय समाज में उच्च शिक्षा की समस्याएं

डॉ. श्रीनिवास मिश्र * डॉ. बी.एन.पटेल **

संक्षेपिका:–शिक्षा समाज के सृजन का केन्द्र है। शिक्षा लोगों की मनोवृत्ति ,मूल्य ज्ञान कौशल और क्षमताओ का विकास करती है। स्वतंत्र भारत ने समाजवाद के रास्ते को केन्द्र में रखकर सभी के लिए समान अवसर की उपलब्धता सुनिश्चित करने का प्रयास किया, लेकिन इक्कीसवीं सदी प्रवेश करने के पूर्व से ही शिक्षा के क्षेत्र में वैश्वीकरण का ग्रहण लग गया। वैश्वीकरण जो कि बाजारवाद और उपभोक्तावाद को प्रोत्साहित कर पूंजीपतियों का साम्राज्य बनाता है भारत के समता मूलक समाज के ढॉचे को विकृत कर दिया। जनजातीय समाज भी इससे अछूता नहीं रहा।

उच्चशिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती व्यावसायिक एवं आर्थिक लाभ कमाने की दुष्प्रवृत्ति पर नियंत्रण लगाना होगा और जनजातीय समाज की आवश्यकतानुसार कार्यक्रम तैयार करना होगा। शिक्षा प्रत्येक महत्वाकांक्षी समाज की मूलभूत चिंतन शैली एवं सर्वोच्य प्राथमिकता है।शिक्षा समाज के सृजन का केन्द्र बिन्दु है।वह परम्परागत सांस्कृतिक धरोहर का हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी को करती है।शताब्दी के प्रवेश क्षण में हर क्षेत्र में हो रहे परिवर्तन के प्रभाव परिलक्षित हो रहे है।

वर्तमान दौर उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण का है।स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत को समाजवादी ढाँचे मे ढालने का संकल्प लिया गया था ।इस संकल्प को पूरा करने में अनेकानेक प्रयास और प्रयोग किये गये। इन्हीं प्रयोगों में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक प्रसार व विस्तार हुआ।

शिक्षा राष्ट्र की विकास प्रक्रिया की सहयोगी है।शिक्षा का विशिष्ट कार्य सामाजिक परिवर्तन लाना है।बदलती परिस्थितियों से सामंजस्य के लिए शिक्षा लोगों की मनावृत्ति,मूल्य,ज्ञान और कौशल की क्षमताओ का विकास करती है।यह मानव संसाधन का प्रमुख क्षेत्र है।सामाजिक विकास के लिए न्यायपूर्ण लोकतांत्रिक व्यवस्था में बौद्धिक सांस्कृतिक व सौन्दर्य मूलक विकास को प्रोत्साहित करना शामिल है।समाज में योजनाबद्ध परिवर्तन लाने की भूमिकाबद्ध संस्थागत प्रणाली शिक्षा है जो एक प्रणाली है।

प्रस्तुत शोध आलेख में जनजातीय समाज में उच्च शिक्षा की समस्याओ का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इक्कीसवीं सदी प्रवेश करने के पहले से ही उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे वैश्वीकरण का ग्रहण लग चुका है। वैश्वीकरण का एक ही मूल मंत्र है, बाजारवाद और उपभेक्तावाद को प्रोत्साहित करना।बाजारवाद के चक्रव्यूह में फंसी उच्च शिक्षा का उत्पाद कुशल,प्रशिक्षित प्रोफेशनल के उत्पादन तैयार करना है।

इस लक्ष्य की प्राप्ति में स्थानीय, क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संस्थाओ का विस्तार कर फीस के रूप में मोटी रकम वसूलना है।इन परिस्थितियों में समाज का बहुजन जो रोटी, कपड़ा, और मकान की तलाश में अपनी जिन्दगी व्यतीत कर देता है, सुदूर ग्रामीण व पहाड़ी अंचलों में निवास करता है,गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन व्यतीत करता हैऔर जिससे अभिभावक फीस के रूप में मोटी रकम का भुगतान नहीं कर सकते, निश्चित रूप से बाजारोन्मुखी उच्च शिक्षा प्राप्त करना उसके लिए एक सपना है। जनजातीय समाज जो कि भारतीय समाज का एक बहुत बड़ा अंग है,के समक्ष उक्त परिस्थितियाँ है, जिसके चलते उच्च शिक्षा प्राप्त करने में उन्हें गंभीर समस्या का सामना करना पडता है।

उच्च शिक्षा क्षेत्र में एवं प्राथमिकताओ का निर्धारण:

स्वतंत्रता के बाद की स्थिति:– स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत मे समाजवाद के रास्ते को केन्द्र में रखकर सभी के लिए समान अवसर की उपलब्धता सुनिश्चित की। सार्वजनिक और मिश्रित अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित कर राष्ट्र के आधारभूत ढॉचे को सुदृढ किया। सामंती व औपनिवेशिक जड़ता से मुक्त होकर अपनी समृद्ध विरासत के साथ आधुनिक चिंतन चेतना और वैज्ञानिक संस्कारों की दिशा में आगे बढ़ने का प्रयास किया।

लोकतंत्र की धारा को शिखर के अन्तिम छोर तक खड़े व्यक्ति जिनमें जनजातीय समाज भी सम्मिलित है कि ओर प्रवाहित करने की योजनाओं का निर्माण किया। इस लक्ष्य को प्राप्त करने का एक सशक्त माध्यम थी शिक्षा।उच्च शिक्षा के द्धारा जनजातियां को विकास की मुख्य धारा के साथ जोड़ने को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। शैक्षणिक सुविधाओं का विस्तार छात्रवृत्ति प्रोत्साहन आदि प्रणाली विकसित की गई।

1986की नई शिक्षा नीति:– 1986की नई शिक्षा नीति में कहा गया है कि ''21वीं शताद्धी की पीढ़ी के लिए हमें ऐसी शिक्षा नीति का निर्माण करना है ,जो गतिशील जीवंत और एक सूत्रबद्ध राष्ट्र का निर्माण कर सके। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अनेक शैक्षणिक कार्यक्रम की शुरूआत की गई प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम,पत्राचार पाठ्यक्रम खुला विश्वविद्यालय, आडियो–वीडियो सिस्टम और दूरदर्शन के सजीव प्रसारण का उपयोग कर अधिक से अधिक शिक्षा का प्रसार कर शिक्षित–अशिक्षित का भेद मिटाना था।लेकिन दूरस्थ अंचलो में बगैर आधारभूत संरचना के उक्त कार्यक्रम प्रभावी नहीं हो सके और नगरीय व महानगरीय क्षेत्र तक सीमित रहे।

उच्च शिक्षा में उदारीकरण नीति का प्रभाव:– अस्सी के दशक के बाद उच्च शिक्षा विस्तार के लिए सार्वजनिक संस्थाओं के साथ निजी संस्थाओं और पूंजीपतियों को संस्थाएँ खोलने की स्वीकृत मिलते ही उच्च शिक्षा संस्थाओं की भरमार हो गई।ईसाई मिशनरियों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं द्धारा अंग्रेजी माध्यम के प्राइमरी से लेकर उच्च शिक्षा. तकनीकी संस्थान, सूचना प्रौद्योगिक संस्थान, व्यावसायिक प्रबंधन चिकित्सा आदि संस्थान, खोले गए वर्तमान मे सीमापार व अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा का पारगमन होने से उच्च शिक्षा व्यापार एवं पूँजी निवेश का एक माध्यम बन गया।

कम्पनियो में ऊंचे रोजगार के अवसर नवीन पाठ्यक्रम, कुशल एवं दक्ष श्रम की उपलब्धता और विशेषज्ञ सेवाओं के नाम पर डोनेसन एवं ऊंची शुल्क ली जाने लगी।परिणाम यह हुआ कि समाज में पूँजीपतियों राजनेताओं एवं उच्च आय वर्ग के बच्चो में शिक्षा का कुलीनीकरण हुआ। निम्न आय वर्ग, दलित जनजातीय एवं गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले समूह के बच्चे सार्वजनिक क्षेत्र में उपलब्ध परम्परागत शिक्षा तक सीमित व संकुचित हो गए समाज में मानव संसाधन में विषमता बढ़ी।

जनजातीय बच्चों में शिक्षा सम्प्रेषण (भाषा) की समस्या :– वर्तमान में शिक्षा का माध्यम हिन्दी व अंग्रेजी भाषा है। जनजातीय समाज में भाषाओं पर हिन्दी की क्षेत्रीय बोलियों का भयावह प्रवाह है। लगभग 32प्रतिशत

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) ** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला सतना (म.प्र.) भारत

जनजातीय अपनी मातृभाषा बोलते है।जनजातीय क्षेत्रो में भले ही उनकी मातृभाषा विलुप्त हो रही है,लेकिन हिन्दी माध्यम के कारण लोगों में पढ़ने के प्रति रूचि जागृत नहीं हो पा रही है।पाठशाला की भाषा और घर की भाषा के बीच कोई सामंजस्य नहीं होने के कारण शिक्षा में अरूचि पैदा होती है। संसाधनों के अभाव में नई तकनीक के माध्यम से शिक्षा मात्र खानापूर्ति के अधिक कुछ नहीं है। अंग्रेजी माध्यम के शिक्षण संस्थानों के बढ़ते आकर्षण ने बाजारवाद को प्रोत्साहित किया है लेकिन सामाजिक मूल्य संदर्भ देने में असफल रही है। सर्वव्यापीकरण और समता मूलक समाज की स्थापना में जनजातीय समाज अभी पीछे है। यही कारण है कि असंतोष, विषमता और नक्सलवाद की समस्या हमें चुनौती दे रही है।

दोषपूर्ण शैक्षिक व्यवस्था एवं प्रबंधन:-

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम है। परिवर्तन व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध हो तो वह विकास या प्रगति का सूचक होता है। समकालीन शिक्षा व्यवस्था प्रयोग पर अवलम्बित है। विद्यालयीन शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक नित नये प्रयोग किये जा रहे हैं। संविदा शिक्षा कर्मी, शिक्षा कर्मी, सहा. अध्यापक, अतिथि शिक्षक, गुरूजी, अतिथि विद्धान अपने अनिश्चित व असुरक्षित भविष्य के साथ आने वाली पीढ़ी को रोजगारोन्मुखी, सर्वव्यापीकरण, समतामूलक, मूल्य बोध तथा सांस्कृतिक विरासत को सहेजने वाली शिक्षा प्रदान कर रहे हैं।

लगभग 70 प्रतिशत शैक्षिक संस्थान ग्रामीण अंचलों में हैं जहाँ बिजली व संचार साधनों की उपलब्धता नाम मात्र की है वहॉ पर कम्प्यूटर व सूचना आधारित शिक्षा कैसे संभव है। विद्यार्थियों पर किताबों और किताबी ज्ञान का बोझ है। पाठयक्रम की गुणवत्ता और उपयोगिता के नाम पर बड़े-बड़े विज्ञापनों के साथ शिक्षा माफिया और पूंजीवादी मानसिकता अपनी दुकानें खोलकर मुनाफा वसूली कर रही हैं। शिक्षक कर्तव्यविमूख होकर प्रयोगों के साथ कदम ताल कर रहा है, कक्षाओं में अध्यापन के स्थान पर विभिन्न विभागीय जानकारियों और गणना व चुनाव कार्यो में व्यस्त हैं। आवश्यकता है शैक्षणिक व्यवस्था और प्रबंधन को प्रयोग स्थली से मुक्त कर सुदृढ व मजबूत तंत्र विकसित करने की, जिससे बौद्धिक, वैज्ञानिक व अनुसंधानपरक वातावरण का निर्माण हो सके।

शिक्षा का समाजशास्त्र:- वास्तव में शिक्षा एक विनियोग है जो व्यक्ति और समाज दोनों को बड़ी मात्रा में प्रतिफल प्रदान करती हैं। शिक्षा और विकास का सम्बन्ध समाज की उन्नति, जनकल्याण और समता से सीधा रिश्ता है। बदलती परिस्थितियों में सामाजिक सामंजस्य के लिए शिक्षा लोगों की मनोवृत्ति, मूल्य, ज्ञान और कौशल की क्षमताओं का विकास कर लोकतांत्रिक व्यवस्था में बौद्धिक, सांस्कृतिक व सौदर्न्यमूलक विकास को प्रोत्साहित करती है। शिक्षा शान्तिपूर्ण व समतामूलक सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है।

समाज में बढ़ते सामाजिक तनावों, अशान्ति आन्दोलन, दिशाहीनता और विचलन जैसी प्रवृत्तियां समाज व राष्ट्र के एकीकरण व सुदृढीकरण को गंभीर चुनौती दे रही हैं। स्वार्थीतत्व दिग्भ्रमित युवकों एवं उच्च शिक्षा संस्थानों को अपना मुखौटा बनाकर विघटनकारी निराशाजन्य परिस्थियों को अपना रहे हैं। आज अधिकांश ग्रामीण जनता, जनजातीय समूह, अनुसूचित जातियां, पिछड़ी जातियाँ जो परंपरागत रूप से शिक्षा के प्रति जागरूक नहीं रही हैं, शिक्षा से अधिक आजीविका पर जोर देती रही उनका शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण बदला है। दलित वर्गों को गुणवत्तापूर्ण, मानकीकरण, विवेकसम्मत शिक्षा कैसे प्रदान की जाये, जो समता मूलक समाज की रचना कर सके। सामाजिक आर्थिक परिवेश बनाने की आवश्यकता है। जनजातीय समाज में क्षेत्रीय विषमता को दूर किया जाना होगा।

निष्कर्ष:- जनजातीय समाज में शिक्षा के तीव्र विस्तार, विकास एवं इसके प्रति व्यापक सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक रूप में पिछड़े जनजातियों को रोजगारोन्मुखी तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा पर विशेष ध्यान देकर गुणवत्तापूर्ण स्वावलम्बी बनाने की दिशा में प्रभावी नीति की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ती व्यावसायिक एवं आर्थिक लाभ कमाने की दुष्प्रवृत्ति पर नियंत्रण लगाना होगा, जिससे शिक्षा सभी को सामान्य रूप से सुलभ हो। समाज में विभेदीकरण, कुलीनीकरण, एवं नव अभिजात्य की मानसिकता से विषमता व असामंजस्य की स्थिति निर्मित न हो।

शिक्षा को बाजार के हवाले न कर सार्वजनिक संसाधनों का अधिकाधिक प्रयोग कर नीतियों का निर्माण कर अपने उत्तरदायित्व का निर्माण करना होगा। व्यावसायिक शिक्षा की अनिवार्यता एवं प्रासंगिकता को स्वीकार करते हुए औद्योगिक विकास, आर्थिक सुधार, तकनीकी विकास, श्रम संसाधन विकास, सामाजिक जागरूकता, मानवीय कार्य और सेवा में गुणवत्ता में परिवर्तन, स्वावलम्बन एवं उद्यमिता विकास पर ध्यान देने की आवश्यकता है। समाज में सहयोग, सदभावना, सहसबद्धता के साथ समायोजनकर विवेकसम्मत, मूल्यपरक व सौन्दर्य परक शिक्षा की व्यवस्था जनजातीय समाज की आवश्यकता है। जिससे हमारे छात्र संतुलित, जागरूक, सहबंधुत्व व समता मूलक स्वस्थ समाज की रचना में अपनी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित कर सके।

संदर्भ-ग्रन्थ

1. उपाध्याय एवं शर्मा (1999) - भारत की जन जातीय संस्कृति, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
2. कपूर, मस्तराम (1986) - समसामायिक प्रतिक्रियाएं लेखक मंच, दिल्ली।
3. दुबे, डॉ. श्यामाचरण (1995) - मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन दिल्ली।
4. सिंह, रामगोपाल (2001)- सामाजिक नियंत्रण एवं सामाजिक परिवर्तन, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
5. शर्मा, डॉ. ब्रम्हदेव (1994) -आदिवासी विकास एक सैद्धांतिक विवेचन, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
6. शुक्ल, हीरालाल (1997) - आदिवासी अस्मिता और विकास म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल।
7. हसनैन, नदीम (1992) - सामान्य मानव शास्त्र, जवाहर पब्लिशर्स एवं जइस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

****

दलित समाज के प्रवक्ता : डॉ. भीमराव अम्बेडकर

डॉ. संजय खरे*

''डॉ. अम्बेडकर के समग्र चिंतन एवं जीवन विषयक दर्शन की पृष्ठभूमि भारतीय समाज की विखण्डता की मानसिकता थी।''[1] भारतीय समाज की विशेष परिस्थितियों में अम्बेडकर ने महसूस किया कि दलितों व अस्पृश्यों को वह गुणात्मक समानता नहीं मिली है जो उच्च वर्गों को प्राप्त है। इसे दृष्टिगत रखते हुये उन्होंने दलितों को अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करने का आह्वान किया।

दलितोद्धार के क्षेत्र में डॉ. भीमराव अम्बेडकर को महान अमेरिकी नीग्रो नेता पाल रावसन के समान माना जाता है ''मेरे दुख-दर्द और मेहनत को तुम नहीं जानते, जब सुनोगे तो रो पड़ोगे।''[2] इस कथन में डॉ. भीमराव अम्बेडकर के दलित समाज के प्रवक्ता के रूप में एवं अछूतों का मसीहा बनने की कहानी छिपी हुई है। ''उन्होंने ब्राह्मणवाद सवर्णों एवं उच्च जातियों के दम्भ और पाखण्ड के विरूद्ध आजीवन संघर्ष किया। किंतु इस संघर्ष को उन्होंने प्रचार आंदोलन, शास्त्रार्थ, कानूनी लड़ाई, राजनैतिक दांवपेंच और अहिंसा की सीमाओं के दायरे तक सीमित रखा। फिर भी उनका दलितोद्धार अभियान बौद्ध धर्म, सिख पंथ, कबीर, ब्रह्म समाज, आर्य समाज, विवेकानंद और गाँधी से अधिक प्रभावी एवं रचनात्मक था।''[3]

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने सर्वप्रथम अस्पृश्यता की जड़ - वर्ण व्यवस्था पर ऐतिहासिक, नैतिक, शास्त्रीय तथा तार्किक प्रहार किया। उनके अनुसार वर्ण-व्यवस्था पूर्णत: अवैज्ञानिक, अन्यायपूर्ण, अव्यवहारिक और अमानवीय, शोषणकारी सामाजिक योजना है। संसार के अन्य किसी धर्म, देश और समुदाय में ऐसी आत्मघाती व्यवस्था नहीं पायी जाती है।

जाति व्यवस्था की उपज अस्पृश्यता या छुआछूत की भावना है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने विविध दिशाओं से अस्पृश्यता के दुंर्दान्त राक्षस पर प्रहार कर समाज को उसके शिकंजे से मुक्त किया। डॉ. अम्बेडकर एक समता परक सामाजिक न्याय व्यवस्था के पक्षधर थे। आपकी मान्यता थी ''खोये हुये अधिकार याचना से नहीं मिलते इसके लिये कठिन संघर्ष करना पड़ता है।''[4]

इस दृष्टिकोण को सामने रखते हुये उन्होंने दलितों को अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करने का आह्वान किया था।

उन्होनें अपने मुख्य पत्र ''बहिष्कृत भारत'' में सरकार को यह चेतावनी दी थी कि ''यदि उसने दलित समाज को अपने अधिकारों का प्रयोग करने से रोका तो इस मामले को राष्ट्रसंघ में उठाया जायेगा। यदि सवर्ण हिन्दुओं ने इस संघर्ष को रोकने का प्रयास किया तो संपूर्ण विश्व पर यह जाहिर हो जाएगा कि हिन्दुवाद एक पत्थर की दीवार है और यदि ऐसी ही स्थिति रही तो अछूतों को बाध्य होकर किसी अन्य धर्म की शरण लेनी पड़ेगी।''[5]

25 दिसम्बर 1927 में कोलावा जिले के महाड़ सम्मेलन में डॉ. भीमराव ने अपने संबोधन में कहा कि वर्ण-व्यवस्था सभी असमानताओं की जड़ है। उनका कहना था कि सभी को समान-अवसर मिले उन्होंने इस बात पर बल दिया कि -

- सभी हिन्दुओं का जन्म से सामाजिक स्तर समान है।
- राजनीतिक, आर्थिक अथवा सामाजिक परिवर्तनों का अंतिम लक्ष्य सभी हिन्दुओं के स्तर की समानता को अक्षुण्य रखना चाहिये।
- समस्त सत्ता जनता से प्राप्त होती है।
- प्रत्येक व्यक्ति को बतौर जन्म सिद्ध अधिकार के कार्य एवं भाषण की स्वतंत्रता का अधिकार है।
- हिन्दुओं को अधिकारों के अलावा उनके जन्म सिद्ध अधिकारों से केवल कानून द्वारा ही वंचित किया जा सकता है।
- कानून किसी एक व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के किसी निकाय का आदेश नहीं है। कानून परिवर्तन के लिये जनता का विधान, नुस्खा एवं निर्देशन है।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा अस्पृश्यों के लिये एक प्रयास यह भी किया गया कि उन्होंने साइमन कमीशन को एक ज्ञापन प्रस्तुत किया। ज्ञापन में डॉ. अम्बेडकर ने अस्पृश्यों के लिये संयुक्त निर्वाचन क्षेत्रों की व्यवस्था के साथ ही कुछ स्थान भी पृथक करने का अनुमोदन किया। उनका कहना था कि ''दलित वर्ग हिन्दू समाज से भिन्न है और उसे एक विशिष्ट अल्पसंख्यक वर्ग का दर्जा दिया जाए। दलित वर्ग शैक्षणिक, आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से भारत के अन्य किसी वर्ग की अपेक्षा अधिक पिछड़े हुए हैं, इसलिये उन्हें दूसरे वर्गों की तुलना में अधिक राजनीतिक संरक्षण की आवश्यकता है एवं इन्हें समाज में मान-सम्मान और अधिकार के साथ जीने का अवसर दिया जाना चाहिए।''[6]

डॉ. अम्बेडकर ने कमीशन को जो ज्ञापन सौंपा उसमें मुख्य माँगें निम्नानुसार प्रस्तुत की गयीं -

1. दलित वर्गों की शिक्षा को प्रांत के राजस्व पर प्रथम प्रभार के रूप में मान्यता दी जाये और शिक्षा के लिये कुल अनुदान का एक समुचित और न्यायोचित अनुपात अलग से दलित वर्ग के हित में रखा जाये।
2. किसी जाति बंधन के बिना दलित वर्गों को थल सेना, नौ-सेना और पुलिस में भर्ती की जाए।
3. 30 वर्षों की अवधि तक दलितों को अधिकार दिये जाये एवं राजपत्रित/अराजपत्रित भर्ती में उन्हें वरीयता दी जाये।
4. दलितों को यह भी अधिकार दिये जाए कि हर जिले के लिये अस्पृश्यों में से ही विशिष्ट पुलिस इन्सपेक्टर की नियुक्ति की जाए।
5. प्रांतीय सरकार, स्थानीय निकायों में दलित वर्गों के प्रभावी प्रतिनिधित्व के अधिकार को मान्यता दी जाए।
6. भारत सरकार को यह अधिकार दिया जाये कि यदि प्रांतीय सरकारें दलित वर्ग का उल्लंघन करती हैं तो वह इस मामले में विधि का पालन करवाने हेतु प्रांतीय सरकारों को विवश कर सके।

साइमन कमीशन का सहयोग करने हेतु केन्द्रीय सरकार ने ब्रिटिश भारत के लिये एक समिति बनाई और इस समिति में सदस्य के रूप में डॉ. अम्बेडकर को 3 अगस्त, 1928 को चुना गया।

अनुसूचित जातियों की समस्या पर विचार

भारतीय समाज में अस्पृश्यता का रोग बहुत पुराना है इसकी जड़े इतनी गहरी है कि बुद्ध से लेकर गाँधी ने इसके निराकरण के लिये समय-समय पर प्रयास किये।

''डॉ. अंबेडकर को दलित समाज का मसीहा माना जाता है उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन सामाजिक विषमता को समाप्त करने तथा दलित वर्ग को समान

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

अधिकार दिलाने में व्यतीत किया।''[7] पैदायशी छूआछूत को समाप्त करना उनके जीवन का परम लक्ष्य था एवं दलित समाज की परंपरागत दासता के कारणों की खोज कर दलितों का उद्धार करना था।

डॉ. अम्बेडकर ने शूद्रों के विषय में कहा है, कि –

1. शूद्र आर्य ही थे जो सूर्यवंशी थे।
2. इण्डो आर्यन समाज में उन्हें क्षेत्रीय वंश में गिना जाता था।
3. एक ऐसा काल भी था जब इण्डो आर्यन समाज में केवल 3 वर्ण हुआ करते थे।
4. शूद्र राजाओं और ब्राह्मणों के बीच कलह थी जिसके कारण ब्राह्मणों पर अत्याचार किये गये और उनका अपमान किया गया। फलत: ब्राह्मणों ने शूद्रों को जनेऊ से वंचित कर दिया जनेऊ से वंचित हो जाने के कारण शूद्रों का स्तर गिर गया वे वेश्यों से भी नीचे आकर चौथा वर्ण बन गये। अस्पृश्यता के बारे में वे कहते हैं कि सन् 200 ई. तक अस्पृश्यता नहीं थी इसका प्रचलन 600 ई. में हुआ।

सवर्णों के साथ संघर्षों में अस्पृश्य हमेशा असहाय हुआ करते थे डॉ. अम्बेडकर ने इसके कारणों को तलाश किया और निम्न कारणों को सूचीबद्ध किया –

1. जहाँ तक संख्या का संबंध है दोनों समूहों में असामनता है।
2. कोई भी व्यक्ति अस्पृश्यों को पहुँचाई गई क्षति के लिये प्रतिशोध लेने के लिये तैयार नहीं है।
3. गाँव के अधिकांश अस्पृश्य गाँव के नौकर हैं अथवा भूमिहीन श्रमिक और वे अपनी जीविका के लिये पूर्णत: सवर्ण हिन्दुओं पर आश्रित हैं।
4. अस्पृश्यों के पास जीवन–यापन का कोई मार्ग नहीं है। वे दूध–सब्जी नहीं बेच सकते न कोई अन्य कार्य कर सकते हैं। यह वही कार्य कर सकते हैं जो वंशानुगत हैं एवं उनकी आर्थिक निर्भरता पूर्णत: सवर्णों पर है।
5. अस्पृश्यों के सभी आर्थिक संबंधों को समाप्त करने के लिये सवर्णों ने एक संगठित षड्यंत्र रचा है।
6. शारीरिक आक्रमण एवं सामाजिक बहिष्कार अस्पृश्यों के खिलाफ दो प्रधान शस्त्र हैं।
7. अस्पृश्यतों के पास उत्पादन के कोई साधन नहीं है वे काश्तकार या मजदूर के रूप में कार्य करते हैं।
8. अस्पृश्यों का पुलिस एवं कानून से कोई संरक्षण प्राप्त नहीं होता। क्योंकि यह दोनों वर्ग उच्च जातियों से बनाये जाते हैं वे केवल भ्रष्ट ही नहीं अपितु पक्षपाती भी होते हैं।
9. इस व्यवस्था का सबसे खराब रूप यह है, कि यह अन्याय एवं उत्पीड़न कानून की सीमाओं के अंतर्गत किये जा सकते हैं। सवर्ण हिन्दुओं को यह कहने का कानूनी अधिकार है कि वह एक अस्पृश्य को काम पर नहीं लगायेगे, वह उसको अपनी भूमि से हटा देगा वह उसे अपने खेतों में से उसके पशुओं को नहीं ले जाने देगा। कानून में बचाव के अनेक रास्ते हैं व सवर्ण हिन्दू उन्हें अच्छी तरह से जानते हैं।

अंतत: यह कहा जा सकता है कि डॉ. अम्बेडकर एक महान क्रांतिकारी थे जिन्होंने अपना संपूर्ण जीवन समाज की कमजोर और दास बना देने वाली सामाजिक बुराईयों से संघर्ष करने में लगा दिया। इस संदर्भ में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि ''उनके कार्यकलापों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण संविधान बनाने तथा दलितों का उद्धार करना दीर्घकाल तक स्मणीय रहेगा।''[8]

संदर्भ

1. फड़के, बालचंद्र :डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर ''विद्या प्रकाशन, पुणे, 1985.
2. भगवान दास :डॉ. अम्बेडकर के विचार म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1991.
3. सोधिया, चन्द्रभान : डॉ. अम्बेडकर व्यक्तिगत कृतित्व ''एक ऐतिहासिक अध्ययन'', 1996.
4. जैन, हीरालाल : ''सामाजिक समता के अग्रदूत डॉ. अम्बेडकर'' प्रतिपक्ष, नई दिल्ली, 1991.
5. अम्बेडकर, बी.आर. : ''एनटीलिशन ऑफ कास्ट'' डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर राईटिंग्स एण्ड स्पीचेज वाल 2, एजुकेशन डिपार्टमेंट, महाराष्ट्र बंबई, 1979, पृ. 87.
6. राय, वैमिश मोहनदास : ''डॉ. भीमराव अम्बेडकर का शिक्षा दर्शन, नई दिल्ली. 1993.
7. लिमये, मधु : ''सामाजिक न्याय और आरक्षण'' नई दिल्ली,, 1994.
8. गुप्ता, राजेश : ''डॉ. अम्बेडकर और सामाजिक न्याय'' मानक पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1999.

****

भारतीय महिलाओं के उत्थान में शिक्षा अनिवार्य -डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर

डॉ. एच.एल. फुलवरे * प्रो. के.एस. सिसोदिया**

प्रस्तावना-बाबा साहेब डॉ.भीमराव अम्बेडकर ने अपने तीन मूल मंत्रों के सिद्धांत में सर्वप्रथम शिक्षित बनों फिर संगठित हो और अंत में संघर्ष करों का जोरदार संदेश दिया है। भारतीय सामाजिक परिवेश में बाबा साहेब अम्बेडकर को आधुनिक मनु कहा जावे तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी क्योंकि इन्होंने भारतीय महिलाओं की प्राचीनकाल से चली आ रही घोर दयनीय दशा जिसमें शोषण,अत्याचार, अशिक्षा कुप्रथाए आदि-आदि में महिलाओं को जकड़ा हुआ था। इन अत्याचारों से मुक्ति के लिए डॉ.बाबा साहेब अम्बेडकर ने संविधान में इन्हें बराबरी का हक है। इसलिए डॉ. अम्बेडकर साहब को भारतीय महिलाओं का अधिवक्ता कहा जावे तो भी अतिश्योक्ति कदापि नहीं होगी। डॉ.बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर की यह मान्यता थी कि नारी की प्रगति के बिना सम्पूर्ण समाज की प्रगति कदापि संभव नहीं है। डॉ.अम्बेडकर नारी की स्थिति को समाज की प्रगति का मापदंड मानते थे उनका मत था कि मैं किसी भी समाज की प्रगति इस आधार पर मापता हूँ कि उस समाज में नारी ने किस सीमा तक प्रगति प्राप्त की है। डॉ.अम्बेडकर साहब महिलाओं के संगठित होने का आव्हान करते थे, उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी की समझ में आ जाये और यह निश्चय कर लें तो समाज की बुराईयों को दूर करने और समाज को सुधारने में अहम भूमिका निभा सकती है।

नारी शिक्षा अनिवार्य-डॉ.बाबा साहेब अम्बेडकर ने वर्तमान की ज्वलंत समस्या अर्थात महिला शिक्षा पर सरकार व समाज का ध्यान आकर्षित कर कहा कि पूरे भारत वर्ष की महिलाओं की प्रगति तथा उन्नति के मार्ग में एक बड़ी बाधा उनकी अशिक्षा है। समय की मांग है कि महिलाओं को जाग्रत किया जाए क्योंकि हमारी महिलाएं परिवार और समाज की नींव है, इसे मजबूत करना हम सभी का दायित्व है। डॉ.बाबा साहब का यह मानना है कि यदि महिलाएं खुशहाल होगी तो राष्ट्र सशक्त होता है और समृद्ध होता है। यह तभी संभव है जब समाज का प्रत्येक वर्ग उसमें भागीदारी करें। हमें उन पारंपरिक सोच को बदलना होगा जो हमारी माता-बहनों को दोयम दर्जा प्रदान करता है। भारतीय सभी महिलाएं अपनी संवैधानिक स्थिति को समझकर मौजूदा प्रावधानों पर प्रभावी ढंग से अमल हो, इसलिए नारी का शिक्षित होना अनिवार्य है। अब वर्तमान समाज में महिलाओं को आगे की शुरूआत में शिक्षा अत्यंत आवश्यक है।

परिवार और समाज में व्याप्त बुराईयों को खत्म करने के लिए महिला शिक्षा पर जोर देना चाहिए। बाबा साहब ने यह मत व्यक्त किया है कि महिलाओं की शिक्षा के मामले में हमारी प्रगति बहुत ही धीमी गति से है। भारत सरकार ने हाल ही में महिला शिक्षा की प्रगति के बारे में जो रिपोर्ट जारी की है उसे पढ़कर मुझे अत्यधिक दु:ख हुआ है- जिसमें कहा गया है कि अगर महिला शिक्षा की प्रगति इसी वेग से चलती रही जो कि वर्तमान में चल रही है ऐसी स्थिति में तो सभी महिलाओं को शिक्षित करने में तीन सौ वर्ष से अधिक समय और लग जाएगा। उन्होंने समाज को सामंतवादी पारिवारिक स्तर के आरंभ में संवैधानिक नियमों, कानून व सिद्धांतों से संगठित विकास की अवधारणा के लिए खड़ा किया है। डॉ.अम्बेडकर का जीवन संघर्ष वर्ण व्यवस्था के अतिरिक्त महिलाओं का विकास और स्वाधीनता भी रहा है जो वर्तमान में महिला-पुरूष असमानता के सामाजिक दूराचार में शामिल हो गया है। यह मुद्दा वास्तविक तथा सत्य के उतने ही करीब है जितना कि बाबा साहेब का संघर्ष तथा भारतीय विकास की आधारशीला। डॉ. बाबा साहब के दर्शन को और अधिक प्रसारता के साथ जीवन मूल्यों की गुणात्मकता की आवश्यकता है जिससे कि लिंग भेद की असमानता पर अंकुश लगाए जा सकने की कोशिश तो हागी ही। शिक्षा स्त्री उत्थान में डॉ.अम्बेडकर एवं गांधीजी दोनों ही समाजिक विकास का साधक मानते थे। इसलिए डॉ. अम्बेडकर ने उन्हें संवैधानिक अधिकार दिलवाने का भरसक प्रयास किया है। अत: डॉ. बाबा साहेब भीमरावजी अम्बेडकर का मत है कि शिक्षा ही वह अस्त्र व शस्त्र है जिससे महिलाओं के विकास के साथ-साथ सम्पूर्ण समाज का सुधार और उन्नति निश्चित है।

उपसंहार-नारी शिक्षा का महत्व प्रतिपादित करते हुए डॉ. बाबा साहेब ने कहा था कि किसी भी व्यक्ति की उन्नति के लिए शिक्षा की परम आवश्यकता होती है, चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरूष बिना शिक्षा के सर्वत्र अंधेरा ही अंधेरा है। यदि हम लड़कों के साथ-साथ लड़कियों की शिक्षा की ओर ध्यान देने लग जाए तो हम और भी शीघ्र प्रगति कर सकते है। शिक्षा किसी वर्ग विशेष की बपौती नहीं होनी चाहिए। उस पर एक वर्ग का अधिकार नहीं है समाज के प्रत्येक वर्ग को शिक्षा पाने का समान अधिकार है। डॉ.अम्बेडकर के जीवन इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि तथागत बुद्ध, संत कबीर और महात्मा ज्योतिबा फुले के धार्मिक तथा सामाजिक विचार उनके जीवन के आदर्श थे। मानव के शारीरिक विकास के लिए जिस प्रकार भोजन की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार सामाजिक विकास के लिए शिक्षा बेहद आवश्यक है। डॉ.बाबा साहेब के अनुसार शिक्षा हमें अच्छे और बुरे का ज्ञान कराती है और समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य भी करती है। साथ ही अन्याय के विरूद्ध आवाज उठाने के लिए प्रेरित भी करती है। क्योंकि अब जब तक हमें यह मालूम नहीं है कि हम पर अन्याय हो रहा है या नहीं तो उसके विरूद्ध आवाज कैसे उठायेंगे? यदि अन्याय को हम समाज की नीयति मानकर स्वीकारकर लेंगे तो न्याय क्या है? हम समझेंगे कैसे? हम बिना शिक्षा के अधिकारों के प्रति कैसे सजग होंगे?

अत: शिक्षा ही एक ऐसा अस्त्र है जो हमें सभी प्रकार के अन्यायों से मुक्त करा सकती है। शिक्षा मनुष्य को पशुओं से भिन्न करती है तथा जीने का तरिका भी सिखाती है। डॉ.बाबा साहेब का मत था कि शिक्षा ही एकमात्र ऐसा आधार है जिससे महिलाओं में व्याप्त अज्ञान, अशिक्षा तथा अंधविश्वास से मुक्ति दिला सकती है तथा अन्याय, शोषण और दबाव के विरूद्ध संघर्ष करने की काबलियत आ सकती है। इसमें उनका दृढ़ विश्वास था उनके द्वारा किए गए सभी कार्य लोगों को प्रेरणा देते है। परंतु फिर भी शिक्षा जगत में ज्ञान प्रकाश देने का जो विशेष कार्य उन्होंने किया है यह सबसे महत्वपूर्ण है। डॉ. बाबा साहेब ने समाज में शिक्षा के मार्फत बदलाव लाना चाहते थे। इसलिए उनका मानना था कि एक शिक्षित महिला या व्यक्ति ही सामाजिक बुराईयों को समाप्त कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ-

1. डॉ. रामगोपालसिंह-डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक जीवन
2. डॉ.बी.एन. सिंह- भारतीय सामाजिक चिंतन
3. जगदीशसिह- दलित युवाओं के परिवर्तित दृष्टिकोण
4. डॉ.धर्मवीर एवं महाजन- भारतीय समाज के परिप्रेक्ष
5. डॉ.बी.आर. अम्बेडकर- दलितोत्थान भाग एक एवं दो

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) ** सहा. प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष अंग्रेजी, महाराजा भोज शास. स्नातकोत्तर महा., धार (म.प्र.) भारत

ग्राम तिल्लौर खुर्द में 'महिला सशक्तिकरण' एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रो. क्रांतिसिंह पंवार *

किसी भी देश की महिलाएं समाज का अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है। आज नारी के संदर्भ बदल गए है जिसका महत्वपूर्ण कारण महिलाओं की शिक्षित व कामकाजी होना है। हमारे अध्ययन का उद्देश्य इनकी जीवनशैली को ज्ञात करना है कि आधुनिक समय में भारतीय नारी अपना अस्तित्व कायम रखने में आज किस तरह से संघर्षरत है? शिक्षा का प्रसार, आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक जागरूकता, आत्मनिर्भरता, स्वालंबन के फलस्वरूप विभिन्न चुनौतियों का सामना किस प्रकार से कर रही है? महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए समाज एवं सरकार द्वारा क्या प्रयास इस दिशा में किया जा रहे है यही हमने अध्ययन में जानने का प्रयास किया है।

एस.के.घोष[1] (1988) ने भी महिलाओं की स्थिति में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन किया है। ममता चंद्रशेखर [2] (2011) भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 (1) सामाजिक समानता का अधिकार के अनुसार लिंग के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं करने का उल्लेख है फिर भी लिंग के आधार पर भेदभाव होता रहा है। महिलाओं का उत्पीड़न और शोषण प्राचीन समय से होता रहा है। प्राचीनकाल से अब तक भिन्न-भिन्न तरीकों से महिलाओं के साथ उत्पीड़न एवं शोषण होता रहा है। उनको अधिकारों से वंचित रखने का मुख्य कारण महिलाओं का अशिक्षित तथा निरक्षर होना रहा है। मंजुलता[3](2004) ने भी महिला उत्पीड़न से सम्बंधित अध्ययन किया है।

प्रेम नारायण शर्मा [4] (2008) ने सशक्तिकरण को परिभाषित किया है। हम सशक्तिकरण को परिभाषित करें तो सशक्तिकरण एक प्रक्रिया है जिनके मुख्य अवयव शक्ति सरंचना पर नियंत्रण करना, सहभागिता तथा विकास की दिशा को प्रभावित करना है। अपने बारे में सकारात्मक दृष्टिकोण, आत्मविश्वास, विश्लेषणात्मक, योग्यता, जागरूकता में बढ़ोतरी तथा समुदाय के बीच अपनी एक स्पष्ट पहचान बनाना भी सशक्तिकरण प्रक्रिया के अभिन्न अंग है। इस आधार पर सशक्तिकरण को एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो महिलाओं में गतिशीलता, आत्मविश्वास, अनुकूल स्वदृष्टिकोण तथा जागरूकता का संचार करती है। जिससे निर्णयात्मक प्रक्रिया में उनकी प्रभावी भागीदारी संभव हो सके तथा विश्लेषणात्मक योग्यता द्वारा विकास की दिशा को न केवल नियंत्रित कर सके बल्कि उसकी दिशा को अपने हित में मोड़ने की क्षमता रख सकें। अच्छा जीवन जीने का अधिकार सबको है। विशेषकर नई पीढ़ी के युवक-युवतियों को जिनकी सोच व्यापक है।

जहां तक सामाजिक जीवन में परिवर्तन का सम्बंध है उसमें भी क्रांतिकारी परिवर्तन हुए है, लोगों का जीवन स्तर बढ़ा है, मानसिक सोच में बड़ा भारी अंतर आया है। खान-पान, पहनावा और जीवन शैली बदली है। अपने-अपने स्तर को बनाए रखने और उन्नति की नई ऊँचाईयों को छूने की चाह प्रत्येक व्यक्ति में बढ़ी है। महिलाएं भी इससे अछूती नहीं रही। अच्छे अंग्रेजी स्कूलों के प्रति लोगों का उत्साह बढ़ा है और शिक्षा पर लोग अच्छा पैसा खर्च करने लगे है। स्त्री शिक्षा का प्रतिशत बढ़ा है।

स्त्रियां भी पढ़ लिखकर नौकरियां करने लगी है। महानगरों के अलावा छोटे शहरों, कस्बों में भी इनकी संख्या बढ़ने लगी है। पाश्चात्य भारतीय जनजीवन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। पश्चिम में स्त्रियां पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करती है। शिक्षा और वैज्ञानिक प्रगति के इतिहास में स्त्रियों का बड़ा योगदान रहा है। उन्हीं की प्रेरणा भारतीय स्त्रियों को मिली है और वे नए आत्मविश्वास के साथ इन क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनने की सोचने लगी।

भारतीय स्त्रियों में अपने अधिकारों के प्रति इस प्रकार की जागरूकता को राजनीतिक स्तर पर भी प्रोत्साहित किया गया। इंदिरा गांधी, अंबिका सोनी, अरूणा आसफ अली आदि ने महिलाओं में नई सोच पैदा की है। कृषि और निर्माण कार्य में तो पहले से ही महिलाएं सक्रिय हुआ करती थी लेकिन अब उनका कार्य क्षेत्र और भी विस्तृत हो गया है। अब ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं बचा है जहां महिलाएं कुशलता के अपने दायित्व न निभा पा रही हो। चाहे वह परिवार हो, समाज हो या व्यावसायिक क्षेत्र हो। यही परिवर्तन हमें अध्ययन के दौरान ग्राम तिल्लौर खुर्द में देखने को मिला।

हमने अपने शोध ग्राम तिल्लौर खुर्द में महिला सशक्तिकरण एक समाजशास्त्रीय अध्ययन में 50 महिलाओं को अपने अध्ययन का आधार बनाया है। यह गांव इंदौर से 17 कि.मी. की दूरी पर है। जनगणना 2001 के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या 5821 है। कुल पुरूष संख्या 3047 तथा महिलाएं 2774 हैं। संयुक्त परिवारों की संख्या एकांकी परिवारों की तुलना में अधिक पाई गई।

हमने निर्देशन पद्धति द्वारा 50 महिलाओं को अध्ययन की इकाई बनाया है जो समग्र का उचित प्रतिनिधित्व कर सकें। प्राथमिक तथ्यों के संग्रह हेतु साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन पद्धति तथा साक्षात्कार प्रविधि द्वारा महिलाओं से जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया है एवं द्वितीयक तथ्यों के लिए सम्बंधित संदर्भ ग्रंथ, साहित्य, पत्र-पत्रिकाएं, रिपोर्ट विभिन्न पुस्तकालयों एवं महिला अध्ययन केंद्र में किए गए अध्ययनों के द्वारा जानकारी प्राप्त की है।

प्रस्तुत शोध में हमारे अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है:-

1. महिलाओं की सामाजिक,आर्थिक, राजनैतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
2. महिला परिवर्तन के विभिन्न स्वरूपों को ज्ञात करना।
3. आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने के कारण परिवार में निर्णयों में महिलाओं की भागीदारी से सम्बंधित प्रश्नों का अध्ययन करना।
4. वैयक्तिक स्तर पर मुख्यत: महिलाएं शिक्षा, आत्मविश्वास और दृढ़ चरित्र के द्वारा अपने ऊपर होने वाले अन्याय का प्रतिरोध किस प्रकार से कर रही है? इसका अध्ययन करना।
5. ग्राम की महिलाओं को प्रगति व विकास में अनेक अवसर प्राप्त हुए है क्या इन्होंने इसका पूरा लाभ उठाया है? इस प्रश्न का अध्ययन करना।
6. महिलाओं की दोहरी भूमिकाओं का अध्ययन करना कि कैसे महिलाओं को परिवार में सामंजस्य बनाकर चलना होता है जिसमें तनाव व संघर्ष की स्थिति भी उत्पन्न होती है। जिसका प्रभाव पारिवारिक सम्बंधों, बच्चों की देखभाल आदि पर भी पड़ता है। इससे सम्बंधित प्रश्नों को

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र), स्वामी विवेकानंद शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.) भारत

भी अध्ययन करने का प्रयास किया है।

7. महिलाएं आर्थिक व्यय का प्रबंधन कैसे कर रही है क्या उनका पारिवारिक आय या पति की आय पर पूर्ण अधिकार है? यह अध्ययन करना।
8. सरकार द्वारा महिलाओं में कल्याणार्थ चलाई जा रही योजनाओं का महिलाएं कितना लाभ उठा पा रही है, इसका अध्ययन करना।
9. क्या महिलाओं की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आया है? क्या वे स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर है? इसका अध्ययन करना।

महिलाओं से सम्बंधित विभिन्न शोध समाजशास्त्र में निरंतर किए जा रहे है। महिला सशक्तिकरण की दिशा में सरकारी गैर सरकारी प्रयास भी किए जा रहे है ऐसी स्थिति में आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाएं किस सामाजिक स्थिति का प्रतिनिधित्व कर रही है यह जानना आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन इस दिशा में समाजशास्त्र को दिए जाने वाले योगदान की एक छोटी सी कड़ी है। हमारे इस अध्ययन का एक उद्देश्य यह भी है कि इससे महिलाएं तो लाभांवित होंगी ही साथ ही महिलाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि का भी पता लगाया जा सकता है।

महिलाओं को आगे बढ़ने या अपनी सामाजिक स्थिति को सुधारने में किस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है? इन समस्याओं को किस प्रकार हल किया जाए तथा मिलने वाली सुविधाओं का इन्हें कितना ज्ञान है? महिलाएं कहां तक किस प्रकार से लाभांवित हुई है? ऐसी कौन सी समस्याएं है जिनकी वजह से ये सरकार की विकास योजनाओं का बहुत अधिक लाभ नहीं ले पा रही है? इन सभी प्रश्नों का विस्तार से अध्ययन हम अपने शोध प्रबंध में करेंगे।

पूर्व में किये गये अध्ययनों की समीक्षा:-

महिलाओं पर अनेकों अध्ययन हुए है, उनमें से कुछ प्रमुख अध्ययन महिलाओं के विरूद्ध विभिन्न सामाजिक अन्यायों, बुराईयों तथा उनकी समस्याओं से सम्बंधित है जिनका भी वे सामना करती आ रही है, जैसे पर्दा प्रथा, अशिक्षा, दहेज, बलात्कार से सम्बंधित अध्ययन है। इनमें उन अध्ययनों को भी शामिल किया जा सकता है जो महिलाओं की जागरूकता से सम्बंधित है जैसे कि चट्टोपाध्याय (1939), नीरा देसाई (1957), प्रमिला कपूर (1978), पदमालया दास (1981) आदि द्वारा किए गए अध्ययन।

कुछ अध्ययन महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन से सम्बंधित है, जैसे ए.एस. आल्तेकर (1938), ए.डिसूजा (1975), यूनेस्को रिपोर्ट (1985), नीरा देसाई और विभूति पटेल (1987) ने इसके संदर्भ में महिलाओं का अध्ययन किया है।

प्रमिला कपूर (1974) ने अपने अध्ययनों में न केवल शिक्षित, कार्यशील महिलाओं के दृष्टिकोण में परिवर्तन को बल्कि अपने दूसरे विभिन्न अध्ययनों में भी भारत में कार्यशील महिलाओं की पारिवारिक स्थिति की विवेचना की है। पद्मनी सेन गुप्ता (1960) ने भारतीय महिलाओं में रोजगार से सम्बंधित रूपरेखा की विवेचना की है।

आर.बी. मिश्रा तथा चंद्रपालसिंह[5] (1997) ने अकबरपुर जिला फैजाबाद उत्तरप्रदेश में आठ महिलाओं का वैयक्तिक अध्ययन किया जो कि मध्यम वर्ग परिवार से सम्बंधित रही है। इन वैयक्तिक अध्ययनों का निष्कर्ष यह निकला कि महिलाएं पढ़-लिखकर स्वावलंबी होने पर परिवार एवं समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है तथा अपने परिवार में आर्थिक सहयोग देकर बच्चों की शिक्षा एवं भविष्य निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। उपरोक्त अध्ययन में महिलाओं ने शिक्षित होने के बाद भी परम्परा एवं पुरूष सत्ता में प्रभावी होने से सम्बंधित विश्लेषण को प्रस्तुत किया है। शिक्षित महिलाएं राजनैतिक परिदृश्य में अपनी भूमिका पुरूषों की अपेक्षा सहजता से निभा सकती है तथा पुरूषों के एक पक्षीय निर्णय से भी बच सकती है। इस अध्ययन के आधार पर यह तथ्य सामने आया कि यदि अवसर प्राप्त हो सके तो महिलाएं पढ़-लिखकर स्वावलंबी होने पर परिवार तथा समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है तथा परिवार व समाज में सम्मान भी प्राप्त कर सकती है।

प्रमिला कपूर[6] (1974) ने कामकाजी महिलाओं पर अपना अध्ययन प्रस्तुत किया है तथा इन्होंने बताया कि प्राय: महिलाओं का कार्य क्षेत्र घर के अंदर तक माना जाता रहा है लेकिन नगरीकरण और नई शिक्षा नीति ने शिक्षित महिलाओं को घर से बाहर आने के लिए प्रेरित किया है जिससे इनकी पारिवारिक आय में तो वृद्धि हुई है तथा इनका जीवन स्तर तथा मनोवृत्ति और मूल्यों में भी परिवर्तन आया है।

सी.ए. हॉट[7] (1969) ने कामकाजी महिलाओं की बदलती स्थिति का अध्ययन किया।राज प्रुथी तथा बेला रानी शर्मा (1995)[8] ने भी महिलाओं पर अपना अध्ययन प्रस्तुत किया है।

इस अध्ययन के अनुसार महिलाएं शिक्षा प्राप्त कर समाज एवं देश में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इस बात पर भी जोर दिया गया कि महिलाओं में रोजगार की व्यवस्था इस प्रकार होनी चाहिए कि उन्हें कार्य करते समय किसी भी प्रकार परेशानी अथवा तनाव न हो तथा यह सुझाव भी दिया गया कि महिलाओं की योग्यता का सही मूल्यांकन कर उन्हें कार्य दिया जाना चाहिए। एस. गिरअप्पा [9] (1988) ने महिलाओं की दोहरी भूमिका से सम्बंधित अध्ययन प्रस्तुत किया है।

अध्ययन पद्धति (Methodology)-

हमने अपने अध्ययन में पद्धति के रूप में अनुसूची पद्धति, निदर्शन प्रणाली, साक्षात्कार अनुसूची एवं अवलोकन पद्धति द्वारा ग्राम तिल्लौर खुर्द की महिलाओं से जानकारी प्राप्त की है।

किसी भी अनुसंधान या शोध के लिए अध्ययन विषय से सम्बंधित वास्तविक तथ्यों का संकलन आवश्यक है क्योंकि इसके अभाव में अध्ययन संभव नहीं हो सकता। हमने तथ्यों को विभिन्न स्त्रोतों प्राथमिक तथा द्वैतियक स्त्रोतों द्वारा प्राप्त किया है।

इसके विपरीत द्वैतियक स्त्रोत वे आंकड़े है जिन्हें अनुसंधानकर्ता प्रकाशित, अप्रकाशित प्रलेख, रिपोर्ट, संदर्भ पुस्तकों, पत्र, डायरी, जीवन इतिहास आदि से प्राप्त करता है। हमने अपने अध्ययन में प्राथमिक स्त्रोतों के रूप में स्वयं निरीक्षण करके विभिन्न महिलाओं से व्यक्तिगत रूप से चर्चा करके जानकारी को प्राप्त किया है ताकि हमें अध्ययन के सही निष्कर्ष प्राप्त हो सके। इसी प्रकार हमने द्वैतियक स्त्रोतों जैसे प्रकाशित, अप्रकाशित प्रलेख, रिपोर्ट, संदर्भ ग्रंथों, पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों के माध्यम से भी अपने अध्ययन हेतु जानकारी एकत्रित की है।

साक्षात्कार-अनुसूची अनुसंधान एवं सर्वेक्षण में तथ्य प्रकटीकरण के माध्यम के रूप में प्रचलित है इसका प्रयोग प्रत्येक प्रकार के शोध संरचना में किया जाता है।

हमने अपने शोध कार्य में विस्तृत एवं व्यवस्थित सामग्री संकलन हेतु साक्षात्कार-अनुसूची का निर्माण किया है। उत्तरदाताओं की सुविधा को ध्यान में रखते हुए हमने अनुसूची का निर्माण सरल भाषा में करने का प्रयास किया है तथा विषय से सम्बंधित प्रश्नों का ही समावेश किया है जिसमें हमें ग्राम तिल्लौर खुर्द की महिलाओं के बारे में सही जानकारी प्राप्त हो सके।

इस प्रविधि में सूचनादाता से आमने-सामने के सम्पर्क होने के कारण यथार्थ एवं सही सूचनाओं की प्राप्ति भी संभव हो सकी हे तथा एकत्रित सामग्री की विश्वसनीयता भी बढ़ गई।

अवलोकन वैज्ञानिक अनुसंधान को आधारभूत पद्धति है तथा इस पद्धति का प्रयोग हमने अपने शोध कार्य में करने का प्रयास किया है। हमने ग्रामीण महिलाओं की गतिविधियों का सूक्ष्म निरीक्षण किया जिसमें यथार्थ तथ्य प्राप्त हो सके तथा अध्ययन का उद्देश्य पूर्ण हो सके तथा इसके द्वारा प्राप्त निष्कर्षो में विश्वसनीयता-यथार्थता होने की संभावना अधिक पाई गई।

हमने अवलोकन के माध्यम से व्यापक सूचनाएं व जानकारी प्राप्त करने एवं सूक्ष्म व गहन अध्ययन करने का प्रयास किया है। अत: यह अध्ययन हेतु लाभप्रद लोकप्रिय उपयोगी एवं महत्वपूर्ण प्रविधि है।

प्रस्तुत शोध कार्य में साक्षात्कार विधि का प्रयोग ग्राम तिल्लौर खुर्द की ग्रामीण महिलाओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए किया गया है तथा प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनाएं प्राप्त करने का प्रयास किया गया है।

उत्तरदाता महिला से प्राथमिक सम्बंध स्थापित किया तथा महिलाओं को जानकारी देने हेतु प्रेरित किया ताकि वे खुलकर वार्तालाप कर सकें एवं आंतरिक सूचनाएं भी प्राप्त हो सके। हमने महिला उत्तरदाताओं की आंतरिक भावनाओं, मनोवृत्तियां, धारणाओं आदि के बारे में जानकारी प्राप्त की जो साक्षात्कार प्रविधि द्वारा ही संभव हो सकी।

उपकल्पना:-

उक्त अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित उपकल्पनाओं का निर्माण किया गया है:-

1. प्रस्तुत शोध के अंतर्गत कौन सी परिस्थितियां है जिनके उत्पन्न होने से महिलाओं के सशक्तिकरण एवं विकास में बाधाएं निर्मित होती है उन प्रतिकूल परिस्थितियों को मिटाने या समाप्त करने के लिए क्या प्रयास होने चाहिए।
2. ग्राम तिल्लौर खुर्द में महिला परिवर्तन के विभिन्न स्वरूपों में अंतर स्पष्ट दिखाई दे रहा है।
3. उपरोक्त कार्यक्रम में समाज एवं सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों की क्या भूमिका चल रही है तथा इन नीतियों, योजनाओं का महिलाएं लाभ उठा पा रही है अथवा नहीं महिलाओं में कितनी जागरूकता है इसका आंकलन करना।

हमने इंदौर से 17 कि.मी. दूरी पर ग्राम तिल्लौर खुर्द में महिलाओं के सशक्तिकरण की क्या स्थिति है इस पर अध्ययन किया जिसके अंतर्गत हमने निम्न बिन्दुओं पर महिलाओं से जानकारी प्राप्त की।

1. महिलाओं की सामाजिक गतिविधियों में भूमिका।
2. महिलाओं की समाज में स्थिति।
3. महिलाओं की घरेलू निर्णयों में भूमिका।
4. महिलाओं की व्यवसायिक स्वतंत्रता से सम्बंधित जानकारी।
5. क्या महिलाओं को पुरूषों के ही समान दर्जा एवं सम्मान प्राप्त है?
6. महिलाओं के शिक्षा का स्तर।
7. महिलाओं का आर्थिक स्तर।
8. महिलाओं में राजनीति जागरूकता एवं राजनीतिक गतिविधियों में भूमिका।
9. महिलाओं को सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की क्या जानकारी है?

इसके अतिरिक्त महिला सशक्तिकरण को लेकर अन्य कई जानकारियां भी प्राप्त की गई किंतु कुछ महत्वपूर्ण जानकारियों को तालिकाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है:-

तालिका क्रमांक-1

महिला शिक्षा की स्थिति

क्र.	महिला शिक्षा की स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	प्राथमिक से मिडिल	30	60%
2	हायर सेकेण्डरी	5	10%
3	स्नातक	3	6%
4	निरक्षर	12	24%
	कुल योग	50	100%

तालिका क्रमांक-1 के अनुसार 60 % ग्रामीण महिलाएं प्राथमिक से मिडिल तक शिक्षित है तथा 12 अर्थात 24% महिलाएं निरक्षर पाई है तथा 10% हायर सेकेण्डरी है तथा 6% स्नातक है।

अध्ययन के आधार पर यह तथ्य सामने आया है कि अधिकांश संख्या उन महिलाओं की है जो प्राथमिक से मिडिल तक शिक्षित है, 10% हायर सेकेण्डरी की है जो शैक्षणिक स्थिति में परिवर्तन की सूचक है। अत: हम कह सकते है कि गांव में महिलाओं की शैक्षणिक स्थितिमें परिवर्तन आया है उचित उनमें शिक्षा के प्रति जागरूकता देखी जा सकती है जो महिला सशक्तिकरण की दिशा में अच्छा संकेत है।

तालिका क्रमांक-2

महिलाओं की सामाजिक तथा राजनैतिक गतिविधियां

क्र.	महिलाओ की सामाजिक तथा राजनैतिक गतिविधियों में भागीदारी	आवृत्ति	प्रतिशत
1	ग्राम पंचायत के कार्यो में	25	50%
2	गांव के विविध क्रियाकलापों में	12	24%
3	गांव के सामुदायिक कार्यक्रमों में	8	16%
4	निष्क्रिय	5	10%
	कुल योग	50	100%

हमने ग्राम तिल्लौर खुर्द में 50 महिलाओं को अध्ययन का आधार मानकर जानने का प्रयास किया कि महिलाओं की गांव की सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों में कितनी भागीदारी है? अध्ययन के आधार पर यह तथ्य सामने आये कि 25 अर्थात 50 प्रतिशत महिलाएं ग्राम पंचायत से सामाजिक एवं राजनैतिक रूप से जुड़ी है तथा वहां की महिला सरपंच हंसा पाटीदार भी उन्हीं में से एक महिला है। ये महिलाएं चुनाव प्रक्रिया में भाग तो लेती है तथा महिला सरपंच के साथ भी कार्यो में जुड़ी है।

ये घरेलू कार्यो को देखने के साथ वोट भी देती है। जानकारी लेने पर 12 अर्थात 24% महिलाओं ने गांव में विविध क्रियाकलापों में भाग लेना बताया जैसे बाजार, हाट एवं विवाह से सम्बंधित कार्यक्रमों में तथा 16% महिलाओं ने सामुदायिक कार्यक्रम में भाग लेना बताया किंतु 5 अर्थात 10% महिलाएं निष्क्रिय है जो किसी क्रियाकलापों में भाग नहीं लेती।

अध्ययन के आधार पर यह तथ्य सामने आया है कि सर्वाधिक संख्या 25 अर्थात 50% महिलाओं की जो ग्राम पंचायत के कार्यो से जुड़ी है तथा ज्यादा जागरूक है तथा 24% महिलाएं गांव के बाजार, हाट, सगाई तथा विवाह आदि कार्यक्रमों में हिस्सा ले रही है जो महिला सशक्तिकरण की दिशा में परिवर्तन का सूचक है।

तालिका क्रमांक–3
व्यावसायिक स्थिति

क्र.	व्यावसायिक स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	खेती	10	20%
2	घरेलू कार्य तथा खेती	20	40%
3	नौकरी	1	2%
4	मजदूरी	6	12%
5	केवल घरेलू कार्य	12	24%
6	निजी कार्य	1	2%
	कुल योग	50	100%

उपर्युक्त तालिका का अध्ययन करने पर यह तथ्य सामने आया है कि सबसे ज्यादा महिलाएं अर्थात 40% महिलाएं घर भी देखती है तथा खेती के कार्य भी बहुत अच्छी तरह से देख रही है तथा 1 महिला ऐसी मिली जो सरकारी नौकरी में है अर्थात शिक्षण कार्य करती है तथा 1 महिला निजी धंधा ब्यूटी पार्लर चला रही है 6 अर्थात 12% महिलाएं मजदूरी करती है तथा 12 महिलाएं घरेलू कार्य कर रही है।

उपर्युक्त तालिका यह दर्शाती है कि महिलाएं घरेलू कार्य के साथ–साथ कृषि, निजी व्यवसाय एवं सरकारी नौकरी भी कर रही है जो उनकी आर्थिक स्थिति में परिवर्तन का द्योतक है और नारी सशक्तिकरण की दिशा में अच्छा प्रयास है।

तालिका क्रमांक–4
महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता

क्र.	आर्थिक स्वतंत्रता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	स्वयं द्वारा खर्च	10	20%
2	परिवार द्वारा खर्च	20	40%
3	स्वयं कमा के खर्च	8	16%
4	परिवार पर निर्भर	12	24%
	कुल योग	50	100%

उपर्युक्त तालिका का अध्ययन करने पर यह तथ्य सामने आया है कि पहले की तुलना में आज महिलाओं में आर्थिक स्वतंत्रता ज्यादा देखने में आ रही है। यद्यपि उपर्युक्त तालिका अनुसार 12 अर्थात 24% महिलाएं आर्थिक मामलों में आज भी परिवार पर निर्भर है परंतु फिर भी 10 अर्थात 20% महिलाएं स्वयं खर्च करने का अधिकार रखती है तथा 16% स्वयं मेहनत करके खर्च कर रही है। उपर्युक्त तालिका अनुसार यह तथ्य सामने आया है कि वर्तमान में बहुत बड़ा परिवर्तन देखने में आया है कि आज महिलाएं आर्थिक रूप से स्वतंत्र हुई है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष:–

उपर्युक्त तालिकाओं का अध्ययन कर निष्कर्षत: हम कह सकते है कि ग्राम तिल्लौर खुर्द में ग्रामीण महिलाओं का सामाजिक स्तर जो सामान्य था वह तो ऊंचा उठा ही है साथ ही शैक्षणिक स्तर भी ऊंचा उठा है। महिलाएं आर्थिक रूप से स्वतंत्र हुई है तथा महिलाओं में शिक्षा के प्रति जागरूकता देखने को मिल रही है। महिलाएं गांव की सामाजिक गतिविधियों तथा राजनैतिक गतिविधियों में हिस्सा लेती दिखाई दे रही है। उनको परिवार में सम्मान तथा सहयोग मिला है, वे स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर हुई है तथा निर्णय लेने का अधिकार भी प्राप्त हुआ है जो परिवर्तन का द्योतक है कुछ महिलाएं सरकारी योजनाओं का पूरा लाभ भी ले रही है जो सशक्तिकरण की दिशा में एक अच्छा प्रयास है।

सुझाव:–

1. आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं की सफल सहभागिता हेतु उनकी क्षमता में समुचित विकास किया जाए। स्त्रियों को स्वयं अपनी पहचान और बेहतर छवि को बढ़ावा देना चाहिए तथा विश्लेषणात्मक सोच पैदा करने की कोशिश करना चाहिए।
2. मौजूदा योग्यताओं को बेहतर बनाने के लिए या नए हुनर सीखने के लिए प्रशिक्षण तथा कौशल विकास कार्यक्रम चलाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ:–

1. चंद्रशेखर, ममता (2011) मानवाधिकार और महिलाएं, मप्र हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
2. गिरअप्पा, एस. (1988) द रोल ऑफ वूमन इन रूरल डेवलपमेंट, दया नई दिल्ली।
3. घोष, एस.के. (1988) वूमन इन चेंजिंग सोसायटी: ए रीडर, सेज पब्लिशर्स, नई दिल्ली
4. हॉट, सी.ए. (1969) चैंजिंग स्टेट्स ऑफ वूमन इन पास्ट इंडिपेन्डेन्ट इण्डिया, एलाईड पब्लिशर्स, बंबई।
5. कपूर, प्रमिला (1974) द चैंजिंग स्टेट्स ऑफ वूमन इन इण्डिया, विकास पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली।
6. मिश्रा, आर.बी. तथा चंद्रपाल सिंह (1997) इण्डियन वूमन चैलेंजर्स एण्ड चेंज, कामनवेल्थ पब्लिशर्स, न्यू दिल्ली।
7. मंजूलता (2004) अनुसूचित जाति में महिला उत्पीड़न, अर्जुन पब्लिशिंग, नई दिल्ली।
8. प्रुथी, राज तथा बेला रानी शर्मा (1995) पोस्ट इंडीपेन्डेन्ट इंडिया एण्ड वूमन, अनमोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
9. शर्मा, प्रेम नारायण तथा संजीव कुमार झा (2004) महिला सशक्तिकरण एवं समग्र विकास, भारत बुक सेंटर, लखनऊ।

Bibliography

- Agarwal, Bina (1968) Conceptualizing Women's Studies: Some Note (Mime)
- Agarwal, Sushila (1988) Status of Woman, Print Well Publisher, Jaipur.
- Ahooja, Krishna Patel, S.Vina Devi and G.A. Tadad (1999) Women and Development, Har Anand Publication, New Delhi.
- Altekar, A.S. (1959) The Position of Women in HIndu Civilization, Motilal Banarsidas Publication, Delhi.
- Bakshi, S.R. (1987) Gandhi and Status of Women, Criterion Publication, New Delhi.
- Bela, Raj (1999) The Legal and Political Status of Women in India, Mohit Publications, New Delhi.
- Chawla, B.R. (1981) Women and Social Change in India, Heritage Publications, New Delhi.
- Dash, L.N. (1993) Women: Family Life and Rural Welfare, Manak Publications, New Printing Press, Delhi.
- Devendra, Kiran (1985) Status and Position of Women in India, Shakti Book Vikas Publishing House, New Delhi.
- Devi, Satnam (1987) Women in Rural Development, Mittal Publication, Delhi.
- जड़िया, प्रभावली (2003) हिन्दू नारी : कार्यशीलता बदलते आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली।
- कपूर, प्रमिला (1976) कामकाजी भारतीय नारी, राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली।
- मोतियानी, पुष्पा (1998) महिला विकास की नई दिशाएं, कर्नावती पब्लिकेशन, अहमदाबाद।

मीडिया का बाजारीकरण एवं मूल्यहीनता

डॉ. बी.एन. पटेल * डॉ. श्रीनिवास मिश्र **

संक्षेपिका :– मीडिया सामाजिक परिवर्तन का सबसे बेहतर और सशक्त साधन है। मीडिया व्यक्ति को जानने का कार्य करती है।इसका काम समाज में निर्णय लेने की शक्ति पैदा करना और उसे बरकरार रखना है।स्वतंत्र आन्दोलन के समय मीडिया ने आजादी की उत्कंठा को जनचेतना में जागृत किया और स्वयं जीवन संस्कारों और राष्ट्रीय चेतना के उदान्त मूल्यों का निर्वाहन किया ।आर्थिक उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की होड ने बाजारवाद को बढ़ाया जिसमें मीडिया भी डुबकी लगाने लगा।अब मीडिया से अपेक्षा करना कि वह लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ और सजग प्रहरी है,एक बेमानी है। मीडिया जिसे सामाजिक परिवर्तन का सबसे बेहतर और सशक्त साधन माना जाता है। परिवर्तन के साथ ही सामाजिक नियंत्रण की इसमें अत्यन्त प्रभावी क्षमता है। परन्तु इन दिनों खासी अकुलाहट देखी जा रही है। बाजार के दबाव और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच उलझी मीडिया की दुनिया भटकाव की ओर बढ़ रही है और नए रास्तों की तलाश मे है। तकनीकी क्रान्ति, प्रिंट की बढ़ती प्रसार संख्या इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के नित नए चैनल और संचार के साधनों की गति ने इस समूची दुनिया को जहॉ चमक दमक के स्वप्नलोक में तब्दील कर दिया है वही पाठक व श्रोता से उसके सामाजिक सरोकार की आवाजें भी उठने लगी है। मीडिया की दशा दिशा और भूमिका की जब भी कोई बात की जाती है तब यह सवाल जरूर उठता है कि क्या समाज में उच्चतम आदर्शो एवं जीवन मूल्यों की पुर्नस्थापना में मीडिया की कोई भूमिका होनी चाहिए? इस सवाल में वर्तमान परिप्रेक्ष्य बेहद निराशाजनक है क्यों कि उच्चतम आदर्शो एवं जीवन मूल्यों की पुर्नस्थापना की बात तो काफी दूर है उसके संरक्षण तक में भी मीडिया का उत्साह ,रूचि और भूमिका संदिग्ध है ।इतना अवश्य है कि भविष्य वाले परिप्रेक्ष्य पर यदि मीडिया मूल्यों में एकाकार नहीं कर पाती तो मीडिया का भविष्य ही संदिग्ध होने में समय नहीं लगेगा ।

समाज में सम्प्रेषण की आवश्यकता और मीडिया – मानव सदैव से ही मूल्यों में जीने का आकांक्षी रहा है छोटे बच्चे का स्वभाव भी सत्य का आचरण होता है झूठ तो वह बाद में सीखता है। मानव स्वभावत: सही को ही जानना चाहता है क्योंकि संदेह से दुविधा पैदा होती है। दुविधा में रहना मानव को स्वीकार नहीं है।इसी कारण सत्यान्वेशण की सहज प्रक्रिया उसमें चलती रहती है उदाहरण के तौर पर शिक्षा की परम्परा, विज्ञान की परम्परा जिसके आधार पर कुछ सार्वभौम सत्य मानव के हाथ लगे है अज्ञान से पर्दा उठा है ।शोध ओर शिक्षा परम्परा ने मानव के द्वारा स्वीकारी गई परम्पराओं मान्यताओं और धारणाओ को वैज्ञानिक जाँच परख कर देखा ,जिससे असंगतावाली बहुत सारी मान्यताएँ ध्वस्त हो गई। यह जन संचार माध्यमों के सम्प्रेषण का प्रभाव था इस दिशा में मीडिया ने बहुत प्रयास किए और ऐसा सच आज जन सामान्य की जानकारी का हिस्सा बना। समाज में गलत धारणा का पता चलता है तो मानव उसे छोड़ना चाहता है और उन धारणाओं परम्पराओं मान्यताओं में गलत था उसे समझा और उसें जो सही लगा जिसकी तार्किकता उसे स्वीकार हुई अंगीकार किया, आत्मसात किया । मीडिया व्यक्ति को जगाने का काम करती है। इसका काम समाज में निर्णय लेने की शक्ति पैदा करना और उसे बरकरार रखना है। अन्याय शोषण और अत्याचार की पाषाण शिलाओं को सूचनाओं के मर्मान्तक प्रहारों ने ध्वस्त करने में अहम भूमिका निभाई ।मानव की महत्वकांक्षी और अभिलाषा सत्यानुभूति की रही है, वह अपने चारों ओर होने वाली गतिशीलता, क्रियाशीलता और अस्तित्व को उसकी समष्टि के साथ जानना चाहता है ।मीडिया का प्रयोजन भी यही है और महत्व भी ।व्यक्ति के श्रम को मीडिया नें समूची मानवता के श्रम में बदल दिया । व्यक्ति की उपलब्धि को समूची मानवता की उपलब्धि बना दिया ।

मीडिया का अतीत परिप्रेक्ष्य – यदि भारतीय समाज में मीडिया के अतीत पर नजर डाले तो वह काफी उजला रहा है। वीसवी सदी के पूर्वार्द्ध में परतंत्रता की बेड़ी मे जकड़ा भारत उससे छूटकारा पाने के लिए लगातार प्रयासरत था । तब मीडिया ने राष्ट्रप्रेम और स्वाधीनता जैसे उच्चतम आदर्श और जीवन मूल्य के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर करने का जज्बा जन जन मे पैदा किया था ।आजादी की उत्कण्ठा रखने वाली मीडिया नें अपना सब कुछ न्यौछावर करने का जज्बा जन-जन में पैदा किया था । आजादी की उत्कंठा रखने वाली मीडिया अपना सर्वस्व शहादत की बलिवेदी में न्यौछावर किया था । लेकिन वर्तमान में सच्चाई सच्चरित्रता ईमानदारी विनय समता और सदभावना के उच्चतम जीवन मूल्य का जज्बा बचा नहीं है स्वतंत्रता पूर्व आजादी प्राप्त करना ही प्रमुख लक्ष्य था । अत: उस औपनिवेशिक सता को उखाड़ फेंकने में समाज व राष्ट्र के साथ मीडिया भी हम कदम थी। स्वतंत्रता के साथ साथ मीडिया ने समाज में व्याप्त अन्धविश्वास ,गलत धारणाए,मिथकों, भ्रान्तियों एवं जड़वत परम्पराओं के प्रति वैज्ञानिक,तार्किक और समसामयिक प्रतिक्रियाओं, लेखनी,प्रेरक प्रसंगों और उद्धरणों से समाज में चेतना व जागरूकता के प्रचार में सक्रिय भूमिका का निर्वहन किया ।वैज्ञानिक प्रगति व तकनीक की जानकारी का संप्रेषण कर कृषि ,व्यवसाय व उद्योग के विकास की नींव डालने में सहयोगी बनी रही । समग्र रूप से देखे तो मीडिया स्वतंत्रता पूर्व तक जीवन संस्कारों और राष्ट्रीय चेतना के उदात्त मूल्यों से जुड़ी हुई थी ।

मीडिया का बाजारीकरण: – वरिष्ठ पत्रकार कुलदीप नैयर ने लिखा है कि '' पत्रकारिता के ध्येय अदृश्य हो रहे हैं और पत्रकारिता अब उद्योग हो गई है।''लेकिन लगता है कि इस बात में कुछ गलत नहीं है। जब पूरे विश्व का बाजारीकरण हो रहा है तो मीडिया को कैसे बचाया जा सकता है । धन कमाने वाले तो इससे भी धन कमाने की सोचेगें। उनका किसी की प्रेरणा और किसी अन्य नैतिक लक्ष्य से क्या सरोकार होगा । समाज में भी सोचने का मापदण्ड बदला है।आधुनिक समाज को तो उपभोक्ता के तहत ही पालने संभालने का प्रयत्न हर जगह हो रहा है।अब पश्चिमी लेखक मारग्रेट दुरास की बात को कौन सुनता है,कि ''जर्नलिज्म इज ए मोरल एक्ट''।

आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण की होड ने मीडिया को सूचना और शिक्षित करने के उद्देश्यों को गौण कर उसे मनोरंजन का पर्याय बनाने का प्रयास किया । मीडिया के सामने आज विस्तृत बाजार क्षेत्र है, जहॉ समाचार को शीघ्रता से पहुंचाना होता है । इसके लिए कुशल विपणन की श्रेष्ठ प्रबन्धकीय कौशल की आवश्यकता होती है ।पूँजी और व्यवसाय वृद्धि उसके अनिवार्य हिस्से हो गए है। बाजार की अवधारणा और अपना प्रयास बढ़ाने के लिए मार्केटिंग स्किल तथा आक्रामक रणनीति का सहारा लिया जा रहा है।

व्यवसायीकरण के नाम पर सरकार से हर संभव सुविधा या छूट लेने की कोशिश की जाती है जिससे मीडिया सरकारी तंत्र पर अधिकाधिक आश्रित होते चले जाते है।मीडिया प्रमुखों व संपादकों ने मीडिया से इतर उद्योगों मे भी

* सहायक प्राध्यापक भूगोल ** सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला सतना (म.प्र.) भारत

पूंजी लगाना शुरू किया और यहीं से फिसलन की प्रक्रिया शुरू होती है। मीडिया का उद्योग पतियों राजनीतिज्ञों एवं माफिया से सतत संपर्क रहता है। राजनीतिक संरक्षकों या सत्ताधीशों से स्वहित के अनाप सनाप कार्य कराये जाते हैं. बदले में उनके काले कारनामों को छिपाकर यशोगान किया जाता है। जनता के बीच नेता की लोकप्रियता स्थापित करने का काम मीडिया करती है। मीडिया अधिकारियों के भ्रष्टाचार को अपने हित मे भुनाने का कार्य कर रही है। मीडिया कर्मी भी कार.बंगला.इलेक्ट्रानिक बस्तुऐं,पब्लिक स्कूल,विदेशी आयातित वस्तुओं का उपभोक्ता बनना चाह रहा है। अतएवं उससे यह अपेक्षा करना की वह राज्य का चौथा स्तंभ है और लोकतंत्र की सजग प्रहरी है एक बेमानी है।

सन् 1995 में प्रख्यात पत्रकार पं बनारसीदास चतुर्वेदी ने कहा था कि हिन्दी पत्रकार जगत पर पूंजीपतियों का आक्रमण हो चुका है पंडित जी इस बात को समझ गये थे कि प्रकाशन से मुनाफा उठाया जा सकता है।उससे राजनैतिक शक्ति अपने हाथों में आ सकती है और जनता की कुरूचि को प्रोत्साहन देने से अधिक लाभ तो होता ही है साथ ही लोग प्रगतिशील विचारों से भी वंचित रखे जा सकते हैं। वह दिन दूर नहीं है जबकि पत्रकार जगत पर पूंजीपतियों का सामूहिक आक्रमण होगा और हम लोगों की भिन्न-भिन्न शक्ति और भी क्षीण हो जायेगी। जब मीडिया का अंतिम उद्देश्य मात्र मुनाफा कमाना रह जायेगा तो उससे किसी सामाजिक दायित्व की अपेक्षा करना व्यर्थ है। मीडिया और अपसंस्कृति-मीडिया का संस्कृति उद्योग और बाजार के एक तरफा हितों के लिये अकल्पनीय पैमाने पर बढ़ता इस्तेमाल मनुष्य की स्वतंत्रता बौद्धिकता और रचनात्मकता के लिये अनगिनत समस्याऐं पैदा कर रहा हैं। बाजार का मीडिया हमारे जीवन और बुद्धिजगत को अपना उपनिवेश बना रहा हैं। इलेक्ट्रानिक मीडिया नें बाजार की संस्कृति को पूंजी और टेक्नालाजी के जोर से लोकप्रिय बनाने का काम किया है। टी.वी. ने न लोकप्रिय संस्कृति का निर्माण किया न ही जनरूचि का ध्यान रखा और न ही जनता से रचनात्मक संवाद किया है । यह जबरदस्ती लोकप्रिय बनाई गई संस्कृति है. लोकप्रिय संस्कृति नहीं ।

तकनीकी क्रांतियां संस्कृति को कुचलने के लिये नहीं होती लेकिन उनका इस्तेमाल संस्कृति और सिर्फ संस्कृति ही नहीं समाज की कम आर्थिक शक्ति वाले दलित, शोषित, वंचित वा उपेक्षित मनुष्यों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को भी कुचलने के लिये होता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में टी.वी. मुनाफे की दौर की शामिल विज्ञापनदाता बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों का खिलौना बनकर रह गई हैं। वह मजेदार और जरूरी में सबसे पहले मजेदार का चुनाव करता है। मीडिया कामुकता के प्रसंगों को नित नये दृश्यों से प्रसारित करता है कि लोगों का अश्लीलता के प्रति सामान्य रोष भी समाप्त हो गया है। पोर्नोग्राफी और अश्लील चीजें हमारी कई पीढियों के अंतकरण को खंडहर करने में लगी हैं। सेक्स, हिंसा, अपराध के साथ ही अंधविश्वास के लगातार प्रचार ने मीडिया के परिदृश्य को जहरीला बनाया है। भूत-प्रेत, अंधविश्वास और अश्लीलता फैलाने वाली सामग्री का प्रचूरता से प्रसार किया जा रहा हैं।

विज्ञापन के जरिए नग्नता का खुल्लमखुल्ला प्रदर्शन किया जाता है। उसके पीछे तर्क दिया जाता है कि जनता पसंद करती है इसमें कोई बुराई नहीं है। वास्तव में यह जनता के पसंदगी का प्रश्न नहीं है। पसंद नापसंद का प्रश्न तब उठता है जब आम आदमी की बात सुनी जाये । यह बाजार है बाजार में उत्पाद है और उत्पाद क्रय करना आमजन की मजबूरी है। बाजार को मुनाफा चाहिये उसका गुणवत्ता और समाज से कोई सरोकार नहीं है।

धारावाहिकों में मनोरंजन के नाम पर जो परोसा जा रहा है उसे सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों से कतई लेना देना नहीं है। इन सीरियलों में विवाहेत्तर सम्बन्ध, एक से अधिक पुरूष-स्त्रियों से शारीरिक संबंध, कुंवारी मां व विवाह पूर्व यौन संबंध के दृश्य दिखाये जा रहे हैं। अवैध संबंधों से गर्भधारण और उस गर्भ को गिराने के लिये तरह तरह के प्रलोभन-धमकी एवं दबाव समाज के युवा वर्ग को दिग्भ्रमित कर रहे हैं। कुछ ऐसे धारावाहिक दिखाये जाते हैं जिन्हें परिवार के सभी सदस्यों के साथ बैठकर देखने में शर्म आती है।

उत्तर आधुनिक समाज और मीडिया- प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक बोड्रिलार्ड का कहना है की उत्तर आधुनिक समाज की संरचना उपयोग पर बनी हुई हैं। वह आगे कहते हैं 'आवश्यकताएँ और उपयोग वास्तव में और कुछ न हो कर उत्पादन शक्तियों का विस्तार मात्र है।' उत्पादन में बेतहाशा वृद्धि और भिन्न दिखने की लालसा ने उपभोग वृत्ति को बढ़ावा दिया है । उपभोग की वस्तुएं एक प्रकार की संकेत की व्यवस्था को बनाती है तो उपभोग के लिये व्यक्ति को प्रेरित करती हैं। मीडिया जब सुन्दरता-लावण्य को बढ़ाने के लिये रसोई के कार्य को हल्का करने को बढ़िया संकेतों द्वारा प्रदर्शित करता है तो हम इससे प्रभावित होते हैं। वस्तुत: उपभोग संकेतों को चालाकी से रखने की एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें लोग संकेतों को ही वस्तु समझ लेते हैं। इसका आशय है की मीडिया संकेतों के माध्यम से इस्तेमाल मूल्य जो कुछ नहीं है और संकेत मूल्य सब कुछ हो जाता हैं। संकेत प्रतिकृति हैं। यथार्थता से इन्हें कोई मतलब नहीं है. ये मात्र प्रतिकृतियां है जो यथार्थ को भी बढ़ा-चढ़ाकर अतिरंजित रूप में देखते हैं। लोगों को संकेतों के लिये जो मान्यता या वैधता है, उसे कोड अर्थात आचरण संहिता कहा जाता है, क्योंकि संकेत शून्य पर नहीं बिकते । उनकी वैधता होती है जिसे समाज देता है। मीडिया इस वैधता को व्यापकता प्रदान करते हैं। इस तरह उत्तर आधुनिकता समाज की सम्पूर्ण संरचना मीडिया द्वारा संचालित होती है और मीडिया इस समाज की प्राणवायु है।

निष्कर्षत: मीडिया ने सामाजिक आदर्शों मूल्यों एवं सरोकारों को अत्यन्त संजीदगी और मिशन के रूप में संप्रेशित करने का अपना दायित्व निभाया है। लेकिन समाज जब बाजार द्वारा संचालित होता है, पूंजीपति की नजर मुनाफा वसूली में होती है तब समाज में जायज-नाजायज का भेद समाप्त होता है। मीडिया जिसका मिशन समाज व राष्ट्र के पुनर्निर्माण- नवाचार व यथार्थ सत्यान्वेषण को सामने रखकर दिशा निर्देशन करना है.जागरूक बनाना है वह भी अपने मिशन से भटक गया है। मीडिया की आवश्यकता रही है और रहेगी। बहुत दिनों तक झूठ भ्रम के सहारे किसी का भविष्य स्थिर नहीं रह सकता ।

मीडिया कोई व्यावसायिक प्रतिष्ठान नहीं है ,यह लोकतंत्र का सजग प्रहरी है इसे अपने मिशन से भटकाव रोकना होगा । मीडिया विचारों का सम्प्रेषण करें न कि वस्तु का । इसे अति यथार्थता से परहेज करना चाहिये।

स्वतंत्रता के नाम पर मीडिया को ऐसी छूट नहीं देना चाहिएं की जो व्यक्ति.समाज.व राष्ट्र का संबर्धन संरक्षंण के बजाय विध्वंसात्मक विघटन को बढ़ावा दे। मीडिया को राष्ट्रीय सामाजिक और आर्थिक विकास में अपनी सक्रिय भूमिका निभाना चाहिए। दलित,वंचित,शोषित, उपेक्षित महिला के उत्थान में मीडिया धारदार हाथियार बने उसे इन दायित्यों का निर्वाह करना चाहिऐ। संतुलित,समावेशी व सर्वहारा का हम कदम बनकर भूख भय व भ्रष्टाचार के विरूद्ध जनमत निर्माण की भूमिका मीडिया को होनी चाहिए।

संदर्भ/ग्रन्थ

1. भादुडी, अमित,नायर दीपक (1996)-दि इंटेलीजेन्ट परसन्स गाइड टू लिबरलाइजेशन पेन्गुइन बुक **2.** दोषी एस.एल (2002)आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता एवं नव समजाशास्त्रीय सिद्धांत रावत पब्लिकेशंस, जयपुर **3.** द्विवेदी राधेश्याम 1994 -महिलाओ का उत्पीडन और विधिक उपचार मल्होत्रा पब्लिशिंग इलाहाबाद । **4.** लवानिया डा. एम.एस. 2006 - भारतीय महिलाओ का समाजशास्त्र रिसर्च पब्लि.जयपुर **5.** मैकलुहने मार्शन 1964- अन्डर स्टैन्डिग मीडिया : द एक्स्टेशन आफ मैन मेक्ग्रा हिल कम्पनी न्यूयार्क । **6.** पाठक विजया संक.-संपा. 2000- मीडिया समग्र आयाम जगत पाइक पत्रकारिता संस्थान भोपाल म.प्र. **7.** सिंह योगेन्द्र 2006-कल्चरल चेंज अन इण्डिया रावत पब्लिकेशन्स जयपुर।

जाति प्रथा- भारतीय समाज, निरंतरता एवं परिवर्तन के मध्य एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. रश्मि दुबे *

जाति-व्यवस्था भारतीय सामाजिक व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता रही है और भारत में शायद ही कोई सामाजिक समूह ऐसा हो जो इसके प्रभाव से अपने को मुक्त रख सका हो। जाति-प्रथा अपने सदस्यों पर जन्म, विवाह, खान-पान, पेशा व सामाजिक सहवास आदि के संबंध में अनेक प्रतिबंध लगाती है और इस रूप में सामाजिक नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण साधन भी है। सामान्यतया एक व्यवस्था अथवा प्रणाली के रूप में जाति से मिलते-जुलते निषेध और सामाजिक दूरी की भावना संसार के सभी मानव प्राणियों में विद्यमान है, लेकिन भारतीय समाज में यह चरम रूप में देखने को मिलती है।[1]

जाति-प्रथा का विषद विवेचन करने के लिए यह आवश्यक है कि हम उसके गतिशील पक्ष का अध्ययन करें। कुछ लोग ऐसे भी हैं जो जाति-व्यवस्था को एक पुरातन, शाश्वत एवं स्थिर संस्था मानते हैं, किन्तु परिवर्तन प्रकृति का नियम है और कोई भी वस्तु परिवर्तन से परे नहीं है। समय के साथ जाति-व्यवस्था में भी अनेक परिवर्तन हुए हैं और इसका वर्तमान स्वरूप पुरातन स्वरूप से भिन्न है। जाति की गत्यात्मकता के दो पक्ष हैं- प्रथम, जाति-व्यवस्था की ऐतिहासिक विवेचना और द्वितीय, वर्तमान समय में जाति-व्यवस्था में होने वाले परिवर्तन।[2] जाति की गतिशीलता या ऐतिहासिकता की व्याख्या करते हुए डॉ. घुरिये ने जाति के इतिहास को चार युगों- वैदिक काल, उत्तार-वैदिक काल, धर्मशास्त्र काल और वर्तमान काल में बांटा है।[3]

वैदिक काल- यह काल ईसा से 200 वर्ष पूर्व से लेकर 600 वर्ष पूर्व माना जाता है। ऋग्वेद और ब्राह्मण ग्रंथ इस काल के प्रमुख ग्रंथ हैं। इस युग में समाज चार वर्णो- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में बंटा हुआ था। इस युग में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की उत्पत्ति सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा के विभिन्न अंगों से मानी गयी। ऐसा माना गा कि मानव सृष्टि की रचना के लिए ब्रह्मा ने अपने मुख से ब्राह्मण, बाहुओं से क्षत्रिय, उदर से वैश्य और पैरों से शूद्र उत्पन्न किए।[4] इस युग में इन वर्णो, में कठोरता नहीं थी। इस युग में वर्ण शब्द का प्रयोग रंग के लिए किया गया और चार वर्णो के चार रंग मान लिए गए, जैसे, ब्राह्मण को श्वेत वर्ण का, क्षत्रिय को रक्त वर्ण का, वैश्य को पीत वर्ण का और शूद्रों को कृष्ण वर्ण का माना गया। इस युग में वर्णो पर पेशे का भी कोई प्रतिबंध नहीं था और एक वर्ण का व्यक्ति दूसरे वर्ण का पेशा अपना सकता था। इसी प्रकार से विवाह-संबंधी प्रतिबंध भी नहीं थे और एक वर्ण का व्यक्ति दूसरे वर्ण में विवाह कर सकता था। समय के साथ-साथ इस युग में चारों वर्णो ने जाति की विशेषताएं ग्रहण करना प्रारंभ कर दिया था वे अलग-अलग सामाजिक इकाई के रूप में सीमित हो चुके थे और उनके बीच उच्चता एवं निम्नता का क्रम भी तय हो चुका था। वर्णो के संस्तरण में ब्राह्मणों की स्थिति सर्वोच्च थी, उसके बाद क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की।[5]

उत्तर-वैदिक काल- यह काल ईसा से 600 वर्ष पूर्व से ईसा की तीसरी शताब्दी तक माना गया है। इस काल में तीन प्रकार का साहित्य मिलता है जो जाति की गतिशीलता पर प्रकाश डालता है। प्रथम, वह साहित्य जिसमें आर्यो के सामाजिक जीवन संबंधी नियमों एवं आदर्शो का उल्लेख किया गया है। दूसरा, रामायण और महाभारत का साहित्य और तीसरा, बौद्ध साहित्य। यह युग ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों के बीच संघर्ष का युग था। इस युग के साहित्य में वर्णो के साथ-साथ वर्णसंकर जातियों का भी उल्लेख किया गया है। इस युग में ''वर्ण'' शब्द के साथ-साथ सर्वप्रथम ''जाति'' शब्द का प्रयोग हुआ। जाति का तात्पर्य वर्ण अथवा वर्णो में पाए जाने वाले उपसमूहों के लिए किया गया। आश्रमों एवं ऋणों की व्यवस्था केवल ब्राह्मणों के लिए ही मानी गयी। यज्ञ करने, शिक्षा ग्रहण करने एवं संस्कार करने का अधिकार केवल ब्राह्मणों को ही था। इस प्रकार इस युग में ब्राह्मणों की स्थिति बहुत ऊंची हो गयी थी। दूसरी ओर शूद्रों की स्थिति बहुत गिर गयी थी। शूद्रों को काले रंग का माना गया और उनकी उत्पत्ति दूसरे सभी वर्णो की सेवा के लिए मानी गयी। शूद्रों को शिक्षा एवं उपनयन संस्कार का अधिकार नहीं था। शूद्रों को सम्पत्ति रखने के अधिकार से वंचित कर दिया गया। सवर्ण स्त्री के साथ संभोग करने वाले शूद्रों को जीवित जला देने या मृत्यु-दण्ड देने का विधान किया गया। ब्राह्मण पुरूष और शूद्र स्त्री के विवाह पर भी रोक लगा दी गयी। सैद्धांतिक दृष्टि से शूद्रों की स्थिति निम्न थी, किन्तु उनकी अच्छी स्थिति के प्रमाण भी मिलते हैं। इस युग में जाति के विवाह, व्यवसाय, खान-पान, छुआछूत और संस्तरण के नियमों में कठोरता आयी।[6]

शास्त्र काल- यह काल ईसा की तीसरी शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक माना जाता है। इस युग में विभिन्न संहिताओं एवं समृतियों की रचना हुई इसलिए इसे स्मृति युग भी कहा जाता है। इस युग में याज्ञवल्क्य संहिता, विष्णु संहिता, पाराशर संहिता और नारद स्मृति के आधार पर विभिन्न वर्णो के कर्तव्य निर्धारित किए गए। इस युग में दो महत्वपूर्ण विकास हुए जिनसे जाति के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक पक्षों पर प्रभाव पड़ा। एक तरफ ब्राह्मणों का दान देने की पवित्रता एवं महत्व पर जोर दिया गया और दूसरी ओर पुनर्जन्म और कर्म के सिद्धांत का प्रतिपादन करने से ब्राह्मणों का महत्व बढ़ा और जाति-व्यवस्था सुदृढ़ हुई। दूसरी ओर शूद्रों की स्थिति में और गिरावट आयी यद्यपि जैन और बौद्ध धर्म के प्रभाव के कारण शूद्रों के प्रति शास्त्रकारों में कुछ उदारता आयी। वैश्यों और शूद्रों को एक ही श्रेणी में रखा गया क्योंकि दोनों की उत्पत्ति अपेक्षाकृत अपवित्र अंगों से हुई है। अनुलोम और प्रतिलोम विवाह के कारण इस युग में जातियों की संख्या बढ़ी। इस युग में जातिगत पेशों को मान्यता दी गयी, किन्तु दूसरी जाति के व्यवसाय भी अपनाए गए। इस युग में जाति को समाज का आवश्यक और स्वाभाविक अंग माना गया और जाति-संगठन को बनाए रखने के लिए अनेक प्रयत्न किए गए।[7]

वर्तमान काल- यह काल भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना से लेकर स्वातन्त्रयोत्तार काल तक माना जाता है। इस युग में जाति में अनेक परिवर्तन हुए और कई उपजातियां अस्तित्व में आयीं। इस काल में जाति में परिवर्तन को ईसाई धर्म तथा नयी आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था ने प्रभावित किया। अंग्रेजी शासन काल में पूँजीवादी व्यवस्था का श्रीगणेश हुआ और उसके साथ औद्योगीकरण एवं नगरीकरण बढ़ा। जाति-व्यवस्था को ग्रामीण कृषि-व्यवस्था पर आधारित समाज ने प्रश्रय दिया था। पूँजीवादी औद्योगिक व्यवस्था ने उस अर्थव्यवस्था को समाप्त कर दिया। शास्त्रकारों ने जातियों में जिस ऊंच-नीच को जन्म दिया अंग्रेजी राज्य में बने कानूनों ने उसे समाप्त कर दिया। ईसाई धर्म के प्रभाव के कारण कई सुधारवादी आन्दोलन हुए। औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के कारण नवीन पेशों का जन्म हुआ। इस युग में जाति और पेशे का संबंध टूटा। अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन मिला।

* प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोतर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

पश्चिम के व्यक्तिवाद, उदारवाद और रोमांस के विचारों ने वैयक्तिक स्वतंत्रता को बढ़ावा दिया। इससे प्रेम-विवाह और अन्तर-जाति विवाह बढ़े। अंग्रेजी शासन-काल ने जाति-पंचायत के दायरे को सीमित कर दिया, विवाह, तलाक व न्याय के कार्य अब जाति पंचायत के स्थान पर न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र में आ गए। इस प्रकार अंग्रेजी शासन-काल में ऐसी प्रक्रियाएं अस्तित्व में आयीं जिनके कारण जाति-प्रथा की जड़ें हिल गयीं। स्वतंत्रता के बाद भारत में धर्म-निरपेक्ष राज्य की स्थापना हुई। जाति व प्रजातंत्र को विरोधी मानकर इसे समाप्त करने के लिए कानूनी प्रयास किए गए। संविधान में जातीय भेदभावों को समाप्त कर दिया गया। निम्न जातियों को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक संरक्षण एवं अधिकार प्रदान किए गए। जातीय संगठन बने, उनमें राजनीतिक चेतना आयी और उसका राजनीतिक महत्व बढ़ा। जजमानी संबंध शिथिल हुए और संगठित होकर संस्कृतिकरण की प्रक्रिया द्वारा निम्न जातियों ने संस्तरण में ऊंचा उठने का प्रयास किया। [8]

जाति-व्यवस्था के प्रारंभिक व्यवस्था, लक्षण और उनमें होने वाले निरंतर उतार-चढ़ाव का अध्ययन करने के पश्चात् ही हम वर्तमान समय में जातीय चेतना का विश्लेषण कर सकते हैं। जाति शब्द अंग्रेजी भाषा के कास्ट 'Caste' शब्द का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी के 'Caste'की व्युत्पत्ति पुर्तगाली भाषा के 'Caste' शब्द से हुई है जिसका अर्थ मत, विभेद तथा जाति से लिया जाता है। यह लैटिन शब्द 'Caste' से भी घनिष्ठ रूप से संबंधित है जिसका अर्थ वंशानुक्रमण पर आधारित एक विशेष सामाजिक समूह से होता है। इस प्रकार जाति का अर्थ एक विशेष आनुवांशिक समूह से होता है। जाति-व्यवस्था भारतीय समाज की आधारभूत विशेषता है। जब सामाजिक स्तरीकरण कर्म के आधार पर न होकर जन्म के आधार पर होता है तो उसे जाति कहते है। इसकी सदस्यता जैविकीय उत्तराधिकार से निश्चित होती है।[9]

इस प्रकार जाति एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसकी सदस्यता जन्म पर आधारित होती है और जो अपने सदस्यों पर खान-पान, विवाह, पेशा और सामाजिक सहवास संबंधी अनेक प्रतिबंध लागू करता है। वर्तमान समय में जाति-व्यवस्था को अनेक शक्तियों ने प्रभावित किया है और जाति की अनेक विशेषताएं परिवर्तित हो रहीं हैं। जाति-प्रथा में संस्तरण की व्यवस्था पायी जाती है जिसमें प्रत्येक जाति का स्थान निर्धारित है। सैद्धांतिक दृष्टि से एक व्यक्ति अपने जीवनकाल में जाति नहीं बदल सकता क्योंकि इसकी सदस्यता जन्म से निर्धारित होती है अर्थात् व्यक्ति जिस जाति में जन्म लेता है, जीवन-पर्यन्त उसी का सदस्य बना रहता है। यह सब कुछ होने के उपरांत भी भारत में जातियां स्थिर नहीं रही हैं, उनमें गतिशीलता और परिवर्तन की प्रक्रिया सदैव चलती रही है और कभी एक संपूर्ण जाति तो कभी उसका एक समूह या अंश जातीय संस्तरण में ऊपर या नीचे की ओर गमन करता रहा है। एक मुख्य जाति का टूटकर विभिन्न उपजातियों या उप-उपजातियों में बंट जाने और विभिन्न उपजातियों द्वारा एक जाति का नाम ग्रहण कर लेने की प्रक्रिया एक ऐतिहासिक तथ्य है। इन प्रक्रियाओं को विखण्डन या बिखराव से तात्पर्य एक जाति का विभिन्न उपजातियों या उप-उपजातियों में विभाजन से है। इस प्रक्रिया से नयी उपजातियों का निर्माण होता है। [10] जाति प्रथा में परिवर्तित परिस्थितियों के लिये विखण्डन एवं एकत्रीकरण के कारणों का उल्लेख डॉ. एम.एन. श्री-निवास ने कुछ बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया है-[11]

✻ हिन्दु समाज व्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, चार वर्ण माने गए हैं। प्रथम तीन वर्णो की अपने वर्ण के अतिरिक्त अपने से नीचे के सभी वर्णो से विवाह की प्राचीनकाल में स्वीकृति थी। वह विवाह जिसमें एक उच्च वर्ण का लड़का अपने से निम्न वर्ण की लड़की से विवाह करता है अनुलोम विवाह कहलाता है। इसके विपरीत निम्न वर्ण का लड़का जब उच्च वर्ण की लड़की से विवाह करता है तो उसे प्रतिलोम विवाह कहते हैं। जो लोग जाति अन्तर्विवाह के नियमों का उल्लंघन कर किसी दूसरी जाति में विवाह कर लेते हैं, उन्हें जाति द्वारा बहिष्कृत कर दिया जाता है। इस प्रकार से अन्तर्जातीय विवाह करने वाले व्यक्ति एक नयी उपजाति का निर्माण कर लेते हैं।

✻ जाति-प्रथा में हमें संस्तरण की व्यवस्था देखने को मिलती है जिसके अनुसार सभी जातियों को उच्चता और निम्नता के क्रम में रखा गया है। इस व्यवस्था में सभी जातियों की एक निश्चित सामाजिक प्रस्थिति है। जब कोई निम्न जाति या उप-जाति या उसका कोई समूह जाति में ही कोई विशिष्ट और महत्वपूर्ण उप-जाति बनना चाहता है, या पहले से विद्यमान किसी उच्च जाति में सम्मिलित होना चाहता है, तब भी जाति में विखण्डन की प्रक्रिया प्रारंभ होती है। निम्न और मध्यम श्रेणी की जातियों के परिवार उच्च पदों को प्राप्त कर अपना पुराना जातीय नाम बदलकर, उच्च जाति से जुड़ने का प्रयास कर रहे हैं।

✻ विभिन्न उपजातियों द्वारा समान व्यवसाय अपनाने से एकत्रीकरण उत्पन्न होता है। इसी प्रकार से जाति का कोई समूह अपने परम्परात्मक व्यवसाय को त्याग कर उसके स्थान पर कोई नवीन व्यवसाय ग्रहण कर लेता है तो यह समूह आगे चलकर एक उपजाति के रूप में विकसित हो जाता है। नवीन व्यवसाय अपनाने के पीछे समाज में उच्च प्रस्थिति प्राप्त करना भी होता है। इससे विखण्डन की प्रक्रिया क्रियाशील होती है।

✻ जब कोई जाति अथवा उसका कोई समूह आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो जाता है तो वह अपनी जाति से परम्परात्मक संबंध तोड़ लेता है और समाज में उच्च पद और प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए एक नयी उपजाति का निर्माण कर लेता है। जब भी कोई जाति समृद्ध हो जाती है, तो वह पहले से श्रेष्ठ जाति होने का दावा करने लगती है।

✻ संस्कृतिकरण एवं ब्राह्मणीकरण ने जातियों में विखंडन और एकत्रीकरण को बढ़ावा दिया है। संस्कृतिकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई निम्न हिन्दु जाति या जनजाति या कोई बाह्य समूह किसी उच्च और प्राय: द्विज जाति की दिशा में अपने रीति-रिवाज, कर्मकाण्ड, विचारधारा और पद्धति को बदलता है। इस प्रकार से उच्च जातियों की जीवन-विधि, खान-पान, पहनावा, रहन-सहन, रीति-रिवाज और प्रथाओं का अनुकरण कर निम्न जातियां जब उच्च प्रस्थिति प्राप्त करने का प्रयत्न करती हैं, तब भी जाति-प्रथा में विखण्डन और एकत्रीकरण की प्रक्रिया क्रियाशील होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जाति-प्रथा में विखण्डन एवं एकत्रीकरण की प्रक्रिया सदैव गतिशील रही है जो कि जाति की गतिशीलता का भी सूचक है। जाति-प्रथा सामाजिक गतिशीलता की विरोधी रही है फिर भी समय-समय पर इसमें गतिशीलता दिखाई देती रही है। समकालीन भारत में तो परिवर्तन की नवीन शक्तियों ने इसे और बढ़ावा दिया है। अब जातीय नियंत्रण शिथिल हुए हैं और जाति के स्थान पर व्यक्ति का महत्व बढ़ा है, इससे भी सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि हुई है। आज जाति को सामाजिक गतिशीलता में सामान्यत: बाधक नहीं माना जा सकता, क्योंकि व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारण में अन्य कारकों का भी सापेक्ष महत्व बढ़ा हैं। [12]

संदर्भ सूची ✻ 1. अम्बेडकर, बी.आर. : कास्ट इन इंडिया, जलंधर भीम पत्रिका प्रकाशन, 1977 ✻ 2. घुरिये, जी.एस. : कास्ट एण्ड रेस इन इंडिया, पॉपुलर प्रकाशन, बॉम्बे, 1969 ✻ 3. घुरिये, जी.एस. : तदैव ✻ 4. घुरिये, जी.एस. : तदैव ✻ 5. घुरिये, जी.एस. : तदैव ✻ 6. घुरिये, जी.एस. : तदैव ✻ 7. घुरिये, जी.एस. : तदैव ✻ 8. घुरिये, जी.एस. : तदैव ✻ 9. कर्वे, इरावती : व्हॉट इज कास्ट, दि इकोनॉमिक वीकली, 1958 ✻ 10. श्रीनिवास, एम.एन. : सोषियल चेन्ज इन मॉडर्न इंडिया, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रस, लॉस एंजिलिस, 1966 ✻ 11. श्रीनिवास, एम.एन. : तदैव ✻ 12. श्रीनिवास, एम.एन. : मोबिलिटी इन दी कास्ट सिस्टम, शिकागो पब्लिशिंग कंपनी, शिकागो, 1968

Manju Kapoor's Difficult Daughters : A Personification of New Women

Dr. Amitabh Dubey *

Women, the creator of the world, are not treated on at par with men in the society they are portrayed as meek and submissive, who play a subservient role to father, husband, or son. Since independence, many Indian women novelists in English have presented woman as the central concerns in their novels. It is a matter of great pride that Indian Women's fiction has come into its own and is recognized as literature with a substance. Over the past few decades women have contributed significantly to life and literature by interrogating and exploring their own lives and that of other women. Today Indian Women's fiction is dealing with multiple issues concerning self and society. And much of women's writing is primarily a critique of social justice and equality in a patriarchal society. A woman's quest for identity and redefining herself finds reflection in their writings.

Women's Studies have gained believability as a subject and a mode of enquiry. Unraveling their private spheres it has also exhibited the inner dreams, desires and dilemmas of women. The Western literary tradition has left an indelible impression on English writing in India. Today feminist literary theory has emerged as a significant body of criticism focusing on the multiple aspects of the woman question. Sherry Ortner looks at "the universal devaluation of women...by postulating that women are seen as closer to nature than men (who are) seen as...occupying the high ground of culture. The culture/nature distinction is itself a product of culture..."[1] the thrust of her argument is that woman is granted a status inferior to man. This has deeper implications as it not only circumscribes and restricts her function but also devalues woman. It is also believed that woman is incapable of making choices she has to follow the culture of obedience. The image of women in fiction has undergone a change during the last four decades. Women writers have moved away from traditional portrayals of enduring, self-sacrificing women toward conflicted female characters searching for identity, no longer characterized and defined simply in terms of their victim status. In contrast to earlier novels, female characters from the 1980 onwards assert themselves and defy marriage and motherhood.[2] Recent writers depict both the diversity of women and the diversity within each woman, rather than limiting the lives of women to one ideal. They make society aware of women's demands, and in providing a medium for self-expression and, thus, re-writing the history of India.

Manju Kapoor, recipient of the Commonwealth Writer' Prize for Best First Book (Eurasia region) Difficult Daughters, has a significant contribution in this direction. The women in the novels of Manju Kapoor seem to be the personification of new women who have been carrying the burden of inhibition since ages and want to be free now. Confined in the socio-cultural surroundings they suffer inwardly. The writer clearly shows the dilemma of women who carry the burden of being female as well as the added responsibility of being mothers to members of their own sex. In the traditional social milieu of the novel where mothers and daughters exist, marriage is regarded as the ultimate goal and destiny from which these women cannot escape. Knowledge and speech are considered as undesirable and dangerous traits for women. Manju Kapur succeeds in presenting the real picture of women in a male-dominated society. Her female protagonists are mostly educated aspiring individuals caged within the confines of conservative society. Their education leads them to independent thinking, for which their family and society become intolerant towards them. Them struggle between tradition and modernity.

It is their individual struggle with family and society through which they plunge into a dedicated effort to carve an identity for themselves as qualified women with faultless backgrounds. The novelist has portrayed her protagonists as women caught in the conflict between the passions of the flesh and the yearning to be a part of the political and intellectual movements of the day. Their free spirits are curbed and all they do is 'adjust, compromise and adapt'[3]

Manju Kapoor's Difficult Daughters is the story of young woman, named Virmati born in Amritsar into an austere and high minded household. The story tells how she is torn between family duties, the desire for education and ellicit love. This is a story of sorrow, love and compromise. It displays a very compulsive and a creative conviction. The very title of the novel 'Difficult Daughters' is an indication to the message that a woman, who tries in search of an identity, is branded a difficult daughter by the family and the society as well. The protagonist is a rebellious daughter who embraces education and career as an alternative to arranged marriage. Virmati makes tentative moves into independence but in fact makes very few choices for herself and yearns for a conventional life with her lover. Her lover 'The Professor' (as he is primarily referred to) is a selfish and domineering character, binding Virmati to him when it would be kinder to let her go and preferring the romantic ideal to the real woman. He is as domineering as her family, albeit with different values, and her interest in education is largely shaped by what he wants her to become. Virmati is likeable but often frustrating, an intelligent woman letting everyone else control her life-a problem which isn't neatly solved. These complications mad

*** Head, Dept. of English Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.) INDIA**

the novel far more interesting.

In the character of Virmati's daughter Ida, once again we see a conflicting situation in which a woman fails to relate to her mother's life. She also does not sympathize with her mother's past. In Virmati, Ida finds a woman she would never like to be.Virmati's thirst for knowledge is stifled by her foolish decision to love. She too is trapped in the bogey of sexual immaturity and subservience. As a mother to her siblings she comes across as extremely caring and dutiful. Torn between duty and desire, loving and knowing, responsibility and restraint her intrinsic vitality and enthusiasm can do little to make her happy. In Manju Kapoor's novels woman sexuality is a "domain of restriction, repression and danger" and for a man it is "domain of exploration, pleasure and agency." [4] Denial and freedom are seen as contradictory to each other. And freedom for women is never a question of choice. It is to be fought for. Women have either you give it up and continue living like a stifled toad or rebel and snatch it . Even if they do so they have to be ready to live with a permanent sulk, anger and guilt. Though the novel doesn't seem to profess or propagate feministic outlook yet there is an undercurrent of feministic autonomy and separate identity. Vandita Mishra comments in The Pioneer: "Kapoor never permits Virmati any assertion of power of freedom. Because even as she breaks free from old prisons, she is locked into newer ones. Her relationship with the Professor, for instance....Even years of studying and working alone do not give her the confidence to strike independent roots and grow...Eventually, marriage to the man of her choice in no triumph either...[5]

Virmati has to fight against the power of the mother as well as the oppressive forces of patriarchy symbolized by the mother figure. The rebel in Virmati might have actually exchanged one king of slavery for another. But towards the end she becomes free, free even from the oppressive love of her husband. Virmati never corresponds to the age old tradition but makes Ida to fit in the channel of the family. In her futile attempt she tries to keep her under control. But Ida emerges a woman of no passion. Virmati was a difficult daughter for her mother and Ida is for her. Sumita Pal rightly focuses on the autobiographical nature of the novel:

"Like Virmati, Manju Kapoor was born in Amritsar and teaches in college. Her family was victim of partition and was Arya-Smajis like Virmati's family...Manju Kapoor admits that she herself has been a difficult daughter for her mother whose priority was marriage and she, in turn wants her daughters to have good jobs". [6]

But one can clearly see that whenever Virmati tries to assert her autonomy and separate identity, she is repulsed and ordered to be part of the contemporary society, its culture and rituals by psychotherapy of the Professor. Thus Virmati dares to cross one patriarchal threshold, she is caught into another, where her free spirit is curbed and all she does is adjust, compromise and adapt. She is a loser whose acts totally alienate her from her family and she fails to create a space for herself for which she had been striving all alone. Perhaps it is this inability of Virmati to strike independent roots and grow and forces Ida to remark 'the one think I had wanted was not to be like my mother.

This shows that feminism is the consequence of the culture of society shaped and governed by men to suit their needs and interests regardless of the basic needs and happiness of women. The aspiration of Virmati is condemned to failure, thanks to the incomprehension she receives from both her own family and that of the man she marries-but also thanks to her won mistakes, for no-one obliged her to marry who became her husband, and she was free not to make the choice she did. Gur Pyari Jandial (2003), correctly points about the unfruitful attempt of Virmati: 'what is necessary is to break the patriarchal mould, and for Virmati to have tried to do that in the forties was a great achievement'.[7]

The novelist has portrayed her protagonists as woman caught in the conflict between the passions of the flesh and a yearning to be a part of the political and intellectual movements of the day. The women of India have indeed achieved their success in half a century of Independence, but if there is to be a true female, independence, much remains to be done. The fight for autonomy and separate identity remains an unfinished combat and a million dollar question. Throughout this novel declaration by Ida echoes that she doesn't want to be like her mother and wants to assert her autonomy and separate identity. She refuses to do any compromise as her mother did. The concluding lines of the novel reiterate Ida's rejection of Virmati not as a mother but as woman.

"This book weaves a connection between my mother and me, each word-brick in a mansion I made with my head and my heart. Now live in it, Mama and leave me be. Do not haunt me anymore."[8] (Kumar 108) Ida, who grew up struggling to be a model daughter, does not have the heart to reject Virmati, the mother but her head, the rationale, rejects her as a woman, after having an insight into Virmati's past. Thus Manju Kapoor's 'Difficult Daughters' is a feminist discourse where the quest for emancipation is represented in a very immature stage, keeping in mind the Indian context.

References:

1. Ortner B. Sherry. Is Female to Male as Nature is to Culture? (In woman, Culture and societeyed. Roasaldo and Lamphere) Stanford, 1947.P83-84.
2. Ahmad Aijaz, In Theory. Delhi, 1994.
3. Mayur Chhikara, Manju Kapoor's Difficult Daughters: A Saga of Feminist Autonomy and Separate Identity, in language in India, vol.-10-2010
4. Vance Carol Pleasure and danger: Exploring female sexuality.Boston, 1984.
5. The Pioneer. New Delhi: 1 August, 1998.
6. Pal, Sumita. "The Mother-Daughter Conflict in Manju Kapur's Difficult Daughters" Indian writing in English in the New Millennium. Edited by R.K. Dhawan. New Delhi:I.A.E.S., 2000.
7. Jandial, Gur Pyari. 'Evolving a Feminist Tradition: The Novels of Shashi Deshpande and Manju Kapur'. In Atlantic Literary Review [Delhi], 4.3.2003 (awaiting publication).
8. Kumar, Gajendra. Indian English Literature:A New Perspective. New Delhi: Sarcup and Sons, 2001.

The Message of Environmental Conservation from Kalidas's Abhigyan Shakuntalam.

Dr. Sumanlata Gupta *

Abstract - Conservation of environment for the existence of human beings is very essential. Since time immemorial poets, dramatists and writers have sung praises of wild expanse in their literature. In Kalidas's Abhigyan Shakuntalam we find nature working in close harmony with human life as well as there is a reflection of human feelings and aspirations. All the seven acts of the drama give the message that we should conserve this beautiful nature as it is the part and parcel of our life.

Keywords : Environment , conservation, harmony, feelings Abhigyan shakuntalam,hermitage. The Message of environmental conservation from Kalidas's Abhigyan Shakuntalam.

'Nature has been so kind to man. Ever since its appearance on the earth's surface man has been dependent on nature for his subsistence. He needed edible plants and animals. He identified these natural gifts available around him and learnt to use them. Everything that comes from nature has some utility for man. Land, sun sine, wind, forest and wildlife were present much before the appearance of man on the earth.'[1] Forest and wildlife are essential for ecological balance of an area. Forest are important components of our environment. Conservation of environment appeal "to the respect for life, a reverence for the living world, a sense of intrinsic value in nature and a concept of divine creation."[2]

'Since time immemorial poets, dramatists and writers have sung praises of wild expanse, forests, rivers, mountains birds and the whole of majestic nature. Pristine environment has been one of the major sources of inspiration.'[3]

Kalidas has been hailed as poet of the nature. He is able to capture the vibrant aspects of nature with his keen observation and make them the lovely backdrop of his plays. The play Abhigyan Shakuntalam has its setting amidst beautiful forest and gives the message of environmental conservation.

The Benedictory stanza in Abhigyan Shakuntalam reveals the powerful images of nature.

'Eight forms has Shiva, Lord of all the King;
And these are water, first created things;
And the fire, which speeds sacrifice begun;
The priest; and time's dividers, moon and sun;
The all embracing ether, path of sound;
The earth, wherein all seeds of life are found;
And air, the breath of life:… *(Prologue)*

'The fine elements - earth, water, light, air and ether exist in the proportion in the Universe and if their quantity or quality is disturbed, the whole cosmic structure would be disturbed. Our scriptures give divinity to nature and ask us to conserve it.'[4]

Kalidas loves nature deeply without doing any harm to it. Prologue of the play shows the beautiful description of summer season in the song of the actress:

The Siris - blossoms fair,
With pollen laden,
Are plucked to deck her hair
By many a maiden,
But gently; flowers like these
Are kissed by eager bees. *(Prologue)*

Kalidas 's deep love for nature is revealed in the above stanza. Handsome maids gather the Siris flowers to deck their hair but without doing any harm as well as these flowers are kissed by the eager bees without harming them. Most king loved to hunt, but it was disapproved of by Brahmins, and hunting is forbidden in the sacred grove where the ascetics live. King Dushyanta is chasing a spotted deer, but suddenly there is a voice - O, king! this deer belongs to the hermitage; Please do not kill this.

Why should this tender form expire,
As blossoms perish in the fire? *Act I*

Here kings arrows are cruel in the context of hermitage. He gives the message of preservation of wildlife which gives us grew us happiness and love. Even 'the trustful deer do not run away as we draw near' *Act I*

Beauty of forest is inherent in Shakuntala. She is an integral part of flora and fauna;

Her arms are tender shoots; her lips
Are blossoms red and warm;
Bewitching youth begins to flower in beauty on her form. *Act I*

Great kings are often portrayed as destroyers of demons not of animals. Here also Dushyanta has no desire for hunting.

For I am not able to bend this strung bow;
The bow is strung, its arrow near;

*** Professor English, Govt. S. G. S. P. G. College, Ganjbasoda Distt. - Vidisha (M.P.) INDIA**

And yet I can not bend
That bow against the fawns who share
Soft glances with their friends. *Act II*

Vicinity of hermitage is not in hunting but let they enjoy their life.

The horned buffalo may shake
The turbid water of the lake;
Shade - seeking deer may chew the cud,
Boars trample swamp - grass in the mud. Act II

Kalidas was the priest of beautiful nature, We see here preference for the natural over the cultivated. When clown ridicules the king for having chosen to desire a hermit girl than the woman in his palace, like that of a man who lost taste for dates and long for sour tamarind. Beauty of hermitage is more appealing than the beauty of the kingly palaces:

She seems a flower of whose fragrance none has tasted,
A gem uncut by workman's tool,
A branch no desecrating hands have wastage,
Fresh honey, beautiful cool. Act II

There is nothing in this world without love. Dushyanta's intensely romantic encounter with shakuntala takes place amids nature.

' Cooling salves were used in high summer,
And can also signify that the user is burning with passion.' [6]

Dushyanta's love for shakuntala is like water that flows straight from a level land to a deep valley. He is so overwhelmed by love that -

' Moon darts fire from the frosty beams;
Thy flowering arrow cut and sting; *Act III*

Shakuntala usually spends intensely hot noon on the bank of river Malini where there are bower of creepers, Dushyanta also feels pleasant in the lap of nature:

He feels the breeze stirring. *Act III*

This is a pleasant spot, with the wind among the trees:

Limbs that love fever seizes,
Their fervent welcome pay
To lotus - fragrant breezes
That bear the river spray. *Act III*

With this Kalidas has proved that intensity of feeling love is more powerful amids natural environment than palaces of kings. Dushyanta and Shakuntala both are suffering the acute pain due to love -

Though love torment you, slender maid,
Yet he consumes me quit
As Day light shuts night blooming flowers
And slays the moons out right: *Act III*

Healings from the pain of love is also Possible through nature,

'Shell I employ the moistened lotus leaf
To fan away your wearing and grief ?
Or take away your lily feet upon my knee
And rub them till you rest more easily ? *Act III*

King Dushyanyta feels happy after mating with Shakuntala:

No sooner did the thirsty bird
With parching throat complain;
Than farming clouds in heaven stirred
And sent the streaming rain. *Act III*

When Shakuntala goes back with Gautami Dushyanta wants to get solace in the lap of Nature:

The flower - strewn bed whereon her body tossed;
The bracelet, fallen from her arm and lost;
The dear love - missive, in the lotus - leaf
Cut by her nails:… *Act III*

A beautiful picture of dawn has been painted by Kalidas gives the message of vicissitude of life:

The moon behind the western mount is sinking;
The eastern sun is heralded by down;
From heavens twin lights, Their fall and glory linking,
Brave lessons of submission may be drawn. *Act IV*

The simultaneously rising and setting of the two luminaries of heaven offers a lesson to the people of the world regarding vicissitudes of their life. And again :

Night - blooming lilies, when moon is hidden,
Have naught but memories of beautiful life. *Act IV*

And again:

The moon that topped the loftiest mountain ranges;
That slew the darkness in the midmost sky,
Is fallen from heaven, and all her glory changes;
So high the rise, So low at last to die ! *Act IV*

And again:

On jujube - trees the blushing dew drops falter;
The peacock wakes and leaves the cottage - thatch;
A dear is rising near the hoof marked alter,
And stretching, stands, the days new life to catch. *Act IV*

'Kalidas's Knowledge of nature is not only Sympathetic, it is also minutely accurate. Not only are the snows and windy music of Himalayas, the mighty current of the sacred Gangas, his possession; his too are smaller streams and trees and every lift lest flower.'[7]

Our daily needs are fulfilled by this nature. Flora and fauna provide us each and every thing to survive upon this earth. In Abhigyan Shakuntalam also -

One tree bore fruits, a silken marriage dress
That shamed the moon in its white loveliness;
Another gave us lac - dye for the feet;
From other fairy hands extended sweet
Like flowering twigs, as far as to wrist,
And gave us gems, to adorn her as we list. *Act IV*

There for we should take care of natural environment as

shankuntala did -

O trees of pious grove, in which the fairies dwell,
She would not drink till she had wet
Your roots, sisters duty, nor pluck your flowers; she loves you yet
Far more then selfish beauty. *Act IV*

' Indian spirituality is all about showing respect to all living being - animals, trees, rocks, and even water and lead a positive and healthy life. It is believed that the super creator has put each one of us in this world for a purpose and that purpose is to be a compassionate caring and loving to one another. The great Indian spiritual personalities and gurus have played an important role in spreading the message of love, care and the need for positive living all over the world.' [8]

This nature has life. It weeps with our sorrows and laughs with our sufferings. Shakuntala is parting for husband's home. Nature is bidding farewell -

The grass drops from the feeling doc;
The peahen stops her dance;
Pale, trembling leaves are falling slow,
The tears of clinging plants. *Act IV*

This nature is full of human relations. Shakuntala while parting approaches the vine and embraces it. She wants father Kanva to send word when the female deer delivers young one. She moves to tears at the unwillingness of the young deer to part from her. There is not a living being in the entire hermitage that does not feel grieved to bid good bye. Even the bird Sheldrake does not respond to the call of his male:

The Sheldrake does not heed his male
Who calls behind the lotus - leaf;
He drops the lily from his bill
And turns on you a glance of grief. *Act IV*

Nature is very powerful. It works day and night without any rest for the welfare of human beings:

The sun unyokes his horses never;
Blows night and day the breeze; *Act IV*

'Rarely has a man walked our earth who observed the phenomena of living nature as accurately as he, though his accuracy was of course that of the poet, Not that of the scientist.' [9]

Nature obeys kings commands:

The mango branches are in blooms,
Yet pollen does not form;
The cuckoo's song sticks in his throat,
Although the days are warm; *Act VI Seen II*

King Dushyanta says to Metali that on account of our quick descend plains appear to melt:

The plans appear to melt and fall
From mountain peaks that grow more tall; *Act VII*

" It is hardly true to say that Kalidas Personifies rivers and mountains and trees;
to him they have a conscious individuality as truly and as certainly as animals or men or Gods. Fully to appreciate Kalidas's poetry one must have spent some weeks at least among mountains and forests untouched by man; there the conviction grows that trees and flowers are indeed individuals, fully conscious of a personal life and happy in that life. The return to urban surrounding makes the vision fade; yet the memory remains, like a great love or a glimpse of mystic insight, as an intuitive conviction of a higher truth." [10]

Living in the hustle - bustle of everyday life, when one goes amides nature, new energy evokes from within. If kalidas has its setting in concrete palaces without flora and fauna, impact would not be that appealing. What appeals to all of us in this drama is its environment. This gives universal message of environmental conservation. This nature is divine and if we pollute it, we'll disobey divinity.

Environment conservation is a very strong and powerful message from Abhigyan Shakuntalam. Love for literature is an evergreen technology to conserve environment.

References And Backgrounrd Reading:

1. Sharma, P.D. 2004. Ecology and Environment. Rastogi Publications Shivaji Road, Meerut- 250002 India - Page 315
2. Ibid - Page 628
3. Tiwari Shubha. A message of Environmental Conservation from the world of literature. Boloji.com
4. Ibid.
5. Kalidas : The loom of Time, Panguin Books. Study guide for kalidas : The recognition of Shakuntala. Act II
6. Ibid. Act III
7. Kalidas, translation of Shakuntals and other works, by Arthur W. Ryder (London: J.M. Dent, 1920) Chapter : Introduction Kalidas - His Life And Writings.
8. http://www.iloveindia.com/wildlife/wildlife conservation.html. (spirituality)
9. Kalidas,Translation of Shakuntala And Other Works, By Arthur W. Ryder (London: J.M. Dent, 1920) Chapter : Introduction Kalidas His Life And Writings.
10. Ibid
11. Shakuntala : A Play In Seven Acts Translated By Arthur W. Ryder.
12. Ibid.(All the quotations related to this play are taken from this edition.)

****

Concepts Of Tradition And Modernity In The Novels Of Shashi Deshpande

Prof. Mamta Garg *

Change is the law of nature. 'Old order change the yielding place to new.' When everything undergoes through a transformed stage, the socio- logical conditions of the society also change with the rapidly changing scenario and the writers are primarily concerned to describe the changed conditions of their time in their writings.

Shahshi Deshpande is one such famous writer in the contemporary time who is engaged in the task to present a social world of changing values. She describes in her novels the juxta position of many complex relationships where both the traditions and modernity co- exist. In her novels both the males and females live together representing themselves in different fields, very closely connected to their set codes of lives. Due to old traditions bound world which governs them, an unforeseen gap is created among themselves which ultimately affects the family ties and proves disastrous. The novels of Shashi Deshpande deal with the issues and themes which originate from the situations of women standing at the crossroads of transitional society, changing from traditional to modern. In a very sensitive manner, Shashi Deshpande touches the predicament of women caught between her keen desire to realize her own self and the dominance of patriarchy. Her young heroines rebel against the traditional way of life and patriarchal values. They can't remain silent sufferers rather with a spirit of defiance handle their own situations. The words, very closely associated with the paragon of ideal women like 'sacrifice', 'patience', 'self-denial', 'devotion' etc, may be meaningful for certain women characters like Sarita in 'The Dark Holds No Terror' who is always underestimated, or for Indu, Mini and Akka in Roots and Shadows, but Jaya in That Long Silence can't afford to be a scapegoat. Mira, in The Binding Wine, disdains the way her mother has been surrendering herself to her husband without realizing her own identity.

The condition of women has changed over the centuries. A reasonable new perception of women has emerged in the present time. The patriarchal culture which considered women as inferior and inefficient is over. Women are no longer meek and submissive. She is a liberated woman enjoying her own rights as an individual and also as a 'Human Being'. So the second generation Indian women novelists have shifted from portraying women as meek and humble to the portrayal of the world of conflicted women characters searching for identity not ready to yield before the male- dominated world. K. V. Sunderam observes in this context, "There has been a very slow evolution in women's writing to come to its own. This may be owing to several reasons like a lack of education, their social and familial obligations, tradition of child marriage, child bearing and child rearing etc. History has ignored and submerged their contributions, the critics have dismisses their works and its aesthetics on the ground that they were concerned with a limited world of experience because they were more confined to their domestic duties and liabilities." The image of women in fiction has transformed like anything now. And a number of novelists like Anita Desai, Shashi Deshpande, Bharti Mukherjee and several others have retaliated to Indian life on one hand and Indian women in particular. The attitude of Indian women from submission and negation to assertion and affirmation has been presented in their novels of second generation women novelists. With their expertise, these novelists have shattered the myth regarding the issue that women find fulfillment in marriage; rather feminine psyche has been portrayed differently by them.

If Shashi Deshpande presents the weaknesses of women, simultaneously she presents the strengths also of women. She has described as is observed by Dhawan- "Vulnerability of women. The Power of women. The deviousness of women. The helplessness of women. The courage of women."

No aspect related with women has been left untouched by Shashi Deshpande. She has probed the inner psyche of women. That's why Atray and Kirpal observe in this context, "Shashi Deshpande's novels electrically employ the postmortem technique of deconstructing patriarchal culture and customs, and revealing these to be man-made constructs."

It won't be an exaggeration to say that Shashi Deshpande has done the postmortem of the patriarchal system. Because of her these concerns she has been called a Feminist, though she resents being called so, as she herself has stated: "Is writing by women only for women... When I sit down to write,

*** Asst. Prof. in English, Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.) INDIA**

I am just a writer. My gender ceases to matter to me… We are different, yes, but once again the factors which unite us are far more important than the gender differences which divide us….. I'm a novelist, I write novels, not as a piece of work that intends to propagate feminism."

On another occasion again, she refutes being labeled exclusively as a feminist. She writes: "My writing has been categorized as 'writing about women' or 'feminist writing'. In this process, much has been missed. I have been denied the place and dignity of a writer who is dealing with issues that are human issues, of interest to all humanity."

So it is a serious mistake to call Shashi Deshpande purely as a feminist because she has explored the Human Psyche and not merely the feminine psyche. The art of Shashi Deshpande as a writer lies in the fact that she selects those situations which are very close to the Indian women and all Indian women start identifying themselves with those situations. But whatever may be, simultaneously, we can't ignore the reality that issues related with the women are the pressing concerns of Shashi Deshpande, where both the sides of womanly figures are projected in her novels. If she has been presented as a victim of a number of atrocities inflicted upon her by the society, as a victim of tortuous physical, mental and emotional agony; she has also been presented as a changed person, having voice of their own, having the capacity to make free choice, without following the choice of their male counterparts. Betty Fridman holds the view that caught between the two worlds, women also need to define themselves, their place in the society and their relationship. He states:

"For a women, as for a man, the need for self fulfillment-autonomy, self realization, independence, individuality, self-actualization- is as important as the sexual need, with as serious consequences when it is thwarted."

In Indian Writing in English, Shashi Deshpande is a strong voice to present the conflict between traditional and Modern attitudes of women. Her protagonists refuse to sacrifice their individuality for the sake of upholding the traditional role models laid down by society for women. But they attempt to resolve their problems by a process of temporary withdrawal. In The Dark Holds No Terrors (1980), Sarita returns to her paternal home to escape from the sadistic attitude of her husband Manohar. And this withdrawal proves to be a blessing in disguise as it is only at this stage when she realizes about her individuality and the fact that being an individual she also has certain expectations of life which need to be fulfilled. She doesn't have to play merely the role of a mother, wife, sister and daughter. Rather there is something more important which is above all these roles and gives meaning to one's life. Saru undergoes great humiliation and neglect as a child when her parents discriminate between male and a female child. And after her marriage when she gains a high social status than her husband Manohar, it proves to be a bolt from the blue for her husband as it hurts his ego. His inferiority complex frustrates him and indulges in sexual sadism which has been vividly portrayed by Shashi Deshpande. This attitude exhorts Saru to leave her husband's home and leads to her transformed self.

Major novels of Shashi Deshpande trace the quest of self-definition of woman who is educated and modern. Roots and Shadows, That Long Silence, The Binding Wine, A Matter of Time trace the shift from traditional concepts to Modernity where women's urge for "inner freedom" has been projected. They accept their roles with a new awakening. Prasanna Sree views Indian women like this:

"The Indian Women- She is the one who is torn between tradition and modernity, she is one who is in search of self-identity, and she is the one who tries to give shape and content to (her) individual existence in a sexist society."

In Roots and Shadows, Indu too emerges as a woman with rebellious spirits like Sarita. In spite of being bid by Akka, she liberates herself from the traditional role of a wife and mother. Though she gets married with Jayant with her own will but this marriage proves a failure which makes her to feel as if she is hanged till death. Over dominance of her husband chokes her breath which is reflected in these lines. She says, "When I look in the mirror, I think of Jayant. When I dress I think of Jayant… Always what he wants, what he would like, what would please him…? Have I become so fluid, with no shape, no form of my own" She goes beyond what Elaine Showalter calls the "Female Phase" which is a phase of self- discovery, a turning inward freedom from the dependent or opposition, a search for identity."

The quest for liberation and emancipation of women is the dominant theme of the novels of Shashi Deshpande's writing. She depicts how in our Indian set up women are reared in a specific way since their childhood; they are trained to behave with a special code of conduct. They are reminded recurrently about their being 'WOMEN' and are injected with the values of sacrifice, forbearance and modesty. They are indoctrinated to with hold, conceal and suppress their real self. Even our traditional society, deeply under the precepts of Manu doesn't grant a woman separate identity apart from that of a daughter, wife or mother. But Shashi Deshpande's women characters in the contemporary changing scenario revolt against these prescribed role models. Standing at the cross currents of

traditional ideals and modern ones, they embrace the changed values and refuse to be the victims of patriarchal traditions, social taboos, outdated religious customs and excruciating values of their ancestors. They feel an urge to redefine their role and consequently emerge Phoenix like from the ash of traditions with Modern concepts of freedom and selfhood.

Jaya in That Long Silence is a convent educated English speaking lady with a literary taste. Mohan gets married with Jaya due to her this quality which he considers to be an asset to raise his social status and not her personal trait. He curbs her individuality and makes her to act according to his own wishes. She cuts her hair short because Mohan wants her to. She can be friendly only with those people whom Mohan likes. He even gives her new identity by changing her name from 'Jaya' to 'Suhasini', because 'Jaya' means victory and 'Suhasini' means a docile submissive woman. Once Jaya being pregnant, repulses with the odor of cooking oil and asks Mohan to cook which is something unmanly to him. It leads to the quarrel between the two and Jaya responds in bad temper which is shocking to Mohan. He argues," My mother never raised her voice against my father, however badly he behaved to her."

According to Shashi Deshpande, there is a sharp division between the female world and male world, with which women can never come at par. Beauvoir exhorts women to gain autonomy to explore and nurture their authentic self through self- realization. Jaya in That Long Silence gains this awareness when Mohan gets involved in a financial malpractice and she is forced to hide with Mohan in their old Dadar flat in Bombay. It is here Jaya contemplates her childhood and her past life. Loneliness and isolation become for her means to self knowledge and contentment. If there had not been any such crisis in her life, she would never have pondered about herself. Adele King opines:

"Jaya finds her normal routine so disrupted that for the first time she can look at her life and attempt to decide who she really is."

Her suffering initiates the process of transformation in her. It leads her towards self- revelation through writing. She gets aware that in order to be free from emotional turmoil she should continue to write. She becomes more assertive now and abandons her traditional role and clings to modernism.

Shashi Deshpande's women characters, though, bound by the shackles of tradition, ultimately overcome it and emerge as a NEW BEING with independence and with a spirit of defiance. Urmi in The Binding Wine appears to be the most rebellious of Deshpande's woman protagonist who tries her best to set the things right for every suffering woman. She gets the poems of her mother-in-law published and even admonishes Vaana, for her humbleness and exhorts her to be more assertive.

In A Matter of Time Sumi though dies in sudden accident, but she remains resolute to begin her life in a new way as a teacher and a writer, having a lot of creativity and a new confidence. The crises change the picture in her life and the dormant woman lying within her gets awakened and ultimately decides to explore her hidden talent.

Shashi Deshpande has portrayed the world of women in her novels. Their Odyssey which constitutes the enforced various roles leading thereby to suppression, subjugation and dislocation has been aptly depicted by the novelist. But another side of the coin is that women have immense potential for self actualization. How the women conquer their predicament and reveal themselves in full colors by making the society aware that their mind and vision can't be denied to them, is pertinent in the modern context. Words of Virginia Woolf in A Room of One's Own apparently are relevant:

"There is no gate, no lock, and no bolt that you can set upon the freedom of my mind."

Shashi Deshpande has explored the psyche of females with the same approach. Main concern of the novelist is to present the dilemma of the modern woman oscillating between the dichotomy of the traditional and the modern concepts. But ultimately they conquer their psychic upheaval by deciding to adhere to their SELF and liberation and also from negation to assertion. Like Phoenix, they appear to be completely 'The Newly Born Woman' at the end of their odyssey.

Works Cited

1. Atrey, Mukta and Viney Kirpal. Shashi Deshpande: A feminist study of Her Fiction. New Delhi: B.R.Publishing Corporation.1998
2. Deshpande, Shashi. Roots and Shadows. New Delhi: Penguin.1983
3. Deshpande, Shashi. The Long Silence. London: Virago.1988
4. Deshpande, Shashi. The Binding Vine. New Delhi: Penguin.1998
5. Dhawan, R.K.ed. Indian Women Novelists Vol.V. New Delhi: prestige Books.1991
6. Friedman, Betty. The Feminine Mystique. Harmondsworth: Penguin.1971
7. King, Adele. Effective Portrait. Debonair. June.1988
8. Showalter, Elainc. A Literature of Their Own: British Women Novelists from Bronte To Lessing. Princeton, New Jersey: Princeton Univ. Press. 1977
9. Surendran, K.V. Indian Women Writers: Critical Perspectives. ed. Swarup and Sons.2007
10. Woolf, Virginia. A Room of One's Own. Harmondsworth. Middlesex England. Penguin.1967

****

Interpreters and Translators : A Profession Enhancing Business Relations.

Ms. Vanashree Godbole *

Effective communication in business is all about communicating constructively with other people. It includes being able to support and encourage others, being able to give and receive constructive criticism and negotiation. In the business world, using interpreters to overcome the language barrierhas become a necessity. Even if there are common languages between businesses people, Interpreters are still preferred for a number of reasons, as:-

1. Interpreters are trained professionals in specific languages, meaning they can ensure communication between sides is as clear as possible.
2. Having an interpreter allows you to speak in your native language, ensuring you to express yourself successfully.
3. Using an interpreter helps to minimize possible expensive misunderstandings.
4. For tactical reasons in a negotiation an interpreter can help you bide time to formulate responses.
5. If properly briefed, an astute interpreter can help you with presentations and negotiations by working with you to achieve goals.
6. Interpreters assist in overcoming cross cultural differences and can act as guides in cross cultural matters.

Language is socially constructed and therefore embedded in the culture. Understanding the embedded meanings requires mastering of the language, a process that can be extremely time consuming and difficult. Misinterpreting the words or the cultural meaning associated with them may negatively affect the entire interchange. In the case of a business deal, it may be a deal-breaker. Whereas, a good interpreter can become a major asset in a successful business venture. Translating and interpreting are the art and the science of converting one language to another, usually into the native language. Translators work with written materials and interpreters deal with the spoken word. These roles require a high level of fluency and varied vocabulary to convey meaning and capture the original intention of the topic, whether technical, commercial or literary.

Interpreters and translators are the experts when it comes to translating spoken or written words into another language. They are the ones who enable the clients and business partners who do not speak the same language to communicate. These translators and interpreters provide different services. In communication 'Interpreters' deal with verbal communication while 'Translators' deal with written communication. Translators and interpreters also assist in cross-cultural communication among businesses by converting written or verbal language into the target language. They play a vital role in global business. Some of the business areas in which translators and interpreters play a key role are: Medical interpreters and translators: Localization translators, Specialized business translators, Conference interpreters.

Language skills are must for a successful career in the international business world, combination of business, culture and language works together. Language component links culture, people management, change management, HR, personnel, or one of many other business skill areas. While in earlier times, the main focus was on the translation of literature into another language, but in today's globalised world, the provision of a vast number of services is practically unthinkable without a whole team of translator. Economy, technology, international legal relations or, like in the past, the great world literature - without the expert knowledge and linguistic skills of interpreters and translators to bridge the gap between the languages and, consequently, in the cultures, there would be plenty of incomprehension. Interpreters work at meetings and conferences, translate what is said within the framework of business negotiations or before the court and are on the stage alongside VIPs or politicians, where the latter face the media. Beyond this, it is not rare for interpreters to be in charge of organizing an entire team including the corresponding technology for a conference, a sophisticated appearance and manner and a vast general knowledge are particularly important. Furthermore, careful preparations before the actual event are essential so that the interpreter is absolutely familiar with the relevance of subject matter.

*** Asst. Prof. of English, Maharani Laxmi Bai Govt. Girls P.G. College, Kila Bhavan, Indore (M.P.) INDIA**

Interpreters have primarily two different ways of doing their job - either simultaneously or consecutively. The former refers to the almost simultaneous whispering of the spoken word which can be done "live" or through the relevant technical equipment. In the case of "live transmissions", the interpreter is on the stage with the speakers; he is likely to be seated somewhere else, ensuring that speakers and guests receive the immediate translation through small device worn in the ear. Consecutive interpreting means that the contents of a speech are reproduced in the other language after the speaker is finished; other modes of interpretations are Whisper, Relay, and Liaison. In whispered interpreting the interpreter sits or stands next to the small target-language audience whilst whispering a simultaneous interpretation of the matter to hand; this method requires no equipment, Relay interpreting is usually used when there are several target languages. A source-language interpreter interprets the text to a language common to every interpreter, who then .render the message to their respective target languages .Liaison interpreting involves relaying what is spoken to one, between two, or among many people

On the other hand Translators are in charge of the written world. A qualified translator is expected to carefully analyze the text at hand, to keep in mind the purpose of the translation and to subsequently produce a target group-oriented translation. Therefore, it can be said that a translator not only needs to grasp the meaning of the individual words, but must also take into an account of potential "hidden meanings" and stylistic devices in order to understand and consider the respective background. Translators produce written translations of all kinds of texts from foreign languages into their mother tongue - or vice versa. Interpreters simultaneously or consecutively provide oral translations of the spoken word. Technical translations are assuming an increasingly bigger proportion of the trade. User manuals for cars or technical equipment, documentations or the adaptation of computer software also provide translators with plenty of work. Especially fields like these call for a sound knowledge of the language patterns of the respective countries and, perhaps even more importantly, in-depth know-how concerning the subject matter. After all, someone who attempts to translate a text on semiconductor technology without understanding the contents is not going to be able to deliver a high-quality translation.

There are several important characteristics that comprise a good interpreter besides the one that is most obvious; being able to speak in English alongwith second language proficiently. Other qualities which an interpreter possess are Objectivity, Flexibility, Good Judgment Reliability and Integrity, High Motivation to Achieve, Good Physical and Mental Health Excellent Recall/Memory, Skills and Proficiency in English as well as different sign language systems.

Because the interpreting profession serves a population with varied communication needs and language proficiencies, interpreters must be extremely versatile so that they can meet the challenges that arise in interpreted situations. Interpreters should not be viewed solely as language assistants. In addition to helping you overcome the language barrier they can also assist in many other areas such as organization, formulating strategies and advising on cross cultural differences. It is critical to see interpreters as not working for you but with you.

References:-

- Interpretation: Techniques and Exercises (Professional Interpreting in the Real World) by James Nolan (Oct 15, 20
- Found in Translation: How Language Shapes Our Lives and Transforms the World by Nataly Kelly and Jost Zetzsche (Oct 2, 2012)
- Aquinas on Being and Essence: A Translation and Interpretation by Joseph Bobik and St. Thomas Aquinas (Mar 31, 1988)
- The list of references include items those which are referred but not mentioned in the arcticle.

****

Kamala Das'An Introduction : An Attempt to Assert The Feminine Identity Against Social Norms

Dr. M.P. Sharma *

Abstract - 'An Introduction' is one of the most remarkable and popular poem of Kamala Das. In this poem, the poetess concerns herself with the question of human dignity and identity.It is an autobiographical piece where in she makes a catego-rical introspective exposition of an average woman or the girl child in the process of her growth and development under oppressive and humiliating circumstances is our cultural tradition.This lyric depicts the experience of every female entering her pubescence descending dreams to a world of many social and familial dictates.

The poem' An Introduction' is one of the most remarkable and popular poem. It is variously interpreted and applauded as intensely autobiographical and. as the poet's aesthetic manifes to. It is one of the best poetic pieces from the pen of Kamala Das ; in which the fission and fusion of different related themes with in the frame work off eminist cause, takes place with acinematic effect. Many of the the matic dimensions and variations. of her poetry are sensitively and obliquely hintedin this poem. It can the refore, be conjectured that" An Introduction" is the most representative of her poetic genrethatis, the exclusive feminist rebellion.

In "An Introduction " Kamala Das concerns her self with the question of human dignity an didentity. It is an autobiographical initiation of her poetic verse where in she makes acategorical introspective exposition of an average woman or the girl - child in the process of her growth and development under oppressive and humiliating circumstances in our cultural tradition. The poetess attitude is conspicuously proactive as opposed to the reactive attitude of main stream feminist. In fact, it is this proactive position that makes Kamala Das a Third World Feminist.

We see in this poem that every attempt by patriarchy to marginalize her is rendered in effective by her persistent refusal to change her ways. The poem is complexly 'structured, as it is about the growth of a poet's mind on one hand while on the other hand it is about the growth of a feminist consciousness. It is a double theme and deals with the language of identity of a woman as a woman. Its regionalist title situated the poet away from the colony in the orient. The advent of a robust post- colonial was announced by it. The poem begins with the following statement:

I do n't know politics but I know the names of those in power, and can repeat the mlike Days of week ,or names of months.

The poem starts in a significant way with the obvious implic at iontha the gemonic patriarchyh as kept women a way from the gamut of politics as it does not expect them to be a ware of it . Mechanically, a woman can only repeat the names of the politician safter the irmale counterparts. The use of an tithesishasits own purpose of ventilating the painful manner in which the politics of man and woman interpersonal relationships are creating a harrowing unrest in her introspective moments.

"An Introduction" is such a great poem that it has been considered as one of the most brilliant poems ever written in indo English poetry. It encompasses the whole of Das's poetic journey including the obvious postcolonial agenda. This lyric shows a desire to make one understand the workings of the feminine consciousness. It is concerned with the question of human identity. It effectively uses the confessional and the historical tone in order to highlight the questions related to a woman or an Indian poet's identity in English; and colloquial rhythm and short emphatic line heightens the musicality of the poem. She asserts herself as an individual and boldly declares that a poet as she herself is, has a right to write an any language. There is poetic delicacy coupled with the stubbornness, expressing her anger in the manner in which Kamala Das substantiates her argument. For instance :

Why not leave
Me alone critics, friends, visiting cousins,
Every one of you? Why not let me speak in
Any language I like? The language I speak
Become mine, its distortions, its queerness
All mine, mine alone. It is half English, half
Indian, funny perhaps, but it is honest
It is an human as I am human..

*** Head, Dept. of English, Govt. (P.G.) Autonomous College, Datia (M.P.) INDIA**

Transforming her alienation from " critics, friends " and cousins who advise her not to write in English into larger and more universal alienation being sexual,social and-artistic that seems to feature some of the best literature of our age and is perhaps at the of ahy attempt at self exploration and self integration. These lines address to the feminist question of identity of a woman who is also a poet. It voices her firm refusal to abandon English as an alien tongue and advocating the choice to use English language as a poetic medium, she identifies it as a vital and inseparable component of the Indian identity. This emphatic declaration came in the wake of challenges to write poetry in English. She is the first woman poet to challenges the critics who said and believed that Indians could not produce good poetry in English. Regarding this context KamalaDas's own word are worth quoting; she says:

I don't find it easy to write either in English or in Malayalam. Languagehas been very difficult for me.....Thoughts were there, but to cover themup, to wrap them up in decent language is very difficult. I am discoveringa new language, trying to make a new language, create it, which will suitme. Because I have yet to find a language which can keep pace with thinking.

Kamala Das surpasses all the possible linguistic convention, in creating her own language. The alliteration of the first person singular possessive pronoun mine accompanied by 'alone' indicates certain vehemence about this sense of possession. Thelanguage, with all its traits including the queerness and distortions gets absorbed into the poetic consciousness leading to an emphatic identification of the poet with the language which comes to acquire for her honesty and humanity. The very heat and dust of her humiliation in being sabotaged and relegated being in the world is directed towards the trenchant sexual or gender politics ingrained in our social and domestic conventions.

Kamala Das moulds and re moulds the colonial and patriarchal layers of thelanguage by peeling it off. This become her most significant contribution to theevolution of the post colonial feminine sensibility. In this context, what Eunice De Souza said isquite genuine, she says:

Woman writers owe a special debt to Kamala Das. She mapped out the terrain for the post colonial women in special and linguistic terms.Whatever her vernacular oddities, she has spared us what in somecircles, nativists and expatriates, is still considered mandatory : the politically correct "anguish" of writing in English.

Kamala Das does not pretend unawareness about her unique position as a feminist mouth piece. She is a self conscious poet. Perhaps her uniqueness is asserted when she writes that her poems are:

..... the speech of the mind that is
Here and not there, a mind that sees and hears and
Is aware. Not the deaf blind speech
Of trees in storm or of monsoon clouds or of rain or the
Incoherent mutterings of the blazing
Funeral pyre.

Then comes the puzzling and embarrassing adolescence and the pain of growth is revealed to her. Kamala Das impresses by being very much herself in all creative works, especially poems. She presents the naked truth the places words boldly in such a manner in people have their no oncomings. Her expression becomes dramatic,. Strongand against old images. She speaks about her bitter experience of getting rejected in love; which was enough to shatter all her adolescent dreams.She writes

I was a child, and later they
Told me I grew, for I become tall, my limbs
Swelled and one or two places sprouted hair. When
I asked for love, not knowing what else to ask
For, he drew a youth of sixteen into the
Bedroom and dosed the door. He did not beat me
But my sad woman body felt so beaten.
The weight of my breasts and womb crushed me.

The creative urge leads to a confession of her experience as a married woman, notknowing what marriage exactly is, and what does it demands of a woman.

One of the major theme ; is a lamentation for the lost innocence of childhood and its surroundings. Her introspection thereby turns out to be a painful confession of her concerns with life, particularly as woman in the Indian scenario. The fact is that, the poet's early marriage seems to have given a rude jolt to her sensibility as a woman. For a woman, her physicality seems to stand in the way of establishing her identity. According to Juliet Mitchell, the tone of the poem appears to be hysterical:

Hysteria is the woman's simultaneous and refusal of the organization of Sexuality under patriarchal capitalism. It is simultaneously what woman can do both to be feminine and to refuse femininity. Within patriarchal discourse.

In order to revive the self from the humiliating experience, the poetess changes her dress,wears a shirt and trousers and even cuts her hair shorts to neglect her womanliness. This very act seems to the categorizers as a rebellion against

male authority. Her desire to be with the male world on its own terms, despite the family and ,social pressure to confirm to the traditional feminine role, is to have the freedom to be herself as a female. To quote her :

Dress in sarees, be girl,
Be wife, they said. Be embroiderer, be cook,
Be a quarreler with servants. Fit in, oh,
Belong, cried the categorizers. Don't sit
On walls or peep in through our lace- draped windows.
Be Amy, or be Kamala.....
Choose a name; a role.

Kamala Das is concerned with the question of the woman's dignity and identity. Kamala Dasresents to the categorizers when they said I fit in ' to all circumstances. She is critical of the society, which demanded of her to put on sarees as an Indian girlis expected and be a wife. She was also married before she could understand love and sex as per the practice prevailing during those days. Thus, we see that Indian situations form a vital part of her poetry.

Finally, the poem acquires a change in tone. The personal details begin to dissipate and give way to the general and universal truth. The society binds the woman in the shackles and tells her to pretend like, a schizo or a bympho, even if she is not happy or contented with herself or her husband. Till here, the poem seems to be a mild satire on the male attitudes and the conventional gender role assigned to a wife in terms of do's and don'ts.The remaining portion of the poem is a mild protest of a female who aspires to have an identity of her own and earnestly seeks it. Kamala Das realizes it ultimately that her experiences are the experiences of every woman and therefore she says:

…. I met a man, loved him. Call
Him not by any name, he is every man
Who wants woman, just as I am every
Woman who seeks love. In him…. The human
Of rivers in me……. The ocean's tireless Waiting.

This lyrics is an attempt to assert the poet's individuality and feminine identity against social and cultural conformity. The attempt, however, is dissipated to a large extent due to the intrusion of extraneous sensibilities. The short lines used in the poem indicate an abrupt and annoyed reaction to the burdens of growth. The absence of the sublime in the life of the creatures is due to the incompatibility of the masculine and feminine entities. In him the hunger haste of rivers that has the basic suggestion at the thoughtless urgency of man who is an aggressive partner, and in me the oceans. Tireless waiting where the ocean symbolizes the profound manner in which the female partner patiently awaits the arrival of the river. Iqbal kaur states that,

The clue to understanding Das's poetry is the poem 'An introduction' which reveals her life philosophy basedon the vedantic concept of 'Thou art me' (TwameVaham). Her own experience becomes Everybody's experience and Everybody else's experience become her own.

The poem culminates in a note of failure, disappointment and reconciliation:

Who are you, I ask each and every one,
The answer is, it is I. Anywhere and
Everywhere. I see the one who calls himself
I.

It ends with the enumeration of unconventional roles of a woman is not expected to play by categorizers. But every woman has a self and the subjective need to call herself 'I', notwithstanding normal, socio political categorization. On the poetry of Kamala Das which makes her sometimes victim and sometimes crazy woman in whom we find an evaluating reason, the quest for the identity of a woman as a woman goes a long way in making the self out of various disjunctive psychometric pressures.

Thus the lyric well depicts the experience of every female entering her pubescence, descending dreams to a world of many social and familial dictates. At first these anxieties lead to fear and then to anger, but they lead her finally to a realization of the vanity of human existence, and a resultant reconciliation.

Work cited

1. Kamala Das, ' An Introduction', Summer in Calcutta ; New Delhi: Earnest Press, 1965
2. Desouza Eunice, 'Nine Indian Women Poets' , An anthology; Delhi, Oxford University Press, 1997
3. Nabar, Vrinda. ' The endless Female Hungers' , A study of Kamala Das Poetry; New Delhi , Sterling Publishers Pvt.Ltd. 1994
4. Naekar, Basav Raj [ed], Indian English Literature, Vol. III, Atlantic Publishers and Distributors; 2002
5. Kaur, Iqbal [ed], 'Prespectives on Kamala Das's poetry', Intellectual Publishing House; 1975

****

Oughtths And Influences That Made The Frail Mohan Das- Mahatma Gandhi : An Overview

Dr. B. Shrivastava *

Much has been spoken and written on the life and thoughts of Mahatma Gandhi and it will be very difficult to write something new which has not been attempted or said by the scholars of Gandhi. Even so much has been written about his ideas his values and his personality, his experiences and experiments in life

In this paper, my endeavor is to take into account, Gandhiji's thoughts his social, political, economic and religious concerns and the influences that worked as a potter's wheel to shape Gandhi into Mahatma Gandhi - acclaimed as the most influential personality and the greatest man in the world.

Basically Gandhiji was a socialist and his sole aim was the real services to mankind. The Whole world was home and its people his family. He once said, "I love all mankind as I love my countrymen because God dwells in the heart of every human being and I aspire to realize the highest in the life through the service of humanity (Gandhi's life 86)" His love was all embracing and universal, irrespective of the boundaries of caste, creed status and religion. This half naked frail man was the world's favorite.

Truth and non - violence were Gandhi's flesh and blood and the breath of his life. He never harbored the feelings of anger and hatred for anyone. He rarely visited temples because he believed that God lives in the hearts of the people. He believed in Hinduism as he believed in Jainism, Buddhism and Christianity. All religions were equally important to him and their teachings has a deep influence on him. His religious beliefs were based on the Upnishads and the Gita. He did not enter the temples which banned the entry of the Harijans. He believed that God did not create man with the badge of superiority or inferiority'. He always condemned the practices of proxelytization.

The teachings of the Gita left a permanent impression on Gandhi's mind and soul. He believed that truth is an ultimate reality. To him Truth is like a vast tree which yields more and more fruit the more you nurture it (Gandhi's life 10). He was the apostle of truth and non- violence. The influence of the new testament of the Bible was clearly visible in him, especially the Sermon on the Mount.

But say unto you,
That ye resist not evil,
But wherever shall smite thee on
Thy right cheek,
Turn to him the other also
And if any man take away the coat let him have thy cloak too"

(The story of my life 35)

The Gita, The Ramayana, The light of Asia left an everlasting impression on him as he said, That renunciation was the highest favour of religion appealed to me greatly. (The story of my life 35).

The Ramayan had become an "infallible remedy" for him.

His satyagraha is not weapon of the weak or the meek. It aimed to solve all the political and international problems and to show the path of righteousness and sublimity to themankind. His thinking was not confined to the east or the west north or south, neither was his thinking confined to the century in which he lived. He was a man who thought of the welfare of humanity as a whole .

The age of Gandhi may be named the Gandhian Era due to its unprecedented national upsurge under his leadership which made the whole world acutely conscious of its present and its past and stirred it with new hopes for the future. Gandhi had a tremendous working and organizing capacity. His organizing capacity,his discipline and devotion to work were overshadowed by his popular image as a high priest of truth and non-violence. This organizing capacity made him an international citizen. He had two of he greatest disciples Khan Abdul Gaffar Khan and Marlin Luther King. No proofs are required to believe that the tenets of Gandhism or the elements of his thought are of global value and significance. In the words of lord Mountbatten he was one- man boundary force; When gandhiji was shot dead by Godse Lord Casey remarked when this dreadful thing happened, a particular sort of light went out of India. (Iyengar 270). The world will always remember the greatness of immortal Gandhi- The greatest man in the world after Christ" in the words of Dr. John Hayn Holmes and it is Gandhi who makes us proud forever to be Indians. His muberous contemporaries were willing captivs of his mysterious charm and powr and found it difficult to wriggle out of the brilliant spell of his charming personality and he exerts the same influence even today

References :-

1. Kriplani, J.B. Gandhi, His Life and thought, Delhi; Publication Division
2. Srinivas Gyengar, K.R.S. Indian writing in English, Delhi Sterling Publication, 1983.
3. The story of my life, Ahmedabad Navjivan Publishing House, 1927
4. The story of my life Ahmedabad Navjivan Publishing House 1983
5. The survey of Indian English Novel - Dr. Satish Kumar
6. Mahatma Gandhi on Removal of Untouchability - Har Mohinder Singh, K.C. Saushik, S.R. Sharma - Publications Swaroop & Sons, New Delhi.
7. Gandhian Strain in the Indian English Novel - Ambuj Sharma Publishers: Swaroop & Sons, New Delhi.

*** Associate professor,English, S.L.P.Govt. P.G.College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA**

Indian Words in Indian English Fiction

Dr. Sudhir Dixit *

Indian words have been making their way into the English language from centuries, but with the rising popularity of Indian English novel in the west the use of Indian words has also increased. When Indian writers started to produce creative writing in the language of their rulers, they were humorously compared with 'Matthew Arnold in a sari'. Nowadays the comparison seems outdated and outrageous. Indian English writers are a potent force in Literature written in English.

Indian writers in English are conscious of the double burden on their shoulders, "The alps of the European tradition and the Himalaya of...their past". As they write in a foreign language, they have to handle their medium with extra care and command. As they happen to be Indian and their setting is more often than not Indian, they have to give Indian touch to their writing. In the expression of Indian reality a writer cannot ignore Indian myths and Indian words, which are part and parcel of the sub-continent psyche. This is why even the Britishers writing about India have to take recourse to Indian words mostly from Sanskrit, Hindi and Urdu languages.

The setting of most of the Indian English novels is India, though often these novelists also parallel the Indian setting with a western setting. It is normal to see the first part of the novel set in India, and the second in America or Britain and vice-versa.

Indian literary writers have found that the King's (or, the Queen's) English is inadequate for an Indian writer. As Mulk Raj Anand complains that in the Indian context English cannot fully express the verbal richness of Indian languages. Pure English, for him, "seemed a completely unsuitable medium to interpret my mother's village Punjabi wit, wisdom and folly", in which "there are inevitable echoes of the mother tongue". In search of an authentic expression of Indian reality, writers have developed a variant of English which is popularly known as Indian English. In Indian English, Indian words are often used, sometimes because no English equivalent is to be found and sometimes because the Indian word is simply more expressive and apt.

According to Dr. R. S. Pathak, in his search for an authentic style, Mulk Raj Anand at times makes an almost literal translation of dialogues, culture-bound expressions like swear words and terms of abuse and so on, which might carry 'the sound and sense of the original speech'.

Rushdie also playfully adds the Indian touch to his writing in expressions like 'the chutnification of history'.

Shobha de also uses words as will be intelligible only people familiar with Indian ethos. In her Socialite Evenings she uses, 'a shudh vegetarian kitchen', 'kutcha roads', 'a paan-bidi shop', 'the raddiwalla' etc.

R. K. Narayan favours the growth of "a Bharat brand of English' with a Swadeshi stamp about it unmistakably. As Dr. Pathak observes, "Indianization of English, however, is a linguistic fact, which cannot be wished away".

Indianisms consist of

1. the use of native Indian words in English,
2. literal translations of Indian expressions, idioms, sayings
3. hybridizations (e. g. Lathi stick, potato bonda)
4. the imposition of the syntax of the native language without doing great violence to English grammar
5. the imposition of the native speech rhythms on the English language spoken by the Indian characters.

All the Indian writers writing in English are instinctively bilinguals. The English language as developed by these writers will realise 'the power of Indian inheritance, the complexity of Indian experience, and the uniqueness of the Indian voice'. The Indian writers forged new words, new idioms and ney rhythms in their English.

They consciously reoriented the English language and synthesized Indian and European values in contemporary India. Indian words are introduced into English for the sake of reflecting cultural undertones and overtones, to refer to local realities, traditions and ways of feeling.

R. K. Narayan says, "we are all experimentalists....We are not attempting to write Anglo-Saxon English....The English language is now undergoing a process of Indianization". Raja Rao points out that the major problem of Indian English writers is that "one has to convey in a language that is not one's own, the spirit that is one's own".

The native Indian words which are most frequently used by Indian English writers are related to

1. religion (Puja, bhajan, shastra, veda, purana, karma, rishi, sadhu, sanyasi, swami)
2. Dress (sari, dhoti, topee, khadi, kurta, jibba)
3. Food (Barfi, jilebi, halwa, chapathi, idli, dosa, bonda, roti, ghee, samosa)
4. Flora (Peepul, tulsi, neem, ashoka, motia)
5. Mythical names (Rama, Sita, Ravana, Shiva, Parvati,

*** Head, Dept. of English, Govt. Narmada College, Hoshangabad [M.P.] INDIA**

Krishna, Laxmi, Vishnu, Yama, Satyavan, Savitri, Narada, Arjuna, Natraja, Hanumana, Kama)

6. Festivals (Holi, Deewali, Dushara)
7. Daily use items (hookah, bidi, anna, paan, charka)
8. Musical instruments (Tabala, Veena, Sitar, Sarod etc.)
9. Titles (Maharaja, Maharani, Mami, Appa, Amma, Zemindar, Saith, Vaid, Babu, Bania, Devadasi)
10. Freedom Movement (Satyagraha, bandh, jaloos, hartal, Jai Hind, Vandematram)
11. Swear Words and abusive expressions (badmash, sala, goonda, rape-mother etc.)

Literal translation of idioms, proverbs and sayings has been used by Indian writers time and again. Raja Rao uses 'a traitor to one's salt-giver' when he wants to convey the full meaning of the Indian word "Namak-Haraam". Mulk Raj Anand uses the literal translations often in expressions like "son of a pig" (Suar ka bachcha), "Why do you eat my head" (Mera dimag kyon kha rahe ho?), 'rats were running about in his belly' (Uske pet mein chuhe daud rahe the), 'frogs in a well' (Kupamanduka).

Mulk Raj Anand makes use of extensive lexical borrowings from Indian languages Hindi, Urdu and Punjabi and his is a conscious attempt at Indianism.Anand also coins new words to realistically convey the mis-pronunciation of Indians, like 'tation' for 'station', dagdar for 'doctor' and cirgut for ciggaratte. Bhabani Bhattacharya at times uses Bengali words in his He who Rides a Tiger like "Sonar Bangla, Pronam, Sandesh, Khoka". Nirad C. Chaudhuri mainly uses Indian philosophical & mythological words, for example in his Continent of Circle: "Sanatana Dharma, Dharma Yuddha, Karma-kanda, Nara-Pungava, Baglamukhi mantra".

The use of Indian words in English is convenient as it is difficult and awkward to give English synonyms for Hindi words like 'soft, circular wheat cakes' for phulka and 'hard paper-thin wheatcake' for papad as Louis Fischer does in Mahatma Gandhi's biography.

Can we agree with Narsingh Srivastava's view that the nativization of English has no roots in the soil and it only serves decorative purposes 'like taking Indian leaves and flowers for decorating English vases' and to merely add 'the flavour and the fragrance' to the story like Indian spice? The answer is obviously 'no'. Indianness in Indian English fiction is not merely decorative or ornamental; it is an essential condition of the efficacious expression of Indian reality.

As Ashok Kumar Sharma puts it, "the term Indianism can be used as a label for an intended formal manipulation of English in order to make it an adequate mode of expression of the exigencies and contingencies of Indian themes, context and scenario, particularly in literary communication". C. V. Venugopal also asserts that Indianism tries to evolve a variant of English language 'capable of communicating the Indian environment'.

****

मानवतावादी संत दादूदयाल

डॉ. मंजुला जोशी*

हिन्दी साहित्य के पूर्व मध्यकाल को संपूर्ण सामाजिक सांस्कृतिक चेतना एवं कलात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से भक्ति काल कहा गया है। भारतीय आध्यात्मिक विचारधारा के समस्त मूल्यवान तत्व इसमें अनुस्यूत है। सिद्धों, नाथों, सूफियों एवं सन्त भक्तों की सम्मिलित भूमिका का निर्माण इसी काल में होता है।

'भारतीय इतिहास में पहली बार समूचा देश एक भावधारा से आंदोलित हो उठा।''[1] इनमें कुछ भक्त थे तो कुछ सन्त।

'निर्गुणियों को संत और सगुणियों को भक्त कहने की प्रथा चल पड़ी।' सगुणवादी भक्तों का साहित्य अवतारवाद की भावना से अनुप्राणित है,किन्तु संत कवि अवतारवाद लीलाज्ञान और चरित्र की अवहेलना करते दिखाई देते है।[2] सन्त साहित्य जनजीवन का साहित्य है। ये सन्त कवि लोकमंगल की कामना अहर्निश करते है। ये लोकधर्म के संस्थापक है।

''हिन्दु मुस्लिम-कर्मकाण्ड, बाहय आडम्बर, संकुचित आचार-विचार तथा रूढ़िगत दुराग्रहों से ऊपर उठा हुआ सन्त साहित्य विशुद्ध मानवीय प्रेम की आधारशिला पर प्रतिष्ठित है।''[3] ''सन्त साहित्य आध्यात्मिक अनुभूतियों का लेखा-जोखा मात्र नहीं है। उसमें तत्कालीन जनजीवन का प्रतिबिम्ब विद्यमान है।''[4] मध्ययुग की जिन परिस्थितियों में इन संतो ने अपना सृजन कार्य किया वे बड़ी विकट थी। चारों ओर जाति धर्म आडम्बर और अन्धविश्वासों का बोलबाला था । इसी वैषम्य से जूझते हुये इनके अदम्य साहस ने नवचेतना नवजागरण का शंखनाद किया; और फूंक दिया प्राणतत्व अपनी सृजनधर्मी चेतना से'; इन्हीं संतो ने मध्ययुगीन समाज को समानता एवं विश्व बंधुत्व का गुणसूत्र दे दिया। ''संत सम्प्रदाय के धर्म को हम विश्वधर्म कह सकते है क्योंकि संतो के लिए सम्पूर्ण विश्व कुटुम्बवत् है।''[5]

हिन्दी में संत मत का प्रचार प्रसार करने में कबीर, दादू, गुरूनानक, रैदास, मलूकदास, रज्जबदास आदि संतो का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन संतो ने समाज में फैली सामाजिक धार्मिक कुरीतियों का खण्डन कर मानवीय मूल्यों को स्थापित किया। इन्हीं संतो में से एक थे - ''दादूदयाल''

दादू मध्ययुग के महान संत थे। संत कवियों में कबीर के बाद दादू का नाम आता है। ईसा की सोलहवी सदी में लोकभाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति देने वाले संत कवि थे। '' किसी एक विशेष नगर या गांव को निश्चित रूप से दादू का जन्म स्थान बतलाना संभव नहीं है।''[6]

स्वामी मंगलदास (आचार्य दादू महाविद्यालय) के अनुसार - '' साबरमती नदी में बहते हुये दादूजी अहमदाबाद के एक नगर निवासी को प्राप्त हुये।''

दादू जन्म लीला पर्ची में उनके शिष्य जनगोपाल ने स्पष्ट लिखा है -

'' पच्छिम दिशा अहमदाबाद
ता ठां साध परगटे दादू''[7]

डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत दादू का जन्म संवत 1601 मानते हैं।

''बाल्यावस्था में अपनी वस्तु अन्य को सहज दे देने का स्वभाव देखकर लोधीराम जी ने 'दादू' नाम रखा।''[8]

''दयाल शब्द की उपाधि उनके दयालु स्वभाव के कारण जोड़ी गई है। उनके पदों में दया का भाव सर्वत्र मिलता है।''[9]

दादू के जन्म के विषय में विभिन्न मत है। दादू सम्प्रदाय और इन्सायक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एथिक्स के आधार पर उन्हें लोधीराम नामक ब्राम्हण का पुत्र बतलाया गया है। लोधीराम नागर के पालित पुत्र थे, इनकी माता का नाम ''बसीबाई'' था।

''कबीर के सदृश्य दादू पढ़े-लिखे नहीं थे पर बहुश्रुत थे।''[10]

दादू के गुरू के संबंध में निश्चित मत नहीं है। जनश्रुति के आधार पर 'बुड्ढन' या 'वृद्धानन्द' को इनका गुरू बताया जाता है।

तीजे पहर निकट ही संझा। खेलत डोले लड़कन मंझा
जब बीते एकादस बरसू। बुड्ढे रूप दियों हरिदासू।।[11]

अपनी पारिवारिक प्रथा के अनुसार दादू की महाराज की शिक्षा चलती रही सात वर्ष की अवस्था में एक दिन बालकों के साथ कांकरिया तालाब नगीना बाडी में क्रीड़ा करते समय भगवान ने एक वृद्ध ऋषि के रूप में प्रकट होकर दर्शन दिये; तथा दीक्षा रूप निगुर्ण भक्ति या उपदेश देकर अन्तर्ध्यान हो गये।''दादू गैब माँहि गुरूदेव मिल्या पाया हम परसादमस्तक मेटे कर धरया दष्या अगम अगाध''[12]

दादू विवाहित थे। इनकी पत्नी का नाम हब्बा था। दादू जी के दो पुत्र एवं दो पुत्रियां थी। 'दादू' वाणी के रूप में प्राप्त उपदेशों का संकलन ही उनकी वास्तविक रचना है। अनुभव वाणी का आरम्भ संवत 1619 माना है। 'दादू' के शिष्यों ने अनुभव वाणी का संग्रह भी किया।

सर्वप्रथम वाणी का संकलन मोहनदास दफ्तरी ने किया। इसी का संशोधित रूप संतदास और जगन्नाथ ने हरदे वाणी के नाम से उपस्थित किया। इनके 152 प्रधान शिष्य थे। 'रज्जब' ने संवत् 1700 के लगभग इन त्रुटियों को दूर कर अनुभव वाणी के नाम से दादू की 'साखियों' को 36 विभिन्न अंगो में विभाजित कर अपने इस संग्रह का नाम 'अंग बंधु' रखकर अपने गुरू को समर्पित किया। बाद में यह 'अंग बंधु' के स्थान पर 'वाणी' शब्द प्रचलित हो गया।

''दादू उस एक अलख से निरन्तर प्रीति करने के अभिलाशी हैं जहाँ न हिन्दुओं का देहरा है और न मुसलमानों की मसीत।''[13]

दादू में मतवाद, तीर्थादि, पूजा, नमाज, मिथ्याचार, हिंसा, दुर्नीति को त्यागने का भाव प्रबल था। दादू निर्गुणवाद में विश्वास रखते थे। उन्होने मूर्ति पूजा, तीर्थ, पुस्तकीय ज्ञान एवं देवतावाद का खण्डन किया।

दादू जिन कंकर पत्थर सेविया, सो अपना मूल गवाई
अलख देव अंतरि बसै, क्यों दूजी जगह जाई[14]

भीतर विराजे परब्रह्य के प्रति उनकी आस्था प्रबल थी। इसलिये उन्होने तीर्थो की महत्ता को स्वीकार नहीं किया वे स्पष्ट कहते हैं कि -

''दादू केई दौड़े द्वारिका, केई कासी जांहि,
कोई मथुरा कौ चले, साहिब घट ही मांहि।''[15]

दादू की भक्ति में माधुर्य भाव एवं निष्काम भक्ति की प्रधानता है। उनमें सर्वस्व समर्पण का भाव की प्रमुखता है।

''तन भी तेरा, मन भी तेरा, तेरा पिण्ड परान,
सब कुछ तेरा तू है मेरा यह दादू का ज्ञान।''[16]

* प्राध्यापक,हिन्दी विभाग, शहीद भीमानायक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

सब कुछ तेरा यह कहना जितना आसान है करना उतना ही कठिन इसलिये कथनी और करनी में भेद हो जाता है। कथनी और करनी का अंतर करने वाले छल कपट करने वाले लोगों से दादू की कभी नहीं बनी।

''दादू कथनी और कछु, करणी करै कछु और
तिन थे मेरा जीव डरें, जिस के ठीक न ठौर।''[17]

दादू – मानव के भेद निवारण मे सदैव तत्पर रहे, जाति वर्ण–धर्म के अनुचित पक्ष से उत्पन्न होने वाली घृणा ऊँच–नीच की भावना से बचने की प्रेरणा देने लगे। उनके अनुसार धर्म मानव मात्र के कल्याण के लिये है। यदि उसे धर्म के आधार पर हम एक दूसरे को ऊँच–नीच समझे, धर्म के कारण एक दूसरे को मारने के लिये उद्यत हों तो ऐसा धर्म हमारा कल्याण कदापि नहीं कर सकता। दादू के अनुसार धर्म मानव कल्याण के लिये है। शाश्वत सत्य परमेश्वर को 'राम' और 'खुदा' की सीमा आकृति में ही आबद्ध और अवरूद्ध कर देना उन्हे पसन्द नहीं था।

दादू सच्चे अर्थो में मानवतावादी कवि थे, वे हिन्दु मुसलमान में, अथवा राम–रहीम में भेद करना नहीं जानते थे और यही साम्प्रदायिक एकता का भाव उन्हें संतो की श्रेणी में लाकर खड़ा कर देता है –

''दादू करणी हिन्दू तुरक की, अपणी अपणी और
दुहु बिचि मारण साधु का, यह सन्तो की रह ठौर।''[18]

दादू साम्प्रदायिक एकता के पक्षधर रहे। आम आदमी को सबक देते हुए कहते है कि–

''सब हम देख्या सोधि कर दूजा नाहीं आन
सब घटे एकै आत्मा, क्या हिन्दु मुसलमान।''[19]

दादू सच्चे संत थे, इसलिये वे अपने स्वभाव में, चरित्र मे और क्रिया कलापों में उन समस्त उच्चतम मानवीय मूल्यों को स्थापित करना चाहते थे जिससे वे दुर्भावना, ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा, कलह को दूर रख सके।

''साई सत सन्तोष दे, भाव भगति बैसास
सिदक सबूरी साच दे, मांगे दादू दास।''[20]

और यह आस्था संतोष और विश्वास पुस्तकीय ज्ञान से नहीं आता वह कहीं भीतर की उजास है, जिसके सामने ये दुर्भाव कहीं बौने हो जाते है। तभी तो दादू कहते हैं कि मन को जतन करने पर भी संयम में रखना कठिन होता है।

''दादू देह जतन करि राखिये, मन राख्या नहिं जाई
उत्तम मध्यम वासना, भला बुरा सब खाई।''[21]

जब तक जीवन है तब तक सांसारिक विषय वासना इस मन में प्रतिबिम्बित होती है और सुख दु:ख परछाई की तरह आदमी के साथ जीवनभर जुड़े रहते है। मन की दृढ़ता, शुद्धता इन से हटकर मनोबल प्रदान करती है।

''सुख दुख सब झांई पडै, तब लग काचा मन
दादू कुछ व्यापै नहीं, तब मन भया रतन।''[22]
दादू जिसका दर्पण उजला दैखे वाहि
जिस की मैली आरसी, सो मुख देखे नांहि।''[23]

दादू के सम्बन्ध में अनेक चमत्कारिक घटनायें प्रचलित थी, '' एक बार बादशाह ने दादू महाराज को दरबार में पधारने का कर पूर्व से सुनिश्चित योजनानुसार राजकीय समारोह का आयोजन किया महाराज दादूजी ने दरबार के मुख्य द्वार में प्रवेश करने पर देखा कि सभी लोग अपने–अपने स्थान पर खड़े है ; किन्तु उनके बैठने के लिये कोई योग्य स्थान निर्धारित नहीं है: तब दादू महाराज ने दूरदृष्टि से जान लिया यह दादू महाराज के परीक्षार्थ किया जा रहा है। तब दादूजी ने संकल्प मात्र से 'तेजोमय तख्त' की सद्य:रचना कर सहजभाव से विराजित हो गये। तब सभी ने दादू से करबद्ध क्षमा याचना की।''

अकबर की विशेष प्रार्थना पर दादू ने उन्हें उपदेश दिया महाराज के अमृतमय सरल सर्वधर्म समभाव के उपदेश से अकबर बहुत प्रभावित हुये तथा दादूजी महाराज की प्रशस्ति में उन्हें अल्लाह और खुदा का नूर (स्वरूप) जाहिर किया ।

''दादू नूर अल्लाह है, दादू नूर खुदाय
दादू मेरा पीव है, कहे अकबर शाह।''[24]

वर्तमान संदर्भो में जब हम दादू जी की रचनाओं को देखते हैं तो लगता है कि सोलहवी सदी का यह सन्त आज भी प्रासंगिक है। क्योंकि आज भी हम इन दुर्भावनों से उपर नहीं उठ सके है। वहीं जाति, धर्म सम्प्रदाय का झगड़ा अब भी जारी है। कागजों के ग्राफ पर अंकित विकास यात्रा में हम भले ही आगे बढ़ गये हो किन्तु हमारे सामाजिक सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों वाले दृश्य का अवलोकन करने पर हमें लगता है हम बहुत बौने हो गये है।

साम्प्रदायिक सद्भाव का जातिगत वैमनस्य को दूर करने का उद्घोष करने वाले संतो की आज बहुत आवश्यकता है। आज धर्म के नाम पर पाखण्डियों की भरमार हो गई है। जो धर्म के नाम पर मठों और आश्रमों में दुराचार फैलाते है इससे धर्म के प्रति निष्ठा कम हो गई। इस इक्कीसवीं सदी मे चाहिए वही मानवतावादी संत समाज जो एक बार पुन:सम्पूर्ण मानव जाति को साम्प्रदायिक एकता एवं सर्वधर्म समभाव के एकसूत्र में बांध कर नवचेतना का दीप प्रज्जवलित कर साम्प्रदायिक सदभाव का शंखनाद कर एक स्वस्थ समाज का निर्माण करें।

संदर्भ–सूची ::–

1. हिन्दी पारिभाषिक कोश – ज्ञान मंडल प्रकाशन, पृष्ठ 442
2. मध्यकालीन हिन्दी सन्त विचार और साधना – डॉ. केशवीप्रसाद, पृष्ठ 8
3. मध्यकालीन हिन्दी सन्त विचार और साधना . डॉ. केशवीप्रसाद, पृष्ठ 8
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास . डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 141
5. आशिक बालोन . प्रवक्ता हिन्दी विभाग ए.एम.यू. अलीगढ़ विश्वविद्यालय
6. उत्तर भारत की सन्त परम्परा . परशुराम चतुर्वेदी, पृष्ठ 410
7. दादू जन्म लीला पर्ची . जनगोपाल
8. दादू वाणी जीवन चरित्र, पृष्ठ 20
9. नूतन भक्तमाल . सं. संतदास, पृष्ठ 275
10. राजस्थान का पिंगल साहित्य . डॉ. मोतीलाला मेनारिया, पृष्ठ 105
11. दादू जन्म लीला पर्ची, पृष्ठ 11
12. सन्त कवि दादू और उनका पंथ . डॉ. वासुदेव शर्मा, पृष्ठ 180
13. दादू वाणी . मंगलदास साखी 69, पृष्ठ 297
14. दादू वाणी . मंगलदास साखी 69, पृष्ठ 276
15. दादू वाणी . मंगलदास साखी 20, पृष्ठ 430
16. दादू वाणी . मंगलदास साखी 106, पृष्ठ 268
17. दादू वाणी मंगलदास मधि को अंग 16 साखी 41 पृष्ठ 318
18. दादू वाणी मंगलदास दया निवैरता को अंग 29 साखी 5, पृष्ठ 421
19. दादू वाणी मंगलदास वैसाख का अंग 19, साखी 57, पृष्ठ 346
20. दादू वाणी मंगलदास मन को अंग 10 पृष्ठ 208
21. दादू वाणी मंगलदास मन को अंग 10 पृष्ठ 201
22. दादू वाणी चन्द्रिका प्रसाद मन को अंग 10 पृष्ठ 152
23. दादू जीवन दर्शन . सं. डॉ. बलदेव वंशी, पृष्ठ 30
24. दादू जीवन दर्शन . सं. डॉ. बलदेव वंशी, पृष्ठ 31

****

बुंदेली लोक कथाओं में लोकादर्श

डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला *

लोक साहित्य मौखिक सर्जना का परिणाम है और बुंदेली लोक साहित्य में उसी की अभिव्यक्ति है। इसमें मानवता के विकास की संस्कृति निहित और सुरक्षित है। इसमें धर्म, दर्शन, आध्यात्म, संस्कार, कर्म-कांड आदि- सभी समन्वित हैं तथा लोकजीवन की जीवनपद्धति और जीवनानुभव भी।

बुंदेलखंड प्राचीन काल से ही साहित्य भूमि रहा है। 11वीं सदी से बुंदेली गद्य साहित्य प्राप्त होता है। इस समय का गद्य हमें लोक कथाएँ, शिलालेख आदि-आदि के रूप में मिलता है। आर्यावर्त में पहले से ही बुंदेलखण्ड का स्वतंत्र अस्तित्व रहा है। उसी समय से हमें बुंदेली साहित्य की परम्परा दृष्टिगोचर होती है। बुंदेली साहित्य बहुत समृद्ध है। लोक साहित्य की दृष्टि से इसकी लम्बी परम्परा और विशाल साहित्य है तथा बुंदेली लोक कथाओं की परम्परा भी बहुत प्राचीन तथा विस्तृत है।

लोक-कथा लोक साहित्य की अत्यंत प्राचीन एवं महत्तवपूर्ण विधा है। ऋग्वेद एवं पौराणिक काल से ही लोक कथाओं की विशाल एवं लम्बी परम्परा दिखाई देती है। ये सारी मौखिक रूप में या मौखिक परम्परा के रूप में थी या यों कहें कि लोक-मुख में सुरक्षित थी। जो लोक मुख में इतने समय तक सुरक्षित रहे वह निश्चित ही महत्त्वपूर्ण व उपयोगी विधा होगी। लोक मुख में सुरक्षित विधा को ग्यारहीं सदी से गद्य रूप में आकार मिलता है और आज वह लोक जीवन की सर्वश्रेष्ठ विधा बन गई है एवं मौखिक कलात्मक अतिरंजित रूप में सुरक्षित है। लोक कथा के उद्भव एवं विकास के संदर्भ में डॉ. सत्येन्द्र कहते हैं - ''लोक वार्ता साहित्य की धर्मगाथाओं का उदय जिन उपादानों और व्यापारों से हुआ उन्हीं से साधारण लोकवार्ता साहित्य की लोक गाथाओं और लोक कथाओं का भी हुआ।''[1] डॉ. केसरी नारायण शुक्ल की मान्यता है कि- ''लोक कथा से तात्पर्य उन मौखिक कलात्मक कृतियों से है जो अधिकांश में गद्यात्मक हैं, जिनका वस्तु विषय काल्पनिक है और जिनका उद्देश्य मनोरंजन और कभी-कभी शिक्षा है।''[2] कैलाश कबीर की धारणा व प्रभाव दृष्टि है - ''लोक कथाएँ सहज और स्वाभाविक होती हैं, पर इस हवाई धारणा के उलट ये औपचारिक होती हैं। ये अपने रूप को दर्शनीय बनाती हैं।''[3] बुंदेली लोक कथा के स्वरूप और शक्ति पर प्रकाश डालते हुए डॉ. आरती दुबे कहती हैं -''बुंदेली कथा साहित्य का पूर्व रूप लोक कथाओं के रूप में रहा है जो अपने मौखिक स्वरूप में था। अब उन्हें लिपि बद्ध करके लिखित रूप में लाया गया है। लोक कथाएँ स्वयं में पूर्णहैं और बुंदेलखंड के जन-जीवन की झांकी प्रस्तुत करती हैं।''[4] बुंदेली लोक कथाओं पर उनकी यह भी मान्यता है कि इनमें -'' जन मानस का मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आधार पर परिचालित करने की इनमें अद्भुत शक्ति है। उदास से उदास व्यक्ति इनको सुनकर और पढ़कर नये जोश से भर जाता है।''[5]

बुंदेली कथा में हमें मिलती है कि सत्य की विजय होती है तथा किये की सजा भोगनी ही पड़ती है। बुंदेली की 'काग बिड़ारिन' भी अपने आदर्शों पर चलकर समाज को नया संदेश देती है। 'काग बिड़ारिन' को भी समाज में सम्मान दिया जाता है। ऐसा कहा जाता है 'घूरे के दिन भी घूरे में ही नहीं रहते, उनके भी दिन फिरते हैं'। देखिए, बुंदेली लोक कथाकार शिवसहाय चतुर्वेदी की लोक कथा ' काग बिड़ारिन' का अंश -

'' एक नगर में एक राजा रहत तो, उनकी सात रानिया थी। मनो राजा के इते कोई संतान नहीं हतीं। इसें वो हमेशा दुखी रहत तो। पंडित की कवे से राजा ने एक और ब्हाब कर लो। पंडित ने भाग्य देखके बताओ कि रानी के गर्भ से भोतई सुन्दर दो राजकुमार और राजकुमारी पैदा हुइयें।

समय बीबत गओ रानी गर्भवती भई। सातों रानियें, छोटी रानी को इतनों लाड़ ओर देखवें मनई-मन जलन लगीं। सातों रानियां मिलकें उपाओ सोचत रेततीं। कुछ दिनां बाद रानी खों प्रसव वेदना भई, सुन्दर रूपवती कन्या को जन्म दओ। सातों रानियों ने उखों भी नदियां में डरबा दओ ओर ईंट पथरा रखवा दियें। सातों रानियां आकें कहन लगी महाराज नई रानी तो बड़ी कुलच्छिनी है देखो ना उनें न तो सुन्दर पुत्रों खो जन्म दओ और नाई सुन्दर पुत्री खों। पंडितन की बातों में आकें आप कहाँ की डाईन ब्याव करक ले आये। . . . जा महल में रई तो कछु दिनन में राज-काज सब चौपट हो जेहे। राजा ने रानियों की बात पे विश्वास कर लओ और छोटी रानी खों फटे पुराने कपड़ा पैरा के काग-बिड़ारिन बना दओ और नई रानी उन सातों रानियों की सेवा करन लगीं।

पद्मिनी ने तुरन्त पालकी भेजकें काग बिड़ारिन को बुलवाओ और हपने हाथों से उपटन लगा के सपराओ, अच्छे कपड़ा पेनाओ और प्रेम से भोजन कराओं काग बिड़ारिन खों ऐसो आदर सतकार देखके रानियां मनई मन जलके महल चली गईं। भोजन के बाद पद्मिनी से सबको परिचय कराओ माता-पिता अपने बिछड़े पुत्रों-पुत्री और बहुओं को पावे भोतई खुश भये। उ दिन से काग बिड़ारिन फिर से रानी बन गई और सातों रानियों को राजा ने दिबार में चुनवा दओ।''[6]

बुंदेली लोक कथाएँ बुरी भावना से बचने की शिक्षा देती है तथा जनजीवन को बुरी ऐबों से होने वाले परिणामों से आगाह करती है। दृष्टव्य है, 'अथाई की बातें' बुंदेली लोक कथांय- ''मनोहर सींग बोले कै जुग्गातन पैल अंगरेजन को सासन हतो, उ सासन में मांस उर जनीमान्स अपने-अपने लरका-बिटियन खों उकास परें सदाचारी महां पुरखन के किसा-कहानियां सुना बू करे उर ऐबन सैं बचाबू करे उर ऐसो भै बेड़बू करे कै उनके मन में कबउँ बुरई भावना ना आबै।''[7]

इनमें समाजिक रिश्ते तथा भाईचारे की प्रबल भावना कूट-कूटकर भरी है। बुंदेली लोक कथा में अपने युग, समाज देश, परिवार, माता-पिता का नाम किस प्रकार रोशन किया जाता का भी संदेश मिलता है तथा राष्ट्रीय भावन भी प्रबल रूप में प्रकट होती है। इन कथाओं में यह भी उपाय बताये जाते हैं कि देश और समाज को कैसे स्वच्छ रखा जा सकता है तथा भ्रष्टता से कैसे बचा जा सकता है। ''बिरमचारी अपनो मताई-बाप पुरवा पाटन को नांव ऊचों उठावत।'' तथा

कजन्त कौनउ लरका बिटिया में बुराई दिखाती तो बे उपाव गुनत्ते, जी सें बो बुराई मन सैं अबढ़ारी कड़ जाए। खाबे पियाबे में अंतर पार देत्ते। ई बिध सैं लरका बिटिया पच्चीस बरस की उमर नौ जा नई जानन्ते कै काम का काउत। घर में तौ बैन बिटिया,काकी-नानी को नातौ चलतइ हतौ पै पुरा परोस में घर में बिलात सगी बैन बिटिया को नातो मानत्ते। बड़े पुराने कन

* सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.), एसोसिएट-भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान (शिमला) भारत

लगत्ते कै इतै के लरका बिटिया नाहरन के संगै खेलत्ते उर इतै के ज्वानन के पाउन सैं पहार धरती में धंस जात्ते पै आज बई धरती के लरका बिटिया बिरमचरज के आचरन सैं भिरसट होकैं ज्वानी आबे के पैल अपनी मौत खौं टेर लेत। सैंकरन हजारन ज्वानन खौं देख लेव कैई बन्ना के रोगन ने आन घेरो, जिनके नग-नग के हाड़ दिखात । कुल साधन संयम नियम सबउ चलौ गओ ।''[8] डॉ. केसरी नारायण शुक्ल मानते हैं - ''अतिरंजना और काल्पनिक पात्रों के माध्यम से जनता ने प्रकृति को अपने वश में करने की और बुढ़ापा रोग मृत्यु और अत्याचारियों से त्राण पाने की इच्छा और संभावना प्रकट की है।''[9] नि:संदेह बुंदेली लोक कथाओं ने वर्तमान युवाओं की दुर्दशा व समस्याओं को उठाया है तथा चेताया है कि ये ही सामाजिक व मानवीय मूल्यों के ह्रास का कारण है ।

बुंदेली लोक कथा में मानवीय धर्म (मानव धर्म) की बेहद रोचक स्थापना हुई है । यहाँ मानव धर्म व परोपकार को व्यक्ति जीवन का श्रेष्ठ बताया गया है। डॉ. बलभद्र तिवारी की लोककथा 'आधीरात के मल्हार' का ''लाखा भोतई दयालु आदमी हतो । उ के डेर में सैंकड़ों आदमी और औरतें हते । उन सबको ध्यान लाखा बंजारा रखत तो । कई जाये तो वो एक चलती फिरती दुनिया को मालिक हतो । जी के पास मनो से सोनो हतो। व्यापार करवे में बहुत कुशल हतो वो जो भी व्यापार करत तो उ में फायदो ही फायदो होत तो। एक बात लाखा में अच्छी हती कि जोन गाँव में कुँआ ने होत तो उते वो अपने पईसन से ओर अपने आदमीयन से कुँआ जरूर खुदबात तो । जहाँ धर्मशाला ने होतती उते धर्मशाला बनबात तो। ''[10]

बुंदेली लोक कथा का एक आदर्श तत्त्व यह भी है कि वे शहर और गाँव, छोटा और बडा, ऊँच और नीच, जाति और धर्म में कोई भेद नहीं करते हैं। इस संदर्भ में दिनेशचंद्र की लोक कथा 'नईयाँ फरक देहात और सैरन में' पठनीय है। ''काये लला मौठ बाई गाड़ी निकर गई का? वे जौन रास्ता सैं जा रयै ते वो मोटर स्टेण्ड कोई रास्ता हतो । विलात लोग जई तरफ आ रये ते । जोन मौड़ा खौं देख कैं उनने पूछी ती वो बड़े मौड़ियन कैसे बार रखाये तो । झूमत सौ अपनी मस्ती में, बार झटकारत आ रये मोड़ा ने उनै देखो। वाय लगी कैं का जबाब दऔ जाये जा डिजाइन के डुकरा कौं । वौ चुपचाप आगें बढ़ गओ । ....चून पिसावै आओ लक्षमन कौ मौड़ई मिल गऔ तो गई वैर । संगई हो जात तो दम बनीरत । अकेले दुकेले सें तो अच्छो । कछू दिनन पैलें, सारिन ने रम्मा खौई मारपीट के बीड़ी पत्ती केई पइसा छुड़ा लये ते । इन दिनन तौ गरमी के मारें चिरैया तक न मिलै गैल में। अकेले जाओ तो । मम्मा, राम राम.....।''[11] बुंदेली लोक कथाओं में लोक जीवन की गतिशील परम्परा है तथा लोक-संस्कृति का अमृतमय आलोक स्पंदित होता है, जो लोकजीवन के आदर्शों को रेखांकित करते हैं।

'जी पै बीतत बेउ जानत' लोक कथा में मानव मानव सब बराबर का संदेश मिलता है। अगर कहें तो ऊँच-नीच, दलित आदि सब एक समान है । विपदा छोटे बड़े या जाति देखकर नहीं आती । ये तो उपदेश देने और लेने वाले दोनों पर लागू होते हैं -

''एक दिना एकई घर के चार पाँच जने उते आये और महात्मा जी के आंगें हिलहिला के रोन लगे । उनकी आँखन में अंसुआ ढ़रकावे शुरू भये सो बिलात देर तक नई रुके । असल में रुकते कैसे? उ परिवार में एकई मौड़ा हतो और उखों ऐसी ताप चड़ी के दम तोड़वेई पे उतरी ।

महात्मा में मोड़ा के मताई बाप को ढाढस बँदाई और समझाओ कै मरबो जीबो कोउ के बस की बात तो है नईयाँ । जौ तों सब भगवान के हाथ में होत हैं । अपने करमन में जो जीव जितने दिना लिखा कें आओ है सो उ सें न तो एक जादाँ जी सकत और न एक पल कम । ?

छै-सात दिना बाद उनके मन में साधु-महात्मा के दर्शन की फिर हुड़क उठी। वे महाराज जी की कुटिया में पोंचे तो जौ देखकें हैरान रे गये कि साधु मराझ खूब चिल्ला-चिल्ला कें रो रये ते । उनने पूछी 'मराझ का बात हो गई, आप ऐस काय खों रोवे लगे । का बतायें भैया, कल रात में महाई बुकरिया मर गई । बड़ी प्यारी हती बा। ओई को दूद पियतते हम भुंसारे और संजा बिरिया।

बोले, मराझ आपके मौं से ऐसी बातें सुनकें हम तो असमंजस में पड़ गये । आपने बा बात काय चित्त से उड़ा दई जोन छै-सात दिनाँ पैले हमाये मौड़ा के मरवे पै आपइने हमसे कई हती ।

जा सुनके साधु बोले, 'भैया बात ऐसी है कि बौ तुमाओ मोड़ा हतो, हमाओ नई । आज जौन बुकरिया मरी गई वा हमाई हती । जी पे बीतत है सो बोई उको दुख जान सकत ।''[12]

लोक कथाकारों को जीवन बेहद कष्टमय उत्पीड़ित, दमित और अधिकार विहीन होता है तभी तो वे कष्ट के निवारण के उपाय बहुत सरल और सहज सुझाते हैं । देश व स्व रक्षा के बड़े सरल उपाय बताते हैं। प्रस्तुत है प्रसंग स्वरूप कङ्गड़ लोक कथा 'बंदर और मगरमच्छ' -

''गंगा के किनारे जामुन के पेड़ पर एक बंदर रहता था । उस पेड़ के जामुन बहुत मीठे थे और लगते भी बहुत अच्छे थे। एक दिन बंदर बड़े मजे से स्वादिष्ट जामुन खा रहा था कि एक मगरमच्छ गंगा से निकलकर तट पर आया । बंदर ने उसकी तरफ कुछ जामुन उछालते हुए कहा, ये दुनिया के सबसे मीठे जामुन हैं । मगरमच्छ ने चखकर देखे । वाकई जामुन कमाल के थे। बंदर और मगरमच्छ में दोस्ती हो गई ।

एक दिन घर लौटते हुए मगरमच्छ कुछ जामुन अपनी पत्नी के लिए भी ले गया । जामुन खाते हुए पत्नी ने कहा- जो बंदर रोज इतने मीठे फल खाता है उसका मांस कितना मीठा होगा । उसके कलेजे का तो कहना ही क्या । उसे खाते हुए मुझे कितना मजा आयेगा । मगरमच्छ को यह बात अच्छी नहीं लगी। पत्नी ने रुखाई से कहा , मुझे उसका कलेजा चाहिए ।

अगले दिन मगरमच्छ ने बंदर को घर चलने का न्यौता दिया, मेरी बीबी तुमसे मिलने को बहुत उत्सुक है । उसने तुम्हें घर बुलाया है । तुम पेड़ से उतरकर मेरी पीठ पर बैठ जाओ।

बंदर मान गया । पेड़ से उतरते हुए भाभी के लिए कुछ जामुन लेना नहीं भूला । नदी में तैरते समय मगरमच्छ आत्मग्लानि से भर गया और कहा - मैंने तुम्हें पूरी बात नहीं बताई है । मेरी बीबी ने तुम्हें इसलिए बुलाया है ताकि वह तुम्हारा कलेजा खा सके । हां, वह तुम्हारा कलेजा खाना चाहती है और मैं उसका कहा नहीं टाल सकता ।

बस इतनी सी बात है । यह बात तुमने पहले बताई होती तो मैं कलेजा साथ ले आता और खुशी खुशी भाभी को दे देता ।

क्या मतलब ? मगरमच्छ ने पूछा ।

मैं हर वक्त कलेजा साथ लिए थोड़े ही घूमता हूँ । जब भी मैं कहीं जाता हूँ उसे पेड़ पर ही छोड़ देता हूँ । चलो, वापस चलें। मैं तुम्हें अपना कलेजा दे दूंगा। मगरमच्छ वापस मुड़ा और किनारे की ओर तैरने लगा । किनारा पास आते ही बंदर कूदा और तेजी से पेड़ पर चढ़ गया ।''[13]

बुंदेली लोक कथाओं में यत्र-तत्र मिलता है कि व्यक्ति कैसे अपने ज्ञान और चातुर्य से विपरीत परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करते हैं । वे बुद्धि से सामाजिक विषमताओं पर और सामाजिक शक्तियों पर प्रभुत्व प्राप्त करते हैं। डॉ. हरिमोहन लाल श्रीवास्तव 'हमाई बिथा-कथा' में वर्तमान शासन व्यवस्था पर करारी चोट करते हैं तथा सामाजिक व्यवस्था की पोल खोल कर रख देते

हैं क्योंकि यह बुंदेली की खासियत है '' हम पेट में नईं राखत, कै देत खरी-खरी । ... पैले तो थोड़ेई उचक्का होतते अब बढ़ गओ है गुंडापन । कउँ कउँतो ऐसो दिखात है जैसे उनकोई राज होय हौर हमाई सिरकार सोतन दिखात ।''14

बुंदेली लोक कथाओं में उन सभी भावनाओं और विषयों का समावेश है जिससे लोक और समाज का कल्याण संभव है । देवेन्द्र कठरया की लोक कथा 'मदान' में समाज कल्याण का संदेश निहित है । देखिए, प्रासंगिक लोक कथांश- ''बादर उर धरती कौ ब्याव तै भओ । पे दूला की सवारी के लानें कौनउँ जानवर नई दिखानों । सो देवतन में सला भई कै पम्पापुर के अहिदानव की कबूतरी कौ एक जैत करन नाव की बछेरा ई लाने साजौ रै है। उयै पकरबे भीम खों पौंचाव गओ सो बे भंड़या लै आये और जैतकरन के सिंगार में देवतन ने उ के बारन में बन्न-बन्न के रतन बाँद दये ।

महादेव बब्बा नें गुनीं के गर धरती बादर एक हो गयै तो सिंसारी नर नारियन कों काँ पंत परे? एई सें उननें ब्याव बिगारने के लाने अपनी छाती के मैल से एक कउआ बनाव उर सिकै कें छोड़ दओ ।

ब्याव की बेरी बो कउआ काँव काँव करकें चिल्यान लगो कै कलजुग आ गओ, का कलजुग आ गओ । सो देवतन ने असगुन जान ब्याव टार दओ उर उठ कें अपनें अपनें ठिकानन पै चले गये।''[15] एवं वे 'गान परबौ' लोक कथा में समाज की वास्तविक अवधारणा को प्रस्तुत करते हैं-''एक दार भौत बुरओ अकाल परो । जनी मान्स दानें-दानें खों ललान लगे । सूरज देवता नें देखो सो पीरा में पीरे परन लगे । उनें खबर लगी कै एक जमादार मैंतर की खोंडिया में भौत अन्न धरो सूरज नें मैंतर सें अन्न उदार लओ उर परजा में बाँट दओ। कछू दिनन बाद सब ठीक हो गओ पै सूरज देवता मैंत कौ करजा दैवो बिसर गये अब बड़कें बौ भौत हो गओ । (यहाँ हमें संत रैदास की वह पंक्ति याद आती है- मन चंगा सो कठौती में गंगा)

जब कभउँ बौ मैंतर बसूली खों निकरत सो सूरज के पाछें परत उर वे दुकत फिरत। जब सूरज, चंदा की ओट हो जात सो इंदयारौ हो जात । मैंतर हार के रै जात ।

हम सब जान्त कै गान पर रओ। सूरज भगवान पै आफत आ गई एई सें गान परे पै पिरजा मैंतरन खों नाज कौ दान देत । कत कै अन्न दान सें गान परे पै भौत पुन्न लगत । काय कै भगवान की बिपदा में दान दैवे बारे कर्जा पटावे में हात आ बटाउत ।''[16] वहीं बुंदेली लोक कथाकार रमेश चंद्र मनयां की लोक कथा लल्लतपुर कभउँ न छोडियो जब नौ मिलें उधार' में ग्राम्य जीवन का ग्राम-जीवन का सजीव चित्र दिखाई देता है, यथा-

'' झांसी गरे की फांसी, दतिया गरे कौ हार ।
लल्लतपुर कभउँ न छोड़ियो, जब नौ मिले उधार ।''[17]

बुंदेली लोककथाओं में व्यापक लोकादर्श है क्योंकि बातपोश कथा सुनने वाले के ध्यान को कल्पना-लोक से हटाकर यथार्थ की भूमि पर ला देता है तथा प्रासंगिक विषयों से जोड़ देता है। नि:संदेह प्राचीन रूढ़ियां और परम्पराएं तथा पुरातन मूल्य- कई संदर्भो को समेटे हुए वर्तमान समय को गतिमयता और जीवन्तता प्रदान करते हैं। इनके कथानक, पात्र,चरित्र, नायक, व्यवहार, सभी हमारे लिए आदर्श हैं।

बुंदेली लोककथाओं में अभिव्यक्त व्यापक लोक चेतना और लोकादर्श के कारण लोक जीवन में अधिक गृहीत हैं तथा लोक मुख में जीवित हैं, इतना ही नहीं इनमें समूचा लोक समाहित है तथा जन-मन की लोकरंगी जीवन दृष्टि को स्थापित किया गया है और इसकी स्थानीयता की अनुरंजना सम्पूर्ण लोक जीवन की विशालता, उसकी संस्कृति का बोध कराते हैं। यही कारण है कि बुंदेली लोक कथाएँ समय की धरोहर हो गई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. डॉ. सत्येन्द्र : लोक साहित्य विज्ञान, पृष्ठ 203
2. शुक्ल, डॉ. केसरीनारायण : रूसी लोक साहित्य पृ. 204
3. कबीर, कैलाश अनुवादक : भारत की लोक कथाएं, पृ भूमिका के 34-35
4. दुबे, डॉ. भारती : बुंदेली साहित्य का इतिहास, पृ. 353
5. वही- 353
6. वही - 354-355
7. वही - 355
8. वही- 355
9. शुक्ल, डॉ. केसरीनारायण : रूसी लोक साहित्य पृ. 08
10. वही -356
11. दुबे, डॉ. भारती : बुंदेली साहित्य का इतिहास, पृ.-360
12. दुबे, डॉ. भारती : बुंदेली साहित्य का इतिहास, पृ.-357-358
13. अनु.कैलाश कबीर : भारत की लोक कथाएँ पृ. 54-55
14. वही- 361
15. मड़बैया, कैलाश : बाँके बोल बुंदेली के, बुंदेलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद् 34/10 दक्षिण तात्याटोपे नगर भोपाल 462003 पृ. 109
16. मड़बैया, कैलाश : बाँके बोल बुंदेली के, बुंदेलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद् 34/10 दक्षिण तात्याटोपे नगर भोपाल 462003 पृ. 109
17. वही - 137

****

इतिहास और साहित्य : एक अवलोकन

प्रो. प्रेमलता तिवारी *

इतिहास और साहित्य परस्पर पूरक है। पता ही नहीं चलता कि इतिहास में साहित्य है या साहित्य ही इतिहास का आधार है। इतिहासकार के लिए अतीत की गौरवपूर्ण गाथाओं में से तथ्यों को तलाशना एक चुनौती है। तो साहितयकार के लिए इतिहास की गौरवपूर्ण गाथाओं की रक्षा करना एक चुनौती हैं। 'प्रसाद' 'डॉ वर्मा' जैसे कई प्रसिद्ध साहित्यकार हुए है। जो इस चुनौती पर खरे उतरे है। तो ऐसे भी इतिहासकारों की कमी नहीं है जिन्होंने तथ्यों के आधार पर इतिहास की रक्षा की है। इतिहास में साहित्य और साहित्य में इतिहास कुछ ऐसा ही है कि गगरी में पानी है या पानी में गगरी है। इतिहास अपने आप में हमारे अतीत की गौरवपूर्ण गाथा है और इस गाथा का संरक्षक साहित्य है। इतिहास परत दर परत हमारे अतीत को हमारे सामने रखता है और साहित्य उसी के आधार पर वर्तमान में रहकर भविष्य के सपने संजोता है। दोनों परस्पर दूध पानी से घुले मिले है। एक के बिना दूसरे के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगता है।

इतिहास की धरोहर साहित्य की सृजनात्मकता का आधार है। यह अजीब सी बात है कि इतिहास को अतीत की गौरवमयी झांकी कहकर इतिश्री कर ली जाती हैं जबकि यही इतिहास साहित्य की मानव अंतरात्मा का गीत है, जीवन के पुनसृजन की नींव है। जन जीवन के साहित्य को इतिहास से काटा नहीं जा सकता। इंसान को जानने समझने का एक रास्ता साहित्य ने बनाया है। वैदिक युग के साहित्य से लेकर मध्ययुग के भक्ति साहित्य तक इंसान के सरल रूप की एक छाप मिलती है। ''बात यह है कि मनुष्य का इतिहास एक है। दुनिया को शून्य और दशमलव दिया तो वे दस-बीस सदियों बाद चलकर डीजिटल क्रांति के रूप में लौटेंगे ही।''- आलोक श्रीवास्तव

स्पष्ट है कि इतिहास अपने आप को किसी न किसी रूप में दोहराता ही है और साहित्यकार उसी के माध्यम से साहित्य की चुनौतियों को स्वीकार करता। वैश्वीकरण की दुनिया में विश्व इतिहास के आधार पर ऐसा साहितय रचा जा रहा है जो वैश्विक परिवार के लिए प्रेरक बने। भारतीय धारावाहिकों की लोकप्रिय श्रृंखलायें जैसे 'तमस', 'भारत एक खोज', 'टीपू सुल्तान', 'झांसी की रानी' की ऐतिहासिक गाथाएँ इतिहास से ही चुनी गई है। जिसमें तथ्यों की रक्षा करते हुए कहानी गढ़ी जाती है।

प्रथम विश्वयुद्ध के समय का साहित्य दार्शनिक और आध्यात्मिकता से परिपूर्ण था जो सशक्त और उर्जावान प्रतिक्रिया का उदाहरण बना। जिसके आधार पर एक बहुत बड़ी साहित्यिक क्रांति हुई और यहीं क्रांति आज इतिहास के रूप में याद की जाती है। स्पष्ट है कि दोनों का संबंध सर्वशक्तिमान है ऐसा कोई देशकाल नहीं है जो एक दूसरे से अलगाव कर जीवित रह पाए है। साहित्य और इतिहास के दो छोरों के बीच ही आज भी विश्व अपने जीवन के सूत्रों को तलाश रहा है।

आरंभ में मानव अपूर्व जिज्ञासाओं का पुतला था जिसका शीघ्र ही निर्भीक विश्लेषण कहानी के रूप में प्रारंभ हुआ। अग्नि, वायु, वर्षा जैसे प्राकृतिक प्रहारों पर वश नहीं था। तो उसे छोटी छोटी चमत्कारिक धर्म पर आधारित कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया। यहीं से साहित्य व इतिहास के संबंधों की शुरूआत हुई होगी।

"History is the study of human part as it described in the written documents lEet by human beings."

''साहित्य चिंतन, दर्शन और संवदेन जीवन का दूसरा नाम है।''

- विवेकानंद

छोनों जीवन के विविध पक्ष संजोये हुए है।

'' समय की देहरी पर गूंजते जिंदा सवाल। कहीं आधी आबादी का विमर्श है, कहीं इतिहास का लेखा जोखा और कहीं दर्शन का पुनर्चिंतन।''

स्पष्ट है कि इतिहास को जीवंत रखने की जिम्मेदारी साहित्य की है। भक्तिकाल के सन्तों ने काव्यानुभूति के मखमली अहसास को जीवंत रखते हुए राजनीति, दर्शन, धर्म सभी को फूलों के रूप में पिरोकर जो साहित्यिक माला बनाई है उसी ने 1200 से 1700 के काल के इतिहास को अमर कर दिया है। इतिहास मानव के लिए सबक लेकर आगे बढ़ने का साधन है तो साहित्य तथ्य और मनोरंजन के मेल से इंसान को सिखाने का माध्यम है। इतिहास मानवता की कहानी है तो साहित्य मानवता का मूर्त रूप। जिसमें तात्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक सभी प्रकार की परिस्थितियाँ स्थान पाती हैं प्राचीन घटनाओं जैसे खेल, युद्ध, संगीत, प्रेमकथाओं का अध्ययन इतिहास में है तो युद्ध/प्रेम के अंत:स्थल तक पहुंच उसे अनुभूतिमय बना जीवंत रखने का काम साहित्य का है।

उज्जवल छोटी छोटी मार्मिक ज्ञानप्रद पंचतंत्र जैसी दंतकथाओं से ही बाल मनोविज्ञान की नींव रखी गई होगी और शायद इसी प्रकार के प्राचीन साहित्य से इतिहास के तथ्य तलाशे जाते होंगे। हेमिंग्वे द्वारा प्रथम विश्वयुद्ध की कहानियों के युग में एक अन्त: दृष्टि के रूप में साहित्य इतिहास में बदल देता है। बाइबिल एक साहित्यिक कला के रूप में ही धर्म को प्रश्रय देता हैं जिसके ऐतिहासिक विवरण से पता चलता है कि इतिहास साहित्य से जुड़ा हुआ है। साहित्य जब लिखा जाता है तब वर्तमान का दर्पण होता है पर एक लंबे अंतराल के बाद पाठक लेखक की घटनाओं में इतिहास तलाशने लगता है। प्रेमचंद की कहानियों में स्वतंत्रता पूर्व के गांवों का यथार्थ चित्रण इतिहासकार को सही तथ्य प्रदान करता है। वर्तमान साहित्य कलात्मक तथ्य लिए पाठकों को ज्ञानवर्धक मनोरंजन करता है तो वही साहित्य आगे चलकर राष्ट्रीय चरित्र का मुख्य स्वर बन जाता है।

'' जब समुद्र के एक छोर से दूसरे छोर तक उत्तर भारत पराभूत होकर मध्य एशियाई विजेताओं के चरणों में पड़ा था, उस समय देश का दक्षिण भाग भारतीय धर्म एवं सभ्यता का शरणस्थल बना रहा। सदियों तक मुसलमानों ने दक्षिण पर विजय प्राप्त करने का प्रयास जारी रखा किंतु वे वहां अपना पैर मजबूती से कभी जमा नहीं पाये।''

क्योंकि यहीं वह समय था जब रामदास और तुकाराम के पदों में निहित धर्म के लिये प्राण देने को कृषक, मजदूर, घुड़सवार कटिबद्ध थे।

स्पष्ट है कि इतिहास का ओर छोर साहित्य द्वारा आवेष्टित है। ऐतिहासिक और साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में स्वाभाविक रूपांतरण की दृष्टि से देखें तो हम अधिक संगत और मूलगामी निष्कर्ष तक पहुंच सकते हैं साहित्य में हमारे देश के हर युग को अपने ढंग से प्रभावित किया है। साहित्य इतिहास

* प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, शासकीय जवाहरलाल नेहरू महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

से आक्रांत हुए बिना नहीं रह सकता। विशिष्ट साहित्यकार 'प्रसाद' की सर्वश्रेष्ठ कृति 'कामायनी' का आधार ही इतिहास है–

'' अपने को जानने और रेखांकित करने की छटपटाहट उसे अतीत से मुठभेंड़ करने की प्रेरणा और शक्ति देती है। भक्तिकाल का लोकजागरण इसी छटपटाहट की रचनात्मक परिणति थी। *–प्रो. जयसिंह*

वर्तमान अपनी कठिनाई के समाधान की खोज का प्रारंभ ही इतिहास से करता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि उत्थान और पतन और फिर उत्थान के निरंतर चलने वाले चक्र में जब पतन का समय आता है तब मृतप्राय: समाज में जान फूंकने की जिम्मेदारी साहित्य की होती है और साहित्य इतिहास के कंधों पर बैठकर समाज को अपनी करिश्माई शक्ति से परिवर्तित कर देता है। कबीर के दोहे हो या मीरा के पद, प्रसाद के नाटक हो या प्रेमचंद की कवितायें, भारतीय इतिहास को आधार मान कर अमर हुई है। मानव इतिहास में विश्व कल्याण के लिए लिखा गया साहित्य इतिहास को जीवंत रखने का माध्यम है। मानव सभ्यता के विकास में पल पल साथ देता साहित्य इतिहास को हमेशा प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से साथ में रखता है।

ज्ञानार्जन हो या शिक्षा प्राप्त करने का माध्यम हो, धर्म का प्रचार हो या रणक्षेत्र की पृष्ठभूमि, साहित्य जब जब आगे बढ़ता है तो अपना अतीत इतिहास के पन्नों में ही सुरक्षित रख आगे बढ़ता है। धर्म, परंपरा, विश्वास, रीति रिवाज, संस्कृति की साहित्यिक यात्रा इतिहास की गलियों से ही गुजरती हैं जहां वह अपनी यादों को विरासत के रूप में थोड़ा आगे बढ़ाता है। ''विश्व के किसी भी परिवेष से जुड़ना है तो वहां के लोक साहित्य को आत्मसात करना होता है। साहित्य इतिहास के पन्नों से झांककर ही संस्कृति को विभिन्न विधाओं के माध्यम से चिरस्मरणीय तथा संग्रहणीय बनाता है।

जगदीशचंद्र माथुर का ''कोणार्क'' हो या डॉ. अर्जुन शतपथी का हिन्दी उपन्यास ''पाषाण के थिरकते चरण'' हो, प्रसाद का ''चंद्रगुप्त'' हो या आचार्य चतुरसेन का ''वैशाली की नगरवधु'' ऐसा लगता है इतिहास जीवंत होकर सांस्कृतिक सौदर्य में परिवर्तित हो गया है। इतिहास निरसता से मुक्त हो रसानुभूति से सराबोर हो साहित्य का रूप धारण कर लेता है।

इतिहास की गोद में साहित्य की आंखें खुली है। यथार्थ उत्सव मनाता है, अनुभव गीत गाते है, अनुभूतियाँ सांस्कृतिक विरासत का संदेश साहित्य के माध्यम से जीवन के रग रग को प्रभावित करती है। घटनायें इतिहास में जगह बनाती है। भावनाएँ रस घोलती है। आशाएँ सपने बुनने लगती है। सत्य का आग्रह गतिमान होता है, कौतहुल जगाता है। सत्य के कदम समय की छाती पर निशान अंकित कर आगे बढ़ जाते है।

विचारों के पंख आकाश को समेटने में लग जाते है और धीरे धीरे साहित्य के अंकित पदचिन्हों पर इतिहास पनपने लगता है। सफलता हो या असफलता वह इतिहास की धरोहर बन जाती है। समाज साहित्य और इतिहास के बीच की धुरी बन जाता है। साहित्यकार, सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक गहराईयों में डूबकर मोती ढूंढ लाते है। यही साहित्य समाज का आज है और इतिहास साहित्य का बीता हुआ कल है।

संदर्भ ग्रंथ–

1. अहा जिंदगी – अगस्त 13 भास्कर परिवार, जयपुर
2. अहा जिंदगी– जुलाई 13 मालवीय नगर, जयपुर
3. विवेकानंद साहित्य – भाग 3
4. हंस– सितंबर 08 अक्षर प्रकाशन, दिल्ली
5. नया ज्ञानोदय–भारतीय ज्ञानपीठ अगस्त 2008
6. साहित्य संवर्धन यात्रा–अखिल भारतीय साहित्य परिषद, दिल्ली
7– **www. Hindi Sahitya Niketan.com**
8- **www.shodh samiksha aur mulyankan. com**

****

प्राचीन यूनानी चिंतन में प्लेटो की भूमिका

डॉ. नरेन्द्र सिंह *

यूनान और रोम पश्चिमी यूरोप की संस्कृति, सभ्यता, परंपरा के उद्‌गम हैं। पाश्चात्य समीक्षा या साहित्य वास्तव में पश्चिमी यूरोप का समीक्षा साहित्य है। पूर्वी यूरोप संस्कृति, सभ्यता एवं परंपरा के स्तर पर पश्चिमी यूरोप से भिन्न है। यूनान और रोम का दार्शनिक चिंतन,उसकी राजनीति-सामाजिक पृष्ठभूमि, उसके नियम-कायदे, उसकी साहित्यिक-सांस्कृतिक विचारधारा सभी कुछ का प्रभाव आज के पश्चिमी यूरोप पर है। टी.एस. इलियट का कहना है कि ''वर्तमान पश्चिमी सभ्यता का अर्थ और केन्द्रीभूत मूल्य तभी स्पष्ट हो सकता है जब यूनानी कवि होमर से लेकर आज तक का पश्चिमी साहित्य एक श्रृंखलाबद्ध परंपरा माना जाय।''[1]

यूनान में ईसा के आठ नौ सौ साल पहले का जो साहित्य उपलब्ध है उससे पता चलता है कि इस काल में 'काव्य' पर विमर्श आरंभ हो चुका था। होमर की कविता की चर्चा प्लेटो ने की है एवं अपने विचारों के संदर्भ में उसका उल्लेख किया है। आठवीं सदी ईसा पूर्व में 'हेसियाड' कविता हेतु 'अन्त:प्रेरणा' को तो स्वीकार करता है परन्तु उसका कहना है कि कविता वही श्रेष्ठ है जिसमें शिक्षा, आदर्श और जन कल्याण की भावना मुखरित हो।[2]

छठवीं सदी ईसा पूर्व का ग्रीक कवि पिण्डार काव्य में 'प्रतिभा' का महत्व स्वीकार करता है एवं नैतिक अनुदेशों का भी उल्लेख करता है। पाँचवी सदी ईसा पूर्व के दो कवि गोर्जियास और एरिस्टोफेन्स ग्रीक साहित्य के प्रसिद्ध कवि है। गार्जियस 'शब्द' की शक्ति को पहचानता है। उसका कथन है कि 'शब्द' में महान शक्ति होती है। उसके द्धारा भय तथा दुख का शमन होता है और आनन्द तथा आत्मविश्वास का प्रकाश।'' गार्जियस काव्य की शक्ति को मोहित करने में समर्थ मानता है। उसके अनुसार कविता विश्वास उत्पन्न कर अपने जादू के प्रभाव से आत्मा में परिवर्तन करने में समर्थ होती है।''

ईसा पूर्व की प्रथम सदी तक यूनान का काव्य संबंधी चिंतन किस तरह का था? उसकी कविता संबंधी क्या धारणा थी? उक्त संदर्भ में प्लेटो पूर्व विचारकों के अलावा प्लेटो के पश्चातवर्ती जिन विचारकों की काव्य संबंधी धारणाओं का उल्लेख किया जा सकता है। उनमें होरेस, सिसरो, वर्जिल, क्विण्टीलिअन आदि प्रमुख हैं। कविता के प्रभाव के संबंध में होरेस की मान्यता है कि कविता पाठक में वीरत्व और विवेक जागृत करती है और इससे पाठक के क्षण आनन्दपूर्वक व्यतीत होते हैं। इसलिए वह दिव्य वस्तु है। वह मनोवेगों को आंदोलित करने में सक्षम है, अच्छी कविता वही होती है, जिसमें प्रतिभा और शिल्प का सुन्दर सामंजस्य हो।'

ईसा पूर्व की काव्य समीक्षा में सिसरो का नाम भी उल्लेखनीय है। सिसरो वक्ता और कवि का संबंध निकटता का बताता है। वह कहता है दोनों ही अपनी लय को नियन्त्रित करते रहते हैं और शब्दों के चयन में स्वतंत्र रहते हैं।

सिसरो ने काव्य में 'युवावस्था का भोजन' और 'वृद्धावस्था का आनन्द' निहित बताया है। ये (वक्तत्व एवं काव्य) रचनाएँ सुख समृद्धि को बढ़ावा देती है, सौभाग्य और सहारा देती हैं, आनन्द प्रदान करती हैं, और बाहरी कोई रूकावट पैदा नहीं करती और हमारे अवकाश के क्षणों को बाँट देती है।[3]

वर्जिल की प्रतिष्ठा महाकवि के रूप में है। उसका काव्य नैतिक आदर्शों एवं राष्ट्रभावना से प्रेरित है। वह अपने देश रोम को 'राष्ट्र देवता' के रूप में चित्रित करता है। वह नैतिक आदर्शों से रहित काव्य की कल्पना नहीं करता।

मारक्स फेबियस क्विण्टीलियन वक्तृत्व कला को काव्य कला से श्रेष्ठ मानता है 'क्योंकि' कविता का आह्वद अविश्वसनीय बातों पर निर्भर करता है।

प्राचीन यूनानी साहित्य व्यापक एवं समृद्ध है। प्राचीन उपलब्ध अधिकतर ग्रंथ धार्मिक हैं जिनमें कई प्रसंग ऐसे मिलते हैं जिनसे काव्य के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है। प्राचीन यूनानी साहित्य मुख्यत: दो विधाओं में मिलता है नाटक और महाकाव्य। इनमें नाटक ज्यादा महत्वपूर्ण है। प्राचीन यूनान में नाटक धार्मिक उत्सवों से घनिष्ठ रूप से संबंद्ध रहा है। होमर के महाकाव्य 'द इलियड' 'द ओडिसी' और अरिस्टोफेनस, एस्काइलस, सोफोक्लेश तथा यूरिपाइडीज की नाट्य रचनाओं को आधार बनाकर बाद में काव्य चिंतन की परंपरा आरंभ हुई। नाटकीयता का असर उस समय इतना था कि विशिष्ट समारोहों में 'महान काव्य' के अंश पढ़कर सुनाए जाते थे। पढ़कर सुनाने वाले कवि के समान ही विशिष्ट माने जाते थे।

उस युग में नाटक की प्रधानता थी। नाटक को काव्य शास्त्र का आधार माना जाता था। जिस प्रकार प्राचीन भारतीय काव्य शास्त्र में नाटक की विवेचना का प्रमुख आधार था, उसी प्रकार प्राचीन यूनानी काव्यशास्त्र भी नाट्य केन्द्रित था। भरत ने नाट्यशास्त्र में उल्लेख किया है कि देव-दानव युद्ध में दानवों के परास्त हो जाने पर नाटक खेला गया। यह दैवी शक्तियों की विजय का उत्सव था, यह विजय मानव कल्याण का पथ प्रशस्त करने वाली थी। इसी मानव कल्याण की बात प्लेटो के यहाँ मिलती है। नाटक का मंचन ऐसी विधा है जो सीधे असर डालती है, वह प्रत्यक्ष विधा है। प्लेटो के समय वही कवि महान हो सकता था जिसकी कला सच्ची हो, जो सत्य का उपदेश देती हो और समूचे राष्ट्र के गौरवशाली विकास की प्रेरणा देता हो। प्राचीन यूनानी कवि काव्य देवी की प्रेरणा की बात करते हैं और उनका आग्रह ऐसी कविता का है जो व्यक्ति और समाज के लिए कल्याणकारी हो।

प्लेटो मूलत: काव्यशास्त्री नहीं था, वह कवि भी नहीं था। वह एक दार्शनिक एवं समाजशास्त्री था, सृष्टि और जीवन के प्रश्न उसके चिंतन के मूल प्रश्न थे। स्पष्टत: प्लेटो ने काव्य पर बतौर काव्य के विचार नहीं किया। उनकी दृष्टि काव्य पर केन्द्रित नहीं रही। उनके विवेचना का केन्द्र उनकी परम सत्य की परिकल्पना है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि प्लेटो में काव्यशास्त्री का रूप प्रधान नहीं है। उनका काव्य विवेचन आनुशंगिक एवं उनके चिंतन की व्यवस्था गौण है।[4] प्लेटो काव्य शास्त्री की तरह 'कविता में क्या हो' इसकी व्याख्या नहीं करता वरन् एक दार्शनिक की तरह 'कविता में क्या हो' इसका निर्णय देता है। प्लेटो कविता का विरोध मुख्यत: निम्न कारणों से करता है- कविता सत्य से तीन गुनी दूर है, वह अनुकरण का अनुकरण है अत: वह 'सत्य' नहीं है।'' वास्तव में प्राचीन यूनान के कलाविद, कला विवेचन में नैतिक दृष्टिकोण को प्रधानता देते रहे है। । वे सर्वश्रेष्ठ उपदेशक को ही सर्वश्रेष्ठ कवि मानते रहे हैं। महाकवि होमर की महानता जीवन के लिए एक विशेष आदर्श रूप प्रस्तुत करने में है। सुकरात आदि विचारक कला का सच्चा रूप आदर्श के अनुकरण में मानते हैं। कलाकृति में यथार्थ का निर्माण नहीं होता, वरन् छायाभास होता है। अत: वे सब कला को

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

अनुकृति मानते रहे हैं, स्वतंत्र सृष्टि नहीं। इस पूर्व धारणा का प्रभाव प्लेटो पर पड़ा होगा। प्लेटो प्रमुखत: एवं प्रत्यक्षत: समाजशास्त्री था। समाज को केन्द्र मानकर उसने कविता कला आदि का विवेचन किया है। अपने प्रसिद्ध गंन्थ 'रिपब्लिक' में उसने काव्य को प्रकृति का अनुकरण और प्रकृति को सत्य का अनुकरण बताते हुए कविता को 'अनुकरण का अनुकरण' कहकर उसे सत्य से दुगुनी दूर बताया है।''[5] प्लेटो उदाहरण देकर बताता है कि ईश्वर पलंग की आकृति तय करता है, बढ़ई उस आकृति की नकल करता है और चित्रकार बढ़ई के पलंग का चित्र बनाता है अत: वह सत्य से दो गुना दूर है। प्लेटो का कहना है कि ईश्वरकृत प्राकृतिक पदार्थ मौलिक होते हैं, इनकी प्रतिकृति मानव द्धारा होती है अत: वे प्रतिकृति हैं, यह अनुकृति दो तरह की हो सकती है, यथार्थ प्रतिकृति सत्य की प्रतिलिपि होती है और दूसरी छायांकन की तरह होती है इसे फेंटास्टिक आर्ट कहा जाता है। ''वस्तु के आदर्श सत्य को वस्तु में देखना और ऐसे अनुभव को माध्यम द्धारा व्यक्त करना कला है। यही प्लेटोवाद है। सिडनी, स्पैंसर, शेक्सपियर, ड्रायडन, डेवनैण्ट, वर्डसवर्थ और शैली प्लेटोवाद से प्रभावित रहे हैं। शैली अपने 'डिफेन्स आफ पोयट्री' नामक निबंध में लिखता है, ''दैनिक मन कवि को सहज गान के लिए उत्तेजित करता है और उसे जीवन की ऐसी प्रतिभाओं की रचना के लिए अग्रसर करता है, जो नित्य सत्य का दर्शन देती है।''[6] प्लेटो मानता है कि यदि काव्य का रूप प्रेरणा, प्रभाव आदि ऐसे हो जो व्यक्ति को मूल सत्य से दूर ले जाते हों तो ऐसा काव्य सर्वथा त्याज्य है।

प्लेटो ने 'रिपब्लिक' में कहा है कि काव्य में भावनाओं को उत्तेजित कर दिया जाता है, जिससे नागरिक का मानसिक संतुलन नष्ट हो जाता है। अत: जिस गणराज्य में भावनाओं का उतार-चढ़ाव होता है वहाँ विवेक नहीं रह सकता। काव्य की नफासत या शैली का वैचित्र्य प्रयोजन हीन है, क्योंकि उससे भावनाओं को केवल उत्तेजित किया जाता है, न कि सदगुणों का सृजन। प्लेटो के समय जो काव्य प्रचलित था, उसमें देवताओं का उपहासात्मक वर्णन होता था। होमर के काव्य में देवी-देवताओं का चरित्र क्षुद्र और पतित है। उनमें हिंसा है, वे झूठ बोलते हैं, धोखा देते हैं, चोरी करते है।, मानव के दुख और विपत्ति पर हर्षित होते हैं तथा परस्पर द्धेष और प्रतिहिंसा से भरे हुए हैं। प्लेटो के युग में देवी या देवता का स्वरूप नैतिक दृष्टि से कोई आदर्श महान या गरिमाशाली नहीं था। इसीलिए प्लेटो काव्यदेवी से आविष्ट होकर होने वाली रचना को भी विशेष की स्थिति का एक प्रकार मानते हैं। पश्चिमी काव्य में कवि को बहुत कुछ विक्षिप्त माना गया है। अपने ग्रंथ आईवान (Ion) में प्लेटो अपने गुरू सुकरात से कहता है कि कवि एक प्रकार से विक्षिप्त मनुष्य की भाँति अपनी रचना की अभिव्यक्ति करता है। प्लेटो किसी अन्य जगह कहता है'' एक प्रकार की विक्षिप्तता उन लोगों की है जो काव्य देवी से आविष्ट होते हैं। प्लेटो की दृष्टि में यह आवेश हेय है जो सुकोमल और अक्षत आत्मा को अभिभूत कर लेती है और उसमें उन्माद का 'संचार' करती है। जो कवि अपनी आत्मा में काव्य देवी के अनुग्रह से जनित इस विक्षिप्तता का स्पर्श पाए बिना द्धार पर उपस्थित होता है और समझता है कि अपनी कला के बल पर वह मंदिर में प्रवेश पा जाएगा, मैं कहता हूँ उसे और उसकी कविता को प्रिविष्ट नहीं किया जाता, वह व्यक्ति विलुप्त हो जाता है, और उस विक्षिप्त व्यक्ति की प्रतिद्धंद्धिता में खड़े होने पर उसका कोई भी स्थान नहीं होता।[7] प्लेटो ने त्रासदी के आस्वाद की समस्या पर भी विचार किया है। वे काव्य से प्राप्त होने वाले आनंद की तीन कोटियाँ मानते हैं ऐन्द्रिय आनंद, बौद्धिक आनंद, आत्मिक आनंद। वह ऐन्द्रिय आनंद को निकृष्ट कोटि का मानता है। त्रासदी में व्यक्त दुख का भाव भी सामाजिक में आनंद का अनुभव पैदा करता है। त्रासदी के पात्रों की विपत्ति को देखकर जो आनंद प्राप्त होता है उसे प्लेटो सामाजिक नैतिकता के विपरीत एवं निंदनीय मानता है। जिस काव्य के श्रवण आदि से विवेक कुंठित हो जाए, निम्न वृतियों का पोषण हो तथा निम्न कोटि के इन्द्रिय आनंद की उपलब्धि हो, वह निश्चित ही त्याज्य है। अंतत: अनुकृति होने के कारण भी त्रासदी सत्यभ्रष्ट होती है।

इसी तरह प्लेटो कामदी को भी अस्वीकार करता है। ''कामदी का अभिनय या श्रवण कर तुम्हें असाधारण आनंद की उपलब्धि हो सकती है, और मित्र मंडली में ऐसे परिहास में, जिसे स्वयं करने में तुम लज्जा का अनुभव करो, उनकी अपकृष्टता से भी तुम्हें विरूचि नहीं होगी, परंतु ऐसा करके क्या तुम उस परिहास वृति को प्रतिफलन का अवसर नहीं देते जिसका तुमने दमन किया हुआ था, क्योंकि तुम्हें डर था कि तुम्हें विदूषक न समझ लिया जाए ? और अब तुम उसे खुलकर खेलने का अवसर देते हो और इन अभिनयों में उसका परिपोषण करते हो।

फलत: बहुधा ऐसा होता है कि तुम अनजाने अपने व्यवहार में प्रहसन कवि की सीमा तक पहुँच जाते हो।''[8] इन सब कारणों को ध्यान में रखते हुए प्लेटो अपने ग्रंथ रिपब्लिक में कहता है कि काव्य में भावनाओं को उत्तेजित कर दिया जाता है, जिससे नागरिक का मानसिक संतुलन नष्ट हो जाता है, वहाँ विवेक नहीं रह जाता, फलत: गणराज्य से कवि को ससम्मान निष्कासित कर देना चाहिए। परन्तु वह उस कविता का राज्य में सम्मान करता है जो सद्गुणों का सृजन करे, नैतिक गुणों का बखान करे, जो मनुष्य सइन्द्रयों को जगाता हो, जीवन को अनुशासन, संयम एवं व्यवस्था प्रदान करता हो, राज्य में विधि एवं न्याय की सत्ता का समर्थक हो।

ऐसा काव्य जिसके प्रभाव से पाठक या श्रोता के मन में निर्मल भावों का संचार हो तथा उसे सन्मार्ग की ओर प्रेरित करे वह निश्चय ही काम्य एवं मूल्यवान समझा जाएगा। प्लेटो के चिंतन की सीमाएँ ऐतिहासिक हैं। उनका समय, समकालीन परिदृश्य की पृष्ठभूमि उनके चिंतन को प्रभावित करते हैं। उनका अनुकरण सत्य से दूर होने का सिद्धांत, उनके चिंतन पर प्रभावी है। प्लेटो ने परवर्ती काव्यशास्त्र के विकास के लिए एक भूमिका का निर्माण कर दिया था। अनुकृति, त्रासदी का आस्वाद, काव्य प्रेरणा, काव्य का उद्देश्य आदि विषयों की चर्चा करते हुए प्लेटो ने काव्य की महत्वपूर्ण समस्याओं का स्पर्श किया। काव्य की सामाजिक उपयोगिता, काव्य की दैवी प्रेरणा, काव्य में नैतिकता, लोक कल्याण, धार्मिकता आदि विचारों ने लौंजाइनस एवं मैथ्यू अर्नाल्ड पर प्रभाव डाला।

त्रासदी के संदर्भ में प्लेटो अरस्तु के लिए विवेचन की संभावना पैदा करता है, व्यक्तिगत आपदाओं, क्रन्दन, विलाप की निर्बाध अभिव्यक्ति की बात करता है और 'दमन' के परितोष और प्रसादन की बात करता है तो वह न सिर्फ विरेचन का रास्ता साफ करता है बल्कि फ्रायडीय चिंतन की पृष्ठभूमि भी उपलब्ध करा देता है। प्लेटो की ऐतिहासिक स्थिति एक तरफ उनकी सीमाओं को दरवाजे की देहरी तक रोकती है तो दूसरी तरफ संभावनाओं के दरीचे भी खोलती है।

संदर्भ सूची :

1. साहित्य समीक्षा के पाश्चात्य मानदण्ड- डॉ. राजेन्द्र वर्मा म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 1970 स. प्रथम- पृष्ठ 6
2. पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्त-डॉ. रमेश चन्द्र मिश्र, दिल्ली- 1974 पेज-3
3. पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्त- डॉ. रमेश चन्द्र मिश्रा
4. पाश्चात्य काव्यशास्त्र का इतिहास-डॉ. तारकनाथ वाली, दिल्ली, सं. द्वितीय P-16
5. पाश्चात्य समीक्षा के सिद्धान्त-डॉ. रमेश चन्द्र मिश्र- I दिल्ली पे. 41
6. पाश्चात्य साहित्य लेखन के सिद्धांत: श्री लीलाधर गुप्त, प्रयाग 1952 P210
7. पाश्चात्य काव्यशास्त्र की परंपरा-सं. डॉ. सावित्री सिन्हा दिल्ली। 1985 P 8-9
8. पाश्चात्य काव्यशास्त्र की परंपरा-डॉ. सावित्री सिन्हा दिल्ली। 1985, P.22

परमालरासो का लोकतात्विक विश्लेषण

डॉ. गायत्री वाजपेयी *

महाकवि जगनिक कृत 'परमालरासो' हिन्दी साहित्य का आदिकालीन काव्य ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ का रचनाकाल इतिहासकारों ने प्राप्त पाठों के आधार पर संवत् 1182 ई. से 1202 के मध्य निर्धारित किया है जो आदिकाल की समय सीमा के ही अन्तर्गत आता हैं ।

इस ग्रन्थ के अनेक पाठान्तर उपलब्ध होते हैं, किन्तु इसके शुद्ध पाठनिर्धारण का कार्य डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त जी द्वारा किया गया है। यद्यपि 'परमालरासो के प्रणेता जगनिक के जीवनवृत के संबंध में प्रामाणिक जानकारी प्राप्त नहीं होती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' में इनका रचनाकाल सं. 1230 माना है।[1] जबकि डॉ. नगेन्द्र ने तेरहवीं शताब्दी के प्रारंभ को जगनिक का रचनाकाल स्वीकार किया है।[2] यद्यपि जगनिक कृत मूल प्रति अप्राप्त है किन्तु इसके जो पाठ निर्धारित किए गये हैं, वही उत्तर भारत में प्रचलित हैं एवं गाये जाते हैं।

'परमालरासो' एक वीर काव्य है जिसमें कलात्मक सौन्दर्य, भाषा सौष्ठव एवं अलंकारिक चमत्कार भले ही उच्चकोटि का न हो किन्तु लोकरंजन की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट काव्य है। जिसे डॉ. शिवकुमार शर्मा ने रासो काव्य की संज्ञा से अभिहित करते हुए कहा है–''इसमें जगनिक की हृदयस्पर्शी भावधारा अजस्त्र गति से प्रवाहित होकर आज तक रसिकों के मन को आप्लावित करती आई है कवि के लिए यह कम महत्व की बात नहीं है। इन गीतों को आल्हारासो भी कहा जाता है क्योंकि उस समय गेय साहित्य को रासो की संज्ञा से अभिहित किया जाता था।''[3]

लोककवि जगनिक द्वारा रचित इस कृति में प्रचुर मात्रा में लोकतत्वों का समावेश देखने को मिलता है। इस ग्रन्थ का कथानक लोक प्रख्यात वीर बनाफर बन्धुओं के जीवनवृत तथा उनसे संबंधित अनेक छोटी बड़ी घटनाओं पर आधारित है। कथा का नायक आल्हा एक इतिहास पुरूष हैं। कथा में वर्णित कुछ घटनाऐं इतिहास से प्रमाणित होती हैं, तो अनेक घटनाऐं काल्पनिक भी हैं वैसे 'परमालरासो' की सभी घटनाऐं आल्हा, ऊदल के जीवन चरित्र से संबद्ध हैं इसमें चरित्र की प्रधानता है किन्तु चरित्र विकास हेतु कथानक के गठन एवं विकास में लोक कथाओं में प्रयुक्त अनेक कथानक रूढ़ियों को अपनाया गया है। जैसा कि डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त ने भी स्वीकार किया है – ' प्रत्येक युग के कथानक अपनी कुछ निश्चित कथानक रूढ़ियों के अवलम्बन से गतिशील रहते हैं और जब युग बदलता है तब नये अभिप्राय खड़े हो जाते हैं। आदिकाल के वीररसपरक रासो प्रबंधों में जिन अभिप्रायों का प्रयोग हुआ है वही आल्हा गाथाओं में भी ग्रहण किये गये हैं आल्हा की कथानक रूढ़ियों या अभिप्रायों का अध्ययन और उनकी तत्कालीन रासों ग्रन्थों के अभिप्रायों से तुलना द्वारा यह स्पष्ट है कि आल्हा गाथाऐं आदिकालीन रचनाऐं हैं। समकालीन कथानक रूढ़ियों के आधार पर आल्हा गाथाओं का पाठ निर्धारण करने में सुविधा होगी।''[4]

ऐसी ही ऐतिहासिक कृतियों के संबंध में डॉ. रवीन्द्र भ्रमर ने कहा है – ''ऐसी ही ऐतिहासिक कही जाने वाली कहानियाँ अपने मूल रूप में उतनी ही लोकाकर्षक और काल्पनिक होती हैं जितनी सामान्य जन जीवन की अन्य लोककथाऐं । इनमें केवल ऐतिहासिक व्यक्तियों का नाम भर रहता है। इन नामों को लेकर लोककण्ठ उन्हें अपनी कल्पनागत एवं परम्परागत कथानक रूढ़ियाँ (मोटिफ) ढ़ाल देता है।''[5] 'परमालरासो' के कथानक का गठन एवं विकास भी लोक कथाओं के सदृश्य हुआ है। कवि ने लोककथाओं में प्रयुक्त कथानक रूढ़ियों को ग्रहण किया है। ऐसे लोककथात्मक काव्यों के संबंध में डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का मानना है–''इस कार्य के लिए वह (कवि) कुछ ऐसी कथानक रूढ़ियों का प्रयोग करता है जो कथानक को अभिलाषित ढंग से मोड़ देने के लिए दीर्घकाल से भारतवर्ष की निजन्धारी कथाओं में स्वीकृत होते आए हैं और कुछ ऐसे विश्वासों का आश्रय लेता है, जो इस देश के पुराणों में और लोक कथाओं में दीर्घकाल से चले आ रहे हैं।

इन कथानक रूढ़ियों से काव्य में सरसता आती है और घटना प्रवाह में लोच आ जाती हैं।''[6] जगनिक ने 'परमालरासो' में अनेक कथानक रूढ़ियों का प्रयोग किया है। जैसे देवी देवताओं से बल बुद्धि विद्या प्राप्ति हेतु प्रार्थना एवं सन्देश सम्प्रेषण हेतु शुकादि का सहयोग। 'परमालरासो' में काव्य नायिकाऐं नायक के शौर्य पराक्रम से विमुग्ध हो उनसे विवाह का मानसिक संकल्प कर शुकादि से सन्देश सम्प्रेषित कराती हैं। जैसे सुनवा आल्हा की वीरता का बखान अपनी सखी से सुन उससे विवाह का संकल्प कर हीरामन तोते के माध्यम से आल्हा को पत्र भिजवाती है–

महलन पहुँची पिंजरा मंगाओं, हीरामन से कही सुनाय।
तुमखाँ बारे से पालों तो, इतनी मेवा दई खवाय।।
हीरामन सुनवाँ से बोलो, हमको पाती देव लिखाय।
अबही जैहों मगर महोबे, आल्हे पाती दैहों जाय।।[7]

लोक गाथाओं में किसी ऐसे सिद्ध पुरूष की सिद्धि का भी वर्णन होता है जो अपनी सिद्धि के बल से क्षणभर में चमत्कृत करने वाले इच्छित कार्य कर लेते हैं। माडौंगढ़ की लड़ाई में राजा जम्बे द्वारा सहजो जोगिन की मदद मांगना और सहजो द्वारा अपनी सिद्धि के बल से ऊदल को भेड़ बनाकर गुरू झिलमिला की बगिया में बांधना आदि ऐसे ही चमत्कृत करने वाले प्रसंग हैं–

सहजो जोगिन खाँ बुलबाओ, अब तुम मोरी करो सहाय।
इतनो कहकें सहजौ चलिभै, पौंची सेना के मध जाय।।[8]

कथानक रूढ़ियों में किसी अद्भुत प्रदेश का भी वर्णन होता है जिसमें सब विचित्र और विस्मयकारी होता है प्राय: ऐसे प्रदेश में पहुंचकर नायक या उसके साथी उस प्रदेश के अद्भुत क्रियाकलाप को देखकर आश्चर्य चकित रह जाते हैं। 'परमालरासो' में इस प्रकार के वर्णन मिलते हैं। जैसे माड़ौगढ़ में बरगद के पेड़ पर टँगी जस्सराज और बच्छराज की खोपड़ी की आभा का बोलना, नैनागढ़ में सूखी हड्डियों का चीत्कारना, बूंदीगढ़ में अंधकूप का होना आदि ऐसे ही प्रसंग हैं–

टाँगी खुपड़ियाँ या बरगद मां, आभा बोले औ रहि जाय।
आधीरात के बोलो करत है, लै लै आल्हा ऊदल कौ नांव।।[9]

लोककथाओं में प्राय: नायक.नायिकाओं के परस्पर चित्रदर्शन, गुणश्रवण, गुणकथन, वस्तुदर्शन आदि से उत्पन्न आसक्ति एवं वियोग आदि के वर्णन भी कथानक रूढ़ि के रूप में प्राप्त होते है। 'परमालरासो' में सुनवा का अपनी सखी से आल्हा के पराक्रम का बखान सुन उससे ही विवाह का संकल्प करना एवं माड़ोगढ़ की राजकुमारी बिरमा का ऊदल से विवाह हेतु फुलवा के रूप में पुनर्जन्म लेना आदि प्रसंग ऐसे ही हैं–

अबै की बिछरी कब तुम मिलिहौ, सांची हमें देव बतलाय।
अबै की बिछुरी नरवर मिलवी, फुलवा पड़है नाम हमार।।[10]

कथानक रूढ़ियों में नायक का योगी वेश धारण करना तथा देवी–देवताओं के आशीर्वाद व चमत्कार आदि से इच्छित कार्य की पूर्ति आदि भी आते है। 'परमालरासो' में वर्णित लगभग सभी लड़ाइयों में योगीवेश धारण कर शत्रुदल का रहस्य जानना तथा जादू व दैवीय चमत्कारों का वर्णन मिलता है। माड़ौगढ़ का सारा रहस्य आल्हा, ऊदल योगी बनकर ही जानते हैं और

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाराजा स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

माड़ौगढ़ में सहजो तथा नरवरगढ़ व़ बौरीगढ़ में मालिन जादू चलाती है। मलखान के विवाह में श्यामा भगतिन जादू की पुड़िया छोड़ती है तो ऊदल के रूप पर मुग्ध हो चित्रलेखा नटनी के जादू की मदद से उसे तोता बना देती है। यथा –

लेके पुड़िया भैरोंवाली, केसर नटनी दीन चलाय।
पढ़ि पढ़ि सरसों नटनी मारे, इंदल लोटपोट हुइ जाय।।
सुआ बना कै इंदल कुंवर खाँ, निज पिंजरा मां लयो बिठाय।।[11]

इसी प्रकार 'परमालरासो' में उल्लिखित लड़ाइयों में दैवीय चमत्कार वर्णित है। नैनागढ में अमरढ़ोल जो इन्द्र से प्राप्त है। मरे हुए को जीवित कर देता है। पथरीगढ़ के राजा के पास अगनिया घोड़ा है। वह जिस और पूंछ को घुमाता है आग लग जाती है। इसी प्रकार आल्हा ऊदल के पास उड़ने वाले घोड़े हैं। नरवरगढ़ में तो काठ का घोड़ा, शैल शनिचर और अजीत बाण तीन–तीन दैवीय शक्तियाँ हैं–

सेल्ह सनीचर बान अजीता, काठ का घोड़ा भरै उड़ान।
हिरिया मालिन का जादू रयै, मानुस पाथर देय बनाय।।[12]

कवि ने 'परमालरासो' में अनेक लोकमान्यताओं व लोक विश्वासों का वर्णन किया है। लोक विश्वासों में शकुन अपशुकुन, यात्रा विचार, देवी–देवताओं की अपने भक्तों पर कृपा आदि परिगणित किए जाते हैं। कवि ने 'परमालरासो' में कजली की लड़ाई में महारानी मल्हना के स्त्रवन पर मां शारदा का ऊदल को स्वप्न देना तथा बेला के आभूषण लेने हेतु देवी का इन्द्रलोक गमन तथा मछला हरण में पथरिया कोट से कनवज जाकर पहले मछला के जादू को कीलना फिर उसे पलंग सहित पथरिया कोट उठा लाना तथा नरवर की लड़ाई में विजय हेतु इंदल की देवी मां से प्रार्थना एवं देवी का इंदल को विजय का वरदान देना आदि असम्भाव्य दैवी चमत्कार हैं –

आभा बोली तब देवी की, अपनो कारज देव बताय।
हाथ जोर कै इंदल बोलो, नरवर दीजै बिजै कराय।।
एवमस्तु देवी कह दीनो, तोरी विजय हुय तरवार।।[13]

इसके अतिरिक्त 'परमालरासो' में कतिपय लोकोत्सवों का भी वर्णन मिलता है। लोकोत्सवों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है एक व्रत और दूसरा त्यौहार। त्यौहार में कजरियाँ खोटने का वर्णन विशेष रूप से 'परमालरासो' में हुआ है –

नीकी कजरिया गढ़ महुबे की, द्याखे खौ चढ़ आओ चौहान।''[14]

'परमालरासो' में लोकविश्वासों का भी प्रचुर रूप में वर्णन मिलता है। जैसे युद्धादि के लिए प्रस्थान करते समय ज्योतिष के प्रति विश्वास प्रकट किया गया है। आल्हा के विवाह हेतु नैनागढ़ प्रस्थान से पूर्व शुभ मुर्हूत विचारने हेतु ज्योतिषी को बुलाया जाता है –

आल्हा व्याहन तब हम जैहें, जब तुम शगुन देव बतलाय।
पंडित पुरोहित को बुलवा कै, तुरतै लगन लेव धरवाय।।[15]

इसी तरह यात्रा के समय शकुन अपशुकुन तथा काग के मुड़ेर पर आकर बैठने एवं काग उड़ाने आदि के वर्णन ' परमालरासो' में मिलते हैं। 'परमालरासो' के कथा केन्द्र बनाफर बन्धुओं को महोबा निर्वासन की घोषणा से पूर्व ही अपशुकुन होने प्रारंभ हो जाते हैं। महोबा नरेश परमर्दिदेव जब कालिंजर किले को देखने जाते है तब उनके साथ बनाफर बन्धु आल्हा, ऊदल, मलखान, अन्य मंत्रीगण एवं माहिल मामा भी जाते हैं। इन सभी के यात्रा के समय निकलते ही अपशुकुन होने लगते हैं –

कालिंजर को मैड़ो लग गयो, साँप ने रस्ता काटी आय।
मृगा दाहिने से बांये भा, आल्हा सोचे और रहि जाय।।
होनहार कछु भले ही नाही, मोखां आगम परै दिखाय।।[16]

छींक का विचार भी शगुन–अपशुकुन जानने के लिए होता है। 'परमालरासो' में इसका भी वर्णन मिलता है। लाखन के विवाह का उत्सव मनाया जा रहा है सखियों ने मंगल कलश सजाये हैं, चन्दन चौक पुराया गया है, मंगलगान हो रहे है, पांच पान का वीरा लगाया गया है, जिसे लाखन को खिलाया जा रहा है, लेकिन खिलाते ही छींक हो गई है सभी स्तब्ध हो सशंकित हो रहे हैं –

वीरा खातन तुरत छींक भई, तिलका गई सनाका खाय।
असगुन हुइगौ चौक मां बैठे, ऊदल टीका देउ फिराय।।[17]

इसके साथ ही कवि ने सती होने के प्रसंग को भी कथानक रूढ़ि के रूप में प्रस्तुत किया है। माड़ौगढ़ की लड़ाई, सिरसा की लड़ाई, नदी बेतवा की लड़ाई एवं अन्य लड़ाइयों में रानियों के सती होने का बड़ा ही हृदयविदारक वर्णन मिलता है। सिरसा के युद्ध में मलखान के वीरगति प्राप्त करने पर रानी गजमोतिन के सती होने का मर्मान्तक वर्णन कवि ने किया है –

सुनो संदेशों जा बेरा से, मारे गये मरद मलखान।
पिरजा रोबै गढ़ सिरसा की, परलै गत कछु कही न जाय।।
गजमोतिन सती होवे की, चरचा फैल गई सब ओर।[18]

लोक संस्कृति के सुन्दर चित्र 'परमालरासो' में उकेरे गये हैं। कवि जगनिक ने लोक नृत्यों, लोकोत्सवों, लोकविश्वासों एवं लोक जीवन के मनोहारी चित्र उपस्थित किये हैं। आल्हा का विवाह नैनागढ़ की राजकुमारी सुनवाँ से हो गया है। विवाहोपरांत मंगलाचार हो रहे हैं। लोक संस्कृति में वर्णित लोकाचारों का निर्वहन हो रहा है –

नगर महोबे बजी बधाई, जेहि की उपमा कही न जाय।
मनिया दिवता के मंदिर मां, हाथे लाग पंवर के द्वार।।
पौरे पुजाई अंग नइया मां, सुनवा से खिचरी लीन डराय।।[19]

'परमालरासो' के कलापक्ष में भी लोकतत्व निहित है। कथा की शैली वर्णनात्मक है। लोकोक्तियों, नीतिकथनों एवं मुहावरों की सुन्दर व्यंजना सर्वत्र दिखलाई पड़ती है। उदाहरण के लिए 'लोहा छुअत सोन हुई जाय' (पृ 75) कबहूँ मोरे दिन बहुरेंगे, तब सोने के भाव बिकाव' (पृ. 265) आदि का सुष्ठु प्रयोग भावभिव्यजंना में सहायक हुआ है। ''परमालरासो' की भाषा लोक भाषा है। लोक कण्ठ में दीर्घकाल तक रहने के कारण भाषा में एकरूपता नहीं है जिसका रूप बनाफरी है। कवि ने यथा स्थान तद्भव एवं देशज शब्दावली का प्रयोग कर भाषा को भावों की अनुगामिनी बनाया है। जैसे लरम, अग्याँ, स्वार्चे, बांदी, हंसौआ, तिरिमन, साँकरी, असवार, छिमियो, ठाँडे ठाँडे, बिन्ती, जुद्ध, उसरी, मँडवा आदि का प्रयोग भाषा में प्रभावोत्पादकता लाने में सहायक हुआ है।

'परमालरासो; में महाराज परमाल द्वारा लड़ी गई बावन लड़ाइयों का वर्णन मिलता है। कवि द्वारा ऐसे स्थलों पर युद्धानुकूल शब्द चयन एवं सुष्ठु वर्ण संयोजन किया गया है। उदाहरणार्थ कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं –

वीररस से परिपूर्ण इस लोकतत्व समावेष्ठित काव्य के वैशिष्ट्म की ओर संकेत करते हुए डॉ. नगेन्द्र ने अपना अभिमत इन शब्दों में व्यक्त किया है– '' इसमें वीर भावना का जितना प्रौढ़ रूप मिलता है उतना अन्यत्र दुर्लभ है। आज भी जब इसे गायक संगीत के साथ गाते हैं तब दुर्बलों में भी तलवार चलाने की स्फूर्ति आ जाती है। विवाह और शत्रु प्रतिशोध, वीरता के प्रदर्शन का आधार रहे हैं। युद्धों के अत्यन्त प्रभावशाली वर्णनों की इस काव्य में भरमार है। भावों के अनुसार ही भाषा भी चली है और उसमें एकविशेष शब्द ध्वनिसर्वत्र व्याप्त हो गई है। गेयता का गुण इस काव्य को विकसनशील लोकगाथा की श्रेणी में ले जाता है किन्तु इसकी रचना लोकगाथा के रूप में होकर शुद्ध काव्य के रूप में ही हुई है।''[20]

सन्दर्भ – ✲ 1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ, 36 ✲ 2. डॉ. नगेन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ, 87 ✲ 3. डॉ. शिव कुमार शर्मा – हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ पृष्ठ 68 ✲ 4. डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त – चन्देल कालीन लोकमहाकाव्य आल्हा: प्रामाणिक पाठ पृ. ✲ 5. डॉ. रवीन्द्र भ्रमर – पद्मावत में लोकतत्व पृष्ठ 63 ✲ 6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – हिन्दी साहित्य का आदिकाल पृष्ठ 07 ✲ 7. डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त – चन्देल कालीन लोकमहाकाव्य आल्हा: प्रामाणिक पाठ पृ. 112 ✲ 8. वही पृ. 93 ✲ 9. वही पृ. 84 ✲ 10. वही पृ. 95 ✲ 11. वही पृ. 240 ✲ 12. वही पृ. 221 ✲ 13. वही पृ. 223 ✲ 14. वही पृ. 341 ✲ 15. वही पृ. 114 ✲ 16. वही पृ. 259 ✲ 17. वही पृ. 273 ✲ 18. वही पृ. 326 ✲ 19. वही पृ. 134 ✲ 20. डॉ. नगेन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ. 87–88

हिंदी नाम का इतिहास और उसकी व्यापकता एक विश्लेषणात्मक विवेचन

डॉ. अमित शुक्ल*

सिंधु का बिगड़ा हुआ रूप ईरानी भाषाओं में प्रयुक्त शब्द है। हिंदू का पहला प्रयोग जरथुश्त्र की लिखी पारसी धर्म की मूल पुस्तक जेन्दावेस्ता 700 ई. पूर्व में मिलता है। हिन्दू या हिन्द देश का नाम है और हिंदी इस देश के निवासियों की संज्ञा है। हिंदी शब्द का प्रयोग हिन्द देश के निवासी के अर्थ में हुआ है। डॉ. इकबाल जी की ये पंक्तियाँ दृष्टिगत हैं- हिंदी है हम वतन है हिन्दोस्ता हमारा कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया भाग 03 पृष्ठ 02 के अनुसार कालिंजर के हिंदू नरेश के बिना हौदे और महावत के हाथियों पर सरलता से सवारी करने वाले तुर्कों की प्रशंसा में हिंदी भाषा में कुछ पद्य लिखे जिसे महमूद गजनबी ने अपने दरबार में हिंदू विद्धानों को दिखाया था।[1]

महमूद गजनबी का आक्रमण सन् 1001 से 1023 तक 17 बार भारत पर हुआ, अत: यह स्पष्ट होता है कि 11वीं सदी में भारतीयों की भाषा के लिए हिंदी की संज्ञा प्रचलित हो गई थी। प्राचीन मुसलमानों इतिहासकारों में प्रसिद्ध इतिहासकार फरिश्ता ने बम्हनीराज्य सन् 1347 में राजकाल के लिए हिंदी जुबान के प्रयोग का उल्लेख किया है, यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि भारत के मध्य भाग में बोली जाने वाली भाषा के लिए हिंदी नाम मुसलमानों का ही दिया हुआ है क्योंकि मुसलमानों के समकाल ही हिंदी के वरिष्ठ कवियों ने संस्कृत की तुलना में अपनी काव्य-वाणी को भाषा कहा है। 1 कबीर, 15 वीं सदी के भाषा को बहता हुआ निर्मल जल कहा है।

हिंदी के प्रथम समाचार पत्र उदंत मार्तण्ड सन् 1822 में खड़ी बोली को मध्यदेश की भाषा कहा था। फ्रेडरिक जानशोर सन् 1832 के मत में कुमायूँ तथा गढ़वाल प्रांतों के पुलिस की रिपोर्ट तथा कचहरी के कागज हिन्दुस्तानी भाषा तथा नागरी लिपि में लिखे जाते थे।

डॉ. ग्रियर्सन सन् 1882 के अनुसार उक्त हिन्दुस्तानी या हिंदी भाषा अंग्रेजी सरकार के आदेशानुसार 19 वीं सदी के आरंभ में नई बनाई हुई भाषा थी, हिंदी का अस्तित्व एक बोली से अधिक नहीं था। सन् 1832 के एक सरकारी इश्तहारनामा में हिंदी बोली में हुक्म लिखने का निर्देश किया गया था और फारसी को जबान संज्ञा दी गई थी।[2]

पादरी केल्लाग सन् 1875 ने स्वीकार किया था कि भारत के एक चौथाई भाग अर्थात् 25 करोड़ की आबादी में 7 करोड़ की भाषा हिंदी है। फ्रांसीसी विद्धान गार्सा दा तासी सन् 1852 में हिन्दुस्तानी उर्दू को मुसलमानों की भाषा कहा है जो पश्चिमोत्तर प्रदेश के सरकार की भाषा नियत की गई थी। हिंदी उससे अलग थी। मुसलमान बादशाह फारसी भाषा का प्रयोग करते थे, साथ में वे एक हिंदी नवीस भी रखते थे। अंग्रेज सरकार ने फारसी के स्थान पर हिन्दुस्तानी उर्दू को अपने राजकाज की भाषा बनाया और हिंदी का भी पहले की तरह गौण स्थान बना रहा। यहाँ हिंदी उर्दू से तात्पर्य उर्दू से ही है। जान गिलक्राइस्ट ने सन् 1806 में हिन्दुस्तानी का जो रूप समझा था गार्सा दा तासी की हिंदुस्तानी उससे भिन्न थी। महात्मा गाँधी ने राष्ट्रभाषा के लिए जो हिंदुस्तानी नाम पसंद किया वह हिंदी और उर्दू के बीच दोनों की निकटतम सरल शैली थी, वास्तव में गाँधी जी के प्रयास से सन् 1935 के बाद एक नई हिंदुस्तानी भाषा बनाई गई। इस हिंदुस्तानी के लिए नागरी और फारसी दोनों लिपियाँ अपनाई गई इसमें संस्कृत के साथ अरबी, फारसी शब्दों का बहिष्कार तो हुआ पर इसका झुकाव फारसी की ओर ही रहा। हिंदुस्तानी का यह निर्माण राजनीतिक बुनियाद पर राष्ट्रीय एकता के दृष्टिकोण से हुआ था। आज हिंदी नाम से सर्वमान्य, या साहित्यिक खड़ी बोली हिंदी का तात्पर्य ग्रहण किया जाता है। खड़ी बोली (नागरी) ही हिंदी का मानक रूप है। इसका विस्तार 13 वीं से 20 वीं सदी तक है, खड़ी बोली हिंदी का मूल स्वरूप है, खड़ी बोली नाम इसकी प्रकृति और गुण पर मिला है। इस बोली का क्षेत्र मेरठ, मुजफ्फर नगर के जिले बुलंदशहर जिलों का कुछ भाग और दिल्ली के आस-पास का क्षेत्र है। प्राचीनकाल से इस भू भाग को कुरुक्षेत्र कहा जाता था, राहुल सांस्कृतियायन ने इसीलिए इस बोली को कौरवी नाम दिया है।[3]

देखा जाए तो भारत के मध्यभाग अर्थात् म0प्र0 की हिंदी बोलियाँ में खड़ी बोली का स्वरूप अन्य बोलियों की अपेक्षा व्यापक और क्षमतापूर्ण है। भारत के अन्य भागों के हिंदी कवियों की वाणी में भी इसके स्वरूप का प्रयोग हुआ है यह व्यापकता भी इसकी क्षमता का द्योतक है। हिंदी के विकास का इतिहास व्यापक और रोचक रहा है। हजारों वर्ष पुरानी हिंदी की विकास यात्रा में ज्ञानी संतों की वाणी से लोकवाणी का रूप लेती गयी।

सन् 1901 से 1950 तक राष्ट्रभाषा हिंदी के लिए संघर्षरत होकर अनेक प्रकार से हिंदी के प्रचार-प्रसार का कार्य होता रहा जिसके फलस्वरूप अनेक समितियों संस्थाओं का जन्म हुआ जो हिंदी के विकास का माध्यम बने। अनेक महत्वपूर्ण रचनाओं की रचना से हिंदी के विकास को गति मिली। हिंदी राष्ट्र गौरव एवं राष्ट्र-उत्थान की प्रतीक बनी अत: इसे राष्ट्रभाषा स्वीकारते हुए अनेक महापुरुषों ने पर्याप्त भावात्मक एवं क्रियात्मक सहयोग दिया। बकिमचंद्र, महात्मा गाँधी, सुभाष, कवीन्द्र, रवीन्द्र, आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जनभाषा हिंदी का विकास तब शुरू हुआ जब इस देश की राजनीतिक अवचेतना का आरंभ होता है। इसीलिए हिंदी की व्यापकता और उसके प्रचार-प्रसार की मूलभूमि धार्मिक क्रांति के संदेश वाहक संतों और लोकभाषा के कवियों के इतिहास से आवृत है। राजनीति से उसे प्रेरणा नहीं मिली है।

इतिहास का यह सिलसिला एक हजार वर्ष पुराना है। हिंदी भाषा के सभी रूपों-राजस्थानी, अवधी, ब्रज और खड़ी बोली का प्रसार एक साथ ही उस इतिहास में दृष्टिगत होता है, परंतु अवधी और ब्रज को राम और कृष्ण की जन्मभूमि की बोली होने के कारण प्राथमिकता मिल गई। खेड़ी बोली जो आज हिंदी का मानक रूप है, धार्मिक क्रांति के संतों द्धारा ही अपनायी गयी। जनसंपर्क के लिए मुसलमानों ने जब इसे अपनाया तब इसे हिंदी नाम उर्दू और दक्खिनी का रूप मिला। संतों ने इसे सामान्य रूप से 'भाखा' ही कहा है। हिंदी भारत के मध्य भाग की मातृभाषा है इस मध्य भाग में उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश की सीमाएँ आती हैं। राजस्थान और पंजाब के पूर्वी भाग

*सहायक प्राध्यापक, हिन्दी शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

इसमें सम्मिलित हैं। एक हजार वर्ष से इस भू-भाग में जो भी कवि या संत हुए उन्होंने सर्वथा अपनी रचनाओं और उपदेशों के लिए हिंदी भाषा का प्रयोग किया है परंतु प्रदेश भेद से प्रारंभिक शताब्दियों में हिंदी के स्वरूप में भी भेद रहा है। इस स्वरूप भेद के रहते हुए भी आज हिंदी को जिस खड़ी बोली रूप को सर्वमान्यता प्राप्त हुई है उस रूप के प्रयोग भी हिंदी से उद्भव काल से ही संतों और कवियों की रचनाओं में प्राप्त होते हैं। उन संतों में से कोई बिहार, बंगाल के है। कोई महाराष्ट्र व राजस्थान के और कोई पंजाब के हैं। संतों की वाणी का संपर्क अक्सर लोकवाणी से ही होता है। अत: संतों द्वारा प्रयुक्त हिंदी का खड़ी बोली रूप उसकी व्यापकता का सूचक है। हम संतों में 8 वीं सदी के सरहपा आदि (चौरासी सिद्धों) से लेकर कबीर 12 वीं सदी की अवधि तक के लोक धर्म की क्रांति जगाने वाले अनेक संतों के नाम आते हैं। जिनमें हिंदीतर प्रदेशों के भी लोकप्रिय संत हैं इन संतों ने जिस भाषा का प्रयोग किया है उसमें आज की खड़ी बोली के प्रयोग हैं उन्हें देखकर खड़ी बोली के लोक व्यापक रूप का पता चलता है। नामदेव महाराष्ट्र के संत हैं ये 13 वीं सदी के विद्यमान थे। [4]

पंडित सीताराम चतुर्वेदी जी का कहना है कि खड़ी बोली का मूल नाम नागरी है-नागरी भाषा का प्रयोग मेरठ और मुजफ्फरनगर के उस क्षेत्र में जैसे पूर्व में था वैसे वर्तमान में भी ठीक वैसे ही बोली जाती हैं यद्यपि अमीर सुखरो और नामदेव की कुछ रचनाएँ नागरी की सर्वप्रथम रचना के रूप में उपलब्ध हैं, अत: उनकी भाषा का पुष्ट रूप दृष्टिगत होता है। उसे देखते हुए यह असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि इस भाषा में पहले से रचना होती रही है जो वर्तमान में उपलब्ध नहीं है। विक्रम की 8 वीं शताब्दी में कुमुदेन्द्र मुनि को 'भूवलय' ग्रंथ में जहाँ उन भाषाओं के नाम गिनाये गये हैं जिनमें उस ग्रंथ का पढ़ा जाना संभव है, वहाँ नागरी का भी उल्लेख किया गया है। इससे ही यह सिद्ध हो जाता है कि आज से 200 वर्ष पूर्व भी आज की नागरी,की प्रसिद्धि मुख्य भाषा के रूप में ही थी।

पंडित सीताराम चतुर्वेदी जी ने नागरी के विस्तृत क्षेत्र का भी उल्लेख किया है उनका कहना है कि जिस प्रकार अवधी, राजस्थानी, ब्रज और मैथिली के विशेष क्षेत्र हैं, उसी प्रकार नागरी का भी, पंजाब और राजस्थान के डाँड़े से लेकर मध्यप्रदेश के मध्य भाग में होती हुई उड़ीसा को छूती हुई बिहार के पूर्वी छोर तक अपना हाथ फैलाकर भोपाल की तराई के नीचे से आकर भारत की राजधानी के पश्चिम पड़ने वाले संपूर्ण भू-भाग को अपने अंक में नागरी समेट लेती है। 12 वीं सदी में गुजरात के प्रसिद्ध विद्वान हेमचंद्र ने सिद्ध हेम चंद्र 'शब्दानुशानव' नामक ग्रंथ की रचना की जिसमें संस्कृत के साथ प्राकृत और अपभ्रंश के छंदों के उदाहरण दिये गये हैं। इसी प्रकार 14 वीं सदी के प्रारंभ में शाङ्कधट ने शाङ्कधर पद्धति नाम का सुभाषित संकलित किया। उसमें भाषा, चित्रकाव्य के उदाहरणों में देश भाषा के प्रयोग भी हुए हैं। उस प्रयोग में खड़ी बोली का रूप स्पष्ट है।

अपभ्रंश से खड़ी बोली के रूप का जो विकास हुआ उसका परिचय सिंहों की वाणी के अनुशीलन से हो जाता है। सरहपा,आठवीं सदी की रचनाओं में खड़ी बोली की रूप प्रक्रिया का प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं तेरहवीं सदी के अंत में अमीर खुसरो ने ठेठ ग्राम्य भाषा में जो दिल्ली के आसपास प्रदेश की बोली थी, पहेलियाँ लिखी हैं, साहित्यिक परिनिष्ठित भाषा को छोड़कर ठेठ ग्रामवासी में लिखने का कारण दिल्ली में मुसलमानी सल्तनत के आरंभ के साथ शासक और जनता के आरंभिक संबंधों का प्रभाव था। उनकी पहेलियाँ आज भी हिंदी के मूल, रूप में हैं। सिंह नाथपंथी एवं अन्य संतों की वाणियों को दृष्टिगत यह स्पष्ट होता है कि आज की हिंदी का मूल खड़ी बोली, नागरी रूप पंजाब से महाराष्ट्र तक और सिंध से बिहार,बंगाल तक किसी न किसी रूप में अपना प्रभाव फैला रहा था अथवा भाषाओं या बोलियों में यत्र-तत्र उसकी सत्ता के दर्शन हो जाते थे।

ब्रज और अवधी भाषाओं के क्षेत्र के बाहर खड़ी बोली का प्रयोग अन्य भाषा के साथ और स्वतंत्र रूप में हो रहा था। महाराष्ट्र के छत्रपति शिवाजी के आश्रित भूषण,17वीं सदी की कविता में खड़ी बोली के प्रयोग हैं। समर्थ रामदास,17वीं सदी की रचनाएँ खड़ी बोली में हैं, गुजरात के संत दादू, 17वीं सदी और कवि दयाराम,18वीं सदी की खड़ी बोली की रचनाएँ मिलती हैं। आठरहवीं सदी में सिंधु, गुजरात, पंजाब, उड़ीसा, महाराष्ट्र सर्वत्र खड़ी बोली में संतों की रचनाएँ लिखी जाती रहीं।

निष्कर्ष यह है कि सन् 1820 के बाद 1900 ई. तक का समय हिंदी के महत्वपूर्ण संघर्षो का रहा है जिसमें 19 वीं सदी के अंतिम दशकों में हिंदी के आंदोलन को मुखरित करने में अनेक प्रतिभावान लोगों की भूमिका महत्वपूर्ण रही। हिंदी की लिपि और उसके शब्दों तथा अर्थों का उच्चारण एवं बोध इतना वैज्ञानिक अर्थात् सहज है कि हिंदी की लोकप्रियता अपने आप बढ़ी। इसमें संदेह नहीं कि हजार वर्ष पुरानी हिंदी को लोकप्रियता की चरम सीढ़ी पर पहुँचाने में ज्ञानी संतों की वाणी में लोकवाणी का रूप देकर हिंदी के प्रचार-प्रसार को गति दी।

सन् 1900 तक हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए जितने भी कार्य हुए उनमें हिंदी की सहज लोकप्रियता साकार हो उठी। इस प्रकार 1901 से 1950 तक की अवधि में हिंदी भाषा और नागरी लिपि के प्रचार का अत्यंत व्यापक प्रयास हुआ। हिंदी के संघर्ष की संतोषप्रद सफलता सन् 1950 में भारतीय संविधान में हिंदी के राजभाषा स्वीकृत हो जाने से सामने आयी। [5]

संदर्भ सूची -

1. शिवपूजन सहाय-हिंदी और हिंदुस्तानी, सारांश प्रकाशन, 2000, दरियागंज नई दिल्ली पृष्ठ 14
2. जयशंकर त्रिपाठी-हिंदी भाषा का मानक रूप, भारतीय परिषद,2010, इलाहाबाद, पृष्ठ-25,
3. डॉ. कैलाश चंद्र भाटिया-हिंदी भाषा का विकास, साहित्य भवन,2012 जीरो रोड इलाहाबाद पृष्ठ 80,
4. डॉ. उषा यादव-हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, प्रकाशन केन्द्र लखनऊ, संस्करण 1999, पृष्ठ 4
5. स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष।

****

उत्तर आधुनिक समाज का कोलाहल -संदर्भ रघुवीर सहाय की कविता

डॉ. संध्या टिकेकर *

उत्तर आधुनिक समाज के कोलाहल की लाठी में आवाज नहीं है पर परिणाम है। इस परिणाम से मानवीयता संकट में है। रघुवीर सहाय की कविता में इस समाज के कोलाहल को सुना जा सकता है और अनुभव किया जा सकता है कि उनकी कविताओं ने इसके संकट से हमें समय रहते आगाह कर दिया था।

रघुवीर सहाय की कविता को उनके पाठक , आमतौर पर अखबारी कविता ,आम आदमी के जीवन संघर्ष की कविता ,लोकतंत्र की रक्षा में सन्नद्ध कविता और नारी अस्मिता की कविता के रुप मे जानते रहे हैं ,साथ ही यह भी जानते रहे हैं कि उनका संपूर्ण काव्य भारतीयता की परिधि में ही रचा बसा है और उनकी कविता अपने देश ,देश के लोगों ,उनके अधिकार और उनकी संवेदनाओ को जिंदा बनाए रखने की जी तोड़ कोशिश है। सहाय की कविता का एक पक्ष और भी है जिसकी ओर हमारा ध्यान अनायास नहीं जाता। वह है –उनकी कविताओं में उत्तर आधुनिक समाज के कोलाहल, अशांति और, बैचैनी का प्रवेश । रघुवीर सहाय की रचनाओं में उत्तर आधुनिक समाज का संक्रमण इतने मौन तरीके से हुआ है कि ऐसी कविताएं सहसा नोटिस में नहीं आती। सहाय की कविताओं में उतरे उत्तर आधुनिक समाज के कोलाहल को सुनने से पूर्व सरसरी दृष्टि उस अवधारणा पर ड़ाल ली जाए जिसका प्रतिफलन यह उत्तर आधुनिक समाज है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यूरोपीय देशों में एक नए समाज का आविर्भाव हुआ । इस समाज को उपभोक्ता समाज उत्तर औद्योगिक समाज ,दफ्तरशाही समाज, मीडिया समाज आदि नामों से जाना गया। 18 वीं शताब्दी में पुनर्जागरण के बाद जिस आधुनिक समाज की व्याख्या दार्शनिकों ने की थी ,उसका आधार– वस्तुनिष्ठ विज्ञान, सार्वभौमिक नैतिकता और कला की स्वायत्ता पर जोर देना था। दार्शनिक एक ऐसी संस्कृति का संचयन करना चाहते थे जो प्रतिदिन के जीवन में नई शक्ति और प्रेरणा प्रदान करे। कला और विज्ञान का संवर्धन इस प्रकार हो कि मनुष्य का प्राकृतिक शक्तियों पर नियंत्रण होने के साथ साथ स्वयं का नैतिक उत्थान हो सके और वह न्याय और सुख को अनुभव कर सके। किन्तु दार्शनिकों द्वारा की गई यह व्याख्या 18वीं शताब्दी के बाद चूर चूर हो गई। क्योंकि विज्ञान आचार और कला इतने स्वायत्त हो गए कि कला कला के लिए ,विज्ञान विज्ञान के लिए और आचार आचार भर के लिए हो गए। ये सब क्षेत्र मनुष्य जीवन से विमुख हो गए। संभवत: इसी परिस्थिति से क्षुब्ध हो कर विचारक फूको ने टिप्पणी की थी कि ''मानव की मृत्यु हो गई है ।

अब वह मात्र विषय है ,विषयी नहीं। सत्ता –शक्ति उसका उपयोग करती है । अब उसका सचेत ,सक्रिय विद्रोही मनुष्य वाला रुप नहीं रह गया। जागृत रचनाकार रघुवीर सहाय ने उत्तर आधुनिकता की अवधारणा के बिगड़े हुए रुप की विकरालता को समय रहते भाँप लिया था और अपने निबंधों, आलोचनाओं से आगाह भी किया था। इसीलिए उत्तर आधुनिक जीवन शैली से जुड़ी उनकी रचनाओं में एक ओरं उसकी विकरालता का शोर सुनाई देता हैं तो दूसरी ओर उससे बचने की चेतावनी दी।

उत्तर आधुनिक जीवन शैली वस्तुत: उत्तरपूंजीवादी व्यवस्था की उपज है जिसका गहरा प्रभाव 1950 से 1960 के मध्य आई नई सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के रुप में देखने को मिलता है। इस नई व्यवस्था के केन्द्र में प्रौद्योगिकी और बाजारवाद है। परिणामस्वरुप पूरा विश्व सूचना ,मीडिया समाज में बदलता गया और हर व्यक्ति उपभोक्ता में। 'उसका इस्तेमाल एक वस्तु ,एक ह्यूमन रिसोर्स के रुप में होने लगा। इस युग में एक इस प्रकार के ज्ञान का विस्फोट हुआ कि उसके अवशेष आज विश्व मानव के व्यवहार में बिखरे मिलते हैं। उत्तर आधुनिकता का यह ज्ञान ध्वंसात्मक प्रकृति का है। इसकी अवधारणा पारंपरिकता के उतार पर जोर देती है ।यह ज्ञान कहता है कि प्रचलित सैद्धांतिक रचनाओं को तोड़ दो ,उन रचनाओं का पुर्नविश्लेषण करो ,नए सिद्धांत बनाओ। वृतांतों को नकार दो क्योंकि वृतांत समाज की रुढ़ियों ,परंपराओं और अंधविश्वासों को वैधता देते हैं । महाकाव्य ,पुराण और मिथक ऐसे वृतांत हैं जो मनुष्य को परंपरा से हट कर सोचने नहीं देते हैं। समाज के बारे में अच्छी समझ विकसित होने से रोकते हैं।

उत्तर आधुनिक समाज की संकल्पना का व्यावहारिक रुप विश्व के लगभग सभी देशों में अपने कुछ अजीबो गरीब लक्षणों के साथ दिखाई देता है। रघुवीर सहाय की अनेक कविताएं भी वस्तुत: इन्हीं विचित्रताओं की ओर इशारा करती है कि यह समाज अजीब समाज है। इसका कोलाहल भी उतना ही विचित्र है क्योंकि इसके तीव्र थपेड़ों से व्यक्ति भीतर ही भीतर लहुलुहान हो रहा है पर उसका बाहर का ,प्रकट जीवन एकदम सामान्य ,अति व्यवस्थित दिखता है जैसे कुछ हुआ ही नहीं। यह समाज आतंक के साये में जीता समाज है। एक श्यावह वातावरण कोने कोने तक पसरा हुआ है। आतंकी यहां निर्भय हो कर घूमते हैं। लुटेरे उत्साह के साथ अपनी उन्नती की खबर बताते हैं।[1] साध्य और साधन की पवित्रता का मजाक उड़ाते इस समाज में लोग गुंड़े ,आतंकी ,हत्यारे होने में गर्व का अनुभव करते हैं।

वहशी ,समाज की सामूहिक कायरता की नब्ज को पकड़ चुके हैं इसलिए दुगुने उत्साह से सरेआम हत्याएँ करके अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हैं और हत्याओं के सच का बाहर खुलासा करने वालों के लिए बकायदा हत्या का तंत्र विकसित कर चुके हैं ''जिसमें एक सी संवेदनाओं के तार मिल चुके हैं अत: अब आजादी दो गुटों में से किसी एक की गुलामी से मिलती है।''[2] इस समय के समाज का जीवन का कांसेप्ट 'जियो और जीने दो 'की अवधारणा से एकदम उलट है। यहां ढ़ेर सारी ताकतों ने मिलकर खूंखार वर्तमान रचा है। सत्ता की शक्तियां खुले रुप से घोषणा करती हैं कि ''अब तुम हमारे अधीन हो रहो /सांप्रदायिकता को मान लो /नहीं मानते हो तो /सब शक्तियों के आक्रमण सहने को तैयार हो जाओ।''[3] शक्ति के मद में सबसे अधिक गरीब रौंदा जा रहा है। '' देश के गरीब होने का मतलब है/अकड़ और अश्लीलता का हम पर हर वक्त हमला।''[4] यहाँ जिसने भी इस दमघोंटू वातावरण में सांस लेने से मना किया ,इसे पतन की दिशा बताया उसकी जीवन रीढ़ तोड़ने में आतंकी शक्तियां जरा भी नहीं हिचकिचातीं। विरोध का मुंह तोड़ना और ''एक दूसरा समाज बलवान लोगों का बनाना ही आज पुननिर्माण है।''[5] समाज में जीने का हक अब केवल उन्हीं को है जिनके सारे अधिकार छीन लिए गए हैं और जो पराधीन हो कर भी जी लेना चाहते हैं।

* प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

यह समाज दोहरे मानदण्डों पर जीता है। ''[11] इस समाज की आजादी चौंकाने वाली है । यहां का व्यक्ति हर उचित अनुचित के बारे में कहने को आजाद है पर वह ऐसा करता नहीं है,करना नहीं चाहता। लोकतंत्र का महत्वपूर्ण खंभा कहाने वाला पत्रकार तक यहां चुप है। जानकारियां उसके पास ढ़ेर सारी है पर वह कहेगा नहीं [12] पत्रकार की यह जवाबदेही है कि वह संकट के बारे में समय से पहले सबको आगाह करे पर पत्रकार है कि 'उचित 'समय का बहाना बनाकर बच लेता है। वह भी आम आदमी की तरह दिखावे की गिरफ्त में है ।

संवेदनहीनता इस समाज में बहुत भीतर तक घर कर चुकी है। अमीर गरीब की खाई और गहराई है। निर्धनों के प्रति धनवानों का व्यवहार अत्यंत कठोर हो गया है। गरीब भूखा रहता है,,अपमान सहता है,न्याय की गुहार लगाता है ,अत्याचार झेलता है किन्तु अमीर का दिल नहीं पसीजता।

धनवान के लिए गरीबी,अपमान ,अत्यावार मात्र सूचनाएं हैं। यह समाज हायपररियल्टी का समाज है। मीडिया के प्रभाव में आकंठ डूबे इस समाज में संवेदनहीनता के दृश्य आए दिन देखने को मिलते हैं। अतियथार्थ के नाम पर छल रुप का संप्रेषण मीडिया तेजी से कर रहा है। ''[18] दुर्घटनाओं में मरने वालों के प्रति बिना किसी संवेदना के मीडिया केवल आंकड़े प्रदर्शित करने में लगा हुआ है। मरे व्यक्ति के लिए शोक'करने जैसा अब कुछ रह नहीं गया है।

शोक सभा अब एक औपचारिक कार्यक्रम है जिसमें लोग मात्र दिखावे के लिए शामिल होते हैं। ''शोक सभा को जाता था मैं लपका लपका/----/ सब चेहरे जाने पहचाने /बंद गले के कोट,दुपट्टे /डाले हुए वहां बैठे थे/ देते हुए खबर सबको अपने होने की/मन पसंद दूरी पर अपने /परे दिवंगत को सरकाते /कहीं छिपे कैमरे के लिए /अपना चेहरा आप घुमाते।''[19] इस समाज का दृष्टिकोण पूर्णत: व्यावसायिक है। आम जन के जीवन संघर्ष की यातनाएं ,पीड़ाएं इनमें सहानुभूति नहीं जगाती।

पराई पीर इस समाज के लिए मनोरंजन का भी साधन है। सामाजिक उद्देश्यों के कार्यक्रमों में मीडिया इस पर को ज्यादा बोल्ड करके दिखाता है। फूहड़ प्रश्नों की झड़ी लगा कर मीडिया छल का संप्रेषण करता है।-'हम एक दुर्बल को लाएंगे/एक बंद कमरे में /उससे पूछेंगे -तो क्या आप अपाहिज है।?/तो आप क्यों अपाहिज हैं?/आपका अपाहिजपन तो दुख देता होगा/ देता है?/(कैमरा-दिखाओ इसे बड़ा बड़ा)'[20]

इस समाज में किसी का दुख किसीको दुखी नहीं करता बल्कि मनोरंजन करता है। दुख पीड़ा को बार बार छोटे पर्दे पर अलग अलग कोणों से दिखाया जाता है और मनोरंजन किया जाता है। -अत्याचार के शिकार के लिए समाज के मन में जगह नहीं है/तब जो बताते हैं /वह उसका दुख नहीं/आपका मनोरंजन है।[21] शोषण यहाँ हंसी का विषय है। यह समाज न केवल औरों के प्रति असंवेदनशील है वरन् स्वयं के भविष्य के प्रति असंवेदनशील है। जिन बातों को ले कर उसे भविष्य के प्रति गंभीर होना चाहिए,अग्रसर हो कर कार्यवाही करनी चाहिए ,वहां वह निष्क्रिय है। उसकी हंसी संवेदनाओं से रिक्त है। -निर्धन जनता का शोषण है /कह कर आप हंसे /लोकतंत्र का अंतिम क्षण है /कह कर आप हंसे /सबके सब भ्रष्टाचारी हैं /कह कर आप हंसे/उत्तर आधुनिक समाज की संस्कृति पूर्णत:पूंजीवाद से प्रभावित है।इस संस्कृति में उसी की बनाई मान्यताएं ,धारणाएं काम करती हैं। ये संस्कृति नैतिक-अनैतिक मूल्य-आदर्श के द्वन्द्व से पूर्णत: मुक्त है।

यह वृतांतों के ज्ञान का विरोध करती है। प्रचलित सिद्धान्तों का अस्वीकार करती है। ''[24] इसी कारण यह समाज स्वयं को वृत्तांतों के रचे रचाए पात्रों के सांचे में ढालना नहीं चाहता। इससे उनका विकास अवरूद्ध होता है। पारंपारिकता एक प्रकार का पिछड़ापन है,उसमें नवीनता की गुंजाइश नहीं है -तुम चाहते हो कि सारी समस्याएं मेरे लिखे में हल कर दी जाएं /मैं पात्र बनायें और उसमें जीवन रख दूं/फिर उस जीवन को /एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए बदल दूं/कुछ विकसित न हो अपने आप पात्र में /एक नया संसार बने नहीं। [25] पुराणों के पात्र यहाँ हंसी का विषय है। ग्रन्थ 'गीता' और पात्र सीता का आदर्श व्यक्तित्व के विकास में बाधक है। -पढिए गीता /बनिए सीता/फिर इन सबमें लगा पलीता /किसी मूर्ख की हो परिणीता /निज घरबार बसाइए/ होंय कटीली/आंखें गीली /लकड़ी सीली तबियत ढ़ीली /घर की सबसे बड़ी पतीली /भर कर भात पकाइए'[26]

यह समाज तकनीकी संस्कृति का है। इसमें शवनाओं का स्थान बिकाऊ ज्ञान ने ले लिया है। उत्तर आधुकिता की लाठी में कोलाहल की आवाज नहीं है पर परिणाम है।किन्तु रघुवीर सहाय की कविता में वो माद्दा है कि वह उस कोलाहल को भी सुनाती है और परिणाम से भी आगाह करती है। आगाह करना ,चेताना,जगाना आखिर यही तो कविता का चरम् हेतु है।

संदर्भ -

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास-डॉ. नगेन्द्र,डॉ. हरदयाल सं-2009,नोएडा पृ. 428,430, मयूर पेपर वेक्स, नोयडा 2009
2. उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धान्त - एस0एल0 दोषी, रावत पब्लिकेशन ,जयपुर-नई दिल्ली पृ. 398,402,403 संस्करण 1996
3. रघुवीर सहाय रचानवली शग-1, संपादक सुरेश शर्मा पृ. 164,,316 330, 330, 324, 328, 265, 348, 156, 160, 342, 313, 182, 318, 291, 334, 163, 327, 79, 514, 243, 244,राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली , पटना संस्करण 2000

****

धूमिल : प्रहार और पर्दाफाश के कवि

डॉ. सुशील ब्यौहार *

समकालीन कविता के सशक्त हस्ताक्षर सुदामा पांडेय 'धूमिल' का जन्म 9 नवम्बर 1936 को बनारस से बारह किलोमीटर दूर 'खेवली' नामक गाँव में हुआ था। उनका छोटा सा इलाका पांडेपुर के नाम से प्रसिद्ध है। वे शिवनाथ पांडेय और रजवंती देवी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। पिता के आकस्मिक निधन के बाद बारह साल की उम्र में संयुक्त परिवार की जिम्मेदारी उनके नन्हें कंधे पर आ गयी। 1953 में हाईस्कूल की परीक्षा पास करने वाले अपने गाँव के प्रथम नागरिक बने। उन्होंने हरिशचन्द इण्टर कॉलेज बनारस में प्रवेश लिया, किन्तु पारिवारिक समस्याओं के कारण कॉलेज न जा सके। घर में ही उन्होंने हिन्दी और अंग्रेजी का स्वाध्याय किया। मात्र तेरह वर्ष की अवस्था में मूरतदेवी के साथ परिणय सूत्र में बंध गए। धूमिल को इसी साल जीवन के यथार्थ कटु अनुभव प्राप्त हुए और उदर पूर्ति की खोज में कलकत्ता पहुँच गए।

धूमिल की संघर्ष को डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने इन शब्दों में अभिव्यक्त किया – ''आसपास के तमाम लोगों के विरोध और उपहास के बाद भी अकेले दम पर साढ़े चार बीघे जंगल को काटकर, उसे उपजाऊ खेत की शक्ल में बदल देने वाले गौरी पांडे के वंशज का होनहार बिरवान, धूमिल – स्नेहमयी माँ, मातृवत्सला चाची, चार भाइयों – कन्हैया, अर्जुन, शोभनाथ, लोकनाथ और पत्नी को रोता-कलपता छोड़कर, रोजी-रोटी की तलाश में कलकत्ता चला गया।''[1]

कलकत्ता में उन्होंने पहले लोहे का काम किया, बाद में एक मित्र की सहायता से उन्हें 'तलवार ब्रदर्स प्राइवेट लिमिटेड' कंपनी में लकड़ी के क्रय-विक्रय में पॉसिंग अधिकारी की नौकरी मिली। नौकरी के दौरान वे हिमालय की तराई से लेकर असम के जंगलों तक का सफर किया। इस दौरान धूमिल ने पूँजीपतियों का शोषण, अत्याचार व अन्याय को बहुत करीब से देखा। उनके सम्मान को बहुत ठेस पहुँचा, इसीलिए वे नौकरी को छोड़कर वापस बनारस आ गए। बनारस में उन्होंने 1958 में 'औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान' से 'विद्युत डिप्लोमा' प्रथम श्रेणी में पास किया और वे इसी संस्था में विद्युत अनुदेशक बन गए। कार्य कुशलता में निपुण किन्तु स्वाभिमानी होने से उनका स्थानान्तरण कई बार हुआ। 1974 में उनके गाँव में चकबन्दी हो रही थी, इसी बीच उनका तबादला सीतापुर कर दिया गया, चकबन्दी के समय उनको गाँव में रहना अत्यंत जरूरी था, इसीलिए लम्बी अवकाश की अर्जी देकर गाँव में आ गए। गाँव में उनको 'ब्रेन-ट्यूमर' हो गया। लखनऊ मेडीकल कॉलेज में ऑपरेशन के बाद 10 फरवरी 1975 को उनका निधन हो गया।

धूमिल का स्वर समकालीन जीवन की अभावग्रस्ता एवं उपेक्षित आदमी की क्षोभ, कुण्ठा और विद्रोह का है। वे व्यवस्था को देखकर इतने आक्रोशित हो उठते हैं कि सामाजिक दुर्व्यवस्था का यथार्थ रूप अभिव्यक्त करते हैं। उनका मानना है कि समाज में एक ऐसा वर्ग है, जो बिना श्रम के, श्रमवीरों की कमाई से खेलता है – ''एक आदमी / रोटी बेलता है / एक आदमी रोटी खाता है / एक तीसरा आदमी भी है / जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है / वह सिर्फ रोटी से खेलता है / मैं पूछता हूँ / यह तीसरा आदमी कौन है / मेरे देश की संसद मौन है।''[2] धूमिल सजग रचनाकार हैं। उन्होंने भारतीय जनता को सच्चे लोकतंत्र का मार्ग दिखाया, यद्यपि वे लोगों की नासमझी से खीझ उठते हैं, यथापि भारतीय प्रजातंत्रीय व्यवस्था को ठीक मानते हैं। चुनावों पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने लिखा है – ''चुनाव की इलाज है / क्योंकि बुरे और बुरे के बीच से / किसी हद तक / कम से कम बुरे को चुनते हुए / न उन्हें मलाल है, न भय है / न लाज है।''[3]

हमें उनके काव्य में आम आदमी की भूख और आँसू दिखाई देता है। वह देश का नियामक है, कर्णधार है, किन्तु कर्ज में डूबा है। शासन एवं सरकार की चाबी उसके पास में है, परन्तु कठपुतली बना है। आँख है, पर उसकी चमक गायब है। डॉ. कोमलसिंह सार्वा अपने शोध प्रबंध में लिखते हैं – ''धूमिल की कविता में आशा-निराशा के बीच झूलते हुए भूख और आँसू से त्रस्त छोटी-छोटी सुविधाओं के लिए मोहताज जनता का चित्रण है। यह वहीं जनता है, जो इस देश के नियामक है, कर्णधार है, शासन और सरकार बनाने और कुर्सी से उतारने वाली है, किन्तु जीवन में न आशा और न चमक, वह हताशा परेशान होकर भविष्य की सारी संभावनाओं को अपने में समेटे गर्त में डूबी हुई है।''[4]

धूमिल की कविता की सबसे बड़ी पहचान ग्रामीण जीवन की झांकी है, जो गाँव की जीवन-यापना से मिला है। गाँव में निर्धनता, भुखमरी, गरीबी, जमीन के लिए रोज झगड़े, गाय-बैलों को मारना, जमींदारों का शोषण, पुलिस का दमन चक्र और छुटभइया नेताओं की साजिष है। 'गाँव में कीर्तन', 'खेवली', 'किस्सा जनतंत्र', 'मेरा गाँव', 'वापसी', 'हरितक्रांति', 'सच्ची बात' जैसी कविताओं में गाँव की अभावग्रस्त जीवन का मार्मिक चित्रण है। गाँव में न चोरी का भय है, न लुटने का, कुछ-एक को छोड़ के सब के सब भूखे हैं, नंगे है। 'किस्सा जनतंत्र' कविता में धूमिल का मंतव्य है – ''खाने से पहले मुँह दुब्बर / पेट भर / पानी पीता है और लजाता है / कुल रोटी तीन / पहले उसे थाली खाती है / फिर वह रोटी खाता है।''[5]

धूमिल कविता की धारा बदलने वाले कवि हैं। उनका मानना है कि आज पुराने कविता वाले नारे बदल गए हैं। शोषक, पूंजीपतियों तथा भू-स्वामियों के प्रति घृणा एवं खीझ की भावना कविता में है। कथ्य के समान उनकी भाषा भी सर्वहारा वर्ग के प्रति प्रतिबद्ध है। भाषा के संदर्भ में हो रहे आंदोलनों और सांसदों की भूमिका पर धूमिल ने स्पष्ट लिखा है – ''हाय जो असली कसाई है/उसकी निगाह में/तुम्हारा यह तमिल दुख/मेरी यह भोजपुरी पीड़ा का भाई है/ भाषा उस तिकड़मी दरिंदे का कौर है/जो सड़क पर और है/संसद में और है।''[6]

कवि देशभर में असंतोष और आजादी की दुर्दशा को देखकर तिलमिला उठता है। आजादी के फायदे आज भी कतार में खड़े अंतिम आदमी तक नहीं पहुँच पाया है। वह चक्कर ही लगाता रह जाता है, उसकी खुशियाँ सरकारी मशीनरी में फंसकर रह जाती है। कवि व्यंग्यात्मकरूप में अपने विचार प्रकट करता है – ''मैं अपने आपसे सवाल करता हूँ / क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है / जिन्हें एक पहिया ढोता है / या इसका कोई खास मतलब है।''[7]

इस प्रकार हम देखते हैं कि धूमिल ने राजनीतिक तथा सामाजिक दुर्व्यवस्था पर कड़ा प्रहार एवं सामाजिक व नैतिक स्तर पर आम आदमी के साथ किए गए विश्वास घात का पर्दाफाश किया है। शोषित और अत्याचार से पीड़ित जन समाज की आवाज उनकी धुरी है। डॉ. हुकुमचन्द राजपाल लिखते हैं – ''धूमिल राजनीतिक चेतना एवं जागरूकता के कवि हैं। समकालीन कविता की सबसे बड़ी पहचान यथार्थ को यथा रूप में प्रस्तुत करना है। कवि ने हर क्षेत्र में मुखौटों को अनावृत्त करने का उपक्रम किया है।''[8]

संदर्भ :– (1) डॉ. सी.जे. प्रसन्ना कुमारी के शोध आलेख से (2) धूमिल, कल सुनना मुझे, पृष्ठ 33 (3) धूमिल, संसद से सड़क तक, पृष्ठ 118 (4) डॉ. कोमल सिंह सार्वा, समकालीन हिन्दी काव्य के परिप्रेक्ष्य में धूमिल के काव्य का अनुशीलन, अप्रकाशित शोध प्रबंध, पृष्ठ 329 (5) सुदामा पांडे का प्रजातंत्र (6) धूमिल, संसद से सड़क तक, पृष्ठ 96 (7) धूमिल, संसद से सड़क तक (8) हिन्दी काव्य-संकलन भाग – 3

* प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

भील जनजाति के पर्व एवं उत्सव

प्रो. मीरा जामोद *

भील शब्द द्रविड़ भाषाद के बील से निकला है जिसका अर्थ है - कमान/तीर कमान के व्यवहार में निपुण होने के फलस्वरूप संभवत: यह जनजाति भी कहलायी । एक दूसरी उत्पत्ति के अनुसार यह शब्द संस्कृत भाषा के 'भिद' शब्द का तद्भव रूप है, जिसका तात्पर्य भेदने की प्रक्रिया से है। भीलो की उत्पत्ति के संबंध में कथाएँ भी है।

भील जनजाति प्रत्येक पर्व उत्सव बड़े ही उल्लास व उत्साह से मनाते है। हिन्दुओं के सार्वजनिक त्यौहार में से होली, दीपावली, दशहरा, रक्षाबंधन आदि तो मनाते ही है साथ ही अपने पारंपरिक पर्व भी आनंद एवं उत्साह व पारंपरिक तौर-तरीकों से मनाते है। भीलों के विभिन्न पारंपरिक त्यौहार है जैसे - भगौरिया, गल, गढ़ ,ढोडी, जातर, नवई, दिवासा, नवणी ,इंदल, दोहो ,पानगा, पाटला, पिथौरा, गोल गधेडा बाबाईद आदि ।

भगोरिया:- भगोरिया भीलों का प्रणय उत्सव है। जो होली के एक सप्ताह पूर्व मनाया जाता है। इस अवसर पर अविवाहित भील वैवाहिक बंधन में बंधने के लिए अपने जीवन साथी का चयन करते है। लड़के और लड़कियाँ होलिका दहन के पहले वाले सप्ताह में गाँव या उसके पास लगने वाले भगोरिया हाट में सज-धज कर एकत्र होते है। सुबह से ही भगोरिया हाट स्थल के लिए रवाना हो जाते है। बुढे सयाने लोग पूजा ,अर्चना तथा अन्य उपयोगी वस्तुएँ खरीदने के बाद पड़ाव में रहते है और अविवाहित लड़के-लड़किया हाट में टोलियाँ बनाकर घूमते है। लड़का अपनी मनपसंद लड़की के माथे पर गुलाल लगा देता है यदि प्रत्युत्तर में लड़की ने भी वैसा ही किया तो उसे विवाह की रजामंदी माना जाता है और यदि वह गुलाल पोंछ दे तो इसका अर्थ है कि उसे प्रस्ताव मंजूर नही है।

गल :- झाबुआ के आसपास कतिपय भील ग्रामों में गल भरने की प्रथा है। यह भील जनजाति का सबसे बड़ा मनौती पर्व है जो होली के दूसरे दिन मनाया जाता है। भील अपने परिवार में किसी की रोग व्याधि से मुक्ति हेतु अथवा घर की छोटी-बड़ी विपत्तियों में या किसी कार्यसिद्धी के प्रयोजन से ली गई मनौतियाँ डेहर के दिन उतारते है। गल, नरसिंह भगवान का स्वरूप है, जो हर साध पूरी करता है। यह संरक्षक देव है इसलिए भील गल देवता को पितृ देव भी कहते है।

गढ़ :- होली के बारहवे - तेरहवे दिन गढ़ का आयोजन किया जाता है जिसमें चालीस पचास फीट लम्बे व मोटे खम्बें को तेल से चिकना किया जाता है, उसके पश्चात भील युवक अपने हाथ में गुढ़ की पोटली लेकर उस पर चढ़ने की कोशिश करते है और युवतियाँ उन पर बेतों से वार करके रोकने की कोशिश करती है।

ढोडी :- यह वर्षा न होने पर वर्षा के आह्वान से संबंधित इंद्रदेव को प्रसन्न करने के लिए भीलों युवक-युवतियों का उत्सव है। जिसमें भील बालक-बालिकाओं के समूह सिर पर सूपड़ा हाथ में जलती हुई लकड़ी लेकर नाचते - गाते हुऐ घर-घर जाते है।

नवई :- नवई नये अनाज के प्रथम उपयोग का त्यौहार है जब मूंग, चवला, मक्का आदि में दाने आ जाते है तो उसी समय भील इन अनाजों को पकाकर खाते है। इसमें घर का मुखिया धारण देव के पास कुटुम्ब के देवी-देवताओं एवं पुरखों के नाम से पलाश के पत्तों पर अलग-अलग भोजन सामग्री रखकर पूजन करता है। सभी के घर में पूजा के बाद समस्त ग्रामवासी देवरे पूजन के लिए जाते है।

दिवासा :- वर्षा ऋतु की फसल बोने के पश्चात् दिवासा मनाया जाता है जिसमें बापदेव की पूजा की जाती है एवं युवाओं द्वारा बांसुरी बजाकर आनन्द लिया जाता है।

गोल गधेड़ा :- होली के दूसरे दिन यह उत्सव होता है। यह पर्व भील द्वारा मांगी गई मन्नत पूरी होने पर मनाया जाता है जिसमें लकड़ी पर बाँस का डंडा बांधा जाता है जिसके एक छोर पर लम्बी रस्ती तथा दूसरे छोर पर पालकीनुमा रस्सी बंधी होती है। मन्नतधारी पुरूष इस पालकीनुमा रस्सी में बंध जाता है दूसरे छोर को नीचे खड़े दो पुरूष जोर से घुमाते है।

पिथोरा :- इस पर्व पर भील लोग दिवारो पर देवी-देवताओं, वृक्षो तथा पशुओं के चित्र बनाते है जैसे - ताड़, घोड़ा, बैंल आदि। इसमें नाच गाना होता है तथा बली दी जाती है।

पानगा - पाटला :- भीलों द्वारा अपने पूर्वजों के लिए प्रतिवर्ष एक निर्धारित पूजा अर्चना की जाती है जिसमें औझा (बड़वा) अपने शरीर में सभी पूर्वजों की आत्मा को क्रमानुसार लाता है। इस अवसर पर शराब पी जाती है एवं बली दी जाती है तथा झाड़-फूंक का कार्य भी किया जाता है।

बाबाईद :- इस पर्व में बापसिंह देव, भेरमदेव एवं गाँव के अन्य देवी-देवताओं की पूजा की जाती है। रात भर नाच-गान के पश्चात सुबह बली दी जाती है। यह त्यौहार मुख्यत: गाँव की सम्पन्नता एवं खुशहाली के लिये मनाया जाता है।

डोहा :- डोहा मानता से संबंधित उत्सव है। भील परिवार में यदि गाय-भैंस नियमित दूध न दे या दो-तीन साल तक उसके बछड़े की मृत्यु हो जाये तो दूध बढ़ाने और बछड़ों को असमय काल के ग्रास से बचाने के लिए खेड़ा देव की मानता लेता है। मनोकामना पूर्ण होने पर दीपावली के समय पाँच दिन तक घर-घर जाकर डोहा खेला जाता है।

उपर्युक्त पर्वों के अतिरिक्त भीलों में होली, दिवाली, दशहरा, रक्षाबंधन आदि पर्व भी मनाये जाते है।

निष्कर्ष :- उपर्युक्त पर्व एवं उत्सव वर्णन से स्पष्ट है कि भील जनजाति प्रत्येक त्यौहार व उत्सव को बड़ी उल्लास व जोश से मनाते है और आनंद लेते है। प्रत्येक उत्सव के पीछे भीलों का विश्वास एवं प्रार्थना है। कहीं देवी-देवताओं से खुशहाली की कामना की जाती है तो कहीं मन्नत पूर्ण होने पर ईश्वर के प्रति आस्था व्यक्त की जाती है। भीलो के कुटुम्बीय देवी - देवताओं के साथ-साथ पूर्वजों के लिये भी उत्सव होता है। अत: इन पर्वो व उत्सवों से भीलों की पारंपरिक पूजा-अर्चना व मान्यताओं की झलक देखी जा सकती है। जो भीली लोक संस्कृति को उजागर करता है।

संदर्भ ग्रथ :-

1. म.प्र. की जनजातियाँ समाज एवं व्यवस्था, डॉ. शिवकुमार तिवारी, डॉ. श्रीकमल शर्मा
2. एक सफर - भारत के हृदय प्रदेश का, राष्ट्रीय शोध सेमिनार 2007
3. सम्पदा

* सहायक प्राध्यापक हिन्दी, महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश में लौह धातुशिल्प और सामाजिक संभावनाएँ

डॉ. रेखा श्रीवास्तव*

मध्यप्रदेश के विभिन्न अंचलों में धातु शिल्प की सुदीर्घ एवं समृद्ध परम्परा है। जिसके माध्यम से आदिवासी अपने विचारों का कलात्मक उद्‌गार, अपने भावनाओं की विकास यात्रा को अभिव्यक्त करते आये हैं। विभिन्न स्थानों से प्राप्त कलात्मक अवशेष उनके कौशल, और जीवन को उसकी सम्पूर्णता के साथ देखने और अभिव्यक्त करने की क्षमता को स्पष्ट करता है। मध्यप्रदेश के आदिवासी बहुल अनेक क्षेत्रों के कलाकार पारम्परिक रूप से धातु ढलाई का कार्य करते आ रहे हैं। जिसमें लौह, तांबा, पीतल, सोना, चांदी, कांसा धातु प्रमुख रहे हैं।

इन धातुओं से कलात्मक तरीके से ढालने और सौंदर्यपरक, आनुष्ठानिक और उपयोगी कलाकृतियां आंचलिक आवश्यकता और सौंदर्य चेतना के अनुसार सहज रूप से सदियों से बनती आ रही है। संस्कृत साहित्य में भी शिल्प और शिल्पी के साथ विभिन्न धातुओं और धातु से निर्मित स्थापत्य, अलंकरण, वेशभूषा, अस्त्र-शस्त्र का विस्तृत विवरण मिलता है।

प्राचीन वेदों, पुराणों, एवं महाभारत में भी धातु से संबंधित अनेक उदाहरण मिलते हैं। शिल्प रत्नम में आठ प्रकार के धातुओं का वर्णन किया गया है। धातु की प्रतिमा के लिये लोही शब्द का प्रयोग भी मिलता है। अग्ररीस, असुर, अगर शब्दों का उपयोग भी शिल्पियों और धातु के संबंध में प्राप्त होता है। सदियो से चली आ रही इस धातु शिल्प परम्परा को छत्तीसगढ़ में बस्तर जिले के घड़वा और लोहार अगरिया जाति, मध्यप्रदेश टीकमगढ़ के स्वर्णकार, बैतूल के भरेवा, सरगुजा के मलार जाति और रायगढ़ के झारा शिल्पियों ने आज तक जीवित रखा है।

प्रदेश में आदिवासी और लोक शिल्पों की वृहद और विविधवर्णी सम्पदा मौजूद है। हमारे यहां ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है, जहां कि पारम्परिक शिल्प न बनाये जाते हों। लकड़ी, मिट्टी, लौह, पत्थर, पीतल, बांस, वस्त्र, सूत, सुतली, चित्र आदि ऐसे माध्यम हैं जिनमें आकर्षक और उपयोगी कृतियां बनाई जाती हैं। शिल्पों का संसार जहां उपयोगिता एवं आवश्यकता के आधार पर खड़ा होता है। वहीं वह कला के सौंदर्य बोध की सृष्टि भी करता है। शिल्प मनुष्य के हाथों का अद्धितीय सृजन है, जिसमें पुरूष और महिलाओं की बराबर की भागीदारी है। शिल्प, कला की भाषा गढ़ते हैं, और अपनी अभिव्यक्तियों को मनचाहा आकार देते हैं।

शिल्पकारों के इस प्रयास में न जाने कितने अभिप्राय, प्रतीक और मिथक कला के अलंकरण बन जाते हैं और न जाने कितने अलंकरण स्वप्न और स्मृतियों को ताजा कर जाते हैं। लेकिन परम्परागत शिल्पों पर हमारा ध्यान इसलिये नहीं जाता कि वे अवसर विशेष पर बनते हैं और अपनी उपयोगिता सिद्ध कर ओझल हो जाते हैं। किन्तु ऐसे अनेक शिल्प होते हैं जिनका सौन्दर्यात्मक और कलात्मक महत्व एवं आर्थिक स्वरूप भी होता है।

शिल्प मात्र सौंदर्य की ही वस्तु नहीं होते बल्कि उसमें सम्पूर्ण जातीय स्मृतियों को देखा जा सकता है। यही कारण है कि किसी भी देश के शिल्प उनकी संस्कृति का आइना बन जाते हैं। जिस देश के शिल्प जितने उन्नत होते हैं उनकी संस्कृति और कला परम्परा उन्नत मानी जाती है। इस अवधारणा की प्रतिपूर्ति में मनुष्य सदैव हर समय नित नये से नये शिल्प गढ़ता आया है। शिल्प समय की परिभाषा भी होते हैं। प्रत्येक शिल्प में अपने समय के चिन्ह निश्चित रूप से समाहित होते हैं। वर्तमान समय में शिल्पों का महत्व और अधिक बढ़ गया है। क्योंकि शिल्प देश की आर्थिक रीढ़ भी बनते जा रहें हैं। आज पारम्परिक और नये समसामयिक शिल्पों को संरक्षण, प्रोजेक्ट एवं विस्तार की आवश्यकता है। पूरे प्रदेश में लोक एवं आदिवासी शिल्पों की इस बिखरी श्रृंखला को एकत्र करने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिये।

वैज्ञानिक विकास के दौर और आधुनिक कला के अन्तर्राष्ट्रीयकरण की प्रवृत्ति के बीच स्वदेशी और मौलिक रचना के नाम पर मध्यप्रदेश के इन शिल्पों ने अपनी जबर्दस्त पहचान बनाई है। जैसा कि हम जानते हैं कि मध्यप्रदेश के विभिन्न अंचलों में धातु शिल्पों की अपनी मौलिक और समृद्ध परम्परा है। प्रदेश के लगभग सभी आदिवासी और लोकांचलों के कलाकार पारम्परिक रूप से धातु की ढलाई का कार्य करते हैं। ये सदियों से सौन्दर्यपरक, आनुष्ठानिक, और उपयोगी कलाकृतियों का निर्माण कर अपनी सृजनात्मक, और रचनात्मक अभिव्यक्ति का परिचय देते आये हैं। जिससे आंचलिक आवश्यकता और सौंदर्य चेतना के अनुसार सहज, सरल, आकर्षक रूपाकारों का निर्माण होता रहा हैं।

इन शिल्पों ने हमें आकर्षित किया है, अपने अतीत, अपनी परम्परा और अपने ग्रामीण परिवेश से झांकने के लिये मध्य प्रदेश लोक परिवेश से उपजे इन शिल्पों में मौलिकता, सृजनात्मकता, और रूप वैविध्य सभी कुछ ऐसा है जो दर्शको को ही नहीं वरन् कला समीक्षकों को भी बांधने में सक्षम है।

अपढ़ और संकोची शिल्पकारों के उच्च सौदर्य बोध के द्योतक ये धातु शिल्प समाज में फैशन का पर्याय बनते जा रहे हैं। इनका उदय एवं अस्तित्व लोक परम्पराओं से ही माना जाना चाहिए। इन्हें रूप देने तथा इनमें सौन्दर्य भरने का दायित्व इन धातु शिल्पियों का ही है। सांचे द्वारा मूर्तियों का निर्माण एवं प्रचलन नगरों में भले ही प्रचलित हो लेकिन सांचे के बिना हाथ से निर्मित इन धातु शिल्पों का अपना आकर्षण हैं। शिल्प निर्माण की सम्पूर्ण प्रक्रिया श्रम और धैर्य पर आधारित है। मिट्टी लाने, कूटने, छानने, पीसने, विभिन्न अंग प्रत्यंगों के निर्माण, उनको जोड़ने, सुखाने, पकाने, ढालने, उनके रख-रखाव, व उन्हें उपभोक्ता/ ग्राहकों तक पहुंचाने की सम्पूर्ण प्रक्रिया में ये शिल्पी और उनका पूरा परिवार जुटा रहता है।

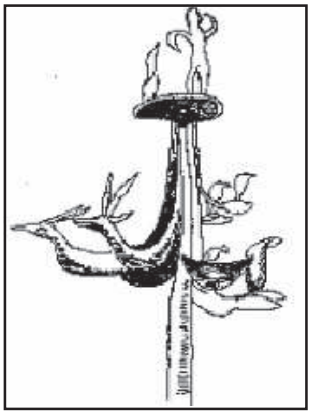

अगरिया नामक शिल्पी जनजाति का संबंध तो धातु के साथ अति प्राचीन काल से रहा है। इन्होंने ही सर्वप्रथम प्राकृतिक संसाधनों से देशज पद्धति से लौह अयस्कों को पिघलाकर लोहे को पत्थर से अलग करने की वैज्ञानिक विधि और तकनीक को विकसित किया, जिसका सहज साक्ष्य आज भी मण्डला और बस्तर के अगरिया समाज में उपलब्ध है।इस तथ्य की पुष्टि हेतु आदिवासी समुदायों में अलग अलग लोक कथाएं प्रचलित हैं।

* सहायक प्राध्यापक, चित्रकला, महारानी लक्ष्मी बाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि लोक पद्धति से लोहे को गलाना और कलात्मक रूपों मे ढालना एक दुष्कर कार्य है। इस हेतु एक विशेष प्रकार की भट्टी और उच्च तापमान की आवश्यकता होती है। इस दृष्टि से क्षेत्र के शिल्पी अपने आप को किंचित असहाय पाते है। संभवत: इसीलिये लौह शिल्प में लोक कला के स्तर पर अधिक प्रयोग संभव नहीं हो पाये हैं। लौह शिल्पी अपनी कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण भी कच्चे माल (कुंवारी लोहा) की अनुपलब्धता के शिकार हो जाते है। और कुंवारी लोहा के अभाव में शिल्प निर्माण के क्षेत्र में इच्छित प्रयोग करने में स्वयं को असहाय पाते हैं। अत: लौह शिल्प उद्योग अधिक प्रचलन में नहीं आ पाया।

यदि उपर्युक्त तथ्य का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जाय तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि क्यों लोक जीवन में लौह शिल्प ने पीतल, तांबा या कांसे के शिल्पों के समान अधिक प्रचलित नहीं हो पाया। इस पर चर्चा करने से पूर्व निम्न तालिका का अध्ययन आवश्यक है–

धातु	गलनांक	स्मेलटिंग पाइंट
तांबा	1083 डिग्री सेटीग्रेट	400
लोहा	1540 डिग्री सेटीग्रेट	800

लौह तकनीक कांसा और तांबे से अधिक जटिल है इसका मुख्य कारण लौह धातु का गलनांक है। इसका अर्थ यह है कि लोहे को पिघलाने के लिये बहुत अधिक तापक्रम की आवश्यकता होती है। जबकि तांबे और कांसा धातु में कोल्ड फोर्जिंग भी किया जाता है। जबकि लौह शिल्पों में घरेलू स्तर पर ढलाई किये जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। लोहे की ढलाई के लिये 1540 डिग्री सेन्टिग्रेट वाले उच्च तापमान के विशेष उपकरणों यथा ब्लास्ट फर्नेस की आवश्यकता होती है, जो इस्पात संयंत्रों में ही संभव है।

अत: प्राचीन कलाकृतियों के इतिहास में भी इस प्रकार के फर्नेस के उपयोग के उदाहरण नहीं मिलते। जिन परम्परागत भट्टियों की जानकारी उपलब्ध है उससे लौह अयस्क से लोहा निकालने की तकनीक पूर्ण की जाती थी इस हेतु तापमान 800 डिग्री सेन्टिग्रेट की ही आवश्यकता होती है। आर. सी.गौर ने दावा किया है कि उन्हें उज्जैन में कुछ वृत्ताकर पिट मिले हैं जो लोहारों के फर्नेस जैसे हैं तथा इसके साथ साथ ही कुछ औजार भी आस–पास मिले हैं। परन्तु वे स्वयं भी सुनिश्चित नहीं हैं कि प्राप्त भट्टीनुमा आकार केवल अंगीठी नुमा साधारण पिट है या लौह भट्टी।

लौह शिल्प निर्माण में फोर्ज वेल्डिंग भी कठिन तकनीक है। तांबा व कांसा में 400–1050 डिग्री सेन्टीग्रेट पर ही कार्य किया जा सकता है लोहे के लिये इससे कहीं अधिक तापमान की आवश्यकता है। आमतौर पर लोहे को आसानी से फोर्ज करने के लिये 1100–1150 डिग्री सेन्टीग्रेट तापक्रम की आवश्यकता होती है। जो ब्लास्ट फर्नेस के बिना संभव नहीं। अत: लोहे से शिल्प निर्माण के लिये भिन्न तकनीक का प्रयोग प्रचलित हुआ जिसमें पीटकर, टेम्परिंग कर, कटाई कर एवं पालिशिंग कर शिल्प निर्माण की श्रमसाध्य कला सम्पन्न की जाती है।

लौह शिल्प तकनीक या प्रोद्योगिकी की पृष्ठभूमि के संबंध में कोई विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है। लौह शिल्पी अपने आवास स्थल के समीप खुले स्थान पर भट्टी बनाता है। और लौह प्रगलन विधि से लौह अयस्क प्राप्त कर शिल्प अथवा दैनिक उपयोग में आने वाले उपकरण, औजार, बर्तन इत्यादि का निर्माण लोहे के छड़ों, सरियों, पट्टियों को कूटकर, मोड़कर, छेदकर, गर्म लोहे को परस्पर जोड़कर विभिन्न प्रकार के आकार प्रदान करते हैं। लौह शिल्प कला अत्यंत श्रमसाध्य कला है, इस कार्य हेतु कम से कम दो शिल्पियों की आवश्यकता होती है। यू तो इस कार्य में शिल्पी का सम्पूर्ण परिवार ही जुट जाता है। मध्यप्रदेश में अगरिया जनजाति लौह शिल्प निर्माण एवं लौह प्रगलन का कार्य करते है!

अगरिया गौड जनजाति की उपशाखा है। उत्पत्ति की दृष्टि से अगरिया गोंडो के छोटे भाई और सेवक है। गोंड बैगा अगरिया जनजाति के यजमान है। इतिहास यह कहता है कि गोंड और बैगा दोनों ही जनजातियों के लिये कृषि और लोहे की वस्तुएं बनाकर देते आये है। इसके बदले में अगरिया अनाज नगद वस्त्रादि ससम्मान प्राप्त करते है। यह परम्परा प्राचीन है लेकिन आज भी यह देखा गया है कि जहां गोड और बैगा निवास करते है वहां आसपास अगरिया जाति निवास करती है। मध्यप्रदेश में अगरिया जनजाति डिंडोर, मंडला, बालाघाट, शहडोल सीधी एवं छत्तीसगढ़ में रायगढ़ जिले में निवास करते है।

लौह धातु का सर्वाधिक उपयोग कृषियंत्र, औजार बनाने में तथा मुद्राओं, आभूषणों में होता था। जिसमें हल, कुदाली, लकड़ी काटने की कुल्हाड़ी, खुरपी,आदि , अस्त्र–शस्त्रों में तलवार, कृपाण, भाले, तीर, अंग–कवच, शिरस्त्राण, छोटे अस्त्र आदि प्रमुख हैं साथ ही आभूषणों में भी लौह का प्रयोग किया जाता था। घरेलू उपयोग के बर्तन भी बनायेजाते थे। किन्तु मेहरौली के चन्द्र के लौह स्तम्भ से यह स्पष्ट होता है कि कलाकार ने स्थापत्य में काष्ठ और प्रस्तर के साथ धातु (मुख्यत: लौह का) का प्रयोग करना भी प्रारम्भ किया था। मेहरौली के स्तम्भ के समान ही एक लौह स्तम्भ ढलवा कर राजा भोज ने मार्तण्ड मंदिर धार के सम्मुख स्थापित कराने का उल्लेख मिलता है, इसके बाद प्राप्त टुकड़े पुरातत्व विभाग ने संरक्षित करवाये हैं।

लौह शिल्पों में गतिशील पशु आकृतियों, मानवाकृतियों जैसे सजावटी

शिल्पों एवं ग्रामीण लोक आदिवासियों हेतु परम्परागत दीपकों, दीपस्तम्भों एवं कुछ आनुष्ठानिक शिल्पों का ही निर्माण किया जा रहा है। इन लौह शिल्पियों के सामने संसाधनों एवं शिल्पों के प्रति कला रसिकों के रूझान में कमी के चलते सृजनात्मक शिल्पों का निर्माण कम है। स्थानीय आदिवासियों को विभिन्न धार्मिक या आनुष्ठानिक आवश्यकताओं हेतु आवश्यक दीपस्तम्भ (हरनोटी दीपक,जालीदीपक), विभिन्न अवसरों में

प्रयुक्त मूंदरियां, देवी झूला, ओझा के प्रयोग हेतु कीलों से युक्त पीड़ा एवं खरौट (खड़उ) , त्रिशूल, आदि का सृजन मांग के अनुरूप किया जाता है, दीपक सामान्यत: घरों में रोशनी के लिये प्रयुक्त किया जाता है।

ऐसे दीपकों में सौदर्य की अपेक्षा उपयोगिता के भाव प्रमुख होते है अत: यह अधिकांशत: अलंकार विहिन ही होते हैं। लेकिन उत्सव विशेष अथवा किसी विशेष सामाजिक अथवा धार्मिक अवसरों के लिये विशेष दीपकों का निर्माण किया जाता है। दीपकों के निर्माण में प्रयुक्त लोहा का कुंवारी लोहा होना अनिवार्य होता है।

यदि इस प्रकार का लोहा उपलब्ध न हो तो लोहे में कुछ अंशों में कुंवारी लोहा का मिश्रण किया जाता है। दीपों में चाहे वह दीप स्तम्भ हो, हरनोती दीपक हो, जाली दीपक या अन्य आनुष्ठानिक दीपक हो उसे मूर्त रूप में लाने के लिये उसके विभिन्न अंगों जैसे मध्य का डंडा, पशु-पक्षी की आकृतियां, झूले, जोड़े जाने वाले दीप इत्यादि को अलग अलग बना लिया जाता है बाद में उन्हें क्रमानुसार जोड़ दिया जाता है।

किसी भी एक दीपक में दो-चार से लेकर चालीस पचास तक की संख्या में दीये एक ही दीपक में बने होते हैं।इन दीपकों में पशु-पक्षियों, मानवाकृतियों अथवा दोनों को साथ साथ भी निर्मित किया जाता है। इन आकृतियों में गतिशीलता अथवा क्रियाशीलता स्पष्ट दिखाई देता है। मानवाकृतियों को अपने आस पास के जाने पहचाने पशु आकृतियों के शिकार, नृत्यरत अथवा पूजा अर्चना के रूप में निर्मित की जाती है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि मध्यप्रदेश के ये लोहार क्लिष्ठ माध्यम में अपनी रचनात्मक क्षमता के आधार पर आकृतियों का परम्परागत शैली से समकालीन रूप संसार निखारने का अद्भुत कार्य सम्पन्न करते हैं। वे तत्कालीन अनुष्ठानिक मांगों को तो पूर्ण करती ही है, साथ ही वर्षो पुरानी परम्परा को भी जीवंत बनाये रखते हैं।

साथ ही शिल्पियों की उंगलियों का अभिनय प्रवण मूर्तन प्रयुक्त रूपाकारों में देखा जा सकता है। यदा कदा आवश्यकतानुसार कृषि औजारों या दैनिक उपयोग में आने वाले शिल्पों का (जादू-टोना अथवा दुष्टात्माओं से रक्षा हेतु निर्मित शिल्प चाकू, हंसिया ,अंगूठी, मूंदरी, सरोता) निर्माण स्थानीय लौह शिल्पी वर्ष भर करते हैं। उंगलियों में गिने जाने योग्य शिल्पी ही हैं जो अपनी अभिव्यक्ति और रचनात्मकता का प्रदर्शन कर लौह धातु के आकर्षक और सौंदर्यप्रधान शिल्पों का सृजन कर देश में प्रसिद्धि पा रहे हैं। ऐसे शिल्पियों में मण्डला क्षेत्र के तोकसिंह मरावी, मोतीसिंह मरावी, हीरालाल, सोनसिंह को शामिल किया जा सकता है।

शिल्प सम्पदा से समृद्ध मध्यप्रदेश अब अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित कर रहा है। यह शुभ और सुखद है। शारजाह में आयोजित 'रमादान उत्सव' में 2003 में मध्यप्रदेश के शिल्पकारों को उनके लोक शिल्पों के जो मान-सम्मान मिला उससे कलाकारों के साथ साथ मध्यप्रदेश का भी गौरव बढ़ा है। शिल्पकारों के सृजन का सम्मानित किया जाना कलाकार के भावजगत का मूल्यांकन है जो श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर करने के लिये प्रेरित करता है। इस दृष्टि से श्रेष्ठ कलाकृतियों को पुरस्कृत करना नितांत आवश्यक है।

****

बंदियों को दिये जाने वाले काष्ठकला एवं तकनीक का प्रशिक्षण (मध्यप्रदेश की विभिन्न जेलों के संदर्भ में)

शैलेन्द्र नामदेव * डॉ. रेखा श्रीवास्तव **

सृजनात्मक प्रशिक्षण के क्षेत्र में म.प्र. की जेलों की अहम भूमिका है, जहां विभिन्न अपराधों में सजा काट रहे बंदियों के साथ उनकी शारीरिक, मानसिक, कलात्मक, एवं सृजनात्मक क्षमता को पहचान कर उसके अनुरूप उन्हें प्रशिक्षण की सुविधा प्रदान करता है और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने एवं भविष्य में उनके पुनर्वास की दिशा में सकारात्मक भूमिका अदा करता है। इस परिप्रेक्ष्य में विभिन्न जेलों में प्रशिक्षण हेतु बढ़ई कार्य, चित्रकारी, मूर्तिशिल्प, बुनाई, जूट कार्य इत्यादि विभिन्न क्राफ़्ट से संबंधित प्रशिक्षण कार्य कुशल प्रशिक्षकों के मार्गदर्शन में सम्पन्न किये जाते हैं। मानव जीवन में प्रारंभ से ही काष्ठ की अहम भूमिका रही है जो जन्म से मृत्यु तक विभिन्न कार्यो संस्कारों में साथ होता है, यही कारण है कि प्रदेश की जेलों में काष्ठ कला को विशेष रूप से बंदियों के प्रशिक्षण हेतु स्थान प्राप्त हुआ है एवं प्रदेश की समस्त केन्द्रीय जेल भोपाल, सागर, जबलपुर, रीवा, सतना, उज्जैन, इंदौर एवं ग्वालियर पर सृजनात्मक काष्ठ कला प्रशिक्षण एवं बढ़ई प्रशिक्षण के केन्द्रों सहित, सहउद्योग स्थापित किये गये है, इन केन्द्रों पर समस्त औजार एवं आधुनिक मशीनों सहित कार्य स्थल पर शेड बनाये गये है, एवं इन केन्द्रों पर प्रशिक्षण व उद्योगों संबधी कार्य सफलता पूर्वक हो रहे है।

बढ़ईगिरी एक ऐसी ही सृजनात्मक विद्या है जिसकी आवश्यकता समाज के सभी वर्गो के लोगों को होती है इसी कारण से जेलों पर बढ़ई प्रशिक्षण के केन्द्र स्थापित किये गये है।सर्वेक्षण में यह तथ्य भी सामने आया है कि बाजार के बने हुए फर्नीचर आदि की तुलना में जेल के बने सामान की प्रमाणिकता पर ग्राहकों का ज्यादा भरोसा है, यह महत्वपूर्ण बात है इस भरोसे का मूल कारण यह है कि जेल में केवल प्रशिक्षु कारीगर ही काम नहीं करते है अपितु उनके पीछे, उनके मार्ग दर्शक प्रशिक्षक और उप अधीक्षक उद्योग क्वालिटी कन्ट्रोल भी करते है बाहर जाने वाले सामान की गुणात्मकता का ध्यान रखते है तथा परिष्कृत सामान ही बाहर निकालते है।

हम इस तथ्य से भली भांति परिचित हैं कि लकड़ी से बने फर्नीचर मनुष्य के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। भारतीय संस्कृति में काष्ठकला का अपना महत्व है काष्ठ का उपयोग जीवन के प्रारंभ से अन्त तक होता आ रहा है यह स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है जीवन की हर अवस्था में लकड़ी से बनी वस्तुऐं विभिन्न रूपाकारों में दिखाई पड़ती है। जैसे शिशु अवस्था में पालना, बचपन में काष्ठ के खिलौने, गाड़ी, किशोर अवस्था में हॉकी, कैरम, वैट, लेखनी (कलम), युवा अवस्था–धार्मिक ग्रंथ पढ़ने हेतु रेहेल (बड़ी जिल्द वाले ग्रंथों को पढ़ते समय रखने के लिए), टेबल, कुर्सी, कम्प्यूटर टेबल, फर्नीचर, इजल, वृद्ध अवस्था–लकड़ी की छड़ी एवं जीवन के अन्त में दाह संस्कार में लकड़ी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

प्रदेश की केन्द्रीय जेलों पर भ्रमण करने पर ज्ञात हुआ की इन सभी केन्द्रों पर प्रशिक्षण सहउद्योग सुचारू रूप से संचालित हो रहे हैं। यह ट्रेड प्रदेश के प्रारम्भ से ही चलाया जा रहा है एवं सभी केन्द्रों पर पर्याप्त मात्रा में प्रशिक्षक मौजूद है उज्जैन एवं रीवा में बढ़ई प्रशिक्षक मौजूद नहीं हैं, यहां पर अन्य प्रभारी या वरिष्ठ बंदी प्रशिक्षण देते हैं। इस ट्रेड के काफी पुराने होने के कारण संबंधित औजार सहित सभी साधन मौजूद हैं और यहां पर कुर्सी, टेबल, बैड, अलमारी, पलंग, दीवान, काउच, स्टूल, सोफा, एवं कर्विंग संबंधी सभी कार्य किये जा रहे हैं।

यह बात इतर है कि इस ट्रेड में कुछ बंदी तो पूर्ण रूप से प्रशिक्षण लेते हैं और कुछ क्षमता से कम एवं कुछ समय व्यतीत करते देखे गये हैं लेकिन इस प्रकार के कैदियों की संख्या न के बराबर है। ऐसे लोगों की संख्या अधिक है जो प्रशिक्षण को अपना लक्ष्य समझ कर शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। लकड़ी को उपयोगी बना उसे आकार देना एवं पूर्ण तैयार कर पालिश तक समस्त विधियों को अंगीकार कर लेते हैं और जेल से मुक्ति उपरांत समाज में अपनी उपयोगिता सिद्ध करेंगे और अपने हुनर के दम पर जीवन को कर्मयोगी बनाकर समाज में अपना लोहा मनवाने को तैयार होगें।

''ऐसे कुछ उदाहरण हैं जो कैदी रिहाई उपरांत बाहर जाकर समाज में निरंतर बढ़ई कार्य रहे हैं।

1. मोहन पुत्र सुक्कू, सनखेड़ा इटारसी म.प्र., बढ़ई संबंधी कार्य में दक्ष था घर पर बढ़ई संबंधी कार्य कर रहा है।
2. अजहर पुत्र शहजाद, हशनात नगर वाणगंगा भोपाल, बढ़ई संबंधी कार्य में दक्ष था भोपाल में फर्नीचर की दुकान पर बढ़ई संबंधी कार्य कर रहा है।
3. गौरीशंकर पुत्र तुलसीराम, जहॉगीराबाद भोपाल म.प्र., बढ़ई संबंधी कार्य में दक्ष होकर रिहाई उपरान्त भोपाल में स्वयं का बढ़ई संबंधी कारोबार कर रहा है।
4. मायाराम पुत्र किशन, खेड़ी बैतूल म. प्र., बढ़ई संबंधी कार्य में दक्ष होकर रिहाई उपरान्त, बैतूल में स्वयं का बढ़ई संबंधी कारोबार कर रहा है।
5. के. के. विश्वकर्मा पुत्र श्रीकृष्ण विश्वकर्मा, करोंद भोपाल म.प्र., बढ़ई संबंधी कार्य में दक्ष होकर रिहाई उपरान्त भोपाल में बढ़ई संबंधी ठेकेदारी कर रहा है।'' (1)

कला इतिहास में बढ़ईगिरी :–

वात्स्यायन के कामसूत्र तथा शुक्रनीति आदि अन्य ग्रथों में 64 प्रकार की कला का वर्णन है। कश्मीर के विख्यात पण्डित क्षेमेन्द्र जी ने ''कला विलास पुस्तक'' लिखी है जिसमें विविध कलाओं का विषद वर्णन है इसमें 64 प्रकार की तो केवल उपयोगी कलायें है।

पाश्चात्य चितंक हीगेल ने सृजनात्मक कलाओं के भेद निम्नानुसार किये है –

1.वस्तुकला, 2.मूर्तिकला, 3.संगीत, नाट्य वादन, 3.चित्रकला,
4.नृत्य और अभिनय (नाट्क), 5. काव्य, साहित्य।

उपरोक्त सभी कलाएं मनुष्य को आनंद देती है लेकिन इनका और कोई प्रत्यक्ष भौतिक उपयोग नहीं है इसलिए इन ललित कलाओं के साथ कुछ अन्य कलाएं भी वर्णित की हैं जो मनुष्य के लिए सुन्दरता के साथ–साथ उपयोगी भी है इन्हें उपयोगी कलाएं कहा गया हैं। अत:''विद्धानों की दृष्टि से कला को दो प्रकार का माना है।

* शोधार्थी बरकतउल्ला विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत ** निदेशिका, सहायक प्राध्यापक (चित्रकला विभाग) महारानी लक्ष्मीबाई, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(अ) उपयोगी कला।
(ब) ललित कला। इनको 'कारु' और 'चारु' भी कहा गया है।'' (2)

(अ) उपयोगी कला :-

वह कला जिसमें सौंदर्य की अनुभूति गौंण और उपयोगिता अधिक होती है। जैसे- टेबल, कुर्सी, स्टूल आदि उपयोगी कला कहलाती है। इस कारण बढ़ईगिरी भी उपयोगी कला के अंतर्गत आती है। इसलिए भी बढ़ईगिरी को उपयोगी कला के रूप में देखा जाता है क्योंकि लकड़ी से बनी वस्तुऐं मानव जीवन की बहुत सी उपयोगिता को पूरा करती है।

(ब) ललित कला :-

इन कलाओं में उपयोगिता का स्थान गौण होता है इसमें वस्तुकला, चित्रकला, मूर्ति, संगीत, नाट्य, वादन, नृत्य, अभिनय, काव्य और साहित्य को शामिल किया जाता है। ''शिक्षा की दृष्टि से दो भागों में बांटा गया है।

- **व्यावसायिक कला-** व्यावसायिक कला के अन्तर्गत रंगाई, छपाई, बढ़ईगिरी, मिस्त्रीगिरी, सुनारी आदि आती है।
- **उदार कला-** उदार कला के अन्तर्गत संगीत, तर्क, व्याकरण, भषण आदि रखे गये हैं।''(3)

साहित्य में कला के प्राचीन विभिन्न विद्धानों, चिंतकों ने बढ़ईगिरी या काष्ठ कला को उपयोगी या व्यवसायिक कला के अन्तर्गत माना है।

''लेकिन कला का वर्गीकरण करना उचित नहीं है। इस बात को क्रोचे ने बड़े सुन्दर उदाहरण से प्रस्तुत किया है।

उन्होंने कहा है। कि पुस्तकालय में पुस्तकों को अपनी सुविधा के लिए वर्गीकृत किया जा सकता है इसकी उपयोगिता भी है परन्तु इसका अर्थ ज्ञान का वर्गीकरण नहीं है। ज्ञान का विभाजन या वर्गीकरण नहीं हो सकता। यही बात कला के लिए भी सत्य है।'' (4)

जेलों में बंदियों को दिये जा रहे बढ़ई कार्य के प्रशिक्षण हेतु प्रयुक्त प्रविधि :-

1. **''बढ़ईगिरी करने वाले कारीगरों का परिचय :-**
   प्रशिक्षण प्राप्त लकड़ी के प्रशिक्षुओं को चार भागों में बाँटा जा सकता है - 1.कारपेंटर, 2.ज्वाईनर, 3.कैबिनेट मेकर, 4.पैटर्न मेकर।'' (5)
2. **बढ़ई कार्य हेतु उपयोग में आने वाली सामग्री :-**
   ''1. बोर्ड एवं प्लाई 2. हार्ड बोर्ड 3. साफ्ट बोर्ड 4. ई-बोर्ड 5. फलेक्जीवल प्लाई 6. ब्लॉक बोर्ड 7. सनमाइका 8. बिनीयर 9. फेबीकोल 10. पालिस (रावसेना, टर्कीअंबर, बांट सायना, सीसम कलर, रोज कलर आदि पालिस के रंग बनाने हेतु) 11. थिनर 12. चपड़ी, चंद्रस, लाखदाना, 13. मेलामाइंड 14. कबजे 15. मलमल कपड़ा 16. टेपस्टी वॅलाथ 17. डल्लफ 18. सुलोचन 19. यू-फार्म 20. रेतमाल या संटपेपर परमाली हार्ड बोर्ड, 21. सांकल 16. चटखनी, 17. हत्ते व मूठ, 20. डोर स्टॉपर, 21. डोर क्लोजर 22. ताले 23. कील 24. लकड़ी।'' (6)
3. **बढ़ई कार्य में उपयोगी कीलों से परिचय:-**
   ''कीलें लकड़ी की फिर्फिंग में महत्व पूर्ण भूमिका अदा करती है यह विभिन्न प्रकार की होती है एवं इनका उपयोग भी पृथक-पृथक होता है। अलग-अलग कार्यों के लिए अलग-अलग नम्बर व मोटाई की कीलों का प्रयोग किया जाता है।
   कीलों के प्रकार निम्नलिखित है:-
   1.कट नेल्ज, 2.फोर्जड नेल, 3.सजावटी कीलें, 4.स्पेशल कीलें, 5.कील लगाने की विधियाँ'' (7)
4. **''बढ़ई कार्य में उपयोगी लकड़ियों से परिचय एवं उपयोगिता:-**
   - केविनेट:- टीक वुड, रोज वुड, पड़ाक, महागनी, कैल वुड, अखरोट।
   - सस्ते फर्नीचर:- कैल वुड, दैवदार, पाईन, हल्दू, आम, शहतूत।
   - कुर्सियाँ:- शीशम, रोज वुड, टीक वुड, अखरोट, देवदार।
   - दरवाजे के चोखट:- साल, शीशम, टीक वुड, रोज देवदार।
   - दरवाजे के पल्ले:-देवदार, कैल वुड, शीशम, आम, कीकर।
   - लकड़ी के फर्श:-शीशम, हल्दू, आम, देवदार, पाडक, कीकर, साल।
   - ड्राईंग के उपकरण:- कैल, तून, पड़ताल, बॉक्स वुड, रोज वुड, अखरोट, एबोन।
   - संगीत के वाद्य:- टीक, तून, शीशम, शहतूत, आम, हल्दू, कैल, पड़तल।
   - पैकिंग कैस:- चीड़, पड़तल, आम, कैल, सिम्वल।
   - प्लाइ वुड:- टीक, आम, अखरोट, सिम्वल, सफेद कैल।
   - लेमिनेट वोर्ड:- चीड़, पड़ाक, पड़ताल, शीशम।
   - खिलौने:- हल्दू, शीशम, चन्दन, अखरोट, एबोन, रोज वुड, टीक।
   - जूतों के फरमे:- बेर, आम, शीशम।
   - खेलों का सामान:- शहतूत, विलो।
   - बन्दूक के वट:- अखरोट।
   - नाव:- शीशम, सागवसन, कीकर, आम।
   - दियासलाई:- सेमल, चीड़ कंज।
   - फोटो फ्रेम:- चीड़, हल्दू।
   - रेल्वे के स्लीपर:- देवदार, आम, ।
   - रेल्वे की वोगी:- देवदार, सागवान, साल।
   - औजारों के हत्थे:- शीशम, कीकर, कैल, साल, ईमली, रोज वुड।''(8)
5. **बढ़ई कार्य में उपयोगी औजारों से परिचय:-**
   ''आरी, रंदा व ब्लैड, कवर एवं चॉप, गुनिया, बदगुनिया, हथोड़ी, बसूला, टाकला, चोरसी, टिकोरा, प्लेन फाईल, दरा फाईल, पेचकस, टेप, गिरमिट, सिकन्जा, बाक, कलेम्प, पेन्सिल, सनमाईका कटर, खसरी आदि।'' (9)
   बंदी प्रशिक्षुओं को औजारों से, तत्तपश्चात् उनके उपयोगों से अवगत कराया जाता है।
6. **बढ़ई कार्य में उपयोगी मशीनों से परिचय:-** ''प्लाई कटर, जिग्जा मशीन, ड्रिल मशीन, राउटर मशीन, सेन्डिंग मशीन, खराद मशीन, सिलाई मशीन, पलेनर विथ सा मशीन, बदगुनिया, ब्लेड एवं विटों के प्रयोग से भी परिचय कराया जाता है एवं इन मशीनों में कार्य के लिए उपयोग होने वाले बिटों, ब्लैडों, सेन्डिंग पेपर से भी परिचय कराया जाता है। जो मशीनों में अवश्यकता अनुसार बदली जाती है।
   बंदी प्रशिक्षुओं को मशीनों व उनके उपयोग की जानकारी दी जाती है।
7. **बढ़ईगिरी के प्रक्रम निम्नलिखित है।**
   1.''मापना, 2.निशान लगाना, 3.चिराई, 4.रंदाई, 5.सुराख करना, 6.चिजलिंग, 7.रीबेटिंग, 8.टैननिंग, 9.मोरटाईजिंग, 10.ग्रूविंग, 11.मोल्डिंग, 12.जोड़ लगाना, 13.लकड़ी की सजावट'' (10)
8. **''कुशन कार्य:-**
   कुशन कार्य का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। इसमें फोम की कटिंग व उस पर लगने वाले कपड़ा, रेगजीन आदि की सिलाई करना भी सिखाया जाता है। सोफा, डायनिंग, व्हील चेयर, अन्य कुर्सियॉ आदि पर कुषन कार्य का पूर्ण प्रशिक्षणदिया जाता है।

9. कैनिंग:-

कैनिंग बढ़ई कार्य से जुड़ा हुआ कार्य है। इसकी बुनाई एवं इसमें विभिन्न डिजाईनिंग का प्रशिक्षण दिया जाता है। कैन दो-तीन प्रकार की होती है, मोटी, पतली एवं विभिन्न रंगों की होती है।

समस्त जानकारियों के याद हो जाने के उपरांत ही प्रशिक्षु को कुशल बंदी के पास में ठिया, या वर्क बेन्च पर भेजा जाता है और बंदी को कार्य संबंधी सभी जानकारियों से अवगत कराया जाता है। साथ ही अपने बचाव के तौर तरीकों को भी समझाया जाता है। ताकि कार्य करते समय किसी भी औजार से स्वयं एवं दूसरों को चोट ना पहुंचे।''(11)

इन सभी जेलों पर जेल उपयोगी फर्नीचर, गृह उपयोगी एवं काष्ठ से संबंधी सभी वस्तुओं का निर्माण जैसे-कुर्सी, टेबल, स्टूल, सौफा, बैड, बेंच, दीवान, अलमारी, काउच, ड्रेसिंग, डायनिंग, रेक, ट्रे, ट्राली, मचोली, वास के कलात्मक फर्नीचर, मूर्तियॉ, कार्विंग, किया हुआ फर्नीचर आदि इसी प्रकार अन्य कलात्मक वस्तुऐं तैयार की जाती है। प्रशिक्षणकेन्द्रों पर भोपाल में श्री बी.एल. विश्वकर्मा वरिष्ठ बढ़ाई प्रशिक्षक, सागर में श्री नेपाल ब्रम्हने बढ़ई प्रशिक्षक, जबलपुर में श्री संतलाल उइके बढ़ई प्रशिक्षक, इंदौर में श्री महादेव राव अम्बाडकर बढ़ई प्रशिक्षक, ग्वालियर में श्री शेर सिंह रावत बढ़ई प्रशिक्षक, सतना में श्री ओमप्रकाश कौतहे बढ़ई प्रशिक्षकों के मार्ग दर्शन में बंदियों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।

वुड कार्विंग या काष्ठ की मूर्तिकला - देश एवं प्रदेश में मूर्ति कला का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इसमें विभिन्न प्रकार के पत्थरों एवं धातुओं पर मूर्तियों को उकेरा गया है। विशेष रूप से स्वर्ण, रजत, काँसे, पीतल, तांबे, एल्यूमिनियम, अष्ट धातु विभिन्न प्रकार की लकड़ियों, प्लस्टर ऑफ पेरिस, मिट्टी, पेपर मेशी, हाथी दांत, सीमेंट आदि पर मूर्तियों को गढ़ा गया है। भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से आज तक मूर्तियों का अपना महत्वपूर्ण स्थान रहा है। हिन्दू या सनातन धर्मावलम्बियों की प्रारंभ से ही मूर्तियों एवं मूर्ति-पूजा में विशेष आस्था रही है।

जेल में भी मूर्तिकला के प्रशिक्षण चलाये जा रहे है। भोपाल, इन्दौर, सागर, जबलपुर, ग्वालियर आदि केन्द्रीय जेलों पर विभिन्न प्रकार की मूर्तियों को उकेरा जा रहा है। जिसमें लकड़ी, डॉल मेकिंग, प्लास्टर ऑफ पेरिस, पेपर मेशी एवं सीमेंट आदि की मूर्तियों का कार्य प्रदेश की जेलों पर चल रहा है।

''काष्ठ की मूर्ति निर्माण का भी जेलों में बंदियों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। मुख्य रूप से सागौन, सीसम, चंदन, अक्उआ (पूजन हेतु मूर्ति) आदि की सूखी लकड़ियों पर मूर्तियों को उकेरा जाता है। मुख्य रुप से दो प्रकार की मूर्ति बनाई जाती है रिलीफ एवं आलराउण्ड, रिलीफ तीन प्रकार के होते है 1.लो रिलीफ, 2.सेमी रिलीफ, 3.हाई रिलीफ, इसमें में पृष्ठ भाग जुड़ा रहता है। जबकि आलराउण्ड में पृष्ठ भाग को काट दिया जाता है। जिससे मूर्ति या कृति पृथक हो जाती है सर्व प्रथम प्रशिक्षु को पेन्सिल द्वारा लकड़ी पर चित्र या डिजाइन बनाना सिखाया जाता है, तत्पश्चात् औजार के माध्यम से उक्त लकड़ी पर बनाये हुए चित्र या डिजाइन को चिन्हित किया जाता है। तत्पश्चात् उसे आकार दिया जाता है अर्थात जैसे- किसी व्यक्ति विशेष की मूर्ति निर्मित करना है तो सर्वप्रथम लकड़ी पर उस व्यक्ति का चित्र रेखांकित कर औजारों के माध्यम से चिन्हित करते है चिन्हित करने के बाद चित्र को बाहर निकालने के लिए पृष्ठ भाग को औजारों के माध्यम से काट दिया जाता है। ऐसा करने से मूर्ति में उभार आता है और इसके पश्चात् मूर्ति के मुख्य रूप को आकार दिया जाता है। फिर उसमें बारीक कार्य करते है। उसके बाद सेंड पेपर से घिसकर फिनिशिंग करते है है। इससे मुख्य रूप से 80 से 320 छव तक के पेपर का उपयोग करते है। घिसाई से संतुष्ट होने पर पॉलिस करते है।'(12)

विभिन्न जेलों में प्रशिक्षण केन्द्रों पर भोपाल में श्री बी. एल. विश्वकर्मा वरिष्ठ बढ़ाई प्रशिक्षक एवं श्री देविन्द्र भूषण बढ़ाई प्रशिक्षक, सागर में श्री नेपाल ब्रम्हने बढ़ई प्रशिक्षक, जबलपुर में श्री संतलाल उइके बढ़ई प्रशिक्षक, इंदौर में श्री महादेव राव अम्बाडकर बढ़ई प्रशिक्षक, ग्वालियर में श्री शेर सिंह रावत बढ़ई प्रशिक्षक, सतना में श्री ओमप्रकाश कौतहे बढ़ई प्रशिक्षक एवं उज्जैन में श्री राजाराम माहौर बढ़ई प्रशिक्षक आदि के मार्ग दर्शन में बंदियों को प्रशिक्षित किया जा रहा है जहां प्रशिक्षक उपलब्ध नहीं है इनके अभाव में जेल के अन्य टेक्नीकल स्टाफ प्रभारी के रूप में कार्य देख रहे है। रीवा में श्री प्रदीप वर्मा, डी.एस.एफ. एवं उज्जैन में श्री अ.मतीन कुरैशी प्रभारी है। प्रभारी यदि अन्य किसी ट्रेड के है तो कुशल बंदी प्रशिक्षणार्थी अन्य अकुशल बंदियों को प्रशिक्षित करते है। जेलों में प्रशिक्षण जेल मैनुअल के निर्देशानुसार एवं सभी ट्रेडों हेतु समान रूप से होता है।

कैदियों के जीवन में परिवर्तन एवं उनके पुर्नवास को साकार करने के लिए जेल विभाग शिक्षण-प्रशिक्षण के विभिन्न कार्यक्रमों को संचालित करता है। इसी प्रशिक्षण कार्यक्रम के तहत् बढ़ईगीरी का प्रशिक्षण प्रदेश के कैदियों को दिया जा रहा है। बढ़ईगीरी एक ऐसी ही सृजनात्मक विद्या है, जिसके तहत् काष्ठ से निर्मित वस्तुओं व कला कृतियों, जिनकी आवश्यकता समाज के सभी वर्गो के लोगों को होती है, के द्वारा रिहाई उपरान्त जेल से प्राप्त इस विद्या के माध्यम से समाज एवं परिवार में स्वयं को स्थापित कर सकेगा और अपने परिवार का पालन-पोषण कर सकेगा। इस प्रकार अपराधी के जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन के लिये मध्यप्रदेश की जेलों में हो रहे सृजनात्मक प्रशिक्षण का महत्वपूर्ण योगदान है।

साक्षात्कार -

1. रावत श्री शेर सिंह, बढ़ाई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल ग्वालियर।
2. विश्वकर्मा श्री बी.एल., वरिष्ठ बढ़ाई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल भोपाल।
3. ब्रम्हने श्री नेपाल, बढ़ई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल सागर।
4. उइके श्री संतलाल, बढ़ई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल जबलपुर।
5. अम्बाडकर श्री महादेव राव, बढ़ई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल इन्दौर।
6. कौतहे श्री ओमप्रकाश, बढ़ई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल सतना के द्वारा।
7. भूषण श्री देविन्द्र, बढ़ाई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल भोपाल।
8. वर्मा श्री प्रदीप, उप अधीक्षक उद्योग, केन्द्रीय जेल रीवा।
9. कुड़ापे श्री धर्म सिंह, उप अधीक्षक उद्योग, केन्द्रीय जेल जबलपुर।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

(1) सौजन्य-श्री बी.एल. विश्वकर्मा वरिष्ठ बढ़ाई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल भोपाल।
(2) शर्मा डॉ. लोकेश चन्द, भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, पृ.क्र. 4 गोयल पब्लिशिंग सुभाष बाजार मेरठ-2।
(3) शर्मा डॉ लोकेश चन्द, भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, पृ.क्र. 5, गोयल पब्लिशिंग सुभाष बाजार मेरठ-2।
(4) शर्मा डॉ. लोकेश चन्द, भारत की चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, पृ.क्र. 7, गोयल पब्लिशिंग सुभाष बाजार मेरठ-2।
(5) वर्मा वी. बी., रॉयल कारपेंटरी थ्योरी, पृ.क्र. 12, रॉयल बुक डिपो।
(6) सौजन्य- श्री देविन्द्र भूषण बढ़ाई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल भोपाल।
(7) वर्मा वी. बी., रॉयल कारपेंटरी थ्योरी, पृ.क्र. 165,166,167,168,164 रॉयल बुक डिपो, जालन्धर।
(8) वर्मा वी. बी., रॉयल कारपेंटरी थ्योरी, पृ.क्र. 103, रॉयल बुक डिपो, जालन्धर।
(9) सौजन्य-श्री महादेव राव अम्बाडकर, बढ़ई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल इन्दौर।
(10) वर्मा वी. बी., रॉयल कारपेंटरी थ्योरी, पृ.क्र. 114 रॉयल बुक डिपो, जालन्धर
(11) सौजन्य-श्री बी.एल. विश्वकर्मा वरिष्ठ बढ़ाई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल भोपाल।
(12) श्री नेपाल ब्रम्हने बढ़ई प्रशिक्षक, केन्द्रीय जेल, सागर।

भक्तामर काव्य और उसके रचयिता आचार्य मानतुंग

श्रीमती अस्मिता चौधरी * प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव **

जैन समाज के घर-घर और जन-जन में भक्तामर स्त्रोत को अत्याधिक महत्व प्राप्त है। इस स्त्रोत के प्रति प्रथम आकर्षण इसकी सुगेयता के कारण है और इसका दूसरा आकर्षण इस प्रसिद्धि के कारण है कि इस स्त्रोत के प्रत्येक श्लोक में भय, कष्ट, चिन्ता और कठिन से कठिन आधि-व्याधियों से त्राण प्रदान करने की अद्भुत शक्ति सन्निहित है। यही कारण है कि 48 श्लोकों में निबद्ध इस स्त्रोत का पाठ प्राय: प्रत्येक जैन बड़ी श्रद्धा, भक्ति और विश्वास के साथ करता है।

भक्तामर स्त्रोत के रचयिता आचार्य मानतुंग हैं। जैन धर्म के दोनों सम्प्रदाय दिगम्बर और श्वेताम्बर आचार्य मानतुंग को अपनी परम्परा का आचार्य घोषित करते हैं और उनकी रचना को अपने सम्प्रदाय का साहित्य निरूपित करते हुये गौरव का अनुभव करते हैं। निश्चय ही यह श्रद्धा आचार्य मानतुंग की रचना की श्रेष्ठता सिद्ध करते हुये उसे अविस्मरणीय बनाती है। स्त्रोत के प्रथम श्लोक के प्रथम पद के आधार पर इस स्त्रोत का नाम भक्तामर स्त्रोत प्रसिद्ध हुआ।[1]

भक्तामर स्त्रोत के आविर्भाव के सम्बन्ध में अनेक अनुश्रुतियाँ प्रचलित हैं। इन विभिन्न अनुश्रुतियों में समान तत्व मात्र इतना है कि मानतुंग नाम के एक महान् जिनभक्त, महाकवि एवं मुनिराज ने ऐसे अद्वितीय काव्य की रचना की जिसकी चमत्कारिता की कथा सारी सीमाओं को तोड़ती हुई जन-जन के गले का हार बन गई।

मानतुंग नाम के जैन गुरू का उल्लेख अनेक स्थानों पर प्राप्त हुआ है। तीसरी शती ईस्वी से लेकर बारहवीं शती ईस्वी तक के सुदीर्घ कालखण्ड में अनेक नाम मानतुंग के रूप में प्राप्त होते हैं। विद्वानों ने इन सभी की सम्यक् विवेचना कर भक्तामर स्त्रोत के रचनाकार आचार्य मानतुंग का समय 600 से 650 ईस्वी माना है। इनके सम्बन्ध में एक कथा प्राय: यह कही जाती है कि धारा (उज्जयनी) नगरी के राजा भोज की सभा में मयू रनाम के कवि ने मयूर शतक स्त्रोत की रचना कर अपना कुष्ठ रोग दूर किया तो उसकी प्रतिस्पर्धा में बाण ने चण्डी शतक की रचना करके अपने छिन्न-भिन्न अंगों को पुन: जोड़ लिया। राजा और प्रजा इससे प्रभावित हुए। जैन धर्म विद्वेषी किसी सभासद द्वारा यह गर्वोक्ति करने पर कि किसी अन्य धर्म ऐसी शक्ति नहीं, राजा के मन्त्री ने मुनि मानतुंग का नाम लिया। राजा ने मुनिराज को बुलवाया और उन्हें लौह श्रृंखलाओं से जकड़ कर 48 (या 44) तालों के भीतर कैद कर दिया। मानतुंग ने तब भक्तामर स्त्रोत की रचना की। एक-एक श्लोक पूरा होने के साथ एक-एक ताला टूटता गया। अन्तत: स्त्रोत पूरा हुआ और आचार्य मानतुंग सर्वथा बन्धनमुक्त हो कारागार के बाहर आ गये। इस चमत्कार का राजा और प्रजा पर अपूर्व प्रभाव हुआ और जैन धर्म की महती प्रभावना हुई। चमत्कारिक घटना से जुड़े इस स्त्रोत की ख्याति भी इसके प्रत्येक श्लोक में सन्निहित अतिशय पूर्ण प्रभाव शक्ति और सरल, सुगेय छन्द लालित्य के कारण दिनों दिन वृद्धि को प्राप्त हुई। मन्त्र विद्या विशारदों ने तन्त्र और मन्त्र से इसे जोड़ा। साधना के क्रम को निष्चित किया और प्राप्त होने वाले फल (लाभ) से जन सामान्य को परिचित कराया।

स्त्रोत की भाषा, छन्द विन्यास इसके प्रत्येक श्लोक को ''काव्य'' की गरिमा प्रदान करते हैं [2] बसन्ततिलका छन्द में निबद्ध भक्तामर स्त्रोत में 48 श्लोक हैं। प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों में 48 श्लोक प्राप्त होते हैं। श्वेताम्बर सम्प्रदाय में 44 श्लोकों की परम्परा है। भगवान के अष्ट प्रातिहार्यों में से [4] प्रातिहार्य, ''दिव्य दुन्दुभि'', ''कल्पवृक्ष'', ''भामण्डल'' और ''दिव्य ध्वनि'' का वर्णन शेषत: श्वेताम्बर मार्गी सम्प्रदाय में प्राप्त नहीं होता।[3] दोनों परम्पराओं के ग्रन्थ भण्डारों में प्राप्त प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों में सुन्दर चित्रांकन प्राप्त हुये हैं। अलग-अलग कालखण्डों में अलग-अलग शैली के चित्रकारों ने अपनी कल्पना को आकाश देते हुये जो रंग भरे थे, वे आज भी आकर्षक और जीवन्त हैं।

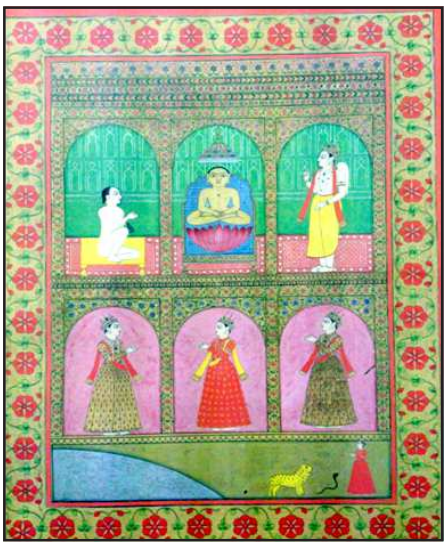

भक्तामर स्त्रोत भक्तिपरक काव्य है। भक्त ने अपने आचार्य की अर्चा-आराधना में जो समर्पण प्रकट किया है वह अतुलनीय है।[4] आचार्य मानतुंगजी सर्वप्रथम अनेक श्लोकों में

''क्षिति तलामल भूषणाय''

अपने आराध्य के रूप सौन्दर्य का वर्णन करते हैं। उनका रूप वैभव लोकोत्तर है। उनके नखों की कान्ति से देवों के मुकुटों की मणियाँ झिलमिलाने लगती हैं। उनकी शरीर की रचना में तीनों लोकों के परम/उत्तम परमाणु व्याप्त हो गये हैं। उनके मुख की उपमा में चन्द्र-सूर्य बहुत बौने/ओछे लगते हैं उनका रूप विश्व की कालिमा को नष्ट करने वाला है। उन प्रभु को प्राप्त करने वाला मृत्यु को भी जीत लेता है।

''त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युम्''

ऐसे अपरूप सौन्दर्य के धनी जिनेन्द्र प्रभु काम विकारों से सर्वथा रहित हैं, उनके चित्त को कोई उद्वेलित नहीं कर सकता।

''नीतम् मनागपि मनो न विकारमार्गम्''

जिनेन्द्र देव के नाम की महिमा इतनी है कि व्यक्ति दर्शन मात्र से उनके चरणों में नतमस्तक हो जाता है। शक्ति न होते हुये भी वाणी से स्तुति की गंगा प्रवाहमान हो जाती है।

''कर्तुम् स्तवम् विगतशक्तिरपि प्रवृत्त:''

और उसे यह विचार भी नहीं रहता कि उसका कृत्य विद्वानों की सभा में उसके उपहास का कारण तो नहीं बन जायेगा।

''अल्पश्रुतम् श्रुतवताम् परिहासधाम'' क्योंकि आपकी भक्ति ही मुझे शक्ति प्रदान करती है।

* शोधार्थी एम.ए. (ड्राईंग एण्ड पेन्टिंग) ** सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शास. महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

अनेक अतिशयों के धारी जिनेन्द्र देव को जन्म से, केवल ज्ञान प्राप्ति के उपरान्त और देवों द्वारा निर्मित अतिशय होते हैं। ये अतिशय प्रतीकों के माध्यम से काव्य में कवि द्वारा अंकित और चित्रकारों द्वारा चित्रित किये गये हैं। अशोक वृक्ष शोक से मुक्ति का प्रतीक है तो सिंहासन शासन/सर्वोच्चता का। तीन छत्र घोषित करते हैं, कि ये प्रभु रत्नत्रय के धारी हैं। भामण्डल शुक्ल लेष्या का प्रतीक है। इसी तरह दुन्दुभिनाद, पुष्पवृष्टि, 64 चमर आदि का प्रतीकात्मक अर्थ और अंकन है।

''त्वद्भक्तिरेव मुखरी कुरूते बलान्माम्''

मानतुंगाचार्य जी ने नाम स्मरण में भी प्रतीकों को प्रस्तुत किया है।[5] आपका ज्ञान वन्दनीय है इसलिये आप बुद्ध कहलाते हैं। तीनों लोकों के सर्व प्राणियों के सुख संवर्धक हैं इसलिये आप शंकर हैं। हे प्रभु कालचक्र के इस विभाग में आप ही मोक्षमार्ग के प्रवर्तक हैं अत: आप गणेश हैं। हे देवाधिदेव आप ही आद्य, अक्षय, अनन्त, एकानेक, योगीश, ब्रम्हा, ईश्वर, जगीश्वर, मुनिनाथ, मकरध्वज, जगन्नाथ, जगपति, जगदीश इत्यादि नामों से सन्तों द्वारा इसलिये पूज्य है कि आप ''यथानाम तथागुण'' को चरितार्थ करते हैं।

भक्तामर काव्य में मदोन्मत्त हाथी क्रोध और मनोविकारों का प्रतीक है। सिंह हिंसा का प्रतीक है विकराल सर्प काम-क्रोध का प्रतीक है। रणक्षेत्र संसार का प्रतीक है। प्रलयकाल की अग्नि आन्तरिक क्रोध की प्रतीक है जो प्रभु नाम के शीतल जल से तत्काल शांत हो जाती है। पन्च पाप रूपी मगरमच्छों से भरे सागर को भक्ति की नौका से ही पार किया जा सकता है। लौह श्रृंखला जैसा कठोर सांसारिक बन्धन प्रभु भक्ति या नाम स्मरण से विश्रृंखलित हो जाता है।

भक्तामर स्त्रोत में भक्त हृदय की अभिव्यक्ति भक्ति की सघनता की द्योतक है, कुछ उदाहरण हैं -''जिस प्रकार भयंकर सागर को अपनी भुजाओं से पार करना असंभव है, उसी प्रकार आपके निर्मल गुणों का वर्णन असंभव है।''

भक्तामर स्त्रोत में आये प्रतीकों को प्रत्येक कलाकार ने प्रथम तो आत्मसात किया, उनकी गहराइयों को स्पर्श किया, तत्पश्चात अपनी तूलिका से भावों को इतनी सजीवता के साथ चित्रित किया है कि, शब्द नहीं चित्र बोलते हैं। चित्रों में काल विशेष की छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है।

आचार्य मानतुंग साहित्य के इतिहास पर अंकित वह कालजयी हस्ताक्षर हैं, जिन्होंने संस्कृत के स्त्रोत साहित्य को अपने काव्य की अमृतधार से अभिसिंचित कर उसे नंदनकानन जैसी दिव्य आभा प्रदान कर दी।

उनके काव्य में भाषा का सौष्ठव, अलंकारों की छटा और अर्थ का गम्भीर समुद्र हिलोरें लेता है। अपने आराध्य के प्रति अगाध समर्पण का जो निश्छल गान इस काव्य की पंक्तियों से उतरता हुआ आराधक के होंठों से नि:श्रत होता है वह सारी सीमाओं को व्याप्त करता हुआ तीनों लोकों के कण-कण में समाहित हो जाता है और शेष रह जाती है एक अनिर्वचनीय मीठी-मीठी सुगन्ध/सोंधी-सोंधी सुगन्ध, आषाढ़ की पहली वर्षा से भीगी धरती से उठने वाली सुवास जैसी। ऐसे महान रचनाकार आचार्य मानतुंग ने भोपाल के निकट प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण ''भोजपुर'' नामक स्थान को अपनी साधना भूमि बनाया था। वृक्षों से आच्छादित सुरम्य पहाड़ियों के मध्य श्री शान्तिनाथ जिनालय के समक्ष उनकी समाधि स्थली भावुक भक्तों के लिये श्रद्धा का केन्द्र बनी हुई है।

संदर्भ सूची :-

1. भक्तामर भारती
   सम्पादक - शास्त्री पं. कमल कुमार जैन, पृष्ठ - 10
   श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्धत् परिषद्, 1974
2. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा
   शास्त्री डॉ. नेमिचन्द, पृष्ठ - 158
   श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्धत् परिषद्, 1974
3. भक्तामर भारती
   सम्पादक - शास्त्री पं. कमल कुमार जैन, पृष्ठ - 11
   श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्धत् परिषद्, 1974, प्रथम संस्करण
4. तीर्थंकर (भक्तामर स्त्रोत विशेषांक)
   सम्पादक- जैन डॉ. नेमिचन्द्र, पृष्ठ - 32
   हीरा भैया प्रकाशन, इन्दौर
5. भक्तामर भारती
   सम्पादक - शास्त्री पं. कमल कुमार जैन, पृष्ठ - 11
   श्री खेमचंद जैन, चेरिटेबिल ट्रस्ट, सागर, 1974, प्रथम संस्करण
6. भक्तामर भारती (सचित्र), पृष्ठ - 8
   प्रकाशक - जैन विद्या संस्थान
   जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि. 2005

****

भील चित्रांकन : नए आयाम

शिखा टहनगुनिया * डॉ. रेखा श्रीवास्तव **

भारत वर्ष में जो कुछ बड़ी जनजातियाँ हैं उनमें भीलों का स्थान प्रमुख है। अदम्य साहस एवं सतत् पारिश्रमिक प्रवृत्ति के कारण भारतीय संस्कृति में अपना अनूठा स्थान रहा है।

''भील जाति का इतिहास प्राचीन और ओजस्वी रहा है। वेदों, पुराणों, रामायण और महाभारत में आर्यो के वर्णभेद में ''पंचजना'' में भील गिने जाते हैं। मध्यप्रदेश में भील मुख्यत: धार, झाबुआ, खरगौन और रतलाम जिले में निवास करते हैं। मध्यप्रदेश के अतिरिक्त भील राजस्थान, गुजरात और महाराष्ट्र राज्यों में निवास करते हैं। भील अपने आप को चित्तौड़, राजस्थान का रहवासी मानते हैं। उनके मतानुसार उनके पूर्वज राजपूत थे। राजनैतिक कारणों एवं अकाल जैसी आपदाओं के कारण ये लोग चित्तौड़ छोड़कर संपूर्ण भारत में फैल गए।''

यह एक बड़ी विडम्बना है कि भील आज पलायन की चपेट में हैं। क्योंकि इनकी सूखी जमीन, दशकों से पर्याप्त फसल देने में असफल रही हैं, फिर भी वे अपनी संस्कृति एवं पारंपरिक रीति-रिवाज को अक्षुण्ण रखने में समर्थ हैं। ये लोग स्वयं अपने खास जनजातीय जीवन की परंपरा एवं सादगी को अपनी कृतियों मे ढालने का प्रयास करते रहे हैं। अपनी दिनचर्या में काम-काज के बीच भील महिला अभिव्यक्ति के क्षण, फर्श पर गोबर की लिपाई और दीवारों पर चित्रांकन में पा लेती है।

भीली बोली में चित्रांकन का अर्थ-लिखना होता है- वह सब जो उत्पत्ति या रचना के संबंध में पिथौरा देव के लिए लिखा गया कथानक बनता है। जो मध्यस्थ जातीय कलाकारों द्वारा धार्मिक अनुष्ठान की पूर्ति के लिए घटित होता है। भीलों में आनुष्ठानिक चित्र बनाए जाने की परंपरा बहुत पुरानी है। जिसमें पिथौरा एक महत्वपूर्ण धार्मिक अनुष्ठान है। पिथौरा चित्रांकन अपने चटख रंगों के कारण एवं प्राकृतिक अवयवों के सम्मिलित होने के कारण अत्यंत सुंदर दिखाई पड़ते हैं। यही भील कलाकारों के मूल चित्रांकन के रूप में जाना जाता है।

''पिथौरा भील आदिवासियों की जनजातीय पहचान है, और इसका संबंध भीलों की जातीय संवेदना से जुड़ा हुआ है। पिथौरा भीलों के रक्षक देव हैं। इनका विश्वास है कि घर में पिथौरा होगा तो विपत्तियों एवं बाहरी बाधाएँ नहीं आएँगी, और जीवन सुख से बीतेगा। पिथौरा बापजी, गणेश के पुत्र हैं। वे शुभंकर देवता हैं। जब पिथौरा घर में आ जाते हैं तो परिवार की चिंता मिट जाती है।

झाबुआ में ही पिथौरा के बारे में अलग-अलग किवदंतिया प्रचलित है। झाबुआ के भील इसे धर्मीराजा का पुत्र मानते हैं। इंदीराजा, दिवासा कुँवर, राखी, दीवाली बेहना, धर्मीराजा के पुत्र पुत्रियाँ हैं।

पिथौरा के कोई ऐतिहासिक तथ्य तो प्राप्त नहीं होते हैं, वे केवल मौखिक जनश्रुतियों, किवदंतियों, मिथकथाओं और चित्र कथाओं में ही मिलते हैं। इस आधार पर पिथौरा कुंवर का किसी महानायक का स्वरूप उभरता है। आदिम गाथाओं में उसे काजलराणी और कुण्डूराणों का पुत्र निरूपित किया है।''

जैसा कि सर्वविदित है ''अभिव्यक्ति मानव की सहज प्रवृत्ति होती है।'' अत: भीलों में भी यह प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से होती है, और भील कलाकार आनुष्ठानिक चित्रों के अतिरिक्त भी हमेशा चित्रांकन के लिए लालायित रहा! यद्यपि वह विषयों के मामले में अपनी मिथकथाओं को जो ग्रामदेव, पूर्वजों, धरती, पहाड़, खेती-किसानी या दिनचर्या से संबंधित होती है, से बाहर नहीं जा सका।

''लगभग दो दशक पूर्व मध्यप्रदेश के झाबुआ के भील कलाकार ''पेमा फात्या व भूरी बाई'' और गुजरात के राठवा कलाकार ''चिलिया भाई'' व ''भद्दू भाई'' के चित्र प्रकाश में आए जो ''भील पिथौरा'' चित्र के सिद्धहस्थ कलाकार हैं, जिन्होंने पिथौरा के अतिरिक्त भी अपने स्थानीय मिथकों को चित्र के रूप में अभिव्यक्त करना प्रारंभ कर दिया था। पेमा फात्या व चिलिया भाई ने तब तक ''पिथौरा'' चित्रांकन को अंतर्राष्ट्रीय फलक में स्थापित कर दिया था। इसके बाद से ही भीलों की ये चित्र परंपरा प्रकाश में आई। इन दो दशकों में भील चित्रों का लोकप्रियकरण आश्चर्यजनक है।''

''धनजी भाई राठवा द्वारा चित्रित पिथौरा चित्र

''गुजरात के भील कलाकार ''धनजी भाई राठवा'' एक पिथौरा चित्रकार है। पिथौरा के कथानक में गणेश देव ने घोड़े, केडा कुडी देव, राणी भोखेओ, (पिठौराणी औरत) पिठोराणी माँ (राणी काजल) के ऊपर की चाल, बिच्छू, इंद्राण, इंद्राणी, लखाराणी घोड़ी, सांभर, ऊंट, मोर, घोड़ी, बग्गी, सूर्याणी घोड़ी, चौकी पेरा, रावण जेसे बिंबों का चित्रांकन किया जाता है। जिसमें परिवेश में व्याप्त सामयिक रूपाकार जैसे खजूर के पेड़ पर चढ़ता व्यक्ति, भैंस को दुहते हुए, मक्खन निकालते हुए, नृत्य करते लोग, मुर्गा, मुर्गी, तीतर, कुत्ता आदि भी चित्रित किए जाते हैं। चित्र को गणेश देव के घोड़े बनाकर प्रारंभ किया जाता है।''

उपरोक्त पिथौरा के कथानक से स्पष्ट है, कि भीलों के मध्य देवताओं के साथ-समाज व परिवेश में कितना सामंजस्य है और देवताओं के मध्य भी उनका बराबरी का स्थान है। दूसरे अर्थों में जो चित्रांकन का कलापक्ष भी है- स्पेस में मूल कंटेंट को महत्वपूर्ण रूप से स्थापित करना है। इसलिए चित्र में सामाजिक परिवेश को चित्रित तो किया जाता है परंतु मूल कथानक से गौड़। दूसरे अन्य मामले में ये कलाकार की मानसिक दक्षता को भी साबित करता

* शोधार्थी ** निदेशिका, सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

है। पिथौरा के अतिरिक्त इनके देवी-देवताओं से संबंधित मिथक, जो मूलत: गांव की सुख-समद्धि से संबंधित होते हैं-इनमें देवी-देव, जंगल-पहाड़, हरियाली, नदी, पेड़, सूरज, धरती, आदि चित्रों के विषय बनते हैं।

'शैरसिंह द्वारा चित्रित गून्द्रादेव

''मध्यप्रदेश के झाबुआ के भील कलाकार शैरसिंह झांबेर'' के एक चित्र कथानक से स्पष्ट होता है कि गून्द्रादेव भीलों के ग्राम देवता हैं। ये देव गाँव की सुख समृद्धि एवं जानवरों तथा मनुष्यों को निरोगी रखते हैं। गांव में जब कोई विपत्ति आती है तो इस विपदा को रोकने के लिए गून्द्रा देव की स्थापना की जाती हैं।

जिसके लिए गांव के बीचो-बीच लोग एकत्रित होते हैं और मटके के टूटे टुकड़े या कवेलू (खप्पर) के टुकड़े पर चित्र बनाकर देवता को स्थापित कर पूजा करते हैं। कोपड़े (गोबर के कंडे) की अंगार बनाकर उसे टूटे मिट्टी के बर्तन में रखकर देवता को धूप दी जाती है। पूजन के पश्चात इस खप्पररूपी देव को गांव के बाहर नदी में सिरा दिया जाता है। इस प्रकार गून्द्रा देव की कृपा से गांव से विपत्ति का नाश हो जाता है।''

चित्रांकन की दृष्टि से इस क्लिष्ट कथानक को चित्रित करना कलाकार की मानसिक दक्षता व परिपक्वता भी दर्शाती है। कलात्मक दृष्टिकोण का भी चित्र में महत्वपूर्ण स्थान हैं जैसे चित्र में ऊपर हरे रंग की बार्डर में घोड़े तथा दोनों बाजू में नारंगी बार्डर में पुरूष जोड़े।

''इस तरह भील कलाकारों द्वारा पिथौरा चित्रांकन के अलावा ना जाने कितने विषय जेसे कलाकार ''मथुर भाई राठवा'' का एक चित्र- ''पीपड़ो वृक्षों नो पूजा'' जिसमें पीपल के वृक्ष की महत्ता बताई गई हे, एवं ''देव सिंह भाई राठवा'' के चित्र ''डोंगर अजगर की कहानी'' में कलाकार ने गांव की सुख समृद्धि की मिथ कथाओं का चित्रांकन किया है। ''मधुमक्खी और वृक्ष'' चित्र में धरती पर पारिस्थितिकीय सामंजस्य के महत्व को रेखांकित किया गया है।'[6]

मथुर भाई राठवा द्वारा चित्रित ''पीपडो वृक्षों नो पूजा''

इस तरह जब हम भील चित्रकारों के कथानकों पर जाते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी मिथ-कथाएँ कितनी समृद्ध हैं, और इनके चित्रांकन का फलक कितना विस्तृत है। वैसे पिथौरा ही भीलों के चित्रांकन की विशेष है। पिथौरा बनाने वाले का समाज एवं गाँव में विशिष्ट स्थान होता है-जिसे लखिंद्रा कहते हैं। अभिव्यक्ति की उत्कंठा ने विगत दशकों में अनेक कलाकारों को सामने लाया है और चित्रों के कथानक भी सामयिक होते गए।

अब यह स्पष्ट परिलक्षित हो रहा हैं कि चित्रों की यह परंपरा धार्मिक या समाजिक अभिव्यक्तियों के पार अपने सौंदर्यबोध एवं शैलीगत विशेषताओं के कारण समाज के बहुत बड़े भाग में अपनी पैठ बना चुकी हैं और समाज में कुछ सीमित विशिष्ट व्यक्तियों के अतिरिक्त अन्य कुछ लोगों ने भी जिसमें बहुत बड़ा युवा वर्ग भी सम्मिलित है, यह कार्य समझना और परंपरा को विस्तृत रूप से जानना शुरू किया और अपनी शैली के भीतर रहकर प्रयोग करना भी प्रारंभ कर दिया है। स्वयं सिद्ध है कि कलाकार भी अपने परिवेश के बदलते घटनाक्रम और बाजारवाद के चलते अपने आपको अछूता नहीं रख सका और यही वजह है कि कलाकार कभी ना कभी इसे भी अभिव्यक्त करने से नहीं चूकता। एक दिलचस्प चित्र के कथानक का उल्लेख इसे सपष्ट करेगा- गुजरात के एक भील कलाकार का बनाया एक चित्र, शीर्षक है - ''रेलयात्रा पति-पत्नी यात्रा के लिए सामान खरीद कर जा रहे हैं, स्टेशन पर लोगों की भागदौड़ हो रही है। कोई कुली के साथ ट्रेन में बैठनें जा रहा है, सभी को ट्रेन में बैठने की जल्दी है। कोई अपना सामान स्वयं उठाया हुआ हैं। कुछ महिलाएँ भी दौड़ती हुई ट्रेन में बैठने जा रही है। एक राठवा दम्पत्ति भी ट्रेन में बैठने जा रहा है। चौकी पर पुलिस वाला तैनात हैं, ड्राइवर ने सीटी बजाई अब ट्रेन चल पड़ी। उपरोक्त चित्र में स्टेशन की भागदौड़ और यात्रियों की उत्सुकता को दर्शाया गया हैं इसके बावजूद चित्र पारंपरिक रंग तथा शैली में बनाया गया है।

राठवा कलाकार द्वारा चित्रित चित्र रेलयात्रा

यही वजह है कि बीच के कुछ दशकों में लुप्तप्राय सी होती यह परंपरा फिर से जीवंत हो उठी नजर आती है। मिथकों का भंग होना रोचक तथ्य होने के साथ-साथ एक नयी बहस का विषय भी पैदा करता हैं कि बाजारवाद से परंपरा का संरक्षण या नाश।

संदर्भ ग्रंथ

1. शर्मा खेमराज, वन्य जाति (भील लोक संस्कृति), पृष्ठ क्रं.13,14,15, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ नई दिल्ली **Vol.-XXXII**, 1984
2. निरगुणे वसंत, पिठौरा - भील जनजातीय चित्रांकन और मिथकथाएँ, पृ क्रं.19,20, आदिवासी लोककला एवं तुलसी साहित्य अकादमी, मप्र एवं संस्कृति परिषद, भोपाल-2011
3. टहनगुनिया आनंद, शोध पत्र, इन्दिरा कला संगीत विवि खैरागढ़, छत्तीसगढ़,2011
4. कलाकार से साक्षात्कार पर आधारित
5. कलाकार से साक्षात्कार पर आधारित
6. आदिबिम्ब, राष्ट्रीय कार्यशाला, आयोजक-इंदिरागांधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय भोपाल, 20-30 जुलाई-2010 में प्रकाशित फोल्डर से

गोंण्ड चित्र शैली में उभरती कलाकार ''कलाबाई''

श्रीमती आरती अग्रवाल * डॉ. रेखा श्रीवास्तव **

जीवन में कलात्मकता की आवश्यकता हर युग में महसूस की जाती रही है। इतिहास इसका साक्षी है। प्रागैतिहासिक काल से मानव अपनी अनुभूतियों को प्रकट करने के लिये ब्राह्म माध्यम का आश्रय लेता रहा है।भीमबेटका, पचमढ़ी मंदसौर, आदि के पाषाण पर निर्मित चित्रों की श्रृंखला इसकी साक्षी है। सिंधु सभ्यता में तो परिष्कृत कलात्मक उदाहरण हमें हतप्रभ करते हैं। यही कलात्मक अभिव्यक्तियां कालान्तर में अनेक रूपों में निरंतर किसी न किसी विधा में दृष्टिगोचर होती रही हैं चाहे वह राजसी वैभव हो, उसके शानो शौकत हो या जन साधारण की लोक अभिव्यक्ति, कहीं न कहीं कला की झलक मिल ही जाती है। जीवन के विभिन्न संस्कारों में, धार्मिक आयोजनों में, कथाओं में, लोरियों में, दृश्यों में, दैनिक जीवन से जुड़ी घटनाओं में ही नहीं बल्कि मृत्युपरांत संस्कारों में भी कलात्मकता किसी न किसी रूप में विद्यमान होती है।

भारत विभिन्न जनजातीय बहुल देश है और मध्यप्रदेश में इनकी बहुलता है। इस जनजाती समूह में इसी तरह की अनेक कलात्मक शैली जन्म से मृत्यु तक के हर संस्कारों में रीति-रिवाजों, परम्पराओं में भिन्न भिन्न रूपों में प्रचलित है। क्षेत्र विशेष में प्रचलित है, ये कलाऐं किसी न किसी पक्ष को अभिव्यक्त करने की क्षमता रखती है। क्षमता से तात्पर्य यह है कि प्रत्येक मानव में जन्मजात कलात्मक अनुभूति होती है,

जीवन में आनन्द, सुख, शांति, और सौंदर्य के निमित्त कला के हर पक्ष का सफल प्रयोग होता आ रहा है। वर्तमान समय में इनसे कोई अछूता नहीं है,

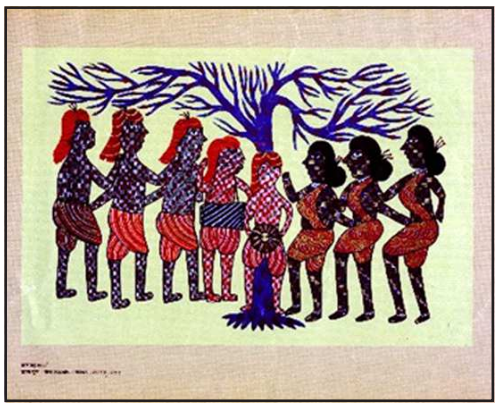

बल्कि इनका प्रयोग अब नवीन साधनों, माध्यमों से पहले से कहीं ज्यादा होने लगा है। समकालीन समय में सौंदर्यात्मक पक्ष प्रबल है, जिसका लाभ आज हर कलाकार लेना चाहता है, लेकिन कुछ ही इसे किसी बाह्य माध्यम में सशक्त अभिव्यक्ती की क्षमता रखते हैं एवं दूसरों के लिए आदर्श स्थापित करते है- कलाबाई भी उनमें से एक है, जिन्होंने न केवल स्थानीय स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना नाम स्थापित किया है।

इनका जन्म पाटनगढ़ में लगभग 1970 के आसपास हुआ था। बचपन से ही इन्हें चित्रकला में विशेष रूचि थी। इसकारण उनके नाना भजल लाल श्याम ने उनको कला नाम से सम्बोधित किया।

वे पिछले 20 वर्षों से इस क्षेत्र में सक्रीय रूप से जुड़ी है। वर्तमान में हस्तशिल्प विकास निगम एवं कला परिषद में स्वतंत्र चित्रकार के रूप में कार्यरत है। इनका विवाह बहुत ही छोटी उम्र में आनंद सिह श्याम से हो गया था। वर्तमान में आनंद श्याम इसी कला शैली के पारगंत चित्रकारों में से एक है। मूलत: इनके मामा जनगण सिंहश्याम इस क्षेत्र के प्रसिद्ध कलाकार रहे है। उन्हीं की प्रतिभा की झलक सम्पूर्ण गोण्ड परधान जाति के कलाकारों पर स्पष्ट दिखाई देती है। यह भी कहा जा सकता है कि जनगणश्याम गोण्ड चित्रशैली के पर्याय बन गये हैं! ये ऐसे प्रथम कलाकार हैं जिनको विदेशों में इस कला के लिये जाना और इसका प्रचार किया।

कला जो कभी अनाज कोठियों की रक्षा, बुरी आत्माओं से रक्षा, शुभ कार्य इत्यादि में निर्मित दीवार पर अर्धचित्र में बनायी जाती थी, अब कैनवास पर उतर कर बैठक की शोभा बन गई है।मण्डला और पाटनगढ़ के गोण्ड और परधान जनजाती में भी अपने घरों की दीवारों को अलंकृत करने की आदि-परम्परा देखने को मिलती है।गोंडी चित्रकला में जो आदिम कला वैभव व विस्तार छुपा है, उसका प्रयोग आधुनिक गोंण्डी चित्रकार अपनी कल्पनाशीलता, कलात्मक दक्षता, रचनात्मकता के साथ करतें हैं।

लोक कलाऐं चाहे वह भित्तिचित्रण हो, मूर्तिकला हो या और कोई माध्यम हो उनमें परिवर्तन को धीमी गति से होता देखा जाता है। लेकिन गोंण्डी चित्रशैली में परिवर्तन तीव्र गति से हुआ है। साथ ही इसके परिवर्तन में अभिव्यक्ति के स्वरूप को रूपाकारों, रंगों, परिष्कृतता और पोत में देखा जा रहा है। इन्हीं शैलीगत विशेषताओं के साथ कलाकार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सशक्त स्तम्भ बनते जा रहे हैं। आधुनिकता इनकी प्रमुख विशेषता बन गई है।

इनके चित्रों में संस्कार, तीज-त्योहार, मेले, मान्यताऐं मिथ कथाएँ, देवी देवता, जीव जन्तुओं, सामाजिक परम्परा तथा प्रकृति चित्रण मुख्य रूप से दिखाई देते है।गोण्डी चित्रशैली आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जिस रूप में सामने आई है, उसे विकसित हुये मुश्किल से 30-35 वर्ष ही हुए है।शोध के दौरन गारकामठा एवं पाटनगढ़ क्षेत्र में लगभग 75 वर्षीय ध्यानी मरावी के घर इस शैली के भित्ति चित्र प्राप्त हुए, जिनमें कच्ची दीवारों पर अर्धचित्र में दो बारहसिंगा अंकित है जिनमें वास्तविक पशु सिंग को ही प्रयोग में लाया गया है। यह शैली गोण्ड जनजाति की प्रारंभिक शैली थी, जो क्रमश: परिवर्तित हो वर्तमान स्वरूप तक पहुंची है।

वर्तमान प्रचलित गोण्ड चित्रशैली के विकास में प्रमुख योगदान जनगण सिह श्याम को माना जा रहा है। जिनका मानना है कि 'बड़े शुद्ध और चमकीले

* शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोध निदेशिका, सहायक प्रध्यापक (चित्रकला) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत

रंगों का अनोखा प्रयोग मानव से पहले प्रकृति ही करती रही हैं। बाद में मानव इन रंगों का ऐसा प्रयोग कर पाया जिन्होंने प्रकृति के साथ बतिया कर उससे उसकी रंग योजना के रहस्य पूछ लिए। जनगण इन्हीं प्रकृति सखाओं में से एक प्रतीत होते हैं जिनके कान में फुस फुसाकर प्रकृति ने कुछ कहा।'[4]

इसके साथ ही इसी विधा की पारगंत महिला चित्रकार कला बाई हैं उन्होंनेनामके अनुरूप चित्रकला के क्षेत्र में सक्रीय भागीदारी दी है। कला बाई को पारम्परिक, सांस्कारिक, धार्मिक अनुष्ठानों के चित्रों में महारत हासिल है। उनके चित्रों में सामाजिक और तात्कालिक घटनाओं मुख्यत: महाभारत के चित्र विषयों में। इनके चित्रों में जातीय संस्कारों और दैनिक दिनचर्या का यथार्थ चित्रण होता है।

अपनी कला में चटक रंगों का प्रयोग करती है। नीला व नांरगी उनके प्रिय रंग है जिसका इस्तेमाल वह हर चित्र में करती है। कला बाई प्रकृती प्रेम को ही अपने चित्रों में पशु, पक्षी, पेड़ के रूपाकारों में बनाती है। इसके साथ ही इन्हें धार्मिक चित्र बनाना भी पसंद है। जिनमें से करमा नृत्य, विवाह चित्र, भांवर की पुनरावृत्ति दिखाई देती है। उनके चित्रों में मनुष्याकृतियाँ प्रमुख रूप से होती है। उनके द्वारा पहनाए गये कपड़ों के फेहरान उन्हें गीत और लय देते है। आंख का कच्चा आंख की निचली कोर को छूता हुआ रहस्यमय भाव चेहरों पर लाता है।

कला बाई ने अपने चित्रों में रंग भरने की अलग पहचान बनाई है। ये आकृतियाँ सपाट रंग भरने के बाद उन पर अर्धगोलाकृति में रेखाऐं तथा चटाई के आकार की रेखाऐं बनाकर विशेष प्रभाव पैदा करती हैं।इनके चित्रों में मुख्यत: लाल, पीले, नीले नारंगी तथा काले रंगों का उपयोग ज्यादा होता है। इनके चित्रों का मुख्य आकर्षण इनके चित्रों की बड़ी बड़ी आँखें है, जिसमें आँखों का कंचा, आँख की निचली कोर को छूता हुआ एक अलग भाव लाता है।

कला बाई के चित्रों की विशेषता यह है कि ये पारम्परिक चित्रों को तो बनाती ही है, इसके अतिरिक्त ऐसे स्वतंत्र चित्रों का अंकन भी करने लगी हैं, जिनका संबंध उनके परम्परागत धार्मिक महत्व, सामाजिक संदर्भों से पृथक होते है।इस प्रकार के कलात्मक चित्रों को कलाबाई मनोरंजन तथा अपनी कल्पना की अभि व्यक्ति के लिए चित्र बनाती हैं।

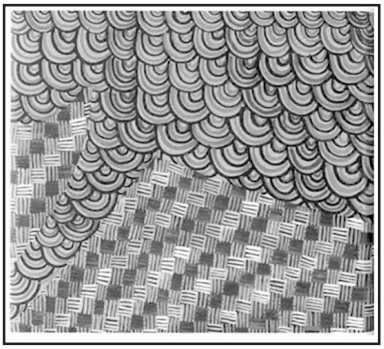

आधुनिक कला मंच पर इसी चित्रशैली के आधार पर कलाबाई अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कलाबाई ने गोंण्डी चित्रशैली में अपनी एक अलग पहचान बनाई। उनके रंगों का चयन, आकार, विन्यास तकनीक रेखाऐं और आकारों में भरे गए पोत अन्य चित्रकारों से उन्हें अलग करते हैं।

कलाबाई को अब तक इस चित्रशैली के अभूतपूर्व योगदान के लिये अनेकों पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश–छतीसगढ़ विभाजन के समय कलाबाई द्वारा निर्मित चित्र को राष्ट्रपति ए पी जे अब्दुल कलाम ने सराहा, साथ ही कर्मा नृत्य के चित्र को अपने साथ ले गये।उनके जीवन का दूसरा अविस्मरणीय क्षण तब आया जब स्काटलैंड की फिल्म एनीमेटेड लेस्ली ने गोंण्ड कला के ऊपर एनीमेटेड फिल्म बनाई जो कि तारामण्डल के सहयोग से बनी। यह फिल्म स्काटलैंड की ''टालेस्ट स्टोरी काम्पिटिशन'' में विजेता रही।

उन्होंने अकादमिक शिक्षा प्राप्त नहीं की है लेकिन इस चित्रशैली की पारंगत शिक्षक भी है एवम इसमें रूचि रखने वाली युवा पीढ़ी को शिक्षित कर रही हैं। साथ ही इस शैली को जीवंत और समृद्ध बनाने में अपूर्व सहयोग प्रदान कर रही है।

संदर्भ

1. साक्षात्कार द्वारा कलाबाई
2. सृजन मध्य प्रदेश की जनजातिय महिला कलाकारों की कला प्रदर्शनी, 9 मार्च से 8 मई 2008 भारत भवन भोपाल
3. निर्गुणेंबसंत, वन्या संदर्भ,अंक 1–24 अप्रेल 2006 से मार्च 2007,दिवारों पर बनने वाली कला अब कैनवास पर,आदिमजाति एवं अनुसुचित जाति कल्याण विभाग का प्रकाशन
4. विवेक जया, जनगण कलम गोंण्ड चित्रकला पर एक प्रदर्शनी, वन्या प्रकाशन आदिमजाति कल्याण विभाग पृ. 10. राष्ट्रीय कला अकादमी दीर्घा रविन्द्र भवन नई दिल्ली, 16 से 22 सितम्बर 2006
5. सृजन मध्य प्रदेश की जनजातीय महिला कलाकारों की कला प्रदर्शनी, 9 मार्च से 8 मई 2008 भारत भवन भोपाल

****

ताजुल मसाज़िद का अलंकरणात्मक स्वरूप

फरीदा नईम * डॉ. रेखा श्रीवास्तव **

मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल एक ऐतिहासिक एवं प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर नगर है। लगभग दो दशक पूर्व हिन्दी के प्रख्यात कवि स्वर्गीय बालकृष्ण राव ने भोपाल भ्रमण के पश्चात इस सुन्दर शहर को भारत का लुसर्न कहा था। जिस प्रकार स्विटजरलैण्ड का जुसर्न शहर अपनी सुन्दर झीलों के कारण पूरे विश्व में मशहूर हैं उसी प्रकार भोपाल अपनी प्राकृतिक परिवेश यथा पर्वतों, वनों एवं झीलों के मध्य बसा भारत में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है।[1] इतिहासकारों का मानना है कि भोपाल अपने प्रारंभिक दिनों में द्रविड़ सभ्यता का केन्द्र था।[2] आर्यो, परमार शासकों ने आठवीं से तेरहवीं शताब्दी तक राज्य किया। मुगल शासन के प्रारंम्भिक काल में यथा 1562 ई. में मुगल सम्राट अकबर ने मालवा को जीत लिया। उस समय भोपाल के आसपास के इलाके पर गोंड शासकों का राज्य था।[3]

भोपाल में प्रथम मुस्लिम रियासत स्थापित करने वाले दोस्त मोहम्मद थे जो अपने प्रारंभिक समय में अफगानिस्तान के नगर खैबर के क्षेत्र तीराह से सन् 1696-97 में उत्तरप्रदेश के लाहोरी जलालबाद के अफगान अमीन जलाल खान के अतिथि रहे। जब मराठों के साथ मुगल सेना का युद्ध छिड़ा तो वह सन् 1703 ई. में मालवा आ गया।[4] इसी समय 1707 ई. में औरगंजेब की मृत्यु होने पर देश में अफरातफरी का माहौल हो गया। दोस्त मोहम्मद खान को भी सत्ता स्थापित करने का विचार आया। उस समय बैरसिया का मुगल सुबेदार सन् 1709 ई. में ताज मोहम्मद खां थे। दोस्त मोहम्मद खान ने उससे बैरसिया छीन लिया जो उसकी सफलता की पहली सीढ़ी साबित हुआ।[5] सन् 1720 ई. में भोपाल सरदार दोस्त मोहम्मद खान के आधिपत्य में आ गया और उसके बाद उसका अधिकार गिन्नौरगढ़ के किले पर हो गया।[6]

इसके अतिरिक्त भोपाल राज्य पर अन्य नवाबों तथा चार बेगमों ने भी शासन किया तथा भोपाल के सौन्दर्य को बनाए रखने में बढ़-चढ़कर भाग लिया। यहां हिन्दू मुस्लिम सभ्यता का अनूठा संगम देखने को मिलता है।

भोपाल राज्य की पूर्व शासिका नवाब शाहजहां बेगम ने भारत की सबसे खूबसूरत मस्ज़िद को अपने निवास स्थल ताजमहल के निकट निर्माण हेतु विचार किया, जिसकी वर्ष 1887 ई. में नींव रखी गई। इस मस्ज़िद का मुख्य वास्तुविद अल्लारखा था।[7] इसका निर्माण कार्य बुरहानपुर में स्थित आदिल शाह फारूकी की काले पत्थरों से निर्मित मस्ज़िद से मेल खाती हैं। यह मस्जिद अधिक क्षेत्रफल में फैली हुई है। ताजुल मसाज़िद अर्थात मस्ज़िदों का ताज कहीं जाने वाली इस मस्जिद को सुर्ख लाल पत्थरों से निर्मित कराना प्रारंभ किया गया। इस मस्जिद में पत्थर पर उत्कृष्ट अलंकरण कार्य भी किया गया है। सन् 1901 ई. में शाहजहाँ बेगम के निधन के कारण इस मस्जिद के निर्माण कार्य में रूकावटें उत्पन्न हुई फिर भी धीरे -धीरे इस मस्जिद का आधे से अधिक निर्माण कार्य शाहजहाँ बेगम के जीवन काल में पूर्ण हो चुका था। शाहजहाँ बेगम ने इस मस्जिद के निर्माण हेतु जो कारीगर बुलाए थे वह विशेष कर आगरा, मथुरा एवं जयपुर के थे जो संग तराशी के कार्य में निपुण थे। उनके जीवन काल में मस्ज़िद के निर्माण पर 15 से 16 लाख के लगभग व्यय किया गया था। मसाज़िद का एक द्वार शाहजहाँ बेगम के नवासे नवाब हमीदुल्लाह खॉ जो भोपाल राज्य के शासक थे उनके द्वारा बनवाया गया परंतु किन्ही कारणो से पूर्ण नहीं हो सका इसी के साथ ताजुल मसाज़िद का कार्य रूक गया। इसके पश्चात इस मसाज़िद के निर्माण कार्य को मौलाना इमरान साहब ने सन् 1958 ई. में पूर्ण करवाया। इस मस्ज़िद में एक तबलीगी इज्तिमा सन् 1948 ई. से प्रारंभ होकर वर्ष 2001 ई. तक सम्पन्न होता रहा। जो आज वर्तमान समय में ईटखेड़ी नाम स्थान पर आयोजित होता है।

इस ताजुल मसाज़िद के क्षेत्रफल को देखा जाए तो इसके आंगन सहित पूर्व से पश्चिम तक 526 फिट है। इस की छत 94×248 फीट पर फैली हुई है इस को स्थिर करने वाले 12 स्तम्भ हैं और प्रत्येक स्तम्भ 31.5× 31.5 फीट के हैं जिन्हें बेल बूटों से अलंकृत किये गये हैं। मस्ज़िद के सात मेहराबों पर संगमरमर की 25 तख्तियां निर्मित हैं इन सभी तख्तियों पर कुरानी लेखों का अंकन है। इस प्रकार ताजुल मस्ज़िद बाहर से लेकर अन्दर के प्रार्थना कक्ष तक अत्यन्त कलात्मक अलंकरणों द्वारा दीवारों, मेहराबों, स्तम्भों, गुम्बदों पर पत्तियों, पृष्पों, बेलों, ज्यामितीय अलंकरणों आदि रूपाकारों से सुसज्जित की गई है।

ताजुल मस्ज़िद के उत्तर एवं दक्षिण दीवारों पर पत्थरों की कलात्मक जालियों का उपयोग किया गया है, जिन्हें देख कर ऐसा महसूस होता है कि पत्थर को मोम की भांति पिघला कर मानों खूबसूरत अलंकृत जालियों में ढाल दिया गया है। मस्ज़िद का आंगन 325× 325 फिट है।8 आंगन के बीच में जो हौज़ है वह चबूतरे सहित इसकी माप 58×58 फिट है इस मस्ज़िद के दोनो शिखर नुमा मीनारें अपने आप में एक मिसाल हैं जिन की उंचाई 228 फिट हैं जिन पर 253 सीढ़ीयां और 72 रोशनदान हैं इन मीनारों के ऊपर 9 फिट के कलश भी निर्मित हैं। मस्ज़िद की एक और शान उसके तीनों गुम्बद भी हैं जिन पर बिल्लोरी कांच के कलश लगाए गए हैं। इन गुम्बदों के अंदर बड़े -बड़े हाल बनाए गए हैं। इस मस्ज़िद के चारों खानों पर स्थित बुर्ज बारह - बारह (12-12) स्तम्भों की सहायता से निर्मित की गई है जो मस्ज़िद के सौंदर्य को और अधिक निखारती है ताजुल मस्ज़िद के तीनों द्वारों में से पूर्व दिशा का द्वार अद्भुत एवं निर्माण कार्य शैली का एक अच्छा नमूना प्रस्तुत करता है जमीन की सतह से पच्चास फीट ऊंची है। जो कमान की भांति पछत्तर (75) सीढ़ियों द्वारा निर्मित है। उत्तरी द्वार से मोतीया तालाब जो पूर्व में

* शोधार्थी ** निदेशिका (सहायक प्राध्यापक; चित्रकला), महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महा. भोपाल (म.प्र.) भारत

शाहजहॉनी तालाब के नाम से जाना जाता था, सौन्दर्यमय दृश्य प्रस्तुत करता है जिसे शाहजहाँ बेगम इस मस्ज़िद का हौज़ बनाना चाहती थी। मस्ज़िद की चारों सीमाएं इस प्रकार है :-

- पूर्व में :- हमीदिया रोड, पूर्व में यह ढेले वाली सड़क के नाम से जानी जाती थी।
- पश्चिम में :- दफ्तर औकाफ आम्मा एवं दफ्तर मसाज़िद है।
- उत्तर में :- मोतिया तालाब जो पूर्व में शाहजहांनी तालाब के नाम से जाना जाता था।
- दक्षिण में :- भूमि मस्ज़िद एवं दुकाने, इसके बाद सुल्तानिया रोड।

मस्ज़िद के आस -पास की भूमि जिसे ताजुल मसाजिद काम्लेक्स के नाम से जाना जाता है, मस्ज़िद के ही उपयोग में हैं। इस में एक पाठशाला है जिसमें ताजुल मस्ज़िद के अतिरिक्त अल्लामा सैय्यद सुलेमान नदवी के नाम पर एक शानदार पुस्तकालय स्थापित किया गया हैं मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल में, यह एक दर्शनीय स्थल हैं जहां पर देश - विदेशों के पर्यटक इसे देखने अवश्य आते रहते हैं।[१]

मस्ज़िद की विशेषताएँ :-

- ताजुल मस्जिद में (सुर्ख) लाल रंग की मीनारें हैं जिसमें सोने के स्पाइक जड़े हैं।
- गुलाबी रंग की इस विशाल मस्जिद के दोनों ओर निर्मित दो गुलाबी मीनारें हैं जिस पर सफेद छोटे गुम्बद बने हैं, मदरसे के तौर पर इस्तेमाल किये जाते हैं।
- ताजुल मसाजिद का प्रवेश द्वार दो मंजिला है और वह बहुत खूबसूरत है।
- ताजुल मसाजिद के मुख्य प्रार्थना हॉल में जाने के लिए सात मेहराब-युक्त प्रवेश द्वार है। सम्पूर्ण मस्ज़िद बेहद खूबसूरत और अलंकृत है।
- ताजुल मस्ज़िद विश्व की तीसरी एवं एशिया की प्रथम भव्य एवं विशाल छत पोश की मस्जिद है।

वैज्ञानिक नक्शा :- नवाब शाहजहां बेगम ने ताजुल मसाजिद का बहुत ही वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित नक्शा तैयार करवाया। ध्वनि तरंग के सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए 21 खाली गुम्बदों की एक ऐसी संरचना का नक्शा तैयार किया गया कि मुख्य गुम्बद के नीचे खड़े होकर जब इमाम कुछ कहेगा तो उसकी आवाज पूरी मस्ज़िद में गूंजेगी। शाहजहाँ बेगम ने ताजुल मसाजिद के लिये विदेश से 15 लाख के पत्थर भी मंगवाए, चूंकि इसमें (अक्स) परछाई दिखती थी अत: मौलवियो ने इस पत्थर के इस्तेमाल पर रोक लगा दी। आज भी ऐसे कुछ पत्थर दारूल उलूम में रखे हुए हैं।

ताजुल मसाजिद के आकर्षण में चार चांद लगाते हुए विशाल गुंबदों का निर्माण किया गया है जो आकर्षक मुगल एवं ईरानी कला शैली की देन है। गुम्बद में नीचे की ओर अकेंथस पत्तियों का अलंकरण किया गया है जो प्राचीन ग्रीक एवं रोमन सभ्यता के प्रतीक चिन्हो में अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है। इसका एक आध्यात्मिक महत्व भी है। गुम्बद में सबसे नीचे के भाग में नीले रंग के संगमरमर का कार्य अनूठा है जिसमें ज्यामितीय आकारों और गुलाबी पत्थर से लयात्मक गोल कंगुरों की सीधी श्रृंखला में रेलिंग बनाई गई है।

विश्व प्रसिद्ध इस मसाज़िद की आंतरिक सज्जा में स्तम्भों, भित्ति चित्रों, अर्धचित्रों और कलात्मक जालियों का अभूतपूर्व योगदान है प्रार्थना कक्ष में

12 अलंकृत स्तंभो का निर्माण बरबस ही दर्शकों को आकर्षित करता है सभी स्तंभों में ज्यामितीय एवं पुष्पीय अलंकरणों का आकर्षक संयोजन है, यह स्तंभ प्रवेश द्वार पर स्थित है इस स्तंभ को देखने से ऐसा आभास होता है मानो शिल्पी ने इसे एक गुलदान के रूप में अलंकृत कर दीवार के कोने को सजाने हेतु अंकित किया है, जिसमें पत्तियों की लयात्मकता एवं कलात्मकता के साथ प्राकृतिक पुष्पों, ज्यामितीय आकारों का अनोखा संगम प्रस्तुत किया गया है।

ताजुल मस्ज़िद के अन्दर प्रार्थना कक्ष के बीच में मुख्य द्वार के पास बने इस स्तंभ पर अत्यंत खूबसूरत आलेखन देखा जा सकता जिसमें शिल्पी की अपनी प्राकृतिक अनुभूति की अभिव्यक्ति को लाल पाषाण पर जीवंत रूप प्रदान किया है। यह स्तम्भ लगभग 50-60 फिट ऊँचाई लिए हुए है, और इसको षष्ठकोणाकार में बनाया गया है। इस विशाल स्तंभ के निचले भाग पर लगभग 12 से 14 फिट ऊँचाई में 3.5 इंच के अर्धचित्रों का खूबसूरत संयोजन है। जिस पर ऐकेन्थस की आकर्षक पत्तियों के लयात्मक रूपाकारों का प्रयोग कर स्तभं का निचला भाग अलंकृत किया है जिसमें पत्तियों की दिशा पृथ्वी की ओर है। इन कलात्मक पत्तियों के ऊपर कमल पुष्प का अंकन है। इन कमल पुष्पों के ऊपर उर्ध्व दिशा में जाती हुए पत्तियों के दो समूहों का अंकन स्तंभ की पूर्ण गोलाई में किया गया है जो स्तंभ को और अधिक आकर्षक बनाती हैं।

ताजुल मस्ज़िद के अंदर प्रार्थना स्थल में बीचों-बीच में बने स्तंभों पर भी अत्यंत कलात्मक आलेखन को अलग-अलग रूप में अलंकृत किया गया है इनमें भिन्न-भिन्न पत्तियों के विभिन्न रूपाकारों को संयोजित किया गया है। इस स्तम्भ में कुछ फैली-फैली पत्तियों, गोल कंगूरों के रूप में पत्तियां एवं नीचे के भाग में लंबी एवं कटावदार नुकीली पत्तियों के अत्यंत सौंदर्यमय भिन्न-भिन्न सजीव स्वरूप को शिल्पी ने अलंकृत करने का प्रयास किया है।

स्तम्भों के अतिरिक्त पाषाण की भित्तियों पर निर्मित चित्रों में से मस्ज़िद के प्रार्थना कक्ष में निर्मित यह अर्धचित्र अत्यंत कलात्मकता लिए हुए है जिसमें आयताकार भाग के बीच आकर्षक आलेखन बनाया गया है। जिसमें फैलाव लिए हुई पत्तियों एवं लयात्मक बेल के बीच जोड़ में छ:-छ: पंखुड़ी वाले तीन फूलों और तीन कलियों का अंकन किया गया है। पत्तियों एवं सम्पूर्ण आलेखन

में शिल्पी ने प्राकृतिक स्वरूप को सौन्दर्यपूर्ण सजीव एवं आकर्षक अर्द्धचित्र के रूप में निर्मित किया है जो लगभग 6 फिट की शिला पर अंकित है। इसी तरह के अनेक संयोजन सम्पूर्ण प्रार्थना कक्ष की भित्तियों पर अंकित हैं जो अपने अद्भुत संयोजन के रूप में आकर्षक हैं।

मसाजिद में जहां अर्धचित्रों का विशाल भण्डार है वही मस्ज़िद में पत्थरों को तराश कर निर्मित जालियों का निर्माण सहज ही कलाकारों के अद्भुत कौशल की ओर कला पिपासुओं को आकर्षित करता है। मस्ज़िद में लाल गुलाबी पत्थरों पर शिल्पकारों द्वारा निर्मित अनेक जालियां लगी हुई हैं इन कलात्मक जालियों का वैज्ञानिक महत्व भी था जिनके द्वारा मस्ज़िद में हवा एवं प्रकाश की समुचित व्यवस्था की जाती थी। इन्ही में से एक मस्ज़िद के अंदर पूर्वी शग में उपरी दिशा में स्थित जाली पर फूलों के गुलदस्ते का अंकन है। इरानी कालीनों पर भी इसी प्रकार के अंलकरण प्राप्त होते हैं। अत: यह कहा जा सकता है, कि इनके निर्माण में ईरानी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

मस्जिद के किनारे के हिस्से में इस्लामिक स्थापत्यकला एवं ईरानी शैली का प्रभाव दृष्टिगोचर होता हैं। ताजुल मस्ज़िद की यह दीवार 70 फिट ऊँची है, जिसमें मेहराबों युक्त लम्बी और आयताकार जालियों की अधिकता है जिसमें उच्चकोटी के कलात्मक आलेखन है। इसी प्रकार मसाजिद के अन्दर भी जालियों की श्रृंखला निर्मित है, मानो शुद्ध वायुप्रवाह एवं प्रकाश की व्यवस्था हेतु कलात्मक स्थापत्य के रूप में इसका उपयोग किया जाता हो। जब इस मस्जिद का निर्माण प्रारंभ हुआ था तब भोपाल शहर में बिजली की व्यवस्था नहीं थी। उस समय चिरागों, लेम्पो के माध्यम से रोशनी की व्यवस्था की जाती थी। कुछ इसी कारण इस मस्ज़िद में जालियों का अंकन अधिक स्तर पर किया गया है। इन जालियों की लम्बाई एक से

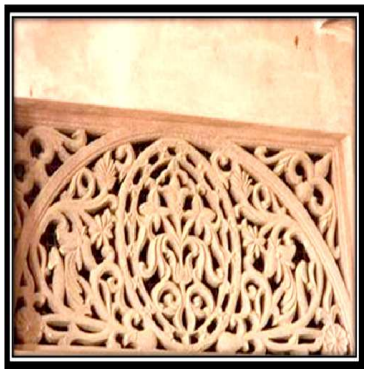

डेढ़ मीटर एवं चौडाई 1/2 मीटर की है। इसमें सम्पूर्ण जालियों को बड़ी कुशलता पूर्वक अंकित करने में शिल्पी सफल रहा है।

ताजुल मस्जिद के अंदर प्रार्थना कक्ष की दीवार पर 10-12 फिट की उँचाई पर स्थित यह जाली आयताकार है जिसमें आलेखन हेतु अर्द्धगोलाकार (डी शेप) के अंदर अंडेनुमा पूर्ण वृत में सम्मात्रिक पद्धति द्वारा आलेखन उकेरा गया है जिसमें घुमावदार पत्ती एवं बीच में तीन पंखुड़ीनुमा पुष्प का अंकन यथार्थ स्वरूप में किया गया है। अर्द्धगोले के आसपास के अंदर के रिक्त स्थान को भी बड़ी कुशलता पूर्वक भरा गया है जिसमें नीचे गोल कलीनुमा या गुलदान नुमा आलेखन में से सम्पूर्ण बेलें निकली हुई दर्शाई गई हैं। वही ऊपरी कोनों के रिक्त स्थान को पुष्पीय आलेखन से भरा गया है इस सम्पूर्ण जाली की लगभग मोटाई 3-5 इंच होगी।

ताजुल मस्ज़िद के अंदर प्रार्थना कक्ष की जालियों में लयात्मक आलेखनों में सम्मात्रिक अलंकरण पद्धति की अधिकता देखने को मिलती है। जिसमें ज्यामितीय आलेखनों के साथ प्राकृतिक रूपाकारों को भी बड़ी दक्षता से शिल्पी ने अलंकृत करने का सफल प्रयास किया है, जिसमें मुगलकालीन कला शैली का प्रभाव दिखाई देता है।

इस तरह सम्पूर्ण ताजुल मसाजिद अभूतपूर्व भित्ति अलंकरण एवं कलात्मक जालियों से सुसज्जित है जिसे निर्मित करने हेतु भारत के ही विभिन्न शिल्पियों ने अपने अद्भुत कला कौशल का प्रयोग किया है, किन्तु मस्ज़िद के अलंकरण में ईरानी एवं मुगल प्रभाव की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। इसी तरह के अलंकरण रोमन कालीन एवं जेरूसलम की आक्स मस्ज़िद तथा इस्फहान, पूर्व फारस की शाही मस्ज़िद-ए-शाह एवं मुस्लिम बहुल देशों में निर्मित स्थापत्यों के अलंकरण में भी देखा जा सकता है। जिस तरह मुगल शहंशाह शाहजहाँ ने भारत के दिल दिल्ली में कलात्मक स्थापत्य की प्रसिद्ध जामा मस्ज़िद का निर्माण कराया था ठीक उसी भांती मध्यप्रदेश के हृदय स्थल भोपाल में शासिका नवाब शाहजहाँ बेगम ने ताजुल मसाजिद का निर्माण करवाया था जो दिल्ली जामा मस्ज़िद के अलंकरणों से भी समानता रखती है, किन्तु ताजुल मसाज़िद अपने उत्कृष्ट अलंकरणों और वृहद स्थापत्य के कारण विश्व-प्रसिद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1 सांइटिफिक भोपाल दर्शन/ पंचम संस्करण/पृक्र.05
प्रकाशक- साइंटिफिक पब्लिशर्स 3, नादिरा बस स्टैण्ड परिसर/भोपाल - 462001/
2 वहीं...../पृ.क्र.-5
3 भोपाल (इतिहास, पुरातत्व, सांस्कृतिक एवं पर्यटन) पृ.क्र.-36 प्रकाशन: आयुक्त पुरातत्व अभिलेखागार एवं संग्रहालय म.प्र. भोपाल - 462003/2002
4 वही..... पृ.क्र. 40
5 भोपाल ;इतिहास,पुरात्व,सरंकृति एंव पर्यटन/पृ.क्र.-40, प्र.2002
6 वही -पृ.क्र.- 41
7 वही - /पृ.क्र.-79
8 Sultan jehan begum: Hayat-I-shahjehani/1926/ p.no.288
9 दिनांक 24.11.1961/मध्यप्रदेश राजपत्र, भाग-3 (1) पृ.क्र.2115

****

कलागुरु डॉ.लक्ष्मीनारायण भावसार के चित्र (''शिव-पार्वती'' में षडंगों की उपादेयता)

रमाशंकर मिश्र * डॉ. रेखा श्रीवास्तव **

जयपुर नरेश जयसिंह प्रथम की सभा के राज पुरोहित पंडित यशोधर ने 11वीं शताब्दी में 'कामसूत्र' की टीका ''जयमंगला'' नाम से प्रस्तुत की। कामसूत्र के प्रथम अधिकरण के तीसरे अध्याय की टीका करते हुए श्री यशोधर ने आलेख्य (चित्रकला) के छ: अंग बताये हैं जो इस प्रकार हैं-

'' रूपभेदा:प्रमाणानि भाव ,लावण्य,योजनम ।
सादृश्य वर्णिका भंग इति चित्र षड़कम ''।।

प्राचीन भारतीय कला के श्रेष्ठ उदाहरण अजंता, बाघ, ऐलिफेंटा, ऐलोरा आदि स्थानों की कांति षडंगों से है जिनके प्रयोग से कलागुरु के चित्र ''शिव-पार्वती'' में सम्पूर्ण वातावरण विस्मित, अनुग्रहित, तथा अनुमान से अधिक वैभव पाकर विभोर हो गया है। मां पार्वती का चित्रण आपने इस प्रकार किया है मानो बादलों द्वारा स्नान कराये जाने के बाद खिले हुये आकाश से व कुन्द के पुष्पों से आच्छादित धरा का सौंदर्य बढ़ जाता है। मां की शोभा उस गंगा से भी अधिक हो गई जिसके किनारे, बालू में चक्रवाकों के दल खेलते हों। उनके सजे हुए बालों से युक्त मुख की शोभा भी ऐसी मनोरम हो उठी है मानो मेघ पटल से युक्त चन्द्र का बिम्ब हो या ''भ्रमरों से युक्त पद्म'' तथापि दोनों उदाहरण यहां तुच्छ प्रतीत होते हैं। ऊपर और नीचे के होठों को विभक्त करने वाली रेखा पराग से रंगे होने के कारण नहीं वरन महादेव की उपस्थिति समीप होने से और लाल हो गई है तथा अंजन लगे कमल नयन मुख की शोभा असीम कर ही रहे हैं। मां के सम्मुख विराजे शिव चिता की भस्म रमाये, चर्म की दुशाला धारे मां को निहार रहे हैं। मस्तक पर चमकीला तीसरा नेत्र जिसकी दीप्त पीले रंग की पुतली हरताल से लगाया तिलक प्रतीत होती है। सिर पर चंद्रमा की कला विद्यमान होने से दिन में चमकीली किरणें निकलने से किसी अन्य चूड़ामणि की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। अनंत की ओर देखता नंदी बल और शौर्य का प्रतीक है। मणि कांचन की भांति कांति युक्त पार्श्व में परिदृश्य का अभिनय करता हिमाला स्वयं को गौरान्वित महसूस करता प्रतीत होता है। आईफेक्स द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर पुरुस्कृत यह चित्र आपकी सर्वश्रेष्ठ कृतियों में से है।

'जाकी रही भावना जैसी , प्रभु मूरत देखी तिन तैसी'

उपर्युक्त पंक्तियों का स्पर्श यह सत्य उजागर करता है कि अवधारणा के अनुरूप निहतार्थ सौंदर्य उजागर होता है ऐसे ही आदि देव और मां पार्वती के असंख्य चित्र तूलिकाकारों ने रचे हैं और सभी चित्र रंग संगति, रूपाकार एवं संयोजन की दृष्टि से श्रेष्ठ हैं तथा अधिकांश कलातत्वों की प्रतीति इनमें होती है तथापि कलागुरु के शिव-पार्वती उत्कृष्ट रचना होने के साथ ही जहां एक ओर षडंगों के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं वहीं दूसरी ओर समसामायिक बोध का अभिज्ञान भी प्रतिध्वनित करते हैं।

1. अत्यंत सरल एवं स्वाभाविक रेखाओं से उत्कीर्ण आकृतियों वाले इस चित्र की चारित्रिक विशेषता ही रूपभेद की उपस्थिति दर्शाती है जिससे चित्रित रूपाकर दैविय स्वरूप लगते हैं।

2. शिव के विराट रूप के सम्मुख मां पार्वती का लघु अंकन यह प्रमाण देता है कि दोनों दैविय आकारों में कौन क्या है और क्यों है यह प्रमाण का ही प्रभाव है कि सीमित आकर वाले इस चित्र में भगवान शिव, मां पार्वती, भवतारणी मां गंगा, नंदी और हिमालय सभी अपनी गरिमा में हैं। बहुआयामी प्रमाण स्थापित तौर पर अंग उपांगों के अनुपात को दर्शाते हैं तो आधुनिकता को इतनी सहजता से लेते हैं कि डिस्टोर्शन भी आकार प्रति आकर के तोलमोल को रमणीयता प्रदान करने में पीछे नहीं रहते हैं।

3. चित्र में आदिदेव का अंकन अर्धोन्मिलित चक्षु वाले परित्राता के रूप में किया गया है। जो विश्रामावस्था में भी अत्यंत सजग भाव मुद्रा में हैं क्योंकि उनके एक हाथ की मुद्रा प्रसन्नचित्त भाव भंगिमा को पोषित करती है तो वहीं दूसरी ओर उनकी अर्धांगिनी मां पार्वती की उपस्थिति से दिव्य मुख मंडल पर आई किंचित मुस्कान चित्र का प्राण है और दूसरे हाथ का त्रिशूल रक्षा हेतु तत्पर है। मां गंगा चन्द्र की भांति ही अलंकरण प्रतीत हो रही हैं। तो वहीं नेपथ्य को ओर देखते नंदी महाराज ऐसे लग रहे हैं। मानो इस माहौल में व्याप्त मौन की गूँज से आह्लादित हो उठे हों। अंतत: भाव प्रधान इस चित्र में सृष्टा का दृष्टा से सुमधुर शब्द विहीन संवाद स्पष्ट होता है, यही इस चित्र की पराकाष्ठा है।

4. सौंदर्य को उत्कर्ष पर ले जाता हुआ लावण्य ही चित्र की कसौटी है जो कि हर रूपाकृति में व्याप्त है, एक स्वामिनी अपने सर्वस्व को प्राप्त कर जो परितृप्ति और निर्मलता की रूप उदीप्ति व्यक्त करती है वही यहां माता पार्वती के मुख मंडल पर व्याप्त आभा में चित्रित है उसी प्रकार रूप, प्रमाण तथा भाव की उपस्थिति सहज ही लावण्य उत्पन्न करती है।

5. सादृश्य की अनुभूति चित्र में हर स्थान पर स्पष्ट है, शास्त्रों में वर्णित भगवान शिव की महिमा के अनुरूप हर तत्व श्रेष्ठतम रीति से यथा स्थान चित्रित है जिससे चित्र की भव्यता और विशिष्टता स्पष्ट ही दृष्टिगोचर होती है। जो समरूपता से किसी के रूप वैभव या व्यक्तित्व की भव्यता का आंकलन करता है, सादृश्य है।

6. षडंगों के इस अंतिम अंग पर ही चित्र का सम्पूर्ण भार होता है अर्थात नाना प्रकार के वर्णों का कलात्मक व यथास्थान प्रयोग जैसा की इसमें किया गया है। सम्पूर्ण चित्र को धवल कांति प्रदान करता हिमाला भोलेनाथ और मां की उपस्थिति से और अधिक तेजोमय हो उठा है। भव्यता के परिचायक नारंगी और शीतलता के द्योतक नील वर्ण से चित्र में सामंजस्य सहज ही व्याप्त है।

अभीष्ट विषय किस सीमा तक सही-सही चित्रित हो सका है यह वर्णिका भंग की चुतराई, क्रियात्मक प्रयोग और रंग सामग्री के स्वभाव की भिज्ञता तथा उनके प्रभावगत बोध के सामंजस्य व अनुशीलन पर निर्भर रहता है, पूर्णता इसी के इर्द-गिर्द झांकती रहती है। इस प्रकार यह चित्र भारतीय जनमानस की आस्था का प्रतीक एवं चित्रकला के षडंगों का श्रेष्ठ उदाहरण है। इसके माध्यम से आपके चित्रण कौशल का ही नहीं, चाक्षुष वृंदों व वर्णिका पर अधिकार का नहीं, स्पैचुला के चमत्कार का भी नहीं वरन आपकी श्रद्धा, आस्था व विश्वास का पता चलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- कासलीवाल मीनाक्षी : ललितकला के आधारभूत सिद्धांत राजस्थान हिंदी ग्रन्थ जयपुर 2003
- वर्मा अविनाश बहादुर :भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रकाश बुक डिपो,बड़ा बाज़ार,बरेली 1994
- खन्ना नवीन : रंग और आप, अंकुर पब्लिकेशन 1993
- वाजपेयी डॉ.राजेन्द्र :सौंदर्य, म.प्र.हिंदी ग्रन्थ अकादमी 2004
- बेगड़ अमृतलाल : सौंदर्य की नदी नर्मदा

* शोधार्थी बरकतउल्ला विवि. भोपाल ** शोध निदेशक, सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या महा.भोपाल (म.प्र.) भारत

आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन एवं पोषण शिक्षा के प्रचार में उनका योगदान

डॉ. ऋचा सक्सेना * डॉ. नमिता सक्सेना **

आंगनवाड़ी ऐसा केन्द्र है जिसमें एकीकृत बाल विकास सेवा योजना की समस्त सेवाएँ उपलब्ध करायी जाती हैं। बच्चों की देखभाल के लिए आंगनवाड़ी केन्द्र की स्थापना प्रत्येक गांव और शहर में की गई है। गांव या शहर में प्रति एक हजार जनसंख्या पर तथा आदिवासी क्षेत्र में प्रति सात सौ जनसंख्या पर एक आंगनवाड़ी खोली जाती है। इस केन्द्र के लिए एक आंगनवाड़ी कार्यकर्ता और सहायिका की नियुक्ति की जाती है।

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता अपने क्षेत्र के प्रत्येक घर जाकर गृह भेंट करती है वहाँ वह महिलाओं को पोषण व स्वास्थ्य के विषय में बताती है तथा उन्हें केन्द्र में मिलने वाली सेवाओं का लाभ उठाने के लिए प्रेरित करती है। इसके अतिरिक्त आंगनवाड़ी कार्यकर्ता नियमित रुप से एकीकृत बाल विकास की सेवाएँ महिलाओं व बच्चों को देने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यदि आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा उचित प्रकार से होगी तो वह उस शिक्षा को गांव या शहर की हर महिला तक पहुँचा पाएगी। पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा 15-45 वर्ष की महिलाओं को दी जाती है। इनमें गर्भवती, धात्री माताओं को प्राथमिकता दी जाती है।

बच्चों को कुपोषण से बचाने के लिए, बच्चों की स्कूल छोड़ने की प्रवृत्ति को कम करने के लिए, मातृ-मृत्युदर, शिशु-मृत्युदर को कम करने के लिए, तथा किशोरियों के पोषण व स्वास्थ्य के लिए जन-जन तक पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा अनिवार्य है। जब आंगनवाड़ी कार्यकर्ता गृह-भेंट के दौरान महिलाओं को उनके खान-पान के विषय में बताती हैं तो वह महिलाएँ अपने सभी सदस्यों का ध्यान भली-भांति रख सकती हैं। परंतु क्या आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को पोषण सम्बन्धी जागरुकता है ?

क्या ग्रामीण महिलाएं उनकी शिक्षा का लाभ उठा पाती हैं? क्या वह जागरुक हो पातीं हैं? इन प्रश्नों के उत्तर ज्ञात करने के लिए ''आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन एवं पोषण शिक्षा में उनका योगदान'' शोध विषय का चयन किया गया है।

शोध के उद्देश्य -

- आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की शिक्षण से पूर्व पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का अध्ययन।
- आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की शिक्षण पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का अध्ययन।
- शिक्षण से पूर्व आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं द्वारा दी गई ग्रामीण महिलाओं का पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का अध्ययन।
- शिक्षण पश्चात् आंगनवाड़ी कार्यकर्ता द्वारा ग्रामीण महिलाओं का पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का अध्ययन।
- आंगनवाड़ी कार्यकर्ता का पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा प्रचार में योगदान।

परिकल्पना -

- आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा।
- आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं द्वारा दी गई ग्रामीण महिलाओं की शिक्षण से पूर्व शिक्षण पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा।

पद्धति-शास्त्र

प्रस्तुत शोध ग्वालियर क्षेत्र की शहरी-1, शहरी-2, शहरी-3, शहरी-4, शहरी-5 की परियोजना से 5-5 आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को चुना गया। कुल 25 कार्यकर्ता ली गईं। महिलाओं की उम्र 25-45 वर्ष की ली गई। इन आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की शिक्षा का स्तर हाई सेकेण्डरी तथा ग्रेजुएट था। इस शोध में सर्वप्रथम आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के लिए पोषण एवं स्वास्थ्य से सम्बन्धित प्रश्नावली तैयार की गई इस प्रश्नावली में उन प्रश्नों का समावेश किया गया जो एक ग्रामीण महिला को जानना अति आवश्यक है। इस प्रश्नावली को शिक्षण देने से पूर्व पूछा गया, उसके पश्चात् आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को 7 दिन तक प्रशिक्षण दिया गया उसके बाद शिक्षण पश्चात् प्रश्नावली भरवायी गई। तत्पश्चात् शिक्षण पूर्व प्रश्नावली द्वारा प्राप्त तथ्य एवं शिक्षण पश्चात् प्राप्त तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन टी-टेस्ट द्वारा किया गया।

आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के जागरुकता के स्तर को और सत्यापित करने के लिए उनसे ग्रामीण महिलाओं की व पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का अध्ययन स्वयं के समक्ष करवाया गया। इसके लिए प्रत्येक आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को 5 ग्रामीण महिलाएँ जिनकी उम्र 25-45 की हो कुल 125 ग्रामीण महिलाएँ ली गईं और उनका जागरुकता का स्तर ज्ञात करने हेतु अनुसूची दी गई जिसे आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं ने ग्रामीण महिलाओं को शिक्षण देने से पूर्व एवं पश्चात् भरा एवं तथ्यों को एकत्रित करने के पश्चात् ग्रामीण महिलाओं का भी शिक्षण से पूर्व व शिक्षण पश्चात् जागरुकता के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया गया यह तुलनात्मक अध्ययन टी-टेस्ट द्वारा किया गया।

तथ्यों का वर्गीकरण व विश्लेषण

तालिका क्रमांक-1 (आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं की पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का स्तर)

क्र.	स्तर	शिक्षण से पूर्व		शिक्षण से पश्चात्	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	उच्च	0	-	17	68
2.	मध्यम	12	48	07	28
3.	निम्न	13	52	01	04
	कुल योग	25	100	25	100

* अतिथि विद्वान, सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंज बासोदा, विदिशा (म.प्र.) भारत
** व्याख्याता, आँगनवाड़ी कार्यकर्ता प्रशिक्षण केन्द्र, आनन्दनगर, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 68 प्रतिशत महिलाओं में शिक्षण के पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का उच्च स्तर पाया गया जबकि शिक्षण से पूर्व नगण्य था । इसी तरह 48 प्रतिशत महिलाओं में शिक्षण से पूर्व में पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का स्तर मध्यम तथा शिक्षण पश्चात् 28 प्रतिशत पाया गया। 52 प्रतिशत महिलाओं में शिक्षण से पूर्व निम्न व शिक्षण पश्चात् 4 प्रतिशत पाया गया।

तालिका क्रमांक–2

(ग्रामीण महिलाओं की पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का स्तर)

क्र.	स्तर	शिक्षण से पूर्व		शिक्षण से पश्चात्	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	उच्च	0	–	34	27.2
2.	मध्यम	28	22.4	68	54.4
3.	निम्न	97	77.6	23	18.4
	कुल योग	125	100	125	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 27.2 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं में शिक्षण के पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का उच्च स्तर पाया गया जबकि शिक्षण से पूर्व 77.6 प्रतिशत महिलाओं में निम्न था। शिक्षण पश्चात् 54.4 प्रतिशत महिलाओं की पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता का मध्यम स्तर पाया गया।

तालिका क्रमांक–3

आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन

जागरूकता का स्तर	माध्य	मानक विचलन	स्वातंत्र यांश	टी परीक्षण का मूल्य	रिमार्क
शिक्षण पूर्व	5.36	2.8	48	5.43	p 0.05
शिक्षण पश्चात	9.6				
0.05 स्तर पर सार्थक					

उपरोक्त तालिका द्वारा आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् का टी परीक्षण मूल्य 48 स्वातंत्रयांश पर 5.43 है जो 0.05 स्तर पर सार्थक है अत: शून्य परिकल्पना आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा अस्वीकृत होती है। अत: पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा देने के पश्चात् उनकी जागरुकता पर प्रभाव देखा गया।

तालिका क्रमांक–4

ग्रामीण मेहलाओं का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन

जागरूकता का स्तर	माध्य	मानक विचलन	स्वातंत्र यांश	टी परीक्षण का मूल्य	रिमार्क
शिक्षण पूर्व	3.25	1.9	248	28.13	p 0.05
शिक्षण पश्चात	9.72				
0.05 स्तर पर सार्थक					

उपरोक्त तालिका से यह ज्ञात होता है कि ग्रामीण महिलाओं का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् तुलनात्मक अध्ययन करने पर टी–मूल्य 28.13 है जो 0.05 स्तर पर सार्थक है अत: शून्य परिकल्पना ग्रामीण महिलाओं का शिक्षण पूर्व व शिक्षण पश्चात् पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा अस्वीकृत होती है। अत: शिक्षण देने के पश्चात् उनकी पोषण एवं स्वास्थ्य जागरुकता में वृद्धि पायी गई जिसका माध्य 9.72 है।

निष्कर्ष:– प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वारा ज्ञात होता है कि आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं में पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षण देने के पश्चात् उनकी जागरुकता में वृद्धि हुई। तालिका क्रमांक–1 के अनुसार शिक्षण पश्चात् 68 प्रतिशत महिलाओं में जागरुकता का उच्च स्तर पाया गया उसी तरह ग्रामीण महिलाओं में भी शिक्षण पश्चात् वृद्धि देखी गई। तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह भी ज्ञात हुआ कि यदि महिलाओं को पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा मिले तो उनकी जागरुकता में अंतर पाया जाता है। तालिका क्रमांक–3,4 के अनुसार आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं व ग्रामीण महिलाओं की शिक्षण पश्चात् जागरुकता में प्रभाव देखा गया।

अत: निष्कर्ष निकलता है कि यदि आंगनवाड़ी कार्यकर्ता को उचित पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरुकता होगी तो वह ग्रामीण महिलाओं को भी बेहतर ढंग से जागरुक करेंगी।

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता का पोषण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा प्रचार में योगदान

आंगनवाड़ी कार्यकर्ता का पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा प्रचार में मुख्य योगदान है। पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा माताएँ, बच्चों के स्वास्थ्य पोषण सम्बन्धी सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम होंगी तथा बाल विकास को बढ़ावा देने, मातृ–मृत्युदर, शिशु–मृत्युदर, कुपोषण को काफी हद तक कम करने में सफल होंगी। आंगनवाड़ी कार्यकर्ता ही एकीकृत बाल विकास सेवा योजना के अंतर्गत सभी महिलाओं को जागरुक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वह माताओं, बच्चों को स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार, टीकाकरण, सम्बन्धी सेवाएँ प्रदान करती है।

इसके अलावा समय–समय पर महिलाओं को साफ–सफाई, बीमारियाँ, वृद्धि निगरानी, कुष्ठ उन्मूलन, प्रसवपूर्व व प्रसव पश्चात् देखभाल, स्तनपान, सही समय पर ऊपरी आहार, ओ. आर.एस. घोल पर चर्चा आदि विषयों पर सलाह देती हैं। जिससे ग्रामीण महिलाओं के पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर को ऊँचा उठाया जा सके।

****

समाज में नारी की सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं

डॉ. एस.एस. बघेल * दीप्ति यादव **

प्रस्तावना

वर्तमान समय में भारतीय नारी की स्थिति कुछ हद तक सुधर गई है, परन्तु पूर्णत: नहीं। वह अभी भी अशिक्षित पर्दा प्रथा से घिरी, दहेज से प्रताड़ित तथा निरीह जान पड़ती है। गांवो में तो इनकी स्थिति और भी बदत्तर है। '' वह पुरूष के पैरों की जूती समझी जाती है'' तथा उसे कठपुतली की तरह नचाया जाता है। उसे वह आदर, सम्मान नहीं दिया जाता जो उसे परिवार की सेवा, त्याग करने के प्रतिफल में मिलना चाहिए। नारी को दलित, कुठाग्रस्त रहना पड़ता है। नारी के संबंध में भारत के महान कवि मैथिलीशरण गुप्त अपनी पंक्तियों में कुछ इस प्रकार व्यक्त की है –

'' अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी।
आँचल में है दूध और आँखो में पानी''

इस बिगड़ते नारी के मानसिक दृष्टिकोण को बदलते सामाजिक परिवेश में नवीन रूप से स्वीकारा है। इस बिगड़ते नारी के मानसिक दृष्टिकोण को बदलते सामाजिक परिवेश में इसे नवीन रूप से स्वीकारा है।नारी की सामाजिक स्थिति नगरीय तथा शहरीय स्तर पर कुछ सुधरी हुई है लेकिन ग्रामीण स्तर पर आज भी दयनीय है, उसकी मूल स्थिति हम निम्न तथ्यों से समझ सकते है।

नारी की सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं –

1. **पर्दा प्रथा से प्रताड़ित नारी–** भारत में आज भी पर्दा प्रथा प्रचलन में है ग्रामीण क्षेत्रों में मुस्लिम परिवारों में आज भी बहू बेटियाँ पर्दे की ओट में कैद है।
2. **अशिक्षा से घिरी नारी–** भारतीय नारी आज भी अशिक्षित है, उसे पढ़ने लिखने की स्वतन्त्रता नहीं है। वह रूढ़िवादी मानसिकता वाले परिवारो से जुड़ी है, चाहकर भी वह पढ़ नहीं पाती। आज भी बहुत से माँ बाप की धारणाएँ है कि बेटी पढ़कर क्या करेगी घर का चौका चूल्हा करना उसकी नियति है। धारणा है सारी स्वतन्त्रता पुरूषों के लिये और सारी अधीनता स्त्रियों के लिये है।
3. **बाल विवाह–** भारत में आज भी बहुत से हिन्दी भाषी राज्यों यथा राजस्थान, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, बिहार तथा मध्यप्रदेश में बाल विवाह का प्रचलन है। बालिकाओं के 10 वर्ष के होने पर उसका विवाह कर दिया जाता है जिससे उसका बहुआयामी विकास नहीं हो पाता है। और वह घर की चाहरदीवारी में कैद होकर रह जाती है।
4. **दहेज प्रथा–** भारत में अभी वर पक्ष वाले मनमाना पैसा वसूलते है। और कन्या पक्ष वाले ऐसा न कर पाने पर तरह तरह से सताये जाते है तथा उन्हें दहेज देने पर मजबूर कर दिया जाता है। दहेज प्रथा से प्रताड़ित महिलाओं का विभिन्न वर्गो में प्रतिशत निम्नानुसार है।

जाति/धर्म	दहेज से प्रताड़ित महिलायें
सामान्य वर्ग	30 प्रतिशत
पिछड़ा वर्ग	20 प्रतिशत
हरिजन	25 प्रतिशत
मुस्लिम	10 प्रतिशत
अनु.जनजाति	10 प्रतिशत

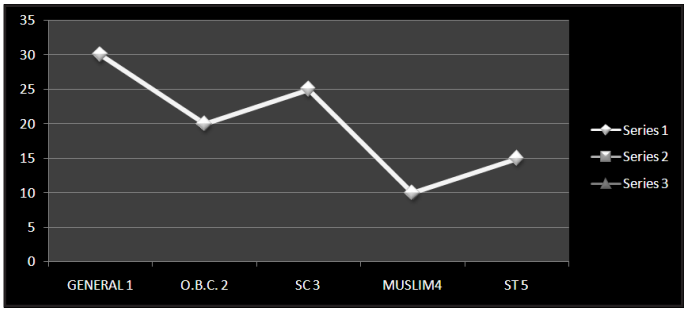

दहेज की प्रथा के लिए दोनों ही पक्ष उत्तरदायी है। न तो हम दहेज दें और नहीं लें तभी स्थिति सुधर सकती है। इसके लिये जितना वरपक्ष उत्तरदायी है उतना ही कन्या पक्ष भी।

5. **बालिका भ्रूण हत्या–** आजकल स्त्री संतान को लोग उसकी गर्भ में ही नृशंहत्या करवा देते है स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले लोग अपनी बालिकाओं के डर से नृशंस हत्या कर देते है कारण मुगल शासक घर की बहू बेटियों को अपनी हवस का शिकार बनाते थे।
   अनु.जाति तथा ग्रामीण परिसर में लोग बालिका को नवजात रूप में ही गला दबाकर या अफीम खिलाकर मार डालते है परन्तु सभ्य शिक्षित लोग सोनोग्राफी परीक्षण के उपरांत गर्भपात करवा लेते है। जिससे गर्भ में पल रहे नन्हें शिशु की जघन्य भ्रूण हत्या हो जाती है।
6. **शैक्षणिक स्तर निम्न होना–** भारत में महिला साक्षरता 30-40 प्रतिशत है। तथा विभिन्न वर्गो में भी इनकी स्थिति दयनीय है वह अशिक्षित है सन् 2012 में आंकडो के अनुसार भारत में विभिन्न वर्गो में शिक्षा का प्रतिशत वर्गवार निम्नानुसार है। प्रति 100 महिलाओं पर इसका आंकलन किया जाता है।

सामान्य वर्ग	70 प्रतिशत
पिछड़ा वर्ग	25 प्रतिशत
मुस्लिम	3.4 प्रतिशत
अनु.जनजाति	0.8 प्रतिशत
अनुसूचित जाति	1.8 प्रतिशत

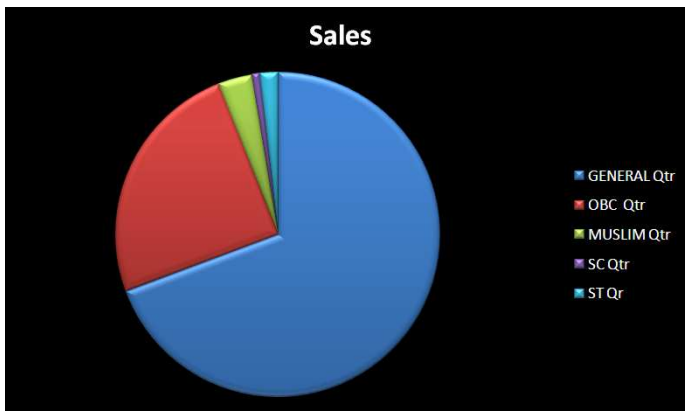

* प्रभारी प्राचार्य,शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र) भारत ** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

7. **आनुपातिक लैगिक असंतुलन –** भारत में विभिन्न तरीकों द्वारा बालिकाओं का शोषण जैसे हीनता की शिकार,दहेज से मृत्यु, बालिका भ्रूण हत्या, कुपोषण,अशिक्षा,स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही आदि कारणों से स्त्री पुरूष असंतुलन हो रहा है। लिंगानुपात बिगड़ने से विभिन्न समस्याएँ हमारे सामने आयी है। भारत में प्रति 1000 पुरूषों 934 स्त्रियां है।
8. **पुरूष प्रधान समाज –** भारत में आज भी पुरूष समाज है, स्त्रियों को बराबर से काम करने पर कम प्रतिफल मिलता है। महिलाओं को संस्कारों में भी यही मिला है। कि पुरूष चाहे कितना ही गिरा हुआ हो लेकिन निष्ठावान पतिव्रता सच्चरित्र वात्सल्य की मूर्ति पत्नि चाहिए जो उसे ईश्वर की तरह पूजे।
9. **परम्पराओं और प्रथाओं का विकृत रूप –** भारत में आज विधवायें है और संस्कारों में यह नहीं लिखा है कि उसका पुनर्विवाह किया जाये। जिससे वह जीवन भर घुटती रहती है तथा उनकी कई तरह से दुर्दशा की जाती है, तरह तरह के ताने दिये जाते है और सामाजिक तथा पारिवारिक अपमान से उन्हें मरने पर मजबूर कर दिया जाता है।
10. **मानसिक दृष्टिकोण का पिछड़ापन** – भारत में आज भी परिवार में लड़की को तहर तरह से रोका टोका जाता है वह चाहते हुये भी कुछ नहीं कर सकती है इसका मुख्य कारण मानसिक पिछड़ापन ही है।

उपसंहार

भारतीय नारी की सामाजिक स्थिति सृदृढ होते हुए भी कमजोर है उसका हम आर्थिक सामाजिक विकास करें तथा नारी की महत्ता को समझें उसे पर्याप्त आदर और सम्मान दें क्योंकि नारी प्रकृति का अद्धितीय सुन्दर पुष्प है वह पुरूष की प्रेरणा है, ऐसी चिरवन्दनीय नारी को आदर सत् सत् नमन।

संदर्भ ग्रंथ

1. शर्मा,रमा(2010),''भारतीय समाज में नारी.पृ सं. 71।
2. पटेल,अनिता (2002),''महिला उत्पीडने का सिलसिला कब तक.पृ सं. 21।
3. आहुजा,राम (1987),''भारतीय सामाजिक समस्याएं,रावत पब्लिकेशन,जवाहर नगर, जयपुर,पृ सं. 238।

****

'कमारी' वैवाहिक संदर्भ में- प्रथम भाग

डॉ. सुशील सोमवंशी *

कमार परिचय शिष्ट - परिचय के संदर्भ में 'कमार' जनजाति अपने आप में एक विशिष्ट जाति है, जिसका अपना विशिष्ट साहित्य है, जो आज के सभ्य साहित्य से मेल नहीं खाता। कमार मनुष्य आज भी अल्प विकसित है। वनों में निवास करता है। वन उत्पाद पर जीवन यापन करते हैं।

साहित्य एवं लोक साहित्य में कहते हैं कि मनुष्य एक अनोखा प्राणी है और वह अनोखा इसीलिए हो पाया है क्योंकि वह साहित्य का निर्माता है। यह साहित्य ही है जो कि मनुष्य को अन्य सभी पशुओं से अलग कर देता है, इसीलिए प्राय: यह कहा जाता है कि साहित्य का उद्‌भव मानव के माध्यम से ही होता है। पशु साहित्य के अधिकारी नहीं होते हैं।

किसी ने सत्य कहा कि 'मनुष्य के पास से उसका साहित्य छीन लीजिये, जो कुछ शेष रहेगा वह निश्चय ही मानव नहीं, बल्कि एक प्रकार का बंदर।'

'कमार' ही कमार लोक साहित्य का निर्माता है और इस लोक साहित्य के निर्माण की क्षमताएं 'कमार' को प्रकृति से ही प्राप्त हुई। 'कमार' प्रकृति से कुछ इस प्रकार की शारीरिक तथा मानसिक विशेषताऐं अर्जित करता है जिनके सम्मिलित उपयोग से लोक साहित्य का निर्माण 'कमार' के लिये संभव हो गया।

लोक साहित्य एवं साहित्य के माध्यम से ही मनुष्य ज्ञान और विज्ञान को प्राप्त करता है। पशु एवं मनुष्य में बहुत बड़ी भिन्नता यह है कि पशु अपने अनुभवों को दूसरों तक नहीं पहुँचा सकते, परन्तु मनुष्य साहित्य के सहारे अपने ज्ञान और अनुभव को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करते हैं। इस साहित्य के सहारे कमार समाज को जन्म से ही अनुभव का पुँज मिलता है।

कमार जनजाति मध्य प्रदेश की अत्यंत पिछड़ी जनजाति में से एक है। आज अदिवासी 'कमार'' का 'अल्प' साहित्य एवं 'अल्प' जीवनशैली की जानकारी प्राप्त हो पाती है। सभ्यता, संस्कृति एवं आधुनिकता से कोसों दूर कमारों को आज भी जंगली माना जाता है, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। आज से हजारों वर्ष पूर्व की सभ्यता, संस्कृति को 'कमारो' ने अपने अंचल में संजोए रखा है। प्रकृति के स्वर्णिम आँचल में 'कमार' लोक साहित्य, लोक सभ्यता, लोक संस्कृति की रखवाली करते हैं।

अद्यावधि कार्य - अनवरत सर्वेक्षण से कहीं न कहीं 'कमार' आदिवासियों के चिन्ह तो प्राप्त होते हैं, सृष्टि के विकास से ही 'कमारों' का सृजन भी प्रारंभ हो जाता है यद्यपि प्रकृति के साथ 'कमार' का सामंजस्य तो दिखाई देता है तथापि विकास नहीं। यही कारण है कि यह मध्यप्रदेश ही नहीं वरन् भारत में भी विशेष पिछड़ी जनजाति के नाम से अपनी पहचान बनाने लगी।

'एक विशेष पिछड़ी जनजाति' होने के कारण ही 'कमार' आदिवासियों पर बहुत कम ही 'कलम' चल पायी है। जिन विशेष लेखकों द्वारा कमारों को लिपिबद्ध किया गया वे समाजशास्त्री या नृशास्त्री ही अधिक रहे, हिन्दी साहित्य जगत् के साहित्यकार नहीं। जबकि किसी भी जाति का विकास, उसकी सभ्यता की प्रगति, उसकी आचार संहिता का दर्शन मात्र साहित्यिक गतिविधियों से ही किया जा सकता है। हिन्दी जगत् के लिए विड़म्बना ही कहे कि जो भी तथ्य 'कमारों के विशेष संदर्भ में प्राप्त होते है सभी राष्ट्रभाषा हिन्दी में न होकर अंग्रेजी में प्राप्त होते हैं, एक वजह यह भी 'कमार' के विकास में अवरोध का कार्य करती है इसी कारण यह नाम होते हुए भी गुमनामी का चोला धुरण किये हुए हैं। हिन्दी साहित्य की दृष्टि से विशेष साहित्यिक लेखन का अभाव तो दिखाई देता है फिर भी 'कमार' आदिवासियों का दर्शन एम.ए.शेरिंग द्वारा किया गया। उन्होंने ही 'कमारों' के विषय में कहा कि - 'कमार' जंगलों में पाये जाते हैं, जहां वे जंगली जीवन व्यतीत करते हैं'।

'कमार' जनजाति के संबंध में डॉ.एस.सी. दुबे द्वारा विस्तृत कार्य किया गया उन्होंने 'कमार' जनजाति को बहुत ही निकट से अंग्रेजी में लिपिबद्ध किया है। कमारों की आजीविका के संबंध में डॉ.दुबे ने कहा -'कमारों को आजीविका के लिये वर्ष भर जी तोड़श्रम करना पड़ता है, 'कमार' प्राय: बेवर या दहिया खेती करते हैं।'

'कमार' जनजाति का उल्लेख समाजशास्त्रियों द्वारा अधिक किया गया है क्योंकि 'कमारो' के रीति रिवाज सभ्यता और संस्कृति के माध्यम से अपनी इच्छा को, बड़ी ही आसानी से पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है यथा डॉ.रामनाथ शर्मा ने गौत्र विषयक कथन को 'कमारों' के माध्यम से प्रस्तुत किया, कमार जाति में निम्न सात गौत्र पाये जाते हैं 1-जगत् 2-नेताम 3-मरकाम 4-सौरी-क-बाघसोरी ख-नागसोरी 5- कुंजम 6-मरै 7-छेदेहा।'

इसी के साथ अन्य समाजशास्त्रियों ने भी 'कमार' पर अपनी लेखनी का प्रयोग किया या उन्हें किसी न किसी प्रकार से अपने ग्रंथ में स्थान अवश्य दिया। ऐसे लेखकों में श्री मजूमदार, श्री मदन, श्री एलवीन, श्री एम.एल.गुप्ता, श्री डी.डी.शर्मा, श्री रवीन्द्रनाथ मुखर्जी, श्री विद्यार्थी, डॉ.दुबे, श्री अमानुल्लाह आदि अपना प्रमुख स्थान रखते हैं।

वर्ष 1878 में 'कमारों' की मुख्य भूमिका के साथ एक पुस्तक प्रकाशित हुई ''जंगल लाइफ इन इण्ड़िया'' जो कि डॉ.बाल का कमार जनजाति पर सफल परीक्षण कहा जा सकता है। डॉ.बाल द्वारा ही सर्वप्रथम कमार जनजाति को 'गुहावासी' कहा।'' यही 19 वीं शताब्दी के आस पास ही ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रकाशन से 'कमार' ज.जा. के सम्पूर्ण नृशास्त्री दर्शन के लिए डॉ. एस.सी.दुबे द्वारा ''द कमार'' प्रकाशित की गई। 'द कमार' पुस्तक को 'कमार जनजाति की वास्तविक स्थिति के दर्शनों के लिये ''नींव का पत्थर'' कहा जा सकता है, यदा-कदा सभी लेखकों द्वारा कमारों के किंचित या विस्तृत वर्णन हेतु 'द कमार' को ही आधार बनाया जाता रहा। इसी श्रेणी की अगली पुस्तक जिसे पुस्तक ही नहीं चित्र स्मारिका कहना अधिक उचित होगा, जिसे एम. अमानुल्लाह ''द कमार-अ वे ऑफ लाइफ'' प्रकाशित की।

''वर्ष 1984 में कमार : शैलग्रयों से खेती तक'' का वर्णन डॉ.शिव कुमार तिवारी ने अत्यधिक रोचक तथ्यों के साथ प्रस्तुत किया। अत: यह तो पूर्व से ही स्पष्ट है कि अभी तक कमार जनजाति का सम्पूर्ण विकास भी नहीं हुआ और 'कमार' जनजाति का बहुमूल्य साहित्य का संग्रह भी अभी शेष हैं सारांशत: अत्यधिक शोधकार्य 'कमार' जाति पर होना अभी शेष है जिससे कि यह अपने पिछडेपन से निकलकर विकासोन्मुखी हो सके। 'कमार' ग्रामीण आदिवासी है, जो प्राय: गाँव और जंगलों के समीप होते हैं। 'कमार' ग्रामीण बस्ती से दूर जंगल में किसी नदी के किनारे बसते हैं।

19वीं शताब्दी के प्रारंभ में कुछ अंग्रेज अध्यनकर्ताओं ने कमारों की सामाजिक अध्ययन की पहल की थी तब उन्होंने 'कमारों' को अत्यधिक

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय नेपानगर (म.प्र.) भारत

पिछड़ा हुआ और गुफाओं में रहने वाला बताया था।

''कमार' जंगलों में पाये जाते हैं, जहां वे जंगली जीवन व्यतीत करते हैं वे वन उत्पाद पर जीवन यापन करते हैं। उन्हें कृषि से सख्त नफरत है।''

'कमार' आदिवासी आज भी वनों में झोपड़ियां बनाकर रहते हैं, गुफावासी या गुहावासी 'कमार' अब दिखाई नहीं देते। तात्पर्य यह है कि 'कमारों' के समूहों ने गुहावास का त्यागकर, वनवासी जीवन स्वीकार कर लिया है। हो सकता है 'कमारों' के साथ यह क्रम उन्नीसवीं शताब्दी तक चला हो। इसी के आधार पर डॉ.बाल ने 1878 में 'जंगल लाइफ इन इण्ड़िया' में 'कमारों' को गुहावासी कहा होगा। ''कमारों के मुख्यत: दो उपभेद होते हैं। 1- बुधरजिया 2- माकड़िया । बुधरजिया उच्च वर्ग के माने जाते हैं, जबकि 'माकड़िया' निम्न वर्ग के। 'माकड़िया कमार' बंदरो का माँस खाते हैं।''

'बुधरजिया' जो उच्च वर्ग के कमार हैं हमेशा मैदानी इलाकों में निवास करते हैं। 'माकड़िया' कमार निम्नवर्ग है जिन्हें 'पहाड़पाटियां' भी कहा जाता है। ये जंगलों में पहाड़ पर निवास करते हैं। ये मैदानी इलाकों में नहीं पाये जाते हैं, जिस कारण इन्हें 'आमा मौरा' कहते हैं जिसका शाब्दिक अर्थ होता है 'मैदान में नहीं।' 'कमार' जनजाति एवं कंवर जनजाति को प्राय: एक ही माना जाता है क्योंकि दोनों ही जनजाति की उपशाखाएँ एक सी है। ''कमार जनजाति की उपशाखाओं में कनकार, तनवार, कमलावंशी, सोमवंशी, दूधकंवर, पैकरा आदि मानी जाती है।''

पौराणिक कथाएं- 'कमार' जनजाति का संबंध मात्र इतिहास से ही है ऐसा कदापि नहीं है 'कमार' लोक साहित्य का संबंध पौराणिक कथाओं में भी पाया जाता है। 'कमार' ईश्वर में अटूट विश्वास रखते हैं इनका ईश्वर प्रेम इतना प्रगाढ़ होता है कि ये वन प्रांतर को, विशेष वृक्षों को, विशेष पशु को ही अपना ईश्वर मान लेते हैं, जीवन पर्यन्त उस वृक्ष, पशु की सेवा करते हैं। 'कमार' आदिवासियों में लोक कथाओं का भंड़ार संचित है। इन लोक कथाओं में 'कमार' नर-नारियों का सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक ज्ञान एकत्रित है।

''बहुत पुरानी बात है कि नारद आकाश में घूम रहे थे। उन्हें आकाश मार्ग से भारत का मध्यभाग निर्जन दिखाई दिया। उन्होंने आराध्य देव से प्रार्थना की, कि वे उसे मनुष्यों से आबाद कर दे। देव ने काले कौए से कुछ मिट्टी बुलवाई और उससे आदमी औरत दो प्रतिमाएं बनाई, लेकिन अन्य भगवानों ने देव का विरोध किया। देव ने प्रकृति की रक्षा के लिए दोनों ही मुर्तियों में जान ड़ाल दी। दोनों को नाम दिया- आदमी को - 'बनेसर' और औरत को 'बनेसरी'। तत्पश्चात् दोनों को नारदजी द्वारा पृथ्वी के मध्यभाग पर लाया गया। नारदजी ने अपने आराध्य देव को याद किया और वनों की रक्षा का आशीर्वाद देकर धरती माता की गोद में छोड़ दिया इसके बाद वे आकाश मार्ग से चले गये, इन्हीं दोनों को कमारों का पूर्वज माना जाता है।

इसी प्रकार की अनेक पौराणिक कथाएँ इन अंचलों में प्रचलित है कहीं एकलव्य को उत्पत्ति का आधार माना है तो कहीं भगवान शंकर को, तो कहीं वृक्षों से ही 'कमार' जाति की उत्पत्ति पर प्रकाश ड़ाला गया है।

कथा साहित्य- भारत के मध्यभाग के जनजातीयों में 'कमार' जाति का अत्यंत पिछड़े पन में, विशिष्ट महत्व है। मध्यप्रांत की जनजातीयों में अल्पविकसित आदिम समाज में सबसे कम संख्या 'कमार' जाति की है। प्राचीन एवं पौराणिक, इतिहास में 'कमारों' की गौरवपूर्ण गाथाएं यत्र-तत्र प्राप्त होती है। 'कमार लोक साहित्य' के समुचित माध्यम से 'कमार' की प्राचीन एवं अर्वाचित स्थिति प्रदर्शित होती है। गौरवपूर्ण गाथाओं में, वे ईश्वर के सहयोगी रह चुके हैं। इस सहयोगी स्थिति का वर्णन 'कमारों' की रोचक पौराणिक कथाओं से स्पष्ट होता है, यह भी स्पष्ट होता है कि उनके मानव समूह का नाम 'कमार' कैसे पड़ा, साथ ही जीविकोपार्जन, विकास, रक्षा का शस्त्र - धनुषबाण, का ज्ञान उन्हें कैसे प्राप्त हुआ। इस धनुषबाण विद्या में निपुर्ण 'कमार' जाति को बड़ी ही रोचकता से पौराणिक कथाओं द्वारा उजागर किया गया है। ''हजारों वर्षो पूर्व कमार मध्यभूमि के मूल निवासी थे और उन्हें तब 'गोटियां' नाम से जाना जाता था। एक दिन कमारों के पूर्वज अर्थात 'गोटियां' कंदमूल की खोज में वन में यहां वहां घूम रहे थे। वहां उन्होंने एक पेड़ के नीचे दो अजनबी लोगों को रोते हुए देखा। तब उनके पास जाकर उनसे पूछा - आप कौन है ? और क्यों रूदन कर रहे हैं ? उन अजनबी युवकों में से एक ने कहा 'हम राम और लक्ष्मण है, संकट में है। 'क्योंकि हमें विगत् कुछ दिनों से खाने को कुछ नहीं मिला। ''तब गोटियां कमार ने उन्हें रोने के लिए मना किया और उनसे कहा - कि यह जंगल कंद-मूल जैसी खाद्य सामग्री से भरा पड़ा है, जो इस वन भूमि में पाये जा सकते हैं। उन्हें खोदकर तुम अपनी भुख बड़ी आसानी से मिटा सकते हो। राम ने कहा- भाई हम कंद मूल को पहचानने में असमर्थ है वे भूमि में किस स्थान पर दबे हैं इसकी जानकारी भी हमें नहीं है। तब 'गोटियां' ने उन्हें कहा- कि वे मधुमक्खी के छत्ते में से शहद निकाल सकते हैं। राम ने जवाब दिया - कि हम मधुमक्खी से ड़रते हैं। इस जवाब से 'गोटियां कमार हँस दिये। उनमें से एक गोटियां वृक्ष पर चढ़ गया। मधुमक्खी के छत्ते को तोड़कर, साल के पत्ते का दोना बनाया ओर उस दोनें में शहद निकालकर राम-लक्ष्मण को शहद पीने के लिए दिया। शहद पीकर राम-लक्ष्मण खुश हो गये। राम-लक्ष्मण ने 'गोटियां' से कहा- वे इसके बदले उन्हें कुछ देना चाहते हैं परन्तु उनके पास दो ''कमान'' और कुछ बाणों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। राम ने उन्हें एक ''कमान'' और कुछ बाण दिये और लक्ष्मण से कहा इन्हें धनुर्विद्या में पारंगत कर दो। लक्ष्मण से धनुर्विद्या अर्जित कर वे जाने लगे, तब राम ने उनसे उनकी जाति का नाम पूछा। तब उन्होंने उत्तर दिया - वे गोटियां हैं और उनकी जाति का कोई नाम नहीं है। तब राम ने कहा-''जब से मैंने तुम्हें 'कमान' दिया तब से तुम 'कमार' के नाम से जाने जाओगे।

कथा- अत्यंत प्राचीन समय की बात है कि संसार में भयंकर प्रलय आया जिसके बाद पृथ्वी का निर्माण हुआ। कुछ समय पश्चात् दूसरा जल विप्लव आया। 'कमार' लोगों के घरों में पानी भरने लगा और वे अपनी जान बचाने के लिए इधर-उधर भागने लगे तैरने के सिवाय उनके पास कोई दूसरा साधन नहीं था किन्तु इतने बड़े समुद्र को 'कमार' कैसे पार कर सकता था ?

कमारों का एक समूह 'कछुए' की पीठ पर बैठकर पानी को पार कर गया, जिसे 'नेताम' कहते हैं। आज वे कछुए को अपना गोत्र चिन्ह मानते हैं तथा उसकी पूजा करते हैं। दूसरा समूह मगरमच्छ की पीठ पर बैठकर पानी को पार कर रहा था किंतु मगरमच्छ बीच में ही बिगड़ गया, उन्हें खाने लगा। उनमें से कुछ तैरकर कछुए की पीठ के निकट पहुँच गये तथा कछुए से उन्होंने अपनी पीठ पर बैठाने की प्रार्थना की। कछुए ने कहा उसकी कमर पर काफी बोझ है और वह अधिक नहीं ले जा सकता। कमारों ने कछुएं से कहा -मामा हमारी जान बचा लो। तब कछुए ने उन्हें अपना भांजा बनाया और उनको अपनी पीठ पर बैठाकर उनकी जान बचाई। इस वर्ग को 'मरकाम' कहा जाता है ये मगरमच्छ को जहाँ भी देखते हैं उसे मार डालते हैं और कछुए की पूजा करते हैं।

एक वृद्ध कमार अपने पुत्र के लिए पुत्र वधु लाया। पुत्र वधु घर में बुहार (झाड़ू) लगा रही थी तभी वहां बुद्धदेव का बकरा आ गया तथा उस पुत्र वधु पर मोहित हो गया साथ ही उसे आलिंगन करना भी चाहा। पुत्र वधु ने कहा - यदि मेरे तुम्हारे प्रेम से संतान उत्पन्न हुई तो क्या होगा ? बुद्धदेव के बकरे ने कहा-कि कुंजम गोत्र कहलायेगी । बकरे ने उस पुत्र वधु को जंगल में तीन दिन अपने पास रखा। चौथे दिन कमार लोगों ने वृद्ध की पुत्र वधु को खोजना

प्रारंभ किया खोजते-खोजते उसे जंगल में पकड़ा परन्तु तब तक वह गर्भवती हो चुकी थी। इस स्त्री से जो संतान हुई वह 'कुँजम' गोत्र की कहलायी तथा उनका गोत्र चिन्ह बकरा हुआ।

आदिवासी कमारों का एक समूह संसार में घूमता फिरता रहा इसे 'जगत' कहते हैं। एक कमार वर्ग भूखा होने के कारण 'मुर्दे' को खा गया इसे ''मरै'' कहते हैं। ये प्राकृतिक मृत्यु से मृत प्राणी नहीं खाते बल्कि स्वयं प्राणी की हत्या कर खाते हैं। जो कमार अपना निर्वाह किसी प्रकार नहीं कर सके उन्हें ''छे दैहा'' कहा जाता है। प्राचीन काल में गोत्र 'कमार' आदिवासीयों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण नहीं थें किंतु अब गोत्रों का विकास हो रहा है। 'कमार' जनजाति में अब गोत्र-संगठन विकसित हो गया है, फिर भी गोंड़ों की तुलना में 'कमारों' में गोत्र का महत्व कम है। गोंड़ की ही शाखा कमार है किन्तु गोंड़ विकसित है और कमार अल्पविकसित। कमार गोत्र पर विशेष ध्यान नहीं देते लेकिन अनेक स्थानों पर अब 'कमार' गोत्र को कुछ हद तक महत्व देने लगे हैं। प्रत्येक गोत्र का 'गोत्र चिन्ह' होता है। गोत्र एवं गोत्र चिन्ह का आपस में घनिष्ट सम्बंध होता है जिसे अंग्रेजी में टोटम कहते हैं।

गोत्र एवं गोत्र चिन्ह का पारस्परिक संबंध बहुत ही घनिष्ट होता है। गोत्र चिन्हों को प्रतीक के रूप में प्रयोग किया जाता है। अपने-अपने गोत्र का संबंध किसी भौतिक वस्तु,पशु, पेड़-पौधे या अन्य किसी प्राकृतिक वस्तु से मान लेते हैं, तब ये प्राकृतिक जीव या वस्तु गोत्र चिन्ह कहलाने लगते हैं। अत: स्पष्ट है कि गोत्र या गोत्र समूह का गोत्र चिन्ह वस्तु के साथ एक गूढ़ या अलौकिक सम्बंध होता है, यह विश्वास या धारणा ही गोत्र चिन्हों का आधार है। यह आवश्यक नहीं है कि गोत्र अथवा गोत्र समूह अपनी उत्पत्ति गोत्र चिन्ह से ही माने, इन दोनों में कुछ विशिष्ट संबंध है यह विश्वास ही पर्याप्त है। यह संबंध कुछ पवित्र व अलौकिक विश्वासों पर आधारित होता है। उनमें सबसे प्रमुख विश्वास तो यही है कि गोत्र चिन्ह गोत्र के सदस्यों की रक्षा करना है, उन्हें आपदाओं के सम्बन्ध में चेतावनी देता है तथा भविष्य के कार्यों के सम्बन्ध में राह सुझाता है, मार्ग दर्शन करता है, इसीलिए गोत्र के प्रति भय, श्रद्धा,भक्ति और आदर की भावना होती है गोत्र चिन्ह को मारना या खाना अथवा उसे किसी प्रकार से चोट पहुँचाना निषिद्ध होता है, उसके मरने पर या मरने का समाचार पाकर उसी प्रकार से शोक मनाया जाता है और उसका मृत्यु संस्कार किया जाता है जैसा कि परिवार के किसी सदस्य के मरने पर किया जाता है, जैसे घर में पानी छिड़कते हैं, लिपते हैं, एक हांड़ी बाहर कर देते हैं, इत्यादी। इस खेती की सुरक्षा के लिए अत्यंत रोचक कथा भी है - जिसमे कमार कृषक का पक्षियों से तालमेल का सुन्दर चित्रण है।

कथा- बहुत समय पूर्व एक कमार किसान ने बहुत मेहनत की, कमार के खेत लहलहाने लगे। जब फसल पकने के करीब हुई तो कमार की चिन्ता बढ़ने लगी। कहीं चोर आकर फसल न ले जाए, खेत की रखवाली मैं अकेला कैसे करूं, बड़े खेत पर एक ही जगह से नजर कैसे रखूं। तब उसने वृक्ष पर रात बिताने की व्यवस्था की, जहां से खेत उसे स्पष्ट दिखाई देता था, फिर भी उसकी चिंता का अंत नहीं था क्योंकि रात्री का जागरण भी संभव नहीं था। इसी रखवाली की चिंता में वह दिन प्रतिदिन कमजोर होता गया। उसका कष्ट पक्षीयों से देखा नहीं गया पक्षियों ने सोचा इस फसल से हमारा भी तो लाभ होता है। पक्षियों ने किसान की सहायता का निर्णय लिया।

नन्हीं चिड़िया ने उड़ान भरी और कमार के कंधे पर बैठ गई और कहा - ''मैं खेत की रखवाली करूंगी।'' कमार ने उसे देखा ओर पूछा - कैसे ? चिड़िया ने कहा -''जब चोर आएंगे तब मैं चीं-चीं करके तुम्हें जगा दूंगी। कमार ने कहा- तुम्हारी चीं चीं में इतना दम कहॉ ?'' चिड़िया निराश होकर चली गई। कौए ने चिड़िया को निराश देखा ओर पूछा, चिड़िया ने कौए को बता दिया। कौए ने चिड़िया से कहा -''कौआ कमार की मुंडेर पर जा बैठा। उसने कमार से कहा - कमार ने उसकी तरफ पुन: प्रश्नवाचक दृष्टि से देखा। कौए से वही प्रश्न किया -''तुम रखवाली कैसे करोगे।'' कौए ने हल प्रस्तुत किया -''मेरी आवाज कठोर है तेज इतनी की दूर-दूर तक सुनाई देती है कमार ने कौए से कहा - ''नहीं भाई-तुम्हारी आवाज कर्कश है मेरे बच्चे, मुर्गियां, इ़र जायेगी। तुम जाओ।'' कौआ भी वापस निराश आ गया। तभी मुर्गा आया, कमार और मुर्गे ने पुन: रखवाली के विषय पर चर्चा हुई। मुर्गे ने कहा- ''कमार भाई, मैं तुम्हारी परेशानी समझता हुँ पर तुम चिंता मत करो, मैं तुम्हारे खेत की रखवाली करूंगा, मेरी आवाज बुलंद है कर्कश भी नहीं है, तुम, तुम्हारे बच्चे, मुर्गियां सभी मुझसे परिचित है, मेरी आवाज से कोई नहीं इ़रेगा, तुम बेफिक्र रहो, मैं तुम्हारे खेंतो की रखवाली करूंगा। चोर आएंगे तो मैं तुम्हें खबर कर दूंगा।'' मुर्गे की बातों से कमार आश्वस्त हो गया।

एक रात चोर आए। मुर्गा दौड़ता हुआ किसान के पास गया। थका मांदा किसान खरटि मार कर सो रहा था। मुर्गा जोर-जोर से चिल्लाकर किसान को उठाता रहा लेकिन खरटि मारता किसान कमार नहीं उठा। मुर्गे की चीख चोरों ने सुनी उन्हें लगा कहीं मुर्गे की चीख से कमार उठ न जाए। चोरों ने निर्णय लिया, मुर्गे की आवाज बंद कर दी जाय। चारों ने मुर्गे को पकड़ा, उसे मारा, वहीं भून कर खा गये। उसके बाद बेफिक्र होकर चोरी की सारे धुन को बोरों में भरा और रात के अंधेरे में भाग गये। कुछ समय बाद सुबह हो गई।

मुर्गे का बांग देने का समय हो गया, चोरों के पेट में उसने जोर से-कुकडूँ-कूँ की बांग दी। चोर इ़र गये। गाँव भी पास ही था, मुर्गे का चिल्लाना बंद हो ही नहीं रहा था। चोरों ने सोचा अब सभी गाँव वालों को पता चल जायेगा, अब चोरो को मुर्गे से मुक्ति पाना जरूरी था। फसल काटने के लिए चोरो के पास जो हॅसियां था उससे उन्होंने अपना पेट चीरा और मुर्गे को निकाल दिया।

पेट काटने पर चोर कैसे जीवित रहते। अंतत: मुर्गा किसान के पास पहुँचा। उसे सारी कथा विस्तार से सुनाई, कमार को अपने साथ ले गया अनाज वापस दिलाया। किसान की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। अनाज समेट कर घर ले आया मुर्गा पुन: रखवाली करने लगा।

वैवाहिक साहित्य- अधिकांश कमार युवा अपने माता-पिता की पसंद से ही विवाह करते हैं विवाह योग्य युवक-युवती के परिवार से बात करना एवं दोनों के मध्य सम्बंध स्थापित करने वाले व्यक्ति को ''महालिया'' कहते हैं। प्राय: ''महालिया'' लड़की का जीजा होता है किंतु यह कोई आवश्यक नहीं है अर्थात कोई भी 'कमार पुरूष' ''महालिया'' बन सकता है विवाह के प्रारंभ से अंत तक के समस्त वैवाहिक रीति रिवाजों में ''महालिया'' की भूमिका अहम् होती है विवाह बिना किसी पण्डित या पुजारी के सम्पन्न होता है। समस्त वैवाहिक कार्य ''महालिया'' ही करता है।

कमारों में जब कोई कन्या पसंद आ जाती है तो फलदान की रस्म होती है जिसमें ''महालिया'' के साथ वर के पिता व अन्य रिश्तेदार वधु के घर 2 बोतल शराब, धुन ;2.3 पैली तम्बाकू बीड़ी बंड़ल ले जाते हैं, इस समय 'धनु-कांड़' का होना जरूरी है सम्पूर्ण सामग्री वधु के पिता को दे दी जाती है, फलदान के दौरान आपसी चर्चा एवं बैगा के द्वारा विवाह की तिथि निश्चित की जाती है। बैगा अपनी ईश्वरीय विद्या से धुन के दानों को हाथ में लेकर, उन्हें विभिन्न संख्याओं में बांटकर विवाह की दिनांक एवं दिन तय करता है। जब जंगल में महुएं के वृक्षों पर फूल खिलते हैं और वे फूल गिरना शुरू हो जाते हैं यही फूलों के गिरने का समय कमारों के लिए शुभ होता है। इसी समय ये विवाह करते हैं यह माह फाल्गुन, चैत्र अर्थात मार्च, अप्रैल, मई के होते

हैं विवाह के मंड़प में महुएं का खंभा गाड़ा जाता है जिसे ''बुआ'' कहा जाता है। इसके ऊपर मिट्टी का लेप कर, उसे चौकार कर देते हैं एवं सुखने पर कुछ कला कृतियां गेरू, छुई मिट्टी नील से बनायी जाती है। मंड़प के ऊपरी भाग पर जामुन के पत्ते ड़ाले जाते हैं। रात भर चलने वाले इस विवाह में मंड़प के चारों ओर बराती और धराती दोनों ही परंपरागत रीति में नाचते हैं और इसी मंड़प में वर-वधु ''बुआ'' के सात फेरे लेते हैं। विवाह के लगभग 4-5 दिन पूर्व से ही कमार वर-वधु का नाम लेना बंद कर दिया जाता है। उन्हें (वर-वधु को) राजा-रानी नाम से सम्बोधित किया जाता है।

कमारों के विवाह कुछ-कुछ मराठी बंगाली विवाह पद्धति से मेल खाते हैं जैसे वर-वधु के सिर पर बंधु ''मौर'' (मुकुट)। रातभर वर-वधु को गोद में उठाकर नृत्य करना। 'तेलचुधी', 'तेलचढी' एवं सम्पूर्ण रात्रि वर-वधु का मात्र श्वेत वस्त्र धारण कर नृत्य इत्यादि। सभी कमार शादी के घर में जाकर जोर शोर से नृत्य करते हैं जिसे ''जालिआना'' कहा जाता है। कमारों में दहेज की कोई विशेष परंपरा नहीं, फिर कमारी रीति रिवाजों के अनुसार वर पक्ष पर आर्थिक दबाव ज्यादा रहता है। वर-पक्ष अधिक सामग्री भेट करता है जबकि जो सामग्री वधु पक्ष वर पक्ष की भेट करता है। वह सम्पूर्ण भेट वही मंड़प में ही, समाज के मध्य वितरित हो समाप्त हो जाती है। विवाह में वर पक्ष द्वारा वधु के पिता को दी जाने वाली सामग्री में सफेद साड़ी, चूड़ियां, कलगी, दर्पण, चावल आधे से अधिक क्विंटल, 5 नारियल, एक पीपा महुएं की शराब, 2 चकी गुड़ एवं इससे अधिक जो भी वर पक्ष वधु के पिता को देना चाहे वधु के पिता द्वारा-कम से कम 6 बॉटल महुए की शराब एवं बारात को भोजन जिससे अनिवार्यत' चावल, कढी, सब्जी होता है।

कमारों के विवाह में परंपरागत गीतों एवं नृत्य के अतिरिक्त पारंपरिक वाद्ययंत्रों को बजाया जाता है जिसे बजाने का कार्य ''गांड़ा जाति'' के लोग करते हैं। विवाह के अंत में विदाई से पूर्व ''टिकावन'' होता है और अंत में विदा। विशेषत: इस सम्पूर्ण विवाह में कही भी पण्ड़ित या बैगा विवाह कार्य सम्पन्न कराते दिखाई नहीं देता, सम्पूर्ण वैवाहिक कार्य ''महालिया'' ही करता है।

अभी विवाह पूर्णत: समाप्त नहीं हुआ इस विवाह की पूर्णता वर पक्ष के निवास पर पहुंचकर, कम से कम दो दिन बाद होगी वहां भी तेल चढ़ेगा, तेल उतरेगा, रातभर पारंपरिक नृत्य होगें। कमार गाँव में जैसे ही बारात वधु को लेकर वर के घर के बाहर तक पहुंचेगी, बाहर ही वर वधु को 1-2 घंटे चबूतरे पर बैठा दिया जाता है जिसे ''बासा'' कहते हैं। ''बासा'' में गीत-नृत्य चलता रहता है तभी जो लोग बारात में नहीं जा सके थे वे वर-वधु (राजा-रानी) को ले जाते हैं पुन: राजा-रानी जब 'बासा' में आते हैं तब वर-वधु को गृह-प्रवेश के लिए द्वार पर खड़ा कर आरती उतारते हैं जिसे 'आरथी' कहा जाता है। शाम होते तक सभी पुन: ''बासा'' में एकत्रित होंगे और रातभर राजा-रानी (वर-वधु) को नचायेंगे जिसे 'नचावा' कहते हैं।

प्रात: होते तक भी 'नचावा' बंद नहीं होता। फिर वर वधु के मध्य नेग की शराब सभी लोग बैठ कर पीते हैं, जिसे ''जमाई बसून'' कहा जाता है इस शराब के सेवन के बाद 'लगीन' होता है जिससे मराठी रीति अनुसार दृश्य दिखते हैं, वर-वधु के मध्य चादर लगा दी जाती और सभी उन्हें चावल मारते हैं वर की धुती से वधु की साड़ी बांध देते हैं बंधने वाली गिठान में 'कच्ची हल्दी' और 'सात चावल' बांध देते हैं, इस 'लगीन गठ' को ''गठभारय'' कहा जाता है कमारों का वरिष्ट व्यक्ति या अन्य अनुभवी कमार वर-वधु के पैरो के अंगुठों को मिलाकर बांधता है जिसे ''लगीन जोड़ना'' कहते हैं। ''धुत पईया'' के तहत् आराध्य देव की अराधना की जाती है बलि दी जाती है। कमारों में 'भांवर'' होगी, वर-वधु को मंड़प में खंभे से बांध दिया जाता है और ऊपर से चादर लपेट दी जाती है हवा कहीं से अंदर प्रवेश नहीं कर पाती, कहीं-कहीं लिपटी चादर के अंदर दीया भी जला दिया जाता है, यह एक कमारी खेल है जिसके निर्णय इस इस तरह होते हैं- काफी समय तक खंभे से बंधे एवं चादर से लिपटे वर-वधु पसीने में तर-बतर हो जाते हैं तब 'महालिया' चादर खोलता है जिसे ज्यादा पसीना आयेगा वह दुसरे पर हावी रहेगा। कुछ समय पश्चात् ''चुकिया दिया'' होता है इसके अंतर्गत हल्दी पानी में घोलते हैं इस पानी को ''धरमपनी'' कहते हैं ''चौथिया'' (वधु के माँ-बाप) को आवाज देते हैं और उनके आने पर 'धरम पानी'' देते हैं इस पानी को बनाने से पहले देवों को एक बोतल शराब और नारियल चढाते हैं, कमारी विवाह का अत्यंत रोचक दृश्य ''चिकलही'' से अंत तक का होता हैं''। चिकलही'' के अंतर्गत वर-वधु मंड़प के मध्य बैठ जाते हैं, वर-वधु को ''पाक नचाना'' होता है अर्थात वर-वधु इस किचड़ में साथ-साथ नाचेंगे, यह नृत्य की पराकाष्ठा ही कहे (यदि शहरी रंगमंच पर इतना लम्बा नृत्य हो तो निश्चित ही रिकाई बने) कि पुन: नृत्य प्रारंभ होता है और तब तक चलता है जब तक सभी उस किचड़ में लथपथ सर से पांव तक नहीं हो जाते, निश्चित ही 'होली-सा' आनंद प्राप्त होता है नृत्य बंद होने पर सभी किचड़ में सने वर-वधु के साथ नाचते गाते स्नान के लिए तालाब पर जाते हैं तालाब पर जाते समय कमारों के पास 'धनु-कांड़', 'चुकि','मटका', मछुए की टहनी' होना अत्यंत आवश्यक हैं।

स्नानादी के पश्चात वर-वधु को नवीन वस्त्र धारण करवाये जायेगे जिसे ''मड़वा-सड़ोना'' कहते हैं, विवाह का अत्यंत रोचक तथ्य '' मिर्गा'' जो कि एक खेल ही हैं जिसे खेलते-खेलते वर-वधु निवास तक आते हैं ''मिर्गा'' में कोई कमार हिरण या अन्य जंगली जानवर का स्वांग रचेगा, वर वधु अपने सिर पर मटका रखेगी, जानवर का स्वांगधारी व्यक्ति नव वधु के आगे-आगे जानवर की भांति चलेगा, वधु के सर पर रखे मटके एवं मटके को पकड़े हाथ के मध्य से अर्थात कान के पास से, वधु के पीछे चल रहा वर, धनु-कांड़ से उस जानवर का निशाना लगाता हैं निशाना चूकना नहीं चाहिये अन्यथा उस वर की 'धनु-कांड़'' में पारंगतता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता हैं महुए की टहनी की आड़ से जानवर को छुपाया जाता है यही क्रिया बार-बार की जाती है । जब निवास बहुत कम दूरी पर होता है तब कमार ''मोरगा'' करते हैं ''साबर'' (खड्डा खोदने का लोहे का औजार) से खड्डा खोदने के बाद उसे टोकनी में रखेंगे इसे ''कांदा खना'' कहते हैं 'कांदा खना' को टोकनी में रखकर आगे बढ़ते हैं, जिसे ''ड़ोड़क'' कहा जाता है पुन: सभी कमार नाचते गाते निवास की ओर चलने लगते हैं तभी अचानक कहीं से वहां फॉरेस्ट गार्ड (जो कि स्वांग रचे कमार होते हैं) आ जाते हैं सभी को घेर लेते हैं। 'कांदा खना' की टोकनी में मृत हिरण होता हैं एवं महुए की टहनी को कटा वृक्ष उसके पैरों पर गिर रहम की भीख मांगती हैं परन्तु कठोर फॉरेस्ट गार्ड नहीं छोड़ता अंत में कुछ रूपये ले-देकर बात बन जाती हैं इस तरह खेलते-कूदते, नाचते-गाते संध्या हो जाती है और निवास भी आ जाता हैं । अब ''मांदी'' का कार्यक्रम होता हैं जिससे सभी कमार खूब शराब पीते हैं एवं दावत का आनंद उठाते हैं

चूड़ी विवाह- इस प्रकार का विवाह कमारों में अधिक प्रचलित हैं जिसके अंतर्गत किसी भी कमार महिला को चूड़ियां पहनाकर उसे अपने घर लाया जा सकता है ऐसे विवाह अधिकांश विधवा अथवा तलाकशुदा महिलाओं से होते हैं ऐसे विवाह में वर चूड़ियाँ पहनाते समय चार बोतल शराब एक बकरा, पाँच काठा धाना, एक काठा दाल, एक साड़ी देता है, यह विवाह पुनर्विवाह के लिए किया जाता हैं। **(क्रमश:)**

यह शोध पत्र शोधार्थी द्वारा 'कमार' समाज के प्रत्येक घर पर स्वयं जाकर प्रश्नों के द्वारा और देखे गये अनुभवों से लिखा गया है।

जैन दर्शन और विश्व शांति

अनिल कुमार सिरौठिया * डॉ. विभा वासुदेव **

आज समस्त विश्व में एक ही चिंता, एक ही चिंतन और एक ही चेतना पर मंथन किया जा रहा है। चिंता का विषय है – ''आतंकवाद, चिंतन का विषय है– आतंकवादी और चेतना का विषय है– विश्व शांति।'' आज सारा विश्व आतंकवाद के साये में जीवन गुजार रहा है जहाँ एक ओर हम विकास की दौड़ में तेज गति से दौड़ने के लिए प्रयासरत हैं वहीं उपभोक्तावादी संस्कृति के तीव्र विकास, बढ़ती हुई आय की असमानता, युवाओं की तीव्र गति से बढ़ती हुई महत्वाकांक्षायें, नैतिक मूल्यों के निरन्तर ह्रास के कारण, दलगत राजनीतिक गतिविधियाँ, नशीले पदार्थों के सेवन का बढ़ता प्रचलन, संचार सुविधाओं व यातायात सुविधाओं का विस्तार, आक्रोश, असंतोष, भ्रष्टाचार के कारण आतंकवाद निरन्तर फल–फूल रहा है और इसकी जड़ें गहरी होती जा रही है जो आज सम्पूर्ण विश्व के लिए गहरी चिन्ता का विषय है।

आधुनिक आतंकवाद की महत्वपूर्ण घटना जुलाई 1968 फिलीस्तीनियों ने जेट–एयर–लाइन का अपहरण किया, फिर दिसम्बर 1970 पी.एफ.एल.पी. (Popular Front For Liberation of Palestine)के आतंकवादियों ने जॉर्डन के डासन हवाई अड्डे पर तीन हवाई जहाजों को उड़ाकर धमाके किये और आज तक अनेकों आतंकवादी गतिविधियाँ विश्व भर में अंजाम दी जा रही है जिसमें 11.09.2001 में अमेरिका जैसे शक्तिशाली देश में आतंकवादी हमला कर आतंकवादियों ने अपने बढ़ते हुए हौसलों का परिचय दिया, वहीं हमारा भारत तो निरन्तर अलग–अलग संगठनों के आतंकवाद से निरन्तर जूझ रहा है जहां एक ओर हम आंतरिक आतंकवाद से त्रस्त हैं तो दूसरी ओर पड़ोसी देशों के द्वारा पल्लवित व पोषित आतंकवाद का खतरा निरंतर मंडराता रहता है जिससे हमारा विकास अवरूद्ध होता है। इन आतंकवादी गतिविधियों के संदर्भ में साहिर लुधियानवीं की पंक्तियां याद आती हैं –

''तारीख में हमने, ऐसे मुकाम देखें हैं।
लम्हों ने खता की है, सदियों ने सजा पाई।।''

अध्ययन के उद्देश्य :–

(1) आतंकवाद का कारण।

(2) जैन दर्शन की मनोवैज्ञानिक रूप में उपयोगिता और व्यावहारिकता।

(3) विश्व शांति हेतु सुझाव।

आतंकवाद के कारण :–

आक्रोश, शोषण और अन्याय की प्रकृति, युवाओं का असंतोष, भ्रष्टाचार, अवैध शस्त्र व्यापार, विदेशी सहायता, दलीय राजनीति, न्याय व्यवस्था में देरी, महाशक्तियों द्वारा उत्पन्न, धार्मिक उन्माद, नैतिक शिक्षा का अभाव, नैतिक मूल्यों में गिरावट, गुप्तचर सेवाओं और प्रशासन की विफलता आतंकवाद उत्पन्न होने के मुख्य कारण हैं जिससे मानव आतंकवादी गतिविधियों को जन्म देता है और मानव से दानव बन जाता है।

संसार में विभिन्न धर्मों के अनुसार मानव जाति की सुख शांति, खुशहाली के लिए विभिन्न विचार दिये गये हैं जैसे – इस्लाम भाईचारे की बात करता है तो ईसाई धर्म प्रेम का रास्ता दिखाता है, बौद्ध धर्म करूणा की बात करता है तो हिन्दू धर्म में गीता कर्म को प्रधानता देती है, इसी प्रकार जैन धर्म 'अहिंसा परमो धर्म:' की बात कर विश्व शांति स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। जैन धर्म में दर्शन जीवन की व्याख्या है और जीवन मनोविज्ञान तत्व का निरूपण। इस दृष्टि से हम तीन विषयों पर मुख्य रूप से मन, लेश्या और कषाय पर विचार विमर्श करेंगे।

मन :–

जैन दर्शन के अनुसार 'मन' आत्मा के अनुभव या संवेदन के लिए साधन स्वरूप है। जीवन के सभी कार्य व्यवहार, चिन्तन, मनन, इच्छा, स्नेह, घृणा, तर्क इत्यादि इसी मन के ऊपर निर्भर हैं। यही नहीं मन आत्मा के विकास और पतन का महान कारण है। मन दुर्जय होने पर भी अजेय नहीं। जैन दर्शन मन को नियंत्रित करने की महान उपयोगी शिक्षाएं देता है।

भगवान महावीर ने इस प्रकार समझाया – ''मन के निग्रह से पाँचों इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं, विषय वासना का नाश होता है तथा चंचलता दूर हो जाती है। इसके मनोविजेता एकाग्रता और शांति का अनुभव करता है। यह है जैन दर्शन का व्यावहारिक मनोविज्ञान जिसे अपना कर हिंसक गतिविधियों के विचारो को समूल नष्ट किया जा सकता है।''

लेश्या :–

लेश्या का साधारण रूप से अर्थ विचार, मनोवृत्ति या तरंग होता है। जैन तत्व चिन्तकों के अनुसार मन के विचारों को कितने रूपों, वर्गों में बाँटा जा सकता है ? मन में उठने वाले विचारों के वर्ण का अर्थ है, शुभाशुभ परिणाम। जिनके अनुसार व्यक्ति कार्य करता है। इन लेश्याओं के अनुसार व्यक्ति में कौन–कौन से गुण पाये जाते है ? इसके संबंध में स्वामी गौतम के प्रश्न के उत्तर में भगवान महावीर बताते हैं :–

(1) कृष्ण लेश्या :–

जिस व्यक्ति के विचार क्षुद्र, कठोर और हिंसक होते हैं। वह पापी होता है, स्वार्थी होता है और अविवेक तथा भोग विलास में लिप्त रहकर परलोक को महत्व नहीं देता, वह कृष्ण लेश्या वाला है। इस प्रकार इस गुण का व्यक्ति तामसी वृत्ति का होता है।

(2) नील लेश्या :–

इस लेश्या वाले व्यक्ति के अन्दर अपने स्वार्थ के अतिरिक्त दूसरों के बचाव का भी विचार रहता है शेष अन्य गुण कृष्ण लेश्या जैसे ही होते हैं। यह भी तामसी प्रधान गुणों से युक्त होता है।

(3) कापोत लेश्या :–

इस लेश्या के व्यक्ति कठोर वाणी बोलते हैं, स्वार्थी होते हैं किन्तु उनमें रक्षा की भावना होती है। इनमें रजस, तमस दोनों वृत्तियों की प्रधानता होती है।

(4) पीत लेश्या :–

इस लेश्या वाला व्यक्ति पवित्र, दयालु, अचंचल और आत्मनिग्रही होता है, परोपकार की भावना होती है। इसमें सतोगुण की प्रधानता पाई जाती है।

(5) पद्म लेश्या :–

इस लेश्या के व्यक्ति जितेन्द्रिय, मिष्टभाषी और कमल के समान

*पुस्तकालयाध्यक्ष ** अर्थशास्त्र विभाग– शासकीय स्वशासी महाराजा महाविद्यालय छतरपुर (म.प्र.) भारत

अपनी सुगन्ध से दूसरों को आनन्दित करते हैं। इनमें भी सतोगुण का प्रवास रहता है।

(6) शुक्ल लेश्या :-

ऐसे व्यक्ति समदर्शी, शान्त अन्त:करण वाला, वीतरागी और प्रेम की मूर्ति होता है। इसमें सतोगुण की पराकाष्ठा होती है।

जैन में इन सभी लेश्याओं के गुण, अवगुण बताकर प्रारम्भ की तीन लेश्याओं अर्थात् कृष्ण, नील व कापोत का त्याग कर अंतिम तीन पीत, पद्म व शुक्ल लेश्याओं को ग्रहण करने का उपदेश दिया गया है। इसके अनुसार यदि हम सभी क्षुद्र विचारों को छोड़कर श्रेष्ठ विचारों को अपनाने की ओर अग्रसर होंगे तो क्या हम विश्व कल्याण और विश्व शांति को प्राप्त कर सकते हैं ? यदि हम कहें हाँ, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि व्यक्ति की मानसिक वृत्तियों को बदलकर ही आतंकवाद जैसी गंभीर समस्या को जड़ से खत्म किया जा सकता है।

कषाय :- इसका अर्थ है - कामों का बंधन व जिन मनोविचारों से आत्मा कलुषित हो जाती है, मन में विकार पैदा हो जाते है, मनोविज्ञान की भाषा में उसे कषाय कहते हैं। भगवान महावीर ने गौतम स्वामी से ऐसे चार कषाय बताए हैं -

(1) क्रोध :-

भगवान महावीर क्रोध की उत्पत्ति का मनोवैज्ञानिक कारण बताते हैं- मोहनीय कर्म के उदय से होने वाला, उचित-अनुचित का विवेक नष्ट कर देने वाला, प्रज्वलन स्वरूप आत्मा का परिणाम क्रोध कहलाता है। जैन दर्शन में क्रोध के सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप इस प्रकार हैं - क्रोध, कोप, रोष, दोष, अक्षमा, संज्वलन, कलह, चाण्डिक्य, भंडन और विवाद।

(2) मान :-

स्वाभिमान की मूल प्रवृत्ति मनुष्य में पायी जाती है। इसी की एक वृत्ति मान है। इसके विभिन्न रूप- मान, मद, दर्प, गर्व, पर-परिवाद, उत्कर्ष और अपकर्ष आदि पाए जाते हैं। व्यक्तित्व विनाश के यही विभिन्न कारण होते हैं जिनके कारण व्यक्ति आसुरी प्रवृत्ति का हो जाता है।

(3) माया :-

कपटपूर्ण व्यवहार ही माया है। ऐसे व्यवहार से व्यक्तित्व का ह्रास होता है व आत्म मलिनता की वृद्धि होती है। जिससे व्यक्ति का व्यवहार कपटपूर्ण, छलयुक्त हो जाता है।

(4) लोभ :-

किसी मोहक कर्म के करने पर जो चित्त में लालसा या तृष्णा पैदा होती है वही लोभ है। जैन दर्शन के अनुसार- संग्रह वृत्ति, कांक्षा, अर्थ की याचना, चाटुकारिता, कामुकता, भोगाशा और गृद्धि अर्थात् वस्तु में आसक्ति होना आदि लोभ की ही अवस्थाएं हैं। जिनके कारण मनुष्य निम्न कोटि व घृणित कार्यों को करने में भी संकोच नहीं करता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :-

सम्पूर्ण विश्व में बढ़ते आतंकवाद को दूर करने में जैन दर्शन न केवल मील का पत्थर साबित हो सकता हे वरन् विश्व शांति स्थापित करने में जैन दर्शन में आशा की किरण दिखायी देती है क्योंकि यदि हम मन को नियंत्रित करने के उपाय जीवन में अपना लें तथा हमारी शिक्षा व्यवस्था में इन शिक्षाओं को बाल्यकाल से ही प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रमों में जोड़ा जाए तो हमारा मानसिक विकास होगा और मन पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

जैन दर्शन में वर्णित कृष्ण, नील और कापोत लेश्याओं का त्याग कर ही व्यक्ति आत्मा का उत्थान कर सकता है और यदि दैनिक जीवन में पीत, पद्म और शुक्ल लेश्याओं को ग्रहण करता है तो विश्व कल्याण और विश्व शांति स्थापित करना, कोई असाधारण बात नहीं होगी अर्थात् व्यक्ति को इस बात का एहसास कराया जाए कि श्रेष्ठ मनोवृत्तियाँ ही विकास का मार्ग है। जैन दर्शन में कषाय का अध्ययन कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि आज विश्व में जो अशांति का वातावरण निर्मित है यह कषाय के ही दुष्परिणाम है कि मनुष्य इन कषायों के चंगुल में फंसकर मानसिक वृत्तियों को विकृत कर लेता है। अत: इनसे बचने के लिए इन कषायों पर विजय प्राप्त करनी होगी। काम, क्रोध तथा लोभ तीनों नरक के द्वार हैं - ''त्रिविध नरकस्येद द्वारं'' भगवान महावीर कहते हैं ''क्रोध प्रीति का नाश करता है, मान विजय का, माया मित्रता का और लोभ सभी सद्गुणों का नाश करता है।'' इन मनोविकृतियों से बचने व इन्हें दूर करने का वे उपाय भी बतलाते हैं- शांति से क्रोध को, मृदुता से मान को, सरलता से माया को और सन्तोष से लोभ को जीता जा सकता है।

सम्पूर्ण जैन मनोविज्ञान की व्यावहारिकता का अध्ययन यहीं समाप्त नहीं होता बल्कि जीवन की सम्पूर्ण शांति ही इसका लक्ष्य है। मन, लेश्या और कषायों की अतिशयता ही मनोविकृति या असामान्यता का मूल कारण है। अत: इनका विनाश करना, इन पर विजय प्राप्त कर ही भव-भ्रमण का अन्त होगा।

''कषाय मुक्ति किल मुक्तिरेव।''

जीवन की परम शांति ही जैन दर्शन का व्यावहारिक और नैतिक दर्शन है। अत: वैचारिक प्रदूषण से बचने के लिए मन को निर्मल स्वच्छ बनाने के लिए आदि पुराण में मैत्री, प्रमोद कारूण्य और उपेक्षा (माध्यस्थ) वृत्तियों को अपनाने के निर्देश दिये गये हैं। समता, अहिंसा, संतोष, अपरिग्रह वृत्ति, शाकाहार को अपनाकर ही व्यक्ति आचार, विचार और व्यवहार से अपने आचरण में भी मानवीय मूल्यों का विकास कर सकता है। विश्व बंधुत्व और विश्व शांति को स्थापित करने में जैन धर्म का नैतिक दर्शन व्यावहारिक रूप में अपनाकर मानव जीवन को सुखमय, आनंदमय, हर्षमय, प्रेममय, उल्लासमय, शांतिमय बनाकर भयमुक्त, शोकमुक्त, दु:खमुक्त, आतंकमुक्त विश्व की कल्पना को साकार कर अपना अमूल्य योगदान देकर अपना जीवन के मूल उद्देश्य परम शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

(1) डॉ. एस.सी. सिंहल - अन्तर्राष्ट्रीय कानून
(2) श्याम सुन्दरम, तनवीर अली - राजनीति विज्ञान
(3) डॉ. हृदय नारायण मिश्र - भारतीय दर्शन
(4) डॉ. राधाकृष्णन - भारतीय दर्शन
(5) दत्ता तथा चटर्जी - भारतीय दर्शन
(6) डॉ. संगम लाल पाण्डेय - भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण
(7) प्रो. एम. हिरियन्ना -भारतीय दर्शन के मूल तत्व
(8) जे.एन. सिन्हा -भारतीय दर्शन
(9)डॉ. हृदय नारायण मिश्र -नीतिशास्त्र के प्रमुख सिद्धान्त

****

आध्यात्मिक उपलब्धि का सम्प्रत्यय

दिनेश तिवारी *प्रो.प्रवीण दोसी **

बिने और साइमन (1905), टरमेन (1916), मैरिल (1937), तथा जे.मोरे (1972) आदि ने बीसवीं शताब्दि में बुद्धि मापन हेतु परीक्षणों का निर्णय किया।

बुद्धिलब्धि (IQ) के बाद सांवेगिक बुद्धि के बारे में सर्वप्रथम डेनियल गोलमेन (1990) ने अपनी पुस्तक 'सांवेगिक बुद्धि' में बताया। गोलमेन के पश्चात पीटर सेलोवी (1997), बेरोन (1997) आदि ने सांवेगिक बुद्धि को परिभाषित किया।

उन्होंने सांवेगिक बुद्धि को इस प्रकार की योग्यता बताया है कि जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं अपने तथा दूसरों के संवेगों व भावनाओं को समझकर उन्हें सही दिशा प्रदान करता है। गोलमेन (1995), के अनुसार बुद्धि लब्धि (IQ) के उपयोग हेतु भी सांवेगिक बुद्धि लब्धि (EQ) के मूलभूत आवश्यकता है। तथा गीतु भाखेनी (2000) के अनुसार बुद्धि लब्धि (IQ) के साथ सांवेगिक बुद्धि लब्धि (EQ) का उपयोग करने पर व्यक्ति के कार्य निष्पादन मे गुणात्मकता आती है। इस योग्यता के द्वारा व्यक्ति प्रसन्नता व दु:ख के क्षण में कुशलतापूर्वक सही प्रतिक्रिया करता है। तथा इसके द्वारा व्यक्ति अविश्वसनिय से विश्वसनिय स्व-दुर्बलता से सशक्त अनुसरण की अपेक्षा नेतृत्व करने वाला, अप्रभावी से प्रभावी तथा निराशावादी से आशावादी बन जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति की सफलता के लिए बुद्धि लब्धि (IQ) के साथ सांवेगिक बुद्धि लब्धि (EQ) बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

उपरोक्त दोनों Q's के अतिरिक्त वर्तमान समय में एक और Q का प्रचलन बहुत अधिक है। वो है SQ या आध्यात्मिक बुद्धि। आध्यात्मिकता का सम्प्रत्यय भारत के लिए नवीन नहीं है। भारतवर्ष तो प्राचीनकाल में आध्यात्मिक गुरू के नाम से प्रसिद्ध था लेकिन पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण हमारे आध्यात्मिक मूल्यों में कुछ ह्रास हुआ। अत: वर्तमान समय में अन्य देशों के साथ साथ भारत में भी इसकी आवश्यकता महसूस की जा रही है तथा आध्यात्मिक बुद्धि की चर्चा IQ & EQ की उपेक्षा अधिक हो रही है।

विद्या वही है जो व्यक्ति को सांसारिक बन्धनों से मुक्त कराकर आत्मज्ञान प्रदान करती है अत: प्रज्ञावान एवं बुद्धिमान व्यक्ति वही है जो अपने शरीर का उद्धार करता है - यही जीवनसार है, यही बुद्धि की परिणति है और यही आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा है। पुन: बुद्धिमान व्यक्ति वही है जो यह दो बातें गांठ बांध लेता है :-

1. अवश्यमेव भोक्त्वयं कृतं कर्य शुभाशुभम्
   अर्थात अपने कृतकर्मो का फल भोगना पड़ता है।
2. सत्यम् परहित प्रोक्तम अर्थात जो व्यक्ति सभी प्राणियों की हित साधना में संलग्न रहता है तो यह सत्य है, उसकी सारी साधनाएँ स्वत: सफल हो जाती है। ये दो बाते वही क्रियान्वित करता है जिसमें आध्यात्मिकता का पर्याप्तपुट हो। साथ ही वह आचारवान हो-
   आचार: परमोधर्म:।। हमारा आचरण पूर्णत: वैदविदित कर्मो एवं कर्तव्यों के अनुरूप होना चाहिये। हीनाचारी न तो पवित्रात्मा हो सकता है और न बुद्धिमान। उसे वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। स्पष्ट है कि आध्यात्मिक बुद्धि वाले व्यक्ति निश्चयत: सदाचार पर ध्यान देते है। महाभारत तथा विष्णुपुराण (3,12,41,) में लिखा है:-

''बुद्धिमान सदाचारी शिक्षा एवं विनय से युक्त होता है, मैत्रीपूर्ण व्यवहार करता है, तथा दूसरों के साथ कभी भी कष्टप्रद व्यवहार नहीं करता है।'' आध्यात्मिक प्रिय व्यक्ति स्वाध्याय प्रेमी होती हैं स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करते है। तथा दीर्घसूत्रता का त्याग करते है। वे कभी भी पढ़ने में प्रयत्नहींनता नहीं रखते है। भगवान वशिष्ठ कहते है क्रोधशून्यता, पवित्रता, अतिशीघ्रता न करना, भावशुद्धी लोभ-मोह का अभाव, कर्तव्य परायणता आदि गुणों से मन, चित्त, तथा बुद्धि पवित्र होती है। इन गुणों से युक्त व्यक्ति आगे चलकर प्रज्ञावान होता है।

भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन को सम्बोधित करते हुए कहा है-

1. निश्चयात्मक बुद्धि एक ही होती हैं (2.40)
2. अस्थिर विचार वाले विवेकहीन होते हैं (2.51)
3. समबुद्धियुक्त ज्ञानीजन फल को त्यागते हैं (2.51)
4. विचलित बुद्धि वाला व्यक्ति आत्म सन्तुष्ट नहीं हो सकता हैं (2.56)
5. अपने अन्त:करण में प्रसन्नता रखे, राग-द्वेष नहीं (2.65)
6. तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिए, नमन, सेवा, प्रश्न तथा जिज्ञासा होनी चाहिए और यह ज्ञान ज्ञानियों से प्राप्त करें। (4.33)
7. संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाली कोई भी वस्तु नहीं है। (4.35)
8. ज्ञान मिलता है जितेन्द्रिय, साधना परायण तथा श्रद्धावान मनुष्यों को (4,39)
9. संशय नहीं करना चाहिये - इससे विनाश होता है। (4.40)
10. अज्ञानजनित संशय का विनाश विवक ज्ञान से होता है (4.42)
11. जिसका मन अपने वश में है, विशुद्ध अन्त:करण वाला है, सभी प्राणियों का हितेषी है - वह पाप में लिप्त नहीं होता। (5,10)
12. परमात्मा के तत्व ज्ञान द्वारा मोह जनित अज्ञान को नष्ट कर देना चाहिए। (5,15)
13. ज्ञानी व्यक्ति मान- अपमान, सुख दु,ख अनकूलता, लाभ हानि में समदृष्टि रखते है (6,7)
14. भगवद् प्राप्ति के लिये कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता हैं।
15. बुद्धिमानों की बुद्धि तथा तेजस्वियो का तेज यही हैं। (7,14)
16. निषिद्ध कार्य का त्याग करें, नियत कर्म करें। (18,6)

उपर्युक्त बिन्दुओं को अपने आचरण में उतारने वाला व्यक्ति निश्चय ही आध्यात्मिक बुद्धि युक्त होता हैं। प्रसिद्ध आत्मविद पेट्रिक ब्रेनन (2002) ने अपने संदेश में बताया कि व्यक्ति की सम्पूर्णता, प्रसन्नता, सुखद अनुभूति, एवं सुखद जीवन हेतु आध्यात्मिक बुद्धि बहुत आवश्यक हैं।

1. मानववादी नीति दर्शन एवं अध्यात्म :-

काव्य मानववादी नीति दर्शन में भी शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक सभी मूल्यों को उचित स्थान दिया गया हैं। यदि मनुष्य

* व्याख्याता एवं शोधकर्त्ता, पेसीफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** सेवानिवृत्त प्राचार्य एवं अधिष्ठाता, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय डबोक उदयपुर (राज.) भारत

शारीरिक नियमों का पालन नहीं करेगा तो बौद्धिक और आध्यात्मिक मूल्यों को प्राप्त करने में शरीर उसका साथ नहीं देगा। इसी प्रकार यदि बुद्धि और मस्तिष्क का विकास और संतोष प्राप्त नहीं किया गया तो बहुधा व्यक्ति आध्यात्मिक स्थितियों ओर प्रक्रियाओं को समझने में गलती करेगा। यदि मानव आध्यात्मिक स्थितियों ओर प्रक्रियाओं को समझने में गलती करेगा तो वह शारीरिक, पाश्विक स्तर पर रह जाएगा या शुष्क बौद्धिक स्तर के उहापोह में उलझा रहेगा तथा जीवन के आनन्द एवं संतोष से सदैव दूर रहेगा। (रामनाथ शर्मा, 1987 पृ. 43)

2. उपनिषद् और अध्यात्म :-

उपनिषदों में आध्यात्म के बहुत पक्षों पर चर्चा की गयी हैं। मुण्डोकोपनिषद् में परा एवं अपराविद्या पर चर्चा की गयी है। जिस विद्या के द्वारा लौकिक ज्ञान होता हैं अथवा वेदों का ज्ञान होता वह अपरा विद्या तथा परा विद्या का अर्थ हैं, ''यया तदक्षरमधिगम्यते'' अर्थात् जिसके द्वारा ''अक्षर'' का ज्ञान होता है वह परा विद्या हैं।

हमारे सामने दो शब्द है क्षर ओर अक्षर। सारा संसार इन दो शब्दों में समा जाता हैं। जितने भी दृश्मान पदार्थ हैं वे सब क्षर है तथा हमारी सारी अपराविद्या क्षर स जुड़ी हुई। जिस विद्या से अतिन्द्रिय चेतना का ज्ञान हो वह परा विद्या है, अक्षर का ज्ञान है। अक्षर का ज्ञान ही अध्यात्म विद्या हैं।

3. प्रजापिता ब्रह्मकुमार एवं अध्यात्म :-

ब्रह्मकुमार जगदीश चंद्र (1996 पृ. 287) के अनुसार आज हमारे सामने प्राय: जितनी भी समस्याएं है वे मनुष्यों के पारस्परिक संबंधों के अनबन से पैदा हुई है। देश की सुरक्षा व विश्व शान्ति के लिए सुसंवादिता और पारस्परिक तालमेल बहुत आवश्यक हैं। सुसंवादिता अथवा तालमेल बनाए रखने हेतु उन्होंने छह सूत्र प्रतिपादित किए।

1. प्रेम तथा शुभ भावना
2. न्याय और औचित्य
3. मनुष्य के प्रति तथा मानवीय अधिकारों के प्रति सम्मान
4. सहनशीलता
5. अंहिसा में दृढ़ आस्था और उसके प्रति प्रतिबद्धता
6. दूसरों की भलाई के प्रति ध्यान

ये नियम हमारे दैनिक जीवन में हमारी कार्यविधि के नियामक एवं संचालक हो इसके लिए आवश्यक हैं कि हम अपने जीवन में आध्यात्मिकता का समावेश करें।

आध्यात्मिकता के समावेश मे व्यक्ति के सामने कई प्रकार के विघ्न जैसे संशय, व्यर्थ संकल्प, बुरे संस्कार, विकट परिस्थितियां, उत्साह की कमी, पूर्व कर्मो का हिसाब किताब तथा दूसरों के स्वभाव से टकराव आदि आते है। लेकिन हमें दृढ़ निश्चय कर इन विघ्नों को दूर कर स्वभाव को आध्यात्मिक बनाने की ओर प्रयासरत रहना चाहिए।

4. आचार्य महाप्रज्ञ एवं अध्यात्म :-

आचार्य महाप्रज्ञ (2005 पृ. 45) के अनुसार हमारी चेतना के तीन स्तर हैं - नैतिक चेतना, धर्म चेतना, और अध्यात्म चेतना। नैतिक चेतना का संदर्भ है -समाज, धर्म चेतना का संदर्भ हैं - व्यक्ति और आध्यात्मिक चेतना में न समाज हैं और न व्यक्ति। जहॉ अध्यात्म चेतना हैं वहॉ कोई उपाधिकृत भेद शेष नहीं बचता, सारे भेद विलीन हो जाते हैं और इन बाह्य आवरणों केा चीरकर केवल व्यक्ति की आत्मा ही दिखाई देती हैं। आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार अध्यात्म की निम्न पगडंडियों पर चल आध्यात्मिक चेतना को जागृत किया जा सकता हैं :-

1. जागरूकता
2. मानसिक सन्तुलन
3. आत्म - निरीक्षण
4. संकल्प शक्ति का विकास
5. प्रमाणिकता
6. करूणा
7. अनुशासन और सहिष्णुता
8. सह- अस्तित्व और समन्वय
9. व्यसन मुक्ति
10. रचनात्मक दृष्टिकोण

उपर्युक्त गुणों को धारण कर व्यक्ति आध्यात्मिक उन्नयन की यात्रा प्रारम्भ कर सकता हैं। आध्यात्मिक उन्नयन के संबंध में आचार्य तुलसी ने कहा हैं :-

आध्यात्मिक उन्नयन ही, 'तुलसी' है आदेय।
हो लक्ष्योंन्मुख चेतना, सधे सहज ही श्रेय

अर्थात आध्यात्मिक विकास हमारे लिए उपादेय हैं। अन्य विकासों को गौण नहीं किया जा सकता पर वे सब परिधि में रहें। हमारा केन्द्रीय लक्ष्य अध्यात्मिक विकास हैं। यह लक्ष्य निरन्तर सामने रहे तो सहज ही श्रेयस की सिद्धी हो सकती हैं।

5. योग वशिष्ट और अध्यात्म :-

योग वशिष्ट के अनुसार -

मन: प्रमादाद वर्धन्ते, दु:खानि गिरिकूटवत्
तद् वशादेव नश्यन्ति, सूर्यस्याग्रे हिमं यथा।

अर्थात् अगर व्यक्ति का मन ठीक नहीं हैं, मन अस्वस्थ हैं तो छोटा सा दु:ख भी महान् दु:ख बन जाएगा और मन खुश हैं तो पहाड़ जितना दुख भी राई जितना बन जाएगा। इसलिए व्यक्ति को मन स्वस्थ रखना चाहिए। मन को अपने अधीन बनाने हेतु अध्यात्म का ज्ञान बहुत आवश्यक हैं, क्योंकि सुख दुख सब मन के अधीन हैं। योग वशिष्ट ने अध्यात्म हेतु कुछ महत्वपूर्ण सूत्रों का प्रतिपादन किया -

1. मन स्वस्थ एवं अच्छा रहे।
2. मन को एकाग्र करना सीख ले।
3. तुरन्त प्रतिक्रिया न करें।
4. दु:ख को बड़ा, छोटा न माने वरन् समभाव से देखे।
5. व्यक्तित्व का रूपान्तरण करें।
6. दूसरों की भावनाओं को समझने का प्रयास करें।
7. संकल्प शक्ति को दृढ़ बनाऍ।

अध्यात्म के इन महत्वपूर्ण सूत्रों पर विचार विमर्श कर जीवन में उतारने पर अच्छे जीवन के निर्माण का पथ प्रशस्त हो सकता हैं। आध्यात्मिकता से संबंधित उपर्युक्त बिन्दुओं को अपने आचरण में उतारने वाला व्यक्ति आध्यात्मिक बुद्धियुक्त होता हैं।

6. अखण्ड ज्योति (मई 2006 पृ. 24) -

अखण्ड ज्योति में प्रकाशित लेख के अनुसार विचार एवं भावना से परे व्यक्तित्व की असीम ऊंचाई को स्पर्श करने के लिए आध्यात्मिक बुद्धि की जरूरत पड़ती है।

आध्यात्मिक बुद्धि पूर्ण परिष्कृत प्रज्ञा हैं। सामान्य बुद्धि विश्लेषण करती हैं, तर्क करती हैं। जब बुद्धि उचित अनुचित में भेद कर केवल उचित को ही अपनाती हैं तो उसे प्रज्ञा कहते है यही नीर क्षीर विवेक हैं,

परन्तु जब यह चेतना के उच्च स्तरीय आयामों को छूती हैं तो कोई भेद या संदेह शेष नहीं रहता हैं। यह अंधेरे में लक्ष्य की तलाश नहीं करती वरन् चैतन्य ज्योति में चीजों को देखती हैं। यह बिना भेद किए जो जैसा है वैसा ही देखती हैं।

आध्यात्मिक बुद्धि का मुख्य आयाम हैं रूपान्तरण। रूपान्तरण अर्थात जीवन के सभी तत्वों का पूर्ण परिवर्तन एवं बदलाव। मन बुद्धि विचार एवं भावों में पूर्ण एवं समग्र परिवर्तन ही रूपान्तरण हैं।

रूपान्तरण से शरीर, प्राण, मन, बुद्ध एवं हृदय की मलीनता धूल जाती हैं और इनके तल बदल जाते हैं। यह अनुभव से जाना जा सकता है। रूपान्तरण से व्यक्तित्व निखर उठता है और चेतना उर्जान्वित हो जाती है तथा यह व्यक्तित्व की सभी क्षुद्रताओं को तोड़कर अपने अन्दर से भागवत् सौन्दर्य को अभिव्यक्त करती है। यह सौन्दर्य ही आध्यत्मिक बुद्धि है। यह दिव्य क्षमता सभी में विद्यमान है, परन्तु इसे विषय वासनाओं की क्षुद्रता को रूपान्तरित करके ही पाया जा सकता है। अत: इसके लिए हमें अपने मन बुद्धि एवं भावना को पवित्र एवं निर्मल करना होगा।

7. सफलता के साथ आध्यात्मिक नियम –

''सफलता के साथ आध्यात्मिक नियम'' में दीपक चौपड़ा (2003 पृ. 17) ने व्यक्ति की सफलता हेतु सात आध्यात्मिक नियमों के बारे में बताया। उनके अनुसार नियम वह पद्धति हैं जिसके माध्यम से अप्रकट, प्रकट हो जाता है, दर्शक द्दष्टा हो जाता है। पर्यवेक्षक, परिदृश्य बन जाता है। यह वह पद्धति है जिसके द्वारा स्वप्नद्दष्टा अपने सपनों को साकार करता है।

ब्रह्माण्ड में जो हम जो कुछ भी देखते है जिनका सृजन होता है उनका मूल स्त्रोत ईश्वरत्व है, सृजन प्रक्रिया उस ईश्वरत्व की कृति है और रचना वस्तु ब्रह्माण्ड है। हमारी उपस्थिति में चेतना यानी ईश्वरत्व की यह पूरी प्रक्रिया ही वास्तव में ब्रह्माण्ड के भौतिक नियम है। यदि हम इन नियमों को अच्छी तरह समझकर इन्हें अपने जीवन में अपनायेंगे तभी सफलता मिलेगी। दीपक चौपड़ा ने सफलता के निम्नलिखित स्त्रोत ये आध्यात्मिक नियम बताए है।

1. विशुद्र सामर्थ्य का नियम
2. देने का नियम
3. 'कर्म' अथवा कारण प्रभाव नियम
4. अल्प प्रयास का नियम
5. उद्देश्य और इच्छा का नियम
6. अनाशक्ति का नियम
7. धर्म अथवा जीवन उद्देश्य का नियम

इन नियमों को अपने आचरण में उतारने वाला व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षैत्र में सफलता के शिखर छूता है।

8. आध्यात्मिक प्रबंधन –

पद्मचंद गांधी (2006 पृ. 15) के अनुसार आस्थाओं, मान्यताओं एवं मूल्यों के मापदण्डों में विकृतियां आने के कारण प्रत्येक व्यक्ति अपना शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक शान्ति गँवा चुका है। इस स्थिति को सुधारने के लिए आवश्यक है 'आध्यात्मिक प्रबंधन' जो जीवन की नींव सुदृढ़ करने जीवन जीने की कला को शाश्वत सिद्ध करने के लिए जरूरी है। यह आत्मा की सुख शान्ती एवं जीवन की कुशलता, खुशहाली एवं श्रेष्ठता को उजागर करता है। आध्यात्मिक प्रबंधन के अर्न्तगत जीवन जीने के लिए निर्धारित मापदण्डों का होना आवश्यक है। बौद्धिक क्षमता या अधिक धन अर्जन करना ही श्रेष्ठता का आंकलन नहीं है। देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने श्रैष्ठता का आंकलन के लिए 4 मानक स्थापित किए –

1. **व्यवहारिक सामंजस्य की कुशलता** : इसके अर्न्तगत व्यवहारिक लचीलापन, पारम्परिक सौहाद्र, सुख–दुख में भागीदारी आदि आते है।
2. **बौद्धिक श्रेष्ठता :** बौद्धिक विकास के साथ आध्यात्मिक विकास हेतु भी प्रयासरत रहना।
3. **सामाजिक प्रतिबद्धता :** सामाजिक उत्थान के लिए प्रयास करना।
4. **आध्यात्मिक जीवन दृष्टि की परिपक्वता –** इसके अर्न्तगत जीवन की सम्पूर्णता का अध्ययन कराया जाता है जिससे व्यक्ति जान सके कि जीवन उतना ही नहीं जितना नजर आता है बल्कि इसके और भी गहरे आयाम है।

इस प्रकार आध्यात्मिक प्रबंधन द्वारा व्यक्ति अपने जीवन को सही दिशा प्रदान कर सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उजागर कर खुशहाली प्राप्त कर सकते है।

****

घरेलू हिंसा अधिनियम तिल्लौरखुर्द की महिलाओं में जागरूकता का अध्ययन

ब्रह्मदीप अलूने * डॉ. सोनाली नरगुन्दे **

प्रस्तावना – नारी शोषण का प्रथम चरण प्रारंभ होता है घरेलू हिंसा के माध्यम से। अधिकतर महिलाएं घर, परिवार में ही शोषित होती हैं। वह हिंसक व्यवहार या क्रिया जो कि घर–परिवार से किसी सदस्य द्वारा घर के किसी सदस्य के साथ की जाती है। वह घरेलू हिंसा है या इस प्रकार भी कह सकते हैं कि जब परिवार का कोई सदस्य परिवार के किसी दूसरे सदस्य को मानसिक या शारीरिक अथवा दोनों तरह से किसी प्रकार से दुख पहुंचाता है उसकी अवांछित या नकारात्मक भर्त्सना करता है, प्रताड़ित करता है, जिसका प्रभाव प्रताड़ित सदस्य के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य, आचार – विचार, व्यवहार को किसी भी प्रकार नकारात्मकता के साथ प्रभावित करता है तो यह घरेलू हिंसा होगी। जिन समाजों में लड़कों को अधिक महत्व दिया जाता है वहां तो महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा का प्रभाव व्यापक होता है। भारत में लड़कों का जन्म प्रत्येक परिवार में धार्मिक कर्मकांड के लिए आवश्यक समझा जाता है ऐसे में महिलाओं के प्रति हिंसा की शुरूआत मां के गर्भ से ही हो जाती है। यूनीसेफ की रिपोर्ट के अनुसार भारत में भ्रूण हत्या के द्वारा अथवा जन्म के बाद जिंदा गाड़ देना जैसे अपराध शामिल हैं। इसके साथ ही दहेज प्रताड़ना और दहेज हत्या के आंकड़े भी भयावह हैं। घरेलू झगड़ों में महिलाओं को प्रताड़ित करना आम समस्या है।

यूनीसेफ इन्नोसेंट रिसर्च सेंटर, फ्लोरेंस, इटली द्वारा 'डोमेस्टिक वायलेंस अगेंस्ट वीमेन एंड गर्ल्स' विषय पर प्रकाशित डाइजेस्ट पत्रिका की संख्या 6, सन् 2000, में प्रकाशित लेख में घरेलू हिंसा को परिभाषित करते हुए कहा गया है – ''घरेलू हिंसा' में वह हिंसा भी सम्मिलित है जिसका अपराध जीवनसाथी या परिवार के दूसरे सदस्यों द्वारा किया जाता है, और उन्हीं के द्वारा उसे अंजाम दिया जाता है। सामान्यत: घरेलू हिंसा की श्रेणी में ससुराल पक्ष की ओर से अथवा पति द्वारा प्रताड़ना दी जाती है। घरेलू हिंसा का यह प्रतिरूप हमें प्रत्येक गली मोहल्ले में दिखाई दे सकता है। पति का किसी भी समय शराब पी कर घर आना, गाली गलौज करना फिर पत्नी पर हाथ उठाना आदि कोई नई बात नहीं है। हर दूसरे घर में महिलाएँ सामान्यत: अपने पतियों द्वारा उत्पीडन की शिकार पाई जाती हैं। यहाँ घरेलू से अभिप्राय है – वे क्रियाएं अथवा में बातें, वे वस्तएं वह व्यवहार जो घर में, परिवार में रहने वाले लोगों से या कार्यों से सम्बन्धित होती है, जिसका प्रभाव घर के लोगों व वातावरण पर होता है। घरेलू व्यवहार परिवार के लोगों द्वारा, परिवार के लोगों के साथ किया जाता है।

सन् 1960 के अंत तक यह एक निजी विषय था और 1970 की शुरूआत में ''महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा'' एक सार्वजनिक विषय के रूप में सामने आया। महिलाओं के प्रति उसका सबसे दुखद पहलू यह है कि उन्हें अपने घरों में और अपने नजदीकी रिश्तेदारों के ही अत्याचारों व हिंसा का शिकार होना पड़ता है, बलात्कार के अधिकतम मामलों में किसी रिश्तेदार या परिचित का हाथ होता है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार भारत में 56 प्रतिशत विवाहित महिलाएं घरेलू हिंसा झेलने को विवश है। स्त्रियों को दबाये रखने के लिये उनकी स्थिति बद से बदतर करने के लिये वर्षो से कारगार प्रयास किये जा रहे हैं। इसके बावजूद आज तक महिलाओं की स्थिति सुधार ने के लिये कोई बड़ा व कारगर कदम नहीं उठाया गया। छोटे–छोटे प्रयासों से यह समस्या हल नहीं हो सकती। अत: इस क्षेत्र में प्रभावी कार्यो की आवश्यकता है, जो महिलाओं की स्थिति में सुधार की दिशा में कारगर कदम साबित हो सके।

यहां तक कि घरेलू हिंसा अधिनियम के बारे में भी महिलाएं अनभिज्ञ हैं। घरेलू हिंसा अधिनियम का निर्माण 2005 में किया गया और 26 अक्टूबर, 2006 में इसे लागू किया गया। यह अधिनियम महिला बाल विकास द्वारा ही संचालित किया जाता है। यह कानून ऐसी महिलाओं के लिए है, जो कुटुंब के भीतर होने वाली किसी किस्म की हिंसा से पीड़ित है। इसमें अपशब्द कहने, किसी प्रकार की रोक–टोक करने और मारपीट करना आदि शामिल हैं। इस अधिनियम के अंतर्गत महिलाओं के हर रूप मां, भाभी, बहन, पत्नी एवं किशोरियों से संबंधित प्रकरणों को शामिल किया जाता है। घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत प्रताड़ित महिला किसी भी व्यस्क पुरूष को अभियोजित कर सकती है अर्थात उसके विरूद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498 के तहत प्रकरण दर्ज करा सकती है। ससुराल पक्ष के लोगों द्वारा की गई क्रुरता, जिसके अंतर्गत मारपीट से लेकर कैद में रखना, खाना न देना एवं दहेज के लिए प्रताड़ित करना आदि आता है, घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत अपराधियों को 3 साल तक की सजा दी जा सकती है, पर शारीरिक प्रताड़ना की तुलना में महिलाओं के साथ मानसिक प्रताड़ना के मामले ज्यादा होते है। यहां हम कुछ ऐसे अपराध और कानूनी धाराओं का जिक्र कर रहें हैं, जिनकी जानकारी रहने पर महिलाएं अपने खिलाफ होने वाले अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठा सकती है।

समस्या कथन – ''घरेलू हिंसा से प्रताड़ित महिलाओं के लिए घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम–2005 की जागरूकता का अध्ययन (तिल्लौरखुर्द गाँव के विशेष संदर्भ में)''

समस्या का चुनाव – घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम को यद्यपि विशिष्ट कानून कहा जा रहा है, लेकिन इसके लागू होने के इतने दिनों बाद भी व्यवहारिक तौर पर इसे स्वीकार नहीं किया गया है। यही नहीं अधिकांश महिलाएं तो अब तक इस कानून से रूबरू ही नहीं हुई है। सबसे महत्वपूर्ण समस्या यह है कि क्या महिलाएं जीवन–यापन और सामाजिक सुरक्षा के लिए घर के पुरूषों पर निर्भर है। ऐसे में देखने वाली बात यह है कि, क्या महिलाएं घर में रहकर पुरूषों के विरूद्ध शिकायत करने का साहस कर पायेगी। ऐसी स्थिति में यह देखा जाना आवश्यक समझा गया है कि महिलाएं इस कानून से परिचित है। घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम 2005 के संदर्भ में महिलाओं में जागरूकता है अथवा नहीं यह जानने का प्रयास किया जाना आवश्यक समझा गया।

अध्ययन का उद्देश्य

- घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम के प्रति महिलाओं में जागरूकता का अध्ययन करना।

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय माधव कला वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय (म.प्र.) भारत

* महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि प्रस्तुत शोध हेतु तिल्लौरखुर्द गाँव के 20 परिवारों का चयन (याद्दशिक पद्धति) द्धारा किया गया। न्यादर्श के रूप में चुने गए परिवार संयुक्त परिवार हैं। इन्दौर से 15 कि.मी. दूर खंडवा रोड़ पर स्थित तिल्लौरखुर्द के बहुल समाज पाटीदार समाज की महिलाओं का चयन उद्देशीकृत विधि से किया गया। जिनका विवरण निम्न तालिकाओं से स्पष्ट किया गया है –

तालिका 1 (महिलाओं की सामाजिक स्थिति)

इस प्रकार तालिका 1 के अनुसार घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 के

विवरण संबंधी क्षेत्र	*महिलाओं की संख्या व विभिन्न आयामों का विवरण*				
आयुवर्ग	20-30 वर्ष कुल 06 (30%)	30-40 वर्ष कुल 08 (40%)	40-50 वर्ष कुल 06 (30)%	50-60 वर्ष 0	कुल महिलाएं 20
शिक्षा	मिडिल	इण्टर	स्नातक	अन्य	
	कुल 11 (55%)	कुल 06 (30%)	कुल 03 (15%)	00	20
विवाहित	बहुऐं		सास		
	कुल 12 (60%)		कुल 08 (40%)		20
परिवार में सदस्यों की संख्या	5 से कम	5 से 10	10 से 15	15 से 20	
	10% 2 परिवार	50% 10 परिवार	25% 5 परिवार	15% 3 परिवार	20
व्यवसाय (परिवार का)	दूध	खेती	दुकानदारी	मजदूरी	
	10% 2 परिवार	50% 10 परिवार	20% 4 परिवार	20% 4 परिवार	20
स्वयं का व्यवसाय	कुछ नहीं		दुकानदारी		
	18 महिलाएं (90%)		02 महिलाएं (10%)		20

संदर्भ में प्राप्त आंकड़ो के आधार पर 55% महिलाएं मिडिल तक या कम शिक्षित है जबकी 30% इंटर तथा 15 प्रतिशत स्नातक या उच्च शिक्षित है। पाटीदार समाज अधिकांश कृषि आधारित परिवार होते है अत: महिलाएं परिवार पर ही आश्रित है एवं उनका स्वयं का व्यवसाय 10 प्रतिशत तक है।

तालिका – 2 (परिवार में महिलाओं के प्रति व्यवहार संबंधी विवरण)

क्रं.	व्यवहार संबंधी विवरण	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1	सम्मानित तरीके से सामान्य व्यवहार वाली महिलाएँ	12	60
2	सास ससुर का घर में उदार व्यवहार नहीं ऐसी महिलाएँ	06	30
3	पति द्धारा संतोषजनक व्यवहार नहीं ऐसी महिलाएँ	02	10

तालिका 2 से प्राप्त आंकडों के अनुसार 60 प्रतिशत महिलाओं के प्रति घर में सम्मानजनक व्यवहार किया जाता है। 30 प्रतिशत महिलाओं ने सास ससुर के व्यवहार को उदार नहीं माना जबकि 10 प्रतिशत महिलाओं ने पति के व्यवहार को संतोषजनक नहीं माना।

तालिका – 3 (महिला उत्पीडन के विरूद्ध कानून एवं घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम – 2005 की जानकारी का विवरण)

क्रं.	जानकारी है	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1	जानकारी है	06	30
2	जानकारी नहीं है	12	60
3	उत्तर अस्पष्ट	02	10

तालिका 3 से स्पष्ट है कि 30 प्रतिशत महिलाओं को ही महिला उत्पीडन के विरूद्ध कानून एवं घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम – 2005 की जानकारी है जबकि 60 प्रतिशत महिलाओं को ऐसे किसी कानून की जानकारी नहीं है जबकी 10 प्रतिशत का उत्तर अस्पष्ट रहा।

तालिका–4(परिवार परामर्श केन्द्र जाने की जानकारी का विवरण)

क्रं.	परिवार परामर्श केन्द्र	महिलाओं की संख्या	प्रतिशत
1	जाती है	02	10
2	कभी नही जाती है	04	20
3	जानकारी नहीं है	14	70

तालिका 4 के अनुसार 70 प्रतिशत महिलाओं को परिवार परामर्श केन्द्रों की जानकारी ही नहीं है। जबकि 20 प्रतिशत परिवार परामर्श केन्द्र तक नहीं जाती। इससे लाभांवित होने वाली महिलाएं सिर्फ 10 प्रतिशत ही है।

निष्कर्ष एवं सुझाव :–

घरेलू हिंसा निषेध अधिनियम लागू करके सरकार ने बंद दरवाजों के पीछे होने वाले हिंसक बर्ताव को रोकने, महिलाओं को सुरक्षा देने और दोषियों को सजा दिलाने के लिए एक विशेष कानून बनाएं जाने की खासकर स्वयंसेवी संस्थाओं और महिला संगठन की मांग पूरी कर दी। इस कानून के जरिए उन कमियों को दूर करने की कोशिश की गई है जो पिछले कानूनों में अछुती रही थी यानि उन सभी महिलाओं की कानूनी हिफाजत के उपाय किये गए हैं जिनका प्रताड़ित करने वालों के साथ कोई रिश्ता है और वे एक ही घर में साथ–साथ रहते हैं, शारीरिक–मानसिक प्रताड़ना, धमकी, ताना मारने, दहेज के लिए संबंधित महिला या उसके परिजनों को तंग करने, बालिग लड़की पर उसकी इच्छा के विरूद्ध विवाह थोपने या मर्जी से शादी न करने जैसे तमाम कृत्यों को अपराधिक श्रेणी में रखकर उनके लिए सजा का प्रावधान किया गया। महिलाओं के लिए कानूनी संरक्षण बढ़ाने के किसी भी कदम का औचित्य साफ है। सवाल है तो बस यही कि नया कानून कहां तक व्यवहारिक हो पाएगा।

ग्राम तिल्लौरखुर्द में पाटीदार समाज शिक्षित समाज है एवं यह समाज शाकाहारी होकर व्यसनों से मुक्त है अत: ऐसा लगता है कि महिलाएं घर में सुखी है। लेकिन अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम की जानकारी 60 प्रतिशत महिलाओं को नहीं है जबकि 70 प्रतिशत महिलाएं परिवार परामर्श केन्द्र के बारे में नहीं जानती। स्पष्ट है कि इस अधिनियम से ग्रामीण महिलाएं अभी तक परिचित ही नहीं है। इसका कारण प्रचार की कमी एवं ग्रामीण इलाकों तक परामर्श केन्द्रों के बारे में जागरूकता का अभाव माना जा सकता है। अत: महिला एवं बाल विकास विभाग तथा पुलिस प्रशासन द्धारा मिलकर व्यापक स्तर पर ग्रामीण इलाकों में महिलाओं में जागरूकता के लिए अभियान चलाने की आवश्यकता है। यही नहीं स्कूली शिक्षा में भी ऐसे कानून को पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से शामिल किया माना चाहिए जिससे लड़कियों, महिलाओं एवं समाज में सुखद संदेश जाये।

संदर्भ सूची :–

1. यूनीसेफ इन्नोसेंट रिसर्च सेंटर, फ्लोरेंस, इटली द्धारा 'डोमेस्टिक वायलेंस अगेंस्ट वीमेन एंड गर्ल्स' विषय पर प्रकाशित डाइजेस्ट पत्रिका की संख्या 6, सन् 2000,
2. देवसरे व्ही.,(2007),घरेलू हिंसा वैश्विक संदर्भ, आर्य प्रकाशन मंडल, नई दिल्ली
3. रूबी अरूण http://www.chauthiduniya.com/2012/03/rights-and-law-of-women.html
4. प्रियरंजन अशोक, 13 नवम्बर.2009 http://ashokvichar.blogspot.in/2009/11/blog-post.html
5. जे. मीनाक्षी,(2007),वुमन एंड न्यू सोशल ऑर्डर, प्रथम संस्करण, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
6. आहूजा आर.,(2003),वायलेंस अगेंस्ट वुमन, प्रथम संस्करण, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर
7. http://socialissues.jagranjunction.com/2011/09/28/domestic-violence-in-india-and-measures-to-be-taken-after-being-victim-of-this/

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)
RNI No.-MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used) (1 Jan 2014 - 31 Dec 2014)

NAME (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

NAME of of Co-Author(s) : .....

DESIGNATION : ..... SUBJECT: .....

NAME OF College/University/Institution : .....

HOME / Official Address : .....

.....

STATE : .....PIN : ..... COUNTRY : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....MOB : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,200/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 700/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 700/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 800/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our website
{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}

DYNAMIC PERSONALITY

Dr. J.P.N. PANDEYA

Principal
Govt. Autonomous Girls P.G. College
Of Excellence, Sagar (M.P.)

"What a piece of work is man" says Shakespeare and this very saying is best suitable for the personality who has given his entire life in educating the general mass of the services society not only in academic field but also in social work and very especially for the upliftment of women and empowering them.

Born on 14 Nov. 1949 in Ballia (U.P.) Son of Late Shri Vijay Shankar Pandeya, a teacher by profession. He was graduated in Science from Gorakhpur University, Gorakhpur and did his M.Sc. with merit and Ph.D. (Botany) from Dr. H.S. Gour University, Sagar (M.P.) India. He was awarded Ph.D. on "Studies in Soil Microbiology with Special reference to litter decomposition" under the able guidance of Late Prof. S.B. Saksena, F.N.A. A number of research papers have been published by Dr. Pandeya in reputed International and National Journals viz. Mycologia, Research Hunt, Prof. Nat. Acad. Sci. India (INSA), Journal of Basic and Applied Mycology etc. He got selected from Madhya Pradesh Public Service Commission (M.P.P.S.C.) in the Year 1973 and joined as Asstt. Prof. Botany at P.G. College Guna (M.P.) Dr. Pandeya is well known teacher in the field of Plant Pathology, Microbiology any Cytogenetics. Dr. Pandeya is a life member of Journal of Basic and Applied Mycology and Research Hunt an International Journal. Dr. Pandeya was promoted as Professor in 1992, Degree Principal in 2005 and P.G. Principal in 2010. At present Prof. Pandeya is Principal, Govt. Girls Autonomous P.G. College of Excellence Sagar (M.P.) Dr. Pandeya is supervisor for Ph.D. Guidance of Dr. H.S. Gour V.V. (Central University) and research scholars are working under him. In addition to subject Botany Dr. Pandeya has also obtained L.L.B. Degree from Dr. H.S. Gour University Sagar. He has attended several U.G.C. and State Government Administrative Seminars and Workshops. As Institutional head, he always encourages performances like teaching, research, Seminars, Symposia and Workshops in addition to his routine administrative work.

To his achievement, he had added an accolade of awards for the Environmental Protection through NSS Unit of the College. Besides he has been awarded on Teacher's Day, For the development of the Institution where he was posted as Principal he has tremendously worked hard for the development of Infrastructure, Health and hygiene in the campus and creating CLEAN AND GREEN surrounding.

Dynamic Personality

Dr. I. V. Trivedi

Vice-Chancellor

Mohan Lal Sukhadia University,
Udaipur (Rajasthan)

Prior to became a Vice Chancellor of Mohan Lal Sukhadia University, he has hold various capacities like Head, Department of Banking and Business Economics, UCCMS, Dean, College of Commerce and Management Studies, Chairman, Faculty of Commerce, Member, Board of Management, MLSU, Director, Diploma in International Business, MLSU; Director, Master of International Business, MLSU; and Dean, P. G. Studies, MLSU. He possesses more than 25 years of rich academic experience.

He has been appointed by His Excellency Governor of Gujarat as Chairman, Vice Chancellor's Search Committee, North Gujarat University, Patan, Gujarat and Appointed as a Member, Vice-Chancellor's Search Committee, J.R. Nagar University, Udaipur. He was also appointed by His Excellency the Governor & Chancellor, University of Kota in the Academic Council of University of Kota, Kota.

He has authored more than 10 books , **Economics Environment of India, Banking Law and Practice in India, Foreign Trade & Exchange, Indian banking, Monetary Theory & Practice** are very famous and edited more than 12 books to his credit - **Whither Indian Economy, Indian Banking System, Retailing The Indian Perspective, Emerging Dimensions of Economic Scenario, Emerging Economic Scenario, Commerce Education in the New Millennium, Impact of Environment, Management of Funds in India** are most relevant book in Education System. His more than 35 research papers got published at journals at international and national levels.

He has done two major projects entitled “A Critical Study of working of Institutional and Non-Institutional financing agencies for the upliftment of the Tribal Region (with special reference to Southern Rajasthan)” and “Rural Indebtedness in Tribal Region A Case Study of TSP Area” sponsored by UGC. He has done three minor projects financed by Tribal Research Institute, Udaipur. More than 25 candidates have done Ph.D. program under his guidance.

He is an expert in Selection Committee for selection of Professor, Associate Professor, Assistant Professors in more than 50 Universities of India. He has been serving as a member and expert of several research and selection boards of various renowned universities of India.

This quotes suites him on well **"Simplicity is the Ultimate Sophistication"**